

ॐ

स्वामी शरण कृत

ऋग्वेद भाष्य

सरल पाठ, मन्त्रार्थ, भावार्थ, पदार्थ सहित



प्रकाशक

पालीवाल प्रकाशन

117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

ईमेल - paliwalprakashanvedicsahitya@gmail.com

वेबसाईट - vedayan.simplesite.com

संस्करण : प्रथम, मकर संक्रान्ति, पौष, 2075 वि., 5120 युगाब्द (ई. 2019)

सर्वाधिकार : स्वामी शरण

मूल्य : दो हजार रुपये

पुस्तक : ऋग्वेद भाष्य
लेखक : स्वामी शरण
सर्वाधिकार : लेखकाधीन
संस्करण : प्रथम 2019
सहयोग राशि : रु. 2000/—
प्रकाशक : पालीवाल प्रकाशन
117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005
ईमेल - paliwalprakashanvedicsahitya@gmail.com
वेबसाईट - vedayan.simplesite.com
मुद्रक : पालीवाल प्रकाशन
117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005
ईमेल - paliwalprakashanvedicsahitya@gmail.com
वेबसाईट - vedayan.simplesite.com

RIGVED BHASHYA
BY SWAMI SHARAN

सहयोग राशि : दो हजार रुपये

स्वामी शरण कृत

ऋग्वेद भाष्य

सरल पाठ, मन्त्रार्थ, भावार्थ, पदार्थ सहित

विषय सूची

1.	प्रथम मण्डल	- 24 अनुवाक (1-24)	7-105
2.	द्वितीय मण्डल	- 4 अनुवाक (25-28)	106-121
3.	तृतीय मण्डल	- 5 अनुवाक (29-33)	122-141
4.	चतुर्थ मण्डल	- 5 अनुवाक (34-38)	142-153
5.	पञ्चम मण्डल	- 6 अनुवाक (39-44)	154-182
6.	षष्ठ मण्डल	- 6 अनुवाक (45-50)	183-221
7.	सप्तम मण्डल	- 6 अनुवाक (51-56)	222-259
8.	अष्टम मण्डल	-10 अनुवाक (57-66)	260-421
9.	नवम मण्डल	- 7 अनुवाक (67-73)	422-666
10.	दशम मण्डल	- 12 अनुवाक (74-85)	667-735

निवेदन

हमारी मान्यता है कि वेद भगवान् ही हमारे गुरु हैं। वेद ही परमात्मा का शब्द-शरीर तथा प्रत्यक्ष रूप है। वेद विश्व का प्राचीनतम साहित्य तथा भारतीय धर्म - संस्कृति का मूल स्रोत है। वेद का पाठ तथा स्वाध्याय करना हमारा परम धर्म है। हमारी मान्यताएँ, चिन्तन तथा आचार - विचार वेद के अनुकूल होना चाहिए। वेद में सूक्त का गठन महत्वपूर्ण है। अतः भाव, विचार, सन्देश को स्पष्ट रूप से समझने के लिए सम्पूर्ण सूक्त को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है। मात्र एक मन्त्र को लेकर विचार करने पर भ्रम भी हो सकता है। यद्यपि बहुधा एक मन्त्र अथवा उसका कोई अंश भी अत्यन्त महत्वपूर्ण सन्देश या मार्गदर्शन दे सकता है।

हमने वेद भाष्य में मन्त्रों का सरल पाठ देने के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया है। इसका स्वाध्याय कर लें तो धात्वादि कोश, सरल संस्कृत व्याकरण तथा वैदिक शब्दकोश का उपयोग कर विचारशील परिजन सम्पूर्ण वेद का इसी रूप में प्रामाणिक अर्थ करने में समर्थ हो सकते हैं। सरल पाठ में मन्त्र का सन्धियों से मुक्त पाठ प्रस्तुत किया जाता है। इसका अर्थ है कि पदान्त में अन्य पद की सन्धि नहीं होती है। सरल पाठ में क्रिया विभक्ति अथवा नामिक विभक्ति के पश्चात् कोई शब्द या पद सन्धि के द्वारा नहीं मिलाया जाता है। इसी प्रकार अव्यय आदि शब्दों में जहाँ विभक्ति का लोप होता है, उनके अन्त में भी किसी पद या शब्द या शब्दांश की सन्धि नहीं होती है। इस प्रकार सरल पाठ में सभी पद पृथक् तथा स्पष्ट होते हैं। वेद मन्त्रों का सरल पाठ जनसाधारण के लिए, विशेष रूप से विद्यार्थियों के लिए वेद पाठ तथा अर्थ समझने के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

मन्त्रार्थ में हमने मन्त्र का यथासम्भव शाब्दिक अनुवाद देने का प्रयास किया है। वेदमन्त्र के किस पद के लिए भाषा में किस पद का प्रयोग किया गया है, यह भी पूर्णतः स्पष्ट है। मन्त्र का पद यथावत् देकर भाषा में अर्थ दिया गया है। संस्कृत में बहुधा वर्तमान काल की सहायक क्रियाएं अस्ति (है) आदि का लोप होता है, अर्थात् इनके बिना वाक्य पूर्ण हो जाता है। भाषा में इनका प्रयोग आवश्यक होता है। हमने प्रयास किया है कि उनको भी कोष्ठक में दिया जाये जिससे यह स्पष्ट रहे कि यह शब्द वेदमन्त्र में नहीं है तथा वाक्य पूरा करने के लिए भाषा में लिखना पड़ा है। इसी प्रकार संयोजक शब्दों (अथवा, तथा आदि) भी वाक्य पूर्ण करने के लिए इसी रूप में दिये गये हैं। इस प्रकार हमने मन्त्रार्थ में तटस्थता, निष्पक्षता, वस्तुनिष्ठता तथा प्रामाणिकता का ध्यान रखने का पूर्ण प्रयास किया है। फिर भी यदि कोई भूल-चूक रह गयी होगी तो विद्वानों के मार्गदर्शन के अनुसार भविष्य में संशोधन-परिष्कार किया जा सकता है।

भावार्थ में मन्त्र के भाव तथा सन्देश को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। यह वेदार्थ नहीं है, भावार्थ है। इसमें हमारे विवेक की सीमा है तथा मतभेद के लिए पर्याप्त अवकाश भी है। इससे वेदमन्त्र तथा वेदार्थ की प्रामाणिकता प्रभावित नहीं होती है। प्रवचनकर्ता इसमें अपने विवेक के अनुसार परिवर्तन-परिष्कार के लिए स्वतन्त्र हैं।

पदार्थ में मुख्यतः धातुज शब्दों में धातु स्पष्ट करना आवश्यक माना गया है। अन्य पदों सर्वनाम, अव्यय, संख्या, उपसर्ग आदि के अर्थ को लेकर कोई मतभेद नहीं है। संज्ञा, विशेषण तथा क्रियाएं धातुज हैं। उनमें धातु स्पष्ट करने से वास्तविक शाब्दिक अर्थ स्पष्ट हो जाता है। कुछ धातुएं अनेकार्थी भी होती हैं। मन्त्र में जिस अर्थ की उपयोगिता हो, उसे ग्रहण कर सकते हैं। धातु के एक से अधिक अर्थों के अनुसार भी यदि मन्त्र का अर्थ हो सकता है तो श्लेष के रूप में स्वीकार्य है। इसमें विचारधारा को लेकर कोई दुराग्रह नहीं होना चाहिए। हमें वेद के विचारों

को महत्व देना चाहिए, वेदमन्त्रों का अर्थ अपने विचार के अनुसार करने का दुराग्रह उचित नहीं है। वेदमन्त्रों का सरल स्वाभाविक शाब्दिक अर्थ सभी अध्येता सहज रूप से जानें तथा उसका चिन्तन-मनन कर स्वयम् अपने विवेक के अनुसार विचार विकसित करें। इसके पश्चात् भावार्थ तथा व्याख्या प्रत्येक व्यक्ति अपने विवेक के अनुसार स्वतन्त्र रूप से कर सकता है।

वैदिक भाषा और संस्कृत की संरचना में सूक्ष्म अन्तर मिलता है। वेद में उपसर्ग और धातुएँ संस्कृत से अधिक हैं। विभक्तियों में बहुलता है तथा विकल्प भी स्वीकार्य हैं।

कुछ उपसर्ग और अव्ययों में त्य आदि प्रत्यय जुड़कर नामिक शब्द बन जाते हैं। फिर उनमें नामिक विभक्ति लग जाती है। महर्षि पाणिनि ने एक सूत्र में इस नियम का उल्लेख किया है। इस प्रकार के शब्दों को अपवाद ही कहा जा सकता है। इस प्रकार नि उपसर्ग में त्य प्रत्यय जुड़कर नित्य शब्द बना। जिसका बहुवचन नित्यासः बना। इस शब्द का अर्थ नि उपसर्ग के अर्थ से लिया जायेगा। अतः नित्यासः शब्द का अर्थ निरन्तर बने रहना ही है।

उपसर्ग तथा अन्य अव्यय शब्दों में प्रत्यय जोड़कर नामिक शब्द बनते हैं। ऐसे अव्ययज अथवा निपातज शब्द संज्ञा और विशेषण बन जाते हैं परन्तु उनसे क्रियाएँ नहीं बनतीं अर्थात् उनमें आख्यातिक अथवा क्रिया विभक्तियाँ नहीं जुड़ती हैं। इस प्रकार नामिक अर्थात् संज्ञा विशेषण शब्द दो प्रकार के हो जाते हैं - धातुज तथा अधातुज अथवा अव्ययज या निपातज। कुछ शब्द ध्वनि के अनुसार होते हैं, जिनकी कोई धातु नहीं होती है। उन्हें ध्वन्यानुसारी शब्द कहते हैं। जैसे - चिश्चा।

वैदिक भाषा और संस्कृत में उपसर्ग और धातुएँ लगभग समान हैं, परन्तु प्रत्यय और विभक्तियाँ में अन्तर मिलता है। वेद में उपसर्ग और धातुएँ संस्कृत से अधिक हैं। विभक्तियों में बहुलता है तथा विकल्प भी स्वीकार्य हैं। जिन शब्दों के क्रिया रूप मिल जाते हैं, उनकी धातु निश्चित है। (सिच्यते - सिच - यजु. 19/15)। हिंसा के भाव वाली धातुओं में गति का भाव निहित होता है तथा गत्यर्थक धातुओं में जानना, पाना का भाव निहित होता है। वेद को श्रुति भी कहते हैं। प्राचीनकाल में गुरु से सुनकर ही शिष्य ज्ञान प्राप्त करते थे अतः वेद में श्रु-श्रवण धातु का अर्थ जानना, विद्वान् होना भी स्वाभाविक रूप से माना जाना चाहिए। श्रवस्यवः आदि शब्द विद्वान्, सुनाने वाले, सुनने वाले के लिए प्रयोग किये गये हैं।

धातु अथवा शब्द के प्रथम स्वर से पूर्व अ लगता है तथा सन्धि हो जाती है। इसे परम्परागत व्याकरण में सन्धि प्रकरण में गुण कहा गया है। इस प्रकार अ जुड़ने को प्रत्यय भी माना जाता है। यदि पहले से अ, आ है तो दोनों मिलकर दीर्घ आ हो जायेंगे, इसी प्रकार इ होने पर ए, उ होने पर ओ हो जाते हैं। उदाहरण के लिए रम् से राम, कम् से काम शब्द बनते हैं। इक प्रयय लगने पर भी ऐसा होता है। वेद में इक प्रत्यय जुड़ने पर वैदिक शब्द बनेगा। वैदिक शब्द का अर्थ है - वेद से उत्पन्न, वेद से सम्बन्धित, वेद से युक्त। यह प्रत्यय स्वार्थ अर्थात् स्वयम् के अर्थ में भी लगता है। इसका अर्थ है कि कम तथा काम शब्द के अर्थ समान होंगे।

अग्नि शब्द का अर्थ ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् आदि होता है। वेद में इसी अर्थ में यह शब्द परमात्मा के लिए सर्वाधिक प्रयुक्त है। शब्दार्थ के अनुसार समाज के ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् भी अभिप्रेत हैं। इसी प्रकार वेदमन्त्रों के अनेक अर्थ होते हैं।

लोकभाषा में पञ्चमाक्षर के स्थान पर अनुस्वार (ँ) का प्रयोग अधिक होने लगा है। यह अनुचित है। इससे उच्चारण अशुद्ध होता है तथा अर्थ भी अस्पष्ट हो सकता है। हमने अनुस्वार (ँ) के स्थान पर क से म तक पञ्चमाक्षर का प्रयोग करने का प्रयास किया है। य, र, ल, व, श, ष, स के पहले आने वाले अनुस्वार (ँ) को तालव्य, मूर्धन्य और दन्त्य स्थान के अनुसार शब्द क्रम में रखा गया है। इसी प्रकार ह से पहले आने वाला अनुस्वार (ँ) स्वाभाविक रूप से ङ के स्थान पर है। ङ के स्थान पर अनुस्वार (ँ) को स्वीकार किया गया है। इससे सभी को सरलता होती है। विसर्ग (ः) का उच्चारण स् (सूक्ष्म) अथवा ह (सूक्ष्म) के रूप में है। अतः इसको शब्दकोश में इसी

क्रम में स्थान दिया गया है।

वेदार्थ करने में अनेक विद्वान् अपने विचार को वेद में दर्शाने का प्रयास करते हैं। इसके लिए अनेक शब्द ही नहीं, वाक्यांश तथा कई वाक्य तक वेदमन्त्र का अर्थ करते समय जोड़ देते हैं जिनके लिए कोई शब्द या पद वेदमन्त्र में होता ही नहीं है। इसे अध्याहार कहा जाता है। कहा जाता है कि अध्याहार मन्त्र का अर्थ स्पष्ट करने के लिए दिया जाता है। स्पष्ट है कि इस प्रकार विद्वान् मन्त्रार्थ के स्थान पर भावार्थ करते हैं। कई विद्वान् तो पदार्थ में भी अध्याहार के नाम पर ऐसी टिप्पणियां तक दे देते हैं जिनको उचित नहीं माना जा सकता है। हम उनकी आलोचना नहीं करना चाहते हैं। उन्होंने जो भी प्रयास किये, उससे ही वेद के अध्ययन को दिशा मिली तथा हम इस प्रकार निष्पक्ष प्रामाणिक वेदार्थ करने का प्रयास कर पा रहे हैं। भविष्य में विद्वान् अधिक उत्तम, निष्पक्ष तथा प्रामाणिक वेदार्थ प्रस्तुत करेंगे, ऐसी आशा - अपेक्षा करना स्वाभाविक है। आशा है कि हमारे सहयोगी इस कार्य को पूर्ण करेंगे। शेष जीवन काल में हमसे जो कुछ बन पड़ेगा, सेवा करने का प्रयास करते रहेंगे।

मकर संक्रान्ति, पौष, 2075 वि.

स्वामी शरण

पाण्डु नगर, कानपुर

ऋग्वेद

प्रथम मण्डल

अनुवाकः - 1

(01) सूक्त - 1

01. अग्निम् ईडे पुरोहितम्, यज्ञस्य देवम् ऋत्विजम्।

होतारम् रत्नधातमम् ॥ 01 ॥ 1-1-1

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को ईडे = स्तुति करता हूँ पुरोहितम् = पुरोहित को यज्ञस्य = यजन का देवम् = देव को ऋत्विजम् = ऋत्विज को, ऋतु से उत्पन्न को होतारम् = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को रत्नधातमम् = रत्न, रमणीय को धारण करने वाले को ॥ 01 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ईडे = स्तुति करता हूँ (ईड् = स्तुति करना)। पुरोहितम् = पुरोहित को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हि - चलना, जाना, जानना, पाना)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। ऋत्विजम् = ऋत्विज को, ऋतु से उत्पन्न को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। होतारम् = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। रत्नधातमम् = रत्न, रमणीय को धारण करने वाले को (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना) ॥ 01 ॥

02. अग्निः पूर्वभिः ऋषिभिः, ईड्यो नूतनैः उत।

सः देवान् आ इह वक्षति ॥ 02 ॥ 1-1-2

मन्त्रार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् पूर्वभिः = पूर्व, पूर्ण द्वारा ऋषिभिः = ऋषियों द्वारा ईड्यो = स्तुत्य, स्तुति करने योग्य नूतनैः = नूतन, नवीन, नये द्वारा उत = ही, भी, ओर सः = वह, उसने। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम इह = इसमें, यहां, यह वक्षति = वक्ष, पालन, रक्षा करता है ॥ 02 ॥

भवार्थ :- परमात्मा की स्तुति-उपासना सभी के लिए हितकारी है। विद्वान् ऋषि तथा नूतन प्रवेशित विद्यार्थी समान रूप से उसकी स्तुति कर लाभ उठा सकते हैं। नया दीक्षा लेने वाला सादक भी शीघ्र ही यहीं पर देवों का सान्निध्य प्राप्त कर लेता है। महत्वपूर्ण बात यही है कि देवत्व का यह अनुदान- अवसर यहीं प्राप्त होता है, किसी दूसरे लोक में नहीं। वैदिक उपासना का फल प्रत्यक्, है, परलोक का काल्पनिक आश्वासन मात्र नहीं।

पदार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पूर्वभिः = पूर्व, पूर्ण द्वारा (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। ऋषिभिः = ऋषियों द्वारा (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। ईड्यो = स्तुत्य, स्तुति करने योग्य (ईड् - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। नूतनैः = नूतन, नवीन, नये द्वारा (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना, निश्चय करना, नया करना, नवीन करना, नूतन होना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। सः = वह, उसने। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी

होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **वक्षति** = वक्ष, पालन, रक्षा करता है (वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **वक्ष** = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना) ॥ 02 ॥

03. अग्निना रयिम् अश्नवत्, पोषम् एव दिवे-दिवे।

यशसम् वीरवत्तमम् ॥ 03 ॥

1-1-3

मन्त्रार्थ :- अग्निना = अग्नि द्वारा, अग्नि के साथ **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **अश्नवत्** = व्याप्त होता है, प्राप्त होता है **पोषम्** = पोषण करने वाले **एव** = ही **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन **यशसम्** = यश, कीर्ति को **वीरवत्तमम्** = वीर के समान।

भवार्थ :- वेद मन्त्रों से परमात्मा की उपासना प्रत्यक्ष फलदायी है, उससे प्रतिदिन ही पोषण मिलता है, शक्ति, - क्षमताएँ निरन्तर बढ़ती जाती हैं। वीर नायकों के समान यश की प्राप्ति होती है। वीर का अर्थ है ऊर्जावान्, शक्तिशाली। ऋषि-साधक तथा समाज का नेतृत्व करने वाले मनीषी इसी श्रेणी में आते हैं। स्पष्ट है कि साधना का फल प्रत्यक्षा रूप से प्रतिदिन प्राप्त होना चाहिए। क्षमता, साधना तथा परिस्थिति के अनुसार कुछ दिन, कुछ मास का समय लग सकता है उसका स्पष्ट अनुभव होने में। परन्तु ऐसा नहीं हो सकता कि जीवन भर या वर्षों साधना करने पर भी परिणाम न मिले। ऐसा होता है तो स्पष्ट है कि साधना प्रणाली में ही कुछ न्यूनता है।

पदार्थ :- **अग्निना** = अग्नि द्वारा, अग्नि के साथ (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **अश्नवत्** = व्याप्त होता है, प्राप्त होता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **पोषम्** = पोषण करने वाले (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **एव** = ही (अव्यय)। **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **यशसम्** = यश, कीर्ति को (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **वीरवत्तमम्** = वीर के समान (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 03 ॥

04. अग्ने यम् यज्ञम् अध्वरम्, विश्वतः परिभूः असि।

सः इत् देवेषु गच्छति

॥ 04 ॥

1-1-4

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **यज्ञम्** = यजन को **अध्वरम्** = अहिंसक, अवर्णनीय **विश्वतः** = सबसे, विश्व से **परिभूः** = सबसे बढ़कर, सर्वत्र रहने वाला **असि** = हो **सः** = वह, उसने **इत्** = ही **देवेषु** = देवों में **गच्छति** = जाता है ॥ 04 ॥

भवार्थ :- यज्ञ शब्द यज् धातु से बना है। इसके तीन अर्थ देवपूजा अर्थात् विद्वानों की सेवा, सहायता, सङ्गतिकरण अर्थात् सङ्गठन तथा दान अर्थात् आय तथा सम्पत्ति का एक अंश वेद भगवान् को समर्पित करना है। जो इस प्रकार अहिंसक यज्ञ की भावना को समझता है तथा स्वयम् भी ऐसा यज्ञ करता है, वही देवत्व को प्राप्त करने में सफल होता है।

पदार्थ :- **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **यज्ञम्** = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **अध्वरम्** = अहिंसक, अवर्णनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **परिभूः** = सबसे बढ़कर, सर्वत्र रहने वाला (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, भू- होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **सः** = वह, उसने। **इत्** = ही (अव्यय)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **गच्छति** = जाता है (गम्, गच्छ् = जाना) ॥ 04 ॥

05. अग्निः होता कविक्रतुः, सत्यः चित्र-श्रवस्तमः।

देवो देवेभिः आगमत् ॥ 05 ॥

1-1-5

मन्त्रार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **होता** = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **कविक्रतुः** =

शब्द करने वाले **सत्यः** = सत्य **चित्र-श्रवस्तमः** = हे चित्रश्रवस्तम, आश्चर्य-जनक अत्यन्त विश्रुत अर्थात् महान् विद्वान् **देवो** = देव **देवेभिः** = देवों द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया

भवार्थ :- देव शब्द का मूल शाब्दिक अर्थ दिव्यगुण युक्त है। परमात्मा ही परमदेव है, महादेव है। उसकी वाणी वेद भी महादेव हैं, वेद के विद्वान् देव हैं तथा प्रकृति भी देव है क्योंकि प्रकृति के उपयोगी गुणों एवम् विशेष शक्तियों से ही जीवन सम्भव है।

पदार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **कविक्रतुः** = शब्द करने वाले (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना, कृ - करना)। **सत्यः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **चित्र-श्रवस्तमः** = हे चित्रश्रवस्तम, आश्चर्य-जनक अत्यन्त विश्रुत अर्थात् महान् विद्वान् (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **देवो** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवेभिः** = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥ 05 ॥

06. यत् अङ्ग दाशुषे त्वम्, अग्ने भद्रम् करिष्यसि।

तव इत् तत् सत्यम् अङ्गिरः ॥ 06 ॥

1-1-6

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **अङ्ग** = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला **दाशुषे** = दानी के लिए **त्वम्** = तुम **अग्ने** = हे अग्नि **भद्रम्** = कल्याणकारी को **करिष्यसि** = करते हैं **तव** = तुम्हारा **इत्** = ही **तत्** = वह, उस को **सत्यम्** = सत्य को **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला ॥ 06 ॥

भवार्थ :- परमात्मा दानियों के लिए उनका अङ्ग ही है। जो देने का स्वभाव रखते हैं, समाज को कुछ देते रहते हैं, उनका परमात्मा उनका अङ्ग-स्वरूप है अर्थात् अङ्ग के समान अपना है, सहयोगी है, निकट है। वह ऐसे दानियों का कल्याण करता है तो विशेष बात नहीं है। परमात्मा का एक नाम अङ्गिरः भी है, जिसका अर्थ है विस्तार तथा रक्षा करने वाला। वह जिसका अङ्ग है, अथवा जो उसके अङ्ग हैं, उनका हितकरना तो केवल उसके अङ्गिर नाम को सत्य करना ही है। परमात्मा को अपने अङ्गिरः नाम को सार्थक करने के लिए, उसे सत्य सिद्ध करने के लिए दानियों का कल्याण करना ही पड़ता है। अर्थात् परमात्मा हमारे ऊपर कोई कृपा या उपकार नहीं करता है, दानियों का कल्याण तो उसे करना ही है, उसका यह स्वभाव है। जैसे प्रकाश तथा ऊष्मा देना सूर्य का स्वभाव है। वह हमें प्रकाश नहीं देगा तो सूर्य नहीं कहा जायेगा। अङ्ग धातु का अर्थ चलना व चिह्न करना भी है। परमात्मा दानियों के लिए गति करता है, उन्हें चिह्नित करता है। अर्थात् परमात्मा दानियों की पहचान कर उन्हें गति प्रदान करता है।

पदार्थ :- **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अङ्ग** = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **भद्रम्** = कल्याणकारी को (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **करिष्यसि** = करते हैं (कृ - करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना) ॥ 06 ॥

07. उप त्वा अग्ने दिवेदिवे, दोषावस्तः धिया वयम्।

नमो भरन्तः एमसि ॥ 07 ॥

1-1-7

मन्त्रार्थ - उप = समीप त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा अग्ने = हे अग्नि दिवेदिवे = प्रतिदिन दोषावस्तः = प्रातः तथा सायम् अथवा दिन तथा रात्रि में **धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा वयम् = हम, हम सब, हम लोग नमो = नमन भरन्त = भरण करने वाले एमसि = जाते हो, प्रेरित करते हो ॥ 07 ॥**

पदार्थ - उप = समीप (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। दिवेदिवे = प्रतिदिन (अव्यय)। दोषावस्तः = प्रातः तथा सायम् अथवा दिन तथा रात्रि में (अव्यय)। धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। नमो = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। भरन्तः = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। एमसि = जाते हो, प्रेरित करते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, जानना, पाना, प्रेरित करना) ॥ 07 ॥

08. राजन्तम् अध्वराणाम्, गोपाम् ऋतस्य दीदिविम्।

वर्धमानम् स्वे दमे ॥ 08 ॥

1-1-8

मन्त्रार्थ : अध्वराणाम् अहिंसक कार्यों में **राजन्तम्** प्रकोशमान, **गोपाम्** रक्षा करने वालों को **ऋतस्य** ऋत का **दीदिविम्** प्रकाश (प्रदान) करने वाले, **वर्धमानम्** वृद्धि करते हुए (परमात्मा) से **स्वे** अपने लिए (हम) **दमे** सन्धि करते हैं।

भावार्थ : परमात्मा का दिव्य तेज अहिंसक कार्यों में ही प्रकाशित होता है। अतः धर्म के नाम पर हिंसा महापाप है। परमात्मा पृथ्वी की रक्षा करने वाले लोगों को ऋत का प्रकाश देते हैं। ऋत कहते हैं सार्वभौम प्राकृतिक नियमों को। जिन नियमों के आधार पर सृष्टि का संचालन होता है, वे नियम ही ऋत हैं जैसे गुरुत्वाकर्षण आदि। जो लोग पृथ्वी की रक्षा करने वाले हैं, इन नियमों का ज्ञान उनके लिए ही है। ऋत के आधार पर ही विज्ञान का विकास होता है। ऋत तथा उसके आधार पर विकसित विज्ञान पृथ्वी के रक्षकों के लिए है। इसका ज्ञान उन्हें नहीं मिलना चाहिए जो इसका दुरुपयोग कर विनाश करना चाहते हैं। परमात्मा तो व्यक्त (प्रकट साकार) सृष्टि के रूप में निरन्तर वृद्धि कर रहा है। वृद्धि हमें भी करनी है, अतः हम परमात्मा से सन्धि कर लेते हैं, उससे जुड़ जाते हैं। दमे क्रिया की धातु दमु उपशमे है। अतः दमु धातु का अर्थ मुख्य उपशमन करना है। इसके अन्य अर्थ शान्त करना, दमन करना, जीतना, स्वाधीन करना तथा सन्धि करना भी है। स्वयम् को शान्त करना है, अपने दोषों का दमन करना है, दुर्गुणों को जीतना है तथा मन को दोषों-दुर्गुणों से स्वाधीन-मुक्त करना है तथा परमात्मा से तो सन्धि ही करना है जिससे दिव्य चेतना का लाभ हमें मिल सके ॥ 8 ॥

पदार्थ : **राजन्तम्** = प्रकाशमान (राज् = चमकना, प्रकाशित-शोभित होना)। **अध्वराणाम्** = अहिंसकों के (धूर् - मार डालना या दुःख देना)। **गोपाम्** = रक्षा करने वालों के (गुप् = रक्षा करना)। **ऋतस्य** = ऋत के (ऋत- गति करना, सञ्चालित करना)। **दीदिविम्** = प्रकाश करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना)। **वर्धमानम्** = बढ़ते हुए, वृद्धि करते हुए (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **स्वे** = अपने लिए, अपने साथ। **दमे** = सन्धि करते हैं (दम् = सन्धि करना, दमन करना) ॥ 8 ॥

09. सः नः पितेव सूनवे, अग्ने सूपायनो भव।

सचस्वा नः स्वस्तये ॥ 09 ॥

1-1-9

मन्त्रार्थ : **सः** वह (परमात्मा) **सूनवे** पुत्र के लिए **पितेव** पिता के समान ही **नः** हमारे लिए है। **अग्ने** हे अग्ने (गतिस्वरूप, परमात्मन्) **सूपायनो** सूपायन अर्थात् अच्छे उपाय (सद्ज्ञान के रूप में हमें प्राप्त होकर, समीप रहकर) **स्वस्तये** कल्याण के लिए **नः** हमको (उसमें) **सचस्वा** संयुक्त करो ॥ 9 ॥

भावार्थ : परमात्मा हमारे लिए उसी तरह है जैसे सन्तान के लिए पिता। हम ऐसे परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि आप सद्ज्ञान, सद्दुपाय, सत् मार्ग के भण्डार के रूप में हमें प्राप्त हों जिससे हम भी सद्ज्ञान प्राप्त कर सकें। आप हमारे कल्याण के लिए हमारे निकट रहें तथा हमको उस सद्ज्ञान के भण्डार से संयुक्त करें ॥ 9 ॥

पदार्थ : **सः** = वह। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा। **पितेव** (पिता + इव) = पिता की तरह (पा - रक्षा करना,

पालन करना)। **सूनवे** = सन्तान के लिए (सू = जन्म देना)। **सूपायनो** = सदज्ञान, सदुपाय, सत् मार्ग, (सु + उप + अयनः (अय = चलना, जाना, ध्वनि करना)। **भव** = हो (भू = होना)। **सचस्वा** = संयुक्त करो (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **स्वस्तये** = कल्याण के लिए ॥ 9 ॥

(02) सूक्त - 2

10. मित्रम् हुवे पूतदक्षम्, वरुणम् च रिशादसम्।

धियम् घृताचीम् साधन्ता ॥ 07 ॥ 1-2-7

मन्त्रार्थ - मित्रम् मित्र, पूतदक्षम् पवित्र दक्षता युक्त, वरुणम् वरणीय च और रिशादसम् हिंसा विनाशक, धियम् धारणाशक्ति, बुद्धि, घृताचीम् प्रकाशमान को साधन्ता साधक हुवे आह्वान करते हैं ॥ 07 ॥

भावार्थ - मन्त्र में विविध विशेषणों से युक्त परमात्मा तथा उन्हीं विशेषणों-गुणों को धारण करने वाले लोगों का आह्वान करने की भावना है ॥ 07 ॥

पदार्थ - मित्रम् = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, नरम होना, मृदुल होना), पूतदक्षम् = पवित्र दक्षता युक्त (पू - पु - पवित्र होना या करना, दक्ष - समृद्ध होना, दक्ष होना, शीघ्र कार्य करना), वरुणम् = वरणीय (वृ - वरण करना), च = और, रिशादसम् = हिंसा विनाशक, (रिश् - हिंसा करना, अद् - खाना, नष्ट करना) धियम् = धारणाशक्ति, बुद्धि (धी - धारण करना, बुद्धि होना)। घृताचीम् = प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, तरडा देना, सींचना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, चमकना, प्रकाशित होना), साधन्ता = साधक (साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) हुवे = आह्वान करते हैं (हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) ॥ 07 ॥

11. ऋतेन मित्रावरुणौ, ऋतावृधौ ऋतस्पृशा।

क्रतुम् बृहन्तम् आशाथे ॥ 08 ॥ 1-2-8

मन्त्रार्थ :- ऋतेन = ऋत द्वारा मित्रावरुणौ = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय ऋतावृधौ = ऋतावृध, ऋत से वर्धित ऋतस्पृशा = ऋत को स्पर्श करने वाला क्रतुम् = कर्म को बृहन्तम् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा आशाथे = आशा करता है, व्यापक करता है, संयुक्त करता है ॥ 08 ॥

पदार्थ :- ऋतेन = ऋत द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। मित्रावरुणौ = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। ऋतावृधौ = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। ऋतस्पृशा = ऋत को स्पर्श करने वाला (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। क्रतुम् = कर्म को (कृ = करना)। बृहन्तम् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। आशाथे = आशा करता है, व्यापक करता है, संयुक्त करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शास् = आशीर्वाद देना, देना, भला चाहना, आशा करना) ॥ 08 ॥

12. कवी नो मित्रावरुणा, तुविजाता उरुक्षया।

दक्षम् दधाते अपसम् ॥ 09 ॥ 1-2-9

मन्त्रार्थ :- कवी = कवि नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मित्रावरुणा = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय तुविजाता = तुविजात उरुक्षया = निरन्तर गति, विस्तार में निवास करने वाला दक्षम् = दक्ष को दधाते = धारण करते हैं, पालन करते हैं अपसम् = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता को ॥ 09 ॥

पदार्थ :- कवी = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **तुविजाता** = तुविजात (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, विज- डरना, डर से कम्पित होना, कांपना, आपद्ग्रस्त होना, विपत्ति में पड़ना)। **उरुक्षया** = निरन्तर गति, विस्तार में निवास करने वाला (उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, क्षि - निवास करना)। **दक्षम्** = दक्ष को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **दधाते** = धारण करते हैं, पालन करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अपसम्** = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता को (अप = पालन करना) ॥ 09 ॥

(03) सूक्त 03

13. इन्द्र आ याहि चित्रभानो, सुता इमे त्वायवः।

अण्वीभिः तना पूतासः ॥ 04 ॥ 1-3-4

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **चित्र** = चित्र **भानो** = प्रकाशमान का **सुता** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **इमे** = यह, इस, ये **त्वायवः** = तुमको मिलाने वाले **अण्वीभिः** = अण्वियों द्वारा, प्राणवानों द्वारा **तना** = विस्तार करो **पूतासः** = पवित्रता युक्त, रक्षित ॥ 04 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **चित्र** = चित्र (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **भानो** = प्रकाशमान का (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **सुता** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **त्वायवः** = तुमको मिलाने वाले (त्वा - तुम्हारे समान (सर्वनाम), यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **अण्वीभिः** = अण्वियों द्वारा, प्राणवानों द्वारा (अन - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना)। **तना** = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **पूतासः** = पवित्रता युक्त, रक्षित (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना) ॥ 04 ॥

14. इन्द्र आ याहि धिया इषितो, विप्रजूतः सुतावतः।

उप ब्रह्माणि वाघतः ॥ 05 ॥ 1-3-5

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि **इषितो** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि युक्त **विप्रजूतः** = विप्रजूत, विशेष प्रगतिशील **सुतावतः** = सुतावत, रचनाशील **उप** = समीप **ब्रह्माणि** = ब्रह्ममय **वाघतः** = उत्थान से ॥ 05 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **इषितो** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि युक्त (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **विप्रजूतः** = विप्रजूत, विशेष प्रगतिशील (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना, जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **सुतावतः** = सुतावत, रचनाशील (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **ब्रह्माणि** = ब्रह्ममय (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **वाघतः** = उत्थान से (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना) ॥ 05 ॥

15. इन्द्र आ याहि तूतुजानः, उप ब्रह्माणि हरिवः ।

सुते दधिष्व नः चनः ॥ 06 ॥ 1-3-6

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें तूतुजान = प्रकाशमान्, प्रगतिशील उप = समीप ब्रह्माणि = ब्रह्ममय हरिवः = हरि गण, हरण करने वाले सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में दधिष्व = धारण करो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा चनः = ही ॥ 06 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। तूतुजान = प्रकाशमान्, प्रगतिशील (तुद् - दुःख देना, दुःखी होना, पीड़ा होना, घाव करना, तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज - रहना, बसति करना, मजबूत या बलवान् होना, ग्रहण करना, लेना, चमकना, प्रकाशित होना, दुःख देना, मार डालना)। उप = समीप (उपसर्ग)। ब्रह्माणि = ब्रह्ममय (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। हरिवः = हरि गण, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचना)। सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। दधिष्व = धारण करो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। चनः = ही ॥ 6 ॥

16. पावका नः सरस्वती, वाजेभिः वाजिनीवती ।

यज्ञम् वष्टु धियावसुः ॥ 10 ॥ 1-3-10

मन्त्रार्थ - पावका = पवित्रकारक, पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सरस्वती = सरस्वती वाजेभिः = वाजद्वारा वाजिनीवती = बलवती, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त यज्ञम् = यजन को वष्टु = वष्टि, इच्छा धियावसुः = धियावस, धारणा द्वारा स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, बुद्धि द्वारा स्नेहपूर्वक निवास तथा वास देने वाले ॥ 10 ॥

पदार्थ - पावका = पवित्रकारक, पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सरस्वती = सरस्वती (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना, स - साथ, सहित, रस् - स्वाद लेना, प्रीति करना, शब्द करना)। वाजेभिः = वाजद्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। वाजिनीवती = बलवती, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। यज्ञम् = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। वष्टु = वष्टि, इच्छा (वश् - इच्छा करना, चाहना)। धियावसुः = धियावस, धारणा द्वारा स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले, बुद्धि द्वारा स्नेहपूर्वक निवास तथा वास देने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 10 ॥

अनुवाकः- 2

(04) सूक्त 04

17. सुरूपकृत्नुम् ऊतये, सुदुघाम् इव गोदुहे ।

जुहूमसि द्यवि द्यवि ॥ 1 ॥ 1-4-1

मन्त्रार्थ - सुरूपकृत्नुम् = उत्तम रूप करने वाले को ऊतये = रक्षा के लिए सुदुघाम् = उत्तम दोहन वाले को इव = समान, की भाँति, के समान गोदुहे = गोदुह के लिए जुहूमसि = आदान-प्रदान करने वाले हैं द्यवि = द्यु में द्यवि

= द्यु में ॥ 01 ॥

पदार्थ - सुरूपकृत्नुम् = सुरूपकृत्नु को, उत्तम रूप करने वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना, कृ = करना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **सुदुधाम्** = उत्तम दोहन वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, दुह् - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **गोदुहे** = गोदुह के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, दुह् - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **जुहूमसि** = आदान-प्रदान करने वाले हैं (जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना)। **द्यवि** = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **द्यवि** = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना) ॥ 01 ॥

18. उप नः सवना गहि, सोमस्य सोमपाः पिब ।

गोदाः इत् रेवतो मदः ॥ 2 ॥ 1-4-2

मन्त्रार्थ :- उप = समीप नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सवना = उत्पन्न करने से गहि = गति, ज्ञान, घना करें **सोमस्य** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का **सोमपाः** = सोम का पालक, सोमपान करने वाला **पिब** = पी लो **गोदाः** = वाणी, ज्ञान का दाता **इत्** = ही **रेवतो** = प्रगतिशील, विद्वान् **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सवना = उत्पन्न करने से (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। गहि = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। सोमस्य = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सोमपाः = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पिब = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। गोदाः = वाणी, ज्ञान का दाता (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। इत् = ही (अव्यय)। रेवतो = प्रगतिशील, विद्वान् (रिक् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। मदः = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 2 ॥

19. अथा ते अन्तमानाम्, विद्याम सुमतीनाम् ।

मा नो अति ख्यः आ गहि ॥ 3 ॥ 1-4-3

मन्त्रार्थ :- अथा = अब, इसके अनन्तर ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अन्तमानाम् = अत्यन्त प्राणवान् को, अन्तमों को विद्याम = जानें सुमतीनाम् = सुमतियों को, सुबुद्धियों को मा = नहीं, मत नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अति = बहुत, अत्यधिक ख्यः = व्याख्यान करना, कहें आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गहि = गति, ज्ञान, घना करें ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अथा = अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अन्तमानाम् = अत्यन्त प्राणवान् को, अन्तमों को (अन् = प्राणवान् होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना)। विद्याम = जानें (विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। सुमतीनाम् = सुमतियों को, सुबुद्धियों को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अति =

बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **ख्यः** = व्याख्यान करना, कहें (ख्या - प्रसिद्ध करना, कहना, व्याख्यान करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 3 ॥

(05) सूक्त 05

20. आ तु इत आ नि षीदत्, इन्द्रम् अभि प्र गायत ।

सखायः स्तोमवाहसः ॥ 01 ॥ 1-5-1

मन्त्रार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **तु** = क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत **इत्** = ही **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नि** = निश्चित, निरन्तर **षीदत्** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **सखायः** = मित्र के लिए **स्तोमवाहसः** = स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **तु** = क्षिप्र, शीघ्र, द्रुत (अव्यय, निपात)। **इत्** = ही (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **षीदत्** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सखायः** = मित्र के लिए (सख् = मित्र होना)। **स्तोमवाहसः** = स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना) ॥

21. पुरुतमम् पुरुणाम्, ईशानम् वार्याणाम् ।

इन्द्रम् सोम सचा सुते ॥ 02 ॥ 1-5-2

मन्त्रार्थ :- **पुरुतमम्** = उत्तम अग्रगामी, उत्तम अग्रणी को **पुरुणाम्** = परिपूर्णों, अग्रगामियों, अग्रणियों का **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को **वार्याणाम्** = वार्यों, वरणीयों, वरण करने योग्यों का **इन्द्रम्** = इन्द्र को **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **पुरुतमम्** = उत्तम अग्रगामी, उत्तम अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **पुरुणाम्** = परिपूर्णों, अग्रगामियों, अग्रणियों का (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **वार्याणाम्** = वार्यों, वरणीयों, वरण करने योग्यों का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 2 ॥

22. सः घा नो योगे आ भुवत्, सः राये स पुरन्ध्या ।

गमत् वाजेभिः आ सः नः ॥ 3 ॥ 1-5-3

मन्त्रार्थ :- **सः** = वह, उसने **घा** = ही, भी **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **योगे** = योग में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भुवत्** = होता हैं **सः** = वह, उसने **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में **सः** = वह,

उसने **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा **गमत्** = जाते हैं **वाजेभिः** = वाजद्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सः** = वह, उसने **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **घा** = ही, भी (अव्यय, निपात)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **योगे** = योग में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भुवत्** = होता है (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा (पुर = आगे जाना, धि-धा = धारण करना)। **गमत्** = जाते हैं (गम् = जाना, जानना, पाना)। **वाजेभिः** = वाजद्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

(06) सूक्त 06

23. युञ्जन्ति ब्रध्नम् अरुषम्, चरन्तम् परि तस्थुषः ।

रोचन्ते रोचना दिवि ॥ 1 ॥

1-6-1

मन्त्रार्थ - **युञ्जन्ति** = नियोजित करते हैं, जोड़ते हैं **ब्रध्नम्** = बृद्धि को **अरुषम्** = अरुष को, अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक को **चरन्तम्** = विचरण करने वाले को **परि** = सभी तरफ **तस्थुषः** = स्थित का, स्थापित का **रोचन्ते** = प्रकाश करते हैं **रोचना** = प्रकाश **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 1 ॥

पदार्थ - **युञ्जन्ति** = नियोजित करते हैं, जोड़ते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **ब्रध्नम्** = बृद्धि को (बृध् - बढ़ना, वृद्धि होना, बृद्धि करना)। **अरुषम्** = अरुष को, अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक को (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **चरन्तम्** = विचरण करने वाले को (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **तस्थुषः** = स्थित का, स्थापित का (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **रोचन्ते** = प्रकाश करते हैं (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **रोचना** = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 1 ॥

24. युञ्जन्ति अस्य काम्या, हरी विपक्षसा रथे ।

शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥ 2 ॥ 1-6-2

मन्त्रार्थ - **युञ्जन्ति** = नियोजित करते हैं, जोड़ते हैं **अस्य** = इसका **काम्या** = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **विपक्षसा** = विशेष पक्ष से **रथे** = रथ में **शोणा** = प्रगतिशील **धृष्णू** = विजय, गर्व **नृवाहसा** = नरों का वहन करने वालों द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ - **युञ्जन्ति** = नियोजित करते हैं, जोड़ते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **काम्या** = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य (कम - चाहना, इच्छा करना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना,

बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **विपक्षसा** = विशेष पक्ष से (वि = विशेष, विना, विलोम, पक्ष - पक्ष होना, एक पक्ष में होना, पक्ष करना)। **रथे** = रथ में (रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **शोणा** = प्रगतिशील (शुन् = जाना)। **धृष्णू** = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **नृवाहसा** = नरों का वहन करने वालों द्वारा (नृ - ले जाना, वह - वहन करना, ले जाना) ॥ 2 ॥

25. केतुम् कृण्वन् अकेतवे, पेशो मर्याः अपेशसे।

सम् उषदिभः अजायथाः ॥ 3 ॥ 1-6-3

मन्त्रार्थ - केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को कृण्वन् = करने वाला, करते हुए अकेतवे = अकेतु के लिए, निवास-हीन के लिए, रोग निवारण न करने वाले के लिए पेशो = पेश, प्रकाश, गति मर्याः = मर्य, मरणशील अपेशसे = पालको के ईश के लिए सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति उषदिभः = प्रभात, हिंसा द्वारा अजायथाः = उत्पन्न हुए ॥

पदार्थ - केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। कृण्वन् = करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। अकेतवे = अकेतु के लिए, निवास-हीन के लिए, रोग निवारण न करने वाले के लिए (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कित् - निवास करना, रोग निवारण करना, अक् - जाना, वक्रगति करना)। पेशो = पेश, प्रकाश, गति (पिश् - जाना, लगना, प्रकाश करना, व्यवस्था करना, चीरना, टुकड़े करना)। मर्याः = मर्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। अपेशसे = पालको के ईश के लिए (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, ईश - ऐश्वर्य होना, अधिकार होना, अ - नहीं, पिश् = जाना, लगना, अंग होना, अंश होना, भाग करना, टुकड़े करना, प्रकाश करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। उषदिभः = प्रभात, हिंसा द्वारा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। अजायथाः = उत्पन्न हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना) ॥ 3 ॥

26. आत् अह स्वधाम् अनु, पुनः गर्भत्वम् एरिरे।

दधानाः नाम यज्ञियम् ॥ 4 ॥ 1-6-4

मन्त्रार्थ :- आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण अह = व्यापक स्वधाम् = स्वधा को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल पुनः = फिर गर्भत्वम् = गर्भत्व को एरिरे = ईर्यता के लिए, कम्पन के लिए दधानाः = धारण करता है नाम = नाम वाले यज्ञियम् = यजनीय को, यजनकर्ता को ॥ 04 ॥

पदार्थ :- आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (वैदिक उपसर्ग)। अह = व्यापक (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। स्वधाम् = स्वधा को (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। पुनः = फिर (अव्यय)। गर्भत्वम् = गर्भत्व को (गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। एरिरे = ईर्यता के लिए, कम्पन के लिए (ईर - जाना, कम्पन करना, प्रेरणा देना, फेंकना)। दधानाः = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। नाम = नाम वाले (अव्यय)। यज्ञियम् = यजनीय को, यजनकर्ता को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना) ॥ 04 ॥

27. वीडु चित् आरुजत्नुभिः, गुहा चित् इन्द्र वह्निभिः।

अविन्दः उस्त्रियाः अनु ॥ 05 ॥ 1-6-5

मन्त्रार्थ :- वीडु = वीडु चित् = भी, ही। आरुजत्नुभिः = कठिनाइयों द्वारा गुहा = गुह्य, गुहा चित् = भी, ही। इन्द्र = इन्द्र वह्निभिः = वहन करने वाले अविन्दः = प्राप्त किया उस्त्रियाः = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल ॥ 05 ॥

पदार्थ :- वीडु = वीडु (वि - विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड

- स्तुति करना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। चित् = भी, ही। आरुजत्नुभिः = कठिनाइयों द्वारा (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, रुज् - रोग होना, कष्ट होना, हिंसा करना)। गुहा = गुह्य, गुहा (गुह - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। चित् = भी, ही। इन्द्र = इन्द्र (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वह्निभिः = वहन करने वाले (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। अविन्दः = प्राप्त किया (अ - भूतकालिक उपसर्ग, विन्द - प्राप्त करना, सम्पादित करना)। उस्त्रियाः = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग) ॥ 05 ॥

28. इन्द्रेण सम् हि दृक्षसे, संजग्मानो अबिभ्युषा ।

मन्दू समानवर्चसा ॥ 7 ॥ 1-6-7

मन्त्रार्थ :- इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति हि = ही, निश्चय दृक्षसे = देखते हैं संजग्मानो = सम्यक् रूप से, भलीभाँति गतिशील, विद्वान् अबिभ्युषा = निर्भय, निडर द्वारा मन्दू = आनन्दित समानवर्चसा = समान प्रकाश वाले ॥ 07 ॥

पदार्थ :- इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। दृक्षसे = देखते हैं (दृक्-दृक्ष - देखना)। संजग्मानो = सम्यक् रूप से, भलीभाँति गतिशील, विद्वान् (सम् - सम्यक्, जग् - गति करना, घर्षण करना, ग्रहण करना, गम् - जाना, जानना)। अबिभ्युषा = निर्भय, निडर द्वारा (अ - नहीं (उपसर्ग), भी - डरना)। मन्दू = आनन्दित (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। समानवर्चसा = समान प्रकाश वाले (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम - न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना, वर्च - प्रकाश होना) ॥ 07 ॥

(07) सूक्त 07

29. इन्द्रम् इत् गाथिनो बृहत्, इन्द्रम् अर्केभिः अर्किणः ।

इन्द्रम् वाणीः अनूषत ॥ 01 ॥ 1-7-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को इत् = ही गाथिनो = गाथा करने वाले, गाथा सुनने-सुनाने वाले बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् इन्द्रम् = इन्द्र को अर्केभिः = स्तुतियों द्वारा अर्किणः = स्तुति करने वाले इन्द्रम् = इन्द्र को वाणीः = वाणी अनूषत = अनुताप किया ॥ 01 ॥

पदार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इत् = ही (अव्यय)। गाथिनो = गाथा करने वाले, गाथा सुनने-सुनाने वाले (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अर्केभिः = स्तुतियों द्वारा (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। अर्किणः = स्तुति करने वाले (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वाणीः = वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। अनूषत = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना) ॥ 01 ॥

30. इन्द्रः इत् हर्योः, सचा सम्मिश्रः आ वचोयुजा ।

इन्द्रो वज्री हिरण्ययः ॥ 2 ॥ 1-7-2

मन्त्रार्थ - इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली इत् = ही हर्योः = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का सचा = समझदार, जानकार, सहगामी। सम्मिश्रः = सम्यक् वाणी आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वचोयुजा = वचन-युक्त, वाणी-युक्त इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली वज्री = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान हिरण्ययः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला है ॥ 2 ॥

पदार्थ - इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **हर्योः** = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **सम्मिश्रः** = सम्यक् वाणी (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), मिश्र - शब्द करना, आवाज करना, क्रोध करना, गुस्सा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वचोयुजा** = वचन-युक्त, वाणी-युक्त (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानाना, पढ़ना, अध्ययन करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला है (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना) ॥ 2 ॥

31. इन्द्रो दीर्घाय चक्षसे, आ सूर्यम् रोहयत् दिवि।

वि गोभिः अद्रिम् ऐरयत् ॥ 3 ॥ 1-7-3

मन्त्रार्थ :- इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **दीर्घाय** = दीर्घ के लिए, विशाल के लिए **चक्षसे** = देखने के लिए, देखते हो **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सूर्यम्** = सूर्य को **रोहयत्** = बढ़ता हुआ, चढ़ता हुआ **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **वि** = विशेष, विना, विलोम **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **अद्रिम्** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाले को **ऐरयत्** = प्रेरणा करते हुए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **दीर्घाय** = दीर्घ के लिए, विशाल के लिए (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। **चक्षसे** = देखने के लिए, देखते हो (चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **रोहयत्** = बढ़ता हुआ, चढ़ता हुआ (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **अद्रिम्** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाले को (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **ऐरयत्** = प्रेरणा करते हुए (इर् - ईर्ष्या करना, ऋ-इर्य - जाना, चलना, फैलाना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना) ॥ 3 ॥

32. इन्द्र वाजेषु नो अव, सहस्र-प्रधनेषु च।

उग्रः उग्राभिः ऊतिभिः ॥ 4 ॥ 1-7-4

मन्त्रार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली **वाजेषु** = वाजों में **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अव** = रक्षा करो, पालन करो **सहस्र-प्रधनेषु** = सहस्र धनों में **च** = और। **उग्रः** = उग्र **उग्राभिः** = उग्रों द्वारा **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा ॥ 4 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वाजेषु** = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अव** = रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **सहस्र-प्रधनेषु** = सहस्र धनों में (सहस्र = हजार (संख्या), प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **च** = और। **उग्रः** = उग्र (उग् -

उग्र - उग्र होना, तेज होना)। उग्राभिः = उग्रों द्वारा (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 4 ॥

33. इन्द्रम् वयम् महाधने, इन्द्रम् अर्भे हवामहे ।

युजम् वृत्रेषु वज्रिणम् ॥ 5 ॥ 1-7-5

मन्त्रार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को वयम् = हम, हम सब, हम लोग महाधने = महाधन इन्द्रम् = इन्द्र को अर्भे = अर्भ के लिए हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं युजम् = युज को वृत्रेषु = वृत्रों में वज्रिणम् = वज्र, गतिमान को ॥ 5 ॥

पदार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। महाधने = महाधन (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अर्भे = अर्भ के लिए (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। युजम् = युज को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वृत्रेषु = वृत्रों में (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। वज्रिणम् = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 5 ॥

34. सः नो वृषन् अमुम् चरुम्, सत्रादावन् अपा वृधि ।

अस्मभ्यम् अप्रतिष्कृतः ॥ 6 ॥ 1-7-6

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वृषन् = शक्तिशाली, पराक्रमी अमुम् = इसको चरुम् = विचरण करने वाला, विचरणशील को सत्रादावन् = विस्तृत प्रगतिशील, महान दानशील अपा = पालनकर्ता, जल वृधि = वृद्धि, आच्छादन अस्मभ्यम् = हमारे लिए अप्रतिष्कृतः = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वृषन् = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अमुम् = इसको (सर्वनाम)। चरुम् = विचरण करने वाला, विचरणशील को (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। सत्रादावन् = विस्तृत प्रगतिशील, महान दानशील (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, दु-दव् - जाना, सुगन्ध लेना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। अपा = पालनकर्ता, जल (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। वृधि = वृद्धि, आच्छादन (वृध - बढ़ना, अधिक होना, वृ - पसन्द करना, नियोजित करना, नियमित करना, आच्छादित करना, ढंकना)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। अप्रतिष्कृतः = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौरे के समान शब्द करना) ॥ 2 ॥

35. वृषा यूथा इव वंसगः, कृष्टीः इयर्ति ओजसा ।

ईशानो अप्रतिष्कृतः ॥ 8 ॥ 1-7-8

मन्त्रार्थ :- वृषा = पराक्रमी यूथा = यूथ इव = समान, की भाँति, के समान वंसगः = वंशगामी कृष्टीः = कृषक इयर्ति = जाता है, जानता है, प्राप्त करता है ओजसा = ओज द्वारा ईशानो = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला अप्रतिष्कृतः = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन ॥ 8 ॥

पदार्थ :- वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)।

यूथा = यूथ (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। वंसगः = वंशगामी (वंश-वंस् - बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना)। कृष्टीः = कृषक (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। इयति = जाता है, जानता है, प्राप्त करता है (ऋ = जाना, जानना पाना, इ = जाना, जानना पाना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। ईशानो = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। अप्रतिष्कृतः = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौरे के समान शब्द करना) ॥ 8 ॥

36. इन्द्रम् वो विश्वतः, परि हवामहे जनेभ्यः ।

अस्माकम् अस्तु केवलः ॥ 10 ॥ 1-7-10

मन्त्रार्थ :- इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग विश्वतः = सबसे, विश्व से परि = सभी तरफ हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं जनेभ्यः = लोगों के लिए अस्माकम् = हमारा अस्तु = हो केवलः = सेवा, सिञ्चन करने वाले ॥ 31 ॥

पदार्थ :- इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। जनेभ्यः = लोगों के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अस्माकम् = हमारा (सर्वनाम)। अस्तु = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। केवलः = सेवा, सिञ्चन करने वाले (केव् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, रिक्त होना) ॥ 31 ॥

अनुवाकः- 3

(08) सूक्त 08

37. आ इन्द्र सानसिम् रयिम्, सजित्वानम् सदासहम् ।

वर्षिष्ठम् ऊतये भर ॥ 1 ॥ 1-8-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सानसिम् = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को रयिम् = विद्या, ज्ञान को सजित्वानम् = सम्बन्धी की सेवा सदासहम् = सदासह को वर्षिष्ठम् = परम पराक्रमी को ऊतये = रक्षा के लिए भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सानसिम् = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। सजित्वानम् = सम्बन्धी की सेवा (स - साथ, सहित, सज्, संज = सम्बन्धी होना, आलिंगन करना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। सदासहम् = सदासह को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। वर्षिष्ठम् = परम पराक्रमी को (वर्ष् = बरसना, सींचना, अति पराक्रम करना, हिंसा करना, क्लेश देना, उत्पीड़न करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 1 ॥

38. महान् इन्द्रः पुरः च नु, महित्वम् अस्तु वज्रिणे ।

द्यौः न प्रथिना शवः ॥ 5 ॥ 1-8-5

मन्त्रार्थ - महान् = बड़े, पूज्य, महान् इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान पुरः = पहले, अग्रगामी, अग्रणी च = और नु = ही, भी महित्वम् = महित्व को अस्तु = हो वज्रिणे = वज्र, गतिमान के लिए द्यौः = प्रकाशवान्,

विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी न = नहीं, समान, उपमार्थक प्रथिना = विस्तार, प्रसिद्धि शवः = शव, गति, ज्ञान ॥ 5 ॥

पदार्थ - महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **पुरः** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **च** = और। **नु** = ही, भी (निपात, अव्यय)। **महित्वम्** = महित्व को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज्र - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **द्यौः** = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, प्रकाश होना, जानना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्रथिना** = विस्तार, प्रसिद्धि (प्रथ = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **शवः** = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) ॥ 5 ॥

(09) सूक्त 09

39. इन्द्र आ इहि मत्सि अन्धसो, विश्वेभिः सोमपर्वभिः ।

महान् अभिष्टिः ओजसा ॥ 1 ॥ 1-9-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र ऐश्वर्यवान् (परमात्मन्) **आ-इहि** आइये। **अन्धसा** - अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा **विश्वेभिः** सब, **सोम-पर्वभिः** सोमपर्वों से **महान्** बड़े **अभिष्टिः** अभीष्ट **ओजसा** पराक्रम से **मत्सि** तृप्त होते हो ॥ 1 ॥

भावार्थ - परमात्मा को उत्तम गुणों से ही तृप्त किया जा सकता है। महान् अभीष्ट ओज तथा सौम्य गुण महत्वपूर्ण हैं। ॥ 1 ॥

विशेष - अन्धसो अथवा अन्धसः शब्द का सामान्य अर्थ तो अन्धकार ही प्रतीत होता है, परन्तु यहाँ पर विद्वानों से सामान्यतः इसका अर्थ अन्न किया है। अन् धातु का अर्थ प्राण होना, चेतन होना होता है, अतः प्राण रक्षा का मुख्य साधन मानते हुए प्राण धारण करने में मुख्य साधन अन्न को अन्ध शब्द से व्यक्त किया गया माना गया है। अनम् प्राणम् धारयति इति अन्धः, ऐसा निर्वचन कर सकते हैं। ॥ 1 ॥

पदार्थ - इन्द्र = ऐश्वर्यवान् (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) **आ-इहि** = आइये (आ-इ - आना, इ - जाना)। **अन्धसा** = अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना), **विश्वेभिः** = सब **सोमपर्वभिः** = सोमपर्वों से (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, पर्व - पूर्ण करना, विभाग करना) **महान्** = पूज्य (मह - पूजा करना, पूज्य होना) **अभिष्टिः** = अभीष्ट **ओजसा** = पराक्रम से (ओज - शक्तिमान होना, बढ़ना, जीना) **मत्सि** = तृप्त होते हो (मद् - तृप्त होना) ॥ 1 ॥

40. असृग्रम् इन्द्र ते गिरः, प्रति त्वाम् उत् अहासत ।

अजोषाः वृषभम् पतिम् ॥ 4 ॥ 1-9-4

मन्त्रार्थ - असृग्रम् = सृजन किया **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **उदहासत** = उत्कृष्टता से हंसा **अजोषा** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक ॥ 4 ॥

पदार्थ - असृग्रम् = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **उदहासत** = उत्कृष्टता से हंसा (उत् =

ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, हस - हंसना, ठट्ठा करना)। **अजोषा** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 4 ॥

(10) सूक्त 10

41. गायन्ति त्वा गायत्रिणो, अर्चन्ति अर्कम् अर्किणः ।

ब्रह्माणः त्वा शतक्रतो, उत् वंशम् इव येमिरे ॥ 1 ॥

1-10-1

मन्त्रार्थ - गायन्ति = गाते हैं, गायन करने वाले **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **गायत्रिणो** = गायत्री, गान, स्तुति **अर्चन्ति** = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं **अर्कम्** = अर्क, स्तोता, प्रशंसक को **अर्किणः** = स्तुति करने वाले **ब्रह्माणः** = ब्रह्ममय **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **वंशम्** = वंश को **इव** = समान, की भाँति, के समान **येमिरे** = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ ॥ 1 ॥

पदार्थ - गायन्ति = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गायत्रिणो** = गायत्री, गान, स्तुति (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अर्चन्ति** = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं (अर्च - पूजा करना, मान करना)। **अर्कम्** = अर्क, स्तोता, प्रशंसक को (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **अर्किणः** = स्तुति करने वाले (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **ब्रह्माणः** = ब्रह्ममय (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **वंशम्** = वंश को (वंश् - बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **येमिरे** = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना) ॥ 1 ॥

42. यत् सानोः सानुम् आरुहो, भूरि अस्पष्ट कर्त्वम् ।

तत् इन्द्रो अर्थम् चेतति, यूथेन वृष्णिः एजति ॥ 2 ॥

1-10-2

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **सानोः** = दानी, सेवक **सानुम्** = सानु **आरुहो** = बढ़ने वाले, चढ़ने वाले, बढ़ें, चढ़ें **भूरि** = बहु, बहुत **अस्पष्ट** = स्पष्ट किया, स्पर्श किया, अस्पष्ट **कर्त्वम्** = कर्ता को, करने वाले को **तत्** = वह, उस को **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **अर्थम्** = अर्थ **चेतति** = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है **यूथेन** = यूथ द्वारा **वृष्णिः** = पराक्रमी **एजति** = चलता है, प्रकाशित होता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **सानोः** = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **सानुम्** = सानु (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **आरुहो** = बढ़ने वाले, चढ़ने वाले, बढ़ें, चढ़ें (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **भूरि** = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। **अस्पष्ट** = स्पष्ट किया, स्पर्श किया, अस्पष्ट (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्पश - अवरोध करना, रोकना, प्रसिद्ध करना, एकत्र करना, गुम्फित करना, स्पर्श करना, छूना, स्पश - लेना, संयोग करना, जोड़ना)। **कर्त्वम्** = कर्ता को, करने वाले को (कृ - करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्थम्** = अर्थ (अर्थ - मांगना, याचना करना, चाहना)। **चेतति** = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **यूथेन** = यूथ द्वारा (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना,

गूथना)। **वृष्णिः** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **एजति** = चलता है, प्रकाशित होता है (एज् - चलना, कम्पन करना, प्रकाशित होना, चमकना, झलकना) ॥ 2 ॥

43. युंक्ष्व आ हि केशिना, हरी वृषणा कक्ष्यप्रा।

अथा नः इन्द्र सोमपा, गिराम् उप-श्रुतिम् चर ॥ 3 ॥ 1-10-3

मन्त्रार्थ :- युंक्ष्व - युक्त कीजिये, आ - समन्तात्, सम्यक्, पूर्णतः, हि - ही, केशिना - केशी द्वारा, गतिशील, व्यापक द्वारा, हरी - हरण करने वाले, वृषणा - वर्षा करने वाले, बलशाली, कक्ष्यप्रा = कक्ष्य अर्थात् धारण को पूर्ण करने वाले, अथा - अथ, अब, नः - हमारा, इन्द्र - परम ऐश्वर्यवान्, सोमपा - सोम-रक्षक, सोम-पायी, गिराम् - गिरा को, उप-श्रुतिम् - उपश्रुति को, श्रुति के समीप, चर - चलो ॥ 3 ॥

भावार्थ :- परमात्मा के गुणों की स्तुति करते हुए उसके समीप चलने, उसकी वाणी के अनुशासन में चलने का सन्देश दिया गया है।

पदार्थ :- युंक्ष्व = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। आ - समन्तात्, सम्यक्, पूर्णतः (उपसर्ग)। हि = ही। केशिना = केशी द्वारा (किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। हरी = हरी, हरण करने वाले (हृ - हरण करना)। वृषणा - वर्षा करने वाले, बलशाली (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना)। कक्ष्यप्रा = कक्ष्य अर्थात् धारण को पूर्ण करने वाला (कक्ष् - धारण करना, घर्षण करना, प्रा - पूर्ण करना)। अथ = अब। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा। इन्द्र (इन्द्रर्) = परम ऐश्वर्यशाली (ऐश्वर्यशाली)। सोमपाः = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। गिराम् = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। उपश्रुतिम् = उपश्रुति को, निकट सुने हुए को (उप- समीप, शृ = सुनना, श्रवण करना, जाना)। चर = चलने वाला (चर् - चलना, विचरण करना) ॥ 3 ॥

44. उक्थम् इन्द्राय शंस्यम्, वर्धनम् पुरुनिः षिधे।

शक्रो यथा सुतेषु, नो रारणत् सख्येषु च ॥ 6 ॥ 1-10-6

मन्त्रार्थ - उक्थम् = उक्ति, कथन को इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए शंस्यम् = स्तुत्य को वर्धनम् = बढ़ो पुरुनिः = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी षिधे = पढ़ने, पढ़ाने में शक्रो = शक्तिवान्, समर्थ यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो रारणत् = दान, रण, शब्द, प्रगति किया सख्येषु = सखाभाव में, मित्रभाव में च = और ॥ 6 ॥

पदार्थ - उक्थम् = उक्ति, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। शंस्यम् = स्तुत्य को (शंस = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। वर्धनम् = बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। पुरुनिः = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। षिधे = पढ़ने, पढ़ाने में (सिध् - पूरा करना, सिद्ध होना, जीत होना, अमानवी पराक्रम की सिद्धि के लिए आरम्भ किये हुए कर्म की समाप्ति करना, पूर्ण होना, समाप्त होना, जाना, पढ़ने, पढ़ाने)। शक्रो = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। रारणत् = दान, रण, शब्द, प्रगति किया (रण - शब्द करना, जाना, रा - देना, दान करना, मिल जाना)। सख्येषु = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। च = और ॥

(11) सूक्त 11

45. इन्द्रम् विश्वा अवीवृधन्, समुद्रव्यचसम् गिरः ।

रथीतमम् रथीनाम् वाजानाम्, सत्पतिम् पतिम् ॥ 1 ॥

1-11-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को विश्वा = विश्व, सभी, सब अवीवृधन् = व्यापकता, रक्षा से वर्धित, बढ़ा हुआ समुद्रव्यचसम् = समुद्र, व्यापकतायुक्त को गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन रथीतमम् = उत्तम रथी, उत्तम रथवाला रथीनाम् = रथी, रथवाला वाजानाम् = वाजों का, विद्या का, गति का सत्पतिम् = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक पतिम् = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक ॥ 1 ॥

पदार्थ - इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अवीवृधन् = व्यापकता, रक्षा से वर्धित, बढ़ा हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी- जाना, व्यापना, वृध् - बढ़ना)। समुद्रव्यचसम् = समुद्र, व्यापकतायुक्त को, (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, व्यच् - व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, ठगना, वि - विशेष, अच् - जाना, मरना, आदर करना, याचना करना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। रथीतमम् = उत्तम रथी, उत्तम रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। रथीनाम् = रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। वाजानाम् = वाजों का, विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सत्पतिम् = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। पतिम् = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 1 ॥

46. सख्ये ते इन्द्र वाजिनो, मा भेम शवसः पते ।

त्वाम् अभि प्र नोनुमो, जेतारम् अपराजितम् ॥ 3 ॥ 1-11-2

मन्त्रार्थ :- सख्ये = मित्रभाव में ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = इन्द्र वाजिनो = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त मा = नहीं, मत भेम = डरो, भयभीत हो शवसः = विद्वानों का, प्रगतिशीलों का पते = पति, त्वाम् = तुमको, तुम्हारी अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक नोनुमो = स्तुति करते हैं जेतारम् = जीतने वाले को अपराजितम् = अपराजित को, पराजित न हुए को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सख्ये = मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = इन्द्र (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वाजिनो = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। भेम = डरो, भयभीत हो (भी - डरना, घबराना)। शवसः = विद्वानों का, प्रगतिशीलों का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। पते = पति, (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। नोनुमो = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। जेतारम् = जीतने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। अपराजितम् = अपराजित को, पराजित न हुए को (अ - नहीं, परा - अन्य, जि - जीतना, जय होना, अप = दूर, नीचे, अपकार, राज - प्रकाश होना, चमकना) ॥ 3 ॥

47. पूर्वीः इन्द्रस्य रातयो, न वि दस्यन्ति ऊतयः ।

यदा वाजस्य गोमतः, स्तोतृभ्यो मंहते मघम् ॥ 3 ॥

1-11-03

मन्त्रार्थ :- पूर्वीः = पूर्व इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का रातयो = अनुदान न = नहीं, समान, उपमार्थक वि = विशेष, विना, विलोम दस्यन्ति = रक्षा करते हैं, पालन करते हैं ऊतयः = रक्षक यदा = जब वाजस्य = विद्या का, गति का गोमतः = गोकुल का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले स्तोतृभ्यो = स्तुति के लिए मंहते = महत् के लिए, महान्, पूज्य के लिए मघम् = मघ को, धन को, ऐश्वर्य को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- पूर्वीः = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। रातयो = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। दस्यन्ति = रक्षा करते हैं, पालन करते हैं (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। ऊतयः = रक्षक (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव - रक्षा करना)। यदा = जब (सर्वनाम)। वाजस्य = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। गोमतः = गोकुल का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। स्तोतृभ्यो = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। मंहते = महत् के लिए, महान्, पूज्य के लिए (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। मघम् = मघ को, धन को, ऐश्वर्य को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 3 ॥

48. पुराम् भिन्दुः युवा कविः, अमितौजा अजायत ।

इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो, धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ॥ 4 ॥ 1-11-4

मन्त्रार्थ - पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। भिन्दुः = भेदन करने वाले (भिद्-भिन्द - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। युवा = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। अमितौजाः = अमित-ओज वाले, अतुल्य बलवान्, अमित प्रकाशवान् (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, मा - मापना, मान करना, ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना, तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। अजायत = उत्पन्न हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना)। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। विश्वस्य = विश्व, सभी, सब का (सर्वनाम)। कर्मणो = कर्मों का (कृ - करना)। धर्ता = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। वज्री = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। पुरुष्टुतः = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना) ॥ 4 ॥

पदार्थ :- पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। भिन्दुः = भेदन करने वाले (भिद्-भिन्द - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। युवा = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। अमितौजाः = अमित-ओज वाले, अतुल्य बलवान्, अमित प्रकाशवान् (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, मा - मापना, मान करना, ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना, तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। अजायत = उत्पन्न हुए

(अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वस्य** = विश्व, सभी, सब का (सर्वनाम)। **कर्मणो** = कर्मों का (कृ - करना)। **धर्त्ता** = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुषुतः** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुति - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना) ॥ 4 ॥

49. त्वम् बलस्य गोमतो, अप अवः अद्रिवो बिलम्।

त्वाम् देवाः अबिभ्युषः, तुज्यमानासः आविषुः ॥ 5 ॥

1-11-5

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम बलस्य = बल का गोमतो = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले अपावः = पालन करने वाले, पवित्र किया, पालन किया अद्रिवो = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला बिलम् = भेद, आच्छादन, आवरण त्वाम् = तुमको, तुम्हारी देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने अबिभ्युषः = निर्भय तुज्यमानासः = अनेक तुज्यमान, प्रकाशमान, दानी आविषुः = व्याप्त, पृथक्, विष ॥ 5 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। बलस्य = बल का (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सज्ज्य करना, द्रव्य को रोकना)। गोमतो = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। अपावः = पालन करने वाले, पवित्र किया, पालन किया (अप - पालन करना, पू - पवित्र करना, पवित्र होना, पा = पालन करना, रक्षा करना)। अद्रिवो = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्रृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। बिलम् = भेद, आच्छादन, आवरण (बिल् - आच्छादन करना, जाना, छेद करना, भेदना, भेदन करना, भाग करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अबिभ्युषः = निर्भय (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भी - डरना)। तुज्यमानासः = अनेक तुज्यमान, प्रकाशमान, दानी (तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। आविषुः = व्याप्त, पृथक्, विष (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, विष - उपयोग न होने से अलग करना या निकाल देना, व्याप्त होना) ॥ 5 ॥

50. इन्द्रम् ईशानम् ओजसा, अभि स्तोमाः अनूषत।

सहस्रम् यस्य रातयः, उत वा सन्ति भूयसीः ॥ 8 ॥

1-11-8

मन्त्रार्थ :- इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को ईशानम् = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को ओजसा = ओज द्वारा अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा स्तोमाः = स्तुतियों से अनूषत = अनुताप किया सहस्रम् = सहस्र को यस्य = जिसका रातयः = अनुदान उत = ही, भी, ओर वा = अथवा सन्ति = हैं भूयसीः = बार-बार, होने वाले ॥ 8 ॥

पदार्थ :- इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ईशानम् = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। स्तोमाः = स्तुतियों से (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। अनूषत = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। सहस्रम् = सहस्र को (संख्या)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। रातयः = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। वा = अथवा (अव्यय)। सन्ति = हैं (अस् - होना)। भूयसीः = बार-बार, होने वाले (भूयसीः = पुनः पुनः, बार-बार, बहुत (अव्यय), भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 8 ॥

अनुवाकः - 4

(12) सूक्त 12

51. अग्निम् दूतम् वृणीमहे, होतारम् विश्ववेदसम् ।

अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ 1 ॥ 1-12-1

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं होतारम् = हवन करने वाले को विश्ववेदसम् = सर्वज्ञ अस्य = इसका यज्ञस्य = यजन का सुक्रतुम् = अच्छा करने वाला को, सत्कर्म कर्ता को ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। होतारम् = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। विश्ववेदसम् = सर्वज्ञ (विद् = जानना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। सुक्रतुम् = अच्छा करने वाला को, सत्कर्म कर्ता को (कृ - करना) ॥ 1 ॥

52. अग्ने देवान् इह आ वह, जज्ञानो वृक्तबर्हिषे ।

असि होता नः ईड्यः ॥ 3 ॥ 1-12-3

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को इह = इसमें, यहां, यह आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वह = वहन करो, ले जाओ जज्ञानो = उत्पन्न किया, जाना वृक्तबर्हिषे = वृक्तों में श्रेष्ठ के लिए, स्वीकृतों में श्रेष्ठ के लिए असि = हो होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ईड्यः = स्तुत्य ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वह = वहन करो, ले जाओ (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। जज्ञानो = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना, ज्ञा - जानना)। वृक्तबर्हिषे = वृक्तों में श्रेष्ठ के लिए, स्वीकृतों में श्रेष्ठ के लिए (वृक्त- लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना, बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। असि = हो (अस् - होना)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ईड्यः = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 3 ॥

53. अग्निना अग्निः समिध्यते, कविः गृहपतिः युवा ।

हव्यवाङ् जुह्वास्यः ॥ 6 ॥ 1-12-6

मन्त्रार्थ :- अग्निना = अग्नि द्वारा, अग्नि के साथ अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् समिध्यते = सम्यक् प्रकाशित करते हैं कविः = ज्ञानी, कवि गृहपतिः = गृहपति युवा = युवा हव्यवाङ् = हव्य का वहन करने वाला, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाला जुह्वास्यः = दान ही जिसका आसन है, दानासन ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अग्निना = अग्नि द्वारा, अग्नि के साथ (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। समिध्यते = सम्यक् प्रकाशित करते हैं (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन

करना, चित्र खींचना)। **गृहपतिः** = गृहपति (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **युवा** = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **हव्यवाङ्** = हव्य का वहन करने वाला, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाला (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, वह - वहन करना, ले जाना)। **जुह्वास्यः** = दान ही जिसका आसन है, दानासन (हु-जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, ग्रहण करना, तृप्त करना, अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 6 ॥

54. कविम् अग्निम् उप स्तुहि, सत्यधर्माणम् अध्वरे।

देवम् अमीवचातनम् ॥ 7 ॥ 1-12-7

मन्त्रार्थ - कविम् = कवि को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को उप = समीप स्तुहि = स्तुत, स्तुह सत्यधर्माणम् = सत्य धर्म को अध्वरे = अहिंसक में देवम् = देव को अमीवचातनम् = शब्द, गति, सेवा युक्त वाणी ॥

पदार्थ - कविम् = कवि को (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। स्तुहि = स्तुत, स्तुह (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। सत्यधर्माणम् = सत्य धर्म को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व - ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, खेलना)। अमीवचातनम् = शब्द, गति, सेवा युक्त वाणी (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ + मा, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना, वच् - बोलना, कहना)। ॥ 7 ॥

55. यः त्वाम् अग्ने हविष्यतिः, दूतम् देव सपर्यति।

तस्य स्म प्राविता भव ॥ 8 ॥ 1-12-8

मन्त्रार्थ :- यः = जो त्वाम् = तुमको, तुम्हारी अग्ने = हे अग्नि हविष्यतिः = हविपति, दानी का स्वामी, तृप्त करने योग्य का स्वामी दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप सपर्यति = सेवा, आराधना करता है तस्य = उसका स्म = है प्राविता = प्रकृष्ट रक्षक भव = हो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। हविष्यतिः = हविपति, दानी का स्वामी, तृप्त करने योग्य का स्वामी (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सपर्यति = सेवा, आराधना करता है (सपर - पूजा करना, सेवा करना)। तस्य = उसका (सर्वनाम)। स्म = है (अस् - होना)। प्राविता = प्रकृष्ट रक्षक (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अच् - रक्षा करना)। भव = हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 8 ॥

56. यो अग्निम् देववीतये, हविष्मान् आविवासति।

तस्मै पावक मृडय ॥ 9 ॥ 1-12-9

मन्त्रार्थ :- यो = जो अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए हविष्मान् = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त आविवासति = वास करते हैं तस्मै = उसके लिए पावक = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला मृडय = सुख ॥ 9 ॥

पदार्थ :- यो = जो (सर्वनाम)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। हविष्मान् = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। आविवासति = वास करते हैं (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, वस् - बसना, रहना, निवास करना)। तस्मै = उसके लिए (सर्वनाम)। पावक = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। मृडय = सुख (मृड - सुखी होना, सुख देना) ॥ 9 ॥

(13) सूक्त 13

57. सुषमिद्धो नः आ वह, देवान् अग्ने हविष्मते ।

होतः पावक यक्षि च ॥ 1 ॥ 1-13-1

मन्त्रार्थ :- सुषमिद्धो = उत्तम सम्यक प्रकाशवान् नः = हमको, हमारे लिए, हमारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वह = वहन करो, ले जाओ देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को अग्ने = हे अग्नि हविष्मते = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त करो होतः = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले पावक = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला यक्षि = पूजा करो च = और ॥ 1 ॥

पदार्थ :- सुषमिद्धो = उत्तम सम्यक प्रकाशवान् (सु = उत्तम, श्रेष्ठ (उपसर्ग), सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वह = वहन करो, ले जाओ (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। हविष्मते = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त करो (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। होतः = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। पावक = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। यक्षि = पूजा करो (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। च = और ॥ 1 ॥

58. मधुमन्तम् तनूनपात्, यज्ञम् देवेषु नः कवे ।

अद्या कृणुहि वीतये ॥ 2 ॥ 1-13-2

मन्त्रार्थ :- मधुमन्तम् = मधुरता युक्त को तनूनपात् = विस्तार, पालन करने वाले, श्रद्धा, उपकार, शब्द का पालन-रक्षण करने वाले, वृद्धि के रक्षक यज्ञम् = यजन को देवेषु = देवों में नः = हमको, हमारे लिए, हमारा कवे = कवि अद्या = आज कृणुहि = करो वीतये = व्याप्त के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- मधुमन्तम् = मधुरता युक्त को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। तनूनपात् = विस्तार, पालन करने वाले, श्रद्धा, उपकार, शब्द का पालन-रक्षण करने वाले, वृद्धि के रक्षक (तनू-नपात्, तनून् - अपात्, तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना, अप् - पालन करना, पा - पालन-रक्षण करना, पत् - उड़ना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पद् - चलना)। यज्ञम् = यजन को (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। देवेषु = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। कवे = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। अद्या = आज (अव्यय)। कृणुहि = करो (कृ = करना)। वीतये = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना) ॥ 2 ॥

59. नराशंसम् इह प्रियम्, अस्मिन् यज्ञः उप ह्वये।

मधुजिह्वम् हविष्कृतम् ॥ 3 ॥ 1-13-3

मन्त्रार्थ :- नराशंसम् = नर की स्तुति करने वाले को, नर की प्रशंसा करने वाले को इह = इसमें, यहां, यह प्रियम् = प्रिय को अस्मिन् = इस, इसमें यज्ञः = यजन उप = समीप ह्वये = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं मधुजिह्वम् = मधुर जिह्वा वाले को हविष्कृतम् = हविकर्ता को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- नराशंसम् = नर की स्तुति करने वाले को, नर की प्रशंसा करने वाले को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना, शंस = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। अस्मिन् = इस, इसमें (सर्वनाम)। यज्ञः = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। ह्वये = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। मधुजिह्वम् = मधुर जिह्वा वाले को (मधु = मधुर होना, मीठा होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, मध्य होना, जिह् = चलना, जाना, जानना, पाना)। हविष्कृतम् = हविकर्ता को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, कृ - करना) ॥ 3 ॥

60. अग्ने सुखतमे रथे, देवान् ईडितः आ वह।

असि होता मनुः-हितः ॥ 4 ॥ 1-13-4

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि सुखतमे = अत्यन्त सुख में रथे = रथ में देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को ईडितः = स्तुति किया हुआ, जिसकी स्तुति की गयी है आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वह = वहन करो, ले जाओ असि = हो होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले मनुः = विचार हितः = हित, गति, वृद्धि ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सुखतमे = अत्यन्त सुख में (सुख - सुखी होना, सुखी करना, प्रसन्न करना)। रथे = रथ में (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। ईडितः = स्तुति किया हुआ, जिसकी स्तुति की गयी है, (ईड् = स्तुति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वह = वहन करो, ले जाओ (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। असि = हो (अस् - होना)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। मनुः = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। हितः = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना) ॥ 4 ॥

(14) सूक्त 15

61. ब्राह्मणात् इन्द्र राधसः, पिबा सोमम् ऋतून् अनु।

तव इदम् सख्यम् अस्तृतम् ॥ 5 ॥ 1-15-5

मन्त्रार्थ - ब्राह्मणात् = ब्राह्मण, ब्रह्म से सम्बन्धित इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली राधसः = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का पिबा = पियो, पान करें सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को ऋतून् = ऋतुओं को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल तव = तुम्हारा इदम् = यह, इसको सख्यम् = सखाभाव, मित्रता अस्तृतम् = आच्छादित किया ॥

पदार्थ - ब्राह्मणात् = ब्राह्मण, ब्रह्म से सम्बन्धित (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। राधसः = शुद्ध, निर्दोष निर्णय,

वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **ऋतून्** = ऋतुओं को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **अस्तृतम्** = आच्छादित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तृ - पूर्ण करना, आच्छादित करना, ढकना, फैलाना) ॥

अनुवाक:- 5

(15) सूक्त 18

62. सोमानाम् स्वरणम्, कृणुहि ब्रह्मणस्पते।

कक्षीवन्तम् यः औशिजः ॥ 1 ॥ 1-18-1

मन्त्रार्थ : ब्रह्मणस्पते हे महान् ऐश्वर्यशाली! **यः** जो **औशिजः** प्रभातजन्य **कक्षीवन्तम्** गर्वित प्यासे (हैं), (उनको) **सोमानम्** सृजनशील, ऐश्वर्यशाली, प्रेरक, **स्वरणम्** उपदेशक **कृणुहि** करो (बनाओ) ॥ 1 ॥

भावार्थ : जो प्रभातजन्य प्रकाशपुत्र हैं, उनको दिव्य विद्या, प्रकाश का गर्व तो है, साथ ही विद्या की प्यास भी है। वे सृजनशील, प्रेरक उपदेशक बनते हैं। अध्यात्म और विद्या का ऐश्वर्य उनको प्राप्त होता है ॥ 1 ॥

पदार्थ : **सोमानम्** = सृजनशील (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, सू = प्रेरणा देना)। **स्वरणम्** = उपदेशक (स्वृ = शब्द करना)। **कृणुहि** = करो (कृ = करना)। **ब्रह्मणस्पते** = ऐश्वर्यवृद्ध, बड़े ऐश्वर्यवाला (ब्रह् = बढ़ना, पत् = ऐश्वर्य होना)। **कक्षीवन्तम्** = गर्वित, प्यासा (कक् = गर्व करना, प्यास होना)। **यः** = जो। **औशिजः** = प्रभातजन्य (उषस् = प्रभात होना) ॥ 1 ॥

63. सदसः पतिम् अद्भुतम्, प्रियम् इन्द्रस्य काम्यम्।

सनिम् मेधाम् अयाषिम् ॥ 6 ॥ 1-18-6

मन्त्रार्थ - **सदसः** सभा के **पतिम्** रक्षक, पालक **अद्भुतम्** आश्चर्य जनक, **प्रियम्** प्रिय **इन्द्रस्य** इन्द्र के **काम्यम्** कमनीय। **सनिम्** दानी **मेधाम्** मेधा, बुद्धि को **अयाषिम्** प्राप्त होऊं ॥ 6 ॥

भावार्थ - इन्द्र के काम्य, प्रिय, अद्भुत सभापति, दानी मेधा को व्यापकता से प्राप्त होऊं, यह भावना है। स्वाहा शब्द यजन आदि सामूहिक कार्यक्रमों में मन्त्र के अन्त में सामान्यतः बोला जाता रहा है, जैसे मन्त्र के आरम्भ में अनिवार्य रूप से ओम् का उच्चारण किया जाता है। वहाँ भी भावना यही होती है कि जो मन्त्र हम उच्चारित कर रहे हैं, जो पवित्र कार्य हम कर रहे हैं, वह व्यापक हो, उसका लाभ सभी को प्राप्त हो। 6।

पदार्थ - **सदसः** = सभा के (सद् - बैठना) **पतिम्** = रक्षक, पालक (पत् - ऐश्वर्य होना, गति करना, उतरना, गिरना, शक्तिमान् होना, श्रीमान् होना, पराक्रम करना) **अद्भुतम्** = आश्चर्य जनक, प्रियम् प्रिय (प्री - प्रीति करना) **इन्द्रस्य** = इन्द्र के (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) **काम्यम्** = कमनीय (कम् - चाहना, इच्छा करना)। **सनिम्** = दानी (दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना) **मेधाम्** = मेधा, बुद्धि को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना) **अयाषिम्** = प्राप्त होऊं (अय् - जाना, चलना, जानना, पाना) ॥ 6 ॥

(16) सूक्त 19

64. प्रति त्यम् चारुम् अध्वरम्, गोपीथाय प्र ह्यसे।

मरुद्भिः अग्ने आ गहि ॥ 1 ॥ 1-19-1

मन्त्रार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **त्यम्** = उस को **चारुम्** = चारु को **अध्वरम्** = अहिसक, अवर्णनीय **गोपीथाय** = रक्षक के लिए, गो के, शब्द करने वालों के लिए, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक के लिए **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **हूयसे** = हूयस के लिए, आह्वान के लिए, दान, आदान-प्रदान, तृप्ति के लिए **मरुद्भिः** = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें ॥

पदार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **चारुम्** = चारु को (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **अध्वरम्** = अहिसक, अवर्णनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **गोपीथाय** = रक्षक के लिए, गो के, शब्द करने वालों के लिए, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **हूयसे** = हूयस के लिए, आह्वान के लिए, दान, आदान-प्रदान, तृप्ति के लिए (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मरुद्भिः** = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 1 ॥

(17) सूक्त 22

65. अतो देवाः अवन्तु नो, यतो विष्णुः विचक्रमे।

पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥ 16 ॥ 1-22-16

मन्त्रार्थ :- अतो = इससे देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने अवन्तु = प्रकाशित करें, रक्षा करें नो = हमको, हमारे लिए, हमारा यतो = जिससे विष्णुः = व्यापक, विष्णु ने विचक्रमे = रचना की पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के सप्त = सात (संख्या)। धामभिः = धामों द्वारा ॥ 16 ॥

पदार्थ :- अतो = इससे (अव्यय)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अवन्तु = प्रकाशित करें, रक्षा करें (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। यतो = जिससे (सर्वनाम)। विष्णुः = व्यापक, विष्णु ने (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना, वी = जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना। सम - घेरना, घेर लेना, लपेटना)। विचक्रमे = रचना की (वि = विशेष, कृ -करना, चक-तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। सप्त = सात (संख्या)। धामभिः = धामों द्वारा (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 16 ॥

66. इदम् विष्णुः विचक्रमे, त्रेधा नि दधे पदम्।

सम्-ऊढम् अस्य पांसुरे ॥ 17 ॥ 1-22-17

मन्त्रार्थ :- विष्णुः विष्णु ने इदम् इसकी विचक्रमे रचना की। त्रेधा तीन प्रकार से पदम् पद (ज्ञान, गति) को नि दधे धारण (स्थापित) किया। अस्य इसकी सम् सम्यक् ऊढम् वाणी पांसुरे पांसुल में ॥ 17 ॥

भावार्थ :- विष्णु का अर्थ है सर्वव्यापक अर्थात् परमात्मा। उन्होंने इस सृष्टि की रचना की। तीन प्रकार से पदस्थापित किया अर्थात् सृष्टि तीन रूपों में है। इसे चेतना, ऊर्जा, द्रव्य कह सकते हैं। सत्, रज, तम भी कहा जा सकता है ॥ 17 ॥

पदार्थ : इदम् = यह, इसको। विष्णुः = विष्णु (विष्ण् = व्याप्त होना)। विचक्रमे = रचना की (वि = विशेष, चक-तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। त्रेधा = तीन प्रकार से (त्रि = तीन)। नि = निश्चित। दधे = धारण करें (दध - धारण करना)। पदम् = पद को (पद - चलना, स्थानान्तर करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। ऊढम् = वाणी को (ऊ

- शब्द करना)। अस्य = इसका। पांसुरे = पांसुल में (पा - रक्षा करना, पालन करना)। स्वाहा = व्यापक हो (अह = व्याप्त होना, फैलना, विस्तृत होना) ॥ 17 ॥

67. त्रीणि पदा वि चक्रमे, विष्णुः गोपा अदाभ्यः ।

अतो धर्माणि धारयन् ॥ 18 ॥ 1-22-18

मन्त्रार्थ - अदाभ्यः अदाभ्य, जिसे आज्ञा देना सम्भव नहीं, अहिंसनीय गोपा रक्षक विष्णुः विष्णु ने त्रीणि तीन पदा पद से वि चक्रमे पराक्रम किया। अतो इससे धर्माणि धर्म को धारयन् धारण किया ॥ 18 ॥

भावार्थ - विष्णु का अर्थ है व्यापक अर्थात् सर्वव्यापी परमात्मा। उसका पराक्रम तीन लोक, तीन काल में सर्वदा होता रहता है। इससे ही धर्म प्रतिष्ठित रहता है। 18

पदार्थ :- त्रीणि = तीन। पदा = पद से (पद - स्थानान्तर करना)। वि = विशेष, विना, विलोम। चक्रमे = पराक्रम किया (कृ - करना, चक - तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। विष्णुः = व्यापक, विष्णु ने (विष् = व्याप्त होना)। गोपा = रक्षक (गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना)। अदाभ्यः = अदाभ्य (दभ - हिंसा करना, आज्ञा देना)। अतो = इससे। धर्माणि = धर्म को (धृ = धारण करना)। धारयन् = धारण किया (धृ-धा = धारण करना) ॥ 18 ॥

68. विष्णोः कर्माणि पश्यत, यतो व्रतानि पस्पशे ।

इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ 19 ॥ 1-22-19

मन्त्रार्थ :- विष्णोः = विष्णु का कर्माणि = कर्मों को पश्यत = देखो, यतो = जिससे व्रतानि = व्रतों को पस्पशे = बाँधते हैं। इन्द्रस्य = इन्द्र का युज्यः = योग्य सखा = मित्र (है) ॥ 19 ॥

भावार्थ :- विष्णु अर्थात् व्यापक परमात्मा के कर्मों को देखें। परमात्मा निरन्तर कर्मरत है। वह कर्म करने के लिए बाध्य नहीं है, फिर भी निरन्तर कर्म करता है। स्वाभाविक है कि हमसे भी यही अपेक्षा है। सभी व्रत-संकल्प उसी परमात्मा से तथा उसकी तरह कर्म करते रहेने से ही सम्भव हो पाते हैं। वह परमात्मा तथा निरन्तर कर्मशीलता ही इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्य का योग्य सखा है, मित्र है, साथी है ॥ 19 ॥

पदार्थ :- विष्णोः = विष्णु का (विष्-विविष् - व्याप्त होना, अभिषेक करना, सींचना, अलग करना)। कर्माणि = कर्मों को। पश्यत = देखो (पश् - देखना)। यतः = जिससे। व्रतानि = व्रतों को (वृ = वरण करना)। पस्पशे = बाँधते हैं (पश-पष-स्पश - बांधना, एकत्र करना, संयुक्त करना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य (ऐश्वर्य) होना)। युज्यः = योग्य (युज - जोड़ना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ 19 ॥

69. तत् विष्णोः परमम् पदम्, सदा पश्यन्ति सूरयः ।

दिवि इव चक्षुः आ ततम् ॥ 20 ॥ 1-22-20

मन्त्रार्थ :- तत् = वह, विष्णोः = विष्णु के परमम् = परम पदम् = पद को सदा = सर्वदा, सर्वकाल, दिवि = दिवलोक इव = के समान ततम् = विस्तृत चक्षुः = दृष्टि वाले सूरयः = सूरगण आ = समन्तात्, सम्यक् पश्यन्ति = देखते हैं ॥ 20 ॥

भावार्थ :- विष्णु अर्थात् व्यापक परमात्मा के व्यापक दृष्टि तथा विचार वाले उपासक उसके परम पद अथवा मूल स्वरूप का अनुभव करते हैं ॥ 20 ॥

पदार्थ :- तत् = वह। विष्णोः = विष्णु का (विष्-विविष् = सींचना, व्याप्त होना)। परमम् = परम, अत्यन्त। पदम् = पद को (पद - चलना, स्थानान्तर करना)। सदा = प्रत्येक समय, सर्वदा। पश्यन्ति = देखते हैं (पश् = देखना)। सूरयः = प्रकाशवान्, ऐश्वर्यवान् (सुर् = प्रकाश होना, ऐश्वर्य होना)। दिवि = दिव में (दिव् = तेजस्वी होना, विद्वान् होना)। इव = के समान। चक्षुः = आँख (चक्ष् - देखना)। आ-ततम् = विस्तृत (तन् = विस्तार, फैलाना, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, भरोसा करना, आश्रय देना, सहाय करना, शब्द करना ॥ 20 ॥

70. तत् विप्रासो विपन्युवो, जागृवांसः समिन्धते ।

विष्णोः यत् परमम् पदम् ॥ 21 ॥ 1-22-21

मन्त्रार्थ- विष्णोः विष्णु का यत् जो परमम् परम पदम् पद (हैं), तत् उसको विप्रासो विशेष पूर्ण विपन्युवो विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले जागृवांसः जाग्रत रहकर समिन्धते प्रकाशित करते हैं ॥ 21 ॥

भावार्थ - विपन्यवः का अर्थ है विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले जन। वि उपसर्ग का अर्थ विशेष के साथ ही विलोम अथवा विपरीत भी होता है। इस प्रकार इसका अर्थ लोक व्यवहार से मुक्त अर्थात् सांसारिकता से विरत निष्काम उपासक भी हो सकता है। दोनों ही अर्थ स्वीकार्य हैं। वि उपसर्ग के साथ पन-पण धातु से यह शब्द बना है। इस धातु का अर्थ लोक-व्यवहार के साथ ही स्तुति करना भी होता है। सामान्यतः व्यापार के अर्थ में इसका प्रयोग होता है। 21 ॥

पदार्थ :- तत् = वह। विप्रासो = विप्रगण, लोकाचार मुक्त (वि + प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। विपन्युवो = विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले (पन - व्यवहार करना, प्रशंसा करना, स्तुति करना)। जागृवांसः = जाग्रत रहकर (जागृ - जगना, नींद न लेना)। समिन्धते = प्रकाशित करते हैं (इन्ध = प्रकाश होना)। विष्णोः = विष्णु का, व्यापक का (विष् - व्यापक होना)। यत् = जो। परमम् = परम। पदम् = पद (पद - चलना, स्थानान्तर करना) ॥ 21 ॥

(18) सूक्त 23

71. मित्रम् वयम् हवामहे, वरुणम् सोमपीतये।

जज्ञाना पूतदक्षसा ॥ 4 ॥ 1-23-4

मन्त्रार्थ :- मित्रम् = मित्र को वयम् = हम, हम सब, हम लोग हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं वरुणम् = वरुण को सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए जज्ञाना = उत्पन्न किया, जाना पूतदक्षसा = पवित्र दक्षता द्वारा ॥ 4 ॥

पदार्थ :- मित्रम् = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। वरुणम् = वरुण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। जज्ञाना = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना, ज्ञा - जानना)। पूतदक्षसा = पवित्र दक्षता द्वारा (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना, पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना) ॥ 4 ॥

72. ऋतेन यौ ऋतावृधौ, ऋतस्य ज्योतिषः पती।

ता मित्रावरुणा हुवे ॥ 5 ॥ 1-23-5

मन्त्रार्थ :- ऋतेन = ऋत द्वारा यौ = जो दोनों ऋतावृधौ = ऋतावृध, ऋत से वर्धित ऋतस्य = ऋत का ज्योतिषः = ज्योति का पती = ऐश्वर्यवान्, स्वामी ता = वे, वह, वे दोनों मित्रावरुणा = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ :- ऋतेन = ऋत द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। यौ = जो दोनों (सर्वनाम)। ऋतावृधौ = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। ज्योतिषः = ज्योति का (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। पती = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना,

गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **ता** = वे, वह, वे दोनों (सर्वनाम)। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 5 ॥

(19) सूक्त 24

73. उत् उत्तमम् वरुण पाशम् अस्मत्, अव अधमम् वि मध्यमम् श्रथाय ।

अथ वयम् आदित्य व्रते, तव अनागसो अदितये स्याम ॥ 15 ॥ 1-24-15

मन्त्रार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा **वरुण** = वरणीय, वरण करने वाला **पाशम्** = पाश को, दिखाने वाले को, बन्धन को **अस्मत्** = हमसे अव = रक्षा करो, पालन करो **अधमम्** = अधम को, न फूँकने वाले को **वि** = विशेष, विना, विलोम **मध्यमम्** = मध्य को **श्रथाय** = श्रथ के लिए **अथ** = अथ **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **आदित्य** = हे आदित्य, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न **व्रते** = वरण करने के लिए, व्रत के लिए, व्रत में **तव** = तुम्हारा **अनागसो** = अपराध रहित, निष्पाप, निर्दोष **अदितये** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी। **स्याम** = हों ॥ 15 ॥

पदार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **वरुण** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पाशम्** = पाश को, दिखाने वाले को, बन्धन को (पश् - देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना)। **अस्मत्** = हमसे (सर्वनाम)। **अव** = रक्षा करो, पालन करो (अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अधमम्** = अधम को, न फूँकने वाले को (अधः = नीचे, अव्यय)। **धम्-ध्मा** - फूँकना, फूँक कर आग जलाना, फूँककर वंशी आदि वाद्य बजाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मध्यमम्** = मध्य को (सर्वनाम)। **श्रथाय** = श्रथ के लिए (श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। **अथ** = अथ (अव्यय)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **आदित्य** = हे आदित्य, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **व्रते** = वरण करने के लिए, व्रत के लिए, व्रत में (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **अनागसो** = अपराध रहित, निष्पाप, निर्दोष (अन्- नहीं, अग- कुटिल चाल चलना, अनुचित आचरण करना)। **अदितये** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **स्याम** = हों (अस् - होना) ॥ 15 ॥

अनुवाकः - 6

(20) सूक्त 25

74. इमम् मे वरुण श्रुधी, हवम् अद्य आ च मृडय ।

त्वाम् अवस्युः आ चके ॥ 19 ॥ 1-25-19

मन्त्रार्थ - **इमम्** = इसको **मे** = मेरा, मेरे लिए **वरुण** = वरुण **श्रुधी** = सुनता है **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य **अद्य** = आज **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **च** = और। **मृडय** = सुख करो **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **अवस्युः** = रक्षक, रक्षणीय **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **चके** = तृप्त होना चाहता हूँ ॥

पदार्थ - **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **वरुण** = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **श्रुधी** = सुनता

है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **च** = और। **मृडय** = सुख करो (मृड - सुखी होना, सुख देना)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **अवस्युः** = रक्षक, रक्षणीय (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **चके** = तृप्त होना चाहता हूँ (चक् = तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, चकमा देना, धोखा देना) ॥ 19 ॥

(21) सूक्त 26

75. यत् चित् हि शश्वता, तना देवम् देवम् यजामहे।

त्वे इत् हूयते हविः ॥ 6 ॥ 1-26-6

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो चित् = भी, ही। हि = ही, निश्चय शश्वता = शश्वत तना = विस्तार करो देवम्-देवम् = सभी विद्वान्, तेजस्वी, देव को यजामहे = यजन करते हैं त्वे = तुममें इत् = ही हूयते = आह्वान करता है, दान करता है हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य ॥ 6 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। चित् = भी, ही। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। शश्वता = शश्वत (शश्व - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। तना = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। देवम्-देवम् = सभी विद्वान्, तेजस्वी, देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। यजामहे = यजन करते हैं (यज् = पूजा करना, देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। त्वे = तुममें (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। हूयते = आह्वान करता है, दान करता है (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 6 ॥

76. प्रियो नो अस्तु विश्वपतिः, होता मन्द्रो वरेण्यः।

प्रियाः सु अग्नयो वयम् ॥ 7 ॥ 1-26-7

मन्त्रार्थ :- प्रियो = प्रिय नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अस्तु = हो विश्वपतिः = विश्व के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले मन्द्रो = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले वरेण्यः = वरणीय, वरण करने वाला प्रियाः = प्रिय सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर अग्नयो = अग्निगण, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, अग्नियाँ वयम् = हम, हम सब, हम लोग ॥ 7 ॥

पदार्थ :- प्रियो = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अस्तु = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। विश्वपतिः = विश्व के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश्व - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। मन्द्रो = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। वरेण्यः = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। प्रियाः = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। अग्नयो = अग्निगण, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, अग्नियाँ (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम) ॥ 7 ॥

77. विश्वेभिः अग्ने अग्निभिः, इमम् यज्ञम् इदम् वचः ।

चनो धाः सहस्रो यहो ॥ 10 ॥ 1-26-10

मन्त्रार्थ :- विश्वेभिः = सब के द्वारा, विश्व द्वारा अग्ने = हे अग्नि अग्निभिः = अग्नियों द्वारा इमम् = इसको यज्ञम् = यजन को इदम् = यह, इसको वचः = वचन चनो = वाणी, विश्वास धाः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो सहस्रो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए यहो = पूज्य, सम्मानित ॥

पदार्थ :- विश्वेभिः = सब के द्वारा, विश्व द्वारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अग्निभिः = अग्नियों द्वारा (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। इमम् = इसको (सर्वनाम)। यज्ञम् = यजन को (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। वचः = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। चनो = वाणी, विश्वास (चन् - स्मरण करना, शब्द करना, विश्वास करना, मिलाना, अलग करना, हिंसा करना)। धाः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो (धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। सहस्रो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। यहो = पूज्य, सम्मानित (यह-मह = पूजा करना, सम्मान करना) ॥ 10 ॥

(22) सूक्त 27

78. अश्वम् न त्वा वारवन्तम्, वन्दध्या अग्निम् नमोभिः ।

सम्राजन्तम् अध्वराणाम् ॥ 1 ॥ 1-27-1

मन्त्रार्थ - अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वारवन्तम् = वारवन्त को, वरणों को, वरणीय, वरण करने वालों को वन्दध्या = वन्दना करता है अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को नमोभिः = बहुशः नमन द्वारा सम्राजन्तम् = सम्यक् प्रकाशमान को अध्वराणाम् = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का ॥ 1 ॥

पदार्थ - अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वारवन्तम् = वारवन्त को, वरणों को, वरणीय, वरण करने वालों को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। वन्दध्या = वन्दना करता है (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नमोभिः = बहुशः नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। सम्राजन्तम् = सम्यक् प्रकाशमान को (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। अध्वराणाम् = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना) ॥ 1 ॥

79. सः घा नः सूनुः शवसा, पृथुप्रगामा सुशेवः ।

मीद्वान् अस्माकम् बभूयात् ॥ 2 ॥ 1-27-2

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने घा = ही नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सूनुः = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा पृथुप्रगामा = विस्तृत-प्रगाथा, प्रकृष्ट प्रगतिशील सुशेवः = उत्तम कल्याण वाला, उत्तम सुख वाला मीद्वान् = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले अस्माकम् = हमारा बभूयात् = हो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। घा = ही (अव्यय, निपात)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)।

सूनुः = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **शवसा** = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **पृथुप्रगामा** = विस्तृत-प्रगाथा, प्रकृष्ट प्रगतिशील (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भोजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना, प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सुशेवः** = उत्तम कल्याण वाला, उत्तम सुख वाला (सु - अच्छा, सुन्दर, शेव् - सेचन, घर्षण, सेवा करना, शिव् = कल्याण होना, सुख होना)। **मीद्वान्** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले (मिह् - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **बभूयात्** = हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 2 ॥

80. सः नो दूरात् च आसात्, च नि मर्त्यात् अघायोः ।

पाहि सदम् इत् विश्वायुः ॥ 3 ॥ 1-27-3

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा दूरात् = दूर से च = और आसात् = समीप, दूर च = और नि = निश्चित, निरन्तर मर्त्यात् = मर्त्यो से, मरणशीलों से अघायोः = पापी, अपराधी पाहि = पालन करो, रक्षा करो सदम् = सदन, स्थान को इत् = ही विश्वायुः = सम्पूर्ण आयु ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। दूरात् = दूर से (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। आसात् = समीप, दूर (अव्यय)। च = और (अव्यय)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। मर्त्यात् = मर्त्यो से, मरणशीलों से (मृ = मरना, देहत्याग करना)। अघायोः = पापी, अपराधी (अघ् = पाप, अपराध करना)। पाहि = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। सदम् = सदन, स्थान को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। इत् = ही (अव्यय)। विश्वायुः = सम्पूर्ण आयु (विश्व + आयुः, विश्व - सभी, सर्वनाम, अय - जाना) ॥ 3 ॥

81. इमम् ऊ षु त्वम् अस्माकम्, सनिम् गायत्रम् नव्यांसम् ।

अग्ने देवेषु प्र वोचः ॥ 4 ॥ 1-27-4

मन्त्रार्थ - इमम् = इसको ऊ = निश्चय ही, भी षु = अच्छा त्वम् = तुम अस्माकम् = हमारा सनिम् = दानी गायत्रम् = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को नव्यांसम् = नवीनता को, स्तुतियोग्य को अग्ने = हे अग्नि देवेषु = देवों में प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वोचः = वाणी, बोलो ॥ 4 ॥

पदार्थ - इमम् = इसको (सर्वनाम)। ऊ = निश्चय ही, भी। षु = अच्छा। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। अस्माकम् = हमारा (सर्वनाम)। सनिम् = दानी (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। गायत्रम् = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। नव्यांसम् = नवीनता को, स्तुतियोग्य को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। देवेषु = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वोचः = वाणी, बोलो (वच् - बोलना, कहना) ॥ 4 ॥

82. आ नो भज परमेषु, आ वाजेषु मध्यमेषु ।

शिक्षा वरवो अन्तमस्य ॥ 5 ॥ 1-27-5

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा भज = सेवा करो, सेवा में लगाओ परमेषु = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में आ = हमको, हमारे लिए, हमारा वाजेषु = वाजों में मध्यमेषु = मध्यमों में शिक्षा = शिक्षा वरवो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले अन्तमस्य = अन्तम का, प्राणवान् का ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। भज = सेवा करो, सेवा में लगाओ (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना,

अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **परमेषु** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में (अव्यय)। **आ** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वाजेषु** = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मध्यमेषु** = मध्यमों में (सर्वनाम)। **शिक्षा** = शिक्षा (शिक्ष - शिक्षा देना)। **वस्वो** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अन्तमस्य** = अन्तम का, प्राणवान् का (अन् = प्राणवान् होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना) ॥ 5 ॥

83. विभक्ता असि चित्रभानो, सिन्धोः ऊर्मा उपाके आ ।

सद्यो दाशुषे क्षरसि ॥ 6 ॥ 1-27-6

मन्त्रार्थ :- विभक्ता = विभाग करने वाले असि = हो चित्रभानो = हे चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले सिन्धोः = समुद्र ऊर्मा = ऊर्म उपाके = उपकुटिल गति में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सद्यो = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य दाशुषे = दानी के लिए क्षरसि = क्षरता है, झरता है, गिरता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- विभक्ता = विभाग करने वाले (भज् - सेवा करना, दान करना, वि-भज् - विभाजन करना, बाँटना)। असि = हो (अस् - होना)। चित्रभानो = हे चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। सिन्धोः = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। ऊर्मा = ऊर्म (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। उपाके = उपकुटिल गति में (उप - समीप, अक् = जाना, जानना, पाना, वक्र गति होना, कुटिल गति होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सद्यो = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य (सद् - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना)। क्षरसि = क्षरता है, झरता है, गिरता है (क्षर् - टपकना, झरना, गिरना) ॥

84. यम् अग्ने पृत्सु मर्त्यम्, अवा वाजेषु यम् जुनाः ।

सः यन्ता शश्वतीः इषः ॥ 7 ॥ 1-27-7

मन्त्रार्थ :- अग्ने - हे अग्नि, यम् - जिस, मर्त्यम् - मरणशील को, पृत्सु - व्यापक बलों में, बलपूर्वक ले जाने में, अवा - रक्षा करते हो, यम् - जिसको, वाजेषु - बल, गति, ज्ञान, सिद्धियों में, जुनाः - जाते हो, जानते हो, प्राप्त होते हो। स - वह, यन्ता - नियमन करने वाला, शश्वतीः - शश्वत, अविनाशी, इषः - इच्छा, गति, निरन्तर दर्शन करने वाला ॥

भावार्थ :- मनुष्य मरणशील है, उसे भय स्वाभाविक है। अग्नि अर्थात् परमात्मा का संरक्षण हमें प्राप्त है। हम उस अविनाशी की कामना करते हैं। यही भावना सर्वत्र व्याप्त हो। 7 ॥

पदार्थ :- यम् = जिसको। अग्ने = हे अग्नि! (अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना, पहुंचना, पाना)। पृत्सु - व्यापक बलों में, बलपूर्वक ले जाने में (पृत् - व्याप्त होना, बल होना, बलपूर्वक निकालना)। मर्त्यम् - मरणशील को (मृ = मरना)। अवा - रक्षा करते हो (अव् = रक्षा करना)। वाजेषु - बल, गति, ज्ञान, सिद्धियों में (वाज् = बल होना, गति करना, जानना, पाना, सिद्ध करना)। यम् = जिसको। जुनाः - जाते हो, जानते हो, प्राप्त होते हो (जुन - जाना, जानना, पाना, हिलना, कांपना)। सः = वह। यन्ता - नियमन करने वाला (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, पोषण करना)। शश्वतीः - शश्वत, अविनाशी, द्रुतगामी (शश - फुदकते हुए चलना, कूदते हुए जाना)। इषः - इच्छा, गति, निरन्तर दर्शन करने वाला (इष् = इच्छा करना, गति करना, निरन्तर देखना, जाना, जानना, पाना) ॥ 7 ॥

85. न किः अस्य सहन्त्य, पर्येता कयस्यचित् ।

वाजो अस्ति श्रवाय्यः ॥ 8 ॥ 1-27-8

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक किः = कोई, किसी अस्य = इसका सहन्त्य = हे सक्षम, समर्थ, तृप्त,

सन्तुष्ट, प्रतिरोध करने वाले **पर्येता** = सर्वत्रगामी **कयस्यचित्** = किसी का, विद्वान् का ही **वाजो** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **अस्ति** = है **श्रवाय्यः** = श्रवाय्य, श्रव्य ॥ 8 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **सहन्त्य** = हे सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध करने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **पर्येता** = सर्वत्रगामी (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना, ए - जाना, फैलना, व्यापना, गर्भवती होना, इच्छा करना, चाहना, खाना, उड़ाना, फेंकना, भेजना, प्रेरणा करना, ए-अय - शब्द करना)। **कयस्यचित्** = किसी का, विद्वान् का ही (कयस्यचित्-कश्चित् - किसी का, कि - जानना समझना)। **वाजो** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **श्रवाय्यः** = श्रवाय्य, श्रव्य (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 8 ॥

86. सः वाजम् विश्वचर्षणिः, अर्वदिभः अस्तु तरुता ।

विप्रेभिः अस्तु सनिता ॥ 9 ॥ 1-27-9

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **वाजम्** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त को **विश्वचर्षणिः** = सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील **अर्वदिभः** = प्रगतिशीलों, व्यापकों द्वारा **अस्तु** = हो **तरुता** = पार करने वाला, तारने वाला, तारक **विप्रेभिः** = विप्रों द्वारा **अस्तु** = हो **सनिता** = सेवित ॥ 9 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **वाजम्** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **विश्वचर्षणिः** = सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील (विश्व - सभी, चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **अर्वदिभः** = प्रगतिशीलों, व्यापकों द्वारा (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **तरुता** = पार करने वाला, तारने वाला, तारक (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **विप्रेभिः** = विप्रों द्वारा (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **सनिता** = सेवित (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना) ॥ 9 ॥

87. जराबोध तत् विविड्ढि, विशेविशे यज्ञियाय ।

स्तोमम् रुद्राय दृशीकम् ॥ 10 ॥ 1-27-10

मन्त्रार्थ - जराबोध = जराबोध **तत्** = वह, उस को **विविड्ढि** = शब्द करना, प्रविश करना **विशेविशे** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **यज्ञियाय** = यजनीय के लिए **स्तोमम्** = स्तोम **रुद्राय** = रुद्र के लिए **दृशीकम्** = देखने को **दृशीक** को ॥

पदार्थ - जराबोध = जराबोध (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना, बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **विविड्ढि** = शब्द, प्रविश करना (वि - विशेष, विड्-विट् = शब्द करना, परिहास करना, शाप देना, विद - समझना, जानना, विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **विशेविशे** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **यज्ञियाय** = यजनीय के लिए, (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **स्तोमम्** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **रुद्राय** = रुद्र के लिए (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। **दृशीकम्** = देखने को, **दृशीक** को (दृश्-पश्य - देखना) ॥ 10 ॥

88. सः नो महान् अनिमानो, धूमकेतुः पुरुः चन्द्रः ।

धिये वाजाय हिन्वतु ॥ 11 ॥ 1-27-11

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा महान् = बड़े, पूज्य, महान् अनिमानो = अनिश्चित, अनन्त, अमापनीय, प्राणवान् धूमकेतुः = धूमकेतु समूह पुरुः = बहुत चन्द्रः = उत्तम आनन्दप्रद, उत्तम प्रकाशमान धिये = धारणा शक्ति, बुद्धि के लिए वाजाय = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए हिन्वतु = संतुष्ट, तृप्त करे ॥ 11 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम) । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) । महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) । अनिमानो = अनिश्चित, अनन्त, अमापनीय, प्राणवान् (अनि+मानः, अ+नि+मानः, अ = नहीं, नि = निश्चित, निरन्तर, मान - मान करना, पूजा करना, ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा करना, शोध करना, सत्कार करना, मनाना, तोलना, तुलना करना, मापना, अन - प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, जानना, पाना) । धूमकेतुः = धूमकेतु समूह (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना, केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, सलाह देना) । पुरुः = बहुत (सर्वनाम) । चन्द्रः = उत्तम आनन्दप्रद, उत्तम प्रकाशमान (सु - अच्छा, सुन्दर, चन्द्र - आनन्द होना, चमकना) । धिये = धारणा शक्ति, बुद्धि के लिए (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) । वाजाय = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) । हिन्वतु = संतुष्ट, तृप्त करे (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना) ॥

89. सः रेवान् इव विश्पतिः, दैव्यः केतुः शृणोतु नः ।

उक्थैः अग्निः बृहत् भानुः ॥ 12 ॥ 1-27-12

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने रेवान् = विद्वान् इव = समान, की भाँति, के समान विश्पतिः = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी दैव्यः = दिव्य केतुः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता शृणोतु = सुनें नः = हमको, हमारे लिए, हमारा उक्थैः = उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् भानुः = प्रकाशमान ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम) । रेवान् = विद्वान् (रिक् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना, रै = शब्द करना) । इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) । विश्पतिः = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना) । दैव्यः = दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) । केतुः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना) । शृणोतु = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना) । नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) । उक्थैः = उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना) । अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) । बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) । भानुः = प्रकाशमान (भा - चमकना, प्रकाशित होना) ॥ 3 ॥

(23) सूक्त 29

90. रेवतीः नः सधमाद, इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः ।

क्षुमन्तो याभिः मदेम ॥ 13 ॥ 1-29-13

मन्त्रार्थ - रेवतीः = गतिशीलता नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सधमाद = आनन्द के साथ, सानन्द इन्द्रे =

इन्द्र में सन्तु = हों तुविवाजाः = तुविवाजा क्षुमन्तो = विद्वान्, गतिशील, शब्दकर्ता याभिः = जिसके द्वारा मदेम = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें ॥ 13 ॥

पदार्थ - रेवतीः = गतिशीलता (रिक् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सधमाद** = आनन्द के साथ, सानन्द (सध+मद्, सद्+मद्, सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्रे** = इन्द्र में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सन्तु** = हों (अस् - होना)। **तुविवाजाः** = तुविवाजा (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **क्षुमन्तो** = विद्वान्, गतिशील, शब्दकर्ता (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। **याभिः** = जिसके द्वारा (सर्वनाम)। **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें (मद् - हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना) ॥ 13 ॥

(24) सूक्त 30

91. आ वः इन्द्रम् कृविम् यथा, वाजयन्तः शतक्रतुम्।

मंहिष्ठम् सिञ्चे इन्दुभिः ॥ 1 ॥ 1-30-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए **इन्द्रम्** = इन्द्र को **कृविम्** = मारने को, दुःख देने को **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान **शतक्रतुम्** = सैकड़ों कर्म करने वाले को **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को **सिञ्चे** = सिञ्चन करता है **इन्दुभिः** = इन्दु ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **कृविम्** = मारने को, दुःख देने को (कृवि - मार डालना, सताना, दुःख देना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **शतक्रतुम्** = सैकड़ों कर्म करने वाले को (शत - सौ, कृ - करना)। **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सिञ्चे** = सिञ्चन करता है (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **इन्दुभिः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 1 ॥

92. अयम् उ ते समतसि, कपोत इव गर्भधिम्।

वचः तत् चित् नः ओहसे ॥ 4 ॥ 1-30-4

मन्त्रार्थ - अयम् = यह **उ** = निश्चय ही, भी **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **समतसि** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में **कपोत** = कपोत, कम्पन करने वाले, कम्पित करने वाले **इव** = समान, की भाँति, के समान **गर्भधिम्** = गर्भ को धारण करने वाले को **वचः** = वचन **तत्** = वह, उस को **चित्** = चेतन **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ओहसे** = ओहस के लिए ॥ 4 ॥

पदार्थ - अयम् = यह (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **समतसि** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **कपोत** = कपोत, कम्पन करने वाले, कम्पित करने वाले (कम्प् = कम्पन करना, चलना, सहना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **गर्भधिम्** = गर्भ को धारण करने वाले को (गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **चित्** = चेतन, (चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ओहसे** = ओहस के लिए (ओह - उह - मार डालना, नष्ट करना, दुःख देना, सताना, ऊह = अनुमान करना, कल्पना करना, तर्क करना) ॥ 4 ॥

93. स्तोत्रम् राधानाम् पते, गिर्वाहो वीर यस्य ते।

विभूतिः अस्तु सूनृता ॥ 5 ॥ 1-30-5

मन्त्रार्थ :- स्तोत्रम् = स्तोत्र को, स्तुति होने को राधानाम् = शुद्ध, निर्दोष, निर्णय, वृद्धि का पते = पति गिर्वाहो = वाणी का वहन करने वाले वीर = पराक्रमी, वीर यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए विभूतिः = विभूति अस्तु = हो सूनृता = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली ॥ 5 ॥

पदार्थ :- स्तोत्रम् = स्तोत्र को, स्तुति होने को (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। राधानाम् = शुद्ध, निर्दोष, निर्णय, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। पते = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। गिर्वाहो = वाणी का वहन करने वाले (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। वीर = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। विभूतिः = विभूति (वि + भू = होना, पाना, चिन्तन करना)। अस्तु = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। सूनृता = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना) ॥ 5 ॥

94. ऊर्ध्वः तिष्ठ आ नः ऊतये, अस्मिन् वाजे शतक्रतो।

सम् अन्येषु ब्रवावहै ॥ 6 ॥ 1-30-6

मन्त्रार्थ :- ऊर्ध्वः = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व तिष्ठ = उठो, ठहरो, खड़े हो आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ऊतये = रक्षा के लिए अस्मिन् = इस, इसमें वाजे = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति अन्येषु = अन्यो में ब्रवावहै = बोलते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ :- ऊर्ध्वः = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। तिष्ठ = उठो, ठहरो, खड़े हो (तिष् = ठहरना, खड़ा होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। अस्मिन् = इस, इसमें (सर्वनाम)। वाजे = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील (शत - सौ, कृ - करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। अन्येषु = अन्यो में (सर्वनाम)। ब्रवावहै = बोलते हैं (ब्रू - कहना, बोलना) ॥

95. योगे योगे तवस्तरम्, वाजे वाजे हवामहे।

सखायः इन्द्रम् ऊतये ॥ 07 ॥ 1-30-7

मन्त्रार्थ :- योगे = योग में योगे = योग में तवस्तरम् = अत्यन्त प्रगतिवान्, वृद्धिवान्, हिंसक को वाजे = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए वाजे = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं सखायः = मित्र इन्द्रम् = इन्द्र को ऊतये = रक्षा के लिए ॥ 07 ॥

पदार्थ :- योगे = योग में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। योगे = योग में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। तवस्तरम् = अत्यन्त प्रगतिवान्, वृद्धिवान्, हिंसक को (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। वाजे = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना,

बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वाजे** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 07 ॥

96. आ घा गमत् यदि श्रवत्, सहस्रिणीभिः ऊतिभिः ।

वाजेभिः उप नो हवम् ॥ 8 ॥ 1-30-8

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण घा = ही, भी गमत् = जाते हैं यदि = यदि श्रवत् = सुनें सहस्रिणीभिः = सहस्रियों द्वारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा वाजेभिः = वाजियों द्वारा उप = समीप नो = हमको, हमारे लिए, हमारा हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य ॥ 8 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। घा = ही, भी (अव्यय, निपात)। गमत् = जाते हैं (गम् = जाना, जानना, पाना)। यदि = यदि (अव्यय)। श्रवत् = सुनें (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। सहस्रिणीभिः = सहस्रियों द्वारा (सहस्र - हजार)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। वाजेभिः = वाजियों द्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 8 ॥

97. अनु प्रत्नस्य ओकसो, हुवे तुविप्रतिम् नरम् ।

यम् ते पूर्वम् पिता हुवे ॥ 9 ॥ 1-30-9

मन्त्रार्थ :- अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल प्रत्नस्य = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति का ओकसो = आह्वान हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं तुविप्रतिम् = वृद्धि-कर्ता को, पूर्ण-कर्ता को नरम् = नर को यम् = जिसे, जिसको, जहाँ ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पूर्वम् = पूर्व को पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। प्रत्नस्य = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति का (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। ओकसो = आह्वान (ओ - बुलाना, आह्वान करना)। हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। तुविप्रतिम् = वृद्धि-कर्ता को, पूर्ण-कर्ता को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में)। नरम् = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पूर्वम् = पूर्व को (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 9 ॥

98. रेवतीः नः सधमादे, इन्द्रे सन्तु तुविवाजाः ।

क्षुमन्तो याभिः मदेम ॥ 13 ॥ 1-30-13

मन्त्रार्थ - रेवती: = गतिशीलता नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सधमादे = आनन्द के साथ, सानन्द इन्द्रे = इन्द्र में सन्तु = हों तुविवाजा: = तुविवाजा क्षुमन्तो = विद्वान्, गतिशील, शब्दकर्ता याभिः = जिसके द्वारा मदेम = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें ॥ 13 ॥

पदार्थ - रेवती: = गतिशीलता (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सधमादे** = आनन्द के साथ, सानन्द (सध+मद्, सद्+मद्, सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना, मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्रे** = इन्द्र में (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सन्तु** = हों (अस् - होना)। **तुविवाजा:** = तुविवाजा (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। **क्षुमन्तो** = विद्वान्, गतिशील, शब्दकर्ता (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। **याभिः** = जिसके द्वारा (सर्वनाम)। **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें (मद् - हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना) ॥ 9 ॥

99. आ घ त्वावान् त्मना युक्तः, आसः स्तोतृभ्यो धृष्णो ईयानः।

ऋणोः अक्षम् न चक्रयोः ॥ 14 ॥ 1-30-14

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण घ = ही, भी त्वावान् = तुम्हारे समान त्मना = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा युक्तः = युक्त, मिश्रित स्तोतृभ्यो = स्तुति के लिए धृष्णो = विजय, गर्व ईयानः = प्राप्त करता हुआ, जानता हुआ ऋणोः = जाता हुआ, गति का, ले जायें अक्षम् = अक्ष, खेल, क्रीडा, दृष्टि, एकत्रीकरण, समूह, व्यापक को न = नहीं, समान, उपमार्थक चक्रयोः = दोनों चक्रों में, का ॥ 14 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। घ = ही, भी (अव्यय, निपात)। त्वावान् = तुम्हारे समान (सर्वनाम)। त्मना = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा (तु - गति-वृद्धि, हिंसा करना, तम् - इच्छा करना, आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में अ या आ का लोप हो सकता है)। युक्तः = युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। स्तोतृभ्यो = स्तुति के लिए (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। धृष्णो = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। ईयानः = प्राप्त करता हुआ, जानता हुआ (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। ऋणोः = जाता हुआ, गति का, ले जायें (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। अक्षम् = अक्ष, खेल, क्रीडा, दृष्टि, एकत्रीकरण, समूह, व्यापक को (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। चक्रयोः = दोनों चक्रों में, का (चकृ = चक्रण करना, गोलाकार घूमना) ॥ 14 ॥

100. आ यत् दुवः शतक्रतो, आ कामम् जरितृणाम्।

ऋणोः अक्षम् न शचीभिः ॥ 15 ॥ 1-30-15

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण यत् = जिसे, जो दुवः = सेवा, पीड़ा, प्रगति शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। कामम् = कामना, स्वेच्छा अनुसार, माना कि जरितृणाम् = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों का ऋणोः = जाता हुआ, गति का, ले जायें अक्षम् = अक्ष, खेल, क्रीडा, दृष्टि, एकत्रीकरण, समूह, व्यापक को न = नहीं, समान, उपमार्थक शचीभिः = उत्तम वाणियों द्वारा ॥ 15 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। दुवः = सेवा, पीड़ा, प्रगति (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, दुवस् - पीड़ित होना, पीड़ित करना, सेवा करना)। शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। कामम् = कामना, स्वेच्छा अनुसार, माना कि (अव्यय)। जरितृणाम् = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों का (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। ऋणोः = जाता हुआ, गति का, ले जायें (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। अक्षम् = अक्ष, खेल, क्रीडा,

दृष्टि, एकत्रीकरण, समूह, व्यापक को (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। शचीभिः = उत्तम वाणियों द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना) ॥ 15 ॥

अनुवाक:- 7

(25) सूक्त 32

101. इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्, यानि चकार प्रथमानि वज्री ।

अहन् अहिम् अनु अपः ततर्द, प्र वक्षणा अभिनत् पर्वतानाम् ॥ 1 ॥ 1-32-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रस्य = इन्द्र का नु = निश्चय ही, शीघ्र ही वीर्याणि = वीरकर्मों को प्रवोचम् = कहें यानि = जो चकार = किया प्रथमानि = प्रथम, विस्तार वज्री = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान अहन् = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की अहिम् = व्यापक अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल अपः = पालन करने वाला, पालक, रक्षक ततर्द = विस्तार करता हुआ, हिंसा करता हुआ प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वक्षणा = वक्षणा अभिनत् = सभी ओर, सर्वथा, नत, विनयी, विनम्र पर्वतानाम् = पर्वतों को ॥ 1 ॥

पदार्थ - इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। वीर्याणि = वीरकर्मों को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। प्रवोचम् = कहें (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना)। यानि = जो (सर्वनाम)। चकार = किया (कृ = करना)। प्रथमानि = प्रथम, विस्तार (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, विस्तार करना, फैलना, फैलाना)। वज्री = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। अहन् = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। अहिम् = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। अपः = पालन करने वाला, पालक, रक्षक (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। ततर्द = विस्तार करता हुआ, हिंसा करता हुआ (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना, तर्द - मार डालना, दुःख देना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वक्षणा = वक्षणा (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। अभिनत् = सभी ओर, सर्वथा, नत, विनयी, विनम्र (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, नम् - नमना, नमन करना)। पर्वतानाम् = पर्वतों को (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना) ॥ 1 ॥

अनुवाक:- 8

(26) सूक्त 36

102. प्र वो यद्वम् पुरुषाम्, विशाम् देवयतीनाम् ।

अग्निम् सूक्तेभिः वचोभिः वृणीमहे, यम् सम् इत् अन्य इन्धते ॥ 1 ॥ 1-36-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग यद्वम् = महान् को पुरुषाम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी को विशाम् = विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को देवयतीनाम् = देवयत्न का अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को सूक्तेभिः = सूक्त द्वारा वचोभिः = वचन द्वारा वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं यम् = जिसे, जिसको, जहाँ सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति इत् = ही अन्य = कोई और, इतर, अन्य इन्धते = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। यद्वम् = महान् को (यद्व-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। पुरुषाम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। विशाम् = विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश -

घुसना, भीतर जाना, धंसना)। **देवयतीनाम्** = देवयत्न का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सूक्तेभिः** = सूक्त द्वारा (सु - अच्छा, सुन्दर, उक्-वच्-वद् - कहना, बोलना)। **वचोभिः** = वचन द्वारा (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अन्य** = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम)। **इन्धते** = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) ॥ 1 ॥

103. ऊर्ध्व ऊ षु णः ऊतये, तिष्ठा देवो न सविता।

ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता, यत् अज्जिभिः वाघदिभः, वि-ह्वयामहे ॥ 3 ॥ 1-36-13

मन्त्रार्थ :- ऊर्ध्व = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व उ = निश्चय ही, भी षु = अच्छा णः = हमारा, हमारे लिए, हमको ऊतये = रक्षा के लिए, शब्द, विश्वास के लिए तिष्ठा = ठहरो, स्थित हो, ठहरो, खड़े हो देवो = देव न = नहीं, समान, उपमार्थक सविता = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व वाजस्य = विद्या का, गति का सनिता = सेवित यत् = जिसे, जो अज्जिभिः = स्वच्छता से, प्रकाश द्वारा वाघदिभः = उत्थान द्वारा विह्वयामहे = विशेष आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 13 ॥

भावार्थ :- सविता अर्थात् सृष्टिकर्ता परमात्मा हमारी रक्षा के लिए ऊपर स्थित है। भाव है कि हमारे ऊपर सृष्टिकर्ता का हाथ है। वही हमारा रक्षक है, अतः भय का कोई कारण नहीं है। वह विद्या सेवित है। हम उच्च भावना से दिव्य प्रकाश से परमात्मा का आह्वान करते हैं।

पदार्थ - ऊर्ध्व = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी। षु = अच्छा। णः = हमारा, हमारे लिए, हमको (सर्वनाम)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। तिष्ठा = ठहरो, स्थित हो, ठहरो, खड़े हो (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। देवो = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। सविता = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। वाजस्य = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सनिता = सेवित (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अज्जिभिः = स्वच्छता से, प्रकाश द्वारा (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना)। वाघदिभः = उत्थान द्वारा (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना)। विह्वयामहे = विशेष आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम उपसर्ग, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 13 ॥

104. नि त्वाम् अग्ने मनुः दधे, ज्योतिः जनाय शश्वते।

दीदेथ कण्वे ऋतजात, उक्षितो यम् नमस्यन्ति कृष्टयः ॥ 19 ॥ 1-36-19

मन्त्रार्थ - नि = निश्चित, निरन्तर त्वाम् = तुमको, तुम्हारी अग्ने = हे अग्नि मनुः = विचारशील का दधे = धारण करते हैं ज्योतिः = प्रकाश जनाय = जन के लिए शश्वते = शश्वत के लिए दीदेथ = दिया कण्वे = कण्व ऋतजात = ऋत से उत्पन्न उक्षितो = प्रोक्षण किया हुआ, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया हुआ यम् = जिसे, जिसको, जहाँ नमस्यन्ति = नमन द्वारा कृष्टयः = कृष्टय ॥ 19 ॥

पदार्थ - नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना,

जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मनुः** = विचारशील का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **जनाय** = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **शश्वते** = शश्वत के लिए (शश्व - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **दीदेथ** = दिया (दा = देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **कण्वे** = कण्व (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **ऋतजात** = ऋत से उत्पन्न (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **उक्षितो** = प्रोक्षण किया हुआ, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया हुआ (उक्ष - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **यम्** = जिसे, जिसको = जहाँ (सर्वनाम)। **नमस्यन्ति** = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **कृष्टयः** = कृष्टय (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना) ॥ 19 ॥

(27) सूक्त 37

105. इह इव शृण्वे एषाम्, कशाः हस्तेषु यत् वदान्।

नि यामम् चित्रम् ऋज्जते ॥ 3 ॥ 1-37-3

मन्त्रार्थ - इह = इसमें, यहां, यह इव = समान, की भाँति, के समान शृण्वे = सुनें एषाम् = इनका कशाः = कशा हस्तेषु = हाथों में यत् = जिसे, जो वदान् = बोलता है नि = निश्चित, निरन्तर यामम् = यम को चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को ऋज्जते = ऋज्जत के लिए, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ - इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। शृण्वे = सुनें (शृ - सुनना)। एषाम् = इनका (सर्वनाम)। कशाः = कशा (कश् = शासन करना, दण्ड देना, प्रकाश करना, गति करना, चलना)। हस्तेषु = हाथों में (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। वदान् = बोलता है (वद - कहना, स्पष्ट कहना, बोलना, समझाना)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। यामम् = यम को (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। ऋज्जते = ऋज्जत के लिए, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् के लिए (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना) ॥ 3 ॥

106. उत् उ त्वे सूनवो गिरः, काष्ठाः अज्मेषु अत्नत।

वाश्राः अभिज्ञु यातवे ॥ 10 ॥ 1-37-10

मन्त्रार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च उ = निश्चय ही, भी त्वे = उन सब ने सूनवो = सन्तान गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन काष्ठाः = प्रकाशक अज्मेषु = गतिमान्, वेग, जाने में अत्नत = सतत गतिशील, विस्तार किया वाश्राः = शब्द करना, आवाज करना, पुकारना अभिज्ञु = अभिज्ञान रखने वाला यातवे = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए ॥ 10 ॥

पदार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी। त्वे = उन सब ने (सर्वनाम)। सूनवो = सन्तान (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। काष्ठाः = प्रकाशक (कास् = प्रकाश करना)। अज्मेषु = गतिमान्, वेग, जाने में (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। अत्नत = सतत गतिशील, विस्तार किया (अत् = सतत गति होना, चलना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। वाश्राः = शब्द करना, आवाज करना, पुकारना (वास - शब्द करना, आवाज करना, पक्षी के समान शब्द करना, बुलाना, पुकारना, वा - गति करना, बहना, श्रा = परिपक्व

करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। **अभिज्ञु** = अभिज्ञान रखने वाला (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), ज्ञा-जान - जानना, समझना)। **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना) ॥ 10 ॥

(28) सूक्त 40

107. प्र एतु ब्रह्मणस्पतिः, प्र देवी एतु सूनृता ।

अच्छा वीरम् नर्यम्, पंक्तिराधसम् देवाः, यज्ञम् नयन्तु नः ॥ 3 ॥ 11-40-3

मन्त्रार्थ :- ब्रह्मणः ब्रह्मा का पतिः पालक, रक्षक, स्वामी प्र = अधिक (उपसर्ग) एतु आयें, सूनृता सुनृता देवी देवी प्र एतु आयें। अच्छा अच्छे वीरम् वीर, नर्यम् नर्य, पंक्तिराधसम् पंक्तिराधन में समर्थ देवाः देवगण नः हमको यज्ञम् यज्ञ में नयन्तु ले चलें ॥ 3 ॥

भावार्थ :- गुणवान् तथा समर्थ नर-नारी यजन को सफल बनायें। 3 ॥

पदार्थ :- प्र = अधिक (उपसर्ग) एतु = प्राप्त हो, आयें (आ + इतु (इ - जाना, जानना, पाना)। ब्रह्मणः = ब्रह्मा का (बृह = बढ़ना, बड़ा होना, जानना)। देवी = देवी (दिव्, देव् = चमकना, जानना)। सूनृता = सुनृता (नृ = ले जाना)। अच्छा = अच्छा (अच्छ = श्रेष्ठ)। वीरम् = वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। नर्यम् = नर्य (नृ = ले जाना)। पंक्तिराधसम् = पंक्तिराधन में समर्थ (पचि - पञ्च - फैलाना, पसारना, राध - सिद्ध होना, बढ़ना)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (देव, दिव् = खेलना, तेजस्वी होना, चमकना, यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। यज्ञम् = यज्ञ में, यजन को (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। नयन्तु = ले चलें (नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 3 ॥

(29) सूक्त 41

108. यम् रक्षन्ति प्रचेतसो, वरुणो मित्रो अर्यमा ।

नु चित् सः दभ्यते जनः ॥ 1 ॥

1-41-1

मन्त्रार्थ - यम् = जिसे, जिसको, जहाँ रक्षन्ति = रक्षा करते हैं, बचाते हैं प्रचेतसो = प्रकृष्ट विचार वाले वरुणो = वरणीय, वरण करने वाला मित्रो = मित्र अर्यमा = अर्यमा, ज्ञानी नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। चित् = भी, ही। स = सहित, साथ दभ्यते = निन्दक, हिंसक के लिए जनः = जन ॥ 1 ॥

पदार्थ - यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। रक्षन्ति = रक्षा करते हैं, बचाते हैं (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। प्रचेतसो = प्रकृष्ट विचार वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। वरुणो = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। अर्यमा = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय) ॥ चित् = भी, ही। स = सहित, साथ (उपसर्ग)। दभ्यते = निन्दक, हिंसक के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना)। जनः = जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 9

(30) सूक्त 44

109. अग्ने विवस्वत् उषसः, चित्रम् राधो अमर्त्य ।

आ दाशुषे जातवेदो वहा, त्वम् अद्य आ देवान् उषर्बुधः ॥ 1 ॥

1-44-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि विवस्वत् = विवस्वत्, विशेष वास उषसः = उषा का, प्रभात का, हिंसा का चित्रम् =

चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **अमर्त्य** = अमर्त्य **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दाशुषे** = दानी के लिए **जातवेदो** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले **वहा** = वहन करो, ले जाओ **त्वम्** = तुम **अद्य** = आज **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **उषर्बुधः** = प्रभात को समझने जानने वाले, प्रभात बोध, हिंसको को समझने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **विवस्वत्** = विवस्वत्, विशेष वास (वि = विशेष, विना, विलोम, वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **अमर्त्य** = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **जातवेदो** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **वहा** = वहन करो, ले जाओ (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **उषर्बुधः** = प्रभात को समझने जानने वाले, प्रभात बोध, हिंसको को समझने वाले (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना, बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना) ॥ 1 ॥

110. जुष्टो हि दूतो असि हव्यवाहनो, अग्ने रथीः अध्वराणाम्।

सजुः अश्विभ्याम् उषसा सुवीर्यम्, अस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥ 2 ॥

1-44-2

मन्त्रार्थ :- **जुष्टो** = सुविचारित सेवा **हि** = ही, निश्चय **दूतो** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी **असि** = हो **हव्यवाहनो** = हव्य का वहन करने वाला, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाला **अग्ने** = हे अग्नि **रथीः** = रथी, रथवाला **अध्वराणाम्** = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का **सजुः** = विचारशील, सेवाभावी, गले लगाने वाला **अश्विभ्याम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक द्वारा **उषसा** = उषा द्वारा **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए **धेहि** = धारण करें **श्रवो** = श्रवण करने वाले **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **जुष्टो** = सुविचारित सेवा (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **दूतो** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **हव्यवाहनो** = हव्य का वहन करने वाला, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाला (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना, वह् - वहन करना, ले जाना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रथीः** = रथी, रथवाला (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अध्वराणाम्** = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **सजुः** = विचारशील, सेवाभावी, गले लगाने वाला (स - साथ, सहित, संज्-सज् = गले लगाना, सम्बन्धी होना, स + जूः, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **अश्विभ्याम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक द्वारा (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **उषसा** = उषा द्वारा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **धेहि** = धारण

करें (धा-धि-धी - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, देना)। **श्रवो** = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 2 ॥

111. श्रुधि श्रुत्कर्ण वह्निभिः, देवैः अग्ने सयावभिः ।

आ सीदन्तु बर्हिषि, मित्रो अर्यमा प्रातः यावभिः अध्वरे ॥ 13 ॥

1-44-13

मन्त्रार्थ- श्रुत्कर्ण सुनने वाले कर्ण, अग्ने अग्नि, वह्निभिः वहन करने वाले, सयावभिः साथ चलने वाले देवैः विद्वानों के साथ श्रुधि सुनिये। बर्हिषि आच्छादन (आच्छादित स्थान, गृह अथवा सभामण्डप) में मित्रो मित्र, अर्यमा अर्यमा प्रातः प्रातःकाल यावभिः गति, ज्ञान, प्राप्ति, चलने द्वारा अध्वरे - अहिंसक में आ सीदन्तु अच्छे प्रकार बैठें ॥ 13 ॥

भावार्थ - सयावभिः पद का अर्थ सहगामी तथा सन्धि-विग्रह करने वाले हो सकता है। इसमें या धातु मानकर इसका अर्थ साथ चलने वाले किया गया है। यु धातु मानने पर इसका अर्थ मिलाना तथा अलग करना भी हो सकता है। बृह धातु का अर्थ बढ़ना, शब्द करना, बृ धातु का अर्थ आवरण करना, ढकना, वरण करना होता है। बर्हिषि पद का अर्थ सामान्यतः आच्छादन लेकर उसका भावार्थ गृह या सभामण्डप किया गया है। इस अर्थों को समाहित करते हुए बर्हिषि पद का अर्थ वृद्धि की चर्चा करने वाला सभागृह मानना उचित है। अर्यमा पद का अर्थ ऋ धातु के अनुसार अर्थ गति, ज्ञान, प्राप्ति करने वाले होगा। प्रातर्यावाणः का अर्थ भी या धातु मानकर प्रातः ज्ञान, गति, प्राप्ति करने वाले तथा यु धातु मानकर सन्धि-विग्रह करने वाले हो सकता है। अध्वरम् अर्थात् अहिंसक भावना को ध्यान में रखते हुए सभी तर्कसंगत अर्थ ग्राह्य हैं। 13

विशेष - श्रुत्कर्ण सुनने वाले कर्ण अथवा सुने हुए को कर्णगत करने वाले। श्रु धातु का अर्थ सुनना है तथा कर्ण धातु का अर्थ सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना, परित्याग करना है। इस प्रकार जो लोग श्रुत् या श्रुति को कर्ण करते हैं, अर्थात् सुनते हैं, उसे बेधते हैं, अर्थात् उसे गहनता से समझते हैं, चिन्तन - मनन कर आत्मसात् करते हैं तथा उस ज्ञान को दूर तक ले जाते हैं, साथ ही उसे समाज के लिए त्याग भावना से सबको वितरित करते हैं, वे विद्वान् श्रुत्कर्ण हैं। 30

पदार्थ - श्रुत्कर्ण - सुनने वाले कर्ण (श्रु - सुनना, कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना) अग्ने - अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना), वह्निभिः - वहन करने वाले (वह - वहन करना, ले जाना), सयावभिः - साथ चलने वाले (स - सहित, साथ, या - जाना) देवैः - देवों के साथ (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना), श्रुधि - सुनिये (श्रु - सुनना)। बर्हिषि- श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) मित्रो - मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, प्रीति करना, नरम होना, मृदुल होना), अर्यमा - अर्यमा (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। प्रातः - प्रातःकाल यावभिः - गति, ज्ञान, प्राप्ति, चलने द्वारा (या - जाना, जानना, पाना)। अध्वरे - अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। आ - अच्छे प्रकार सीदन्तु - बैठें (सीद् - बैठना) ॥ 13 ॥

(31) सूक्त 45

112. त्वम् अग्ने वसून् इह, रुद्रान् आदित्यान् उत ।

यज आ स्वध्वरम् जनम्, मनुजातम् घृतप्रुषम् ॥ 1 ॥

1-45-1

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम अग्ने = हे अग्नि वसून् = वसुओं को इह = इसमें, यहां, यह रुद्रान् = रुद्रगण, करुणामय आदित्यान् = आदित्यों को, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न को उत = ही यज = यजन करो आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण स्वध्वरम् = अच्छी अहिंसा, आत्महनन को जनम् = जन को मनुजातम् = मनुजात को घृत-प्रुषम् = प्रकाशित का अभिसिञ्चन करना ॥ 1 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वसून् = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास

करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **रुद्रान्** = रुद्रगण, करुणामय (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **आदित्यान्** = आदित्यों को, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न को (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **उत** = ही (अव्यय)। **यज** = यजन करो (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **स्वध्वरम्** = अच्छी अहिंसा, आत्महनन को (सु+अध्वर, स्व+ध्वर, स्व = निज, अपना, ध्वृ - टेढ़ा करना, नवाना, वक्र करना, मार डालना, वर्णन करना)। **जनम्** = जन को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मनुजातम्** = मनुजात को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **घृत-पुषम्** = प्रकाशित का अभिसिञ्चन करना (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, पुष् - सौम्य होना, स्निग्ध होना, चिकना होना, सिञ्चन करना, पूर्ण करना) ॥ 1 ॥

(32) सूक्त 46

113. एषो उषाः अपूर्व्या, व्युच्छति प्रिया दिवः ।

स्तुषे वाम् अश्विना बृहत् ॥ 4 ॥ 1-46-1

मन्त्रार्थ - **एषो** = यह **उषाः** = प्रभात, हिंसा **अपूर्व्या** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण **व्युच्छति** = विशेष पूरा, समाप्त करना **प्रिया** = प्रिय **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **स्तुषे** = स्तुति के लिए **वाम्** = तुम दोनों को **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥ 4 ॥

पदार्थ - **एषो** = यह (सर्वनाम)। **उषाः** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अपूर्व्या** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **व्युच्छति** = विशेष पूरा, समाप्त करना (वि = विशेष, उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बांधना)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **स्तुषे** = स्तुति के लिए (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 4 ॥

114. या दस्त्रा सिन्धुमातरा, मनोतरा रयीणाम् ।

धिया देवा वसुविदा ॥ 2 ॥ 1-46-2

मन्त्रार्थ :- **या** = जो **दस्त्रा** = नष्ट करने वाले **सिन्धुमातरा** = सिन्धुमाता **मनोतरा** = उत्तम मन वाले **रयीणाम्** = विद्या, गतिशीलता का **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **वसुविदा** = वसुविद ॥

पदार्थ :- **या** = जो (सर्वनाम)। **दस्त्रा** = नष्ट करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **सिन्धुमातरा** = सिन्धुमाता (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बाँधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **मनोतरा** = उत्तम मन वाले (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **रयीणाम्** = विद्या, गतिशीलता का (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **धिया**

= धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वसुविदा** = वसुविद (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 2 ॥

115. वच्यन्ते वाम् ककुहासो, जूर्णायाम् अधि विष्टपि ।

यत् वाम् रथो विभिः पतात् ॥ 3 ॥ 1-46-3

मन्त्रार्थ :- वच्यन्ते = बोलते हैं, अध्ययन करते हैं, जानते हैं **वाम्** = तुम दोनों को **ककुहासो** = गर्व को छोड़ने वाले, विद्वान्, वाणी, विद्या का हास, प्रसन्नता **जूर्णायाम्** = वेगवान् का **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **विष्टपि** = विशेष व्याप्ति में, विशेष सिञ्चन में, विष्टप में **यत्** = जिसे, जो **वाम्** = तुम दोनों को **रथो** = रथ **विभिः** = प्रगतिशीलों द्वारा, के साथ **पतात्** = ऐश्वर्य होता है, जाता है, गिरता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वच्यन्ते = बोलते हैं, अध्ययन करते हैं, जानते हैं (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **ककुहासो** = गर्व को छोड़ने वाले, विद्वान्, वाणी, विद्या का हास, प्रसन्नता (कक - गर्व करना, चञ्चल होना, प्यासा होना, कुह - उगना, आश्चर्य या चमत्कार दिखाना, मोहित करना, कु - शब्द करना, कविता करना, कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौंरे के समान शब्द करना, हन् - मारना, हा - छोड़ना, परित्याग करना, जाना, चलना, हस - हंसना, ठट्ठा करना)। **जूर्णायाम्** = वेगवान् का (जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **विष्टपि** = विशेष व्याप्ति में, विशेष सिञ्चन में, विष्टप में (विश् - प्रवेश, सूचना, प्रेरणा करना, विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **रथो** = रथ (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **विभिः** = प्रगतिशीलों द्वारा, के साथ (वी - जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **पतात्** = ऐश्वर्य होता है, जाता है, गिरता है (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 3 ॥

(33) सूक्त 47

116. अयम् वाम् मधुमत्तमः, सुतः सोमो ऋतावृधा ।

तम् अश्विना पिबतम् तिरो, अहन्यम् धत्तम् रत्नानि दाशुषे ॥ 1 ॥ 1-47-1

मन्त्रार्थ - अयम् = यह **वाम्** = तुम दोनों को **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सोमो** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता **ऋतावृधा** = ऋतावृध, ऋत से वर्धित **तम्** = उसको, उसे **अश्विना** = हे अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **पिबतम्** = पियो, पान करें **तिरो** = तिरछा, तिर्यक्, पार कराने वाले **अहन्यम्** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का **धत्तम्** = धारण, पोषण करो **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न **दाशुषे** = दानी के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - अयम् = यह (सर्वनाम)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमो** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो - अन्त करना)। **ऋतावृधा** = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अश्विना** = हे अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **पिबतम्** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **तिरो** = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय), पार कराने वाले (तृ -

पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **अहन्यम्** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **धत्तम्** = धारण, पोषण करो (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना) ॥ 1 ॥

(34) सूक्त 50

117. उत् उ त्यम् जात-वेदसम्, देवम् वहन्ति केतवः ।

दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ 1 ॥ 1-50-1

मन्त्रार्थ - केतवः - केतुगण, विद्वान्, ज्ञानीजन, उ - ही, त्यम् - तुम, जातवेदसम् - जातवेद, जिससे वेद, ज्ञान उत्पन्न हुआ, वेद को उत्पन्न करने वाला, देवम् - देव, सूर्यम् - सूर्य को, विश्वाय - विश्व, दृशे - देखने के लिए, उत् - उच्च, उत्तम, वहन्ति - वहन करते हैं ॥ 1 ॥

भावार्थ - परमात्मा जातवेद है अर्थात् वेद तथा ज्ञान को उत्पन्न करने वाला है। उस देव को केतवः अर्थात् ज्ञानी ही वहन करते हैं। सूर्य का अर्थ है उत्पन्न करने वाला तथा ऐश्वर्यवान्। जातवेद, देव, सूर्य मूलतः परमात्मा के ही विशेषण हैं। इन गुणों को आत्मसात् करने वाले उपासक को भी इन विशेषणों से भूषित किया जाता है। ॥

पदार्थ :- उत् - उच्च (उपसर्ग)। उ = ही। त्यम् = उस को। जातवेदसम् = जातवेद, जिससे वेद, ज्ञान उत्पन्न हुआ, वेद को उत्पन्न करने वाला (जन् = उत्पन्न होना, विद् = जानना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना)। वहन्ति = वहन करने वाले (वह् = वहन करना ले जाना)। केतवः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। दृशे = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। विश्वाय = विश्व के लिए, सबके लिए, विश्व से अलग। सूर्यम् = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना) ॥ 1 ॥

118. अप त्ये तायवो यथा, नक्षत्रा यन्ति अक्तुभिः ।

सूराय विश्वचक्षसे ॥ 2 ॥ 1-50-2

मन्त्रार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार त्ये = वे तायवो = संरक्षण करने वाले, विस्तार करने वाले यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार नक्षत्रा = नक्षत्र यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं अक्तुभिः = अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा सूराय = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् के लिए विश्वचक्षसे = विश्वचक्ष, सबको देखने वाले ॥ 2 ॥

पदार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। त्ये = वे (सर्वनाम)। तायवो = संरक्षण करने वाले, विस्तार करने वाले (ताय - संरक्षण करना, फैलाना, लम्बा करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। नक्षत्रा = नक्षत्र (नक्ष - जाना, आना, पहुँचना, जानना, पाना)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। अक्तुभिः = अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। सूराय = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् के लिए (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। विश्वचक्षसे = विश्वचक्ष, सबको देखने वाले (विश्व = सब, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 2 ॥

119. अदृश्रन् अस्य केतवो, वि रश्मयो जनान् अनु ।

भ्राजन्तो अग्नयो यथा ॥ 3 ॥ 1-50-3

मन्त्रार्थ :- अस्य - इसका, केतवो - केतु, वि - विशेष, रश्मयो - रश्मियों को, जनान् - जनों के, अनु - पीछे, अदृश्रम् - देखा, यथा - जैसे, भ्राजन्तो - प्रकाशमान, अग्नयो - अग्नियाँ ॥ 3 ॥

भावार्थ :- परमात्मा की आमन्त्रणकारी रश्मियाँ उपासक को जनों के पीछे प्रकाशमान अग्नि की तरह दिखायी देती

हैं। परमात्मा के आमन्त्रण को, उसकी दिव्य रश्मियों को हम प्रकाशमान अग्नि के समान अनुभव करते हैं। यह अनुभूति ही अध्यात्म है। वह परमात्मा हमारे लिए सूर्य के समान प्रकाशमान है। वह देवों में अन्यतम है, अत्यन्त प्रकाशमान है, हम मनुष्यों में इसी प्रकार अत्यन्त प्रकाशमान होकर जीवन-यापन करें।

पदार्थ :- अदृशम् - देखा (दृश् = देखना)। केतवो - केतु, आमन्त्रणकारी (केत - आमन्त्रण देना, बुलाना, परामर्श देना)। वि = विशेष, विना, विलोम। रश्मयः = किरण (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। जनान् - जनों को (जन - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना)। अनु = पश्चात्, पीछे। भ्राजन्तो - प्रकाशमान (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। अग्नयः = अग्नियों (अग् = आगे जाना, गति करना)। यथा = जैसे ॥ 3 ॥

120. तरणिः विश्व दर्शतो, ज्योतिष्कृत् असि सूर्य।

विश्वम् आ भासि रोचनम् ॥ 4 ॥ 1-50-4

मन्त्रार्थ- सूर्य हे ऐश्वर्यवान् उत्पन्नकर्ता, विश्व सब कुछ दर्शतो दिखाने वाले, ज्योतिष्कृत् प्रकाशकर्ता तरणिः तारने वाले, पार करने वाले असि हो। विश्वम् सबको रोचनम् रोचन आ भासि प्रकाश करते हो ॥ 4 ॥

भावार्थ - परमात्मा ही उत्पन्न करने वाला, आनन्द तथा प्रकाश देने वाला और तारने वाला है।

विशेष - रुच धातु का अर्थ आनन्द, प्रकाश, प्रसन्नता, उत्साह करना है। भास धातु का अर्थ प्रकाश करना है।

पदार्थ- तरणिः = (तृ - पार जाना, जाना, जल पर तैरना)। विश्व = सब। दर्शतो = (दृश् - देखना)। ज्योतिष्कृत् = (ज्युतृ - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। असि = हो। सूर्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। विश्वम् = सब का। आ भासि = प्रकाशित करते हो (भास-चमकना, प्रकाशित होना)। रोचनम् = प्रकाश को (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना) ॥ 4 ॥

121. प्रत्यङ् देवानाम् विशः, प्रत्यङ् उदेषि मानुषान्।

प्रत्यङ् विश्वम् स्वः दृशे ॥ 5 ॥ 1-50-5

मन्त्रार्थ - प्रत्यङ् = प्रत्येक देवानाम् = देवों का विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी प्रत्यङ् = प्रत्येक उदेषि = उत्कृष्ट प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं मानुषान् = मानुषों का, मनन करने वालों का प्रत्यङ् = प्रत्येक विश्वम् = सबको, सब विश्व को स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् दृशे = देखने के लिए ॥ 5 ॥

पदार्थ - प्रत्यङ् = प्रत्येक (अव्यय)। देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। प्रत्यङ् = प्रत्येक (अव्यय)। उदेषि = उत्कृष्ट प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। मानुषान् = मानुषों का, मनन करने वालों का (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। प्रत्यङ् = प्रत्येक (अव्यय)। विश्वम् = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। दृशे = देखने के लिए (दृश्-पश्य-देखना) ॥ 5 ॥

122. येना पावक चक्षसा, भुरण्यन्तम् जनान् अनु।

त्वम् वरुण पश्यसि ॥ 6 ॥ 1-50-6

मन्त्रार्थ- वरुण हे वरुण, त्वम् तुम येना जिस पावक पवित्रकारी चक्षसा दृष्टि से, भुरण्यन्तम् पालन-पोषण करते हुए जनान् लोगों को अनु पश्यसि देखते हो ॥ 6 ॥

भावार्थ - जिस प्रकार वरुण अर्थात् वरणीय तथा हमारा वरण करने वाले, अपनाने वाले परमात्मा पवित्र दृष्टि से लोगों को देखता है, हमको भी उसी प्रकार पवित्र दृष्टि से देखना चाहिए। यह भी कहा गया है कि परमात्मा भुरण्यन्तम् अर्थात् पालन-पोषण करते हुए लोगों को इस प्रकार देखता है। इसका भाव यह है कि परमात्मा की पवित्र तथा पोषक-पालक दृष्टि में रहने के लिए हमको भी लोगों का पालन-पोषण करते रहना चाहिए।

विशेष - वृ धातु के मुख्य अर्थ वरण करना, सेवा करना, नियोजित करना, आच्छादित करना हैं। वरुण अर्थात् वरण करने वाले तथा वरणीय परमात्मा में ये सभी गुण स्मरण किये गये हैं। 6।

पदार्थ- **येना** = जिस। **पावक** = पावक। (पूज् - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **चक्षसा** = दृष्टि, वाणी (चक्ष् = स्पष्ट बोलना, देखना)। **भुरण्यन्तम्** = (भुरण-पालन करना, पोषण करना, धारण करना)। **जनान्** = लोग (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **त्वम्** = तुमको। **वरुण** = वरुण (वृ - पसन्द करना, नियोजित करना, वरण करना)। **पश्यसि** = देखते हो (पश् = देखना) ॥ 6 ॥ **यजु अ 33 म 32**

123. वि द्याम एषि रजः, पृथु अहा मिमानो अक्तुभिः।

पश्यन् जन्मानि सूर्य ॥ 7 ॥

1-50-7

मन्त्रार्थ - **वि** = विशेष, विविध, विना, विलोम **द्याम** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय **एषि** = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो **रजः** = रज **पृथु** = विस्तार, विस्तृत **अहा** = व्यापक **मिमानो** = प्रक्षेपण, स्थापन, रक्षा करता हुआ **अक्तुभिः** = अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा **पश्यन्** = देखते हुए, देखने वाले **जन्मानि** = जन्म लेने वाला **सूर्य** = हे सूर्य, उत्पन्न करने वाला ॥ 7 ॥

पदार्थ - **वि** = विशेष, विविध, विना, विलोम (उपसर्ग)। **द्याम** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **एषि** = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। **रजः** = रज (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **पृथु** = विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अहा** = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **मिमानो** = प्रक्षेपण, स्थापन, रक्षा करता हुआ (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **अक्तुभिः** = अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। **पश्यन्** = देखते हुए, देखने वाले (पश्-दृश् = देखना)। **जन्मानि** = जन्म लेने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्य** = हे सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 7 ॥

124. सप्त त्वा हरितो रथे, वहन्ति देव सूर्य।

शोचिष्केशं विचक्षण ॥ 8 ॥

1-50-8

मन्त्रार्थ - **सप्त** = सात **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **हरितो** = हरित, हरि से **रथे** = रथ में **वहन्ति** = वहन करते हैं **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **सूर्य** = हे सूर्य, उत्पन्न करने वाला **शोचिष्केशम्** = शोचिष्केश को, पवित्र गति को **विचक्षण** = हे विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले ॥ 8 ॥

पदार्थ - **सप्त** = सात (संख्या)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **हरितो** = हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **रथे** = रथ में (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वहन्ति** = वहन करते हैं (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सूर्य** = हे सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **शोचिष्केशम्** = शोचिष्केश को, पवित्र गति को (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना, किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **विचक्षण** = हे विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 8 ॥

125. अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः, सूरौ रथस्य नप्त्यः।

मन्त्रार्थ - अयुक्त = अयुक्त, जो युक्त न हो सप्त = सात शुन्ध्युवः = शुद्ध करने वाली, पवित्र करने वाली सूरौ = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् रथस्य = रमणीय, रथ का नप्यः = ज्ञान वाली, प्रकाश वाली ताभिः = उनके द्वारा याति = जाता है स्वयुक्तिभिः = स्वयुक्ति द्वारा ॥ ९ ॥

पदार्थ - अयुक्त = अयुक्त, जो युक्त न हो (अ = नहीं, युज् - योग करना, युक्त करना, जोड़ना)। सप्त = सात (संख्या)। शुन्ध्युवः = शुद्ध करने वाली, पवित्र करने वाली (शुच्-शुक्-शुध-शुन्ध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। सूरौ = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। रथस्य = रमणीय, रथ का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, रमण करना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। नप्यः = ज्ञान वाली, प्रकाश वाली (नप - पहुँचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। ताभिः = उनके द्वारा (सर्वनाम)। याति = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। स्वयुक्तिभिः = स्वयुक्ति द्वारा (स्व = अपना, निज (सर्वनाम), यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज् - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना) ॥ ९ ॥

अनुवाकः- 10

(35) सूक्त 51

126. अभि त्यम् मेषम् पुरुहूतम् ऋग्मियम्, इन्द्रम् गीर्भिः मदता वस्वो अर्णवम्।

यस्य द्यावो न विचरन्ति मानुषा, भुजे मंहिष्ठम् अभि विप्रम् अर्चत ॥ 1 ॥ 1-51-1

मन्त्रार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा त्यम् = उस को मेषम् = मेष को पुरुहूतम् = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को ऋग्मियम् = ऋचा, प्रशंसा, स्तुति युक्त को इन्द्रम् = इन्द्र को गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा मदता = मद, हर्ष, तृप्ति करो वस्वो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले अर्णवम् = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिसक यस्य = जिसका द्यावो = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा न = नहीं, समान, उपमार्थक विचरन्ति = विचरण करते हैं मानुषा = मानुष, मनन करने वाले भुजे = भक्षण करो, भोग के लिए मंहिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा विप्रम् = विशेष पूर्ण करने वाले को अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। त्यम् = उस को (सर्वनाम)। मेषम् = मेष को (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना)। पुरुहूतम् = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। ऋग्मियम् = ऋचा, प्रशंसा, स्तुति युक्त को (ऋच् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। मदता = मद, हर्ष, तृप्ति करो (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। वस्वो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अर्णवम् = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिसक (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। द्यावो = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना,

द्यै = तिरस्कार करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। विचरन्ति = विचरण करते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम, चर् = चलना, जाना, विचरण करना, संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। मानुषा = मानुष, मनन करने वाले को (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। भुजे = भक्षण करो, भोग के लिए (भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। महिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। विप्रम् = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना) ॥ 1 ॥

(36) सूक्त 52

127. त्यम् सु मेषम् महया स्वर्विदम्, शतम् यस्य सुभुवः साकम् ईरते।

अत्यम् न वाजम् हवनस्यदम् रथम्, इन्द्रम् ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥ 1 ॥ 1-52-1

मन्त्रार्थ - त्यम् = उस को सु = सुन्दर, अच्छा मेषम् = मेष को महया = महान्, पूज्य, सम्मान करो स्वर्विदम् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् शतम् = सौ यस्य = जिसका सुभुवः = अच्छा हो साकम् = साथ ईरते = कम्पित करता है अत्यम् = सतत गमनीय को न = नहीं, समान, उपमार्थक वाजम् = विद्या को, गति को हवनस्यदम् = दान, आदान-प्रदान, तृप्ति, आह्वान करने वाले रथम् = रथ को इन्द्रम् = इन्द्र को ववृत्यामवसे = वरण, चाहना, आशा करता है सुवृक्तिभिः = सुवृक्ति द्वारा, उत्तम आदान ॥ 1 ॥

पदार्थ - त्यम् = उस को (सर्वनाम)। सु = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। मेषम् = मेष को (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना)। महया = महान्, पूज्य, सम्मान करो (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। स्वर्विदम् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। शतम् = सौ (सर्वनाम)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। सुभुवः = अच्छा हो (सु = अच्छा (उपसर्ग)। भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। साकम् = साथ (अव्यय)। ईरते = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। अत्यम् = सतत गमनीय को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। हवनस्यदम् = दान, आदान-प्रदान, तृप्ति, आह्वान करने वाले (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। रथम् = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ववृत्यामवसे = वरण, चाहना, आशा करता है (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। सुवृक्तिभिः = सुवृक्ति द्वारा, उत्तम आदान (सु - सुन्दर, अच्छा, वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना) ॥ 1 ॥

(37) सूक्त 57

128. इमे ते इन्द्र ते वयम् पुरुष्टुत, ये त्वा अरभ्य चरामसि प्रभूवसो।

न हि त्वत् अन्यो गिर्वणो गिरः सघत्, क्षोणीः इव प्रति तत् हर्य नो वचः ॥ 4 ॥ 1-57-4

मन्त्रार्थ - इमे = यह, इस, ये ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वयम् = हम, हम सब, हम लोग पुरुष्टुत = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति ये = जो त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा आरभ्य =

आरम्भ करके **चरामसि** = विचरण करते हैं **प्रभूवसो** = हे प्रभूवसु, प्रभूतवास देने वाले **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **हि** = ही, निश्चय **त्वत्** = तुमसे **अन्यो** = कोई और, इतर, अन्य **गिरवणो** = हे वाणी, बोध, सिञ्चन **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **सघत्** = दुःख, पीड़ा दिया **क्षोणीः** = गति, ध्वनि करने वाली **इव** = समान, की भाँति, के समान **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **तत्** = वह, उस को **हर्य** = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **वचः** = वचन ॥ 4 ॥

पदार्थ - **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **पुरुषुत** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **ये** = जो। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **आरभ्य** = आरम्भ करके (रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना, आरम्भ करना)। **चरामसि** = विचरण करते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **प्रभूवसो** = हे प्रभूवसु, प्रभूतवास देने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **अन्यो** = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम)। **गिरवणो** = हे वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **सघत्** = दुःख, पीड़ा दिया (सघ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। **क्षोणीः** = गति, ध्वनि करने वाली (क्षु - शब्द करना, जाना, जानना, पाना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **हर्य** = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ 4 ॥

अनुवाकः- 13

(38) सूक्त 74

129. उप प्रयन्तो अध्वरम्, मन्त्रम् वोचेम अग्नये।

आरे अस्मे च शृण्वते ॥ 1 ॥ 1-74-1

मन्त्रार्थ : अध्वरम् अहिंसक अवर्णनीय के उप समीप प्रयन्तो जाते हुए अग्नये अग्नि (ऊर्ध्वगामी विद्वान्) के लिए च और अस्मे हमारे आरे सम्यक् दानी विद्वान् शृण्वते श्रोता के लिए मन्त्रम् मन्त्र को वोचेम हम उच्चारित करें ॥ 1 ॥

भावार्थ : परमात्मा की उपासना करते हुए दानी श्रोताओं के लिए मन्त्र का उच्चारण करने का निर्देश है। उपासना के समय परमात्मा से सज्जनों, विद्वानों के लिए प्रार्थना करें तथा वेदमन्त्रों का पाठ स्वाध्याय करें ॥ 1 ॥

पदार्थ : **उप** = समीप। **प्रयन्तो** = जाता हुआ (या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अध्वरम्** = अहिंसक, अवर्णनीय (ध्वृ = वर्णन करना, हिंसा करना)। **मन्त्रम्** = मन्त्र को (मन्त्र = गुप्त भाषण करना)। **वोचेम** = बोलें, उच्चारण करें (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् = गति करना, आगे जाना)। **आरे** = दूर (रि = जानना, पाना)। **अस्मे** = हमारा। **च** = और। **शृण्वते** = श्रोता के लिए (श्रु-शृण् = सुनना) ॥ 1 ॥

130. यः स्नीहितीषु पूर्यः, सज्जग्मानासु कृष्टिषु।

अरक्षत् दाशुषे गयम् ॥ 2 ॥ 1-74-2

मन्त्रार्थ :- यः = जो स्नीहितीषु = स्नेहियों में पूर्व्यः = पूर्व सञ्जग्मानासु = सम्यक् प्रगतिशीलों में कृष्टिषु = कर्षितों में, रेखांकनों में अरक्षत् = रक्षा करता है, पालन करता है दाशुषे = दानी के लिए गयम् = गय, गायन, वाणी, गति, ज्ञान को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। स्नीहितीषु = स्नेहियों में (स्निह - प्रीति करना, स्नेह करना, मित्रता करना, स्निग्ध होना)। पूर्व्यः = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। सञ्जग्मानासु = सम्यक् प्रगतिशीलों में (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। कृष्टिषु = कर्षितों में, रेखांकनों में (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। अरक्षत् = रक्षा करता है, पालन करता है (अ - नहीं, रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना)। गयम् = गय, गायन, वाणी, गति, ज्ञान को (गै - शब्द, ध्वनि करना, गायन करना) ॥ 2 ॥

131. उत ब्रुवन्तु जन्तवः, उत् अग्निः वृत्रहा अजनि।

धनञ्जयो रणे रणे ॥ 3 ॥ 1-74-3

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर ब्रुवन्तु = कहें जन्तवः = जन्तु उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले अजनि = उत्पन्न किया धनञ्जयो = धन जीतने वाले रणे = रण में, शब्द में रणे = रण में, शब्द में ॥ 4 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। ब्रुवन्तु = कहें (ब्रू - कहना, बोलना)। जन्तवः = जन्तु (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। अजनि = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अज- जाना, गति करना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, जन - उत्पन्न करना)। धनञ्जयो = धन जीतने वाले (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना, जि - जीतना, पराभव करना)। रणे = रण में, शब्द में (रण - शब्द करना, जाना)। रणे = रण में, शब्द में (रण - शब्द करना, जाना) ॥ 4 ॥

(39) सूक्त 75

132. कः ते जामिः जनानाम्, अग्ने को दाश्वध्वरः।

को ह कस्मिन् असि श्रितः ॥ 3 ॥ 1-75-3

मन्त्रार्थ :- कः = कौन ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए जामिः = उत्पन्न होने वाले, भोजन करने वाले जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का अग्ने = हे अग्नि को = कौन दाश्वध्वरः = दानी-अहिंसक, दानी-अवर्णनीय को = कौन ह = ही, निश्चय ही कस्मिन् = किस में असि = हो श्रितः = सेवित, परिपक्व, आश्रित ॥ 3 ॥

पदार्थ :- कः = कौन (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। जामिः = उत्पन्न होने वाले, भोजन करने वाले (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। को = कौन (सर्वनाम)। दाश्वध्वरः = दानी-अहिंसक, दानी-अवर्णनीय (दश् = देना, अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। को = कौन (सर्वनाम)। ह = ही, निश्चय ही (अव्यय)। कस्मिन् = किस में (सर्वनाम)। असि = हो (अस् - होना)। श्रितः = सेवित, परिपक्व, आश्रित (श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 3 ॥

133. त्वम् जामिः जनानाम्, अग्ने मित्रो असि प्रियः ।

सखा सखिभ्यः ईड्यः ॥ 4 ॥ 1-75-4

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम जामिः = उत्पन्न होने वाले, भोजन करने वाले जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का अग्ने = हे अग्नि मित्रो = मित्र असि = हो प्रियः = प्रिय सखा = मित्र सखिभ्यः = मित्रों के लिए ईड्यः = स्तुत्य ॥ 4 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। जामिः = उत्पन्न होने वाले, भोजन करने वाले (जम् = खाना, निगलना, जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। असि = हो (अस् - होना)। प्रियः = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। सखिभ्यः = मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। ईड्यः = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 4 ॥

134. यजा नो मित्रावरुणा, यजा देवान् ऋतम् बृहत् ।

अग्ने यक्षि स्वम् दमम् ॥ 5 ॥ 1-75-5

मन्त्रार्थ- अग्ने हे अग्नि (अग्रणी परमात्मन्), नो हमारे मित्रावरुणा मित्र और वरुण (श्रेष्ठ जन), यजा यजन (सत्कार) करें, बृहत् बड़े ऋतम् ऋत का, देवान् देवों (विद्वानों) का यजा यजन (सत्कार) करें। स्वम् अपने दमम् दयालु को यक्षि पूजिये ॥ 5 ॥

भावार्थ - अग्नि स्वरूप, अग्रणी परमात्मा से यजन की प्रार्थना की गयी है। यजन का अर्थ देवपूजा, संगतिकरण, दान होता है। यज् धातु का मुख्य अर्थ देवपूजा ही माना जाता है। पूजा का अर्थ सत्कार करना, सेवा-सहायता करना ही है। इसी मन्त्र में समानार्थी के रूप में पूजा के अर्थ में यक्षि पद भी आया है। यक्ष् धातु का अर्थ पूजा करना होता है।

पदार्थ- अग्ने = हे अग्नि (अग्रणी परमात्मन्) (अग् - जाना, आगे जाना, ऊर्ध्वगति करना, अग्रणी होना)। नो = हमारे। मित्रावरुणा = मित्र और वरुण (श्रेष्ठ जन) (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, नरम होना, मृदुल होना, वृ - वरण करना, आच्छादन करना)। यजा = यजन (सत्कार) करें (यज् - देव-पूजन, संगतिकरण, दान करना)। बृहत् = बड़े (बृह् - बढना)। ऋतम् = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। देवान् = देवों (विद्वानों) का (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना)। यजा = यजन (सत्कार) करें (यज् - देव-पूजन, संगतिकरण, दान करना)। स्वम् = अपने (स्व - निज, अपना)। दमम् = दयालु को (दम् - दमन करना, दया करना, शमन करना, जीतना)। यक्षि = पूजिये (यक्ष - आराधना करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 5 ॥

(40) सूक्त 79

135. अग्ने वाजस्य गोमतः, ईशानः सहसो यहो ।

अस्मे धेहि जातवेदो महि श्रवः ॥ 4 ॥ 1-79-4

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि वाजस्य = विद्या का, गति का गोमतः = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त ईशानः = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला सहसो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए यहो = पुत्र होना, सन्तान होना अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए धेहि = दो, दीजिये जातवेदो = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं श्रवः = श्रवण करने वाले ॥ 4 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वाजस्य = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना,

घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **गोमत** = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **ईशानः** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **यहो** = पुत्र होना, सन्तान होना (यह = पुत्र होना, सन्तान होना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **धेहि** = धारण करें (धा-धि-धी - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, देना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **श्रवः** = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 4 ॥

136. सः इधानो वसुः कविः, अग्नि ईडेन्यो गिरा।

रेवत् अस्मभ्यम् पुर्वणीक दीदिहि ॥ 5 ॥ 1-79-5

मन्त्रार्थ - सः = वह, उसने **इधानो** = गति, ज्ञान, प्रकाश **वसुः** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **कविः** = ज्ञानी, कवि **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **ईडेन्यो** = स्तुत्य **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ **रेवत्** = प्रवाह **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **पुर्वणीक** = निवासी, बुलाने वाला **दीदिहि** = रूप बनाओ ॥ 5 ॥

पदार्थ - सः = वह, उसने। **इधानो** = गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **वसुः** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ईडेन्यो** = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **रेवत्** = प्रवाह (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **पुर्वणीक** = निवासी, बुलाने वाला (पुर्व - रहना, निवास करना, आमन्त्रण करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **दीदिहि** = रूप बनाओ (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना) ॥ 5 ॥

137. क्षपो राजन् उत त्मना, अग्ने वस्तोः उत उषसः।

स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति ॥ 6 ॥ 1-79-6

मन्त्रार्थ - क्षपो = क्षप, सहन करना, संयमी होना **राजन्** = प्रकाशित होने वाला **उत** = ही **त्मना** = आत्मा द्वारा **अग्ने** = हे अग्नि **वस्तोः** = वस्तु का, प्रेरणा का, वास का **उत** = ही **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का **स** = वह, उसने **तिग्मजम्भ** = कुटिलता से नाश करने वाला, नाश होने वाला, कुटिलता पर गर्व करने वाला **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् **दह** = जलाओ **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में ॥ 6 ॥

पदार्थ - क्षपो = क्षप, सहन करना, संयमी होना (क्षप = भेजना, सहन करना, हूकना, संयमी होना)। **राजन्** = प्रकाशित होने वाला (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **उत** = ही (अव्यय)। **त्मना** = आत्मा द्वारा (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में आ का लोप हो सकता है)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वस्तोः** = वस्तु का, प्रेरणा का, वास का (वस्त - प्रेरणा करना, प्रातः होना, प्रभात होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **उत** = ही (अव्यय)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **स** = वह, उसने। **तिग्मजम्भ** = कुटिलता से नाश करने वाला, नाश होने वाला, कुटिलता पर गर्व करने वाला (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल

चलना, जम्भ - नाश करना, गर्व करना, आलस्य होना)। **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **दह** = जलाओ (दह - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय) ॥ 6 ॥

138. अव आ नो अग्ने ऊतिभिः, गायत्रस्य प्र भर्मणि ।

विश्वासु धीषु वन्द्य ॥ 7 ॥ 1-79-7

मन्त्रार्थ :- अव = नीचे, दूर, प्राप्त आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अग्ने = हे अग्नि ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा गायत्रस्य = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले का प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक भर्मणि = भरण, पोषण, धारण, भरण-पोषण में विश्वासु = सभी धीषु = धारण में वन्द्य = हे वन्दनीय, स्तुति करने योग्य ॥ 7 ॥

पदार्थ :- अव = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। गायत्रस्य = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले का (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। भर्मणि = भरण, पोषण, धारण, भरण-पोषण में (भृ = भरण, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। विश्वासु = सभी (सर्वनाम)। धीषु = धारण में (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। वन्द्य = हे वन्दनीय, स्तुति करने योग्य (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना) ॥ 7 ॥

139. आ नो अग्ने रयिम् भर, सत्रासाहम् वरेण्यम् ।

विश्वासु पृत्सु दुष्टरम् ॥ 8 ॥ 1-79-8

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अग्ने = हे अग्नि रयिम् = विद्या, ज्ञान को भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो सत्रासाहम् = सत्र में समर्थ को, विस्तार, सम्बन्ध बनाने में समर्थ वरेण्यम् = वरण योग्य विश्वासु = सभी पृत्सु = पूर्णता में, जीवन में दुष्टरम् = दुष्ट को ॥ 8 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। सत्रासाहम् = सत्र में समर्थ को, विस्तार, सम्बन्ध बनाने में समर्थ (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। वरेण्यम् = वरण योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। विश्वासु = सभी (सर्वनाम)। पृत्सु = पूर्णता में, जीवन में (पृत् - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। दुष्टरम् = दुष्ट को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन) ॥ 8 ॥

140. आ नो अग्ने सुचेतुना, रयिम् विश्वायुपोषसम् ।

मार्डीकम् धेहि जीवसे ॥ 9 ॥ 1-79-9

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अग्ने = हे अग्नि सुचेतुना = उत्तम चेतनीय, श्रेष्ठ चुने गये को, उत्तम विचारक को रयिम् = विद्या, ज्ञान को भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो विश्वायुपोषसम् = सम्पूर्ण आयु का पोषण करने वाले मार्डीकम् = सुखकारी को धेहि = धारण करें जीवसे = जीव के लिए, जीवन के लिए ॥ 9 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सुचेतुना =

उत्तम चेतनीय, श्रेष्ठ चुने गये को, उत्तम विचारक को (सु - उत्तम, अच्छा, चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **विश्वायुपोषसम्** = सम्पूर्ण आयु का पोषण करने वाले (विश्व + आयुः, विश्व - सभी, सर्वनाम, अय - जाना, पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **मार्डीकम्** = सुखकारी को (मृड - सुखी होना, सुख देना)। **धेहि** = धारण करें (धा-धि-धी - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, देना)। **जीवसे** = जीव के लिए, जीवन के लिए (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना) ॥ 9 ॥

(41) सूक्त 80

141. इत्था हि सोम इत् मदे, ब्रह्मा चकार वर्धनम्।

शविष्ठ वज्रिन् ओजसा, पृथिव्या निः शशा अहिम्, अर्चन् अनु स्वराज्यम् ॥ 1 ॥ 1-80-1

मन्त्रार्थ - इत्था = इत्था इस प्रकार हि = ही, निश्चय सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता इत् = ही मदे = आनन्दकारी ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् चकार = किया वर्धनम् = वृद्धि को शविष्ठ = अत्यन्त समीपगामी वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त ओजसा = ओज द्वारा पृथिव्या = पृथ्वी योग्य, पृथिवी द्वारा निः = बिना, बाहर, निश्चित शशा = कूर्दन करने वाला अहिम् = व्यापक अर्चन् = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को ॥ 1 ॥

पदार्थ - इत्था = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। इत् = ही (अव्यय)। मदे = आनन्दकारी (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। चकार = किया (कृ = करना)। वर्धनम् = वृद्धि को (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। शविष्ठ = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। पृथिव्या = पृथ्वी योग्य, पृथिवी द्वारा (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। निः = बिना, बाहर, निश्चित (उपसर्ग)। शशा = कूर्दन करने वाला (शश् - कूर्दन करना, कूदना, उछलना, कूदते हुए चलना)। अहिम् = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। अर्चन् = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ 1 ॥

142. प्रेहि अभीहि धृष्णुहि, न ते वज्रो नि यंसते।

इन्द्र नृम्णम् हि ते शवो, हनो वृत्रम् जय आ अपो, अर्चन् ननु स्वराज्यम् ॥ 3 ॥ 1-80-3

मन्त्रार्थ - प्रेहि = अधिक प्रगतिशील अभीहि = सभी ओर प्रगतिशील धृष्णुहि = विजय, गर्व न = नहीं, समान, उपमार्थक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वज्रो = वज्र, गतिमान नि = निश्चित, निरन्तर यंसते = दो, प्रदान करो इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली नृम्णम् = नर, ले जाने वाले को हि = ही, निश्चय ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शवो = शव, गति, ज्ञान हनो = मारने वाला वृत्रम् = वृत्र, हिंसा को जय = विजय आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम अपो पालन करने वाला, पालक, रक्षक अर्चन् = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो ननु = निश्चय ही स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित करते हो ॥ 3 ॥

पदार्थ - प्रेहि = अधिक प्रगतिशील (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इ = जाना, जानना, पाना)। अभीहि = सभी ओर

प्रगतिशील (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इ = जाना, जानना, पाना)। धृष्णुहि = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वज्रो = वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। यंसते = दो, प्रदान करो (यच्छ - प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, यच्छ - देना, सौंपना, लौटाना, रखना, यन - उद्धार करना, उद्धारण करना)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नृणाम् = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। शवो = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। हनो = मारने वाला (हन् - मारना)। वृत्रम् = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। जय = विजय (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बड़ के होना, जीतना, पराभव करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। अपो = पालन करने वाला, पालक, रक्षक (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। अर्चन् = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। ननु = निश्चय ही (अव्यय)। स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित करते हो (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ 3 ॥

143. इन्द्र तुभ्यम् इत् अद्रिवो, अनुत्तम् वज्रिन् वीर्यम्।

यत् ह त्यम् मायिनम् मृगम्, तम् त्यत् मायया अवधीः, अर्चन् ननु स्वराज्यम् ॥ 7 ॥ 1-80-7

मन्त्रार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली तुभ्यम् = तुम्हारे लिए इत् = ही अद्रिवो = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला अनुत्तम् = अश्रेष्ठ वज्रिन् = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त वीर्यम् = पराक्रम, वीरता को यत् = जिसे, जो ह = ही, निश्चय ही त्यम् = उस को मायिनम् = माया वालों को मृगम् = मृग, अन्वेषी तम् = उसको, उसे त्यत् = उस को मायया = माया द्वारा अवधीः = वध न करने वाला, मारता हुआ अर्चन् = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो ननु = निश्चय ही स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को ॥ 7 ॥

पदार्थ - इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। तुभ्यम् = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। अद्रिवो = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। अनुत्तम् = अश्रेष्ठ (अन् - नहीं, उत्तम - श्रेष्ठ)। वज्रिन् = हे वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। वीर्यम् = पराक्रम, वीरता को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ह = ही, निश्चय ही (अव्यय)। त्यम् = उस को (सर्वनाम)। मायिनम् = माया वालों को (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। मृगम् = मृग, अन्वेषी (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। त्यत् = उस को (सर्वनाम)। मायया = माया द्वारा (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। अवधीः = वध न करने वाला, मारता हुआ (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, वध-हन् - वध करना, मारना, हिंसा करना, गति करना, जाना, जानना, पाना)। अर्चन् = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। ननु = निश्चय ही (अव्यय)। स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ 7 ॥

(42) सूक्त 81

144. इन्द्रो मदाय वावृधे, शवसे वृत्रहा नृभिः।

तम् इत् महत्सु आजिषु, ऊत्तेम् अर्भे हवामहे, सः वाजेषु प्र नो अविषत् ॥ 1 ॥ 1-81-1

मन्त्रार्थ :- इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए वावृधे = वृद्धि किया शवसे = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले नृभिः = नरों द्वारा तम् = उसको, उसे इत् = ही

महत्सु = महानों में **आजिषु** = विजयों में **ऊतेम्** = रक्षा को, वाणी को **अर्भे** = अर्भ में **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **सः** = वह, उसने **वाजेषु** = वाजों में **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अविषत्** = व्याप्त हुआ, प्रोक्षण किया ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वावृधे** = वृद्धि किया (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **शवसे** = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **महत्सु** = महानों में (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **आजिषु** = विजयों में (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। **ऊतेम्** = रक्षा को, वाणी को (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **अर्भे** = अर्भ में (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **वाजेषु** = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अविषत्** = व्याप्त हुआ, प्रोक्षण किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, विष - उपयोग न होने से अलग करना या निकाल देना, विष - सींचना, प्रोक्षण करना, विष-विष - व्यापना, फैलना, प्रसृत होना) ॥ 1 ॥

145. असि हि वीर सेन्यो, असि भूरि पराददिः ।

असि दभ्रस्य चित् वृधो, यजमानाय शिक्षसि, सुन्वते भूरि ते वसु ॥ 2 ॥ 1-81-2

मन्त्रार्थ :- **असि** = हो **हि** = ही, निश्चय **वीर** = पराक्रमी, वीर **सेन्यो** = सेन्य, बन्धन योग्य **असि** = हो **भूरि** = बहु, बहुत **पराददिः** = महादानी **असि** = हो **दभ्रस्य** = निन्दक, हिंसक का **चित्** = चेतन **वृधो** = वृद्धि **यजमानाय** = यजमान के लिए **शिक्षसि** = शिक्षा देता है, सिखाता है **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है **भूरि** = बहु, बहुत **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **असि** = हो (अस् - होना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वीर** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **सेन्यो** = सेन्य, बन्धन योग्य (सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **भूरि** = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। **पराददिः** = महादानी (परा = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय), दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **दभ्रस्य** = निन्दक, हिंसक का (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना)। **चित्** = चेतन, (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **वृधो** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **यजमानाय** = यजमान के लिए (यज = देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **शिक्षसि** = शिक्षा देता है, सिखाता है (शिक्ष - शिक्षा देना)। **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **भूरि** = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 2 ॥

146. यत् उदीरते आजयः, धृष्णवे धीयते धना ।

युङ्क्ष्व आ मदच्युता हरी, कम् हनः कम् वसौ दधो,

अस्मान् इन्द्र वसौ दधः ॥ 3 ॥ 1-81-3

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो उदीरते = उत्तम उच्चारण करते हैं आजयः = विजय धृष्णवे = विजय, गर्व के लिए धीयते = धारण करता है धना = धन युङ्क्ष्व = युक्त कीजिये आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मदच्युता = आनन्द-सिंचित हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले कम् = किसको हनः = मारने वाला कम् = किसको वसौ = वसु में दधो = धारण करने वाला अस्मान् = हमें, हमको इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली वसौ = वसु में दधः = धारण करने वाला ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। उदीरते = उत्तम उच्चारण करते हैं (उत्+ईर - कहना बोलना, उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। आजयः = विजय (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। धृष्णवे = विजय, गर्व के लिए (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। धीयते = धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। धना = धन (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। युङ्क्ष्व = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मदच्युता = आनन्द-सिंचित (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। कम् = किसको (सर्वनाम)। हनः = मारने वाला (हन् - मारना)। कम् = किसको (सर्वनाम)। वसौ = वसु में (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। दधो = धारण करने वाला (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। अस्मान् = हमें, हमको (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वसौ = वसु में (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। दधः = धारण करने वाला (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 6 ॥

147. क्रत्वा महान् अनुष्वधम्, भीमः आ वावृते शवः।

श्रिये ऋष्व उपाकयोः, नि शिप्री हरिवान् दधे, हस्तयोः वज्रम् आयसम् ॥ 4 ॥ 1-81-4

मन्त्रार्थ - क्रत्वा = करें महान् = बड़े, पूज्य, महान् अनुष्वधम् = अनुस्वध को भीमः = भयंकर आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वावृते = वर्तमान है शवः = शव, गति, ज्ञान श्रिये = श्रिय के लिए, सेवा के लिए ऋष्व = ऋषि उपाकयोः = समीप विद्या में, विद्वान के समीप में नि = निश्चित, निरन्तर शिप्री = शिप्र हरिवान् = हरि युक्त दधे = धारण करते हैं हस्तयोः = हाथों का वज्रम् = वज्र, गतिमान को आयसम् = आते हुए, आने वाले, शासन करने वाले को ॥ 4 ॥

पदार्थ - क्रत्वा = करें (कृ - करना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। अनुष्वधम् = अनुस्वध को (अनु = पश्चात्, पीछे, स्वद् - स्वाद लेना, प्रदसन्न होना, स्व - अपना, धा - धारण करना)। भीमः = भयंकर (भी - डरना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वावृते = वर्तमान है (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। शवः = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। श्रिये = श्रिय के लिए, सेवा के लिए (श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। ऋष्व = ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। उपाकयोः = समीप विद्या में, विद्वान के समीप में (उप - समीप, अक् = जाना, जानना, पाना, वक्र गति होना, कुटिल गति होना)। नि = निश्चित, निरन्तर

(अव्यय)। **शिप्री** = शिप्र (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **हरिवान्** = हरि युक्त (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **हस्तयोः** = हाथों का (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना)। **आयसम्** = आते हुए, आने वाले, शासन करने वाले को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, अय-ई - जाना) ॥ 4 ॥

(43) सूक्त 82

148. उप उ षु शृणुही गिरो, मघवन् मा अतथा इव ।

यदा न सूनृतावतः, करः इत् अर्थयास इत्, योजा नु इन्द्र ते हरी ॥ 1 ॥ 1-82-1

मन्त्रार्थ - उप = समीप उ = निश्चय ही, भी षु = उत्तम, अच्छा शृणुही = सुनो गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् मा = नहीं, मत अतथा = गतिशील इव = समान, की भाँति, के समान यदा = जब न = नहीं, समान, उपमार्थक सूनृतावतः = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली करः = करता है इत् = ही अर्थयास = अर्थों को इत् = ही योजा = समाधिस्थ हो, सम्बन्धी हो, युक्त करता है नु = निश्चय ही, शीघ्र ही इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ - उप = समीप (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी। षु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। शृणुही = सुनो (श्रु-शृण् = सुनना)। गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। अतथा = गतिशील (अत् - चलना, निरन्तर चलना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। यदा = जब (सर्वनाम)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। सूनृतावतः = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना)। करः = करता है (कृ - करना)। इत् = ही (अव्यय)। अर्थयास = अर्थों को (अर्थ - माँगना, याचना करना, चाहना)। इत् = ही (अव्यय)। योजा = समाधिस्थ हो, सम्बन्धी हो, युक्त करता है (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना) ॥ 1 ॥

149. अक्षन् अमीमदन्त हि, अव प्रिया अधूषत ।

अस्तोषत स्वभानवो, विप्रा नविष्ठया मती, योज आ नु इन्द्र ते हरी ॥ 2 ॥ 1-82-2

मन्त्रार्थ : अक्षन् हे व्यापक अमीमदन्त आनन्दमय! हि ही अव रक्षा करो। प्रिया प्रियजन अधूषत शोभित हुए। स्वभानवो स्वप्रकाश, नविष्ठया नवीनतम मती मति वाले, विप्रा पालन-पोषण प्रीति करने वाले लोगों ने अस्तोषत स्तुति की। इन्द्र हे परम ऐश्वर्यवान्! नु शीघ्र हरी ले जाने वाले ते तुम्हारे लिए, योजा समाधिस्थ होते हैं ॥ 2 ॥

भावार्थ : अव् धातु के अनेक अर्थ हैं। रक्षा करना, जाना, जानना, कामना करना, प्यार करना, प्रिय होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्दित करना, प्रवेश करना, सुनना, सुनाना, स्वामी होना, आदेश मानना, माँगना, कर्म करना, शोभित होना, प्रकाशित होना, मिलना, पाना, गले लगाना, हिंसा करना, लेना, होना, बढ़ना आदि अर्थों में अव् धातु का प्रयोग होता है। ये सभी गुण या क्षमता परमात्मा में ही सम्भव हैं। नविष्ठ अर्थात् अतिशय नवीन मति से स्पष्ट है कि रूढ़िवादी होना उचित नहीं है, नवीन विचारों को समझने स्वीकार करने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। परमात्मा में स्थिति करें, उसी में समाधिस्थ हों ॥ 2 ॥

पदार्थ : अक्षन् = व्यापक (अक्ष् = व्याप्त होना)। अमीमदन्त = आनन्दयुक्त (मद् = आनन्द होना)। हि = निश्चय ही। अव = रक्षा करो (अव् = रक्षा करना)। प्रियाः = प्रिय (प्री - प्रीति करना)। अधूषत = शोभित हुए (धूष् = शोभित होना)। अस्तोषत = स्तुति की (स्तु = स्तुति-प्रशंसा करना)। स्वभानवो = स्वयम् प्रकाशयुक्त (भा = प्रकाश होना)। विप्रा = पालन-

पोषण प्रीति करने वाले लोगों ने (पृ = पूर्ण करना, पालन करना)। नविष्टया = नवीनतम (नव् = नवीन होना)। मती = मति वाले (मन् = जानना, समझना)। योजा = समाधिस्थ हो, (युज् = समाधि होना)। नु = शीघ्र। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा। हरी = ले जाने वाले (हृ = ले जाना) ॥ 2 ॥

150. सः घा तम् वृषणम् रथम्, अधि तिष्ठाति गोविदम्।

यः पात्रम् हारियोजनम्, पूर्णम् इन्द्र चिकेतति,

योजा नु इन्द्र ते हरी ॥ 4 ॥

1-82-4

मन्त्रार्थ - सः = वह, उसने घा = ही, भी तम् = उसको, उसे वृषणम् = पराक्रमी को रथम् = रथ को अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार तिष्ठाति = प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है गोविदम् = गोविद्, गो को जानने वाले यः = जो पात्रम् = पात्र को, पालन, रक्षा करने वाले को, पात्र को हारियोजनम् = हरि-योजन सम्बन्धी, हरि-मिलन पूर्णम् = पूर्ण को (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली चिकेतति = विद्वान्, जानता हूँ योजा = समूह, मिलाने वाला, एकत्र करने वाला, सम्बन्ध वाला नु = निश्चय ही, शीघ्र ही इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले ॥ 4 ॥

पदार्थ - सः = वह, उसने (सर्वनाम)। घा = ही, भी (अव्यय, निपात)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। रथम् = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। तिष्ठाति = प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। गोविदम् = गोविद्, गो को जानने वाले (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विद् - जानना)। यः = जो (सर्वनाम)। पात्रम् = पात्र को, पालन, रक्षा करने वाले को, पात्र को (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। हारियोजनम् = हरि-योजन सम्बन्धी, हरि-मिलन (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना। यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। पूर्णम् = पूर्ण को (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। चिकेतति = विद्वान्, जानता हूँ (चिकित् - जानना)। योजा = समूह, मिलाने वाला, एकत्र करने वाला, सम्बन्ध वाला (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना) ॥ 4 ॥

(44) सूक्त 84

151. असावि सोमः इन्द्र ते, शविष्ठ धृष्णो आ गहि।

आ त्वा पृणक्तु इन्द्रियम्, रजः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ 1 ॥ 1-84-1

मन्त्रार्थ - असावि = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शविष्ठ = हे अत्यन्त समीपगामी धृष्णो = विजय, गर्व आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम गहि = गति, ज्ञान, घना करें आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा पृणक्तु = पूर्ण करो इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित रजः = रज सूर्यो = सूर्य के न = नहीं, समान, उपमार्थक रश्मिभिः = किरणों से ॥ 1 ॥

पदार्थ - असावि = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण

करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शविष्ठ** = हे अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **धृष्णो** = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **पृणक्तु** = पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **इन्द्रियम्** = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **रजः** = रज (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **सूर्यो** = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रश्मिभिः** = किरणों से (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना) ॥ 1 ॥

152. इन्द्रम् इत् हरी वहतो, अप्रति-धृष्ट-शवसम्।

ऋषीणाम् सुष्टुतीः उप, यज्ञम् च मानुषाणाम् ॥ 2 ॥ 1-84-2

मन्त्रार्थ :- इन्द्रम् - इन्द्र को, परम ऐश्वर्यवान् को, **इत्** - ही, **हरी** - हरण करने वाले, **वहतो** - वहन करने वाले, **अप्रतिधृष्ट-शवसम्** - अपराजित गति वाले को। **ऋषीणाम्** - ऋषियों का, **सुष्टुतीः** - उत्तम स्तुतियाँ, **उप** - समीप, **यज्ञम्** - यज्ञ को, **च** - और, **मानुषाणाम्** - मनुष्यों का ॥ 2 ॥

भावार्थ :- ऋषियों की स्तुतियाँ और मनुष्यों के यजन परमात्मा को समर्पित हैं। ऋषि स्तुति करते हैं, यही उनका यजन है। ऋषि परमात्मा की स्तुति-उपासना में लीन रहते हैं। उनका पूरा जीवन इसी में समर्पित होता है। उन्हें किसी अन्य यजन की आवश्यकता नहीं होती है। उनके लिए यही सर्वश्रेष्ठ देवपूजा है, यही सर्वश्रेष्ठ संगतिकरण है, यही सर्वश्रेष्ठ दान है। साधारण मनुष्य इतना समर्पित नहीं हो सकता है। उसे लोक-व्यवहार का निर्वाह करना होता है। अतः वह प्रतिदिन प्रयासपूर्वक यजन करता है। वह प्रयास करता है कि देवपूजा, संगतिकरण, दान का क्रम बनाये रखे ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **इन्द्रम्** = इन्द्र को। **इत्** = ही। **हरी** = हरी, हरण करने वाले (हृ - हरण करना)। **वहतो** = वहन करने वाले (वह = ले जाना, वहन करना)। **अप्रतिधृष्टशवसम्** = अप्रतिधृष्ट, अपराजित गति वाले को (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, धृष्ट - जीतना, पराभव करना, घबरा जाना, शव - जाना, जानना, पाना)। **ऋषीणाम्** = ऋषियों का (ऋष - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **सुष्टुतीः** = स्तुतियाँ (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **उप** = समीप। **यज्ञम्** = यजन को, यज्ञ को (यज् = देवपूजा, सङ्गतिकरण, दान करना)। **च** = और। **मानुषाणाम्** - मनुष्यों का (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना) ॥ 2 ॥

153. आ तिष्ठ वृत्र-हन् रथम्, युक्ता ते ब्रह्मणा हरी।

अर्वाचीनम् सु ते मनो, ग्रावा कृणोतु वग्नुना ॥ 3 ॥ 1-84-3

मन्त्रार्थ :- **आ तिष्ठ** - प्रतिष्ठित हो, **वृत्र-हन्** - वृत्र-हनन करने वाले, **रथम्** - रथ को, **युक्ता** - युक्त, **ते** - तुम्हारा, **ब्रह्मणा** - ब्रह्म का, विराट, महान् का **हरी** - हरि। **अर्वाचीनम्** - अर्वाचीन, **सु** - अच्छा, **ते** - तुम्हारा, **मनो** - मन, **युक्ता** = युक्त। **ग्रावा** - स्तुति, सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द करने वाले, **कृणोतु** - करो, **वग्नुना** - वाणीयुक्त द्वारा, विद्वान् द्वारा ॥ 3 ॥

भावार्थ :- हिंसा-भावना का हनन करने वाले विद्वान् रथयुक्त होकर आयें, वे स्तुति-गान करें, हमारा बोध करें, विद्या-विचार के अमृत से हमारा अभिसिञ्चन करें। सोलह कलाओं से युक्त जन परम ऐश्वर्य के लिए तथा परम ऐश्वर्ययुक्त परमात्मा के लिए यहाँ प्रतिष्ठित होते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, पूर्णतः (उपसर्ग)। तिष्ठ - प्रतिष्ठित हो (तिष्ठ = ठहरना, प्रतिष्ठित होना)। वृत्रहन् = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। रथम् = रथ को। (रथ = जाना, ले जाना)। युक्ता = युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए। ब्रह्मणा = ब्रह्म का, विराट, महान् का (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। हरी = हरी। अर्वाचीनम् = अर्वाचीन (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। सु = अच्छा। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए। मनः = मन। ग्रावा = स्तुति, सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द करने वाले (गृ = सींचना, समझना, जानना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना)। कृणोतु - करो (कृ = करना)। वग्नूना = वाणीयुक्त द्वारा, विद्वान् द्वारा (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)॥ 3॥

154. इमम् इन्द्र सुतम् पिब, ज्येष्ठम् अमर्त्यम् मदम्।

शुक्रस्य त्वा अभ्यक्षरन्, धारा ऋतस्य सादने॥ 4॥ 1-84-4

मन्त्रार्थ - इमम् = इसको इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को पिब = पी लो ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को अमर्त्यम् = अमर्त्य को मदम् = मद को, हर्ष को, तृप्ति को शुक्रस्य = शुक्र का, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी का त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अक्षरन् = क्षरित हुआ धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो ऋतस्य = ऋत का सादने = स्थापन में॥ 4॥

पदार्थ :- इमम् = इसको (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पिब = पी लो (पी-पिब - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। अमर्त्यम् = अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। मदम् = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। शुक्रस्य = शुक्र का, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी का (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अक्षरन् = क्षरित हुआ (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। सादने = स्थापन में (साद् = जाना, ले जाना, स्थापित करना, होना)॥ 4॥

155. इन्द्राय नूनम् अर्चत, उक्थानि च ब्रवीतन।

सुताः अमत्सुः इन्द्रवो, ज्येष्ठम् नमस्यता सहः॥ 5॥ 1-84-5

मन्त्रार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए नूनम् = निश्चय ही अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो उक्थानि = उक्ति, कथनों को च = और। ब्रवीतन = बोलो सुताः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए अमत्सुः = तृप्त किया, हर्षित किया इन्द्रवो = इन्दुगण ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को नमस्यता = नमस्कार करो सहः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट॥ 5॥

पदार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्द्र-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नूनम् = निश्चय ही (अव्यय)। अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। उक्थानि = उक्ति, कथनों को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। च = और। ब्रवीतन = बोलो (ब्रू - कहना, बोलना)। सुताः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या

अमानवी पराक्रम होना)। **अमत्सुः** = तृप्त किया, हर्षित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, अम् - जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना)। **इन्द्रवो** = इन्द्रगुण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **नमस्यता** = नमस्कार करो (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना, ते - तुम्हारे लिए, तुमको)। **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना) ॥ 5 ॥

156. न किः त्वत् रथीतरो, हरी यत् इन्द्र यच्छसे ।

न किः त्वा अनु मज्मना, न किः स्वश्वः आनशे ॥ 6 ॥ 1-84-6

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक **किः** = कोई, किसी **त्वत्** = तुमसे **रथीतरो** = उत्तम रथी **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **यत्** = जिसे, जो **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **यच्छसे** = प्रदान करते हो, देते हो **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **किः** = कोई, किसी **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **मज्मना** = शब्दकर्ता **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **किः** = कोई, किसी **स्वश्वः** = उत्तम व्यापक **आनशे** = प्राणवान् होता है, स्तुति करता है, नष्ट होता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **रथीतरो** = उत्तम रथी (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **यच्छसे** = प्रदान करते हो, देते हो (यच्छ = देना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **मज्मना** = शब्दकर्ता (मज् - शब्द करना, ध्वनि करना, कामातुर शब्द करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **स्वश्वः** = उत्तम व्यापक (सु = उत्तम, अच्छा, अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचाना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचाना)। **आनशे** = प्राणवान् होता है, स्तुति करता है, नष्ट होता है (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन् - चेतन होना, प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, नश - खो जाना, नष्ट होना, दिखाई नहीं देना, नु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नु-नव - शब्द करना, निश्चय करना, नु-नुव - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 6 ॥

157. यः एक इत् विदयते, वसु मर्ताय दाशुषे ।

ईशानो अप्रतिष्कृत इन्द्रो अङ्ग ॥ 7 ॥ 1-84-7

मन्त्रार्थ - यः = जो **एक** = एक **इत्** = ही **विदयते** = विशेष देते हैं **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **मर्ताय** = मरणशील को **दाशुषे** = दानी के लिए **ईशानो** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला **अप्रतिष्कृत** = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **अङ्ग** = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **विदयते** = विशेष देते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), दय - दान करना, पालन करना, गति करना, हिंसा करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **मर्ताय** = मरणशील को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **ईशानो** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **अप्रतिष्कृत** = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौरे के समान शब्द करना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अङ्ग** =

अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना) ॥ 7 ॥

158. कदा मर्तम् अराधसम्, पदा क्षुम्पम् इव स्फुरत् ।

कदा नः शुश्रवत् गिरः इन्द्रो अङ्ग ॥ 8 ॥ 1-84-8

मन्त्रार्थ :- कदा = कब मर्तम् = मरणशील को अराधसम् = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि, दान से रहित को पदा = पद, पद द्वारा क्षुम्पम् = प्रगति, प्राप्ति, शब्द, दया, सहन को इव = समान, की भाँति, के समान स्फुरत् = स्फुरण करता है कदा = कब नः = हमको, हमारे लिए, हमारा शुश्रवत् = श्रवण करता है गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली अङ्ग = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला ॥ 8 ॥

पदार्थ :- कदा = कब (सर्वनाम)। मर्तम् = मरणशील को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। अराधसम् = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि, दान से रहित को (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। पदा = पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। क्षुम्पम् = प्रगति, प्राप्ति, शब्द, दया, सहन को (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना, क्षम्प - सहन करना, सहना, दया करना, चमकना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। स्फुरत् = स्फुरण करता है (स्फुर - हिलना, स्फुरित होना, जाना, फैलना, सूझना)। कदा = कब (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। शुश्रवत् = श्रवण करता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अङ्ग = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना) ॥ 8 ॥

159. यः चित् हि त्वा बहुभ्यः, आ सुतावान् आविवासति ।

उग्रम् तत् पत्यते शवः इन्द्रो अङ्ग ॥ 9 ॥ 1-84-9

मन्त्रार्थ :- यः = जो चित् = भी, ही। हि = ही, निश्चय त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा बहुभ्यः = बहुत के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सुतावान् = सुतावान्, सृजनशील आविवासति = वास करता है उग्रम् = उग्र को तत् = वह, उस को पत्यते = ऐश्वर्यवान् होता है शवः = शव, गति, ज्ञान इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली अङ्ग = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला ॥ 9 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। चित् = भी, ही। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। बहुभ्यः = बहुत के लिए (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सुतावान् = सुतावान्, सृजनशील (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। आविवासति = वास करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, वस् - बसना, रहना, निवास करना)। उग्रम् = उग्र को (उग्र - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। पत्यते = ऐश्वर्यवान् होता है (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। शवः = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अङ्ग = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना) ॥ 9 ॥

160. स्वादोः इत्था विषूवतो, मध्वोः पिबन्ति गौर्यः ।

या इन्द्रेण सयावरीः, वृष्णा मदन्ति शोभथा, वस्वीः अनु स्वराज्यम् ॥ 10 ॥ 1-84-10

मन्त्रार्थ - स्वादोः = स्वाद युक्त इत्था = इस प्रकार विषूवतो = व्यापक मध्वोः = मधु का पिबन्ति = पीते हैं गौर्यः = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता याः = जो इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा सयावरीः = सहगामी वृष्णा = पराक्रमी मदन्ति = आनन्दित करते हैं, हर्षित होते हैं, तृप्त होते हैं शोभथा = शोभित होता है वस्वीः = वसुमय, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल स्वराज्यम् = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को ॥ 10 ॥

पदार्थ :- स्वादोः = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। इत्था = इस प्रकार (अव्यय)। विषूवतो = व्यापक (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। मध्वोः = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना,

मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **पिबन्ति** = पीते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **गौर्यः** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **याः** = जो (सर्वनाम)। **इन्द्रेण** = इन्द्र द्वारा (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सयावरीः** = सहगामी (स - सहित, साथ, या - जाना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, यु - अपमान करना, दोष लगाना, निन्दा करना, यु - बांधना, बन्धन करना, गूँथना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना)। **वृष्णा** = पराक्रमी (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष् - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **मदन्ति** = आनन्दित करते हैं, हर्षित होते हैं, तृप्त होते हैं (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शोभथा** = शोभित होता है (शुभ - चमकना, प्रकाशित होना, देदीप्यमान होना, शोभा पाना, सुन्दर होना, शोभायमान होना, भाषण करना, बोलना, मार डालना या दुःख देना)। **वस्वीः** = वसुमय, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ 10 ॥

161. ताः अस्य पृशनायुवः, सोमम् श्रीणन्ति पृश्नयः ।

प्रियाः इन्द्रस्य धेनवो, वज्रम् हिन्वन्ति सायकम्, वस्वीः अनु स्वराज्यम् ॥ 11 ॥ 1-84-11

मन्त्रार्थ :- ताः = वे, वह, वे दोनो **अस्य** = इसका **पृशनायुवः** = सरल गतिशील **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का **श्रीणन्ति** = सेवा करते हैं **पृश्नयः** = सरलकर्ता, प्रश्नकर्ता **प्रियाः** = प्रिय **इन्द्रस्य** = परम ऐश्वर्यशाली का **धेनवो** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को **हिन्वन्ति** = संतृप्त करते हैं **सायकम्** = अन्त करने वाले को, बाँधने वाले को **वस्वीः** = वसुमय, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को ॥ 11 ॥

पदार्थ :- ताः = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **पृशनायुवः**, = सरल गतिशील (पृश् = प्रश्न करना, पूँछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना, यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **श्रीणन्ति** = सेवा करते हैं (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **पृश्नयः** = सरलकर्ता, प्रश्नकर्ता (पृश् = प्रश्न करना, पूँछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना)। **प्रियाः** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **इन्द्रस्य** = परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **धेनवो** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **हिन्वन्ति** = संतृप्त करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **सायकम्** = अन्त करने वाले को, बाँधने वाले को (सय, सो-स्य - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सि** - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **वस्वीः** = वसुमय, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ 11 ॥

162. ताः अस्य नमसा सहः, सपर्यन्ति प्रचेतसः ।

व्रतानि अस्य सश्चिरे, पुरुणि पूर्वचित्तये, वस्वीः अनु स्वराज्यम् ॥ 12 ॥ 1-84-12

मन्त्रार्थ :- ताः = वे, वह, वे दोनो **अस्य** = इसका **नमसा** = नमन द्वारा **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **सपर्यन्ति** = पूजा करते हैं, सेवा करते हैं **प्रचेतसः** = प्रकृष्ट विचार वाले **व्रतानि** = व्रतों को **अस्य** = इसका **सश्चरे** = गये, प्राप्त किया **पुरुणि** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी **पूर्वचित्तये** = पूर्वचित, पूर्व चेतन, पूर्व चुने हुए के लिए **वस्वीः** = वसुमय, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- ताः = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **नमसा** = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **सपर्यन्ति** = पूजा करते हैं, सेवा करते हैं (सपर - पूजा करना, सेवा करना)। **प्रचेतसः** = प्रकृष्ट विचार वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **व्रतानि** = व्रतों को (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **सश्चरे** = गये, प्राप्त किया (सश्च् = पाना, जानना, जाना)। **पुरुणि** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **पूर्वचित्तये** = पूर्वचित, पूर्व चेतन, पूर्व चुने हुए के लिए (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना, चित् - विचार करना, चिन्तन करना)। **वस्वीः** = वसुमय, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **स्वराज्यम्** = अपने राज्य को, स्वयं प्रकाशित को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना) ॥ 12 ॥

163. इन्द्रो दधीचो अस्थभिः, वृत्राणि अप्रतिष्कृतः ।

जघान नवतीः नव ॥ 13 ॥ 1-84-13

मन्त्रार्थ - इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् **दधीचो** = धारण करे, धारण किया **अस्थभिः** = अस्थियों द्वारा **वृत्राणि** = वृत्रों को, हिंसा को **अप्रतिष्कृतः** = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन **जघान** = हिंसा की, मार दिया, हनन किया **नवतीः** = नब्बे **नव** = नौ ॥ 13 ॥

पदार्थ - इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **दधीचो** = धारण करे, धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अस्थभिः** = अस्थियों द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था - स्थित होना, ठहरना)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **अप्रतिष्कृतः** = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौरे के समान शब्द करना)। **जघान** = हिंसा की, मार दिया, हनन किया (हन्-घ्न - हिंसा करना)। **नवतीः** = नब्बे (संख्या)। **नव** = नौ (संख्या) ॥ 13 ॥

164. इच्छन् अश्वस्य यत् शिरः, पर्वतेषु अपश्रितम् ।

तत् विदत् शर्यणावति ॥ 14 ॥

1-84-14

मन्त्रार्थ :- इच्छन् = इच्छा करते हुए **अश्वस्य** = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का **यत्** = जिसे, जो **शिरः** = शिर **पर्वतेषु** = पर्वतों में **अपश्रितम्** = अपश्रित को, अपसेवित को **तत्** = वह, उस को **विदत्** = जानें **शर्यणावति** = शब्द युक्त में ॥ 14 ॥

पदार्थ :- इच्छन् = इच्छा करते हुए (इच्छ = इच्छा करना, कामना करना, चाहना)। **अश्वस्य** = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **शिरः** = शिर (शिर् - शीर्ष होना,

मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **पर्वतेषु** = पर्वतों में (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **अपश्रितम्** = अपश्रित को, अपसेवित को (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **विदत्** = जानें (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **शर्यणावति** = शब्द युक्त में (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना) ॥ 14 ॥

165. अत्र अह गोः अमन्वत, नाम त्वष्टुः अपीच्यम्।

इत्था चन्द्रमसो गृहे ॥ 15 ॥ 1-84-15

मन्त्रार्थ - अत्र = यहाँ। अह = व्यापक। गोः = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक। **अमन्वत** = सेवाभावी, विद्वान्। **नाम** = नाम वाले। **त्वष्टुः** = त्वष्टा का, प्रकाशक का। **अपीच्यम्** = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय। **इत्था** = इत्था इस प्रकार। **चन्द्रमसो** = आनन्द, प्रकाश। **गृहे** = गृह में, घर में ॥ 15 ॥

पदार्थ - अत्र = यहाँ (अव्यय)। अह = व्यापक (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। गोः = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अमन्वत** = सेवाभावी, विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **त्वष्टुः** = त्वष्टा का, प्रकाशक का (त्वक्ष् = छीलना, रेतना, त्विष् = प्रकाशित होना, चमकना)। **अपीच्यम्** = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय (अ - नहीं, अप - पालन करना, पि - जाना, स्थानान्तर करना, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **इत्था** = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। **चन्द्रमसो** = आनन्द, प्रकाश (चन्द्र - आनन्द होना, चमकना)। **गृहे** = गृह में, घर में (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना) ॥ 15 ॥

166. को अद्य युङ्क्ते धुरि गाः ऋतस्य, शिमीवतो भामिनो दुर्हणायून्।

आसन्-इषून् ह्रस्वसः मयोभून्, यः एषाम् भृत्याम् ऋणधत् सः जीवात् ॥ 16 ॥ 1-84-16

मन्त्रार्थ - को = कौन अद्य = आज युङ्क्ते = युक्त कीजिये धुरि = धुरी ऋतस्य = ऋत का शिमीवतो = शिमीवान् भामिनो = प्रकाशमान प्रकाशित करने वाले दुर्हणायून् = दुःख का हरण करने वाले आसन्-इषून् = आसन् में इषूओं को, फेंके गये इषूओं को ह्रस्वसः = हृदयों में मयोभून् = गति-ज्ञान-स्वरूप, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले यः = जो एषाम् = इनका भृत्याम् = भृत को ऋणधत् = जाते, जानते, पाते हैं सः = वह, उसने जीवात् = जीवन-यापन करता है ॥ 16 ॥

पदार्थ - को = कौन (सर्वनाम)। अद्य = आज (अव्यय)। युङ्क्ते = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। धुरि = धुरी (धुर = मुख्य होना, धुरी होना, व्याप्त होना)। गाः = गान, गायक, वाणी को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **शिमीवतो** = शिमीवान् (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **भामिनो** = प्रकाशमान प्रकाशित करने वाले (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **दुर्हणायून्** = दुःख का हरण करने वाले (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, ह्र = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **आसन्-इषून्** = आसन् में इषूओं को, फेंके गये इषूओं को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना, इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **एषाम्** = इनका (सर्वनाम)। **ह्रस्वसः** = हृदयों में (ह्र = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। **मयोभून्** = गति-ज्ञान-स्वरूप, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले (मय् - जाना, जानना, पाना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **एषाम्** = इनका (सर्वनाम)। **भृत्याम्** = भृत को (भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **ऋणधत्** = जाते, जानते, पाते हैं (ऋ - जाना, जानना, पाना)। **सः** = वह, उसने। **जीवात्** = जीवन-यापन करता है (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना) ॥ 16 ॥

167. त्वम् अङ्ग प्र शंसिषो, देवः शविष्ठ मर्त्यम्।

न त्वत् अन्यो मघवन् अस्ति, मर्दिता इन्द्र ब्रवीमि ते वचः ॥ 19 ॥

1-84-19

मन्त्रार्थ :- त्वम् - तुम, मर्त्यम् - मरणशील को, अङ्ग - अंग, अंकुर, गतिशील, समीप जाने वाला, ज्ञानी, प्र-शंसिषो - प्रशंसनीय, प्रशंसक, देवः - देव, शविष्ठ - अतिशय प्रत्युपकार करने वाले, समीप आने वाले, (हो)। त्वत् - तुमसे, अन्यो - अन्य, मघवन् - धनवान्, मर्दिता - सुखी, सुख देने वाला, न - नहीं, अस्ति - है। इन्द्र - हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान्, ते - तुम्हारे लिए, वचः - वचन, वाणी, ब्रवीमि - बोलता हूँ ॥ 19 ॥

भावार्थ :- हम मरणशील हैं। हमारे लिए इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई भी निकट आने वाला नहीं है। केवल परमात्मा ही हमें सुख प्रदान कर सकता है। अतः हम उसके लिए ही वाणी बोलते हैं, उससे ही प्रार्थना करते हैं। 19 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम। अङ्ग = अङ्ग - अंग, अंकुर, गतिशील, समीप जाने वाला, ज्ञानी, आदर के साथ सम्बोधन (अङ्ग = चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। प्र = अधिक। प्र-शंसिषो - प्रशंसनीय, प्रशंसक (शंस - प्रशंसा करना)। देवः = देव। शविष्ठ - अतिशय प्रत्युपकार करने वाले, समीप आने वाले (शव - जाना, समीप जाना या आना, बदले में देना)। मर्त्यम् - मरणशील को (मृ = मरना)। न = नहीं। त्वत् = तुमसे। अन्यः = कोई और, इतर। मघवन् = धनवान् (मघ = धन होना)। अस्ति = है (अस् - होना)। मर्दिता - सुखी, सुख देने वाला (मृड - सुख देना)। इन्द्र - हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ब्रवीमि = बोलता हूँ। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए, तुम्हारी। वचः - वचन, वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ 19 ॥

168. मा ते राधांसि मा ते ऊतयो, वसो अस्मान् कदा चना दभन्।

विश्वा च नः उप मिमीहि मानुष, वसूनि चर्षणीभ्यः आ ॥ 20 ॥

1-84-20

मन्त्रार्थ :- मा = नहीं, मत ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए राधांसि = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि हो मा = नहीं, मत ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए ऊतयो = रक्षा के लिए वसो = वसु अस्मान् = हमें, हमको कदा = कब चना = वाणी, विश्वास दभन् = निन्दक, हिंसक विश्वा = विश्व, सभी, सब च = और नः = हमको, हमारे लिए, हमारा उप = समीप मिमीहि = मान करो, गति करो, रक्षा करो, सिञ्चन करो मानुष = हे मानुष, मनन करने वाले वसूनि = वसुओं को चर्षणीभ्यः = आनन्द, चेतना, विचार के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ॥ 20 ॥

पदार्थ :- मा = नहीं, मत (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। राधांसि = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। ऊतयो = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। वसो = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अस्मान् = हमें, हमको (सर्वनाम)। कदा = कब (सर्वनाम)। चना = वाणी, विश्वास (चन् - स्मरण करना, शब्द करना, विश्वास करना, मिलाना, अलग करना, हिंसा करना)। दभन् = निन्दक, हिंसक (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। उप = समीप (उपसर्ग)। मिमीहि = मान करो, गति करो, रक्षा करो, सिञ्चन करो (मा-मि - नापना, तौलना, समाना, मीम - जाना, शब्द करना, मिह-मीढ - गीला करना, सींचना, प्रोक्षण करना)। मानुष = हे मानुष, मनन करने वाले (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। चर्षणीभ्यः = आनन्द, चेतना, विचार के लिए (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) ॥ 20 ॥

अनुवाक:- 14

(45) सूक्त 86

169. शशमानस्य वा नरः, स्वेदस्य सत्यशवसः ।

विदा कामस्य वेनतः ॥ 8 ॥ 1-86-8

मन्त्रार्थ :- शशमानस्य = कूर्दन करने वाले का वा = अथवा नरः = नर स्वेदस्य = स्वेद का, शब्द का सत्यशवसः = सत्य-शवस वाले, सद्गति वाले, सत्य-ज्ञान वाले विदा = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, विद्वान् कामस्य = कामना, इच्छा का वेनतः = विद्वान्, कान्तिमान् ॥ 8 ॥

पदार्थ :- शशमानस्य = कूर्दन करने वाले का (शश् - कूर्दन करना, कूदना, उछलना, कूदते हुए चलना)। वा = अथवा (अव्यय)। नरः = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। स्वेदस्य = स्वेद का, शब्द का (स्विद् = स्वेद होना, शब्द करना)। सत्यशवसः = सत्य-शवस वाले, सद्गति वाले, सत्य-ज्ञान वाले (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। विदा = प्राप्ति कराओ, ज्ञान कराओ, विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। कामस्य = कामना, इच्छा का (कम - चाहना, इच्छा करना)। वेनतः = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना) ॥ 8 ॥

(46) सूक्त 89

170. स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः, स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।

स्वस्ति नः ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः, स्वस्ति नो बृहस्पतिः दधातु ।

स्वस्ति नो बृहस्पतिः दधातु ॥ 6 ॥ 1-89-6

मन्त्रार्थ - स्वस्ति = कल्याण नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् वृद्धश्रवाः = वृद्धश्रव, बड़े विद्वान्, सुनकर बड़े हुए स्वस्ति = कल्याण नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पूषा = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता विश्ववेदाः = विश्ववेद, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले स्वस्ति = कल्याण नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ताक्ष्यो = गमनीय, गम्य, प्राप्य, पाने योग्य, विद्वान् अरिष्टनेमिः = अत्यन्त हिंसक, गतिशील, व्यापक को जानने, प्राप्त करने वाले स्वस्ति = कल्याण नो = हमको, हमारे लिए, हमारा बृहस्पतिः = विराट, महान्, बृहस्पति दधातु = धारण करे ॥ 6 ॥

पदार्थ - स्वस्ति = कल्याण (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वृद्धश्रवाः = वृद्धश्रव, बड़े विद्वान्, सुनकर बड़े हुए (वृध् = बढ़ना, अधिक होना, काटना, चीरना, भरना, पूर्ण करना, चमकना, बोलना। श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। स्वस्ति = कल्याण (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। पूषा = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। विश्ववेदाः = विश्ववेद, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले (विश्व - सभी, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना)। स्वस्ति = कल्याण (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ताक्ष्यो = गमनीय, गम्य, प्राप्य, पाने योग्य, विद्वान् (तृक्ष् - चलना, जाना, जानना, पाना)। अरिष्टनेमिः = अत्यन्त हिंसक, गतिशील, व्यापक को जानने, प्राप्त करने वाले (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रिष- हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना, नी - जाना, जानना, पाना, प्राप्त करना, पहुँचना)। स्वस्ति = कल्याण (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। बृहस्पतिः = विराट, महान्, बृहस्पति (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करे (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 6 ॥

171. भद्रम् कर्णेभिः शृणुयाम देवा, भद्रम् पश्येम अक्षभिः यजत्राः ।

स्थिरैः अङ्गैः तुष्टुवांसः तनूभिः, व्यशेमहि देवहितम् यद् आयुः ॥ 8 ॥

1-89-8

मन्त्रार्थ - भद्रम् = कल्याणकारी **कर्णेभिः** = कर्णों द्वारा **शृणुयाम** = सुनें **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **भद्रम्** = कल्याणकारी **पश्येम** = देखें **अक्षिभिः** = अक्षियों द्वारा, व्यापक, व्याप्त, अविनाशी, खेल, क्रीणा, दृष्टि, एकत्रीकरण, समूह, व्यापक होने वाले द्वारा **यजत्राः** = हे यजनपालक, यजत्रा यजनपालक, यजन करने वाले **स्थिरैः** = स्थिरों द्वारा **अङ्गैः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वालों द्वारा **तुष्टुवांसः** = तृप्त करने वाले **तनूभिः** = तनू द्वारा, विस्तार द्वारा, वाणी द्वारा **वि** = विशेष, विना, विलोम **अशेमहि** = व्याप्त होते हैं, भोजन करते हैं **देवहितम्** = देवहित = देवों के पुकारने, दान, ग्रहण करने योग्य **यत्** = जिसे, जो **आयुः** = आयु ॥ ८ ॥

पदार्थ - भद्रम् = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **कर्णेभिः** = कर्णों द्वारा (कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, त्याग करना, भेदना, छेदन करना)। **शृणुयाम** = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **भद्रम्** = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **पश्येम** = देखें। (पश्-दृश् = देखना)। **अक्षिभिः** = अक्षियों द्वारा, व्यापक, व्याप्त, अविनाशी, खेल, क्रीणा, दृष्टि, एकत्रीकरण, समूह, व्यापक होने वाले द्वारा (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना, अ - नहीं, क्षि - क्षय होना, नष्ट होना, भू - होना)। **यजत्राः** = हे यजनपालक, यजत्रा यजनपालक, यजन करने वाले (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **स्थिरैः** = स्थिरों द्वारा (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **अङ्गैः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वालों द्वारा (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **तुष्टुवांसः** = तृप्त करने वाले (तुष्ट् = सन्तुष्ट होना, तृप्त होना, तृप्त करना, प्रीति करना)। **तनूभिः** = तनू द्वारा, विस्तार द्वारा, वाणी द्वारा (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **अशेमहि** = व्याप्त होते हैं, भोजन करते हैं (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **देवहितम्** = देवहित = देवों के पुकारने, दान, ग्रहण करने योग्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, हि = गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **आयुः** = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना) ॥ ८ ॥

(47) सूक्त 90

172. ऋजु-नीती नो वरुणो, मित्रो नयतु विद्वान्।

अर्यमा देवैः सजोषाः ॥ १ ॥ १-९०-१

मन्त्रार्थ - ऋजु = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् **नीती** = नीती **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला **मित्रो** = मित्र **नयति** = ले जाता है **विद्वान्** = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी **देवैः** = देवों द्वारा **सजोषाः** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले ॥ १ ॥

पदार्थ - ऋजु = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **नीती** = नीती (नी - ले जाना, पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **नयतु** = ले जाता है (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **विद्वान्** = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी (विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **देवैः** = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सजोषाः** = विचारशील, विवेकवान्,

प्रीति करने वाले (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना) ॥ 1 ॥

(48) सूक्त 91

173. सम् ते पयांसि सम उ यन्तु वाजाः, सम् वृष्यानि अभिमातिषाहः ।

आप्यायमानो अमृताय सोम, दिवि श्रवांसि उत्तमानि धिष्व ॥ 18 ॥ 1-91-18

मन्त्रार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पयांसि = विस्तृत, विस्तारयुक्त, गतिशील, प्रवाहमान सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति उ = निश्चय ही, भी यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें वाजाः = विद्या, गति सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति वृष्यानि = वर्षा करने वाला, पराक्रमी अभिमातिषाहः = अभिमान को सहन करने वाला आप्यायमानो = सम्यक् रूप से बढ़ा अमृताय = अमृत के लिए सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में श्रवांसि = श्रवण करो उत्तमानि = श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा धिष्व = शब्द करो, बोलो ॥ 18 ॥

पदार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पयांसि = विस्तृत, विस्तारयुक्त, गतिशील, प्रवाहमान (पय = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। वाजाः = विद्या, गति (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। वृष्यानि = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अभिमातिषाहः = अभिमान को सहन करने वाला (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, मा = मान करना, मापना, सह - सहन करना, समर्थ होना, तृप्त होना)। आप्यायमानो = सम्यक् रूप से बढ़ाओ (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), प्याय् = बढ़ना, आप्यायी - भूँख लगना, भूँखा होना)। अमृताय = अमृत के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। श्रवांसि = श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। उत्तमानि = श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। धिष्व = शब्द करो, बोलो (धिष् = शब्द करना, बोलना) ॥ 18 ॥

174. त्वम् इमाः ओषधीः सोमः विश्वा, त्वम् अपो अजनयः त्वम् गाः ।

त्वम् आ ततन्थ उरु अन्तरिक्षम्, त्वम् ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ॥ 21 ॥ 1-91-22

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम इमाः = यह, इसको ओषधीः = ओषधी सोमः = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विश्वा = विश्व, सभी, सब त्वम् = तुम अपो = पालन करने वाला अजनयः = उत्पन्न किया त्वम् = तुम गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले त्वम् = तुम आ ततन्थ = विस्तार किया, आश्रय दिया, वाणी उरुर्वा गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को अन्तरिक्षम् = अन्तरिक्ष या आकाश, अन्तर्दशी त्वम् = तुम ज्योतिषा = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से वि = विशेष, विना, विलोम तमो = इच्छा, दुःख, अन्धकार को ववर्थ = दूर किया ॥ 22 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **इमाः** = यह, इसको (सर्वनाम)। **ओषधीः** = ओषधी (उषध - चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना)। **सोमः** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विश्व** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **अजनयः** = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **आ ततन्थ** = विस्तार किया, आश्रय दिया, वाणी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, तन् - विस्तार करना, आश्रय देना, शब्द करना, दुःख देना)। **उरु** - गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। **अन्तरिक्षम्** = अन्तरिक्ष या आकाश, अन्तर्दशी (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **ज्योतिषा** = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **तमो** = इच्छा, दुःख, अन्धकार को (तम - इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना, अन्धकार होना)। **ववर्थ** = दूर किया (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना) ॥ 22 ॥

(49) सूक्त 92

175. एताः उ त्याः उषसः केतुम् अक्रत, पूर्वे अर्धे रजसो भानुम् अज्जते।

निष्कृण्वानाः आयुधानीव धृष्णवः, प्रति गावो अरुषीः यन्ति मातरः ॥ 1 ॥ 1-92-1

मन्त्रार्थ :- एताः = ये उ = निश्चय ही, भी त्याः = वे उषसः = उषा का, प्रभात का, हिंसा का केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को अक्रत = किया पूर्वे = पूर्व, पूर्ण करने के लिए अर्धे = आधे में, अर्ध में रजसो = लोक का, रजस् का भानुम् = प्रकाशमान को अज्जते = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है निष्कृण्वानाः = निष्कृण्वान, निरन्तर कर्मशील, निरन्तर करने वाले आयुधानि = आयुध इव = समान, की भाँति, के समान धृष्णवः = विजय, गर्व द्वारा प्रति = प्रतिकार, सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में गावो = शब्द, वाणी, वचन अरुषीः = गतिशील, व्यापक, अहिंसक यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं मातरः = माता ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एताः = ये (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। त्याः = वे (सर्वनाम)। उषसः = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। अक्रत = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। पूर्वे = पूर्व, पूर्ण करने के लिए (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। अर्धे = आधे में, अर्ध में (अर्ध - आधा, अर्द - मारना, बध करना)। रजसो = लोक का, रजस् का (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। भानुम् = प्रकाशमान को (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। अज्जते = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। निष्कृण्वानाः = निष्कृण्वान, निरन्तर कर्मशील, निरन्तर करने वाले (निः - निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। आयुधानि = आयुध (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। धृष्णवः = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। प्रति = प्रतिकार, सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (उपसर्ग)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन

करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अरुषीः** = गतिशील, व्यापक, अहिंसक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **मातरः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) ॥ 1 ॥

176. उदपप्तन् अरुणा भानवो वृथा, स्वायुजो अरुषीः गाः अयुक्षत ।

अक्रन् उषासो वयुनानि पूर्वथा, रुशन्तम् भानुम् अरुषीः अशिश्युः ॥ 2 ॥ 1-92-2

मन्त्रार्थ :- उदपप्तन् = उदय हुआ, उदित हुआ **अरुणा** = हिंसक, गतिशील, व्यापक **भानवो** = प्रकाशमान **वृथा** = व्यर्थ **स्वायुजो** = उत्तम सम्बन्धित होने वाले, उत्तम सम्बन्ध युक्त **अरुषीः** = गतिशील, व्यापक, अहिंसक **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले **अयुक्षत** = युक्त किया, सम्बन्धित किया **अक्रन्** = किया **उषासो** = उषाएं **वयुनानि** = रचनाशील, ज्ञानमार्गी, वय या रचना करने वाले **पूर्वथा** = पूर्व की भाँति **रुशन्तम्** = प्रकाशमान को **भानुम्** = प्रकाशमान को **अरुषीः** = गतिशील, व्यापक, अहिंसक **अशिश्युः** = अशिश्य, व्याप्त किया, प्राप्त परिपक्व किया ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उदपप्तन् = उदय हुआ, उदित हुआ (उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, पत - नीचे गिरना, जाना या उतरना, चढ़ना, उड़ना, श्रीमान् होना, शक्तिमान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **अरुणा** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **भानवो** = प्रकाशमान (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **वृथा** = व्यर्थ (अव्यय)। **स्वायुजो** = उत्तम सम्बन्धित होने वाले, उत्तम सम्बन्ध युक्त (सु - सुन्दर, अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **अरुषीः** = गतिशील, व्यापक, अहिंसक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अयुक्षत** = युक्त किया, सम्बन्धित किया (अ = नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, सम्बन्धित करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **अक्रन्** = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। **उषासो** = उषाएं (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **वयुनानि** = रचनाशील, ज्ञानमार्गी, वय या रचना करने वाले (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पूर्वथा** = पूर्व की भाँति (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **रुशन्तम्** = प्रकाशमान को (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। **भानुम्** = प्रकाशमान को (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **अरुषीः** = गतिशील, व्यापक, अहिंसक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **अशिश्युः** = अशिश्य, व्याप्त किया, प्राप्त परिपक्व किया (अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अ - नहीं, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 2 ॥

177. अर्चन्ति नारीः अपसो न विष्टिभिः, समानेन योजनेन आ परावतः ।

इषम् वहन्तीः सुकृते सुदानवे, विश्वा इत् अह यजमानाय सुन्वते ॥ 3 ॥ 1-92-3

मन्त्रार्थ :- अर्चन्ति = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं **नारीः** = नारी **अपसो** = पालनकर्ता **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **विष्टिभिः** = विस्तृतों द्वारा, व्यापकों द्वारा, विष्टियों द्वारा **समानेन** = समान द्वारा **योजनेन** = योजना, सम्बन्ध

द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **परावतः** = परम पवित्र **इषम्** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **वहन्तीः** = वहन करने वाले **सुकृते** = अच्छा करने वाले, सत्कर्म कर्ता **सुदानवे** = सुदानी **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **इत्** = ही **अह** = व्यापक **यजमानाय** = यजमान के लिए **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **अर्चन्ति** = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं (अर्च - पूजा करना, मान करना)। **नारीः** = नारी (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अपसो** = पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विष्टिभिः** = विस्तृतों द्वारा, व्यापकों द्वारा, विष्टियों द्वारा (विश् - प्रवेश, सूचना, प्रेरणा करना, विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। **समानेन** = समान द्वारा (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **योजनेन** = योजना, सम्बन्ध द्वारा (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **परावतः** = परम पवित्र (परा = परम, वद् - वच् - बोलना)। **इषम्** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **वहन्तीः** = वहन करने वाले (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **सुकृते** = अच्छा करने वाले, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)। **सुदानवे** = सुदानी (सु - उत्तम, अच्छा, दा, दद् = देना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अह** = व्यापक (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **यजमानाय** = यजमान के लिए (यज = देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना) ॥ 3 ॥

178. उषः तत् चित्रम् आ भर, अस्मभ्यम् वाजिनीवति ।

येन तोकम् च तनयम् च धामहे ॥ 13 ॥ 1-92-13

मन्त्रार्थ- **वाजिनीवति** हे **वाजिनीवती** **उषः** उषः, **अस्मभ्यम्** हमारे लिए **तत्** उस **चित्रम्** चित्र को **आ** भर भरो (पूर्ण करो) **येन** जिससे **तोकम्** तोक **च** और **तनयम्** तनय को **धामहे** धारण करें ॥ 13 ॥

भावार्थ - हमारे जीवन का चित्र खाली न रहे, सादा, अपूर्ण, अधूरा न रह जाये, वह पूर्ण हो जाये, उसमें सफलता के रंग भर जायें। इससे हम परिजनों का समुचित पालन-पोषण कर सकें। तोक और तनय का अर्थ पुत्र-पौत्रादि परिजन है। 13 ॥

पदार्थ :- **उषः** - उषा (उषस् - प्रभात होना)। **तत्** = जो। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्पूर्ण। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए। **वाजिनीवति** (वाज् = बल होना, गति करना, जानना, पाना) = बलों से युक्त। **येन** = जिससे। **तोकम्** = वृद्धि कारक (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, पूर्ण करना)। **च** = और। **तनयम्** = विस्तार (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना)। **च** = और। **धामहे** = धारण करते हैं (धा = धारण करना) ॥ 13 ॥

179. उषो अद्य इह गोमति, अश्वावति विभावरि ।

रेवत् अस्मे वि उच्छ सूनुतावति ॥ 14 ॥

1-92-14

मन्त्रार्थ :- **उषो** = प्रभात, हिंसा **अद्य** = आज **इह** = इसमें, यहां, यह **गोमति** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली **अश्वावति** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **विभावरि** = विशेष प्रकाश युक्त, विभावरी **रेवत्** = प्रवाह, वाणी, शब्द **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए **वि** = विशेष, **उच्छ** = पूरा करो, समाप्त करो **सूनुतावति** = सुनुता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली ॥ 14 ॥

पदार्थ :- **उषो** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **गोमति** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों,

उपदेशकों के मत वाली (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **अश्वावति** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **विभावरी** = विशेष प्रकाश युक्त, विभावरी (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **रेवत्** = प्रवाह, वाणी, शब्द (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **वि** = विशेष। **उच्छ** = पूरा करो, समाप्त करो (उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बांधना)। **सूनृतावति** = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना) ॥

180. युङ्क्षा हि वाजिनीवति, अश्वान् अद्य अरुणान् उषः।

अथा नो विश्वा सौभागानि आ वह ॥ 15 ॥

1-92-15

मन्त्रार्थ :- युङ्क्षा = युक्त करो, सम्बन्धित करो **हि** = ही, निश्चय **वाजिनीवति** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **अश्वान्** = शीघ्रगामी, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को **अद्य** = आज **अरुणान्** = अरुणों को, हिंसक, गतिशील, व्यापक **उषः** = प्रभात, हिंसा **अथा** = अब, इसके अनन्तर **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **सौभागानि** = सुभगों को, सौभाग्यों को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वह** = वहन करो, ले जाओ ॥

पदार्थ :- युङ्क्षा = युक्त करो, सम्बन्धित करो (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, सम्बन्धित करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वाजिनीवति** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अश्वान्** = शीघ्रगामी, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **अरुणान्** = अरुणों को, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **उषः** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अथा** = अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **सौभागानि** = सुभगों को, सौभाग्यों को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वह** = वहन करो, ले जाओ (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना) ॥ 3 ॥

181. अश्विना वर्तिः अस्मत् आ, गोमत् दस्त्रा हिरण्यवत्।

अर्वाक् रथम् समनसा नि यच्छतम् ॥ 16 ॥

1-92-16

मन्त्रार्थ :- अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **वर्तिः** = वर्तमान रहने वाला **अस्मत्** = हमसे **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **गोमत्** = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त **दस्त्रा** = नष्ट करने वाले **हिरण्यवत्** = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा **अर्वाक्** = पहले **रथम्** = रथ को **समनसा** = समान मन वाले **नि** = निश्चित, निरन्तर **यच्छतम्** = प्रदान करें ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **वर्तिः** = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **अस्मत्** = हमसे (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गोमत्** = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **दस्त्रा** = नष्ट करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **हिरण्यवत्** = हिरण्य

के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **अर्वाक्** = पहले (अव्यय)। **रथम्** = रथ को (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **समनसा** = समान मन वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **यच्छतम्** = प्रदान करें (यच्छ = देना) ॥ 1 ॥

182. यौ इत्था श्लोकम् आ दिवो, ज्योतिः जनाय चक्रथुः ।

आ नः ऊर्जम् वहतम् अश्विना युवम् ॥ 17 ॥

1-92-17

मन्त्रार्थ :- यौ = जो दोनों **इत्था** = इत्था इस प्रकार **श्लोकम्** = श्लोक को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **ज्योतिः** = प्रकाश **जनाय** = जन के लिए **चक्रथुः** = चक्रण किया **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **ऊर्जम्** = ऊर्जा को **वहतम्** = वहन करते हो, लाते हो, वहन करने वाले को **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **युवम्** = तुमको ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यौ = जो दोनों (सर्वनाम)। **इत्था** = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। **श्लोकम्** = श्लोक को (श्लोक = साथ जाना, श्लोक बनाना, कविता करना, रचना करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **जनाय** = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **चक्रथुः** = चक्रण किया (चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऊर्जम्** = ऊर्जा को (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **वहतम्** = वहन करते हो, लाते हो, वहन करने वाले को (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **युवम्** = तुमको (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

183. आ इह देवा मयोभुवा, दस्रा हिरण्यवर्तनी ।

उषः बुधो वहन्तु सोमपीतये ॥ 18 ॥

1-92-18

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इह** = इसमें, यहां, यह **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **मयोभुवा** = विद्वान्, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले **दस्रा** = नष्ट करने वाले **हिरण्यवर्तनी** = हिरण्य का वर्तन करने वाला **उषः** = प्रभात, हिंसा **बुधो** = बोधवान्, विद्वान् **वहन्तु** = वहन करें **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए ॥ 18 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मयोभुवा** = विद्वान्, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले (मय् - जाना, जानना, पाना)। **दस्रा** = नष्ट करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **हिरण्यवर्तनी** = हिरण्य का वर्तन करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **उषः** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **बुधो** = बोधवान्, विद्वान् (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **वहन्तु** = वहन करें (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम

होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 18 ॥

अनुवाक:- 15

(50) सूक्त 94

184. इमम् स्तोमम् अर्हते जातवेदसे, रथम्-इव सम् महेमा मनीषया ।

भद्रा हि नः प्रमतिः अस्य संसदि, अग्ने सख्ये मा रिषाम वयम् तव ॥ 1 ॥ 1-94-1

मन्त्रार्थ - इमम् = इसको स्तोमम् = स्तोम को अर्हते = पूज्य, योग्य के लिए जातवेदसे = जातवेद के लिए, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को रथम् = रथ को इव = समान, की भाँति, के समान सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति महेमा = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् मनीषया = मनीषी द्वारा, विचारशील द्वारा भद्रा = कल्याणकारी हि = ही, निश्चय नः = हमको, हमारे लिए, हमारा प्रमतिः = प्रमद के लिए, प्रकृष्ट आनन्द के लिए अस्य = इसका संसदि = संसद अग्ने = हे अग्नि सख्ये = मित्रों के लिए मा = नहीं, मत रिषाम = हिंसक वयम् = हम, हम सब, हम लोग तव = तुम्हारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - इमम् = इसको (सर्वनाम)। स्तोमम् = स्तोम को (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। अर्हते = पूज्य, योग्य के लिए (अर्ह = पूजा करना, पूज्य होना, योग्य होना)। जातवेदसे = जातवेद के लिए, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा- ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। रथम् = रथ को (रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। महेमा = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। मनीषया = मनीषी द्वारा, विचारशील द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। भद्रा = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। प्रमतिः = प्रमद के लिए, प्रकृष्ट आनन्द के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। संसदि = संसद (सम्-संस् = सम्यक्, भलीभाँति, सद = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सख्ये = मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। रिषाम = हिंसक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम) ॥

185. शकेम त्वा समिधम् साधया धियः, त्वे देवा हविः अदन्ति आहुतम् ।

त्वम् आदित्यान् आ वह तान् हि उश्मसि, अग्ने सख्ये मा रिषामा वयम् तव ॥ 3 ॥ 1-94-3

मन्त्रार्थ :- शकेम = कर सकूँ, सक्षम बनूँ, समर्थ होऊँ त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा समिधम् = सम्यक् प्रकाशित को साधया = पूर्ण करो धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि त्वे = तुममें देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य अदन्ति = खाते हैं आहुतम् = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त त्वम् = तुम आदित्यान् = आदित्यों को, अदिति, अक्षय-अविनाशी को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वह = वहन करो, ले जाओ तान् = उनको हि = ही, निश्चय उश्मसि = कामना करते हैं, चाहते हैं अग्ने = हे अग्नि सख्ये = मित्रों के लिए मा = नहीं, मत रिषामा = हिंसक वयम् = हम, हम सब, हम लोग तव = तुम्हारा ॥

पदार्थ :- शकेम = कर सकूँ, सक्षम बनूँ, समर्थ होऊँ (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। त्वा

= तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **समिधम्** = सम्यक् प्रकाशित को (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **साधया** = पूर्ण करो (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **त्वे** = तुममें (सर्वनाम)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविः** = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **अदन्ति** = खाते हैं (अद् - खाना)। **आहुतम्** = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **आदित्यान्** = आदित्यों को, अदिति, अक्षय-अविनाशी को (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वह** = वहन करो, ले जाओ (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **तान्** = उनको (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **उश्मसि** = कामना करते हैं, चाहते हैं (उश्-वश् - चाहना, कामना करना, इच्छा करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सख्ये** = मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **रिषामा** = हिंसक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

186. भराम इधम् कृणवामा हवींषि, ते चितयन्तः पर्वणा पर्वणा वयम्।

जीवातवे प्रतरम् साधया धियो, अग्ने सख्ये मा रिषामा वयम् तव ॥ 4 ॥ 1-94-4

मन्त्रार्थ :- **भराम** = भरण करें **इधम्** = गति, ज्ञान, प्रकाश को **कृणवामा** = करें **हवींषि** = दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **चितयन्तः** = सचेत, विचार करता हुआ **पर्वणा** = पर्व द्वारा **पर्वणा** = पर्व द्वारा **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **जीवातवे** = जीवन-यापन के लिए **प्रतराम्** = तारने वाले को **साधया** = पूर्ण करो **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि **अग्ने** = हे अग्नि **सख्ये** = मित्रों के लिए **मा** = नहीं, मत **रिषामा** = हिंसक **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **तव** = तुम्हारा ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **भराम** = भरण करें (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **इधम्** = गति, ज्ञान, प्रकाश को (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **कृणवामा** = करें (कृ = करना)। **हवींषि** = दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **चितयन्तः** = सचेत, विचार करता हुआ (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **पर्वणा** = पर्व द्वारा (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **पर्वणा** = पर्व द्वारा (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **जीवातवे** = जीवन-यापन के लिए (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना)। **प्रतराम्** = तारने वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तृ - पार जाना, तैरना, जीतना)। **साधया** = पूर्ण करो (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सख्ये** = मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **रिषामा** = हिंसक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम) ॥ 4 ॥

(51) सूक्त 101

187. प्र मन्दिने पितुमत् अर्चत आ वचो, यः कृष्णगर्भा निरहन् ऋजिश्वना।

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मन्दिने** = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान के लिए **पितुमत्** = पितु, गति, ज्ञान, पिता **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वचो** = वचन को **यः** = जो। **कृष्णगर्भा** = कृष्णगर्भ वाले, आकर्षण वाले **निरहन्** = निश्चित रूप से, निरन्तर हनन किया **ऋजिश्वना** = बलिष्ठो द्वारा **अवस्यवो** = रक्षा करने वाले **वृषणम्** = पराक्रमी को **वज्रदक्षिणम्** = वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को **मरुत्वन्तम्** = मरुत्वान्, मरुतों से युक्त, मरणशील से युक्त **सख्याय** = सखाभाव, मित्रता के लिए, मित्र के लिए, सखा के लिए **हुवेमहि** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मन्दिने** = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान के लिए (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **पितुमत्** = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वचो** = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **यः** = जो। **कृष्णगर्भा** = कृष्णगर्भ वाले, आकर्षण वाले (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना, गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्म् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **निरहन्** = निश्चित रूप से, निरन्तर हनन किया (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, हन् - मारना)। **ऋजिश्वना** = बलिष्ठो द्वारा (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अवस्यवो** = रक्षा करने वाले (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वज्रदक्षिणम्** = वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को (वज् - गति करना, जाना, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **मरुत्वन्तम्** = मरुत्वान्, मरुतों से युक्त, मरणशील से युक्त (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सख्याय** = सखाभाव, मित्रता के लिए, मित्र के लिए, सखा के लिए (सख् = मित्र होना)। **हुवेमहि** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 1 ॥

(52) सूक्त 105

188. चन्द्रमा अप्सु अन्तः आ, सुपर्णो धावते दिवि।

न वो हिरण्यनेमयः, पदम् विन्दन्ति विद्युतो, वित्तम् मे अस्य रोदसी ॥ 1 ॥ 1-105-1

मन्त्रार्थ- चन्द्रमा आनन्ददायक अप्सु पालन-कर्मों में अन्तः भीतर आ सुपर्णो सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला धावते दौड़ता है दिवि दिव्यता में न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग। **हिरण्य-नेमयः** = प्रकाशमान को ले जाने वाले **पदम्** = पद को **विन्दन्ति** = प्राप्त करता है **विद्युतो** = विशेष प्रकाशमान **वित्तम्** = वित्त को **मे** = मेरा, मेरे लिए **अस्य** = इसका **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले ॥ 1 ॥

भावार्थ - परमात्मा आनन्ददायक है, हमको हरा-भरा करने वाला है, वह पालन-कर्मों में तथा दिव्यता अर्थात् दिव्य, श्रेष्ठ कर्मों में भीतर दौड़ता है। इसका भाव है कि यदि हम इ गुणों को धारण करते हैं तो परमात्मा की कृपा, चेतना, प्रकाश स्वयम् हमारे भीतर दौड़ने लगता है। 1॥

पदार्थ- चन्द्रमा = आनन्ददायक (चन्द - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना) **अप्सु** = पालन-कर्मों में (अप् - पालन करना) **अन्तः** = भीतर **आ** = समन्तात्, **सुपर्णो** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला (सु - सुन्दर, अच्छा, पर्ण - हरा करना, हरा होना), **धावते** = दौड़ता है (धाव् - दौड़ना)। **दिवि** = दिव्यता में (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना), **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **हिरण्य-नेमयः** = प्रकाशमान को ले जाने वाले (हिरण्य - प्रकाश करना, शब्द करना, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **पदम्** = पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **विन्दन्ति** = प्राप्त करता है (विन्द - लाभ होना, प्राप्त करना, सम्पादित करना)। **विद्युतो** = विशेष प्रकाशमान (वि - विशेष, विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **वित्तम्** = वित्त को (वित्त - दान करना, धर्म में व्यय करना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)॥ 1 ॥

189. अमी ये देवा स्थन त्रिषु, आ रोचने दिवः।

कत् वः ऋतम् कत् अनृतम्, का प्रत्ना वः आहुतिः।

वित्तम् मे अस्य रोदसी ॥ 5 ॥

1-105-5

मन्त्रार्थ - अमी = ये **ये** = जो **देवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **स्थन** = स्थित हैं **मध्य** = मध्य **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **रोचने** = प्रकाश के लिए **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **कत्** = कितना **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को **कत्** = कितना **अमृतम्** = न मरने वाला, अमर **का** = कौन **प्रत्ना** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए **आहुतिः** = आहुति, दान, आदान-प्रदान, आह्वान, व्यापकता **वित्तम्** = वित्त को **मे** = मेरा, मेरे लिए **अस्य** = इसका **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले॥ 9 ॥

पदार्थ - अमी = ये (सर्वनाम)। **ये** = जो। **देवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **स्थन** = स्थित हैं (स्था- स्थित होना, ठहरना)। **मध्य** = मध्य (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **रोचने** = प्रकाश के लिए (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **अमृतम्** = न मरने वाला, अमर (अ - नहीं, मृ = मरना)। **का** = कौन (सर्वनाम)। **प्रत्ना** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **आहुतिः** = आहुति, दान, आदान-प्रदान, आह्वान, व्यापकता (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, हवे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **वित्तम्** = वित्त को (वित्त - दान करना, धर्म में व्यय करना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)॥ 5 ॥

अनुवाकः- 16

190. इदम् श्रेष्ठम् ज्योतिषाम् ज्योतिः आगात्, चित्रः प्रकेतो अजनिष्ठ विभ्वा ।

यथा प्रसूता सवितुः सवाय, एवा रात्री उषसे योनिम् आरैक् ॥ 1 ॥ 1-113-1

मन्त्रार्थ :- इदम् = यह, इसको श्रेष्ठम् = श्रेष्ठ को ज्योतिषाम् = ज्योतियों का, ज्योतियों में ज्योतिः = प्रकाश आगात् = आये चित्रः = चित्र, आश्चर्य करना, चेतन प्रकेतो = प्रकेत, आमन्त्रण, ज्ञान, निवास वाला अजनिष्ठ = गतिमान, उत्पन्न किया विभ्वा = विभु, विशेष होने वाले यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार प्रसूता = उत्पन्न सवितुः = सविता का, उत्पादक, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला सवाय = उत्पन्न के लिए एवा = ही रात्री = रात्रि उषसे = उषा के लिए योनिम् = योनि को आरैक् = आरेचन वाला ॥ 1 ॥

पदार्थ :- इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। श्रेष्ठम् = श्रेष्ठ को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। ज्योतिषाम् = ज्योतियों का, ज्योतियों में (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। ज्योतिः = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। आगात् = आये (आ - सम्यक्, गम् - जाना, आ-गम् - आना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। चित्रः = चित्र, आश्चर्य करना, चेतन (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। प्रकेतो = प्रकेत, आमन्त्रण, ज्ञान, निवास वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। अजनिष्ठ = गतिमान, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अज- जाना, गति करना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, जन - उत्पन्न करना)। विभ्वा = विभु, विशेष होने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, भू - होना, उत्पन्न होना, होना, प्राप्त होना, एकत्र करना, कल्पना करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। प्रसूता = उत्पन्न (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। सवितुः = सविता का, उत्पादक, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। सवाय = उत्पन्न के लिए (स = सहित, साथ (उपसर्ग), सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। एवा = ही (अव्यय)। रात्री = रात्रि (रा - देना, मिल जाना)। उषसे = उषा के लिए (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आरैक् = आरेचन वाला (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, रिच - एकत्र करना, जोड़ना, बांधना, अलग-अलग करना, फैलाना, रेचक दवा देना) ॥ 1 ॥

191. रुशद्-वत्सा रुशती श्वेत्या आगात्, आरैक् उ कृष्णा सदनानि अस्याः ।

समानबन्धू अमृते अनूची, द्यावा वर्णम् चरतः आमिनाने ॥ 2 ॥ 1-113-2

मन्त्रार्थ :- रुशद्-वत्सा = प्रकाश-वत्स रुशती = प्रकाशमान श्वेत्या = श्वेत या शुभ्रता आगात् = आये आरैक् = आरेचन वाला उ = निश्चय ही, भी कृष्णा = कृष्ण सदनानि = सदनों, स्थानों अस्याः = इसका समानबन्धू = समान-बन्धन, सम्यक्-बन्धन वाले, सम्बन्धी अमृते = अमृत, अमरता में अनूची = अनूची, अनुसम्बन्ध, अनुसंगठन, अनुवाची द्यावा = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा वर्णम् = वर्ण को चरतः = विचरण करती हैं आमिनाने = मान करते हुए, स्थापना करते हुए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- रुशद्-वत्सा = प्रकाश-वत्स (रुश् - हिंसा करना, रुश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना, वद् = कहना, बोलना, सू - चलना, सरकना)। रुशती = प्रकाशमान (रुश् - हिंसा करना, रुश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। श्वेत्या = श्वेत या शुभ्रता (श्व-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना, श्वित - श्वेत होना, शुभ्र होना, शो - तीक्ष्ण करना, पैना करना, शान धरना, छील के पैना करना, श्वि = जानना, जाना, बढ़ना)। आगात् = आये (आ - सम्यक्, गम् - जाना, आ-गम् - आना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। आरैक् = आरेचन वाला (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, रिच - एकत्र करना, जोड़ना, बांधना, अलग-अलग करना, फैलाना,

रेचक दवा देना)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। कृष्णा = कृष्ण (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। सदनानि = सदनों, स्थानों (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। अस्याः = इसका (सर्वनाम)। समानबन्धू = समान-बन्धन, सम्यक्-बन्धन वाले, सम्बन्धी (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना, बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना)। अमृते = अमृत, अमरता में (अ - नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। अनूची = अनूची, अनुसम्बन्ध, अनुसंगठन, अनुवाची (अनु - पीछे, उच - सम्बन्ध होना, एकत्र होना, वद्-वच्-ऊच् - कहना, बोलना)। द्यावा = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। वर्णम् = वर्ण को (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। चरतः = विचरण करती हैं (चर् - चलना, विचरण करना)। आमिनाने = मान करते हुए, स्थापना करते हुए (आ - समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मा-मि - नापना, तौलना, समाना) ॥ 2 ॥

192. समानो अध्वा स्वस्त्रोः अनन्तः, तम् अन्या अन्या चरतो देवशिष्टे ।

न मेथेते न तस्थतुः सुमेके, नक्तोषासा समनसा विरूपे ॥ 3 ॥

1-113-3

मन्त्रार्थ :- समानो = समान अध्वा = अकम्पित, प्रगतिशील स्वस्त्रोः = स्वयं प्रगतिशील, उत्तम उत्पन्न होन वाला अनन्तः = अनन्त तम् = उसको, उसे अन्या-अन्या = अन्य, कोई और, इतर चरतो = विचरण करती हैं देवशिष्टे = देव-प्रयोजन, देव-आशीष में न = नहीं, समान, उपमार्थक मेथेते = हिंसा करता है, जानता है न = नहीं, समान, उपमार्थक तस्थतुः = स्थित का, स्थापित का सुमेके = उत्तम ग्रहण में, सुरक्षा में, उत्तम प्रोक्षण में नक्तोषासा = रात-दिन समनसा = समान मन वाले विरूपे = भिन्न भिन्न रूप वाली ॥ 3 ॥

पदार्थ :- समानो = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। अध्वा = अकम्पित, प्रगतिशील (अ - नहीं, धू = कम्पन करना, अधु = चलना, विचरण करना)। स्वस्त्रोः = स्वयं प्रगतिशील, उत्तम उत्पन्न होन वाला (स्व - अपना, सु - अच्छा, अस् - होना, सृ - चलना, सरकना)। अनन्तः = अनन्त (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, अन् - नहीं, अन्त - अन्त होना, बाँधना, पाना, हिंसा करना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। अन्या-अन्या = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। चरतो = विचरण करती हैं (चर् - चलना, विचरण करना)। देवशिष्टे = देव-प्रयोजन, देव-आशीष में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, शिष् - प्रयोजन करना, शेष रखना, अनुशासन करना, आशीर्वाद देना, हिंसा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मेथेते = हिंसा करता है, जानता है (मेथ - समझना, जानना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। तस्थतुः = स्थित का, स्थापित का (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। सुमेके = उत्तम ग्रहण में, सुरक्षा में, उत्तम प्रोक्षण में (सु - अच्छा, सुन्दर, मे - लेना, ग्रहण करना, मि - जाना, चलना, मि - प्रक्षेपण करना, रक्षा करना, स्थापन करना, मिह-मीढ - गीला करना, सींचना, प्रोक्षण करना)। नक्तोषासा = रात-दिन (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। समनसा = समान मन वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। विरूपे = भिन्न भिन्न रूप वाली (वि - विशेष, रूप - आकार बनाना, रचना करना, रूप बनाना) ॥ 3 ॥

(54) सूक्त 115

193. चित्रम् देवानाम् उत् अगात् अनीकम्, चक्षुः मित्रस्य वरुणस्य अग्नेः ।

आ अप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्, सूर्यः आत्मा जगतः तस्थुषः च ॥ 1 ॥ 1-115-1

मन्त्रार्थ :- चित्रम् - चित्र, चेतना, देवानाम् - देवों का, उत् - उच्च, उत्तम, अगात् - गया, अनीकम् - अनीक को, प्राणवानों को, चक्षुः - दृष्टि, नेत्र, मित्रस्य - मित्र का, वरुणस्य - वरुण का, अग्नेः - अग्नि का। अप्रा - पूर्ण किया,

द्यावापृथिवी - द्यावा और पृथिवी, **अन्तरिक्षम्** - अन्तरिक्ष को, **सूर्यः** - सूर्य, **आत्मा** - आत्मा, **जगत्** - जगत् का, **तस्थुषः** - स्थापित का, **च** - और ॥ १ ॥

भावार्थ :- देवों के चित्र तथा चेतना हमको प्राणवान् बनाते हैं। मित्रता तथा वरणीय का ध्यान रखने वाली दृष्टि अग्नि अर्थात् अग्रगामी, ऊर्ध्वगामी बनाती है। इससे पृथ्वी से द्युलोक तथा अन्तरिक्ष तक पूर्णता प्राप्त होती है। परमात्मा की चेतना ही सर्वत्र व्याप्त है।

पदार्थ :- **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव्, देव् = चमकना, तेजस्वी होना, विद्वान् (विद्वान्) होना)। **उत्** = ही। **अगात्** - गया (गम् - जाना)। **अनीकम्** - अनीक को, प्राणवानों को (अन् = स्पन्दन करना, हलचल करना)। **चक्षुः** = दृष्टि, नेत्र, आँख (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **मित्रस्य** = मित्र का (मिद् - स्नेह करना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वृ - वरण करना)। **अग्नेः** - अग्नि का (अग् = गति करना, अग्रणी होना)। **अप्राः** - पूर्ण किया (प्रा = पूर्ण करना, भरना)। **द्यावापृथिवी** = आगे जाकर विस्तार करना, द्यावा और पृथिवी (द्यु = आगे जाना, प्रकाश होना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **अन्तरिक्षम्** = आकाश को। **सूर्यः** - सूर्य (सुर् = प्रकाश होना, ऐश्वर्य होना)। **आत्मा** - आत्मा (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना)। **जगत्** - जगत् का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण (घर्षण) करना)। **तस्थुषः** = स्थित का, स्थापित का (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **च** = और ॥ १ ॥

अनुवाकः- 19

(55) सूक्त 127

**194. अग्निम् होतारम् मन्ये दास्वन्तम्, वसुम् सूनुम् सहसो जातवेदसम्
विप्रम् न जातवेदसम्।**

यः ऊर्ध्वया सु अध्वरो, देवो देवाच्या कृपा।

घृतस्य विभ्राष्टिम् अनु वष्टि, शोचिष आजुह्वानस्य सर्पिषः ॥ १ ॥

1-127-1

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **होतारम्** = हवन करने वाले को **मन्ये** = मानता हूँ **दास्वन्तम्** = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी को **वसुम्** = वसुओं को **सूनुम्** = सूनु को **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को **यः** = जो **ऊर्ध्वया** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व **सु** = अच्छा **अध्वरो** = अध्वर, अहिसक **देवो** = देव **देवाच्या** = देवाच्य **कृपा** = कृपा, दया **घृतस्य** = घृत का, प्रकाश का **विभ्राष्टिम्** = विशेष चमकना **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **शुक्र** = शुक्र, विद्वान् **शोचिषा** = शोचमान द्वारा **आजुह्वानस्य** = दानी का **सर्पिषः** = सर्प ॥ १ ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **होतारम्** = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मन्ये** = मानता हूँ (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दास्वन्तम्** = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी को (दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **वसुम्** = वसु को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सूनुम्** = सूनु को (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह

= शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जातवेदसम्** = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **ऊर्ध्वया** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **सु** = अच्छा (उपसर्ग)। **अध्वरो** = अध्वर, अहिसक (अ - नहीं, ध्व - ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **देवो** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवाच्या** = देवाच्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **कृपा** = कृपा, दया (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। **घृतस्य** = घृत का, प्रकाश का (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **विभ्राष्टिम्** = विशेष चमकना (वि - विशेष, भ्रास - चमकना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **शुक्र** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **आजुह्वानस्य** = दानी का (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, हु = देना, दान करना, आदान-प्रदान करना)। **सर्पिषः** = सर्प (सृप् - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना) ॥ 1 ॥

195. यजिष्ठम् त्वा यजमाना हुवेम, ज्येष्ठम् अङ्गिरसाम्,

विप्र मन्मभिः विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः।

परिज्मानम् इव द्याम्, होतारम् चर्षणीनाम्।

शोचिष्केशम् वृषणम् यम् इमा, विशः प्रावन्तु जूतये विशः ॥ 2 ॥ 1-127-2

मन्त्रार्थ :- यजिष्ठम् = यजिष्ठ को, यजन को त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा यजमाना = यजमान हुवेम = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को अङ्गिरसाम् = अंगिरस् गणों का, विद्वान्, गतिशील का विप्र = विशेष पूर्ण करने वाले मन्मभिः = विचारशीलों द्वारा, विचारों द्वारा विप्रेभिः = विशेष पूर्ण करने वालों द्वारा शुक्र = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी मन्मभिः = विचारशीलों द्वारा, विचारों द्वारा परिज्मानम् = सर्वतोमुख को इव = समान, की भाँति, के समान द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय होतारम् = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को चर्षणीनाम् = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का शोचिष्केशम् = शोचिष्केश को, पवित्र गति को वृषणम् = पराक्रमी को यम् = जिसे, जिसको, जहाँ इमा = यह, इसको विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी प्रावन्तु = प्रकृष्ट रक्षा करें जूतये = वेगवान्, चंचल के लिए विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यजिष्ठम् = यजिष्ठ को, यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। यजमाना = यजमान (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। हुवेम = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। अङ्गिरसाम् = अंगिरस् गणों का, विद्वान्, गतिशील का (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। विप्र = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। मन्मभिः = विचारशीलों द्वारा, विचारों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। विप्रेभिः = विशेष पूर्ण करने वालों द्वारा (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। शुक्र = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी

(शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **मन्मभिः** = विचारशीलों द्वारा, विचारों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **परिज्मानम्** = सर्वतोमुख को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, जम् - खाना, भक्षण करना, निगलना, गति करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **शोचिष्केशम्** = शोचिष्केश को, पवित्र गति को (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना, किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **इमा** = यह, इसको (सर्वनाम)। **विशः** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **प्रावन्तु** = प्रकृष्ट रक्षा करें, (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अव - रक्षा करना)। **जूतये** = वेगवान्, चंचल के लिए (जू - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **विशः** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना) ॥ 2 ॥

196. सः हि पुरु चित् ओजसा, विरुक्मता दीद्यानो,

भवति द्रुहन्तरः परशुः न द्रुहन्तरः ।

वीडु चित् यस्य समृतौ श्रुवत्, वना इव यत् स्थिरम् ।

निष्पहमाणो यमते न अयते, धन्वासहा न अयते ॥ 3 ॥ 1-127-3

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने हि = ही, निश्चय पुरु = बहुत चित् = भी, ही ओजसा = ओज द्वारा विरुक्मता = विशेष प्रकाशित होते हुए, प्रदीप्त होते हुए दीद्यानो = प्रकाशित होते हुए भवति = होता है द्रुहन्तरः = अत्यन्त द्रोह करने वाला परशुः = तीक्ष्ण, सन्तुष्ट करने वाला, हिंसा करने वाला, सिञ्चन करने वाला, दुःख देने वाला न = नहीं, समान, उपमार्थक द्रुहन्तरः = अत्यन्त द्रोह करने वाला वीडु = वीडु, दृढ़ चित् = भी, ही यस्य = जिसका समृतौ = सम्यक्-ऋत द्वारा श्रुवत् = सुनता है वना = वाणी, वन इव = समान, की भाँति, के समान यत् = जिसे, जो स्थिरम् = स्थिर को निष्पहमाणो = निरन्तर सहनशील, सामर्थ्यवान्, सहमान यमते = यमन करता है न = नहीं, समान, उपमार्थक अयते = प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, उद्धार, प्रेरणा करता है धन्वासहा = प्रगतिशील सामर्थ्यवान् धन्व-सहनशील न = नहीं, समान, उपमार्थक अयते = प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, उद्धार, प्रेरणा करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। पुरु = बहुत (सर्वनाम)। चित् = भी, ही (अव्यय)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। विरुक्मता = विशेष प्रकाशित होते हुए, प्रदीप्त होते हुए (वि = विशेष, विविध, विना, विलोम (उपसर्ग)। रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। दीद्यानो = प्रकाशित होते हुए (द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। भवति = होता है (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। द्रुहन्तरः = अत्यन्त द्रोह करने वाला (द्रुह - द्वेष करना, मारने के लिए प्रयत्न करना)। परशुः = तीक्ष्ण, सन्तुष्ट करने वाला, हिंसा करने वाला, सिञ्चन करने वाला, दुःख देने वाला (पृ - तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, पृ - किसी कृत्य में आसक्त रहना, पृष - प्रोक्षण करना, सींचना, सहन करना, पीड़ा करना, दुःख देना, थकना, पीड़ित होना, पर = अन्य, पार, परे (अव्यय), शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, छील के पैना करना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, शूर - मार डालना, दुःख देना, पीड़ा करना, मूर्ख होना, पागल होना, निश्चल होना, स्तब्ध होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। द्रुहन्तरः = अत्यन्त द्रोह करने वाला (द्रुह - द्वेष करना, मारने के लिए प्रयत्न करना)। वीडु = वीडु, दृढ़ (वीड् - संस्तम्भन करना, दृढ़ होना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। चित् = भी, ही (अव्यय)।

यस्य = जिसका (सर्वनाम)। **समृतौ** = सम्यक्-ऋत द्वारा (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **श्रुवत्** = सुनता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वना** = वाणी, वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **स्थिरम्** = स्थिर को (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **निष्प्रहमाणो** = निरन्तर सहनशील, सामर्थ्यवान्, सहमान (नि - निरन्तर, निश्चित, सह = साथ, सहित, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **यमते** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अयते** = प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, उद्धार, प्रेरणा करता है (अ - नहीं, यन् - उद्धार करना, प्रेरणा करना, अय् = जाना, जानना, पाना)। **धन्वासहा** = प्रगतिशील सामर्थ्यवान् धन्व-सहनशील (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अयते** = प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, उद्धार, प्रेरणा करता है (अ - नहीं, यन् - उद्धार करना, प्रेरणा करना, अय् = जाना, जानना, पाना)। ॥ 3 ॥

(56) सूक्त 130

**197. आ इन्द्र याहि उप नः, परावतो न अयम् अच्छा,
विदथानीव सत्पतिः, अस्ता राजेव सत्पतिः।
हवामहे त्वा प्रयस्वन्तः, सुतेष्वा पुत्रासो न
पितरम् वाजसातये, मंहिष्ठम् वाजसातये ॥ 1 ॥ 1-130-1**

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **उप** = समीप **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **परावतो** = परम पवित्र **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **अयम्** = यह **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **विदथानीव** = विद्वान् **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक **अस्ता** = प्रकाशमान **राजेव** = राजा **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक **हवामहे** = आद्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **प्रयस्वन्तः** = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले **सुतेष्वा** = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में **पुत्रासो** = पुत्र गण **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **पितरम्** = पिता को, ज्ञानी को, पालन करने वाले को **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए **मंहिष्ठम्** = हे महान्तम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **परावतो** = परम पवित्र (परा = परम, वद् - वच् - बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। **विदथानीव** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **अस्ता** = प्रकाशमान (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना)। **राजेव** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **सत्पतिः** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **हवामहे** = आद्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आद्वान करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **प्रयस्वन्तः** = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यस - उपक्षय करना, वास करना, चलना, यत्न करना)। **सुतेष्वा** = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में (सु - उत्पन्न करना,

जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पुत्रासो** = पुत्र गण (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पितरम्** = पिता को, ज्ञानी को, पालन करने वाले को (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **महिष्ठम्** = हे महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 1 ॥

अनुवाक:- 20

(57) सूक्त 139

198. अस्तु श्रौषट् पुरो अग्निम्, धिया दधे आ नु,
तत् शर्धो दिव्यम् वृणीमहे, इन्द्रवायू वृणीमहे।
यत् ह क्राणा विवस्वते, नाभा सन्दाय नव्यसी।

अध प्र सु नः उप यन्ति धीतयो, देवान् अच्छ न धीतयः ॥ 1 ॥ 1-139-1

मन्त्रार्थ - अस्तु = हो श्रौषट् = श्रवण, स्रोता, सुनने वाले पुरो = पहले अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को धिया = धारणा शक्ति, बुद्धि दधे = धारण करते हैं आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नु = ही, भी तत् = वह, उसने शर्धो = विजय, शर्द्ध, बल दिव्यम् = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं इन्द्रवायू = इन्द्र तथा वायु वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं यत् = जिसे, जो ह = ही, निश्चय ही क्राणा = करने वाले विवस्वते = विवस्वत् के लिए, विशेष वास के लिए नाभा = नाभि में सन्दाय = सन्दान के लिए, सम्यक् रूप से दान के लिए नव्यसी = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए अध = अथ, अब, इसके अनन्तर प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर नः = हमको, हमारे लिए, हमारा उप = समीप यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं धीतयो = ज्ञानीजन, धारण करने वाले देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को अच्छ = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ न = नहीं, समान, उपमार्थक धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ - अस्तु = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। श्रौषट् = श्रवण, स्रोता, सुनने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। पुरो = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। धिया = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। दधे = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नु = ही, भी (निपात, अव्यय)। त्यत् = वह, उसने (सर्वनाम)। शर्धो = विजय, शर्द्ध, बल (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। दिव्यम् = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। इन्द्रवायू = इन्द्र तथा वायु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना, वा - गति करना, बहना, वे - बुनना, रचना करना)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द

करना, उत्साह करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)। **क्राणा** = करने वाले (कृ - करना)। **विवस्वते** = विवस्वत् के लिए, विशेष वास के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। **नाभा** = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। **सन्दाय** = सन्दान के लिए, सम्यक् रूप से दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **नव्यसी** = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सु** = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **धीतयो** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अच्छ** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धीतयः** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 1 ॥

199. शचीभिः नः शचीवसू, दिवा नक्तम् दशस्यतम्।

मा वाम् रातिः उप दसत्, कदा चन अस्मत् रातिः कदा चन ॥ 5 ॥ 1-139-5

मन्त्रार्थ - शचीभिः = उत्तम वाणी द्वारा नः = हमको, हमारे लिए, हमारा शचीवसू = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय नक्तम् = नक्त, नष्ट, विनाशक को दशस्यतम् = दो, दान करो मा = नहीं, मत, मुझे वाम् = तुम दोनों को रातिः = अनुदान उपदसत् = नष्ट होना, रक्षण, पालन करना कदाचन = कभी अस्मत् = हमसे रातिः = अनुदान कदाचन = कभी ॥ 5 ॥

पदार्थ - शचीभिः = उत्तम वाणी द्वारा (शच - स्पष्ट बोलना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। शचीवसू = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले, (शच - स्पष्ट बोलना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। नक्तम् = नक्त, नष्ट, विनाशक को (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। दशस्यतम् = दो, दान करो (दश-दाश देना)। मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। रातिः = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। उपदसत् = नष्ट होना, रक्षण, पालन करना (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। कदाचन = कभी (सर्वनाम)। अस्मत् = हमसे (सर्वनाम)। रातिः = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। कदाचन = कभी (सर्वनाम) ॥ 5 ॥

अनुवाकः - 21

(58) सूक्त 149

200. आ यः पुरम् नार्मिणीम् अदीदेत्, अत्यः कविः नभन्यो न अर्वा।

सूरो न रुरुक्वान् शतात्मा ॥ 3 ॥ 1-149-3

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम यः = जो पुरम् = पुर को, अग्रगामी, अग्रणी को नार्मिणीम् = नरों को, ले जाने वाले को, नम्रशीलों को अदीदेत् = अविनाश करे, अक्षय करे अत्यः = सतत गमनीय कविः = ज्ञानी, कवि नभन्यो = नभ वाले, नभ-स्थित, नभ के न = नहीं, समान, उपमार्थक अर्वा = प्रगतिशील, व्यापक, शब्दकर्ता सूरो

= सूर्य, उत्पन्न करने वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक **रुरुक्वान्** = रुक्वान्, रुक्ष, कठोर वाणी वाले, नष्ट करने वाले **शतात्मा** = अनेक, बहुत ॥ 1 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। यः = जो (सर्वनाम)। **पुरम्** = पुर को, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **नार्मिणीम्** = नरों को, ले जाने वाले को, नम्रशीलों को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अदीदेत्** = अविनाश करे, अक्षय करे (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, दी = नष्ट होना)। **अत्यः** = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **नभन्यो** = नभ वाले, नभ-स्थित, नभ के (नभ = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अर्वा** = प्रगतिशील, व्यापक, शब्दकर्ता (अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना, ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **सूरो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रुरुक्वान्** = रुक्वान्, रुक्ष, कठोर वाणी वाले, नष्ट करने वाले (रुक्ष - कठिन होना, रुक्ष होना, कठोर वचन बोलना, नीरस होना, शुष्क होना, सूखना, रुज - मारना, दुःख देना)। **शतात्मा** = अनेक, बहुत (शत - सौ (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

201. अभि द्विजन्मा त्री रोचनानि, विश्वा रजांसि शुशुचानो अस्थात्।

होता यजिष्ठो अपाम् सधस्थे ॥ 4 ॥ 1-149-4

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **द्विजन्मा** = दो जन्म वाला **त्री** = तीन **रोचनानि** = प्रकाशमान **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **रजांसि** = लोकों को, रजः को **शुशुचानो** = पवित्र होता हुआ, पवित्र करता हुआ **अस्थात्** = स्थित हैं **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले **यजिष्ठो** = देवपूजक **अपाम्** = अपा को, पालकों का **सधस्थे** = सहस्थान, सहगामी, साथ में ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्विजन्मा** = दो जन्म वाला (द्वि - दो (संख्या), जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **त्री** = तीन (त्रि = तीन, संख्या, सर्वनाम)। **रोचनानि** = प्रकाशमान (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **रजांसि** = लोकों को, रजः को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **शुशुचानो** = पवित्र होता हुआ, पवित्र करता हुआ (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था-स्थित होना, ठहरना)। **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **यजिष्ठो** = देवपूजक (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **सधस्थे** = सहस्थान, सहगामी, साथ में (सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 4 ॥

202. अयम् सः होता यो द्विजन्मा, विश्वा दधे वार्याणि श्रवस्या।

मर्तो यो अस्मै सुतुको ददाश ॥ 5 ॥ 1-149-5

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह **सः** = वह, उसने **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले **यो** = जो **द्विजन्मा** = दो जन्म वाला **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **दधे** = धारण करते हैं **वार्याणि** = वार्यों, वरणीयों को, वरण करने योग्य **श्रवस्या** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील के द्वारा **मर्तो** = मरणशील **यो** = जो **अस्मै** = हमारे लिए **सुतुको** = उत्तम प्रगतिशील, उत्तम वृद्धिकर्ता **ददाश** = देता है ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु -

दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **द्विजन्मा** = दो जन्म वाला (द्वि - दो (संख्या), जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **वार्याणि** = वार्यों, वरणीयों को, वरण करने योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **श्रवस्या** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील के द्वारा (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **मर्तो** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **सुतुको** = उत्तम प्रगतिशील, उत्तम वृद्धिकर्ता (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना)। **ददाश** = देता है (दाश - देना, दाश - मार डालना, दुःख देना) ॥ 5 ॥

(59) सूक्त 150

203. पुरु त्वा दाश्वान् वोचे, अरिः अग्ने तव स्विदा ।

तोदस्येव शरणे आ महस्य ॥ 1 ॥ 1-150-1

मन्त्रार्थ - पुरु = पहले, आगे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा दाश्वान् = दानी वोचे = बोलता है अरिः = हिंसक, गतिशील, व्यापक अग्ने = हे अग्नि तव = तुम्हारा स्विदा = स्वेदयुक्त तोदस्य = तुद का इव = समान, की भाँति, के समान शरणे = शरण में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण महस्य = महान् का, मह का ॥ 1 ॥

पदार्थ - पुरु = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना) त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। दाशिवान् = दानी (दश् = देना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। वोचे = बोलता है (वच् - बोलना, कहना)। अरिः = हिंसक, गतिशील, व्यापक ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। स्विदा = स्वेदयुक्त (स्विद - गीला करना, चिकना होना, छोड़ना, त्याग करना)। स्विद - अस्पष्ट ध्वनि करना, गुनगुनाना। स्विद - पसीजना, पसीना छूटना)। तोदस्य = तुद का (तुद - दुःखे। दुःख देना, पीड़ा करना, घाव करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। शरणे = शरण में (श्रण - देना, दान करना, रक्षा करना, श्री - सेवा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। महस्य = महान् का, मह का (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 22

(60) सूक्त 157

204. अबोधि अग्निः ज्मः उत्-एति सूर्यो, वि उषाः चन्द्रा मही आवो अर्चिषा ।

आयुक्षाताम् अश्विना यातवे रथम्, प्रासावीत् देवः सविता जगत् पृथक् ॥ 1 ॥ 1-157-1

मन्त्रार्थ :- अबोधि = बोध हुआ अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् ज्मः = भोजी, खाने वाला, निगलने वाला उदेति = उदय होता है सूर्यो = सूर्य, उत्पन्न करने वाले वि = विशेष, विना, विलोम उषाः = प्रभात, हिंसा चन्द्रा = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक मही = मही, महिमावान्, महान् आवो = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो अर्चिषा = अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा आयुक्षाताम् = युक्त किया, सम्बन्धित किया अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक यातवे = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए रथम् = रथ को प्रासावीत् = ऐश्वर्यमय हुआ या किया, उत्पन्न किया देवः = विद्वान्, तेजस्वी, देव सविता = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला जगत् = संसार, गतिशील पृथक् = अलग ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अबोधि = बोध हुआ (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, बुध - बोध होना, जानना, समझना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण

करना)। **जम्** = भोजी, खाने वाला, निगलने वाला (जम् = खाना, निगलना)। **उदेति** = उदय होता है (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, इ = जाना, उदि - उन्द = भिगोना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **उषाः** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **चन्द्रा** = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक (चन्द - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। **मही** = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **आवो** = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अर्विषा** = अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **आयुक्षाताम्** = युक्त किया, सम्बन्धित किया (अ = नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, सम्बन्धित करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना)। **रथम्** = रथ को (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **प्रासावीत्** = ऐश्वर्यमय हुआ या किया, उत्पन्न किया (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सविता** = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **जगत्** = संसार, गतिशील (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **पृथक्** = अलग (अव्यय) ॥ 1 ॥

205. यत् युज्जाथे वृषणम् अश्विना रथम्, घृतेन नो मधुना क्षत्रम् उक्षतम्।

अस्माकम् ब्रह्म पृतनासु जिन्वतम्, वयम् धना शूरसाता भजेमहि ॥ 2 ॥ 1-157-2

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो युज्जाथे = नियोजित करते हो, जोड़ते हो वृषणम् = पराक्रमी को अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक रथम् = रथ को घृतेन = अभिसिञ्चित द्वारा, प्रकाशमान द्वारा नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मधुना = मधु द्वारा क्षत्रम् = क्षत्र को, रक्षा को उक्षतम् = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला अस्माकम् = हमारा ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् पृतनासु = व्यापक, बलों में जिन्वतम् = प्रसन्न करो, सन्तुष्ट करो वयम् = हम, हम सब, हम लोग धना = धन शूरसाता = वीर, पराक्रमी सहित प्रगतिशील भजेमहि = सेवा, भजन, सेवन करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। युज्जाथे = नियोजित करते हो, जोड़ते हो (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। रथम् = रथ को (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। घृतेन = अभिसिञ्चित द्वारा, प्रकाशमान द्वारा (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मधुना = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा

होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **क्षत्रम्** = क्षत्र को, रक्षा को (क्षत्, क्षद् = खाना, कूटना, ढकना, मार डालना, रक्षा करना)। **उक्षतम्** = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **पृतनासु** = व्यापक, बलों में (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **जिन्वतम्** = प्रसन्न करो, सन्तुष्ट करो (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **धना** = धन (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **शूरसाता** = वीर, पराक्रमी सहित प्रगतिशील (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना, स - सहित, साथ, अत् = सतत् गति करना)। **भजेमहि** = सेवा, भजन, सेवन करते हैं (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना) ॥ 2 ॥

206. अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनो रथो, जीराश्वो अश्विनोः यातु सुष्टुतः ।

त्रिवन्धुरो मघवा विश्वसौभगः, शम् नः आ वक्षत् द्विपदे चतुष्पदे ॥ 3 ॥ 1-157-3

मन्त्रार्थ :- अर्वाङ् = अभिमुख, गतिशील, शब्दकर्ता **त्रिचक्रो** = तीन चक्र वाला **मधुवाहनो** = मधु-वाहन **रथो** = रथ **जीराश्वो** = अत्यन्त प्रगतिशील, जीर्ण-व्यापकता **अश्विनोः** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **यातु** = प्राप्त हो, जाये **सुष्टुतः** = उत्तम स्तुति करते हुए **त्रिवन्धुरो** = तीन बन्धु **मघवा** = मघवान्, ऐश्वर्यवान्, धनवान् **विश्वसौभगः** = विश्व-सौभाग्य **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वक्षत्** = वक्ष, पालन करा **द्विपदे** = द्विपद के लिए, द्विपद में, द्विपद वाले में **चतुष्पदे** = चार पैर वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अर्वाङ् = अभिमुख, गतिशील, शब्दकर्ता (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **त्रिचक्रो** = तीन चक्र वाला (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **मधुवाहनो** = मधु-वाहन (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **रथो** = रथ (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **जीराश्वो** = अत्यन्त प्रगतिशील, जीर्ण-व्यापकता (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अश्विनोः** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **यातु** = प्राप्त हो, जाये (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **सुष्टुतः** = उत्तम स्तुति करते हुए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **त्रिवन्धुरो** = तीन बन्धु (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, बध्-बन्ध् - बाँधना, बन्धन होना)। **मघवा** = मघवान्, ऐश्वर्यवान्, धनवान् (मघ् = ऐश्वर्य होना, धन होना)। **विश्वसौभगः** = विश्व-सौभाग्य (विश्वः = सभी, सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना)। **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वक्षत्** = वक्ष, पालन करो (वक्ष = पालन करना, रक्षा करना। वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना)। **द्विपदे** = द्विपद के लिए, द्विपद में, द्विपद वाले में (द्वि = दो, संख्या, पद - स्थानान्तर करना, चलना, जाना)। **चतुष्पदे** = चार पैर वाले (चतुः - चार, संख्या, पद - चलना, स्थानान्तर करना) ॥

(61) सूक्त 164

207. त्वाम् अग्ने पुष्करात् अधि, अथर्वा निरमन्थत।

मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥ 20 ॥

1-164-20

मन्त्रार्थ- त्वाम् = तुमको, तुम्हारा अग्ने = हे अग्नि पुष्करात् = पुष्कर से अधि = अधिगत, उच्च अथर्वा = अविचलित-अहिंसक निः = बिना, बाहर, निश्चित अमन्थत = मथा, मन्थन किया मूर्ध्नो = उच्च विश्वस्य = विश्व का, सभी का वाघतः = उत्थान से ॥ 20 ॥

भावार्थ - परमात्मा की वेदवाणी किसी देश या समुदाय के लिए नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए है। विश्व के पोषण की भावना से कुटिलता, हिंसा तथा विचलित होने जैसे दुर्गुणों तथा दुर्बलताओं से मुक्त होकर वेद का स्वाध्याय करना चाहिए। 20 ॥

पदार्थ - त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पुष्करात् = पुष्कर से (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना, कृ = करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। अथर्वा = अविचलित-अहिंसक! (अ - नहीं, थर्व - अस्थिर होना, हिंसा करना)। निः = बिना, बाहर, निश्चित (अव्यय)। अमन्थत = मथा, मन्थन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मथ् मथना, मन्थन करना)। मूर्ध्नो = उच्च (मुर् - घेरना, लपेटना, मूर्ध्व - उच्च होना)। विश्वस्य = विश्व का, सभी का। वाघतः = उत्थान से (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना) ॥ 20 ॥

अनुवाकः- 23

(62) सूक्त 175

208. मत्सि अपायि ते महः, पात्रस्य-इव हरिवो मत्सरो मदः।

वृषा ते वृष्णः इन्दुः, वाजी सहस्रसातमः ॥ 1 ॥ 1-175-1

मन्त्रार्थ :- मत्सि = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो अपायि = पान किया, पालन किया ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए महः = महान् पात्रस्य = पात्र का, पालन, रक्षा करने वाले का इव = समान, की भाँति, के समान हरिवो = हरि गण, हरण करने वाले मत्सरो = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो मदः = मद, हर्ष, तृप्ति वृषा = पराक्रमी ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वृष्णः = वर्षा करने वाला, पराक्रमी इन्दुः = इन्दु वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त सहस्रसातमः = अत्यन्त दानशील, अत्यन्त सेवाशील ॥ 1 ॥

पदार्थ :- मत्सि = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अपायि = पान किया, पालन किया (अ - नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, पा-पान - पीना, पान करना, पा = रक्षा करना, पालन करना, अप - पालन करना, अन - जीना, समर्थ होना, जाना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। महः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। पात्रस्य = पात्र का, पालन, रक्षा करने वाले का (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। हरिवो = हरि गण, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। मत्सरो = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। मदः = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वृष्णः = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या

पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सहस्रसातमः** = अत्यन्त दानशील, अत्यन्त सेवाशील (सहस्र = हजार, संख्या, सन - सेवा करना, चाकरी करना, विभक्त करना, अलग करना, सनु - देना, दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 1 ॥

209. आ नः ते गन्तु मत्सरो, वृषा मदो वरेण्यः ।

सहावान् इन्द्र सानसिः, पृतनाषाड् अमर्त्यः ॥ 2 ॥ 1-175-2

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए गन्तु = जाओ मत्सरो = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो वृषा = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो मदो = मद, हर्ष, तृप्ति वरेण्यः = वरणीय, वरण करने वाला सहावान् = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट इन्द्र = इन्दु सानसिः = सेवाभावी, दानी, सेवनीय पृतनाषाड् = व्यापक, बल वाले अमर्त्यः = अमर्त्य ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। गन्तु = जाओ (गम् = जाना, जानना, पाना)। मत्सरो = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। वृषा = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। मदो = मद, हर्ष, तृप्ति (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। वरेण्यः = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। सहावान् = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। इन्द्र = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। सानसिः = सेवाभावी, दानी, सेवनीय (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। पृतनाषाड् = व्यापक, बल वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। अमर्त्यः = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना) ॥ 2 ॥

210. त्वम् हि शूरः सनिता, चोदयो मनुषो रथम् ।

सहावान् दस्युम् अव्रतम्, ओषः पात्रम् न शोचिषा ॥ 3 ॥ 1-175-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय शूरः = वीर, पराक्रमी सनिता = सेवित चोदयो = प्रेरित करते हुए, प्रेरणा देते हुए मनुषो = विचारशील का रथम् = रथ को सहावान् = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट दस्युम् = दस्यु को, रक्षणीय को अव्रतम् = अव्रती को ओषः = तपाओ पात्रम् = पात्र को, पालन, रक्षा करने वाले को, पात्र को न = नहीं, समान, उपमार्थक शोचिषा = शोचमान द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। शूरः = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। सनिता = सेवित (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। चोदयो = प्रेरित करते हुए, प्रेरणा देते हुए (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। मनुषो = विचारशील का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। रथम् = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। सहावान् = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। दस्युम् = दस्यु को, रक्षणीय को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। अव्रतम् = अव्रती

को (अ = नहीं, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **ओषः** = तपाओ (उष - हिंसा करना, जलना, ऊष् = जलाना, ताप देना, ऊष्म करना, रोग होना, पीडा होना, एकत्र होना)। **पात्रम्** = पात्र को, पालन, रक्षा करने वाले को, पात्र को (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना) ॥ 3 ॥

इति प्रथम मण्डल

द्वितीय मण्डल

अनुवाक:- 25

(63) सूक्त 5

211. दधन्वे वा यत् ईम् अनु, वोचद् ब्रह्म इति वेः उ तत्।

परि विश्वानि काव्या नेमिः, चक्रम् इव अभुवत् ॥ 3 ॥ 2-5-3

मन्त्रार्थ - दधन्वे = धारण करने के लिए वा = अथवा यत् = जिसे, जो ईम् = समान, इस प्रकार अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल वोचद् = बोलें ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् इति = ऐसा, यह, इसी प्रकार वेः = बनाते हो, जानते हो उ = निश्चय ही, भी तत् = वह, उस को परि = सभी तरफ विश्वानि = सभी काव्या = काव्य नेमिः = ले जाने वाला, मार्गदर्शक चक्रम् = चक्र को इव = समान, की भाँति, के समान अभुवत् = अभू, हो गया, हुआ ॥ 4 ॥

पदार्थ - दधन्वे = धारण करने के लिए (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। वा = अथवा (अव्यय)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। वोचद् = बोलें (वच् - बोलना, कहना)। ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इति = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। वेः = बनाते हो, जानते हो (वे = बुनना, वी = जानना, पाना)। उ = निश्चय ही, भी। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। काव्या = काव्य (कु, क्व = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। नेमिः = ले जाने वाला, मार्गदर्शक (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। चक्रम् = चक्र को (चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। अभुवत् = अभू, हो गया, हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 4 ॥

अनुवाक:- 26

(64) सूक्त 12

212. यो जातः एव प्रथमो मनस्वान्, देवः देवान् क्रतुना परि अभूषत्।

यस्य शुष्मात् रोदसी अभ्यसेताम्, नृम्णस्य महना सः जनासः इन्द्रः ॥ 01 ॥ 2-12-1

मन्त्रार्थ :- यो जो, मनस्वान् मनस्वी, प्रथमो प्रथम, एव ही, जात उत्पन्न हुआ, (जिस) देवः देव ने, देवान् देवगणों को, क्रतुना कृत द्वारा, परि सभी तरफ अभूषत् भूषित किया, यस्य जिसके शुष्मात् शुष्म से रोदसी रोदस को, अभ्यसेताम् सभी ओर बाँधा, (जो) नृम्णस्य नर की, महना महत्ता (है), जनास लोगों, सः वही, इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) ॥ 1 ॥

भवार्थ :- जो सृष्टि का प्रथम मनस्वी था, जो देव, देवगणों को भी भूषित करने वाला था। जिसके सर्वत्र होने से रौने वाले को शुष्कता मिलती हो, जो नर की महत्ता हो, हे लोगों वही इन्द्र परम ऐश्वर्यमान है।

पदार्थ :- यो जो (सर्वनाम), जात उत्पन्न हुआ (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। एव ही (अव्यय) प्रथमो प्रथम (प्रथ् - विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। मनस्वान् मनस्वी (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। देवः देव ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवान् देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। क्रतुना कृत द्वारा (कृ-करना), परि सभी तरफ (उपसर्ग) अभूषत् भूषित किया (भूष-भूषित करना, भूषित होना, शोभित

होना, शोभित करना), **यस्य** जिसके (सर्वनाम) **शुष्मात्** शुष्म से (शुष्मः - सुखाने वाला, शुष् - सुखाना)। **रोदसी** रोदस को (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **अभ्यसेताम्** सभी ओर बाँधा, (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सि - बाँधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **नृम्णस्य** नर की (नृ - ले जाना)। **महना** महत्ता (है) (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **सः** वही, **जनास** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)॥

213. यः पृथिवीम् व्यथमानाम् अदृहत्, यः पर्वतान् प्रकुपितान् अरम्णात् ।

यो अन्तरिक्षम् विममे वरीयो, यो द्याम् अस्तम्नात्, सः जनास इन्द्रः ॥ 02 ॥ 2-12-2

मन्त्रार्थ :- यः जिसने व्यथमानाम् व्यथमान पृथिवीम् पृथिवी को अदृहत् दृढ़ किया । यः जिसने प्रकुपितान् प्रकोपित पर्वतान् पर्वतों को अरम्णात् रमया । यो जिसने विममे विशेष मान कर अन्तरिक्षम् अन्तरिक्ष को वरीयो वरीय (रचा) यो जिसने द्याम् प्रकाश को अस्तम्नात् स्थापित किया जनास लोगों । सः वही (इन्द्र) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) ॥

भवार्थ :- जिसने पृथ्वी को दृढ़ता दी, जिसने प्रकोपित पर्वतों को सम्भाला । जिसने अन्तरिक्ष का विशेष मानकर, मापकर रचा । जिसने प्रकाश को स्थापित किया, हे लोगों । वही इन्द्र है ।

पदार्थ :- यः जिसने, जो (सर्वनाम)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ, प्रथ = विस्तार करना, पृथ - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **व्यथमानाम्** व्यथमान (व्यथ - व्यथित होना, दुःखी होना)। **अदृहत्** दृढ़ किया (दृह = बढ़ना, दृढ़ होना, दृढ़ करना) **यः** जिसने, जो (सर्वनाम)। **पर्वतान्** पर्वतों को (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **प्रकुपितान्** प्रकोपित को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, कुप - गुस्सा करना, बोलना, चमकना)। **अरम्णात्** रमया (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **यो** जिसने, जो (सर्वनाम)। **अन्तरिक्षम्** अन्तरिक्ष को (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। **विममे** विशेष मान कर (वि = विशेष, विना, विलोम, मा - नापना, तौलना, मान करना, शब्द करना, समाना, वि-मा -विशेष मान करना, बनाना)। **वरीयो** वरीय (रचा) = वरीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **यो** जिसने, जो (सर्वनाम)। **द्याम्** प्रकाश को (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना) **अस्तम्नात्** स्थापित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तम्भ - दृढ़ होना, अचल होना, स्तब्ध होना)। **सः** वही (इन्द्र) **जनास** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥

214. यो हत्वा अहिम् अरिणात् सप्त सिन्धून्, यो गाः उदाजत् अपधा बलस्य ।

यो अश्मनोः अन्तः अग्निम् जजान, सम् वृक् समत्सु, सः जनास इन्द्रः ॥ 03 ॥ 2-12-3

मन्त्रार्थ :- यो जिसने अहिम् अहि का हत्वा हनन कर सप्त सात सिन्धून्, सरिता अरिणात् बहायीं यो जिसने बलस्य बल से अपधा बँधी गाः गाय उदाजत् छुड़ायी यो जो अश्मनोः शिला (के) अन्तः मध्य अग्निम् अग्नि का जजान उत्पन्न कर्ता (है), सम् सम्यक् वृक् आदान समत्सु प्रदान कर्ता (है) जनास लोगों । सः वही (इन्द्र) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है)। 3 ॥

भवार्थ :- जो हिंसा को मारने वाला, सात सिन्धुओं सा व्यापक है, जो उत्कृष्टता से गाय, गायन, बल को धारण करता है, जो व्यापक होकर शिलाओं के मध्य में अग्नि को उत्पन्न करता है, समान रूप से लेता है, समान रूप से देता है, हे लोगों वही परम ऐश्वर्यमान इन्द्र है ।

पदार्थ :- यो जिसने, जो हत्वा हनन कर (हन्- मारना) अहिम् अहि का (अह-फैलना, विस्तृत होना, व्यापक, अर्पण करना, समर्पण करना) अरिणात् बहायीं (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा

करना, अ = नहीं, रिण-शब्द करना, चूर्ण होना, अल्प होना, रि - जाना, दुःख देना, पीड़ा देना) **सप्त** सात (संख्या) **सिन्धून्**, सरिता, सिन्धुओं को, समुद्र (सिध- सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ्ज - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना) **यो** जो (सर्वनाम) **गाः** गाय, गान, गायक (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **उदाजत्** छुड़ायी (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, दा - देना, दान करना, आ-दा = लेना, ग्रहण करना)। **अपधा** बँधी (अप् - पालन करना, जाना, जानना, पाना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना)। **बलस्य** बल से (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **यो** जो **अश्मनोः** शिला (के), व्याप्त, व्यापक, प्राप्त (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **अन्तः** मध्य (उपसर्ग, सर्वनाम) **अग्निम्** अग्नि का (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जजान** उत्पन्न कर्ता (है) (उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन-उत्पन्न करना)। **सम्** सम्यक् **वृक्** आदान (वृक् - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच - हिंसा करना)। **समत्सु** प्रदान कर्ता (है) सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **सः** वही (इन्द्र) **जनास** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥

215. येन इमा विश्वा च्यवना कृतानि, यो दासम् वर्णम् अधरम् गुहा अकः ।

श्वघ्नी इव यो जिगीवान् लक्षम् आदद्, अर्यः पुष्टानि, सः जनास इन्द्रः ॥ 04 ॥ 2-12-4

मन्त्रार्थ :- येन जिसने, जिसके द्वारा **इमा** यह **च्यवना** हँसने वाला, तैरने वाला, पार कराने वाला, विद्वान् **विश्व** विश्व **कृतानि** रचा **यो** जिसने **गुहा** गुह्य, गुहा में **अकः** गतिशील **दासम्** दास को, दानी को, सेवाधर्मी को, सेवाभावी को **वर्णम्** वर्ण को **अधरम्** धारण किया **यो** जिसने **श्वघ्नी** गतिशील **जिगीवान्** स्तुति करने वाले ने **इव** समान, की भाँति **लक्षम्** लक्ष को **आदद्** दे दिया **अर्यः** अर्य (का) **पुष्टानि** पोषक (है) **जनास** लोगों। **सः** वही (इन्द्र) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है)।

भवार्थ :- जिसने इस नश्वर विश्व जानने योग्य किया रचा, जो दासों, वर्ण को, धारण करने वाला है, जो स्तुति करने वाले को आच्छादित करता है, जो गतिशील हैं, उनको लक्ष्य में विजय देता है, अर्यों का पोषण करने वाला है, हे लोगों वही इन्द्र परमऐश्वर्यवान् है

पदार्थ :- येन जिसने, जिसके द्वारा **इमा** यह, इसको (सर्वनाम) **विश्व** विश्व सभी सब **च्यवना** हँसने वाला, तैरने वाला, पार कराने वाला, विद्वान् (च्यु-हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना) **कृतानि** रचा (कृ- करना) **यो** जो **दासम्** दास को, दानी को, सेवाधर्मी को, सेवाभावी को (दास्- काटना, दान करना, सेवा करना) **वर्णम्** वर्ण को (वृ-वर्ण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना) **अधरम्** धारण किया (अधर्- न्यून करना, जीतना, निम्न गति करना, अ-नहीं, धृ - धारण करना)। **गुहा** गुह्य, गुहा (गुह - आच्छादन करना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना) **अकः** गतिशील (अक्-जाना, जानना, पाना, टेढ़ा जाना कुटिल गति करना)। **श्वघ्नी** गतिशील (श्व-श्व- जाना, भागना, दौड़ना) **इव** समान, की भाँति के लिए (अव्यय) **यो** जो **जिगीवान्** स्तुति करने वाले ने (गा-जिगा- स्तुति करना, प्रशंसा करना) **लक्षम्** लक्ष को (लक्ष्-देखना, विचार करना) **आदद्** दे दिया (आ-सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दा-देना) **अर्यः** अर्य (ऋ-जाना, सम्पादन करना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना) **पुष्टानि** पुष्ट, पोषित करते हुए (पुष् - पालन- पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना) **सः** वही (इन्द्र) **जनासः** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 04 ॥

216. यम् स्मा पृच्छन्ति कुह सः इति घोरम्, उत ईम् आहुः न एषो अस्ति इति एनम् ।

सो अर्यः पुष्टीः विज इव आ मिनाति, श्रत् अस्मै धत्त, सः जनासः इन्द्रः ॥ 05 ॥ 2-12-5

मन्त्रार्थ :- यम् जिसे, घोरम् = घोर को सः = वह, कुह = कहाँ स्मा = है पृच्छन्ति = पूछते हैं, एनम् = जिसके, ईम् = समान पुष्टीः = पुष्टि, पोषण विज विज, भयभीत की आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, मिनाति = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है श्रत् सत्य को अस्मै = हमारे लिए धत्त = धारण, पोषण करो, धारण करता है जनासः लोगों। सः वही (इन्द्र) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) ॥ 5 ॥

भवार्थ :- जिस घोर को सभी विद्वान् कहते हैं - यह नहीं है, ऐसा, इस प्रकार कोई है ही नहीं। वह अर्यों का पोषण करने वाला, भयभीत का रक्षक और सत्य के विपत्ति में पड़ने पर सम्यक् रूप से रक्षा करता है, जो हमारे लिए धारण योग्य है, हे लोगों वही इन्द्र परम ऐश्वर्यवान है।

पदार्थ :- यम् जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम) स्मा = है (अस् - होना)। पृच्छन्ति = पूछते हैं, (पृश्-पृच्छ - पूछना, प्रश्न करना)। कुह = कहाँ (सर्वनाम)। सः = वह, उसने। इति = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। घोरम् = घोर को (घुर् = भयंकर होना, चमकना, घोर = चतुराई से चलना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। आहुः = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। एषो = यह (सर्वनाम)। अस्ति = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। इति = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। एनम् = जिसके, इसको, इसे (सर्वनाम)। सो = वह, उसने। अर्यः = अर्य को, प्रगतिशील को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। पुष्टीः = पुष्टि, पोषण (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। विज विज, भयभीत (विज - डरना, डर से कांपना, आपदाग्रस्त होना, विपत्ति में पड़ना, वि - विशेष, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। मिनाति = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। श्रत् सत्य को (उपसर्ग) अस्मै = हमारे लिए (सर्वनाम)। धत्त = धारण, पोषण करो, धारण करता है (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। सः वही (इन्द्र) जनास लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 05 ॥

217. यो रधस्य चोदिता यः कृशस्य, यो ब्रह्मणो नाधमानस्य कीरेः।

युक्तग्राव्णो यो अविता सुशिप्रः, सुतसोमस्य, सः जनासः इन्द्रः ॥ 06 ॥ 2-12-6

मन्त्रार्थ :- यो जो रधस्य = पूर्ण की यो जो कृशस्य कृश की चोदिता = प्रेरित करने वाला यो जो नाधमानस्य = नाधमान की, कीरेः प्रशंसा करने वाला युक्तग्राव्णो = ग्राव्णो से युक्त, अविता = रक्षक सुशिप्रः = सुयोग्य बनाने वाला (है) (जो) सुतसोमस्य = सुतसोम का, ऐश्वर्यवान् सोम का, उत्पन्न करने वालों को, उत्पन्न करने वाला (है) जनासः लोगों। सः वही (इन्द्र) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) ॥ 06 ॥

भवार्थ :- जो रध का, कृश का प्रेरक है, जो ब्रह्म को, शासित को ज्ञान देता है। जो प्रशंसा से संयुक्त है और ऐश्वर्यवान् सोम का रक्षक है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यो जिसने, जो (सर्वनाम) रधस्य = रध का, पूर्ण की (रध - पूरा करना, समाप्त करना, अपकार करना, मार डालना या दुःख देना, पक्व होना, पकना, शुद्ध होना, निर्दोष होना, गलती न करना)। चोदिता = प्रेरित करने वाला, प्रेरणा-दाता (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। यः जिसने, जो कृशस्य कृश की (कृश - कृश होना, सूक्ष्म होना)। यो जिसने, जो ब्रह्मणो = ब्रह्म की (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। नाधमानस्य = याचना करते हुए, नाधमान की, शासकों का (नाध - याचना करना, रोगी होना, श्रीमान् होना, आशीर्वाद देना, स्वस्ति-वाचन करना)। कीरेः करने वाला, प्रशंसा करने वाला (कृ - करना, री-रै- शब्द करना)। युक्तग्राव्णो = ग्राव्णो से युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गुंथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, ग्रु-शब्द करना)। यो जिसने, जो अविता

= रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **सुशिप्रः** = सुयोग्य, उत्तम विद्वान् (सु - अच्छा, उत्तम, शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **सुतसोमस्य** = सुतसोम का, ऐश्वर्यवान् सोम का, उत्पन्न करने वाला (सु = उत्तम, अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **सः** वही (इन्द्र) **जनासः** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 06 ॥

218. यस्य अश्वासः प्रदिशि यस्य गावो, यस्य ग्रामा यस्य विश्वे रथासः ।

यः सूर्यम् यः उषसम् जजान, यो अपाम् नेता, स जनास इन्द्रः ॥ 07 ॥ 2-12-7

मन्त्रार्थ :- यस्य = जिसके अश्वासः = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक यस्य = जिसके गावो = शब्द, वाणी, वचन प्रदिशि = प्रदिशा (सही मार्गदर्शन में हैं) यस्य = जिसके ग्रामा = ग्रामों यस्य = जिसके विश्वे = सभी रथासः = रथों (हैं) यो जो सूर्यम् = सूर्य को यो जो उषसम् = उषा को, प्रभात को, हिंसा को, जजान = उत्पन्न किया, उत्पन्न करने वाला (है), यो जो अपाम् = अपा को, पालकों को, नेता = ले जाने वाला (है), जनासः लोगों। सः वही (इन्द्र) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) ॥ 07 ॥

भवार्थ :- जिसकी व्यापकता की दिशाएँ भी गुणगान करती हैं, जिसके ग्राम हैं और सभी रथ हैं, जो सूर्य को, उषा को, उत्पन्न करने वाला है, जो पालकों को ले जाने वाला है, लोगों, वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यस्य = जिसका (सर्वनाम)। अश्वासः = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। प्रदिशि = प्रदिशा (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, दिश् - दिखाना, दिखाना, समझाना, कहना, देना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। ग्रामा = ग्रामों (ग्राम - बुलाना, बुद्धिपूर्वक कहना, एकत्र होना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। रथासः = रथों (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। यः जिसने, जो सूर्यम् = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। यः जिसने, जो उषसम् = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। जजान = उत्पन्न किया, उत्पन्न करने वाला (उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन- उत्पन्न करना)। यो जिसने, जो (सर्वनाम) अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। नेता = ले जाने वाला (नी = ले जाना)। सः वही (इन्द्र) जनासः लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 07 ॥

219. यम् क्रन्दसी संयती विह्वयेते, परे अवरः उभया अमित्राः ।

समानम् चिद् रथम् आतस्थिवांसा ।

नाना हवेते, सः जनास इन्द्रः ॥ 08 ॥

2-12-8

मन्त्रार्थ :- यम् = जिसे, क्रन्दसी = क्रन्दनशील, क्रन्दनयुक्त संयती = संयत्, सम्यक् यत्न करने वाले विह्वयेते = विशेष आह्वान करते हैं, विशेष आदान-प्रदान के लिए (बुलाते हैं), (जो) अवरः = अवर, अवरणीय, अमित्राः = अमित्र, अस्नेही उभया = दोनों (को) परे = दूर (करें)। समानम् = समान चिद् = चेतन को रथम् = रथ को आतस्थिवांसा = आतस्थिवांस, अन्दर स्थित होकर वास करना नाना = अनेक (प्रकार से) हवेते = बुलाते हैं, दानयोग्य, आदान-प्रदान करते हैं, जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है)। 8 ॥

भवार्थ :- जिसे क्रन्दनयुक्त, भलीभाँति से आदान-प्रदान करने वाले पुकारते हैं, जो अस्नेही, अवरणीय, दोनों को दूर करता है, समान रूप से चेतना के अन्दर स्थित होकर गतिशील रहता है, बहुत दानशील है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। क्रन्दसी = क्रन्दन करते हैं, क्रन्दनयुक्त (क्रन्द - रोना, पुकारना,

दुःख होना)। **संयती** = संयत्, सम्यक् प्रयत्न, सम्यक् आदेश, सम्यक् एकत्रीकरण करने वाले (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, यत = दुःख देना, मारना, ठोकना, चपेटना, आज्ञा करना, एकत्र करना, मना करना, रोकना, यत = यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **विह्वयेते** = विशेष आह्वान, आदान-प्रदान के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम उपसर्ग, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **परे** = पर, परम, दूर, बाद में (पर = पराया, अन्य, दूसरा, परे, पश्चात्, बाद में (उपसर्ग))। **अवरः** = अवर, अवरणीय, रक्षक (अ - नहीं, वृ-वर्-वरण करना, इच्छा करना, आशा करना, अवर - नीचे, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **उभया** = दोनों, पूर्णताओं द्वारा (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **अमित्राः** = अमित्र, अस्नेही (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना, मा - मापना, मान करना)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **चिद्** = चेतन को (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **रथम्** = रथ को (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **आतस्थिवांसा** = आतस्थिवांस, अन्दर स्थित होकर वास करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, तन् - विस्तार करना, आश्रय देना, शब्द करना, दुःख देना, स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **नाना** = अनेक, बहुत, विविध (अव्यय)। **हवेते** = बुलाते हैं, दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सः** वही (इन्द्र) **जनासः** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 08 ॥

220. यस्मात् न ऋते विजयन्ते जनासो, यम् युध्यमाना अवसे हवन्ते।

यो विश्वस्य प्रतिमानम् बभूव, यो अच्युतच्युत्, सः जनास इन्द्रः। 09 ॥ 2-12-9

मन्त्रार्थ :- यस्मात् = जिस ऋते = विना जनासो जन, लोग विजयन्ते = विजित न = नहीं (होते हैं) यम् = जिसको, युध्यमाना = युद्ध करने वाला अवसे = रक्षक हवन्ते = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं विश्वस्य = विश्व का, प्रतिमानम् = प्रतिमा को, प्रति-मान बभूव = हो गये यो जो अच्युतच्युत् = न गिरने वाला जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है)। 9 ॥

भवार्थ :- जिसके बिना लोग (उत्पन्न होने वाले) विजित नहीं होते हैं, जिसको जाने बिना लोग विजय नहीं पाते हैं, युद्ध करने के लिए, रक्षा हेतु यम का आह्वान करते हैं, जो विश्व का प्रतिमान हो, जो पोषण करता है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यस्मात् = जिस, जिससे (सर्वनाम)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। ऋते = विना (अव्यय)। विजयन्ते = विजित होते हैं, विजयी होते हैं, विशेष रूप से उत्पन्न होते हैं (वि - विशेष, जि - जय होना, जीतना, जन् - जन्म लेना, उत्पन्न होना)। जनासो जन, लोग (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। युध्यमाना = युद्ध के योग्य (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। हवन्ते = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। यो जिसने, जो (सर्वनाम) विश्वस्य = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। प्रतिमानम् = प्रतिमा को, प्रति-मान (प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में, मा - मापना, तुलना करना)। बभूव = हो गये (भू = होना, प्राप्त होना)। यो जिसने, जो (सर्वनाम) अच्युतच्युत् = न गिरने वाला, अपतित (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, च्यु - गिरना, भटकना, जाना)। सः वही (इन्द्र) जनासः लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 09 ॥

221. यः शश्वतो महि एनो दधानान्, अमन्यमानान् शर्वा जघान।

यः शर्धते न अनुददाति शृध्याम्।

यो दस्योः हन्ता, सः जनासः इन्द्रः ॥ 10 ॥

2-12-10

मन्त्रार्थ :- यः जो शश्वतो शाश्वत को महि पूजनीय को एनो इन दोनों को दधानान् धारण करने वाला (है), अमन्यमानान् = न मानने वाला, अविचारशील, अमन्यमान शर्वा = शर्व का जघान = हिंसा की, मार दिया, हनन करता (कर्ता है), यः जो शृध्याम् = शृध्य में अनुददाति = अनुदान न = नहीं (देता है) शर्धते = शर्द्ध करता है, जीतता है, सहन करता है यः जो दस्योः = दस्यु हन्ता = हन्ता (है) जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है)।

भवार्थ :- जो शाश्वत है, पूजनीय है, इनको धारण करता है, न मानने वालों का, क्षतकर्ताओं का हनन करने वाला है। जो हिंसा को पीछे से बल नहीं देता है, जो दस्यु को मारने वाला है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यः जिसने, जो (सर्वनाम) शश्वतो शाश्वत को (शश्व- नित्य होना, सदैव होना, शश्वत होना) महि पूजनीय को (मह- सम्मान करना, पूरजा करना) एनो इन दोनों को (सर्वनाम) दधानान् धारण करने वाला (धा-धारण करना) अमन्यमानान् = न मानने वाला, अविचारशील, अमन्यमानों को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मन् - मानना, समझना, विचार करना)। शर्वा = शर्व (शर्व - क्षत करना, घाव करना, मार डालना)। जघान = हिंसा की, मार दिया, हनन किया (हन्-घ्न - हिंसा करना)। यः जिसने, जो (सर्वनाम) शर्धते = शर्द्ध करता है, जीतता है, सहन करता है (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना) न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। अनुददाति = अनुदान करता है (अनु - पीछे, अनुकूल)। शृध्याम् = शृध्य में (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। यो जिसने, जो (सर्वनाम) दस्योः = अनेक दस्यु, रक्षणीय (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। हन्ता = मारने वाला (हन् - मारना)। सः वही (इन्द्र) जनासः लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 10 ॥

222. यः शम्बरम् पर्वतेषु क्षियन्तम्, चत्वरिश्याम् शरदि अनु अविन्दत्।

ओजायमानम् यो अहिम् जघान, दानुम् शयानम्, सः जनास इन्द्रः ॥ 11 ॥ 2-12-11

मन्त्रार्थ :- यः जो पर्वतेषु = पर्वतों में, पर्वतों पर क्षियन्तम् = निवास करने वाले को, क्षति करने वाले को शम्बरम् = शम्बर को चत्वरिश्याम् = चालीसवें शरदि = शरद में अनु = पश्चात् अविन्दत् = प्राप्त किया यो जो अहिम् = व्यापक को ओजायमानम् = ओजायमान को, ओज को जघान = हिंसा की, मार दिया, हनन किया, हनन कर्ता शयानम् = शयन को दानुम् = दानी (है) जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है)। 11 ॥

भवार्थ :- जो पर्वतों पर निवास करने वालों का कल्याणकारी है, दुःख देने वालों के लिए चालीसवें (मारने वाले) को प्राप्त किया। आगतिशीलता, स्थिरता और ओज को न मानने वालों का जो हननकर्ता है, शयन करने वालों के लिए दानी है, हे लोगों वही परमऐश्वर्यवान है। 11 ॥

पदार्थ :- यः जिसने, जो (सर्वनाम) शम्बरम् = शम्बर को, कल्याणकारी को, शान्तिमय को, शमनकारी को (शम्- कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना, प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। पर्वतेषु = पर्वतों में, पर्वतों पर (पर्व-पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना) क्षियन्तम् = निवास करने वाले को, क्षति करने वाले को (क्षि-जाना, चलना, जानना, पाना, निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना) चत्वरिश्याम् = चालीसवें (संख्या)। शरदि = शरद में (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शृ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। अविन्दत् = प्राप्त किया (अ - भूतकालिक उपसर्ग, विन्द - प्राप्त करना, सम्पादित करना)। ओजायमानम् = ओजायमान को, ओज को न मानने वालों के लिए (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। यो जिसने, जो (सर्वनाम) अहिम् = व्यापक को (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। जघान = हिंसा की, मार दिया, हनन किया, हनन कर्ता (हन्-घ्न - हिंसा करना)। दानुम् = दानी को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना) शयानम् = शयन को (शी-शय् = शयन करना, सोना) सः वही (इन्द्र) जनासः लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 11 ॥

223. यः सप्तरश्मिः वृषभः तुविष्मान्, अव असृजत् सर्तवे सप्त सिन्धून्।

यो रौहिणम् अस्फुरद् वज्रबाहुः, द्याम् आ रोहन्तम्, सः जनास इन्द्रः ॥ 12 ॥ 2-12-12

मन्त्रार्थ :- यः जो वृषभः = पराक्रमी सप्तरश्मिः = सप्तरश्मि तुविष्मान् = फैलाने वाला (है) (जिसने) अव = पालन हेतु, सर्तवे = बहने वाले सप्त = सात सिन्धून = समुद्र असृजत् = सृजन किया यो जिस वज्रबाहुः = वज्रबाहु रौहिणम् = रोहण करना द्याम् = द्यु को, रोहन्तम् = बढ़ते हुए को आ = सम्यक्, अस्फुरद् = स्फुरण किया जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) । 12 ॥

भवार्थ :- जो पराक्रमी सप्तरश्मि फैलाने वाला है, जिसने पालन करने के लिए बहने वाले सात सिन्धुओं का सृजन किया। जो शक्तिशाली प्रयत्नकर्ता और शब्दों से स्फुरण करता है, जो सबसे बढ़कर प्रकाश देने वाला है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यः जिसने, जो (सर्वनाम) सप्तरश्मिः = सप्तरश्मि (सप्त - सात, विश - बीस, संख्या, रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। वृषभः = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। तुविष्मान् = फैलाने वाला, तुविष्मान को (तु-जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, विष- उपयोग न होने से अलग करना या निकाल देना, सींचना, प्रोक्षण करना, फैलाना, व्यापक)। अव = पालन, रक्षा (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)॥ असृजत् = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। सर्तवे = बहने वाले, प्राप्त करते हैं (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना)। सप्त = सात (संख्या)। सिन्धून = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। यो जिसने, जो (सर्वनाम) रौहिणम् = रोहण करना (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। अस्फुरद् = स्फुरण किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्फुर-हिलाना, फैलाना) वज्रबाहुः = वज्रबाहु (वज् - गति करना, जाना, बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। रोहन्तम् = बढ़ते हुए को (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। सः वही (इन्द्र) जनासः लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)।

224. द्यावा चिद् अस्मै पृथिवी नमेते, शुष्मात् चिद् अस्य पर्वता भयन्ते।

यः सोमपाः निचितो वज्रबाहुः, यो वज्रहस्तः, सः जनास इन्द्रः ॥ 13 ॥ 2-12-13

मन्त्रार्थ :- (जिसे) द्यावा = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा चिद् = भी, ही पृथिवी = पृथ्वी अस्मै = हमारे लिए नमेते = नमन करते हैं अस्य = इसके शुष्मात् = शुष्म से पर्वता = पर्वत चिद् = भी, ही यः जो वज्रबाहुः = वज्रबाहु निचितो = निरन्तर चयनित, एकत्र किया गया सोमपाः = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (है) यो जो वज्रहस्तः = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, (वज्रधारी है) जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) । 13 ॥

भवार्थ :- जो चेतना को दीप्ति करता है, विस्तृत भूमि हमारे लिए नमन योग्य है, जिसके सुखाने से पर्वत और भयभीत होते हैं। जो सोम का निरन्तर पान करने वाला है, जो वज्र धारण करने वाला है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- द्यावा = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। चिद् = भी, ही। अस्मै = हमारे लिए (सर्वनाम)। पृथिवी = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। नमेते = नमन करते हैं (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। शुष्मात् = शुष्म, सुखाने वाले से (शुष् - सुखाना)। चिद् = भी, ही। अस्य = इसका (सर्वनाम)। पर्वता = पर्वत, पर्वतों ने (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। भयन्ते = भयभीत होते हैं (भी - भय होना, डर होना, डराना)। यः जिसने, जो (सर्वनाम) सोमपाः = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम

होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **निचितो** = निरन्तर चयनित, एकत्र किया गया (नि - निश्चित, निरन्तर, चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना चि = चुनना, चयन करना)। **वज्रबाहुः** = वज्रबाहु (वज् - गति करना, जाना, बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। **यो** जिसने, जो (सर्वनाम) **वज्रहस्तः** = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **सः** वही (इन्द्र) **जनासः** लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) **इन्द्रः** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 13 ॥

225. यः सुन्वन्तम् अवति यः पचन्तम्, यः शंसन्तम् यः शशमानम् ऊती ।

यस्य ब्रह्म वर्धनम् यस्य सोमो, यस्य इदम् राधः, सः जनास इन्द्रः ॥ 14 ॥ 2-12-14

मन्त्रार्थ :- यः जो सुन्वन्तम् = उत्पन्न कर्ता अवति = रक्षक, (है) यः जो पचन्तम् = पाचक यः जो शंसन्तम् = प्रशंसक (है) यः जो शशमानम् = शशमान को, ऊती = रक्षा करने वाला (है) यस्य = जिसका ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् वर्धनम् = वर्धन को, बढ़ाने वाले को यस्य = जिसका सोमो = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (है) यस्य = जिसका इदम् = यह, राधः = वर्धक (वृद्धि करने वाला है) जनासः लोगों सः वही इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है)

भवार्थ :- जो रक्षकों, सुपाचकों का सवन करते (सुनते) हैं, जो शब्द करने वालों और शशमान का शमनकारी है, जिसके ब्रह्म की वृद्धि, सोम की तरह है, जिसकी यह वृद्धि करने वाला है, लोगों वही इन्द्र है।

पदार्थ :- यः जिसने, जो (सर्वनाम) सुन्वन्तम् = उत्पन्न करने वाले को (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। अवति = रक्षक, रक्षित, रक्षा करने वाले (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। यः जिसने, जो (सर्वनाम) पचन्तम् = पचन्त को, पकाने को (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। यः जिसने, जो (सर्वनाम) शंसन्तम् = स्तुति को, प्रशंसा को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। यः जो (सर्वनाम)। जिसने, जो (सर्वनाम) शशमानम् = शशमान को, कूर्दन करने वाले को (शश् - कूर्दन करना, कूदना, उछलना, कूदते हुए चलना)। ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। वर्धनम् = वर्धन को, बढ़ाने वाले को (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। सोमो = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो - अन्त करना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। राधः = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। सः वही (इन्द्र) जनासः लोगों (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) इन्द्रः परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 14 ॥

226. यः सुन्वते पचते दुध आ चिद्, वाजम् ददर्षि स किल असि सत्यः

वयम् ते इन्द्र, विश्वह प्रियासः, सुवीरासो विदथम् आ वदेम ॥ 15 ॥ 2-12-15

मन्त्रार्थ :- यः जो सुन्वते = स्नान करता है, सवन करता है आसवन करते हैं पचते = पचाते हैं (जो) आ = सम्यक् दुध = दोहन चिद् = भी, ही। वाजम् = विद्या को, गति को ददर्षि = दान करते हैं स = वह, उसने किल = निश्चय ही सत्यः = सत्य असि = हो ते = तुम्हारे लिए इन्द्र परम ऐश्वर्यमान विश्वह = विश्व का प्रियासः = प्रिय वयम् = हम सब, हम लोग सुवीरासो = अच्छे वीर, सुवीर विदथम् = विदथ को आ = सम्यक्, वदेम = कहें ॥ 15 ॥

भवार्थ :- जो सुनकर, दोहन कर, पचाकर सम्यक् चेतनशील है, निश्चित ही वह विद्या और सत्य देने वाला है, तुम्हारा इन्द्र, इस रचित विश्व का प्रिय हो, हम सब विदथ को सम्यक् अच्छे वीर कहें।

पदार्थ :- यः जिसने, जो (सर्वनाम) **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **पचते** = परिपक्व होने वाले का (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **दुध** = दोहन, जाना, शीघ्रता से जाना, (द्रु - जाना, शीघ्रता से जाना, चलना, बहना, प्रवाहित होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **चिद्** = भी, ही। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **ददर्षि** = दान करते हैं (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **स** = वह, उसने। **किल** = निश्चय ही (सर्वनाम)। **असि** = हो (अस् - होना)। **सत्यः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** परम ऐश्वर्यमान (है) (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **विश्वह** = विश्व का (सर्वनाम)। **प्रियासः** = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। **सुवीरासो** = अच्छे वीर, सुवीर (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **विदथम्** = विदथ को, विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वदेम** = कहें (वद - कहना, स्पष्ट कहना, बोलना, समझाना) ॥ 15 ॥

(65) सूक्त 22

**227. त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरम्, तुविशुष्मः तृपत् सोमम् अपिबत्,
विष्णुना सुतम् यथा अवशत्।**

सः ईम् ममाद महि कर्म, कर्तवे महाम् उरुम्

सः एनम् सश्चत् देवः देवम्, सत्यम् इन्द्रम् सत्यः इन्दुः ॥ 1 ॥ 2-22-1

मन्त्रार्थ - त्रिकद्रुकेषु = तीन भ्रमों में, त्रिकद्रों में **महिषो** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित **यवाशिरम्** = यवाशिर को **तुविशुष्मः** = अत्यन्त शोषक, बहुत सुखाने वाले **तृपत्** = संतृप्त होता हुआ, शान्त होता हुआ **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **अपिबत्** = पिया, पान किया **विष्णुना** = विष्णु द्वारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **अवशत्** = कामना की, इच्छा की **स** = वह, उसने **ईम्** = समान, इस प्रकार **ममाद** = आनन्द, हर्षित प्रसन्न रहो **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं **कर्म** = कर्म या कार्य **कर्तवे** = करे, करते हैं **महाम्** = बड़े, पूज्य, महान् को **उरुम्** = गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को **सः** = वह, **एनम्** = इसको, इस **सश्चत्** = जाता है **देवः** = देव **देवम्** = देव को **सत्यम्** = सत्य को **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **सत्यः** = सत्य **इन्दुः** = इन्दु।

पदार्थ - त्रिकद्रुकेषु = तीन भ्रमों में, त्रिकद्रों में (त्रि - तीन (संख्या), कद - भ्रमित होना, घबरा जाना, व्याकुल होना)। **महिषो** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **यवाशिरम्** = यवाशिर को (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **तुविशुष्मः** = अत्यन्त शोषक, बहुत सुखाने वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, शुष् - सुखाना)। **तृपत्** = संतृप्त होता हुआ, शान्त होता हुआ (तृप् - तृप्त होना या करना, शान्त होना, प्रेम करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अपिबत्** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **विष्णुना** = विष्णु द्वारा (विष्ण-विष्-विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार।

(सर्वनाम)। = इच्छा को अवशत् = कामना की, इच्छा की (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। स = वह, उसने। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। ममाद = आनन्द, हर्षित प्रसन्न रहो (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। कर्म = कर्म या कार्य (कृ = करना)। कर्तवे = करे, करते हैं (कृ - करना)। महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। उरुम् = गतिशीलता को, निरन्तर गति, विस्तार करने वाले को (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। सः = वह, उसने। एनम् = इसको, इसे (सर्वनाम)। सश्चत् = जाता है (सश्च् = पाना, जानना, जाना)। देवः = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सत्यम् = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) सत्यः = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। ॥ 1 ॥

228. अध त्विषीमान् अभि ओजसा क्रिविम् युधा अभवत्,

आ रोदसी अपृणत् अस्य मज्मना प्र वावृधे।

अधत्त अन्यम् जठरे प्र ईम् अरिच्यत,

सः एनम् सश्चत् देवो देवम् सत्यम् इन्द्रम्। सत्यः इन्दुः । 2 ॥ 2-22-2

मन्त्रार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर त्विषीमान् = प्रकाशमान अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा ओजसा = ओज द्वारा क्रिविम् = कर्मशील, हिंसक को युधा = युद्ध करने वाला अभवत् = हुआ आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले अपृणत् = भर गयी अस्य = इसका मज्मना = शब्दकर्ता प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वावृधे = वृद्धि किया अधत्त = धारण किया अन्यम् = अन्य, कोई और, इतर को जठरे = धारण में प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ईम् = समान, इस प्रकार अरिच्यत = हिंसा की, हिंसा न करने वाले, गतिशील, व्यापक प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक चेतय = चिन्तन, विचार, चेतन, एकत्र करता है सः = वह, उसने एनम् = इसको, इसे सश्चत् = ज्ञान, प्रगति, प्राप्त हो देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण देवम् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण को सत्यः = सत्य इन्दुः = इन्दु सत्यम् = सत्य को इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को ॥

पदार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। त्विषीमान् = प्रकाशमान (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। क्रिविम् = कर्मशील, हिंसक को (कृ - करना, क्रिव् - करना, हिंसा करना)। युधा = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। अभवत् = हुआ (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। अपृणत् = भर गयी (पृ - पूर्ण करना, भरना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। मज्मना = शब्दकर्ता (मज् - शब्द करना, ध्वनि करना, कामातुर शब्द करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वावृधे = वृद्धि किया (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। अधत्त = धारण किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, धा = धारण करना)। अन्यम् = अन्य, कोई और, इतर को (सर्वनाम)। जठरे = धारण में (जठ् - धारण करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। अरिच्यत = हिंसा की, हिंसा न करने वाले, गतिशील, व्यापक (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। एनम् = इसको, इसे (सर्वनाम)। सश्चत् = ज्ञान, प्रगति, प्राप्त हो (सश्च् = पाना, जानना, जाना)। देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवम् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना,

खेलना)। **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सत्यः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। ॥ 2 ॥

229. साकम् जातः क्रतुना, साकम् ओजसा ववक्षिथ,

साकम् वृद्धो वीर्यैः, सासहिः मृधो विचर्षणिः ।

दाता राधः स्तुवते काम्यम्, वसु प्रचेतन सः एनम्,

सश्चत् देवो देवम्, सत्यम् इन्द्रम् सत्यः इन्दुः । 3 ॥

2-22-3

मन्त्रार्थ :- **साकम्** = साथ **जातः** = उत्पन्न **क्रतुना** = क्रतु, करने वाले, कर्म द्वारा **साकम्** = साथ **ओजसा** = ओज द्वारा **ववक्षिथ** = पालन, रक्षा किया **साकम्** = साथ **वृद्धो** = वृद्ध **वीर्यैः** = पराक्रमों के साथ, वीरता द्वारा **सासहिः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले **मृधो** = हिंसक, आद्र **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले **दाता** = देने वाला **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **स्तुवते** = स्तुति करने वाले के लिए **काम्यम्** = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **प्रचेतन** = प्रकृष्ट विचार वाले **सः** = वह, उसने **एनम्** = इसको, इसे **सश्चत्** = ज्ञान, प्रगति, प्राप्त हो **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **देवम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण को **सत्यम्** = सत्य को **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **सत्यः** = सत्य **इन्दुः** = इन्दु । 3 ॥

पदार्थ :- **साकम्** = साथ (अव्यय)। **जातः** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **क्रतुना** = क्रतु, करने वाले, कर्म द्वारा (कृ = करना)। **साकम्** = साथ (अव्यय)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **ववक्षिथ** = पालन, रक्षा किया (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना, वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **साकम्** = साथ (अव्यय)। **वृद्धो** = वृद्ध (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **वीर्यैः** = पराक्रमों के साथ, वीरता द्वारा (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **सासहिः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **दाता** = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **स्तुवते** = स्तुति करने वाले के लिए (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **काम्यम्** = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को (कम - चाहना, इच्छा करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **प्रचेतन** = प्रकृष्ट विचार वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **एनम्** = इसको, इसे (सर्वनाम)। **सश्चत्** = ज्ञान, प्रगति, प्राप्त हो (सश्च् = पाना, जानना, जाना)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) **सत्यः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। ॥ 3 ॥

230. तव त्यत् नर्यम् नृतो अपः इन्द्र, प्रथमम् पूर्यम् दिवि प्रवाच्यम् कृतम् ।

यत् देवस्य शवसा प्रारिणा असुम् रिणन् अपः ।

भुवत् विश्वम् अभि अदेवम्, ओजसा विदेत् ऊर्जम्,

शतक्रतुः विदेत् इषम् ॥ 4 ॥ 2-22-4

मन्त्रार्थ - तव = तुम्हारा त्यत् = वह, उसने नर्यम् = नर्य को नृतो = ले जाने वाला, नचाने वाला अपः = पालन करने वाला, पालक, रक्षक इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली प्रथमम् = प्रथम को पूर्यम् = पहले, पूर्व दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में प्रवाच्यम् = प्रकृष्ट वाणी को, प्रकृष्ट विद्वान् को कृतम् = कृतित्व, किया हुआ यत् = जो देवस्य = विद्वान्, तेजस्वी, देव का शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा प्रारिणा = व्याप्त होते हुए असुम् = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न करने वाले को रिणन् = शब्द करते हुए अपः = पालन करने वाला, पालक, रक्षक भुवत् = होता है विश्वम् = विश्व, सभी, सब को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अदेवम् = अदेव, अविद्वान् को ओजसा = ओज द्वारा विदेत् = जाने, प्राप्त हो ऊर्जम् = ऊर्जा को शतक्रतुः = सैकड़ों कर्म करने वाला विदेत् = जाने, प्राप्त हो इषम् = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को ॥ 4 ॥

पदार्थ - तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। त्यत् = वह, उसने (सर्वनाम)। नर्यम् = नर्य को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। नृतो = ले जाने वाला, नचाने वाला (नृ- ले जाना, नृत - नाचना, नृत्य करना)। अपः = पालन करने वाला, पालक, रक्षक (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। प्रथमम् = प्रथम को (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। पूर्यम् = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। प्रवाच्यम् = प्रकृष्ट वाणी को, प्रकृष्ट विद्वान् को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वच - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। कृतम् = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। यत् = जो (सर्वनाम)। देवस्य = विद्वान्, तेजस्वी, देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। प्रारिणा = व्याप्त होते हुए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, अर्-ऋ- गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रिण- शब्द करना, अल्प होना, चूर्ण होना)। असु = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न करने वाला (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। रिणन् = शब्द करते हुए (रिण- शब्द करना, अल्प होना, चूर्ण होना)। अपः = पालन करने वाला, पालक, रक्षक (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। भुवत् = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। विश्वम् = विश्व, सभी, सब को (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अदेवम् = अदेव, अविद्वान् को (अ - नहीं, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। विदेत् = जाने, प्राप्त हो (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। ऊर्जम् = ऊर्जा को (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। शतक्रतुः = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। विदेत् = जाने, प्राप्त हो (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। इषम् = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 4 ॥

अनुवाकः- 28

(66) सूक्त 35

231. सम् अन्याः यन्ति उपयन्ति अन्याः, समानम् ऊर्वम् नद्यः पूणन्ति ।

तम् उ शुचिम् शुचयो दीदिवांसम्, अपाम् नपातम् परि तस्थुः आपः ॥ 3 ॥ 2-35-3

मन्त्रार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अन्या** = अन्य, कोई और, इतर **यन्तिः** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **उपयन्ति** = निकट गमन अथवा उपनियमन **अन्याः** = अन्य, कोई और, इतर **समानम्** = समान **ऊर्वम्** = ऊर्व को, हिंसक को **नद्यः** = नदियाँ **पृणन्ति** = पालन, पूर्ण करते हैं **तम्** = उसको, उसे **उ** = निश्चय ही, भी **शुचिम्** = पवित्र को **शुचयो** = पवित्र **दीदिवांसम्** = प्रकाश करने वालों को **अपाम्** = अपा, रक्षा, पालन को **नपातम्** = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को **परि** = परे, सभी ओर, साथ **तस्थुः** = स्थित हैं **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक ॥ 3 ॥

पदार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अन्या** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **यन्तिः** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **उपयन्ति** = निकट गमन अथवा उपनियमन (उप - समीप, या - जाना, यम् - नियमन करना, नियन्त्रण करना)। **अन्याः** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **ऊर्वम्** = ऊर्व को, हिंसक को (उर्व - हिंसा करना, सहन करना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **नद्यः** = नदियाँ (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **पृणन्ति** = पालन, पूर्ण करते हैं (पृ - पूर्ण करना, पालन करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **शुचिम्** = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शुचयो** = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **दीदिवांसम्** = प्रकाश करने वालों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **नपातम्** = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को (नप - पहुँचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। **परि** = परे, सभी ओर, साथ (उपसर्ग)। **तस्थुः** = स्थित हैं (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना) ॥ 3 ॥

(67) सूक्त 41

232. नियुत्वान् वायो आगहि, अयम् शुक्रो अयामि ते।

गन्ता असि सुन्वतो गृहम् ॥ 2 ॥

2-41-2

मन्त्रार्थ - नियुत्वान् = नियुक्त किया, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त किया **वायो** = हे वायु, हे प्रवाहमान **आगहि** = प्राप्त, गति, ज्ञान, घना करें **अयम्** = यह **शुक्रो** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **अयामि** = प्राप्त करता हूँ **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **गन्ता** = गतिमान, जाने वाले **असि** = हो **सुन्वतो** = स्नान करने वाले, सवन करने वाले **गृहम्** = गृह, घर को ॥ 2 ॥

पदार्थ - नियुत्वान् = नियुक्त किया, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त किया (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, यु - मिलाना, युक्त करना, जोड़ना, अलग करना)। **वायो** = हे वायु, हे प्रवाहमान (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आगहि** = प्राप्त, गति, ज्ञान, घना करें (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **शुक्रो** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **अयामि** = प्राप्त करता हूँ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जाना, जानना, पाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **गन्ता** = गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **सुन्वतो** = स्नान करने वाले, सवन करने वाले (सु - ऐश्वर्य होना,

उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। गृहम् = गृह, घर को (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना) ॥ 6 ॥

233. अयम् वाम् मित्रावरुणा, सुतः सोम ऋतावृधा ।

मम् इत् इह श्रुतम् हवम् ॥ 4 ॥ 2-41-4

मन्त्रार्थ :- मित्रा-वरुणा - हे मित्र और वरुण, अयम् - यह, सुतः - उत्पन्न, ऋता-वृधा - ऋत द्वारा वर्धित, ऋत को वर्धित करने वाले, सोम - ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, उत्पत्तिकर्ता, वाम् - तुमको, मम - मेरा, इत् - ही, इह - यहाँ, श्रुतम् - सुना हुआ, हवम् - आह्वान (है) ॥ 4 ॥

भावार्थ :- सोम अर्थात् रचनाशीलता, सृजन-शक्ति को सुत अर्थात् उत्पन्न किया जाता है। मित्र और वरुण अर्थात् स्नेही और वरणीय को मित्र और वरुण के द्वारा और मित्र और वरुण के लिए ही चाहते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह। वाम् = तुम दोनों को। मित्रावरुणा = मित्र और वरुण (श्रेष्ठ जन) (मिद - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, नरम होना, मृदुल होना, वृ - वरण करना, आच्छादन करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। ऋतावृधा = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। मम = मेरा। इत् = ही। इह = इसमें, यहां। श्रुतम् = सुना हुआ (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। हवम् = आह्वान को, दान को (ह्वे - आह्वान करना, पुकारना, शब्द करना, हु = देना, आदान-प्रदान करना) ॥ 4 ॥

234. राजानौ अनभिद्रुहा, ध्रुवे सदसि उत्तमे ।

सहस्रस्थूणे आशाते ॥ 5 ॥ 2-41-5

मन्त्रार्थ :- राजानौ = राजा-युगल अनभिद्रुहा = अद्वेषी, अहिंसक ध्रुवे = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील सदसि = सभा में, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य में उत्तमे = श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा में सहस्रस्थूणे = हजार स्थानों में आशाते = आशा करता है, व्यापक करता है, संयुक्त करता है ॥ 5 ॥

पदार्थ :- राजानौ = राजा-युगल (राज - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। अनभिद्रुहा = अद्वेषी, अहिंसक (अन् - नहीं, अभि = सभी ओर, द्रुह - द्वेष करना, मारने के लिए प्रयत्न करना)। ध्रुवे = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। सदसि = सभा में, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। उत्तमे = श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा में (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। सहस्रस्थूणे = हजार स्थानों में (सहस्र = हजार (संख्या), स्था - स्थित होना, ठहरना)। आशाते = आशा करता है, व्यापक करता है, संयुक्त करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शास् = आशीर्वाद देना, देना, भला चाहना, आशा करना) ॥ 5 ॥

235. ता सम्राजा घृतासुती, आदित्या दानुनः पती ।

सचेते अनवह्वरम् ॥ 6 ॥ 2-41-6

मन्त्रार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनों सम्राजा = सम्यक् प्रकाशमान घृता-सुती = घृत को उत्पन्न वाले आदित्या = अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न दानुनः = दानी पती = पति, अधिपति, रक्षक, पालक सचेते = सेवा करते हैं अनवह्वरम् = अकुटिल, अनाच्छादित को ॥ 6 ॥

पदार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनों (सर्वनाम)। सम्राजा = सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। घृता-सुती = घृत को उत्पन्न वाले (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, सु -

उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आदित्या** = अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **दानुनः** = दानी (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **पती** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **सचेते** = सेवा करते हैं (सच् - सेवा करना, सन्तुष्ट करना, सींचना, पूर्णतया समझना, सम्बन्धी होना)। **अनवहवरम्** = अकुटिल, अनाच्छादित को (अन् - नहीं, अव - नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय), हवृ - वक्र होना, टेढ़ा होना, बांका होना, निवास करना, आच्छादन करना) ॥ 6 ॥

236. इन्द्रो अङ्ग महत् भयम्, अभीषत् अप चुच्यवत्।

स हि स्थिरो विचर्षणिः ॥ 10 ॥ 2-41-10

मन्त्रार्थ - **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **अङ्ग** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला **महत्** = महान् **भयम्** = भय को **अभीषत्** = डराया **अप** = दूर, नीचे, अपकार **चुच्यवत्** = चुच्य के समान, स्नान योग्य, मथने, काटने के समान **स** = सहित, साथ **हि** = ही, निश्चय **स्थिरो** = स्थिर **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले ॥ 7 ॥

पदार्थ - **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अङ्ग** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ्ग = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **महत्** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **भयम्** = भय को (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **अभीषत्** = डराया (भी - डरना, घबराना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **चुच्यवत्** = चुच्य के समान, स्नान योग्य, मथने, काटने के समान (चुच-चुच्य - अर्क निकालना, स्नान करना, मथना, काटना, अर्क निकालना)। **स** = सहित, साथ (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **स्थिरो** = स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना) ॥ 7 ॥

इति द्वितीय मण्डल

तृतीय मण्डल

अनुवाक:- 29

(68) सूक्त 5

237. पाति प्रियम् रिपो अग्रम् पदम् वेः, पाति यद्वः चरणम् सूर्यस्य ।

पाति नाभा सप्तशीर्षणम् अग्निः, पाति देवानाम् उपमादम् ऋष्यः ॥ 5 ॥ 3-5-5

मन्त्रार्थ - पाति = पालन करता है प्रियम् = प्रिय रिपो = रिप्त को, प्रगतिशील को अग्रम् = अग्र, आगे पदम् = पद को वेः = बनाते हो, जानते हो पाति = पालन करता है यद्वः = महान् चरणम् = विचरण करने वाले को सूर्यस्य = सूर्य का पाति = पालन करता है नाभा = नाभि में सप्तशीर्षणम् = सप्तशीर्ष का अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् पाति = पालन करता है देवानाम् = देवों का उपमादम् = उपमान, निकट मान-मापन ऋष्यः = ऋषि, विद्वान् ॥

पदार्थ - पाति = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। प्रियम् = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। रिपो = रिप्त को, प्रगतिशील को (रिप = जाना)। अग्रम् = अग्र, आगे (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पदम् = पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। वेः = बनाते हो, जानते हो (वे = बुनना, वी = जानना, पाना)। पाति = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। यद्वः = महान् (यद्-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। चरणम् = विचरण करने वाले को (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। सूर्यस्य = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। पाति = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। नाभा = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। सप्तशीर्षणम् = सप्तशीर्ष का (सप्त = सात (संख्या, शीर्ष = शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पाति = पालन करता है (पा = रक्षा करना, पालन करना)। देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। उपमादम् = उपमान, निकट मान-मापन (उप- समीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। ऋष्यः = ऋषि, विद्वान् (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना) ॥ 5 ॥

(69) सूक्त 6

238. इडाम् अग्ने पुरुदंसम् सनिम् गोः, शश्वत्तम् हवमानाय साध ।

स्यात् नः सूनुः तनयो विजावा, अग्ने सा ते सुमतिः भूतु अस्मै ॥ 11 ॥ 3-6-11

मन्त्रार्थ- इडाम् = इडा को, स्तुत, स्तुति योग्य को अग्ने = हे अग्नि पुरुदंसम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी, इसने वालों द्वारा, काटने वालों द्वारा, देखने वालों द्वारा, बोलने वालों द्वारा सनिम् = दानी गोः = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक शश्वत्तम् = अत्यन्त शश्वत हवमानाय = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य साध = साधु के लिए स्यात् = हो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सूनुः = सन्तान तनयो = विस्तार, तनय को विजावा = विशेष रूप से प्रकाशित कर अग्ने = हे अग्नि सा = वह ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुमतिः = सुमति, सुबुद्धि भूतु = उत्पन्न हों अस्मै = इसके लिए, हमको, इस ॥ 11 ॥

पदार्थ - इडाम् = इडा को, स्तुत, स्तुति योग्य को (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति

करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुदंसम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी, डसने वालों द्वारा, काटने वालों द्वारा, देखने वालों द्वारा, बोलने वालों द्वारा (पु - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, दंस - डसना, काटना, देखना, शब्द करना)। **सनिम्** = दानी (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **गोः** = शब्द करने वाला, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत (शश्व - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **हवमानाय** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **साध** = साधु के लिए (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **स्यात्** = हो (अस् = होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सूनुः** = सन्तान (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **तनयो** = विस्तार, तनय को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **विजावा** = विशेष रूप से प्रकाशित कर (वि - विशेष, चृत् - एकत्र करना, गूँथना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सा** = वह (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुमतिः** = सुमति, सुबुद्धि (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **भूतु** = उत्पन्न हों (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अस्मै** = इसके लिए, हमको, इस (सर्वनाम) ॥ 11 ॥

(70) सूक्त 9

239. सखायः त्वा ववृमहे, देवम् मर्त्तास ऊतये ।

अपान्नपातम् सुभगम्, सुदंससम् सुप्रतूर्तिम् अनेहसम् ॥ 1 ॥ 3-9-1

मन्त्रार्थ - सखायः = मित्र त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा ववृमहे = वरण करते हैं देवम् = देव को मर्त्तास = मरणशील ऊतये = रक्षा के लिए अपान्नपातम् = अपान रक्षा, पालन को सुभगम् = अच्छी सेवा, भजन को सुदंससम् = डसने, देखने, बोलने को सुप्रतूर्तिम् = अच्छी तीव्रगति को अनेहसम् = इच्छा-चेष्टा-हीन, प्रयत्न न करने वाला ॥ 1 ॥

पदार्थ - सखायः = मित्र (सख् = मित्र होना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। ववृमहे = वरण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। मर्त्तास = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। अपान्नपातम् = अपान रक्षा, पालन को (अ - नहीं, पा-पान - पीना, पान करना, अप - पालन करना, अन - जीना, समर्थ होना, जाना, पा = रक्षा करना, पालन करना)। सुभगम् = अच्छी सेवा, भजन को (सु - सुन्दर, अच्छा, भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। सुदंससम् = डसने, देखने, बोलने को (सु - सुन्दर, अच्छा, दंस - डसना, काटना, देखना, शब्द करना)। सुप्रतूर्तिम् = अच्छी तीव्रगति को (सु - सुन्दर, अच्छा, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना, तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना)। अनेहसम् = इच्छा-चेष्टा-हीन, प्रयत्न न करने वाला (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, ईह - चेष्टा, इच्छा, प्रयत्न करना) ॥ 1 ॥

240. कायमानो वना त्वम्, यत् मातृः अजगन् अपः ।

न तत् ते अग्ने प्र मृषे निवर्त्तनम्, यत् दूरे सन् इह आभवः ॥ 2 ॥ 3-9-2

मन्त्रार्थ - कायमानो = स्तुति, प्रशंसा, स्तोता, स्तुति करने वाला वना = शब्द त्वम् = तुम यत् = जिसे, जो मातृः

= माता **अजगन्** = जगत् का, संसार का, गतिशील का **अपः** = पालन करने वाला **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **तत्** = वह, उस को **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **अग्ने** = हे अग्नि **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मृषे** = मृष्ट, सहनशील, क्षमाशील, विचारशील के लिए **निवर्त्तनम्** = वरण को **यत्** = जिसे, जो **दूरे** = दूर **सन्** = ही **इह** = इसमें, यहां, यह **अभवः** = हो गया ॥ 2 ॥

पदार्थ - **कायमानो** = स्तुति, प्रशंसा, स्तोता, स्तुति करने वाला (कै-काय् - शब्द करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **वना** = शब्द (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **मातुः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अजगन्** = जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **अपः** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मृषे** = मृष्ट, सहनशील, क्षमाशील, विचारशील के लिए (मृष - सहन करना, क्षमा करना, मृश - विचार करना, स्पर्श करना, देखना)। **निवर्त्तनम्** = वरण को (निः - विना, बाहर, निश्चित, वृत् = रहना, होना, वर्ताव करना, चमकना, बोलना, वरण करना, सेवा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दूरे** = दूर (अव्यय)। **सन्** = ही। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **अभवः** = हो गया (आ - समन्तात्, पूर्णतः, भू - होना) ॥ 2 ॥

(71) सूक्त 10

241. प्र होत्रे पूर्वम् वचो, अग्नये भरता बृहत्।

विपाम् ज्योतीषि बिभ्रते न वेधसे ॥ 5 ॥ 3-10-5

मन्त्रार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **होत्रे** = दानी, दानकर्ता में **पूर्वम्** = पहले, पूर्व **वचो** = वचन को **अग्नये** = अग्नि के लिए **भरता** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को **ज्योतीषि** = प्रकाश **बिभ्रते** = भरण, धारण करने के लिए **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **वेधसे** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए ॥ 5 ॥

पदार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **होत्रे** = दानी, दानकर्ता में (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पूर्वम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **वचो** = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **भरता** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **ज्योतीषि** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **बिभ्रते** = भरण, धारण करने के लिए (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वेधसे** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) ॥

242. अग्ने यजिष्ठो अध्वरे, देवान् देवयते यज।

होता मन्द्रो वि राजसि अति स्निधः ॥ 7 ॥ 3-10-7

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि **यजिष्ठो** = यजिष्ठ, अतिशय यजन करने वाला **अध्वरे** = अहिंसक में **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **देवयते** = देवयत्न के लिए **यज** = यजन करो **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले **मन्द्रो** = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले **वि** = विशेष, विना, विलोम **राजसि** = प्रकाशित होता है **अति**

= बहुत, अत्यधिक **स्निधः** = स्निध ॥ 7 ॥

पदार्थ -अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यजिष्ठो** = यजिष्ठ, अतिशय यजन करने वाला (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवयते** = देवयत्न के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, (यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **यज** = यजन करो (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **होता** = आद्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मन्द्रो** = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राजसि** = प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **स्निधः** = स्निध (सृधु - मर्दन करना, सम्पीडन करना, सृ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, सृ = जाना, जानना, पाना) ॥ 7 ॥

(72) सूक्त 11

243. अदाभ्यः पुरः एता, विशाम् अग्निः मानुषीणाम्।

तूर्णी रथः सदा नवः ॥ 5 ॥

3-11-5

मन्त्रार्थ :- अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए **पुरः** = पहले **एता** = ये **विशाम्** = विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **मानुषीणाम्** = मानुषियों, मनन करने वालों का **तूर्णी** = शीघ्रकारी **रथः** = रथ **सदा** = सदा, सर्व काल में **नवः** = नौ ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना, आज्ञा देना, दा - देना)। **पुरः** = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। **एता** = ये (सर्वनाम)। **विशाम्** = विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मानुषीणाम्** = मानुषियों, मनन करने वालों का (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **तूर्णी** = शीघ्रकारी (तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **रथः** = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **नवः** = नौ (संख्या) ॥

244. साह्वान् विश्वा अभियुजः, क्रतुः देवानाम् अमृक्तः।

अग्निः तुविश्रवस्तमः ॥ 6 ॥

3-11-6

मन्त्रार्थ :- साह्वान् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अभियुजः** = अभियुक्त, संयुक्त, वियुक्त करने वाला **क्रतुः** = क्रतु, करने वाला **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का **अमृक्तः** = अमार्जित, अमार्जनीय **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **तुविश्रवस्तमः** = उत्तम, विद्वान्, उत्तम श्रवणशील, उत्तम प्रगतिशील ॥ 6 ॥

पदार्थ :- साह्वान् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अभियुजः** = अभियुक्त, संयुक्त, वियुक्त करने वाला (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **क्रतुः** = क्रतु, करने वाला (कृ = करना)। **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना,

स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अमृतः** = अमार्जित, अमार्जनीय (अ - नहीं, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तुविश्रवस्तमः** = उत्तम, विद्वान्, उत्तम श्रवणशील, उत्तम प्रगतिशील (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, सु - अच्छा, सुन्दर, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 6 ॥

245. अभि प्रयांसि वाहसा, दाश्वान् अश्नोति मर्त्यः ।

क्षयम् पावकशोचिषः ॥ 7 ॥ 3-11-7

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्रयांसि** = प्रयाणों को **वाहसा** = वहन करने वाले **दाश्वान्** = दानी **अश्नोति** = व्याप्त करता है, व्यापक होता है, प्राप्त करता है **मर्त्यः** = मरणशील **क्षयम्** = निवास को **पावकशोचिषः** = पावक पवित्रता वाले ॥ 7 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रयांसि** = प्रयाणों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **वाहसा** = वहन करने वाले (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **दाश्वान्** = दानी (दश् = देना)। **अश्नोति** = व्याप्त करता है, व्यापक होता है, प्राप्त करता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **क्षयम्** = निवास को (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **पावकशोचिषः** = पावक पवित्रता वाले (पू - पवित्र करना, पवित्र होना, शुच = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना) ॥ 7 ॥

(73) सूक्त 12

246. इन्द्राग्नी आ गतम् सुतम्, गीर्भिः नभो वरेण्यम् ।

अस्य पातम् धिया इषिता ॥ 1 ॥ 3-12-1

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी - इन्द्र और अग्नि **आ-गतम्** - आ गये **सुतम्** - उत्पन्न किया हुआ, ऐश्वर्यवान् **गीर्भिः** - वाणियों द्वारा, वचनों द्वारा **नभो** - नभ **वरेण्यम्** - वरणीय, वरण करने योग्य **अस्य** - इसका **पातम्** - पालित, रक्षित **धिया** - बुद्धि द्वारा **इषिता** - इच्छित, प्राप्त, ज्ञानी ॥ 1 ॥

भावार्थ :- इन्द्र और अग्नि अर्थात् ऐश्वर्य तथा गति, ज्ञान, अग्रता, उच्चता हमारे लिए दिव्य गुण भी हैं तथा दिव्य शक्तियाँ भी। सुत अर्थात् सुन्दर ऐश्वर्य-प्रद वाणी से आते हैं। वे हमारे लिए वरेण्य हैं, वरणीय हैं, अपनाने योग्य हैं।

पदार्थ :- **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना)। **आगतम्** = आ गये (आ - उपसर्ग, गम् - जाना, आ-गम् - आना), **सुतम्** = उत्पन्न किया हुआ, ऐश्वर्यवान् (सु = अच्छा, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। **गीर्भिः** - वाणियों द्वारा, वचनों द्वारा (गृ - सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना)। **नभो** = नभ (नभ = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। **वरेण्यम्** = वरण योग्य (वृ - वरण करना)। **अस्य** = इसका। **पातम्** = रक्षित (पा = रक्षा करना)। **धिया** = बुद्धि से। **इषिता** - इच्छित, प्राप्त, ज्ञानी (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 1 ॥

247. इन्द्राग्नी जरितुः सचा, यज्ञो जिगाति चेतनः ।

अया पातम् इमम् सुतम् ॥ 2 ॥ 3-12-2

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि **जरितुः** = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **यज्ञो** = यजन **जिगाति** = स्तुति करता है **चेतनः** = चेतन, चुना गया, एकत्र **अया** = लाये **पातम्** = रक्षा करो, पालन करो **इमम्** = इसको **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **जरितुः** = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **यज्ञो** = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **जिगाति** = स्तुति करता है (गा - जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **चेतनः** = चेतन, चुना गया, एकत्र (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **अया** = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **पातम्** = रक्षा करो, पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 2 ॥

248. इन्द्रम् अग्निम् कविच्छदा, यज्ञस्य जूत्या वृणे ।

ता सोमस्य इह तृप्ताम् ॥ 3 ॥ 3-12-3

मन्त्रार्थ :- इन्द्रम् = इन्द्र को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **कविच्छदा** = वाणी को आच्छादित करने वाले, कवि-आच्छादन **यज्ञस्य** = यजन का **जूत्या** = वेगवान् द्वारा, चंचल द्वारा **वृणे** = वरण करते हैं **ता** = वे, वह, वे दोनों **सोमस्य** = सोम का **इह** = इसमें, यहां, यह **तृप्ताम्** = संतृप्त करें, शान्त करें ॥ 3 ॥

पदार्थ :- इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **कविच्छदा** = वाणी को आच्छादित करने वाले, कवि-आच्छादन (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना, छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना)। **यज्ञस्य** = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **जूत्या** = वेगवान् द्वारा, चंचल द्वारा (जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **वृणे** = वरण करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **ता** = वे, वह, वे दोनों (सर्वनाम)। **सोमस्य** = सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **तृप्ताम्** = संतृप्त करें, शान्त करें (तृप् - तृप्त होना या करना, शान्त होना, प्रेम करना) ॥ 3 ॥

249. तोशा वृत्रहणा हुवे, सजित्वाना अपराजिता ।

इन्द्राग्नी वाजसातमा ॥ 4 ॥ 3-12-4

मन्त्रार्थ :- तोशा = तुष्ट करने वाला **वृत्रहणा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **सजित्वाना** = विजयी, विजय के साथ, सम्बन्ध युक्त **अपराजिता** = अपराजित, पराजित न हुए **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि **वाजसातमा** = अत्यन्त विद्यावान् वाले ॥ 4 ॥

पदार्थ :- तोशा = तुष्ट करने वाला (तुष् - सन्तुष्ट करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना)। **वृत्रहणा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सजित्वाना** = विजयी, विजय के साथ, सम्बन्ध युक्त (स - साथ, सहित, सज्, संज = सम्बन्धी होना, आलिंगन करना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **अपराजिता** = अपराजित, पराजित न हुए (अ - नहीं, परा - अन्य, जि - जीतना, जय होना, अप = दूर, नीचे, अपकार, राज - प्रकाश होना, चमकना)। **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **वाजसातमा** = अत्यन्त विद्यावान् वाले (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना,

पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 4 ॥

250. प्र वाम् अर्चन्ति उक्थिनो, नीथाविदो जरितारः ।

इन्द्राग्नी इषः आ वृणे ॥ 5 ॥ 3-12-5

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वाम् = तुम दोनों को अर्चन्ति = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं उक्थिनो = कथनशील, कहने वाले नीथाविदो = विद्वान्, मार्गदर्शक जरितारः = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि इषः = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वृणे = वरण करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। अर्चन्ति = पूजा करते हैं, सम्मान करते हैं (अर्च - पूजा करना, मान करना)। उक्थिनो = कथनशील, कहने वाले (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। नीथाविदो = विद्वान्, मार्गदर्शक (नी - ले जाना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। जरितारः = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। इषः = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वृणे = वरण करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना) ॥

251. इन्द्राग्नी नवतिम् पुरो, दासपत्नीः अधूनुतम् ।

साकम् एकेन कर्मणा ॥ 6 ॥ 3-12-6

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि नवतिम् = नब्बे को, स्तुतियों को पुरो = पहले दासपत्नीः = दासपत्नी, दानी ऐश्वर्यवती अधूनुतम् = कम्पित किया, क्षोभित किया साकम् = साथ एकेन = एक द्वारा कर्मणा = कर्म द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। नवतिम् = नब्बे को, स्तुतियों को (संख्या, नु-नव - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। पुरो = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। दासपत्नीः = दासपत्नी, दानी ऐश्वर्यवती (दास् - काटना, दान करना, सेवा करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। अधूनुतम् = कम्पित किया, क्षोभित किया (धूनु - कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। साकम् = साथ (अव्यय)। एकेन = एक द्वारा (एक = एक, दश - दस, एकादश - ग्यारह संख्या)। कर्मणा = कर्म द्वारा (कृ - करना) ॥ 6 ॥

252. इन्द्राग्नी अपसः परि, उप प्र यन्ति धीतयः ।

ऋतस्य पथ्याः अनु ॥ 7 ॥ 3-12-7

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि अपसः = पालनकर्ता परि = सभी तरफ उप = समीप प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले ऋतस्य = ऋत का पथ्याः = पथ्य, पाथेय अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल ॥ 7 ॥

पदार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। अपसः = पालनकर्ता (अप = पालन करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। उप = समीप (उपसर्ग)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। पथ्याः = पथ्य, पाथेय (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग) ॥ 7 ॥

253. इन्द्राग्नी तविषाणि वाम्, सधस्थानि प्रयांसि च ।

युवोः अप्तूर्यम् हितम् ॥ 8 ॥ 3-12-8

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि तविषाणि = तविषी, गति, वृद्धि, हिंसा, प्रकाशमान वाम् = तुम दोनों को सधस्थानि = सहस्थान, सहगामी, साथ-स्थित प्रयांसि = प्रयाणों को च = और युवोः = तुम दोनों में, तुम दोनों में अप्तूर्यम् = अप्तूर्य को, शीघ्रगामी को हितम् = हित, गति, वृद्धि को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। तविषाणि = तविषी, गति, वृद्धि, हिंसा, प्रकाशमान (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना, त्व - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। सधस्थानि = सहस्थान, सहगामी, साथ-स्थित (सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। प्रयांसि = प्रयाणों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। च = और (अव्यय)। युवोः = तुम दोनों में, तुम दोनों में (सर्वनाम)। अप्तूर्यम् = अप्तूर्य को, शीघ्रगामी को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना, तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना)। हितम् = हित, गति, वृद्धि को (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना) ॥

254. इन्द्राग्नी रोचना दिवः, परि वाजेषु भूषथः ।

तत् वाम् चेति प्र वीर्यम् ॥ 9 ॥ 3-12-9

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि रोचना = प्रकाश दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय परि = सभी तरफ वाजेषु = वाजों, विद्याओं, गतियों में भूषथः = भूषित होते हो तत् = वह, उस को वाम् = तुम दोनों को चेति = चेतन, चुनाव, एकत्र करता है प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वीर्यम् = वीर को ॥ 9 ॥

पदार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। रोचना = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। वाजेषु = वाजों, विद्याओं, गतियों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। भूषथः = भूषित होते हो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। चेति = चेतन, चुनाव, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वीर्यम् = वीर को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 9 ॥

अनुवाकः- 30

(74) सूक्त 16

255. अयम् अग्निः सुवीर्यस्य, ईशे महो सौभगस्य ।

राय ईशे स्वपत्यस्य, गोमत ईशे वृत्रहथानाम् ॥ 1 ॥ 3-16-1

मन्त्रार्थ - अयम् = यह अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् सुवीर्यस्य = उत्तम वीरता का ईशे = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है महो = बड़े, महिमावान्, महान् सौभगस्य = सौभाग्य का राय = गति, विद्या, वाणी ईशे = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है स्वपत्यस्य = स्वपति गोमत = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले ईशे = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है वृत्रहथानाम् =

पदार्थ - अयम् = यह (सर्वनाम)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुवीर्यस्य** = उत्तम वीरता का (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **महो** = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सौभाग्यस्य** = सौभाग्य का (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना)। **राय** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **स्वपत्यस्य** = स्वपति (सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम, स्व = अपना, अप् - पालन करना) पत् - ऐश्वर्य होना)। **गोमत** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **वृत्रहथानाम्** = वृत्रहथा का (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना) ॥ १ ॥

(75) सूक्त 24

256. अग्ने विश्वेभिः अग्निभिः, देवेभिः महय गिरः, यज्ञेषु ये उ चायवः । 4 ॥ 3-24-4

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि विश्वेभिः=सबके द्वारा अग्निभिः = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा देवेभिः = देवों द्वारा महय = महान्, पूज्य, सम्मान करो गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन यज्ञेषु = यजनों में ये = जो उ = निश्चय ही, भी चायवः = चुना गया, एकत्र किया गया ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। विश्वेभिः = सबके द्वारा (सर्वनाम)। अग्निभिः = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। देवेभिः = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। महय = महान्, पूज्य, सम्मान करो (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) यज्ञेषु = यजनों में (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। ये = जो (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी। चायवः = चुना गया, एकत्र किया गया (चि - चुनना, एकत्र करना)। ॥ 4 ॥

(76) सूक्त 26

257. अग्निः अस्मि जन्मना जातवेदाः, घृतम् मे चक्षुः अमृतम् मे आसन् ।

अर्को त्रिधातुः रजसो विमानो, अजस्रः धर्म हविः अस्मि नाम ॥ 7 ॥ 3-26-7

मन्त्रार्थ - अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् अस्मि = हूँ जन्मना = जन्म से, जन्म द्वारा जातवेदाः = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले घृतम् = घृत को, प्रकाशमान को मे = मेरा, मेरे लिए चक्षुः = दृष्टि, वाणी अमृतम् = न मरने वाले, अमर, अमृत को मे = मेरा, मेरे लिए आसन् = बैठे हुए, थे अर्को = अर्क त्रिधातुः = त्रिधातु रजसो = रजस् का विमानो = विशेष मान करने वाला अजस्रः = सतत, निरन्तर धर्म = धर्म हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य अस्मि = हूँ नाम = नाम वाले ॥ 7 ॥

पदार्थ - अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अस्मि = हूँ (सर्वनाम)। जन्मना = जन्म से, जन्म द्वारा (जन् - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। जातवेदाः = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना,

जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। घृतम् = घृत को, प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। मे = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। चक्षुः = दृष्टि, वाणी (चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। अमृतम् = न मरने वाले, अमर, अमृत को (अ - नहीं, मृ = मरना)। मे = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। आसन् = बैठे हुए, थे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। अर्को = अर्क (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। त्रिधातुः = त्रिधातु (त्रि - संख्या, सर्वनाम, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। रजसो = रजस् का (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। विमानो = विशेष मान करने वाला (वि = विशेष, विना, विलोम, मान - मान करना, पूजा करना, ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा करना, शोध करना, सत्कार करना, मनाना, तोलना, तुलना करना, मापना)। अजस्रः = सतत, निरन्तर (सर्वनाम, अव्यय)। धर्म = धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। अस्मि = हूँ (सर्वनाम)। नाम = नाम वाले (अव्यय) ॥ 7 ॥

(77) सूक्त 27

258. होता देवो अमर्त्यः, पुरस्तात् एति मायया ।

विदथानि प्रचोदयन् ॥ 7 ॥ 3-27-7

मन्त्रार्थ :- होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण अमर्त्यः = अमर्त्य पुरस्तात् = पहले एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है मायया = माया द्वारा विदथानि = विद्वान् प्रचोदयन् = प्रेरित करते हुए ॥ 7 ॥

पदार्थ :- होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अमर्त्यः = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। पुरस्तात् = पहले (अव्यय)। एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। मायया = माया द्वारा (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। विदथानि = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। प्रचोदयन् = प्रेरित करते हुए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चुद् = प्रेरणा देना) ॥ 7 ॥

259. वाजी वाजेषु धीयते, अध्वरेषु प्र नीयते ।

विप्रो यज्ञस्य साधनः ॥ 8 ॥ 3-27-8

मन्त्रार्थ :- वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त वाजेषु = वाजों में, बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त में धीयते = धारण करता है अध्वरेषु = अहिंसकों में प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक नीयते = ले जाता है विप्रो = विशेष पूर्ण करने वाले यज्ञस्य = यजन का साधनः = साधन ॥ 8 ॥

पदार्थ :- वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। वाजेषु = वाजों में, बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। धीयते = धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत

होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **अध्वरेषु** = अहिंसकों में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नीयते** = ले जाता है (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मिलना, ले जाना)। **विप्रो** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **यज्ञस्य** = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **साधनः** = साधन (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 8 ॥

260. धिया चक्रे वरेण्यो, भूतानाम् गर्भम् आ दधे ।

दक्षस्य पितरम् तना ॥ 9 ॥ 3-27-9

मन्त्रार्थ :- धिया = धारणा शक्ति, बुद्धि **चक्रे** = किया **वरेण्यो** = वरणीय, वरण करने वाला **भूतानाम्** = भूतों का, उत्पन्न हुआ का **गर्भम्** = गर्भ को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **दधे** = धारण करते हैं **दक्षस्य** = दक्ष का **पितरम्** = पिता को, ज्ञानी को, पालन करने वाले को **तना** = विस्तार करो ॥ 9 ॥

पदार्थ :- धिया = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **चक्रे** = किया (कृ - करना)। **वरेण्यो** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **भूतानाम्** = भूतों का, उत्पन्न हुआ का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **गर्भम्** = गर्भ को (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **दक्षस्य** = दक्ष का (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **पितरम्** = पिता को, ज्ञानी को, पालन करने वाले को (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **तना** = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 9 ॥

261. ईडेन्यो नमस्यः, तिरः तमांसि दर्शतः ।

सम् अग्निः इध्यते वृषा ॥ 13 ॥ 3-27-13

मन्त्रार्थ :- ईडेन्यो = स्तुत्य **नमस्यः** = नमन करने योग्य **तिरः** = पार कराने वाले **तमांसि** = तमस् दर्शतः = देखने वाला, देखने से **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **इध्यते** = गति, ज्ञान, प्रकाश करते हो **वृषा** = पराक्रमी ॥ 13 ॥

पदार्थ :- ईडेन्यो = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **नमस्यः** = नमन करने योग्य (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना, ते - तुम्हारे लिए, तुमको)। **तिरः** = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **तमांसि** = तमस् (तम - इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना, अन्धकार होना)। **दर्शतः** = देखने वाला, देखने से (दृश् - देखना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **इध्यते** = गति, ज्ञान, प्रकाश करते हो (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) ॥

262. वृषो अग्निः समिध्यते, अश्वो न देववाहनः ।

तम् हविष्मन्तः ईडते ॥ 14 ॥ 3-27-14

मन्त्रार्थ :- वृषो = पराक्रमी **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **समिध्यते** = सम्यक् प्रकाशित करते हैं **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **देववाहनः** = देव-वाहन **तम्** = उसको, उसे

हविष्मन्तः = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त **ईडते** = स्तुति करते हैं ॥ 14 ॥

पदार्थ :- वृषो = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **समिध्यते** = सम्यक् प्रकाशित करते हैं (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **देववाहनः** = देव-वाहन (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **हविष्मन्तः** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ईडते** = स्तुति करते हैं (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना) ॥ 14 ॥

263. वृषणम् त्वा वयम् वृषन्, वृषणः समिधीमहि।

अग्ने दीद्यतम् बृहत् ॥ 15 ॥ 3-27-15

मन्त्रार्थ :- वृषणम् = पराक्रमी को **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी **वृषणः** = पराक्रमी **समिधीमहि** = सम्यक् प्रकाशित होते हैं **अग्ने** = हे अग्नि **दीद्यतम्** = प्रकाशित को **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥ 15 ॥

पदार्थ :- वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृषणः** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **समिधीमहि** = सम्यक् प्रकाशित होते हैं (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दीद्यतम्** = प्रकाशित को (द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 15 ॥

(78) सूक्त 29

264. अरण्योः निहितो जातवेदा, गर्भ इव इत् सुभृतो गर्भिणीभिः।

दिवेदिवे ईड्यो जागृवद्भिः, हविष्मद्भिः मनुष्येभिः अग्निः ॥ 2 ॥

3-29-2

मन्त्रार्थ - अरण्योः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त का **निहितो** = निहित, स्थित **जातवेदा** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले **गर्भ** = गर्भ **इव** = समान, की भाँति, के समान **इत्** = ही **सुभृतो** = सुभृत, अच्छी तरह धारण करना **गर्भिणीभिः** = गर्भ द्वारा **दिवेदिवे** = प्रतिदिन **ईड्यो** = स्तुत्य **जागृवद्भिः** = जागृवद् द्वारा **हविष्मद्भिः** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति द्वारा **मनुष्येभिः** = मनुष्यों द्वारा, विचारशीलों द्वारा **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् ॥ 2 ॥

पदार्थ - अरण्योः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त का (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रण - शब्द करना, जाना)। **निहितो** = निहित, स्थित (नि - निरन्तर, निश्चित, हि -

जाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **जातवेदा** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **गर्भ** = गर्भ (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **इत्** = ही (अव्यय)। **सुभृतो** = सुभृत, अच्छी तरह धारण करना (सु = अच्छा, भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **गर्भिणीभिः** = गर्भ में (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **दिवेदिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **ईड्यो** = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **जागृवद्भिः** = जागृवद् द्वारा (जागृ - जगना, नींद न लेना, वद् = कहना, बोलना)। **हविष्मद्भिः** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मनुष्येभिः** = मनुष्यों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 2 ॥

अनुवाकः- 31

(79) सूक्त 30

265. शुनम् हुवेम मघवानम् इन्द्रम्, अस्मिन् भरे नृतमम् वाजसातौ।

शृण्वन्तम् उग्रम् ऊतये समत्सु, घ्नन्तम् वृत्राणि सज्जितम् धनानाम् ॥ 22 ॥ 3-30-22

मन्त्रार्थ - शुनम् = शुन हुवेम = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अस्मिन्** = इस, इसमें **भरे** = भरण करते हैं **नृतमम्** = नरों, उत्तम, श्रेष्ठजन को **वाजसातौ** = गतिमय, विद्वान्, बलवान्। **शृण्वन्तम्** = सुनें **उग्रम्** = उग्र को **ऊतये** = रक्षा के लिए **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में **घ्नन्तम्** = नष्ट करते हैं **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को **सज्जितम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति जीतने वाले, **धनानाम्** = धन को ॥ 22 ॥

पदार्थ - शुनम् = शुन (शुन = जाना)। **हुवेम** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **भरे** = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **नृतमम्** = नरों, उत्तम, श्रेष्ठजन को (नृ - ले जाना)। **वाजसातौ** = गतिमय, विद्वान्, बलवान्, (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **शृण्वन्तम्** = सुनें (शृ - सुनना)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **घ्नन्तम्** = नष्ट करते हैं (हन् - मारना)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **सज्जितम्** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति जीतने वाले, (सम् - सम्यक्, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **धनानाम्** = धन को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 22 ॥

अनुवाक:- 32

(80) सूक्त 40

266. गिर्वणः पाहि नः सुतम्, मधोः धाराभिः अज्यसे ।

इन्द्र त्वादातम् इत् यशः ॥ 6 ॥ 3-40-6

मन्त्रार्थ - गिर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन पाहि = पालन करो, रक्षा करो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को मधोः = मधु का धाराभिः = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा अज्यसे = गतिमान्, वेग से जाने के लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा दातम् = देने वाले को इत् = ही यशः = यश, कीर्ति ॥

पदार्थ - गिर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। पाहि = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। मधोः = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। धाराभिः = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। अज्यसे = गतिमान्, वेग से जाने के लिए (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। दातम् = देने वाले को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। इत् = ही (अव्यय)। यशः = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) ॥ 6 ॥

(81) सूक्त 45

267. आ मन्द्रैः इन्द्र हरिभिः, याहि मयूररोमभिः ।

मा त्वा के चित् नि यमन् विम्, न पाशिनो अति धन्वेव तान् इहि ॥ 1 ॥ 3-45-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मन्द्रैः = स्तुत्यों द्वारा, आनन्दित करने वालों द्वारा, विनाश करने वालों द्वारा इन्द्र = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें मयूररोमभिः = मयूर-रोमों द्वारा, प्रगतिशील विद्वानों द्वारा मा = नहीं, मत त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा के = कौन, कोई चित् = भी, ही नि = निश्चित, निरन्तर यमन् = यमन करने वाला, यमन करता हुआ विम् = विम, गतिवान् न = नहीं, समान, उपमार्थक पाशिनो = पाश वालों का, दिखाने वालों का, बन्धन का अति = बहुत, अत्यधिक धन्वा = गति, शब्द करने वाले इव = समान, की भाँति, के समान तान् = उनको इहि = आओ, जानो ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मन्द्रैः = स्तुत्यों द्वारा, आनन्दित करने वालों द्वारा, विनाश करने वालों द्वारा (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। इन्द्र = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। मयूररोमभिः = मयूर-रोमों द्वारा, प्रगतिशील विद्वानों द्वारा (मयू - जाना, जानना, पाना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। के = कौन, कोई (सर्वनाम)। चित् = भी, ही। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। यमन् = यमन करने वाला, यमन करता हुआ (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। विम् = विम, गतिवान् (वी - जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना)। वय - जाना, स्थानान्तर करना, उड़ना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पाशिनो = पाश वालों का, दिखाने वालों का, बन्धन का (पश् - देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गाँठ बांधना, फाँस लगाना, जाना)। अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। धन्वा = गति, शब्द करने वाले (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगाना)।

इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। तान् = उनको (सर्वनाम)। इहि = आओ, जानो (इ = जाना, जानना, पाना) ॥

268. वृत्रखादो बलम्-रुजः, पुराम् दर्मो अपाम् अजः ।

स्थाता रथस्य हर्योः अभिस्वरे, इन्द्रो दृढा चित् आरुजः ॥ 2 ॥ 3-45-2

मन्त्रार्थ :- वृत्रखादो = वृत्र को मारने वाला, वृत्र-हिंसक बलम् = बल को रुजः = हिंसा करने वाले पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को दर्मो = आदर वाला, विदीर्ण करने वाला अपाम् रक्षक को, अपा को अजः = अज, अजन्मा स्थाता = स्थित रथस्य = रथ का हर्योः = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का अभिस्वरे = अभिस्वर में इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली दृढा = दृढ़ चित् = भी, ही आरुजः = आरोग्यकारी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- वृत्रखादो = वृत्र को मारने वाला, वृत्र-हिंसक (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, खद्-खाद् - खाना, हिंसा करना, स्थिर रहना)। बलम् = बल को (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। रुजः = हिंसा करने वाले (रुज् - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना)। पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पृ - पूर्ण करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। दर्मो = आदर वाला, विदीर्ण करने वाला (दृ - आदर करना, दृ - विदीर्ण करने वाला, हिंसा करना)। अपाम् = रक्षक को (अप - पालन करना)। अजः = अज, अजन्मा (अ - नहीं, जन् = उत्पन्न करना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। स्थाता = स्थित (स्था- स्थित होना, ठहरना)। रथस्य = रथ का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। हर्योः = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। अभिस्वरे = अभिस्वर में (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), स्तु-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। दृढा = दृढ़ (दृद्-दृढ - दृढ़ होना, धारण करना, सहना, समर्थ होना, दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। चित् = भी, ही (अव्यय)। आरुजः = आरोग्यकारी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, रुज - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना, आ-रुज - आरोग्य होना) ॥ 2 ॥

269. गम्भीरान् उदधीन् इव, क्रतुम् पुष्यसि गाः इव ।

प्र सुगोपा यवसम् धेनवो यथा, हृदम् कुल्याः इव आशत ॥ 3 ॥ 3-45-3

मन्त्रार्थ :- गम्भीरान् = गम्भीर, गहन, गहरा उदधीन् = उदधि, उदक, आद्र करने वाले, आद्रक को धारण करने वाला इव = समान, की भाँति, के समान क्रतुम् = कर्म को पुष्यसि = पुष्ट करते हो गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले इव = समान, की भाँति, के समान प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सुगोपा = उत्तम-रक्षक, उत्तम गो के, उत्तम शब्द करने वालों, उत्तम मननशीलों, उत्तम उपदेशकों के पालक-रक्षक यवसम् = सम्बन्धी को धेनवो = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार हृदम् = हृद को कुल्याः = कुल्या, कुल योग्य इव = समान, की भाँति, के समान आशत = अशन करो, भोजन करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- गम्भीरान् = गम्भीर, गहन, गहरा (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। उदधीन् = उदधि, उदक, आद्र करने वाले, आद्रक को धारण करने वाला (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। क्रतुम् = कर्म को (कृ = करना)। पुष्यसि = पुष्ट करते हो (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सुगोपा = उत्तम-रक्षक, उत्तम गो के, उत्तम शब्द करने वालों, उत्तम मननशीलों, उत्तम उपदेशकों के पालक-रक्षक (सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग), गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा

करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **यवसम्** = सम्बन्धी को (यु = मिलाना, अलग करना, सम्बन्धी, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **धेनवो** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **हृदम्** = हृद को (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **कुल्याः** = कुल्या, कुल योग्य (कुल् = आवरण होना, एकत्र करना, बटोरना, अपने के समान वर्तना, सजातीयता से रहना, गिनना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **आशत** = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचाना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचाना) ॥ 3 ॥

(82) सूक्त 51

270. चर्षणीधृतम् मघवानम् उक्थ्याम्, इन्द्रम् गिरो बृहतीः अभ्यनूषत।

वावृधानम् पुरुहूतम् सुवृक्तिभिः, अमर्त्यम् जरमाणम् दिवे-दिवे ॥ 1 ॥ 3-51-1

मन्त्रार्थ - **चर्षणीधृतम्** = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाले को **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को **उक्थ्याम्** = कथनीय को **इन्द्रम्** = इन्द्र को **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **अभ्यनूषत** = अनुताप किया **वावृधानम्** = वृद्धि करने वाले **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को **सुवृक्तिभिः** = सुवृक्ति द्वारा **अमर्त्यम्** = अमर्त्य को **जरमाणम्** = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व आयु वाले **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन ॥ 1 ॥

पदार्थ - **चर्षणीधृतम्** = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाले को (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना, धृ - धारण करना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **उक्थ्याम्** = कथनीय को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अभ्यनूषत** = अनुताप किया (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **वावृधानम्** = वृद्धि करने वाले (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सुवृक्तिभिः** = सुवृक्ति द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, वृक् - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच - हिंसा करना)। **अमर्त्यम्** = अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **जरमाणम्** = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व आयु वाले (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन (अव्यय) ॥ 1 ॥

271. इदम् हि अनु ओजसा, सुतम् राधानाम् पते।

पिबा तु अस्य गर्विणः ॥ 10 ॥

3-51-10

मन्त्रार्थ - **इदम्** = यह, इसको **हि** = ही, निश्चय **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **ओजसा** = ओज द्वारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **राधानाम्** = शुद्ध, निर्दोष, निर्णय, वृद्धि का **पते** = पति **पिबा** = पियो, पान करें **तु** = तो, परन्तु, अब **अस्य** = इसका **गर्विणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन ॥ 10 ॥

पदार्थ - **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **राधानाम्** = शुद्ध, निर्दोष, निर्णय, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **अस्य** = इसका

(सर्वनाम)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना) ॥ 10 ॥

272. यः ते अनु स्वधाम् असत्, सुते नि यच्छ तन्वम्।

सः त्वा ममत्तु सोम्यम् ॥ 11 ॥ 3-51-11

मन्त्रार्थ :- यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल स्वधाम् = स्वधा को असत् = हो जाये सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में नि = निश्चित, निरन्तर यच्छ = दो, प्रदान करो तन्वम् = तन्व को, विस्तार को सः = वह, उसने त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा ममत्तु = आनन्द दे सोम्यम् = सौम्य को ॥ 11 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। स्वधाम् = स्वधा को (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना)। असत् = हो जाये (अस् = होना)। सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। यच्छ = दो, प्रदान करो (यच्छ = देना)। तन्वम् = तन्व को, विस्तार को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। ममत्तु = आनन्द दे (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सोम्यम् = सौम्य को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 11 ॥

273. प्र ते अश्नोतु कुक्ष्योः, प्र इन्द्र ब्रह्मणा शिरः।

प्र बाहू शूर राधसा ॥ 12 ॥ 3-51-12

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अश्नोतु = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त हों कुक्ष्यो = पूर्ण करने वाले, भरने वाले प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली ब्रह्मणा = ब्रह्म का, विराट, महान् का शिरः = शिर प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक बाहू = भुजा, हाथ, प्रयास करने वाले युगल शूर = वीर, पराक्रमी राधसा = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा ॥ 12 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अश्नोतु = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त हों (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। कुक्ष्यो = पूर्ण करने वाले, भरने वाले (कुक्ष् - = पूर्ण करना, भरना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ब्रह्मणा = ब्रह्म का, विराट, महान् का (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। शिरः = शिर (शिर - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। बाहू = भुजा, हाथ, प्रयास करने वाले युगल (बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। शूर = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। राधसा = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना) ॥ 12 ॥

(83) सूक्त 52

274. धानावन्तम् करम्भिणम्, अपूपवन्तम् उक्थिनम्।

इन्द्र प्रातः जुषस्व नः ॥ 1 ॥ 3-52-1

मन्त्रार्थ - धानावन्तम् = धारण, गति, शब्द युक्त करम्भिणम् = करम्भी को, कर्म के प्रकाश युक्त को अपूपवन्तम् = पालक-रक्षक को, अपावन को उक्थिनम् = उक्ति, कथन वाले को इन्द्र = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान

प्रातः = प्रातः जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - धानावन्तम् = धारण, गति, शब्द युक्त (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना, धन - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। करम्भिणम् = करम्भी को, कर्म के प्रकाश युक्त को (कृ - करना, भा - प्रकाश करना, भृ - भरण करना, भरना)। अपूपवन्तम् = पालक-रक्षक को, अपावन को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। उक्थिनम् = उक्ति, कथन वाले को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। इन्द्र = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। प्रातः = प्रातः (अव्यय)। जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

(84) सूक्त 53

275. इन्द्रापर्वता बृहता रथेन, वामीः इषः आ वहतम् सुवीराः ।

वीतम् हव्यानि अध्वरेषु देवा, वर्धेथाम् गीर्भिः इडया मदन्ता ॥ 1 ॥ 3-53-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रापर्वता = इन्द्र और पर्वत, परम ऐश्वर्य को पूर्ण करने वाले बृहता = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् रथेन = रथ से वामीः = वाम, जानने, पाने इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वहतम् = वहन करें सुवीराः = अच्छे वीर, सुवीर वीतम् = व्याप्त, प्राप्त करते हैं हव्यानि = दान योग्य अध्वरेषु = अहिंसकों में देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने वर्धेथाम् = बढ़ाओ गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा इडया = स्तुति द्वारा मदन्ता = हर्षित, तृप्त हों ॥ 1 ॥

पदार्थ - इन्द्रापर्वता = इन्द्र और पर्वत, परम ऐश्वर्य को पूर्ण करने वाले (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, पर्व - पूर्ण करना, भरना)। बृहता = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। रथेन = रथ से (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। वामीः = वाम, जानने, पाने (वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना)। इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति (इष - चबाना, बीनना, एक-एक दाना चुनना, छानना, इच्छा करना, चाहना। इष - जाना। इष - निरन्तर देखना, करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वहतम् = वहन करें (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। सुवीराः = अच्छे वीर, सुवीर (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। वीतम् = व्याप्त, प्राप्त करते हैं (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। हव्यानि = दान योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। अध्वरेषु = अहिंसकों में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। वर्धेथाम् = बढ़ाओ (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। इडया = स्तुति द्वारा (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। मदन्ता = हर्षित, तृप्त हों (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 33

(85) सूक्त 62

276. तत् सवितुः वरेण्यम्, भर्गो देवस्य धीमहि ।

धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ 10 ॥ 3-62-10

मन्त्रार्थ : तत् उस सवितुः उत्पन्न करने वाले वरेण्यम् वरणीय भर्गो भरण पोषण करने वाले देवस्य देव का धीमहि ध्यान करते हैं, धियो धारण करते हैं। यो जो नः हमें प्रचोदयात् प्रेरणा दे ॥ 10 ॥

भावार्थ : परमात्मा सबको उत्पन्न करने वाला है। वही वरण करने योग्य है। वही सृष्टि को धारण करता है, सबका भरण-पोषण करता है। हम उस देव का ध्यान कर उसे अपने हृदय में धारण करते हैं। हृदय में बसाया हुआ परमात्मा हमें प्रेरणा देता है। यदि परमात्मा को हृदय में धारण कर लें, उसे सदा अपने साथ अनुभव करते रहें तो हमें दिव्य आध्यात्मिक प्रेरणा प्राप्त होती रहेगी और हमारे सभी कार्य सुचारु रूप से सही दिशा में होंगे ॥ 10 ॥

पदार्थ : तत् = वह। सवितुः = उत्पन्न करने वाले (सु - उत्पन्न करना)। वरेण्यम् = वरण योग्य (वृ - पसन्द करना, वरण करना)। भर्गो = भरण, पोषण करने वाला (भृ = भरण, पोषण)। देवस्य = देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना)। धीमहि = धारण करते हैं (धि = धारण करना)। धियो = धारणा करते (धि = धारण करना)। यो = जो। नः = हमारा। प्रचोदयात् = प्रेरित करे (चुद् = प्रेरणा देना) ॥ 10 ॥

277. आ नो मित्रावरुणा, घृतैः गव्यूतिम् उक्षतम्।

मध्वा रजांसि सुक्रतू ॥ 16 ॥ 3-62-16

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मित्रावरुणा = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय घृतैः = अभिसिञ्चितों प्रकाशितों द्वारा गव्यूतिम् = गव्यूति को, बोलने योग्य वाणी बोलने वाले को उक्षतम् = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला मध्वा = मधु द्वारा रजांसि = लोकों को, रजः को सु-क्रतू = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता ॥ 16 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मित्रावरुणा = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। घृतैः = अभिसिञ्चितों प्रकाशितों द्वारा (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। गव्यूतिम् = गव्यूति को, बोलने योग्य वाणी बोलने वाले को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, उ - सुखाना, शोषण करना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना)। उक्षतम् = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। मध्वा = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। रजांसि = लोकों को, रजः को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। सु-क्रतू = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना) ॥ 16 ॥

278. उरुशंसा नमोवृधा, महना दक्षस्य राजथः।

द्राघिष्ठाभिः शुचिव्रता ॥ 17 ॥ 3-62-17

मन्त्रार्थ :- उरुशंसा = उरुशंस, अति व्यञ्च, पूजन, मान करने वाले नमोवृधा = नमन-वृद्धि महना = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा दक्षस्य = दक्ष का राजथः = प्रकाशमान् हो द्राघिष्ठाभिः = समर्थ स्तुतियों द्वारा, सरल स्तुतियों द्वारा शुचिव्रता = शुचव्रत ॥ 17 ॥

पदार्थ :- उरुशंसा = उरुशंस, अति व्यञ्च, पूजन, मान करने वाले (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, शंस् - इच्छा करना, स्तुति करना)। नमोवृधा = नमन-वृद्धि (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। महना = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। दक्षस्य = दक्ष का (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। राजथः = प्रकाशमान् हो (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। द्राघिष्ठाभिः = समर्थ स्तुतियों द्वारा, सरल स्तुतियों द्वारा (द्राघ - सामर्थ्य होना, तानना, लम्बा करना, सूचना करना, पीडा होना, सरल होना)। शुचिव्रता = शुचव्रत (शुच्-शुक्-

शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना) ॥ 17 ॥

279. गृणाना जमदग्निना, योनौ ऋतस्य सीदतम्।

पातम् सोमम् ऋतावृधा ॥ 18 ॥ 3-62-18

मन्त्रार्थ :- गृणाना = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले जमदग्निना = अग्नि-भोजी द्वारा योनौ = योनि में, मिलाने अलग करने में ऋतस्य = ऋत का सीदतम् = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों पातम् = रक्षा करो, पालन करो सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को ऋतावृधा = ऋतावृध, ऋत से वर्धित ॥ 18 ॥

पदार्थ :- गृणाना = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। जमदग्निना = अग्नि-भोजी द्वारा (जम् = खाना, निगलना, अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना, पहुँचना, पाना)। योनौ = योनि में, मिलाने अलग करने में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। सीदतम् = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। पातम् = रक्षा करो, पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। ऋतावृधा = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 18 ॥

इति तृतीय मण्डल

चतुर्थ मण्डल

अनुवाक:- 34

(86) सूक्त 1

280. ते मन्वत प्रथमम् नाम धेनोः, त्रिः सप्त मातु परमाणि विन्दन्।

तत् जानतीः अभि अनूषत ब्राः, आविः भुवत् अरुणीः यशसा गोः ॥ 16 ॥ 4-1-16

मन्त्रार्थ - ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए मन्वत = जानें, समझें, विचार करें, स्वीकार करें, मानें प्रथमम् = प्रथम को नाम = नाम वाले धेनोः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले त्रिः = तीन सप्त = सात मातु = माता का परमाणि = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम विन्दन् = प्राप्त करता है तत् = वह, उस को जानतीः = जानते हुए अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा। अनूषत = अनुताप किया ब्राः=वरण करने वाले आविः - सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त भुवत् = हो रहा, वर्तमान अरुणीः = हिंसक, गतिशील, व्यापक गोः = शब्द, वाणी, वचन ॥ 16 ॥

पदार्थ - ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मन्वत = जानें, समझें, विचार करें, स्वीकार करें, मानें (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। प्रथमम् = प्रथम को (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। नाम = नाम वाले (अव्यय)। धेनोः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। त्रिः = तीन (संख्या)। सप्त = सात (संख्या)। मातु = माता का (मा = मान करना, मापना) परमाणि = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम (सर्वनाम)। विन्दन् = प्राप्त करता है (विन्द - लाभ होना, प्राप्त करना, सम्पादित करना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। जानतीः = जानते हुए (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा। अनूषत = अनुताप किया (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। ब्राः = वरण करने वाले (वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। क्षा = प्रगतिशील, विद्वान्, निवासी (क्षि - जाना, चलना, निवास करना, रहना, बसना)। आविः - सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त (उपसर्ग)। भुवत् = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अरुणीः = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। यशसा = यश, कीर्ति द्वारा (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। गोः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ 16 ॥

(87) सूक्त 3

281. आ वो राजानम् अध्वरस्य रुद्रम्, होतारम् सत्ययजम् रोदस्योः।

अग्निम् पुरा तनयित्नाः अचित्तात्, हिरण्यरूपम् अवसे कृणुध्वम् ॥ 1 ॥ 4-3-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग राजानम् = राजा अध्वरस्य = अहिंसक, अवर्णनीय का रुद्रम् = रुद्र को, करुणाशील को होतारम् = हवन करने वाले को सत्ययजम् = सत्य यज को रोदस्योः = रोदसी के अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को पुरा = पहले तनयित्नाः = विस्तार करने वालों का अचित्तात् = अचित्त को हिरण्यरूपम् = हिरण्यरूप को अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो कृणुध्वम् = करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा,

तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **अध्वरस्य** = अहिसक, अवर्णनीय का (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **रुद्रम्** = रुद्र को, करुणाशील को (रुद् - रोना, रोते-रोते कहना)। **होतारम्** = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सत्ययजम्** = सत्य यज को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **रोदस्योः** = रोदसी के (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **तनयित्नोः** = विस्तार करने वालों का (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **अचित्तात्** = अचित्त को (अच् - मरना, जाना, चलना, आदर करना, मांगना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, चि - चेतन होना, सम्यक् जानना, चिन्तन करना, विचार करना, सन्देह करना, स्मरण करना)। **हिरण्यरूपम्** = हिरण्यरूप को (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **कृणुध्वम्** = करो (कृ = करना) ॥ 1 ॥

(88) सूक्त 8

282. दूतम् वो विश्ववेदसम्, हव्यवाहम् अमर्त्यम्।

यजिष्ठम् ऋज्जसे गिरा ॥ 1 ॥ 4-8-1

मन्त्रार्थ - **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **विश्ववेदसम्** = सर्वज्ञ **हव्यवाहम्** = हव्य का वहन करने वाले को, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाले को **अमर्त्यम्** = अमर्त्य को **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन **ऋज्जसे** = ऋज्जस के लिए, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् के लिए **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ ॥ 1 ॥

पदार्थ - **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **विश्ववेदसम्** = सर्वज्ञ (विद् = जानना)। **हव्यवाहम्** = हव्य का वहन करने वाले को, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाले को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, वह - वहन करना, ले जाना)। **अमर्त्यम्** = अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। **ऋज्जसे** = ऋज्जस के लिए, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् के लिए (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 1 ॥

(89) सूक्त 9

283. अग्ने मृड महान् असि अयः, आ देव-युञ्जनम्।

इयेथ बर्हिः आ सदम् ॥ 1 ॥ 4-9-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि **मृड** = सुख **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् **असि** = हो **अयः** = गतिशील, विद्वान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **देव-युञ्जनम्** = देव-युञ्जन को **इयेथ** = जाता है **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सदम्** = सदन, स्थान को ॥ 3 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मृड** = सुख (मृड - सुखी होना, सुख देना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **अयः** = गतिशील, विद्वान् (अय् = जाना, जानना, पाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **देव-युञ्जनम्** = देव-युञ्जन को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना, वद् बोलना)। **इयेथ** = जाता है (इ = जाना, जानना पाना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सदम्** = सदन, स्थान को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 1 ॥

(90) सूक्त 10

284. अग्ने तम् अद्य अश्वम् न स्तोमैः,

क्रतुम् न भद्रम् हृदिस्पृशम्।

ऋध्यामा ते ओहैः ॥ 1 ॥ 4-10-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि **तम्** = उसको, उसे **अद्य** = आज **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **स्तोमैः** = स्तुतियों से **क्रतुम्** = कर्म को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **भद्रम्** = कल्याणकारी **हृदिस्पृशम्** = हृदिस्पृश को **ऋध्यामा** = बढ़े, समृद्धिशाली हो, वृद्धिगत हो, समृद्ध हो **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **ओहैः** = ऊह द्वारा ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्तोमैः** = स्तुतियों से (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भद्रम्** = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **हृदिस्पृशम्** = हृदिस्पृश को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। **ऋध्यामा** = बढ़े, समृद्धिशाली हो, वृद्धिगत हो, समृद्ध हो (ऋध् - वृद्धि होना, वृद्धि करना, समृद्धि होना, ऐश्वर्य होना, आनन्दित करना, पूर्ण करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **ओहैः** = ऊह द्वारा (ऊह = अनुमान करना, कल्पना करना, तर्क करना) ॥ 8 ॥

285. अध आ हि अग्ने क्रतोः, भद्रस्य दक्षस्य साधोः।

रथीः ऋतस्य बृहतो बभूथ ॥ 2 ॥ 4-10-2

मन्त्रार्थ - अध = अथ, अब, इसके अनन्तर। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण। **हि** = ही, निश्चय। **अग्ने** = अथ, अब, इसके अनन्तर। **क्रतोः** = प्राणी। **भद्रस्य** = भद्र का, कल्याणकारी का। **दक्षस्य** = दक्ष का। **साधोः** = साध। **रथीः** = रथी, रथवाला। **ऋतस्य** = ऋत का। **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत्। **बभूथ** = हो गये ॥ 2 ॥

पदार्थ - अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **अग्ने** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **क्रतोः** = प्राणी (कृ = करना)। **भद्रस्य** = भद्र का, कल्याणकारी का (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **दक्षस्य** = दक्ष का (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **साधोः** = साध (साध् - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, साधना करना, यशस्वी होना)। **रथीः** = रथी, रथवाला (रथ - जाना, ले जाना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **बभूथ** = हो गये (भू = होना,

286. एभिः नो अर्कैः भवा, नो अर्वाक् स्वाः न ज्योतिः ।

अग्ने विश्वेभिः सुमना अनीकैः ॥ 3 ॥ 4-10-3

मन्त्रार्थ - एभिः = इनके द्वारा । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो । अर्कैः = अर्क द्वारा । भवा = हो, हो जाये । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो । अर्वाक् = अभिमुख, गतिशील, शब्दकर्ता । स्वाः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः । न = नहीं, समान, उपमार्थक । ज्योतिः = प्रकाश । अग्ने = हे अग्नि । विश्वेभिः = सबके द्वारा । सुमना = सुन्दर मन वाले । अनीकैः = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण ॥ 3 ॥

पदार्थ - एभिः = इनके द्वारा (सर्वनाम) । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम) । अर्कैः = अर्क द्वारा (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना) । भवा = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम) । अर्वाक् = अभिमुख, गतिशील, शब्दकर्ता (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर् - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना) । स्वाः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः । (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना) । न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) । ज्योतिः = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना) । अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) । विश्वेभिः = सबके द्वारा (सर्वनाम) । सुमना = सुन्दर मन वाले (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना) । अनीकैः = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना) ॥ 3 ॥

अनुवाकः- 35

(91) सूक्त 15

287. परि वाजपतिः कविः, अग्निः हव्यानि अक्रमीत् ।

दधत् रत्नानि दाशुषे ॥ 3 ॥ 4-15-3

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ वाज-पतिः = वाजपति कविः = ज्ञानी, कवि, चित्रकार अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् हव्यानि = दान योग्य, देय अक्रमीत् = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी रत्नानि = मूल्यवान्, रत्न दाशुषे = दानी के लिए दधत् = धारण किया ॥ 3 ॥

भावार्थ :- परमात्मा सुयोग्य दानी को ही मूल्यवान् प्रिय रत्न प्रदान करता है । यहाँ परमात्मा को ज्ञानी, कवि, चित्रकार, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् कहकर सम्बोधित किया गया है । अतः यहाँ मूल्यवान् प्रिय रत्न का अर्थ भी विद्या ही प्रमुख है । 3 ॥

पदार्थ - परि = सभी तरफ (उपसर्ग) । वाज-पतिः = वाजपति (वाज् = जानना, जाना, पहुँचना, पाना, तैयार करना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) । कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) । अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) । हव्यानि = दान योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना) । अक्रमीत् = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना) । दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) । रत्नानि =

मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना) ॥ 3 ॥

(92) सूक्त 17

288. सत्राहणम् दाधृषिम् तुम्रम् इन्द्रम्, महाम् अपारम् वृषभम् सुवज्रम्।

हन्ता यो वृत्रम् सनिता उत वाजम्, दाता मघानि मघवा सुराधाः ॥ 8 ॥ 4-17-8

मन्त्रार्थ - सत्राहणम् = विस्तार, सम्बन्ध का हनन करने वाला दाधृषिम् = विजय, गर्व को तुम्रम् = गति, वृद्धि, इन्द्रम् = इन्द्र को महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को अपारम् = अपार को वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को सुवज्रम् = सुन्दर, अच्छे वज्र, गतिमान को हन्ता = मारने वाला यो = जो वृत्रम् = वृत्र, हिंसा को सनिता = सेवित, दाता उत = ही, भी, ओर वाजम् = विद्या को, गति को दाता = देने वाला मघानि = धनवान्, ऐश्वर्यवान् का मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् सुराधाः = सुन्दर राध, सिद्धि ॥ 8 ॥

पदार्थ - सत्राहणम् = विस्तार, सम्बन्ध का हनन करने वाला (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, हन् - मारना हा - त्याग करना, चलना, जाना)। दाधृषिम् = विजय, गर्व को (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। तुम्रम् = गति, वृद्धि को (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। अपारम् = अपार को (पार - कार्य पूर्ण करना)। वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। सुवज्रम् = सुन्दर, अच्छे वज्र, गतिमान को (सु - अच्छा, सुन्दर, वज्र - गति करना, जाना)। हन्ता = मारने वाला (हन् - मारना)। यो = जो। वृत्रम् = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। सनिता = सेवित, दाता (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। दाता = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। मघानि = धनवान्, ऐश्वर्यवान् का (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। सुराधाः = सुन्दर राध, सिद्धि (राध् - सिद्ध करना, पूरा करना, बढ़ना, निर्णय करना) ॥ 8 ॥

अनुवाकः- 36

(93) सूक्त 30

289. न कि इन्द्र त्वत् उत्तरः, न ज्यायान् अस्ति वृत्रहन्।

न कि एव यथा त्वम् ॥ 1 ॥ 4-30-1

मन्त्रार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक कि = कोई, किसी इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली त्वत् = तुमसे उत्तरः = उत्तर को तैरने-पार जाने को न = नहीं, समान, उपमार्थक ज्यायान् = ज्या का, वृद्ध, जयी का अस्ति = है वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक कि = कोई, किसी एव = इस प्रकार, इस तरह यथा = जहाँ त्वम् = तुम ॥ 1 ॥

पदार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। कि = कोई, किसी (अव्यय)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। त्वत् = तुमसे (सर्वनाम)। उत्तरः = उत्तर को तैरने-पार जाने को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तृ, तृ = तैरना, पार जाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। ज्यायान् = ज्या का, वृद्ध, जयी का (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। अस्ति = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना,

फेकना, उड़ाना, विखेरना)। वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। कि = कोई, किसी (अव्यय)। एव = इस प्रकार, इस तरह (अव्यय)। यथा = जहाँ (सर्वनाम)। त्वम् = तुम (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

(94) सूक्त 31

290. कया नः चित्र आ भुवत्, ऊती सदावृधः सखा ।

कया शचिष्ठया वृता ॥ 1 ॥

4-31-1

मन्त्रार्थ :- कया = किससे नः = हमको, हमारे लिए, हमारा चित्र = चित्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भुवत् = होता हैं ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला सदावृधः = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले सखा = मित्र कया = किससे शचिष्ठया = उत्तम वाणी द्वारा वृता = हिंसक, आवरण, ढका हुआ, वर्ताव, वाणी, वर्तमान ॥ 1 ॥

भावार्थ :- किस उपाय द्वारा अद्भुद्, सदा वृद्धि करने वाला, -रक्षा करने वाला परमात्मा हमारा सखा है। स्पष्ट वाणी द्वारा वर्तमान रहता है। भाव है कि जिस उपाय से परमात्मा हमारा मित्र बन जाता है तथा जिस वाणी से वह हमारे जीवन में इस रूप में वर्तमान रहता है, उसे जानना चाहिए, वह यही वेदवाणी है ॥ 1 ॥

पदार्थ - कया = किससे, किसके द्वारा, किस उपाय द्वारा (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। चित्र = चित्र, अद्भुद् अथवा चित्र या रूप वाला (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भुवत् = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। सदावृधः = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना - वृध् - वृद्धि होना, बढ़ना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। कया = किससे (सर्वनाम)। शचिष्ठया = उत्तम वाणी द्वारा (शच - स्पष्ट बोलना)। वृता = हिंसक, आवरण, ढका हुआ, वर्ताव, वाणी, वर्तमान (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना) ॥ 1 ॥

291. कः त्वा सत्यो मदानाम्, मंहिष्ठो मत्सत् अन्धसः ।

दृढा चित् आरुजे वसु ॥ 2 ॥

4-31-2

मन्त्रार्थ :- कः = कौन त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा सत्यः = सत्य मदानाम् = मदों का, तृप्तिyों का मंहिष्ठः = मंहिष्ठ का, महिमावान् का, महान् का मत्सत् = आनन्दित हो, हर्षित हो, तृप्त हो, विचारशील हो अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से दृढा = दृढ़ चित् = चेतन आरुजे = आरोग्यकारी वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले ॥

भावार्थ :- मद् धातु का अर्थ आनन्द होना है। आनन्दों में जो महानतम तथा सत्य आनन्द है, वही वास्तव में हमें आनन्द दे सकता है। शेष सभी आनन्द क्षणिक तथा उसका आभास मात्र हैं। अन्धसः पद में अन् धातु मानने पर उसका अर्थ प्राणवान् किया गया है। अन्ध धातु मानने पर इसका अर्थ अन्धकार से होगा। इससे अन्धकार से महानतम आनन्द देने का भाव ले सकते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ - कः = कौन (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। सत्यः = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। मदानाम् = मदों का, तृप्तिyों का (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, समाधान करना)। मंहिष्ठः = मंहिष्ठ का, महिमावान् का, महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। मत्सत् = आनन्दित हो, हर्षित हो, तृप्त हो, विचारशील हो (मन् - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना,

हर्षित होना, तृप्त होना)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **दृढा** = दृढ़ (दृद्-दृढ - दृढ़ होना, धारण करना, सहना, समर्थ होना, दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। **चित्** = चेतन, (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **आरुजे** - **आरुजे** = आरोग्यकारी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, रुज - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना, आ-रुज - आरोग्य होना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 2 ॥

292. अभी षु णः सखीनाम्, अविता जरितृणाम्।

शतम् भवासि ऊतये ॥ 3 ॥

4-31-3

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा सु = अच्छा नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सखीनाम् = मित्रों के अविता = रक्षक जरितृणाम् = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों का शतम् = सौ भवासि = होते हो ऊतये = रक्षा के लिए ॥ 3 ॥

भावार्थ :- जरितृ पद का भावार्थ अनेक विद्वानों ने स्तोता माना है। जृ धातु का अर्थ वृद्ध होना है। वृद्ध या परिपक्व होने के लिए आयु या जीवनकाल ही एकमात्र आधार नहीं है। स्तुति-उपासना करना अनिवार्य है। स्तुति-उपासना भी मित्रों के साथ करने का सन्देश स्पष्ट है। अकेले यजन नहीं हो सकता है, यह वैदिक संस्कृति की मान्यता है। सामूहिक जीवन ही श्रेयस्करो है। यदि हम समूह के साथ स्तुति-उपासना करते हैं तो परमात्मा भी सौ रूपों में अनेक उपायों से हमारी रक्षा करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। सु = अच्छा (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सखीनाम् = मित्रों के (सख् = मित्र होना)। अविता = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। जरितृणाम् = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों का (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। शतम् = सौ (सर्वनाम)। भवासि = होते हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥

(95) सूक्त 32

293. आ तू नः इन्द्र वृत्रहन्, अस्माकम् अर्धम् आ गहि।

महान् महीभिः ऊतिभिः ॥ 1 ॥

4-32-1

मन्त्रार्थ- आ समन्तात् सम्पूर्ण तू तो नः हमारे वृत्रहन् वृत्र (हिंसा) को मारने वाले महान् बड़े, पूज्य, महान् इन्द्र ऐश्वर्यवान् (परमात्मन्), अस्माकम् हमारे अर्धम् आधे को महीभिः महान् ऊतिभिः संरक्षण से आ-गहि गति, ज्ञान, घना करें ॥ 1 ॥

भावार्थ - कर्म स्वतन्त्रता तथा उपासना का महत्व दोनों ही समान रूप से इस मन्त्र में हमारी प्रेरणा हैं। हमारा आधा कार्य तो परमात्मा की कृपा से उसके संरक्षण से होगा, परन्तु यह तभी सम्भव होगा जब हम आधा कार्य स्वयम् अपने प्रयास से करेंगे ॥ 1 ॥

विशेष - गह धातु गति अर्थ वाली है। गति अर्थ में ज्ञान, प्राप्ति समाहित होते हैं। गह धातु का एक अर्थ घना होना भी है, इसी से गहन का अर्थ घना वन या जंगल भी होता है ॥ 1 ॥

पदार्थ- आ = समन्तात् सम्पूर्ण तु = तो नः = हमारे वृत्रहन् = वृत्र को मारने वाले (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना) महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना), इन्द्र = ऐश्वर्यवान् (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना), अस्माकम् = हमारे अर्धम् = आधे को महीभिः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना), ऊतिभिः = संरक्षण

से (ऊ-अव् - रक्षा करना, पालन करना) आ = समन्तात् सम्पूर्ण गहि = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 1 ॥

अनुवाक:- 37

(96) सूक्त 39

294. दधिक्राव्णो अकारिषम्, जिष्णोः अश्वस्य वाजिनः ।

सुरभि नो मुखा करत्, प्र ण आयूषि तारिषत् ॥ 6 ॥

4-39-6

मन्त्रार्थ - दधि-क्राव्णो = धारण, पालन, दान करने वाले अकारिषम् = किया जिष्णोः = जिष्णु का, जीतने वाले, जयाभिलाषी, जय की इच्छा वाले का अश्वस्य = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का वाजिनः = बलशाली, वेगवान्, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त सुरभि = सुरभि, सुन्दर आनन्द नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मुखा = मुख करत् = करते हुए प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ण = नहीं, समान, उपमार्थक आयूषि = आयु तारिषत् = चाहा, तार दिया, पार किया ॥ 6 ॥

पदार्थ - दधि-क्राव्णो = धारण, पालन, दान करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, कृ - करना)। अकारिषम् = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। जिष्णोः = जिष्णु का, जीतने वाले, जयाभिलाषी, जय की इच्छा वाले का (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, जिष = सेवा करना, प्रोक्षण करना, सींचना)। अश्वस्य = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। वाजिनः = बलशाली, वेगवान्, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सुरभि = सुरभि, सुन्दर आनन्द (सु = अच्छा (उपसर्ग)। रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना, सु = यज्ञान्त स्नान करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, निचोड़ना, दबाना, हिलाना। सु = उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, सुर = अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मुखा = मुख (मुख - मुख्य होना, जाना, खाना)। करत् = करते हुए (कृ - करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ण = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। आयूषि = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। तारिषत् = चाहा, तार दिया, पार किया (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना, तृष - प्यास लगना, इच्छा करना, उत्कण्ठित होना, चाहना) ॥ 6 ॥

अनुवाक:- 38

(97) सूक्त 47

295. वायो शुक्रो अयामि ते, मध्वो अग्रम् दिविष्टिषु ।

आ याहि सोमपीतये, स्पार्हो देव नियुत्वता ॥ 1 ॥ 4-47-1

मन्त्रार्थ :- वायो = हे वायु, हे प्रवाहमान शुक्रः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी अयामि = प्राप्त करता हूँ ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए मध्वः = मधुरता का अग्रम् = अग्र, आगे दिविष्टिषु = दिव्य स्थितियों में आयाहि = आओ सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, पान के लिए स्पार्हः = स्पार्ह, प्रीतियोग्य, सेवनीय देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप नियुत्वता = नियुत कर, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त कर ॥ 1 ॥

भावार्थ :- हे शुक्र अर्थात् विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी वायु, प्रवाहमान, द्वेष करने वालों में

आगे मधुरता के साथ हम तुम्हारे निकट आते हैं। द्वेष करने वालों के प्रति भी मधुरता का भाव रखने का महान् सन्देश है। इस भाव के साथ प्रिय देवजनों को सोम अर्थात् ऐश्वर्य-सृजन का पान करने के लिए आह्वान किया गया है ॥ 1 ॥

पदार्थ- वायो = हे वायु, हे प्रवाहमान (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **शुक्रः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **अयामि** = प्राप्त करता हूँ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जाना, जानना, पाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मध्वः** - **मध्वः** = मधुरता का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **अग्रम्** = अग्र, आगे (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दिविष्टिषु** = दिव्य स्थितियों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, स्था-स्थित होना, ठहरना, इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **आयाहि** = आओ (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), या = जाना, आ-या = आना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम, पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **पी-पिब्** - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **स्पार्हः** = स्पार्ह, प्रीतियोग्य, सेवनीय (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **नियुत्वता** = नियुत कर, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त कर (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, यु - मिलाना, युक्त करना, जोड़ना, अलग करना) ॥ 1 ॥

296. इन्द्रः च वायो एषाम्, सोमानाम् पीतिम् अर्हथः ।

युवाम् हि यन्ति इन्द्रवो, निम्नम् आपो न सध्यक् ॥ 2 ॥ 4-47-2

मन्त्रार्थ :- **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **च** = और **वायो** = हे वायु, हे प्रवाहमान **एषाम्** = इनका **सोमानाम्** = ऐश्वर्यमय, सोम का **पीतिम्** = पीने को, पान को **अर्हथः** = पूज्य, योग्य **युवाम्** = तुम दोनों ने, तुम दोनों को **हि** = ही, निश्चय **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **इन्द्रवो** = इन्दुगण **निम्नम्** = निम्न को, निश्चित मान को **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सध्यक्** = सहस्थान, सहगामी, साथ ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **च** = और (अव्यय)। **वायो** = हे वायु, हे प्रवाहमान (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **एषाम्** = इनका (सर्वनाम)। **सोमानाम्** = ऐश्वर्यमय, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पीतिम्** = पीने को, पान को (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **अर्हथः** = पूज्य, योग्य (अर्ह = पूजा करना, पूज्य होना, योग्य होना)। **युवाम्** = तुम दोनों ने, तुम दोनों को (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **इन्द्रवो** = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **निम्नम्** = निम्न को, निश्चित मान को (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, मा = मान करना, मापन करना, मानना)। **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सध्यक्** = सहस्थान, सहगामी, साथ (सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 2 ॥

297. वायो इन्द्रः च शुष्मिणा, सरथम् शवसः पती ।

नियुत्वन्ता नः ऊतये, आ यातम् सोमपीतये ॥ 3 ॥

4-47-3

मन्त्रार्थ :- वायो = हे वायु, हे प्रवाहमान इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली च = और शुष्मिणा = शुष्मी सरथम् = सरथ को, ले जाने वाले को, रमने वाले को शवसः = शवस् का, गति, ज्ञान का पती = ऐश्वर्यवान्, स्वामी नियुत्वन्ता = नियुत कर, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त कर नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ऊतये = रक्षा के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम यातम् = प्राप्त, गत, गया हुआ सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वायो = हे वायु, हे प्रवाहमान (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। च = और (अव्यय)। शुष्मिणा = शुष्मी (शुष् - सुखाना)। सरथम् = सरथ को, ले जाने वाले को, रमने वाले को (स - सहित, साथ, रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। शवसः = शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। पती = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। नियुत्वन्ता = नियुत कर, निश्चित रूप से, निरन्तर युक्त कर (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, यु - मिलाना, युक्त करना, जोड़ना, अलग करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव - रक्षा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। यातम् = प्राप्त, गत, गया हुआ (या-जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 3 ॥

(98) सूक्त 52

298. प्रति ष्या सूनरी जनी, व्युच्छन्ती परि स्वसुः ।

दिवो अदर्शि दुहिता ॥ 1 ॥ 4-52-1

मन्त्रार्थ :- प्रति = प्रतिकार, सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में ष्या = वह, बन्धन सूनरी = प्रेरणा देने वाली जनी = उत्पन्न करने वाली, जननी व्युच्छन्ती = पूर्ण करती हुई, समाप्त करती हुई परि = सभी तरफ स्वसुः = स्वयं उत्पन्नकर्ता, उत्तम उत्पन्न करने वाला दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय अदर्शि = देखा दुहिता = दुही हुई, दुहने वाली ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्रति = प्रतिकार, सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (उपसर्ग)। ष्या = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्)। सि = बाँधना)। सूनरी = प्रेरणा देने वाली (सु - सुन्दर, अच्छा, सू = प्रेरणा देना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। जनी = उत्पन्न करने वाली, जननी (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। व्युच्छन्ती = पूर्ण करती हुई, समाप्त करती हुई (वि - विशेष, उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बाँधना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्वसुः = स्वयं उत्पन्नकर्ता, उत्तम उत्पन्न करने वाला (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। अदर्शि = देखा (दृश्-पश्य -देखना)। दुहिता = दुही हुई, दुहने वाली (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना) ॥ 1 ॥

299. अश्वा इव चित्रा अरुषी, माता गवाम् ऋतावरी ।

सखा अभूत् अश्विनोः उषाः ॥ 2 ॥ 4-52-2

मन्त्रार्थ :- अश्वा = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक इव = समान, की भाँति, के समान चित्रा = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप अरुषी = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक माता = माता गवाम् = गवा को, गौ को ऋतावरी = ऋत का रक्षक सखा = मित्र भूत् = हो अश्विनोः = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक उषाः = प्रभात, हिंसा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अश्वा = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। चित्रा = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। अरुषी = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। माता = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। गवाम् = गवा को, गौ को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना)। ऋतावरी = ऋत का रक्षक (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, अव - रक्षा करना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। भूत् = हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अश्विनोः = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। उषाः = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना) ॥ 2 ॥

300. उत सखा असि अश्विनोः, उत माता गवाम् असि ।

उत उषो वस्वः ईशिषे ॥ 3 ॥ 4-52-3

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर सखा = मित्र असि = हो अश्विनोः = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक उत = ही, भी, ओर माता = माता गवाम् = गवा को, गौ को असि = हो उत = ही, भी, ओर उषो = प्रभात, हिंसा वस्वः = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे ॥ 3 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। असि = हो (अस् - होना)। अश्विनोः = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। माता = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। गवाम् = गवा को, गौ को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना)। असि = हो (अस् - होना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। उषो = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। वस्वः = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना) ॥ 3 ॥

(99) सूक्त 56

301. प्र वाम् महि द्यवी अभि, उपस्तुतिम् भरामहे ।

शुची उप प्रशस्तये ॥ 5 ॥ 4-56-5

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वाम् = तुम दोनों को महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं द्यवी = द्यु में अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा उपस्तुतिम् = उपस्तुति को भरामहे = भरण करते हैं शुची = पवित्र

उप = समीप प्रशस्तये = प्रशस्ति के लिए ॥ 5 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। द्यवी = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। उपस्तुतिम् = उपस्तुति को (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। भरामहे = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। शुची = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। उप = समीप (उपसर्ग)। प्रशस्तये = प्रशस्ति के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना) ॥ 5 ॥

302. पुनाने तन्वा मिथः, स्वेन दक्षेण राजथः ।

उह्याथे सनात् ऋतम् ॥ 6 ॥ 4-56-6

मन्त्रार्थ :- पुनाने = पवित्र करती हुई तन्वा = विस्तार, वृद्धि मिथः = मिथ, एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी स्वेन = अपने दक्षेण = दक्ष द्वारा राजथः = प्रकाशमान् हो उह्याथे = वहन करते हैं सनात् = सेवा से ऋतम् = ऋत को ॥ 6 ॥

पदार्थ :- पुनाने = पवित्र करती हुई (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। तन्वा = विस्तार, वृद्धि (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। मिथः = मिथ, एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी (मिथ् - समझना, जानना, पीड़ा करना, दुःख देना, एकत्र करना, जोड़ना, जुड़ाना, संयुक्त करना)। स्वेन = अपने (सर्वनाम)। दक्षेण = दक्ष द्वारा (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। राजथः = प्रकाशमान् हो (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। उह्याथे = वहन करते हैं (उह्-वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। सनात् = सेवा से (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। ऋतम् = ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना) ॥ 6 ॥

303. मही मित्रस्य साधथः, तरन्ती पिप्रती ऋतम् ।

परि यज्ञम् नि षेदथुः ॥ 7 ॥ 4-56-7

मन्त्रार्थ :- मही = मही, महिमावान्, महान् मित्रस्य = मित्र का साधथः = सिद्ध करते हो, पूर्ण करते हो तरन्ती = पार करती हुई पिप्रती = पूर्ण करती हुई ऋतम् = ऋत को परि = सभी तरफ यज्ञम् = यजन को नि = निश्चित, निरन्तर षेदथुः = गये, प्राप्त हुए ॥ 7 ॥

पदार्थ :- मही = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। मित्रस्य = मित्र का (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। साधथः = सिद्ध करते हो, पूर्ण करते हो (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। तरन्ती = पार करती हुई (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। पिप्रती = पूर्ण करती हुई (पृ - पूर्ण करना, भरना)। ऋतम् = ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। यज्ञम् = यजन को (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। षेदथुः = गये, प्राप्त हुए (सिद् - हिंसा करना, अवसाद होना, जाना, जानना, पाना) ॥ 7 ॥

इति चतुर्थ मण्डल

पञ्चम मण्डल

अनुवाक:- 39

(100) सूक्त 1

304. अबोधि अग्निः समिधा जनानाम्, प्रति धेनुम् इव आयतीम् उषासम् ।

यह्वा इव प्र वयाम् उत्-जिहानाः, प्र भानवः सिस्त्रते नाकम् अच्छ ॥ 1 ॥ 5-1-1

मन्त्रार्थ - अबोधि = बोध हुआ अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् समिधा = सम्यक् प्रकाशित जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में धेनुमिव = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले के समान आयतीम् = आयती को, शब्दकर्ता को उषासम् = उत्कृष्ट गति, ज्ञान वाले यह्वा = महान् इव = समान, की भाँति, के समान प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वयाम् = वय या रचना युक्त को उत्-जिहानाः = उत्कृष्ट गति, ज्ञान वाले प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक भानवः = प्रकाशमान सिस्त्रते = सिस्त्रत, प्राप्त करते हैं नाकम् = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल अच्छ = अच्छा, निर्मल करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - अबोधि = बोध हुआ (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, बुध - बोध होना, जानना, समझना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। समिधा = सम्यक् प्रकाशित (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। धेनुमिव = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले के समान (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। आयतीम् = आयती को, शब्दकर्ता को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, ई - जाना, यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। उषासम् = उत्कृष्ट गति, ज्ञान वाले (उत् - ऊपर, जिह् = चलना, जाना, जानना, पाना)। यह्वा = महान् (यह्व-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वयाम् = वय या रचना युक्त को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। उज्जिहानाः = उत्कृष्ट गति, ज्ञान वाले (उत् - ऊपर, जिह् = चलना, जाना, जानना, पाना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। भानवः = प्रकाशमान (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। सिस्त्रते = सिस्त्रत, प्राप्त करते हैं (सि = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना। सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। नाकम् = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क - नाश होना)। अच्छ = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना) ॥ 1 ॥

305. अबोधि होता यजथाय देवान्, ऊर्ध्वो अग्निः सुमनाः प्रातः अस्थात् ।

समिद्धस्य रुशत् अदर्शि पाजो, महान् देवः तमसो निः अमोचि ॥ 2 ॥ 5-1-2

मन्त्रार्थ :- अबोधि = बोध हुआ होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले यजथाय = यजन के लिए देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् सुमनाः = अच्छे मन वाले प्रातः = प्रातः अस्थात् = स्थित हैं समिद्धस्य = सम्यक् प्रकाशवान् का रुशत् = प्रकाशमान अदर्शि = देखा पाजो = रक्षा करने वाला महान् = बड़े, पूज्य, महान् देवः = विद्वान्, तेजस्वी, देव तमसो = तमस्, अन्धकार, इच्छा, दुःख निः = बिना, बाहर, निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। अमोचि = मोचित किया, छोड़ा, प्रसन्नता दी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अबोधि = बोध हुआ (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, बुध - बोध होना, जानना, समझना)। होता =

आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **यजथाय** = यजन के लिए (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ऊर्ध्वो** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुमनाः** = अच्छे मन वाले (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **प्रातः** = प्रातः (अव्यय)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना)। **समिद्धस्य** = सम्यक् प्रकाशवान् का (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **रुशत्** = प्रकाशमान (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। **अदर्शि** = देखा (दृश्-पश्य -देखना)। **पाजो** = रक्षा करने वाला (पा - रक्षा करना, पालन करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **तमसो** = तमस्, अन्धकार, इच्छा, दुःख (तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **निः** = बिना, बाहर, निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **अमोचि** = मोचित किया, छोड़ा, प्रसन्नता दी (अ - भूतकालिक उपसर्ग, मुच - बोलना, कहना, पीसना, ठगना, मुच - छोड़ना, द्रव्यादि देना, प्रसन्न होना) ॥ 2 ॥

306. यत् ईम् गणस्य रशनाम् अजीगः, शुचिः अङ्क्ते शुचिभिः गोभिः अग्निः।

आत् दक्षिणा युज्यते वाजयन्ती, उत्तानाम् ऊर्ध्वो अधयत् जुह्वभिः ॥ 3 ॥ 5-1-3

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **ईम्** = समान, इस प्रकार **गणस्य** = गणक, गण, समूह का **रशनाम्** = रश्मियों का **अजीगः** = गतिमान्, वेग से जाने वाला **शुचिः** = शुद्धता **अङ्क्ते** = अंकन करता है, अपनाता है **शुचिभिः** = पवित्रों द्वारा, शुद्धताओं द्वारा **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दक्षिणा** = समृद्धि **युज्यते** = योजित करते हैं, सम्बन्धित करते हैं **वाजयन्ती** = वाजय, गति करते हैं **उत्तानाम्** = उत्तान, उच्च विस्तार का **ऊर्ध्वो** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व **अधयत्** = धारण किया, पोषण किया **जुह्वभिः** = आदान-प्रदान द्वारा, दानियों द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **गणस्य** = गणक, गण, समूह का (गण - गिनना, शब्द करना, नापना, मानना, समझना, समूह बनाना)। **रशनाम्** = रश्मियों का (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। **अजीगः** = गतिमान्, वेग से जाने वाला (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **शुचिः** = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **अङ्क्ते** = अंकन करता है, अपनाता है (अङ्क = गिनना, अपनाना, गोद में लेना)। **शुचिभिः** = पवित्रों द्वारा, शुद्धताओं द्वारा (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दक्षिणा** = समृद्धि (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **युज्यते** = योजित करते हैं, सम्बन्धित करते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, सम्बन्धित करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वाजयन्ती** = वाजय, गति करते हैं (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उत्तानाम्** = उत्तान, उच्च विस्तार का (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तन् = तानना, विस्तार करना)। **ऊर्ध्वो** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)।

अधयत् = धारण किया, पोषण किया (अ - नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। जुहूभिः = आदान-प्रदान द्वारा, दानियों द्वारा (जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना) ॥ 3 ॥

(101) सूक्त 6

307. अग्निम् तम् मन्ये यो वसुः, अस्तम् यम् यन्ति धेनवः ।

अस्तम् अर्वन्तः आशवो, अस्तम् नित्यासो वजिन इषम्, स्तोतृभ्य आ भर ॥ 1 ॥ 5-6-1

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को तम् = उसको, उसे मन्ये = मानता हूँ यो = जो वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले अस्तम् = प्रकाशमान को यम् = जिसे, जिसको, जहाँ यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले अस्तम् = प्रकाशमान को अर्वन्तः = अर्वन्त, प्रगतिशील, विद्वान् आशवो = अशन करो, भोजन करो अस्तम् = प्रकाशमान को नित्यासो = नित्य, निरन्तर वजिनः = बलशाली, वेगवान्, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। मन्ये = मानता हूँ (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। यो = जो (सर्वनाम)। वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अस्तम् = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। अस्तम् = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। अर्वन्तः = अर्वन्त, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। आशवो = अशन करो, भोजन करो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, श्व - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। अस्तम् = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। नित्यासो = नित्य, निरन्तर (नि - निश्चित, निरन्तर, नी = पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। वजिनः = बलशाली, वेगवान्, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 1 ॥

308. सो अग्निः यो वसुः गृणे, सम् यम् आयन्ति धेनवः ।

सम् अर्वन्तो रघुद्रुवः, सम् सुजातासः सूरयः,

इषम् स्तोतृभ्य आ भर ॥ 4 ॥ 5-6-2

मन्त्रार्थ - सो = वह, उसने **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **यो** = जो **वसुः** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करते हैं **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **यम्** = जिसे, जिसको = जहाँ **आयन्ति** = आते हैं **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अर्वन्तो** = अर्वन्त **रघुद्रुव** = रघुद्रुव **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **सुजातासः** = सुजात को **सूरयः** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **स्तोतृभ्यः** = स्तुति के लिए **आ-भर** = भरण करो ॥ 4 ॥

पदार्थ - सो = वह, उसने। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यो** = जो। **वसुः** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **आयन्ति** = आते हैं (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय्-ई - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अर्वन्तो** = अर्वन्त (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **रघुद्रुव** = रघुद्रुव (लघि-लङ्घ = जाना, उपवास करना, भूखा रहना, न्यून होना, अल्प होना, शुष्क होना, सूखना, द्रु - जाना, शीघ्रता से जाना, चलना, बहना, प्रवाहित होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **सुजातासः** = सुजात को (सु = अच्छा, जागृ - जगना, नींद न लेना (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूरयः** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **स्तोतृभ्यः** = स्तुति के लिए (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **आ-भर** = भरण करो (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना) ॥ 4 ॥

309. अग्निः हि वाजिनम् विशे, ददाति विश्वचर्षणिः ।

अग्नी राये स्वाभुवम्, सः प्रीतो याति वार्यम्, इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 3 ॥ 5-6-3

मन्त्रार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **हि** = ही, निश्चय **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को **विशे** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **ददाति** = देता है **विश्वचर्षणिः** = सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील **अग्नी** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में **स्वाभुवम्** = स्वयम्भू **सः** = वह, उसने **प्रीतो** = प्रिय **याति** = जाता है **वार्यम्** = वार्य, वरणीयों को, वरण को **इषम्** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **स्तोतृभ्यः** = स्तुति के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **विशे** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **ददाति** = देता है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **विश्वचर्षणिः** = सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील (विश्व - सभी, चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **अग्नी** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता

में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **स्वाभुवम्** = स्वयम्भू (स्व = अपना (सर्वनाम), भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **प्रीतो** = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। **याति** = जाता है (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **वार्यम्** = वार्य, वरणीयों को, वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **इषम्** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **स्तोतृभ्यः** = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 3 ॥

310. आ ते अग्ने इधीमहि, द्युमन्तम् देव अजरम्।

यत् ह स्या ते पनीयसी, समित् दीदयति द्यविः, इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 4 ॥ 5-6-4

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अग्ने = हे अग्नि इधीमहि = गति, ज्ञान, प्रकाश द्युमन्तम् = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण अजरम् = अजर को यत् = जिसे, जो ह = ही, निश्चय ही स्या = वह, उसने। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पनीयसी = प्रशंसा के योग्य समित् = भलीभाँति ही, सम्यक् प्रकाशित दीदयति = देती है, प्रकाशित करती है द्यवि = द्यु में इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। इधीमहि = गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। द्युमन्तम् = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अजरम् = अजर को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ह = ही, निश्चय ही (अव्यय)। स्या = वह, उसने। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पनीयसी = प्रशंसा के योग्य (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। समित् = भलीभाँति ही, सम्यक् प्रकाशित (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। दीदयति = देती है, प्रकाशित करती है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। द्यवि = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 4 ॥

311. आ ते अग्ने ऋचा हविः, शुक्रस्य शोचिषः पते।

सुश्चन्द्र दस्म विश्पते हव्यवाट्, तुभ्यम् हूयते इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 5 ॥ 5-6-5

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अग्ने = हे अग्नि ऋचा = ऋचायें हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य शुक्रस्य = शुक्र का, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी का ज्योतिषस्पते = हे प्रकाश के स्वामी सुश्चन्द्र = हे आनन्ददायक ऐश्वर्यवान् दस्म = हे रक्षा करने वाले विश्पते = हे विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी हव्यवाट् = हव्य को वहन करने वाले तुभ्यम् = तुम्हारे लिए हूयते = आह्वान करता है, दान करता है इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 5 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ऋचा = ऋचार्ये (ऋच् - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। शुक्रस्य = शुक्र का, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी का (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। ज्योतिषस्पते = हे प्रकाश के स्वामी (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। सुश्चन्द्र = हे आनन्ददायक ऐश्वर्यवान् (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चन्द्र - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। दस्म = हे रक्षा करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। विश्पते = हे विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। हव्यवाट् = हव्य को वहन करने वाले (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। तुभ्यम् = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। हूयते = आह्वान करता है, दान करता है (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 5 ॥

312. उभे सुश्चन्द्र सर्पिषः, दर्वी श्रीणीषे आसनि।

उतो नः उत्पुपूर्याः, उक्थेषु शवसः पते, इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 9 ॥ 5-6-9

मन्त्रार्थ :- उभे = दोनों, पूर्णता सुश्चन्द्र = हे आनन्ददायक ऐश्वर्यवान् सर्पिषः = सर्प, प्रवाह, प्रगति वाले दर्वी = प्रगतिशील, विद्वान् श्रीणीषे = आश्रय होते हो, व्याप्त होते हो आसनि = आसन में, स्थान में उतो = ही नः = हमको, हमारे लिए, हमारा उत्पुपूर्याः = उत्तम पूर्ण करने वाले उक्थेषु = उक्तियों में, कथनों में शवसः = हे विद्वानों पते = पति, अधिपति इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 9 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। उभे = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ - पूर्ण करना, भरना)। सुश्चन्द्र = हे आनन्ददायक ऐश्वर्यवान् (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चन्द्र - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। सर्पिषे = सर्प, प्रवाह, प्रगति वाले (सृप् - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना)। दर्वी = प्रगतिशील, विद्वान् (दर्व् = जाना, जानना, पाना)। श्रीणीषे = आश्रय होते हो, व्याप्त होते हो (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। आसनि = आसन में, स्थान में (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। उतो = ही (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। उत्पुपूर्याः = उत्तम पूर्ण करने वाले (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। उक्थेषु = उक्तियों में, कथनों में (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। शवसः = हे विद्वानों (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। पते = पति, अधिपति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 9 ॥

(102) सूक्त 10

313. अग्न ओजिष्ठम् आ भर, द्युम्नम् अस्मभ्यम् अधिगो।

प्र नो राये परीणसा, रत्सि वाजाय पन्थाम् ॥ 1 ॥ 5-10-1

मन्त्रार्थ - अग्न = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **अधिगो** = धारण किया **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में **परीणसा** = सब ओर से व्याप्त **रत्सि** = रत्स **वाजाय** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए **पन्थाम्** = पथ को, मार्ग को ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्न = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **अधिगो** = धारण किया (अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **परीणसा** = सब ओर से व्याप्त (परि - सब ओर, ई - जाना, व्याप्त होना, प्रेरणा करना)। **रत्सि** = रत्स (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **वाजाय** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पन्थाम्** = पथ को, मार्ग को (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना) ॥ 1 ॥

(103) सूक्त 11

314. जनस्य गोपा अजनिष्ट जागृविः, अग्निः सुदक्षः सुविताय नव्यसे।

घृतप्रतीको बृहता दिविस्पृशा, द्युमत् विभाति भरतेभ्यः शुचिः ॥ 1 ॥ 5-11-1

मन्त्रार्थ :- जनस्य = जन का। गोपा = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक। **अजनिष्ट** = गतिमान, उत्पन्न किया। **जागृविः** = जागा हुआ, जाग्रत। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्। **सुदक्षः** = सुदक्ष, अच्छी तरह दक्ष। **सुविताय** = सुविताय सुन्दर, विशेष रक्षण-पालन करने वाले। **नव्यसे** = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए। **घृतप्रतीको** = घृत-प्रतीक, प्रकाशगामी। **बृहता** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत्। **दिविस्पृशा** = दिव्य को स्पर्श करने वाले। **द्युमत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ। **वि** = विशेष, विना, विलोम। **भाति** = प्रकाशित होता है। **भरतेभ्यः** = भरण करने वालों के लिए। **शुचिः** = शुद्धता ॥ 1 ॥

पदार्थ :- जनस्य = जन का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। गोपा = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **अजनिष्ट** = गतिमान, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अज- जाना, गति करना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, जन - उत्पन्न करना)। **जागृविः** = जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुदक्षः** = सुदक्ष, अच्छी तरह दक्ष (सु - सुन्दर, अच्छा, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **सुविताय** = सुविताय सुन्दर, विशेष रक्षण-पालन करने वाले (सु - सुन्दर, अच्छा, वि - विशेष, ताय - रक्षा करना, पालन करना,

तानना, फैलाना)। **नव्यसे** = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **घृतप्रतीको** = घृत-प्रतीक, प्रकाशगामी (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तिक् - गति करना, चाल चलना, दुःख देने का प्रयास करना, तीक् - जाना, जानना, पाना)। **बृहता** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **दिविस्पृशा** = दिव्य को स्पर्श करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। **द्युमत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **भाति** = प्रकाशित होता है (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **भरतेभ्यः** = भरण करने वालों के लिए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **शुचिः** = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना) ॥ 1 ॥

315. यज्ञस्य केतुम् प्रथमम् पुरोहितम्, अग्निम् नरः त्रिषधस्थे सम् इधिरे ।

इन्द्रेण देवैः सरथम् सः बर्हिषि, सीदन् नि होता यजथाय सुक्रतुः ॥ 2 ॥ 5-11-2

मन्त्रार्थ :- यज्ञस्य = यजन का केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को प्रथमम् = प्रथम को पुरोहितम् = पुरोहित को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को नरः = नर त्रिषधस्थे = तीन सहस्थान, त्रिसहगामी, त्रिसधस्थ में, त्रिसधस्थ के लिए सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति इधिरे = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा देवैः = देवों द्वारा सरथम् = सरथ को, ले जाने वाले को, रमने वाले को सः = वह, उसने बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में सीदन् = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए नि = निश्चित, निरन्तर होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले यजथाय = यजन के लिए सुक्रतुः = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। प्रथमम् = प्रथम को (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। पुरोहितम् = पुरोहित को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हि - चलना, जाना, जानना, पाना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नरः = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। त्रिषधस्थे = तीन सहस्थान, त्रिसहगामी, त्रिसधस्थ में, त्रिसधस्थ के लिए (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, सध - साथ (अव्यय), सद् - जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। इधिरे = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। देवैः = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सरथम् = सरथ को, ले जाने वाले को, रमने वाले को (स - सहित, साथ, रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। सीदन् = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। यजथाय = यजन के लिए (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। सुक्रतुः = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना) ॥ 2 ॥

316. त्वाम् अग्ने अङ्गिरसो गुहा हितम्, अनु अविन्दन् शिश्रियाणम् वनेवने।

सः जायसे मथ्यमानः सहो महत्, त्वाम् आहुः सहसः पुत्रम् अङ्गिरः ॥ 6 ॥ 5-11-6

मन्त्रार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी। अग्ने = हे अग्नि। अङ्गिरसो = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला। गुहा = गुह्य, गुहा। हितम् = हित, गति, वृद्धि को। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल। अविन्दन् = प्राप्त किया, न पाने वाले। शिश्रियाणम् = सेवा करने वाले, आश्रय देने वाले को। वनेवने = वाणी में, वनों में। सः = वह, उसने। जायसे = उत्पन्न होते हो। मथ्यमानः = मन्थन करते हुए, मन्थन करने वाले। सहो = सहनशीलता, सहनशक्ति। महत् = महान्। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी। आहुः = कहा, कहते हैं, आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त। सहसः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट। पुत्रम् = पुत्र को। अङ्गिरः = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला ॥ 6 ॥

पदार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अङ्गिरसो = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। गुहा = गुह्य, गुहा (गुह - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। हितम् = हित, गति, वृद्धि को (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। अविन्दन् = प्राप्त किया, न पाने वाले (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, विद् - समझना, जानना, वास करना, जीवन होना, विद्यमान होना, रहना, जानना, समझना, विन्द् = लाभ होना, प्राप्त करना, पाना)। शिश्रियाणम् = सेवा करने वाले, आश्रय देने वाले को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना)। वनेवने = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। सः = वह, उसने। जायसे = उत्पन्न होते हो (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। मथ्यमानः = मन्थन करते हुए, मन्थन करने वाले (मथ् - मथना, विलोडन करना, विचार करना)। सहो = सहनशीलता, सहनशक्ति (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। महत् = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। आहुः = कहा, कहते हैं, आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। सहसः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। पुत्रम् = पुत्र को (पु - रक्षा करना, श्वास लेना)। अङ्गिरः = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना) ॥ 6 ॥

(103) सूक्त 13

317. अग्ने स्तोमम् मनामहे, सिधम् अद्य दिविस्पृशः।

देवस्य द्रविणस्यवः ॥ 2 ॥ 5-13-2

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि स्तोमम् = स्तोम मनामहे = मनन करते हैं सिधम् = पूर्ण कर्ता को अद्य = आज दिविस्पृशः = दिव्य को स्पर्श करने वाले देवस्य = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण का द्रविणस्यवः = द्रवित होने वाले, प्रवाही, ज्ञानी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। स्तोमम् = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। मनामहे = मनन करते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। सिधम् = पूर्ण कर्ता को (सिध - पूरा करना, सिद्ध होना, जीत होना, अमानवी पराक्रम की सिद्धि के लिए आरम्भ किये हुए कर्म की समाप्ति करना, पूर्ण होना, समाप्त होना, सिध - जाना, सिध - आज्ञा करना, धर्माधिकार की दीक्षा देना,

उपाध्याय करना, मंगल कर्म करना)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **दिविस्पृशः** = दिव्य को स्पर्श करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। **देवस्य** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **द्रविणस्यवः** = द्रवित होने वाले, प्रवाही, ज्ञानी (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना) ॥ 2 ॥

318. अग्निः जुषत नो गिरो, होता यो मानुषेषु आ ।

सः यक्षत् दैव्यम् जनम् ॥ 3 ॥

5-13-3

मन्त्रार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **जुषत** = विचार करे, सेवा करें **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **होता** = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **यो** = जो **मानुषेषु** = मानुषों, मननों में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **स** = वह, उसने **यक्षत्** = पूजा की **दैव्यम्** = दिव्य **जनम्** = जन को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जुषत** = विचार करे, सेवा करें (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **होता** = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **मानुषेषु** = मानुषों, मननों में (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **यक्षत्** = पूजा की (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। **दैव्यम्** = दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जनम्** = जन को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 3 ॥

319. त्वम् अग्ने सप्रथाः असि, जुष्टो होता वरेण्यः ।

त्वया यज्ञम् वि तन्वते ॥ 4 ॥

5-13-4

मन्त्रार्थ :- **त्वम्** = तुम **अग्ने** = हे अग्नि **सप्रथा** = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत **असि** = हो **जुष्टो** = सुविचारित सेवा **होता** = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले **वरेण्यः** = वरणीय, वरण करने वाला **त्वया** = तुम्हारे द्वारा, तुमसे **यज्ञम्** = यजन को **वि** = विशेष, विना, विलोम **तन्वते** = विस्तार करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सप्रथा** = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **जुष्टो** = सुविचारित सेवा (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **होता** = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **वरेण्यः** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **त्वया** = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। **यज्ञम्** = यजन को (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **तन्वते** = विस्तार करता है (तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 4 ॥

अनुवाकः- 2

(104) सूक्त 16

320. बृहद् वयो हि भानवे, अर्च आ देवाय अग्नये ।

यम् मित्रम् न प्रशस्तिभि, मर्तासो दधिरे पुरः ॥ 1 ॥ 5-16-1

मन्त्रार्थ - बृहद् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् वयो = वय, रचना हि = ही, निश्चय भानवे = प्रकाशमान के लिए अर्चः = पूजते हैं, पूजा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण देवाय = देव के लिए अग्नये = अग्नि के लिए यम् = जिसे, जिसको, जहाँ मित्रम् = मित्र को न = नहीं, समान, उपमार्थक प्रशस्तिभि = प्रशस्ति द्वारा मर्तासो = मर्य, मरणशील दधिरे = धारण किया पुरः = पहले, अग्रगामी, अग्रणी ॥ 1 ॥

पदार्थ - बृहद् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। वयो = वय, रचना (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। भानवे = प्रकाशमान के लिए (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। अर्चः = पूजते हैं, पूजा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। देवाय = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अग्नये = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। मित्रम् = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। प्रशस्तिभि = प्रशस्ति द्वारा (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। मर्तासो = मर्य, मरणशील (मृ - मरना, देहत्याग करना)। दधिरे = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। पुरः = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना) ॥ 1 ॥

(105) सूक्त 18

321. प्रातः अग्निः पुरुप्रियो, विशः स्तवेत अतिथिः ।

विश्वे यस्मिन् अमर्त्ये, हव्यम् मर्तास इन्धते ॥ 1 ॥ 5-18-1

मन्त्रार्थ - प्रातः = प्रातः अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् पुरुप्रियो = पुरुप्रिय विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी स्तवेत = स्तोता, प्रशंसक, स्तुत्य, प्रशंसनीय अतिथिः = अतिथि विश्वे = सभी यस्मिन् = जिसमें अमर्त्ये = अमर्त्य हव्यम् = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को मर्तास = मरणशील इन्धते = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्रातः = प्रातः (प्रा - पूर्ण करना, तृप्त करना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पुरुप्रियो = पुरुप्रिय (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, प्री = प्रिय होना)। विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। स्तवेत = स्तोता, प्रशंसक, स्तुत्य, प्रशंसनीय (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। अतिथिः = अतिथि (अत् - सतत गमन करना)। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। यस्मिन् = जिसमें (सर्वनाम)। अमर्त्ये = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। हव्यम् = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। मर्तास = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। इन्धते = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं (इध्-इधि-इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) ॥ 1 ॥

(106) सूक्त 24

322. अग्ने त्वम् नो अन्तमः उत्त, त्राता शिवो भुवो वरुथ्यः ।

वसुः अग्निः वसुश्रवाः अच्छ, नक्षि द्युमत्तमम् रयिम् दाः ॥ 1 ॥ 5-24-1

मन्त्रार्थ :- अग्ने हे अग्नि! त्वम् तुम नो हमारे लिए अन्तमः जीवनदाता, उत = ही त्राता रक्षक, पालक, शिवो कल्याणकारी, वरुथ्यः वरणीय भुवा हो वसुः निश्चल, वासस्थान, दयालु, अग्निः ऊर्ध्वगामी, वसुश्रवा वसु को श्रवण करने वाला, निश्चलश्रुति, अच्छा श्रेष्ठ नक्षि गति, द्युमत्तमम् अतिशय अग्रगति वाले रयिम् विद्या दाः प्रदान करो ॥ 1 ॥

भावार्थ : अग्नि परमात्मा ही जीवनदाता, रक्षक तथा वरण करने योग्य है। उपासना से श्रेष्ठ विद्या, सद्गुण तथा सुख-साधन प्राप्त होते हैं ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि! (अग् = गति करना, आगे जाना)। त्वम् = तुम। नः = हमारे लिए। अन्तमः = जीवनदाता, (अन् = प्राणवान् होना)। उत = ही। त्राता = रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। शिवः = कल्याणकारी (शिव् = कल्याण करना)। भुवा = हो (भू = होना)। वरुथ्यः = वरण करने योग्य (वृ = वरण करना)। वसुः = वसु (वस् = निवास करना, वसु = निश्चल होना, निःछल होना)। अग्निः = अग्नि (अग् = गति करना, आगे जाना)। वसुश्रवाः = वसु को श्रवण करने वाला (वसु = निश्चल होना, निःछल होना, श्रु = सुनना)। अच्छा = श्रेष्ठ (अच् - जाना, चलना, आदर करना, मांगना)। नक्षि = गति (नक्ष = जाना, पहुँचना, जानना)। द्युमत्तमम् = अग्रगामी उपासक, अतिशय अग्रगति वाले (द्यु = आगे जाना, समीप जाना)। रयिम् = विद्या को (रय् = जाना, जानना)। दाः = दानी, दो (दा, दद् = देना) ॥ 1 ॥

323. सः नः बोधि श्रुधि हवम्, उरुष्य नः अघयतः समस्मात्।

तम् त्वा शोचिष्ठ दीदिवः, सुम्नाय नूनम् ईमहे सखिभ्यः ॥ 3 ॥

5-24-3

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा बोधि = जानता है श्रुधि = सुनिये हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य उरुष्य = गमनीय, गतिशील, गति, व्यापकता, विस्तार योग्य नः = हमको, हमारे लिए, हमारा अघयतः = पाप किया समस्मात् = घबराने नहीं देता शोचिष्ठ पवित्रतम दीदिवः तेजस्वी! त्वा तुमको सखिभ्यः मित्रों के सुम्नाय ऐश्वर्य के लिए नूनम् निश्चय ही तम् उसको ईमहे जानते हैं ॥ 3 ॥

भावार्थ : हम जानते हैं कि परमात्मा मित्रभाव वालों के लिए ऐश्वर्य प्रदान करता है। वह हमें दान तथा उसकी गति का बोध कराता है। हमको पापों से घबराने नहीं देता। मित्रभाव तथा दान की प्रवृत्ति हो तो पाप के लिए कोई स्थान ही नहीं रहेगा, घबराने का अवसर ही नहीं आयेगा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। बोधि = जानता है (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। श्रुधि = सुनिये (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। उरुष्य = गमनीय, गतिशील, गति, व्यापकता, विस्तार योग्य (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अघयतः = पाप किया (अघ - पाप करना, अपराध करना)। समस्मात् = घबराने नहीं देता (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम् = न घबराना, परिणाम होना)। तम् = उसको। त्वा = तुमको। शोचिष्ठ = पावनतम (शुच् = पवित्र करना)। दीदिवः = तेजस्वी! (दिव् = तेजस्वी होना, स्तुति करना)। सुम्नाय = ऐश्वर्य के लिए (सु = उत्पन्न कराना, ऐश्वर्य होना)। नूनम् = निश्चय ही। ईमहे = जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। सखिभ्यः = मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना) ॥ 3 ॥

(107) सूक्त 25

324. यत् वाहिष्ठम् तत् अग्नये, बृहत् अर्च विभावसो।

महिषीव त्वत् रयिः, त्वत् वाजा उत् ईरते ॥ 7 ॥ 5-25-7

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो वाहिष्ठम् = अत्यन्त वहन करने वाले तत् = वह, उस को अग्नये = अग्नि के लिए बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् अर्च = पूजते हैं, पूजा विभावसो = विशेष प्रकाशित होता है, वसु का, वासस्थान तथा

वास करने वाले लोगों का **महिषी** = पूजित, सम्मानित **इव** - समान **त्वत्** = तुमसे **रयिः** = विद्या, ज्ञान **त्वत्** = तुमसे **वाजाः** = विद्या, गति **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **ईरते** = कम्पित करता है, प्रेरणा करता है ॥ 7 ॥

भावार्थ :- अग्नि स्वरूप परमात्मा की अर्चना-उपासना करते हैं। वह हमें प्रेरणा करता है ॥ 7 ॥

पदार्थ- **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वाहिष्ठम्** = अत्यन्त वहन करने वाले (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बढ़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अर्च** = पूजते हैं, पूजा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **विभावसो** = विशेष प्रकाशित होता है, वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **महिषीव** = पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **रयिः** = विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **वाजाः** = विद्या, गति (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना) ॥ 7 ॥

(108) सूक्त 26

325. अग्ने पावक रोचिषा, मन्द्रया देव जिह्वया ।

आ देवान् वक्षि यक्षि च ॥ 1 ॥ 5-26-1

मन्त्रार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला। **रोचिषा** = प्रकाशमान। **मन्द्रया** = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप। **जिह्वया** = जिह्वा द्वारा। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को। **वक्षि** = वक्षना। **यक्षि** = पूजा करो। **च** = और ॥ 1 ॥

पदार्थ - **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **रोचिषा** = प्रकाशमान (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **मन्द्रया** = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जिह्वया** = जिह्वा द्वारा (जिह् = जाना, जानना, पाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वक्षि** = वक्षना (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **यक्षि** = पूजा करो (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। **च** = और ॥ 1 ॥

326. तम् त्वा घृतस्नो ईमहे, चित्रभानो स्वर्दृशम् ।

देवान् आ वीतये वह ॥ 2 ॥ 5-26-2

मन्त्रार्थ :- **तम्** = उसको, उसे **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **घृतस्नो** = प्रकाशमान **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं **चित्रभानो** = हे चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले **स्वर्दृशम्** = स्वर्दृश को **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वीतये** = व्याप्त के लिए **वह** = वहन करो, ले जाओ ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **घृतस्नो** = प्रकाशमान (घृ -

गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, स्नु - भाप से टपकना, झरना, चूना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **चित्रभानो** = हे चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **स्वर्दृशम्** = स्वर्दृश को (स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, दृश्-पश्य -देखना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वीतये** = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **वह** = वहन करो, ले जाओ (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना) ॥ 2 ॥

327. वीतिहोत्रम् त्वा कवे, द्युमन्तम् सम् इधीमहि ।

अग्ने बृहन्तम् अध्वरे ॥ 3 ॥

5-26-3

मन्त्रार्थ : कवे हे कवि अग्ने अग्नि! त्वा तुमको वीतिहोत्रम् वीतिहोत्र द्युमन्तम् तेजस्वी अग्रगामी को बृहन्तम् महान् अध्वरे अहिंसा में सम् सम्यक् इधीमहि प्रकाशित करते हैं ॥ 3 ॥

भावार्थ : परमात्मा तेजस्वी अग्रणी है, कवि है। वीतिहोत्र का अर्थ है व्यापक आदान-प्रदान। परमात्मा की सृष्टि में व्यापक आदान-प्रदान चलता रहता है। प्रकृति में सभी परस्पर आदान-प्रदान करते हैं। मानव समाज में भी ऐसा होना ही चाहिए। परमात्मा तेजस्वी प्रकाशमान है, उसे हम अपने हृदय में भलीभाँति प्रकाशित करते हैं अर्थात् उसके प्रकाश को अपने हृदय में अनुभव करते हैं। स्वयम् को अपने हृदय में द्युमन्त या प्रकाशवान् करते हैं, समिधीमहि अर्थात् प्रकाशित करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ : **वीतिहोत्रम्** = आदान-प्रदान करना, दान की व्यापकता (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, हु = दान करना, आदान-प्रदान करना)। **त्वा** = तुमको। **कवे** = कवि (कु, कव् = शब्द करना)। **द्युमन्तम्** = आगे जाने वाले, अग्रगामी, तेजस्वी (द्यु = आगे जाना, समीप जाना)। **समिधीमहि** = प्रकाशित करते हैं (इध् = तेज होना, प्रकाश होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् = ऊर्ध्वगति करना, तेजस्वी होना)। **बृहन्तम्** = बड़े (बृह् = बढ़ना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (ध्वृ = हिंसा करना) ॥

(109) सूक्त 31

328. अनवः ते रथम् अश्वाय तक्षन् त्वष्टा, वज्रम् पुरुहूत द्यु मन्तम् ।

ब्रह्माणः इन्द्रम् महयन्तो अकैः, अवर्धयन् अहये हन्तवा उ ॥ 4 ॥

5-31-4

मन्त्रार्थ - **अनवः** = अनव, जो नव न हो **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **रथम्** = रथ को **अश्वाय** = अश्व के लिए, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **तक्षन्** = आच्छादित करने वाले **त्वष्टा** = त्वष्ट, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को **पुरुहूत** = हे पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को। **ब्रह्माणः** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **महयन्तो** = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ **अकैः** = गतिशील **अवर्धयन्** = बढ़ाये **अहये** = व्यापक **हन्तवा** = मारने वाला **उ** = निश्चय ही, भी ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अनवः** = अनव, जो नव न हो (अन् - जीना, समर्थ होना, जाना, नु-नव - शब्द करना, निश्चय करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अश्वाय** = अश्व के लिए, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **तक्षन्** = आच्छादित करने वाले (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। **त्वष्टा** = त्वष्ट, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला (त्वक्ष् = छीलना, रेतना, त्विष् = प्रकाशित होना, चमकना)। **वज्रम्** = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना)। **पुरुहूत** = हे पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना,

आह्वान करना)। **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **ब्रह्माणः** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **महयन्तो** = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अकैः** = गतिशील (अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना)। **अवर्धयन्** = बढ़ायें (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृध् - बढ़ना, बढ़ाना)। **अहये** = व्यापक (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **हन्तवा** = मारने वाला (हन् - मारना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय) ॥

(110) सूक्त 32

329. अदर्दः उत्सम् असृजो वि खानि, त्वम् अर्णवान् बद्धधानाम् अरम्णाः ।

महान्तम् इन्द्र पर्वतम् वि यत् वारितिवः, सृजः वि धारा अव दानवान् हन् ॥ 1 ॥ 5-32-1

मन्त्रार्थ - अदर्दः = विदीर्ण किया **उत्सम्** = उत्स को **असृजो** = सृजन किया **वि** = विशेष, विना, विलोम **खानि** = खनन करे, खोदे **त्वम्** = तुम **अर्णवान्** = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक **बद्धधानाम्** = बँधा हुआ **अरम्णाः** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त हुयी **महान्तम्** = महान् को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **पर्वतम्** = पर्वत, पर्वतों को **वि** = विशेष, विना, विलोम **वारितिवः** = वरणीय, वरण करने वालों का **सृजः** = सृजन करो **वि** = विशेष, विना, विलोम **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **यत्** = जिसे, जो **दानवान्** = दानी **हन्** = मार देता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - अदर्दः = विदीर्ण किया (अद् - खाना, नष्ट करना, दृ-चीरना, फाड़ना, टुकड़े-टुकड़े करना, दृ - दुःख देना, मार डालना)। **उत्सम्** = उत्स को (सु = उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **असृजो** = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **खानि** = खनन करे, खोदे (खन् = खनन करना, खोदना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अर्णवान्** = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **बद्धधानाम्** = बँधा हुआ (बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना)। **अरम्णाः** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त हुयी (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना)। **महान्तम्** = महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **पर्वतम्** = पर्वत, पर्वतों को (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वारितिवः** = वरणीय, वरण करने वालों का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **सृजत्** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दानवान्** = दानी (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **हन्** = मार देता है (हन् - मारना) ॥

अनुवाकः- 41

(111) सूक्त 39

330. यत् इन्द्र चित्र मेहना, अस्ति त्वादातम् अद्रिवः ।

राधः तत् नो विदद्वसो, उभया हस्त्य आ भर ॥ 1 ॥ 5-39-1

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **चित्र** = चित्र **मेहना** = सिञ्चन करने वाले **अस्ति** = है **त्वादातम्** = प्राप्त, आदान-प्रदान **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **तत्** = वह, उस को **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **विदद्वसः** = लब्धवस, धनवान्, वस को जानने वाले **उभया** = दोनों, पूर्णताओं द्वारा **हस्त्य** = हाथ **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **चित्र** = चित्र (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **मेहना** = सिञ्चन करने वाले (मिह - सिञ्चन करना, घर्षण करना, दबाना)। **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **त्वादातम्** = प्राप्त, आदान-प्रदान (तु+आदातम्, तु = तो, परन्तु, अब (अव्यय), आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्र - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद्र - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **विदद्वसः** = लब्धवस, धनवान्, वस को जानने वाले (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, प्राप्त करना, सम्पादित करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **उभया** = दोनों, पूर्णताओं द्वारा (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **हस्त्य** = हाथ (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 1 ॥

331. यत् मन्यसे वरेण्यम्, इन्द्र द्युक्षम् तत् आ भर ।

विद्याम तस्य ते वयम्, अकूपारस्य दावनः ॥ 2 ॥

5-39-2

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **मन्यसे** = मानते हो **वरेण्यम्** = वरण योग्य **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **द्युक्षम्** = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ **तत्** = वह, उस को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **विद्याम** = जानें **तस्य** = उसका **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **अकूपारस्य** = गतिशीलता से पार जाने वाला, शब्द-हीनता से पार जाने वाला, अशक्त न होने वाला, न छिपने वाला **दावनः** = दानशील, प्रगतिशील ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **मन्यसे** = मानते हो (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **वरेण्यम्** = वरण योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **द्युक्षम्** = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **विद्याम** = जानें (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। **तस्य** = उसका (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **अकूपारस्य** = गतिशीलता से पार जाने वाला, शब्द-हीनता से पार जाने वाला, अशक्त न होने वाला, न छिपने वाला (अकूपारस्य, अ-कूपारस्य, अ-कूपारस्य, अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, टेढ़ा जाना, कु - शब्द करना, कुप् - क्रोध करना, कूप - अशक्त करना, छिपना, पा - पालन करना, रक्षण करना, पार् - पूर्ण करना, कार्य समाप्त करना)। **दावनः** = दानशील, प्रगतिशील (दु-दव् - जाना, सुगन्ध लेना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना) ॥

332. यत् ते दिक्षु प्रराध्यम्, मनो अस्ति श्रुतम् बृहत्।

तेन दृढा चित् अद्रिवः, आ वाजम् दर्षि सातये ॥ 3 ॥ 5-39-3

मन्त्रार्थ :- पदार्थ :- यत् = जिसे, जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए दित्सु = क्षयमान, क्षयकारी प्रराध्यम् = उत्कृष्ट राध्य को, सिद्ध करने वाले को, सिद्धयुक्त को, पूर्णयुक्त को मनो = मन अस्ति = है श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् तेन = उससे, उसके द्वारा दृढा = दृढ़ चित् = भी, ही। अद्रिवः = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वाजम् = गतिमान, बलवान को दर्षि = आदर देते हो सातये = सतत गतिशीलता के साथ ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। दित्सु = क्षयमान, क्षयकारी (दी = क्षय होना, ह्रास होना, नष्ट होना, झरना)। प्रराध्यम् = उत्कृष्ट राध्य को, सिद्ध करने वाले को, सिद्धयुक्त को, पूर्णयुक्त को (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। मनो = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। अस्ति = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। तेन = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। दृढा = दृढ़ (दृढ-दृढ - दृढ़ होना, धारण करना, सहना, समर्थ होना, दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। चित् = भी, ही। अद्रिवः = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वाजम् = गतिमान, बलवान को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। दर्षि = आदर देते हो (दृ - आदर करना, सत्कार करना, दृष - बहना, सहना)। सातये = सतत गतिशीलता के साथ (स - सहित, साथ, अत् = सतत् गति करना) ॥ 3 ॥

(112) सूक्त 44

333. यो जागार तम् ऋचः कामयन्ते, यो जागार तम् उ सामानि यन्ति।

यो जागार तम् अयम् सोमः आह, तव अहम् अस्मि सख्ये न्योकाः ॥ 14 ॥ 5-44-14

मन्त्रार्थ :- यो = जो जागार = जागता रहता है तम् = उसको, उसे ऋचः = ऋचायें, ऋग्वेद के मन्त्र कामयन्ते = कामना, इच्छा करते हैं यो = जो जागार = जागता रहता है तम् = उसको, उसे उ = निश्चय ही, भी सामानि = साम यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं यो = जो जागार = जागता रहता है तम् = उसको, उसे अयम् = यह सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम आह = व्याप्त किया, कहा तव = तुम्हारा अहम् = मैं अस्मि = हूँ सख्ये = सखाभाव में, मित्रभाव में न्योकाः = नियत निवास वाला ॥ 14 ॥

पदार्थ :- यो = जो (सर्वनाम)। जागार = जागता रहता है (जागृ - जगना, नींद न लेना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ऋचः = ऋचायें, ऋग्वेद के मन्त्र (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। कामयन्ते = कामना, इच्छा करते हैं (कम - चाहना, इच्छा करना)। यो = जो (सर्वनाम)। जागार = जागता रहता है (जागृ - जगना, नींद न लेना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। सामानि = साम (साम - सान्त्वना देना, शान्त करना, समाधान करना)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। यो = जो (सर्वनाम)। जागार = जागता रहता है (जागृ - जगना, नींद न लेना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। अयम् = यह (सर्वनाम)। सोमः =

ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **आह** = व्याप्त किया, कहा (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हवे = शब्द करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **अस्मि** = हूँ (सर्वनाम)। **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **न्योकाः** = नियत निवास वाला (नि - निरन्तर, निश्चित, ओक - निवास करना) ॥ 14 ॥

334. अग्निः जागार तम् ऋचः कामयन्ते, अग्निः जागार तम् उ सामानि यन्ति।

अग्निः जागार तम् अयम् सोमः आह, तव अहम् अस्मि सख्ये न्योकाः ॥ 15 ॥ 5-44-15

मन्त्रार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **जागार** = जागता रहता है **तम्** = उसको, उसे **ऋचः** = ऋचायें, ऋग्वेद के मन्त्र **कामयन्ते** = कामना, इच्छा करते हैं **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **जागार** = जागता रहता है **तम्** = उसको, उसे **उ** = निश्चय ही, भी **सामानि** = साम **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **जागार** = जागता रहता है **तम्** = उसको, उसे **अयम्** = यह **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **आह** = व्याप्त किया, कहा **तव** = नीचे, दूर, प्राप्त **अहम्** = मैं **अस्मि** = हूँ **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में **न्योकाः** = नियत निवास वाला ॥ 15 ॥

पदार्थ :- **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जागार** = जागता रहता है (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ऋचः** = ऋचायें, ऋग्वेद के मन्त्र (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **कामयन्ते** = कामना, इच्छा करते हैं (कम - चाहना, इच्छा करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जागार** = जागता रहता है (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **सामानि** = साम (साम - सान्त्वना देना, शान्त करना, समाधान करना)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जागार** = जागता रहता है (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **आह** = व्याप्त किया, कहा (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हवे = शब्द करना)। **तव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **अस्मि** = हूँ (सर्वनाम)। **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **न्योकाः** = नियत निवास वाला (नि - निरन्तर, निश्चित, ओक - निवास करना) ॥ 15 ॥

अनुवाकः- 43

(113) सूक्त 68

335. प्र वो मित्राय गायत, वरुणाय विपा गिरा।

महिक्षत्रौ ऋतम् बृहत् ॥ 1 ॥ 5-68-1

मन्त्रार्थ :- **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **मित्राय** = मित्र के लिए **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **वरुणाय** = वरुण के लिए **विपा** = विशेष रक्षक, पालक **गिरा** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **महिक्षत्रौ** = महि और क्षत्र **ऋतम्** = ऋत को **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। मित्राय = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। गायत = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। वरुणाय = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। विपा = विशेष रक्षक, पालक (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना)। गिरा = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। महिक्षत्रौ = महि और क्षत्र (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, क्षत्, क्षद् = खाना, कूटना, ढकना, मार डालना, रक्षा करना)। ऋतम् = ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 1 ॥

336. सम्राजा या घृतयोनी, मित्रः च उभा वरुणः च।

देवा देवेषु प्रशस्ता ॥ 2 ॥ 5-68-2

मन्त्रार्थ :- सम्राजा = सम्यक् प्रकाशमान या = जो घृतयोनी = घृत-योनि मित्रः = मित्र च = और। उभा = दोनों, पूर्णता वरुणः = वरुण च = और। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने देवेषु = देवों में प्रशस्ता = प्रशस्त ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सम्राजा = सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। या = जो (सर्वनाम)। घृतयोनी = घृत-योनि (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, यु - मिलाना, अलग करना, बन्धन करना, बाँधना, गँथना, स्थित होना)। मित्रः = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। च = और। उभा = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। वरुणः = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। च = और। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवेषु = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। प्रशस्ता = प्रशस्त (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना) ॥ 2 ॥

337. ता नः शक्तम् पार्थिवस्य, महो रायो दिव्यस्य।

महि वाम् क्षत्रम् देवेषु ॥ 3 ॥ 5-68-3

मन्त्रार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा शक्तम् = शक्ति, सक्षमता, सामर्थ्य को पार्थिवस्य = पार्थिव का, पृथ्वी का महो = बड़े, महिमावान्, महान् रायो = गति, विद्या, वाणी दिव्यस्य = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं वाम् = तुम दोनों को क्षत्रम् = क्षत्र को, रक्षा को देवेषु = देवों में ॥ 3 ॥

पदार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। शक्तम् = शक्ति, सक्षमता, सामर्थ्य को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। पार्थिवस्य = पार्थिव का, पृथ्वी का (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना)। महो = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। रायो = गति, विद्या, वाणी (रा - देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। दिव्यस्य = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। क्षत्रम् = क्षत्र को, रक्षा को (क्षत्, क्षद् = खाना, कूटना, ढकना, मार डालना, रक्षा करना)।

देवेषु = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ 3 ॥

338. ऋतम् ऋतेन सपन्ता, इषिरम् दक्षम् आशाते ।

अद्रुहा देवौ वर्धते ॥ 4 ॥ 5-68-4

मन्त्रार्थ :- ऋतम् = ऋत को ऋतेन = ऋत द्वारा सपन्ता = संयुक्त करते हुए, पूर्ण करते हुए, मिलाते हुए इषिरम् = विद्वान्, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि देने वाले को दक्षम् = दक्ष को आशाते = आशा करते हैं, व्यापक करते हैं, संयुक्त करते हैं अद्रुहा = अद्रोही, द्रोह न करने वाला देवौ = देव-युगल वर्धते = बढ़ाते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ :- ऋतम् = ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। ऋतेन = ऋत द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। सपन्ता = संयुक्त करते हुए, पूर्ण करते हुए, मिलाते हुए (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। इषिरम् = विद्वान्, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि देने वाले को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। दक्षम् = दक्ष को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। आशाते = आशा करते हैं, व्यापक करते हैं, संयुक्त करते हैं (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शास् = आशीर्वाद देना, देना, भला चाहना, आशा करना)। अद्रुहा = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना)। देवौ = देव-युगल (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। वर्धते = बढ़ाते हैं (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना) ॥ 4 ॥

339. वृष्टिद्यावा रीत्यापा, इषः पती दानुमत्याः ।

बृहन्तम् गर्तम् आशाते ॥ 5 ॥ 5-68-5

मन्त्रार्थ :- वृष्टिद्यावा = पराक्रमी-प्रकाशशील, पराक्रमी-अग्रगामी रीत्यापा = प्रवाह करने वाले, बरसाने वाले इषः = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि पती = पति, अधिपति, रक्षक, पालक दानुमत्याः = दान करने योग्य बृहन्तम् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा गर्तम् = गर्त को आशाते = आशा करते हैं, व्यापक करते हैं, संयुक्त करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ :- वृष्टिद्यावा = पराक्रमी-प्रकाशशील, पराक्रमी-अग्रगामी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। रीत्यापा = प्रवाह करने वाले, बरसाने वाले (री - जाना, बहना, झरना, चूना, टपकना, गिरना, नीचे आना, सुनना)। इषः = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। पती = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। दानुमत्याः = दान करने योग्य (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। बृहन्तम् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। गर्तम् = गर्त को (गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना)। आशाते = आशा करते हैं, व्यापक करते हैं, संयुक्त करते हैं (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शास् = आशीर्वाद देना, देना, भला चाहना, आशा करना) ॥ 5 ॥

(114) सूक्त 70

340. पुरुरुणा चित् हि अस्ति, अवो नूनम् वाम् वरुण ।

मित्र वंसि वाम् सुमतिम् ॥ 1 ॥ 5-70-1

मन्त्रार्थ :- पुरुषाणा = बहुत-बहुत, बहुत आगे चित् = भी, ही। हि = ही, निश्चय अस्ति = है अवो = रक्षक, पालक नूनम् = निश्चय ही वाम् = तुम दोनों को वरुण = वरुण मित्र = हे मित्र वंसि = सेवा करते हो वाम् = तुम दोनों को सुमतिम् = सुमति, सुबुद्धि को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पुरुषाणा = बहुत-बहुत, बहुत आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, उरु - बहुत, विराट (सर्वनाम))। चित् = भी, ही। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। अस्ति = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना)। अवो = रक्षक, पालक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। नूनम् = निश्चय ही (अव्यय)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। वरुण = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। मित्र = हे मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। वंसि = सेवा करते हो (वन - शब्द करना, सेवा करना, सेवन करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वंश्-वंस् - देना, बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। सुमतिम् = सुमति, सुबुद्धि को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना) ॥ 1 ॥

341. ता वाम् सम्यक् अद्रुह्वाणा, इषम् अश्याम धायसे।

वयम् ते रुद्रा स्याम ॥ 2 ॥ 5-70-2

मन्त्रार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो वाम् = तुम दोनों को सम्यक् = भलीभाँति अद्रुह्वाणा = अद्रोही, द्रोह न करने वाला इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को अश्याम = अशन करते हैं, व्याप्त, व्यापक, प्राप्त करते हैं धायसे = धारण करने वाले को च = और। वयम् = हम, हम सब, हम लोग ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए रुद्रा = करुणाशील, रोने, रुलाने वाले स्याम = हों ॥ 2 ॥

पदार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। सम्यक् = भलीभाँति (अव्यय)। अद्रुह्वाणा = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। अश्याम = अशन करते हैं, व्याप्त, व्यापक, प्राप्त करते हैं (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। धायसे = धारण करने वाले को (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। च = और। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। रुद्रा = करुणाशील, रोने, रुलाने वाले (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। स्याम = हों (अस् - होना) ॥ 2 ॥

342. पातम् नो रुद्रा पायुभिः, उत त्रायेथाम् सुत्रात्रा।

तुर्याम दस्यून् तनूभिः ॥ 3 ॥ 5-70-3

मन्त्रार्थ :- पातम् = रक्षा करो, पालन करो नो = हमको, हमारे लिए, हमारा रुद्रा = करुणाशील, रोने, रुलाने वाले पायुभिः = पालन-रक्षण द्वारा, पायु द्वारा उत = ही, भी, ओर त्रायेथाम् = रक्षक, पालक, पोषक करे सुत्रात्रा = अच्छी तरह सुरक्षण, सुपालन, सुपोषण करने वाले तुर्याम = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी को दस्यून् = दस्यु-हन्ताओं को, दस्युओं को, मारने वालों को तनूभिः = तनू द्वारा, विस्तार द्वारा, वाणी द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- पातम् = रक्षा करो, पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। रुद्रा = करुणाशील, रोने, रुलाने वाले (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। पायुभिः = पालन-रक्षण द्वारा, पायु द्वारा (पय् - चलना, जाना, रक्षा करना, पालन करना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। त्रायेथाम् = रक्षक, पालक, पोषक करे (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। सुत्रात्रा = अच्छी तरह

सुरक्षण, सुपालन, सुपोषण करने वाले (सु - अच्छा, सुन्दर, उत्तम, त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **तुर्याम** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी को (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना)। **दस्यून्** = दस्यु-हन्ताओं को, दस्युओं को, मारने वालों को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **तनूभिः** = तनू द्वारा, विस्तार द्वारा, वाणी द्वारा (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 3 ॥

अनुवाक:- 44

(115) सूक्त 75

343. प्रति प्रियतमम् रथम्, वृषणम् वसुवाहनम्।

स्तोता वाम् अश्विनौ ऋषि, स्तोमेन प्रति भूषति, माध्वी मम श्रुतम् हवम् ॥ 1 ॥ 5-75-1

मन्त्रार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में प्रियतमम् = प्रियत को रथम् = रथ को वृषणम् = पराक्रमी को वसुवाहनम् = वसुवाह को, वसु को वहन करने वाले स्तोता = स्तुतिकर्ता वाम् = तुम दोनों को अश्विनौ = अश्विन युगल, तीव्र गति युक्त, व्यापक ऋषि = ऋषि स्तोमेन = प्रशंसाओं, स्तुतियों प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में भूषति = भूषित हो, भूषित करो माध्वी = माध्वी, मधुरता युक्त मम = मेरा श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को हवम् = दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। प्रियतमम् = प्रियत को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। रथम् = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। वसुवाहनम् = वसुवाह को, वसु को वहन करने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। स्तोता = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। अश्विनौ = अश्विन युगल, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। ऋषि = ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। स्तोमेन = प्रशंसाओं, स्तुतियों (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। भूषति = भूषित हो, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। माध्वी = माध्वी, मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। मम = मेरा (सर्वनाम)। श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। हवम् = दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 1 ॥

344. अति आयातम् अश्विना, तिरो विश्वाः अहम् सना।

दस्त्रा हिरण्यवर्तनी, सुषुम्णा सिन्धुवाहसा, माध्वी मम श्रुतम् हवम् ॥ 2 ॥ 5-75-2

मन्त्रार्थ :- अति = बहुत, अत्यधिक आयातम् = आये अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक तिरो = तिरछा, तिर्यक् विश्वाः = विश्व, सभी, सब अहम् = मैं सना = सेवा, दान, पूजा करने वाले दस्त्रा = नष्ट करने वाले हिरण्यवर्तनी = हिरण्य का वर्तन करने वाला सुषुम्णा = सुन्दर सृजन करने वाले, श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् सिन्धुवाहसा = सिन्धु-वाहन, सिन्धु का वहन करने वाला माध्वी = माध्वी, मधुरता युक्त मम = मेरा श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को हवम् = दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। आयातम् = आये (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आ-या

- आना, या - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **तिरो** = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। **विश्वाः** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **सना** = सेवा, दान, पूजा करने वाले (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **दस्त्रा** = नष्ट करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **हिरण्यवर्तनी** = हिरण्य का वर्तन करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **सुषुम्णा** = सुन्दर सृजन करने वाले, श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मण - अस्पष्ट शब्द करना, कहना)। **सिन्धुवाहसा** = सिन्धु-वाहन, सिन्धु का वहन करने वाला (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **माध्वी** = माध्वी, मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम्** = दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥

345. आ नो रत्नानि बिभ्रतौ, अश्विना गच्छतम् युवम्।

रुद्रा हिरण्यवर्तनी, जुषाणा वाजिनी वसू, माध्वी मम श्रुतम् हवम् ॥ 3 ॥ 5-75-3

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न **बिभ्रतौ** = भरण, धारण करते हुए **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **गच्छतम्** = जाओ **युवम्** = तुमको **रुद्रा** = करुणाशील, रोने, रुलाने वाले **हिरण्यवर्तनी** = हिरण्य का वर्तन करने वाला **जुषाणा** = विचारशील, सेवाभावी **वाजिनी** = बलवती, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **वसू** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **माध्वी** = माध्वी, मधुरता युक्त **मम** = मेरा **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को **हवम्** = दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **बिभ्रतौ** = भरण, धारण करते हुए (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **गच्छतम्** = जाओ (गम्-गच्छ् = जाना)। **युवम्** = तुमको (सर्वनाम)। **रुद्रा** = करुणाशील, रोने, रुलाने वाले (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। **हिरण्यवर्तनी** = हिरण्य का वर्तन करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **जुषाणा** = विचारशील, सेवाभावी (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **वाजिनी** = बलवती, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वसू** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **माध्वी** = माध्वी, मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम्** = दान करो, आह्वान करो, तृप्त करो (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 3 ॥

346. आ भाति अग्निः उषसाम् अनीकम्, उत् विप्राणाम् देवया वाचः अस्थुः ।

अर्वाञ्चा नूनम् रथ्या इह यातम्, पीपिवांसम् अश्विना घर्मम् अच्छ ॥ 1 ॥ 5-76-1

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भाति = प्रकाशित होता है अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् उषसाम् = प्रभात, हिंसा को अनीकम् = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण उत् = ही, भी, ओर विप्राणाम् = विशेष पूर्ण करने वाले का देवया = देव द्वारा, देव का वाचः = वाणी अस्थुः = अस्थि, अस्तित्व का आधार अर्वाञ्चा = प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक, सम्मुख नूनम् = निश्चय ही रथ्या = रथ्य इह = इसमें, यहां, यह यातम् = प्राप्त, गत, गया हुआ पीपिवांसम् = संरक्षण करने वाले को, प्रगतिशील विद्वान् को अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक घर्मम् = घर्म को अच्छ = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ ॥ 1 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) । भाति = प्रकाशित होता है (भा - चमकना, प्रकाशित होना) । अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) । उषसाम् = प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना) । अनीकम् = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना) । उत् = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात) । विप्राणाम् = विशेष पूर्ण करने वाले का (वि - विशेष, प्रा - पूर्ण करना) । देवया = देव द्वारा, देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, या - जाना, जानना, प्राप्त होना, पहुँचना) । वाचः = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना) । अस्थुः = अस्थि, अस्तित्व का आधार (अ - नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था - स्थित होना, ठहरना) । अर्वाञ्चा = प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक, सम्मुख (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर् - ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना) । नूनम् = निश्चय ही (अव्यय) । रथ्या = रथ्य (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना) । इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम) । यातम् = प्राप्त, गत, गया हुआ (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना) । पीपिवांसम् = संरक्षण करने वाले को, प्रगतिशील विद्वान् को (पि - जाना, जानना, पाना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) । अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना) । घर्मम् = घर्म को (घृ = सींचना, चमकना, प्रकाश होना) । अच्छ = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना) ॥ 1 ॥

347. न संस्कृतम् प्र मिमीतो गमिष्ठा अन्ति, नूनम् अश्विना उपस्तुता इह ।

दिवा अभिपित्वे अवसा गमिष्ठा, प्रति अवर्तिम् दाशुषे शम्-भविष्ठा ॥ 2 ॥ 5-76-2

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक संस्कृतम् = संस्कारित प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक मिमीतो = मान, गति, रक्षा, सिञ्चन करते हैं गमिष्ठा = अत्यन्त प्रगतिशील अन्ति = निकट, अन्त करने वाला, श्वास लेता है, जीवित रहता है, खाता है नूनम् = निश्चय ही अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक उपस्तुता = उपस्तुत इह = इसमें, यहां, यह दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय अभिपित्वे = सभी ओर, सर्वथा पान कर अवसा = रक्षण से गमिष्ठा = तीव्र गति प्रति = प्रतिकार, सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में अवर्तिम् = अवर्ति को, अवरणीय को, अवर्तमान को दाशुषे = दानी के लिए शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी भविष्ठा = अत्यन्त होने वाला ॥ 2 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) । संस्कृतम् = संस्कारित (सम्-संस् = सम्यक्, भलीभांति, कृ = करना) । प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग) । मिमीतो = मान, गति, रक्षा, सिञ्चन करते हैं (मा-मि - नापना, तौलना, मान करना, परिमाण करना, शब्द करना) । गमिष्ठा = अत्यन्त प्रगतिशील (गम् = जाना, जानना, पाना) । अन्ति = निकट,

अन्त करने वाला, श्वास लेता है, जीवित रहता है, खाता है (अन्ति = निकट (अव्यय), अन्त् - अन्त होना, समाप्त होना, बाँधना, पाना, हिंसा करना, अद् - खाना, अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **उपस्तुता** = उपस्तुत (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अभिपित्वे** = सभी ओर, सर्वथा पान कर (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, पी - पीना, पान करना)। **अवसा** = रक्षण से (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **गमिष्ठा** = तीव्र गति (गम् = जाना, जानना, पाना)। **प्रति** = प्रतिकार, सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (उपसर्ग)। **अवर्तिम्** = अवर्ति को, अवरणीय को, अवर्तमान को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **भविषा** = अत्यन्त होने वाला (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 2 ॥

348. उत आयातम् सङ्गवे प्रातः, अहनो मध्यन्दिने उदिता सूर्यस्य ।

दिवा नक्तम् अवसा शन्तमेन, न इदानीम् पीतिः अश्विना ततान ॥ 3 ॥ 5-76-3

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर आयातम् = आये सङ्गवे = संगव में, सम्यक् वाणी में प्रातः = प्रातः अहनो = व्यापक, व्याप्त होने के समय, दिन मध्यन्दिने = मध्य दिन में उदिता = उदय हुआ सूर्यस्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाले का दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय नक्तम् = नक्त, नष्ट, विनाशक को अवसा = रक्षण से शन्तमेन = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी न = नहीं, समान, उपमार्थक इदानीम् = अब, इस समय पीतिः = पान, पीने का कार्य अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक ततान = विस्तारित किया ॥ 3 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। आयातम् = आये (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आ-या - आना, या - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। सङ्गवे = संगव में, सम्यक् वाणी में (सम् - सम्यक्, गम् - जाना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। प्रातः = प्रातः (अव्यय)। अहनो = व्यापक, व्याप्त होने के समय, दिन (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। मध्यन्दिने = मध्य दिन में (मध्य - मध्य (सर्वनाम), दी = क्षय होना, ह्रास होना, नष्ट होना, झरना)। उदिता = उदय हुआ (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, इ = जाना, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उदि - उन्द = भिगोना, गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। सूर्यस्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाले का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। नक्तम् = नक्त, नष्ट, विनाशक को (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। अवसा = रक्षण से (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। शन्तमेन = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। इदानीम् = अब, इस समय (सर्वनाम)। पीतिः = पान, पीने का कार्य (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना,

राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। ततान = विस्तारित किया (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना) ॥ 3 ॥

(117) सूक्त 79

349. महे नो अद्य बोधय, उषो राये दिवित्मती ।

यथा चित् नो अबोधय, सत्यश्रवसि वाय्ये, सुजाते अश्वसूनृते ॥ 1 ॥ 5-79-1

मन्त्रार्थ - महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो अद्य = आज बोधय = बोध करो उषो = प्रभात, हिंसा राये = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए दिवित्मती = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। चित् = भी, ही। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो अबोधय = बोध हुआ सत्यश्रवसि = सत्य वाणी वाय्ये = गतिशील, रचनाशील में सुजाते = सुजात को अश्वसूनृते = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने ॥ 1 ॥

पदार्थ - महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। अद्य = आज (अव्यय)। बोधय = बोध करो (बुध - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। उषो = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। राये = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। दिवित्मती = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। चित् = भी, ही। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। अबोधय = बोध हुआ (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, बुध - बोध होना, जानना, समझना)। सत्यश्रवसि = सत्य वाणी (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। वाय्ये = गतिशील, रचनाशील में (वय् = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सुजाते = सुजात को (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), जागृ - जगना, नींद न लेना (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अश्वसूनृते = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना) ॥ 1 ॥

350. या सुनीथे शौचद्रथे, व्यौच्छो दुहितः दिवः ।

सा व्युच्छ सहीयसि, सत्यश्रवसि वाय्ये, सुजाते अश्वसूनृते ॥ 2 ॥ 5-79-2

मन्त्रार्थ :- या = जो सुनीथे = हे उत्तम स्तुति वाले, हे उत्तम प्रगतिशील शौचद्रथे = हे पवित्र-आदरणीय, हे पवित्र-रमणीय वि = विशेष औच्छो = पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला दुहितः = दुही हुई, दुहने वाली दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय सा = वह वि उच्छ = पूरा करो, समाप्त करो सहीयसि = अत्यन्त सहनशील, समर्थ सत्यश्रवसि = सत्य वाणी वाय्ये = गतिशील, रचनाशील में सुजाते = सुजात को अश्वसूनृते = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने ॥ 2 ॥

पदार्थ :- या = जो (सर्वनाम)। सुनीथे = हे उत्तम स्तुति वाले, हे उत्तम प्रगतिशील (सु - उत्तम, अच्छा, नी = ले जाना, नीथ - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। शौचद्रथे = हे पवित्र-आदरणीय, हे पवित्र-रमणीय (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। वि = विशेष औच्छो = पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला (उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बाँधना)। दुहितः = दुही हुई, दुहने वाली (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना,

लेना, खींचना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सा** = वह (सर्वनाम)। **वि** = विशेष **उच्छ** = पूरा करो, समाप्त करो (उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बांधना)। **सहीयसि** = अत्यन्त सहनशील, समर्थ (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **सत्यश्रवसि** = सत्य वाणी (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वाय्ये** = गतिशील, रचनाशील में (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सुजाते** = सुजात को (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), जागृ - जगना, नींद न लेना (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अश्वसूनृते** = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना) ॥ 2 ॥

351. सा नो अद्य आ भरत्-वसुः, वि उच्छा दुहितः दिवः।

यः वि औच्छः सहीयसि, सत्यश्रवसि वाय्ये, सुजाते अश्वसूनृते ॥ 3 ॥ 5-79-3

मन्त्रार्थ :- सा = वह नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अद्य = आज आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भरत् = भरण करने वाले, भरण करते हुए वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले वि = विशेष, उच्छा = पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला दुहितः = दुही हुई, दुहने वाली दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय यः = जो वि = विशेष, औच्छः = पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला सहीयसि = अत्यन्त सहनशील, समर्थ सत्यश्रवसि = सत्य वाणी वाय्ये = गतिशील, रचनाशील में सुजाते = सुजात को अश्वसूनृते = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सा = वह (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अद्य = आज (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भरत् = भरण करने वाले, भरण करते हुए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। वि = विशेष, उच्छा = पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला (उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बांधना)। दुहितः = दुही हुई, दुहने वाली (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। यः = जो (सर्वनाम)। वि = विशेष, औच्छः = पूरा करने वाला, समाप्त करने वाला (उच्छ - पूरा करना, समाप्त करना, छोड़ना, बाँधना, जकड़ कर बांधना)। सहीयसि = अत्यन्त सहनशील, समर्थ (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। सत्यश्रवसि = सत्य वाणी (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। वाय्ये = गतिशील, रचनाशील में (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सुजाते = सुजात को (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), जागृ - जगना, नींद न लेना (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अश्वसूनृते = अश्व, तीव्र गति युक्त, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना) ॥ 3 ॥

352. अद्य आ नो देव सवितः, प्रजावत् सावीः सौभगम्।

परा दुःष्वज्यम् सुव ॥ 4 ॥ 5-82-4

मन्त्रार्थ - अद्य = आज आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप सवितः = सवित, ऐश्वर्य युक्त और उत्पन्न करने वाले प्रजावत् = प्रजा के समान सावीः = उत्पन्नकर्ता, उत्पन्न करने वाली सौभगम् = सौभाग्य को, सौभग को परा = परम्, परे, पीछे, विपरीत दुःष्वज्यम् = दुःस्वज्य को सुव = उत्पन्न करो, ऐश्वर्य दो, फेंक दो, भेज दो ॥ 4 ॥

पदार्थ - अद्य = आज (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सवितः = सवित, ऐश्वर्य युक्त और उत्पन्न करने वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। प्रजावत् = प्रजा के समान (प्र - बहुत, प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। सावीः = उत्पन्नकर्ता, उत्पन्न करने वाली (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना)। सौभगम् = सौभाग्य को, सौभग को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना)। परा = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। दुःष्वज्यम् = दुःस्वज्य को (दुः = बुरा, कठिन, स्वप् - सोना, निद्रा लेना)। सुव = उत्पन्न करो, ऐश्वर्य दो, फेंक दो, भेज दो (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सू- भेजना, उड़ाना) ॥ 4 ॥

353. प्र वो महे मतयो यन्तु विष्णवे, मरुत्वते गिरिजा एवयामरुत्।

प्र शर्धाय प्र यज्यवे सुखादये तवसे, भन्ददिष्टये धुनिव्रताय शवसे ॥ 1 ॥ 5-87-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् मतयो = मतियाँ, मननशक्ति यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें विष्णवे = व्यापक के लिए मरुत्वते = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए गिरिजा = स्तुति, वाणी से उत्पन्न एवया = हे प्रगतिशील, विद्वान् मरुत् = मरुत प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक शर्धाय = विजय, शर्द्ध, बल के लिए प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक यज्यवे = यजन, यज्ञ के लिए सुखादये = उत्तम खाना, भोजन के लिए तवसे = तवस् के लिए, गति, वृद्धि, हिंसा के लिए भन्ददिष्टये = कल्याण, सुख, शुभ कर्म के लिए धुनिव्रताय = धुनि-व्रत के लिए, कम्पित करने वाले का वरण के लिए शवसे = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। मतयो = मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। विष्णवे = व्यापक के लिए (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। मरुत्वते = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। गिरिजा = स्तुति, वाणी से उत्पन्न (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। एवया = हे प्रगतिशील, विद्वान् (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, जानना, पाना, प्रेरित करना)। मरुत् = मरुत (मृ = मरना, देहत्याग करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। शर्धाय = विजय, शर्द्ध, बल के लिए (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक

(उपसर्ग)। **यज्यवे** = यजन, यज्ञ के लिए (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **सुखादये** = उत्तम खाना, भोजन के लिए (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), खद्-खाद् - खाना, हिंसा करना, स्थिर रहना)। **तवसे** = तवस् के लिए, गति, वृद्धि, हिंसा के लिए (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **भन्ददिष्टये** = कल्याण, सुख, शुभ कर्म के लिए (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **धुनिव्रताय** = धुनि-व्रत के लिए, कम्पित करने वाले का वरण के लिए (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **शवसे** = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) ॥ १ ॥

इति पञ्चम मण्डल

षष्ठ मण्डल

अनुवाकः- 45

(120) सूक्त 2

354. त्वम् हि क्षैतवत् यशो, अग्ने मित्रो न पत्यसे ।

त्वम् विचर्षणे श्रवो, वसो पुष्टिम् न पुष्यसि ॥ 1 ॥ 6-2-1

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय। क्षैतवत् = क्षैतव यशो = यश, कीर्ति अग्ने = हे अग्नि मित्रो = मित्र न = नहीं, समान, उपमार्थक पत्यसे = ऐश्वर्यवान् के लिए त्वम् = तुम विचर्षणे = विशेष विचार करने वाले श्रवो = श्रुति वसो = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का पुष्टिम् = पुष्टि को, पोषण को न = नहीं, समान, उपमार्थक पुष्यसि = पुष्ट करते हो ॥ 1 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम। हि = ही, निश्चय। क्षैतवत् = क्षैतव = क्षैतव (क्षि - निवास करना, जाना, जानना, पाना, जि - जीतना)। यशो = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। अग्ने = हे अग्नि। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आञ्जना, नरम होना, मृदुल होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पत्यसे = ऐश्वर्यवान् के लिए (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। विचर्षणे = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। श्रवो = श्रुति (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। वसो = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। पुष्टिम् = पुष्टि को, पोषण को (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पुष्यसि = पुष्ट करते हो (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना) ॥ 1 ॥

355. ऋधत् यः ते दिवो नरो, धिया मर्तस्य शमतः ।

ऊती स बृहतो दिवो, द्विषो अंहो न तरति ॥ 4 ॥ 6-2-4

मन्त्रार्थ - ऋधत् = समृद्धिशाली, वृद्धिगत, समृद्ध यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए दिवो = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय नरो = नर धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा मर्तस्य = मरणशील का शमतः = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला स = वह, उसने बृहतो = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् दिवो = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय द्विषो = द्वेष करने वाला अंहो = प्रकाशमान, शब्दकर्ता, कुटिल न = नहीं, समान, उपमार्थक तरति = तैरते हैं, तरते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ - ऋधत् = समृद्धिशाली, वृद्धिगत, समृद्ध (ऋध् - वृद्धि होना, वृद्धि करना, समृद्धि होना, ऐश्वर्य होना, आनन्दित करना, पूर्ण करना)। यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। दिवो = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। नरो = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। मर्तस्य = मरणशील का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। शमतः = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। स = वह, उसने। बृहतो = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि

होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **अंहो** = प्रकाशमान, शब्दकर्ता, कुटिल (अंह = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तरति** = तैरते हैं, तरते हैं (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना) ॥ 4 ॥

356. त्वेषः ते धूमः ऋण्वति, दिवि सम् शुक्रः आततः ।

सूरो न हि द्युता त्वम्, कृपा पावक रोचसे ॥ 6 ॥

6-2-6

मन्त्रार्थ - **त्वेषः** = प्रकाशवान् **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **धूमः** = धूम, कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला **ऋण्वति** = जाता है **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **शुक्रः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **आततः** = विस्तार किया, आश्रय दिया, वाणी दी **सूरो** = सूर्य **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **हि** = ही, निश्चय **द्युता** = प्रकाशमान **त्वम्** = तुम **कृपा** = कृपा, दया **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **रोचसे** = प्रकाशमान के लिए ॥ 6 ॥

पदार्थ - **त्वेषः** = प्रकाशवान् (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **धूम** = धूम, कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। **ऋण्वति** = जाता है (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सन्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **शुक्रः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **आततः** = विस्तार किया, आश्रय दिया, वाणी दी (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, तन् - विस्तार करना, आश्रय देना, शब्द करना, दुःख देना, आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **सूरो** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **द्युता** = प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु - अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **कृपा** = कृपा, दया (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **रोचसे** = प्रकाशमान के लिए (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना) ॥ 6 ॥

(121) सूक्त 7

357. मूर्धानम् दिवो अरतिम् पृथिव्याः, वैश्वानरम् ऋते आ जातम् अग्निम् ।

कविम् सम्राजम् अतिथिम् जनानाम्, आसन् आ पात्रम् जनयन्त देवाः ॥ 1 ॥ 6-7-1

मन्त्रार्थ :- **मूर्धानम्** - उच्च, **दिवो** - तेजस्वी, ज्योतिर्मय, **अरतिम्** - गतिशील, ज्ञानी, रति अर्थात् रमण से हीन, **पृथिव्याः** - पृथिवी, **वैश्वानरम्** - वैश्वानर को, विश्वनायक को, सभी नरों अर्थात् ले जाने वालों को अथवा विश्व हित की भावना वाले नर को, **ऋते** - ऋत में, **आ-जातम्** - उत्पन्न किया, **अग्निम्** - अग्नि को, **कविम्** - कवि को, **सम्राजम्** - सम्यक् प्रकाशमान को, **अतिथिम्** - अतिथि को, **जनानाम्** - लोगों के, **आसन्** - थे, **आ** = समन्तात्, सम्पूर्णतः **पात्रम्** - पात्र को, **जनयन्त** - उत्पन्न करते हुए, **देवाः** - देवों ने ॥ 1 ॥

भावार्थ :- परमात्मा ने ऋत के अन्तर्गत समस्त सृष्टि को उत्पन्न किया है। ऋत अर्थात् सार्वभौम सृष्टि नियमों का बोध करते हुए उनका पालन कर हम परमात्मा की व्यवस्था का लाभ पा सकते हैं।

विशेष :- विद्वानों ने पृथिव्या शब्द का अर्थ अन्तरिक्ष अथवा आकाश भी किया है। पृथ धातु का अर्थ विस्तार होना,

फैलना होता है। इसी अर्थ में यह धरती भी पृथ्वी कही जाती है तथा आकाश भी अति विस्तृत होने के कारण पृथिवी कहा जा सकता है। मन्त्र का उपयुक्त अर्थ निष्पन्न हो सके तो इस प्रकार धातुज अर्थ वेद में सर्वत्र स्वीकार्य है। १॥

पदार्थ :- मूर्द्धानम् - उच्च (मूर्द्ध = उच्च होना)। **दिवः** = तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना आदि)। **अरतिम्** - गतिशील, ज्ञानी, रति अर्थात् रमण से हीन (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, अ - नहीं, रम् - रमना, रमण करना, रति होना)। **पृथिव्याः** = पृथ्वी का (पृथु = विस्तार होना, फैकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **वैश्वानरम्** = विश्वनायक को, विश्वजन को, वैश्वानर को (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। **ऋते** = ऋत में, विना। **आ** = समन्तात्, सम्पूर्णतः (उपसर्ग)। **जातम्** = उत्पन्न किया (जन् - उत्पन्न करना)। **अग्निम्** = अग्नि को। **कविम्** - कवि को (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **सम्राजम्** - सम्यक् प्रकाशमान को (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति, राज् - चमकना, प्रकाशित होना)। **अतिथिम्** = सतत् गतिशील (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना)। **जनानाम्** - लोगों का (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **आसन्** - थे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीना, होना)। **आ** = समन्तात्, सम्पूर्णतः (उपसर्ग)। **पात्रम्** - पात्र को (पत् - ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **जनयन्त** - उत्पन्न किया (जन् = उत्पन्न करना)। **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी (दिव्, देव् = चमकना, तेजस्वी होना, विद्वान् होना) ॥ १ ॥

358. नाभिम् यज्ञानाम् सदनम् रयीणाम्, महाम् आहावम् अभि सम् नवन्त ।

वैश्वानरम् रथ्यम् अध्वराणाम्, यज्ञस्य केतुम् जनयन्त देवाः ॥ २ ॥ 6-7-2

मन्त्रार्थ :- नाभिम् = नाभि को यज्ञानाम् = यज्ञों का सदनम् = सदन को, स्थान को रयीणाम् = विद्या, गतिशीलता का महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को आहावम् = आदान को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति नवन्त = स्तुति करते हैं वैश्वानरम् = विश्वनायक को, विश्वजन को, वैश्वानर को रथ्यम् = रथ्य को अध्वराणाम् = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का यज्ञस्य = यजन का केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को जनयन्त = उत्पन्न किया देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने ॥ २ ॥

पदार्थ :- नाभिम् = नाभि को (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। यज्ञानाम् = यज्ञों का (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। सदनम् = सदन को, स्थान को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। रयीणाम् = विद्या, गतिशीलता का (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। आहावम् = आदान को (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। नवन्त = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। वैश्वानरम् = विश्वनायक को, विश्वजन को, वैश्वानर को (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। रथ्यम् = रथ्य को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। अध्वराणाम् = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। जनयन्त = उत्पन्न किया (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ २ ॥

359. त्वाम् विश्वे अमृत जायमानम्, शिशुम् न देवाः अभि सम् नवन्ते ।

तव क्रतुभिः अमृतत्वम् आयन्, वैश्वानर यत् पित्रोः अदीदेः ॥ ४ ॥ 6-7-4

मन्त्रार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी विश्वे = सभी अमृत = अमृत, मृत्यु से परे जायमानम् = उत्पन्न हुआ को शिशुम्

= शिशु को न = हमको, हमारे लिए, हमारा देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति नवन्ते = स्तुति करते हैं तव = तुम्हारा क्रतुभिः = क्रतुओं द्वारा अमृतत्वम् = अमरता को आयन् = आते हुए, आने वाले, शब्दकर्ता वैश्वानर = हे विश्वनायक यत् = जिसे, जो पित्रोः = पिताओं का अदीदेः = अविनाशी का ॥ 4 ॥

पदार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। अमृत = अमृत, मृत्यु से परे (अ - नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। जायमानम् = उत्पन्न हुआओं को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। शिशुम् = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। न = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। नवन्ते = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। क्रतुभिः = क्रतुओं द्वारा (कृ = करना)। अमृतत्वम् = अमरता को (अ - नहीं, मृ - मरना)। आयन् = आते हुए, आने वाले, शब्दकर्ता (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय्-ई - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। वैश्वानर = हे विश्वनायक (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। पित्रोः = पिताओं का (पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। अदीदेः = अविनाशी का (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, दी = नष्ट होना) ॥ 4 ॥

(122) सूक्त 8

360. प्रक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू सहः, प्र नू वोचम् विदथा जातवेदसः।

वैश्वानराय मतिः नव्यसी शुचिः, सोमः इव पवते चारुः अग्नये ॥ 1 ॥ 6-8-1

मन्त्रार्थ - प्रक्षस्य = निवास, क्षति, क्षय का वृष्णो = वर्षा करने वाला, पराक्रमी अरुषस्य = प्रगतिशील, व्यापक, अहिंसक, रोष-रहित का नू = निश्चय ही, शीघ्र ही महः = बड़े, महिमावान्, महान् प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वचो = वचन को विदथा = विद्वान् जातवेदसे = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले के लिए वैश्वानराय = विश्वनायक के लिए मतिः = मति, मननशक्ति नव्यसे = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए शुचिः = शुद्धता सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम इव = समान, की भाँति, के समान पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है चारुः = चारु अग्नये = अग्नि के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्रक्षस्य = निवास, क्षति, क्षय का (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। वृष्णो = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अरुषस्य = प्रगतिशील, व्यापक, अहिंसक, रोष-रहित का (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। नू = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। महः = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वचो = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। विदथा = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। जातवेदसे = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले के लिए (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। वैश्वानराय = विश्वनायक के लिए (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। मतिः = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। नव्यसे = नवीनता के लिए, स्तुतियोग्य के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। शुचिः = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण

करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **चारुः** = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 1 ॥

(123) सूक्त 15

361. समिद्धम् अग्निम् समिधा गिरा गृणे, शुचिम् पावकम् पुरो अध्वरे ध्रुवम्।

विप्रम् होतारम् पुरुवारम् अद्रुहम्, कविम् सुम्नैः ईमहे जातवेदसम् ॥ 7 ॥ 6-15-7

मन्त्रार्थ :- **समिद्धम्** = सम्यक् प्रकाशवान् को **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **समिधा** = सम्यक् प्रकाशवान् **गिरा** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिञ्चन करते हैं, शब्द करता हूँ **शुचिम्** = पवित्र को **पावकम्** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाले को **पुरो** = पहले **अध्वरे** = अहिंसक में **ध्रुवम्** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील को **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को **पुरुवारम्** = पुरुवार, पुरु-वरणीय, अग्र-वरणीय को **अद्रुहम्** = अद्रोही, द्रोह न करने वाले को **कविम्** = ज्ञानी, कवि **सुम्नैः** = उत्तम चिन्तन, ऐश्वर्य, सृजन द्वारा **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं **जातवेदसम्** = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले ॥ 7 ॥

पदार्थ :- **समिद्धम्** = सम्यक् प्रकाशवान् को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **समिधा** = सम्यक् प्रकाशवान् (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **गिरा** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **गृणे** = वाणी, बोध, अभिसिञ्चन करते हैं, शब्द करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **शुचिम्** = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **पावकम्** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाले को (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **पुरो** = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **ध्रुवम्** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील को (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पुरुवारम्** = पुरुवार, पुरु-वरणीय, अग्र-वरणीय को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अद्रुहम्** = अद्रोही, द्रोह न करने वाले को (द्रुह् - द्रोह करना)। **कविम्** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **सुम्नैः** = उत्तम चिन्तन, ऐश्वर्य, सृजन द्वारा (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **जातवेदसम्** = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना) ॥ 7 ॥

362. त्वाम् दूतम् अग्ने अमृतम् युगे युगे, हव्यवाहम् दधिरे पायुम् ईड्यम्।

देवासः च मर्तासः च जागृविम्, विभुम् विश्वपतिम् नमसा नि षेदिरे ॥ 8 ॥ 6-15-8

मन्त्रार्थ :- **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी **अग्ने** = हे अग्नि **अमृतम्** = न मरने वाले, अमर, अमृत को **युगे-युगे** = सभी युग में **हव्यवाहम्** = हव्य का वहन करने वाले को, आदान-प्रदान करने

योग्य को ले जाने वाले को **दधिरे** = धारण किया **पायुम्** = पायु, गति, पालन, रक्षण को **ईड्यम्** = स्तुत्य को **देवासः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **च** = और **मर्त्तसः** = मर्य, मरणशील **च** = और **जागृविम्** = जागे हुए, जाग्रत को **विभुम्** = विभू को **विश्वपतिम्** = विश्वपति को, सबके अधिपति को, विश्व-पालक को **नमसा** = नमन द्वारा **नि** = निश्चित, निरन्तर **षेदिरे** = प्राप्त किया, जाना ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अमृतम्** = न मरने वाले, अमर, अमृत को (अ - नहीं, मृ = मरना)। **युगे-युगे** = सभी युग में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। **हव्यवाहम्** = हव्य का वहन करने वाले को, आदान-प्रदान करने योग्य को ले जाने वाले को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, वह - वहन करना, ले जाना)। **दधिरे** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **पायुम्** = पायु, गति, पालन, रक्षण को (पय - चलना, जाना, रक्षा करना, पालन करना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **ईड्यम्** = स्तुत्य को (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **देवासः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **च** = और (अव्यय)। **मर्त्तसः** = मर्य, मरणशील (मृ - मरना, देहत्याग करना)। **च** = और (अव्यय)। **जागृविम्** = जागे हुए, जाग्रत को (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **विभुम्** = विभू को (वि - विशेष, भू = होना, पाना, चिन्तन करना)। **विश्वपतिम्** = विश्वपति को, सबके अधिपति को, विश्व-पालक को (विश्व - सब, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **नमसा** = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **षेदिरे** = प्राप्त किया, जाना (सिद् = हिंसा करना, अवसाद होना, जाना, जानना, पाना, सिध् = जाना, जानना, पाना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना) ॥ 8 ॥

363. विभूषन् अग्ने उभयान् अनु व्रता, दूतो देवानाम् रजसी सम् ईयसे।

यत् ते धीतिम् सुमतिम् आवृणीमहे, अध स्म नः त्रिवरुथः शिवो भव ॥ 9 ॥ 6-15-9

मन्त्रार्थ :- **विभूषन्** = विभूषित होता हुआ, विभूषित करता हुआ **अग्ने** = हे अग्नि **उभयान्** = दोनों, पूर्णताओं को **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **व्रता** = व्रत वाला **दूतो** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का **रजसी** = रजस् में **सम्** = सम्यक्, भलीभांति, **ईयसे** = जानते हो, जाते हो, प्राप्त करते हो **यत्** = जिसे, जो **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **धीतिम्** = धारणा शक्ति को **सुमतिम्** = सुमति को, सुबुद्धि को **आवृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर **स्म** = है **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **त्रिवरुथः** = त्रिवरुथ, त्रिकामनाएँ, त्रि-आच्छादन **शिवो** = कल्याणकारी **भव** = हो ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **विभूषन्** = विभूषित होता हुआ, विभूषित करता हुआ (वि - विशेष, भूष् - भूषित होना, सजाना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उभयान्** = दोनों, पूर्णताओं को (उभय - दोनो, उभ - पूर्ण करना, भरना, अद् - खाना, खिलाना, नष्ट करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **व्रता** = व्रत वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **दूतो** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **रजसी** = रजस् में (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **सम्** = सम्यक्, भलीभांति। **ईयसे** = जानते हो, जाते हो, प्राप्त करते हो (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **धीतिम्** = धारणा शक्ति को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **सुमतिम्** = सुमति को, सुबुद्धि को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न

करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **आवृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भलीभाँति, वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **स्म** = है (अस् - होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **त्रिवरूथः** = त्रिवरूथ, त्रिकामनाएँ, त्रि-आच्छादन (त्रि = तीन (संख्या)। वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **शिवो** = कल्याणकारी (शिव = कल्याण करना)। **भव** = हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 9 ॥

अनुवाक:- 46

(124) सूक्त 16

364. त्वम् अग्ने यज्ञानाम् होता, विश्वेषाम् हितः ।

देवेभिः मानुषे जने ॥ 1 ॥ 6-16-1

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम अग्ने = हे अग्नि यज्ञानाम् = यजन को होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले विश्वेषाम् = सभी का, विश्व का हितः = हित, गति, वृद्धि देवेभिः = देवों द्वारा मानुषे = मानुष, मनन के लिए जने = जन ॥ 2 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। यज्ञानाम् = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। विश्वेषाम् = सभी का, विश्व का (सर्वनाम)। हितः = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। देवेभिः = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। मानुषे = मानुष, मनन के लिए (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। जने = जन (जन = उत्पन्न होना, पैदा होना, उत्पन्न करना, पैदा करना) ॥ 1 ॥

365. स नो मन्द्राभिः अध्वरे, जिह्वाभिः यजा महः ।

आ देवान् वक्षि यक्षि च ॥ 2 ॥ 6-16-2

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मन्द्राभिः = मन्द्रियों द्वारा, स्तुत्य, आनन्दित करने वालों, विनाश करने वालों द्वारा अध्वरे = अहिंसक में जिह्वाभिः = जिह्वों द्वारा यजा = यजन करो महः = महान् आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को वक्षि = पालन करो, क्रोध करो यक्षि = पूजा करो च = और ॥ 2 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मन्द्राभिः = मन्द्रियों द्वारा, स्तुत्य, आनन्दित करने वालों, विनाश करने वालों द्वारा (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। जिह्वाभिः = जिह्वों द्वारा (जिह = जाना, जानना, पाना)। यजा = यजन करो (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। महः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। वक्षि = पालन करो, क्रोध करो (वक्ष - क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना, वक्ष - पालन करना, रक्षा करना)। यक्षि = पूजा करो (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। च = और (अव्यय) ॥ 2 ॥

366. वेत्थ आ हि वेधो अध्वनः, पथः च देव अज्जसा।

अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो ॥ 3 ॥

6-16-3

मन्त्रार्थ :- वेत्थ = जानें, जानते हो आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम हि = ही, निश्चय वेधो = विद्वान्, विधान करने वाले अध्वनः = मार्ग का पथः = पथ च = और देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण अज्जसा = स्वच्छता से, प्रकाश द्वारा अग्ने = हे अग्नि यज्ञेषु = यजनों में सुक्रतो = सुकृत, उत्तम कर्म वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वेत्थ = जानें, जानते हो। (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। वेधो = विद्वान्, विधान करने वाले (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। अध्वनः = मार्ग का (अधु = चलना, विचरण करना)। पथः = पथ (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। च = और (अव्यय)। देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अज्जसा = स्वच्छता से, प्रकाश द्वारा (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। यज्ञेषु = यजनों में (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। सुक्रतो = सुकृत, उत्तम कर्म वाले (सु = उत्तम, अच्छा, उपसर्ग, कृ = करना)। 3 ॥

367. अग्ने आ याहि वीतये, गृणानो हव्यदातये।

नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ 10 ॥

6-16-10

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें वीतये = व्याप्त के लिए गृणानो = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले हव्यदातये = हव्यदाता के लिए नि = निश्चित, निरन्तर होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले सत्सि = जाते हो बर्हिषि = बढ़ा हुआ, विराट, महान् ॥ 10 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। वीतये = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। गृणानो = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। हव्यदातये = हव्यदाता के लिए (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना, दा - दान करना, देना)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। सत्सि = जाते हो (सद् - बैठना, जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। बर्हिषि = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 10 ॥

368. तम् त्वा समिदिभः अङ्गिरो, घृतेन वर्धयामसि।

ब्रह्त् शोच यविष्ठ्य ॥ 11 ॥

6-16-11

मन्त्रार्थ :- अङ्गिरो हे अङ्गिरः (गतिशील विद्वान्) तम् उस त्वा तुमको सम् इदिभः सम्यक् प्रकाशमानों द्वारा घृतेन अभिसिञ्चन द्वारा वर्धयामसि बढ़ाते हैं। यविष्ठ्य अत्यधिक मिलाने व अलग करने योग्य बृहत् बृहत् शोचा शुद्ध करो, पवित्र करो ॥ 11 ॥

भावार्थ :- अङ्गिरः का भावार्थ परमात्मा तथा उपासक विद्वान् है। उसे प्रकाशमान लोग अभिसिञ्चन कर बढ़ा सकते हैं। सिंचाई से पौधे बढ़ते हैं, उसी तरह साधन तथा साधना से उपासना और विद्वान् बढ़ते हैं। यु धातु का अर्थ मिलाना तथा पृथक् करना दोनों ही हैं। उपासक विद्वान् अपने जीवन में मिलाने योग्य हैं तथा साधारणजनों से अलग दृष्टि भी उनके प्रति होनी चाहिए। वे समाज को पावन करते हैं ॥ 11 ॥

पदार्थ : तम् = उसको। त्वा = तुमको। समिदिभः = सम्यक् प्रकाश द्वारा (सम् + इदिभः, इदि-इन्द = परम् ऐश्वर्य होना, इन्धी = प्रकाशमान होना)। अंगिरः = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। घृतेन = प्रकाशमान द्वारा (घृ = सींचना, चमकना, प्रकाशित होना)। वर्द्धयामसि = बढ़ते हैं (वृध् = बढ़ना)। बृहत् = बड़ा (बृह = बढ़ा होना)। शोचा = शुद्ध करो, पवित्र करो (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना)। यविष्य = सर्वाधिक मिलाने व अलग करने योग्य (यु = मिलाना, अलग करना) ॥ 11 ॥

369. स नः पृथु श्रवाय्यम्, अच्छा देव विवासति ।

बृहत् अग्ने सुवीर्यम् ॥ 12 ॥

6-16-12

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पृथु = विस्तार, विस्तृत श्रवाय्यम् = श्रवाय्य को, श्रव्य को अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप विवासति = विशेष वास करता है बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् अग्ने = हे अग्नि सुवीर्यम् = उत्तम वीर को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। पृथु = विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भोजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। श्रवाय्यम् = श्रवाय्य को, श्रव्य को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। विवासति = विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 12 ॥

370. त्वाम् अग्ने पुष्करात् अधि, अथर्वा निः अमन्थत ।

मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥ 13 ॥

6-16-13

मन्त्रार्थ- त्वाम् = तुमको, तुम्हारा अग्ने = हे अग्नि पुष्करात् = पुष्कर से अधि = अधिगत, उच्च अथर्वा = अविचलित-अहिंसक निः = बिना, बाहर, निश्चित अमन्थत = मथा, मन्थन किया मूर्ध्नो = उच्च विश्वस्य = विश्व का, सभी का वाघतः = उत्थान से ॥ 13 ॥

भावार्थ - परमात्मा की वेदवाणी किसी देश या समुदाय के लिए नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए है। विश्व के पोषण की भावना से कुटिलता, हिंसा तथा विचलित होने जैसे दुर्गुणों तथा दुर्बलताओं से मुक्त होकर वेद का स्वाध्याय करना चाहिए।

पदार्थ - त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पुष्करात् = पुष्कर से (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना, कृ = करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। अथर्वा = अविचलित-अहिंसक! (अ - नहीं, थर्व - अस्थिर होना, हिंसा करना)। निः = बिना, बाहर, निश्चित (अव्यय)। अमन्थत = मथा, मन्थन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मथ् मथना, मन्थन करना)। मूर्ध्नो = उच्च (मुर् - घेरना, लपेटना, मूर्द्ध - उच्च होना)। विश्वस्य = विश्व का, सभी का। वाघतः = उत्थान से (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना) ॥ 13 ॥

371. एहि ऊ षु ब्रवाणि ते, अग्ने इत्था इतरा गिरः ।

एभिः वर्धासे इन्दुभिः ॥ 16 ॥

6-16-16

मन्त्रार्थ :- एहि = आओ, जानो ऊ = ही सु = अच्छा ब्रवाणि = बोलें ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अग्ने = हे अग्नि इत्था = इस प्रकार इतराः = अन्य गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन एभिः = इनके द्वारा वर्धासे = बढ़ो इन्दुभिः

= इन्दुओं द्वारा ॥ 16 ॥

भावार्थ :- वह अग्नि स्वरूप परमात्मा सर्वतः अग्रणी तथा सभी विद्याओं एवम् शक्तियों का स्रोत है। हम उसको बुलाते हैं तथा प्रार्थना करते हैं कि जो वेदवाणी आपने हमें प्रदान की है, हम उसका समुचित उच्चारण कर सकें, उससे शक्ति प्राप्त कर प्रत्येक उच्चारण शुद्ध और भलीभाँति कर सकें। वेदों द्वारा, वेद-मन्त्रों द्वारा ही परमात्मा हमें उन्नति का मार्ग दिखाकर जीवन में आगे बढ़ाता है, सफलता प्रदान करता है ॥ 16 ॥

पदार्थ- एहि = आओ, जानो (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण)। इहि = जाओ, जानों, इ = जाना, जानना, पाना)। ऊ = ही (अव्यय)। सु - सु = अच्छा (उपसर्ग)। ब्रवाणि - ब्रवाणि = बोलें (ब्रू - कहना, बोलना)। ते - ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अग्ने - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। इत्था = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। इतराः = अन्य (अव्यय)। गिरः - गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। एभिः = इनके द्वारा (सर्वनाम)। वर्धासे = बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। इन्दुभिः = इन्दुओं द्वारा (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 16 ॥

372. यत्र क्व च ते मनो, दक्षम् दधसे उत्तरम्।

तत्र सदः कृणवसे ॥ 17 ॥ 6-16-17

मन्त्रार्थ :- यत्र = जहाँ क्व = कहाँ च = और। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मनो = मन दक्षम् = दक्ष को दधसे = धारण करते हो उत्तरम् = उत्तर को तैरने-पार जाने को तत्र = वहाँ सदः = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। कृणवसे = करते हो ॥ 17 ॥

पदार्थ :- यत्र = जहाँ (सर्वनाम)। क्व = कहाँ (क्व = कहाँ (सर्वनाम))। च = और। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मनो = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। दक्षम् = दक्ष को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। दधसे = धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। उत्तरम् = उत्तर को तैरने-पार जाने को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तृ, तृ = तैरना, पार जाना)। तत्र = वहाँ (सर्वनाम)। सदः = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। कृणवसे = करते हो (कृ = करना) ॥ 17 ॥

373. न हि ते पूर्तम् अक्षिपद्, भुवत् नेमानाम् वसो।

अथा दुवो वनवसे ॥ 18 ॥ 6-16-18

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पूर्तम् = पूर्त को, पूरित को, पूर्ण को (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। अक्षिपत् = प्रक्षेपित किया (अ - नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना)। भुवत् = होता है (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। नेमानाम् = ले जाने वालों का (नी = ले जाना)। वसो = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का। अथा = अथ (अव्यय)। दुवो = सेवा, पीड़ा, प्रगति (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, दुवस् - पीड़ित होना, पीड़ित करना, सेवा करना)। वनवसे = वनवासी में, विद्वान् में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 18 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पूर्तम् = पूर्त को, पूरित को, पूर्ण को (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना,

आनन्द होना, पूर्ण होना)। **अक्षिपत्** = प्रक्षेपित किया (अ - नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना)। **भुवत्** = होता है (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **नेमानाम्** = ले जाने वालों का (नी = ले जाना)। **वसो** = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अथा** = अथ (अव्यय)। **दुवो** = सेवा, पीड़ा, प्रगति (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, दुवस् - पीड़ित होना, पीड़ित करना, सेवा करना)। **वनवसे** = वनवासी में, विद्वान् में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 18

374. अग्निः तिग्मेन शोचिषा, यंसद् विश्वम् नि अत्रिणम्।

अग्निः नो वनते रयिम् ॥ 28 ॥ 6-16-28

मन्त्रार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **तिग्मेन** = तिग्म द्वारा, ज्ञानी, कूटचाल द्वारा **शोचिषा** = शोचमान द्वारा **यंसद्** = यंस, नियमन करते हैं **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को **नि** = निश्चित, निरन्तर **अत्रिणम्** = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **वनते** = शब्द करता है **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को ॥ 28 ॥

पदार्थ - **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तिग्मेन** = तिग्म द्वारा, ज्ञानी, कूटचाल द्वारा (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल करना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **यंसद्** = यंस, नियमन करते हैं (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **अत्रिणम्** = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **वनते** = शब्द करता है (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना) ॥ 28 ॥

375. अग्निः वृत्राणि जङ्घनत्, द्रविणस्युः विपन्यया।

समिद्धः शुक्रः आहुतः ॥ 34 ॥ 6-16-34

मन्त्रार्थ - **समिद्धः** सम्यक प्रकाशवान् **शुक्रः** पवित्र **आहुतः** आह्वान किये, बुलाये हुए **द्रविणस्युः** प्रवाहकामी **अग्निः** अग्नि ने **वृत्राणि** वृत्रों को **विपन्यया** विशेष अर्चना से **जङ्घनत्** हनन किया ॥ 34 ॥

भावार्थ - अग्नि अर्थात् अग्रणी (परमात्मा अथवा उपासक) ने आह्वान करने पर वृत्रों का हनन किया, मार दिया। ऐसा विशेष अर्चना से सम्भव हो सका। वृत्र क्या हैं, जिनको मारना पड़ा। वृत् धातु का एक अर्थ हिंसा करना भी है। वृत्र हिंसक स्वभाव तथा हिंसक जन हैं जिनका हनन करना आवश्यक हो जाता है।

पदार्थ - **समिद्धः** सम्यक प्रकाशवान् (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना), **शुक्रः** पवित्र (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना), **आहुतः** आह्वान किये, बुलाये हुए (हु - ह्वे - आह्वान करना, दान करना, आदान-प्रदान करना), **द्रविणस्युः** प्रवाहकामी (द्रु - जाना, अनुसरण करना), **अग्निः** अग्नि (अग् - जाना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना), **वृत्राणि** वृत्रों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना), **विपन्यया** विशेष अर्चना से (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना), **जङ्घनत्** हनन किया

(हन्-वध् - वध करना, मारना, चलना, गति करना, हिंसा करना) ॥ 34 ॥

376. गर्भे मातुः पितुः पिता, विदिद्युतानो अक्षरे ।

सीदन् ऋतस्य योनिम् आ ॥ 35 ॥ 6-16-35

मन्त्रार्थ :- गर्भे = गर्भ में मातुः = माता का पितुः = पितु, गति, ज्ञान, पिता पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता विदिद्युतानो = विशेष प्रकाशमान अक्षरे = अक्षर में, क्षरणरहित में, अविनाशी में सीदन् = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए ऋतस्य = ऋत का योनिम् = योनि को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ॥ 35 ॥

पदार्थ :- गर्भे = गर्भ में (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्म् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। मातुः = माता का (मा = मान करना, मापना)। पितुः = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। विदिद्युतानो = विशेष प्रकाशमान (वि = विशेष, विना, द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। अक्षरे = अक्षर में, क्षरणरहित में, अविनाशी में (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। सीदन् = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) ॥ 2 ॥

377. ब्रह्म प्रजावत् आ, भर जातवेदो विचर्षणे ।

अग्ने यत् दीदयत् दिवि ॥ 36 ॥ 6-16-36

मन्त्रार्थ :- ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् प्रजावत् = प्रजा के समान आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो जातवेदो = जातवेद, जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले विचर्षणे = हे! विशेष विचार करने वाले अग्ने = हे अग्नि यत् = जिसे, जो दीदयत् = दिया, प्रकाशवान् दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 36 ॥

पदार्थ :- ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। प्रजावत् = प्रजा के समान (प्र - बहुत, प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। जातवेदो = जातवेद, जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। विचर्षणे = हे! विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। दीदयत् = दिया, प्रकाशवान् (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 36 ॥

378. उप त्वा रण्वसंदृशम्, प्रयस्वन्तः सहस्कृत ।

अग्रे ससृज्महे गिरः ॥ 37 ॥ 6-16-37

मन्त्रार्थ :- उप = समीप त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा रण्वसंदृशम् = रण-संदर्शन को, रमणीय-सम्यक् दृष्टि को प्रयस्वन्तः = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले सहस्कृत = हे सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहनशीलता के कर्ता अग्रे = अग्र, आगे, पहले ससृज्महे = सृजन करते हैं, सरकते हैं, प्राप्त करते हैं गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ॥ 37 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। रण्वसंदृशम् = रण-संदर्शन को, रमणीय-सम्यक् दृष्टि को (रण्व (रवि) - जाना, सम् - सम्यक्, भली आँभँति, दृश् - देखना)। प्रयस्वन्तः = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यस - उपक्षय करना, वास करना, चलना, यत्न करना)। सहस्कृत = हे सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहनशीलता के कर्ता (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, कृ - करना)। अग्रे = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ससृज्महे = सृजन करते हैं, सरकते हैं, प्राप्त करते हैं (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 37 ॥

379. उप छायां इव घृणेः, अगन्म शर्म ते वयम्।

अग्ने हिरण्यसंदृशः ॥ 38 ॥ 6-16-38

मन्त्रार्थ :- उप = समीप छायां = छाया को इव = समान, की भाँति, के समान घृणेः = शब्द-वाणी, प्रकाश अगन्म = गये, पाया, प्राप्त हुए शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वयम् = हम, हम सब, हम लोग अग्ने = हे अग्नि हिरण्यसंदृशः = प्रकाश-संदर्शन वाले ॥ 38 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। छायां = छाया को (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना, छा-छो - छाया करना, कतरना, काटना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। घृणेः = शब्द-वाणी, प्रकाश (घृण - शब्द करना, प्रकाश करना)। अगन्म = गये, पाया, प्राप्त हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। हिरण्यसंदृशः = प्रकाश-संदर्शन वाले (हिरण - प्रकाश करना, शब्द करना, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, दृश् - देखना) ॥ 38 ॥

380. यः उग्रः इव शर्यहा, तिग्मशृङ्गो न वंसगः।

अग्ने पुरो रुरोजिथ ॥ 39 ॥ 6-16-39

मन्त्रार्थ :- यः = जो उग्रः = उग्र इव = समान, की भाँति, के समान शर्यहा = शर्य-हन्ता तिग्मशृङ्गो = कुटिलता से नाश करने वाला, कुटिलता का नाश करने वाला न = नहीं, समान, उपमार्थक वंसगः = वंशगामी अग्ने = हे अग्नि पुरो = पहले रुरोजिथ = भङ्ग कर देता है, रुग्ण कर देता है, हिंसा करता है ॥ 39 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। उग्रः = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। शर्यहा = शर्य-हन्ता (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शृ - मार डालना, दुःख देना, पीड़ा करना, फटना, हिंसा करना, मारना, श्रि - सेवा करना, आश्रय करना, हन् - मारना)। तिग्मशृङ्गो = कुटिलता से नाश करने वाला, कुटिलता का नाश करने वाला (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल चलना, श्रु-शृण् = सुनना, जाना, शृ = मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वंसगः = वंशगामी (वंश्-वंस् - बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पुरो = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। रुरोजिथ = भङ्ग कर देता है, रुग्ण कर देता है, हिंसा करता है (रुज - मारना, दुःख देना, रुज - दुःख से या रोग से पीड़ित होना, वक्र होना, बाँका होना, टेढ़ा होना, टूट जाना) ॥ 39 ॥

381. अग्ने युङ्क्वा हि ये तव, अश्वासो देव साधवः।

अरम् वहन्ति मन्यवे ॥ 43 ॥ 6-16-43

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि युङ्क्वा = युक्त कीजिये हि = ही, निश्चय ये = जो तव = तुम्हारा अश्वासो = अश्व,

तीव्र गति युक्त, व्यापक **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **साधवः** = साधु के लिए **अरम्** = पर्याप्त, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले **वहन्ति** = वहन करते हैं **मन्यवे** = मन्यु के लिए, मानते हैं **॥ 43 ॥**

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **युङ्क्वा** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **ये** = जो। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **अश्वासो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **साधवः** = साधु के लिए (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय), गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना)। **वहन्ति** = वहन करते हैं (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **मन्यवे** = मन्यु के लिए, मानते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) **॥ 43 ॥**

382. अच्छा नो याहि आ वह,

अभि प्रयांसि वीतये।

आ देवान् सोम पीतये ॥ 44 ॥

6-16-44

मन्त्रार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वह** = वहन करो, ले जाओ **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्रयांसि** = प्रयाणों को **वीतये** = व्याप्त के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पीतये** = पान के लिए **॥ 44 ॥**

पदार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वह** = वहन करो, ले जाओ (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रयांसि** = प्रयाणों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **वीतये** = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) **॥ 44 ॥**

383. उत अग्ने भारत द्युमत्, अजस्रेण दविद्युतत्।

शोचा वि भाहि अजर ॥ 45 ॥

6-16-45

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर **अग्ने** = हे अग्नि **भारत** = प्रकाशमान, पोषक, भरण-पोषण करने वाला **द्युमत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ **अजस्रेण** = अजस्र, सतत, निरन्तर द्वारा **दविद्युतत्** = प्रगतिशील प्रकाशमान, विशेष प्रकाशमान **शोचा** = शुद्ध करो, पवित्र करो **वि** = विशेष, विना, विलोम **भाहि** = प्रकाश करो, प्रकाशित हो **अजर** = जरा-हीन **॥ 45 ॥**

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे

जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **भारत** = प्रकाशमान, पोषक, भरण-पोषण करने वाला (भृ - भरण-पोषण, धारण करना, भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **द्युमत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **अजस्रेण** = अजस्र, सतत, निरन्तर द्वारा (सर्वनाम, अव्यय)। **दविद्युतत्** = प्रगतिशील प्रकाशमान, विशेष प्रकाशमान (दवि- विशेष, वैदिक उपसर्ग दव-दु = जाना, द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **शोचा** = शुद्ध करो, पवित्र करो (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **भाहि** = प्रकाश करो, प्रकाशित हो (भास् - प्रकाशित होना, चमकना)। **अजर** = जरा-हीन (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना) ॥ 45 ॥

(125) सूक्त 17

384. अया वाजम् देवहितम् सनेम, मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥ 15 ॥ 6-17-15

मन्त्रार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा वाजम् = विद्या को, गति को देवहितम् = देवहित को सनेम = सनेम, दान, सेवा, सत्कार मदेम = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें शतहिमाः = सैकड़ों हिम सुवीराः = अच्छे वीर, सुवीर ॥ 15 ॥

पदार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **देवहितम्** = देवहित को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, हि = गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **सनेम** = सनेम, दान, सेवा, सत्कार (सन = सेवा करना, चाकरी करन, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें। (मद् - हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना)। **शतहिमाः** = सैकड़ों हिम (शत = सौ, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना, हिम - शीत होना)। **सुवीराः** = अच्छे वीर, सुवीर (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 15 ॥

अनुवाकः- 47

(126) सूक्त 24

385. वि त्वत् आपो न पर्वतस्य पृष्ठात्, उक्थेभिः अग्ने जनयन्त यज्ञैः ।

तम् त्वा आभिः सुष्टुतिभिः वाजयन्तः, आजिम् न गर्विवाहो जिग्युः अश्वाः ॥ 6 ॥ 6-24-6

मन्त्रार्थ - वि = विशेष, विना, विलोम त्वत् = तुमसे आपो = आप, व्याप्त, व्यापक न = नहीं, समान, उपमार्थक पर्वतस्य = पर्वत, पर्वतों का पृष्ठात् = पृष्ठ से उक्थेभिः = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा अग्ने = हे अग्नि जनयन्त = उत्पन्न किया । यज्ञै = यज्ञों द्वारा तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा आभिः = इनके द्वारा सुष्टुतिभिः = सुन्दर स्तुति द्वारा वाजयन्तः = वाजय, गति करते हैं आजिम् = सम्यक् गति, ज्ञान, स्थापन को न = नहीं, समान, उपमार्थक गर्विवाहो = गर्विवाह, वाणी, बोध, सिञ्चन का वहन करने वाला जिग्युः = स्तुति करते हो अश्वाः = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक ॥ 6 ॥

पदार्थ - वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पर्वतस्य** = पर्वत, पर्वतों का (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **पृष्ठात्** = पृष्ठ से (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी

होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जनयन्त** = उत्पन्न किया (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **यज्ञै** = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **आभिः** = इनके द्वारा (सर्वनाम)। **सुष्टुतिभिः** = सुन्दर स्तुति द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **वाजयन्तः** = वाजय, गति करते हैं (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आजिम्** = सम्यक् गति, ज्ञान, स्थापन को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **गिर्ववाहो** = गिर्ववाह, वाणी, बोध, सिञ्चन का वहन करने वाला (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **जिग्युः** = स्तुति करते हो (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अश्वाः** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना) ॥

(127) सूक्त 32

386. अपूर्व्या पुरुतमानि अस्मै, महे वीराय तवसे तुराय ।

विरिषिने वज्रिणे शन्तमानि, वचांसि आसा स्थविराय तक्षुः ॥ 1 ॥ 6-32-1

मन्त्रार्थ - **अपूर्व्या** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण **पुरुतमानि** = अत्यन्त अग्रगामी **अस्मै** = हमारे लिए **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् **वीराय** = वीर के लिए **तवसे** = तवस् के लिए, गति, वृद्धि, हिंसा के लिए **तुराय** = शीघ्रता के लिए, शीघ्रकारी, शीघ्रगामी के लिए **विरिषिने** = स्पष्ट वक्ता **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए **शन्तमानि** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **वचांसि** = वचन **आसा** = बैठने का साधन, स्थान **स्थविराय** = स्थविर के लिए **तक्षुः** = तक्ष, आच्छादित करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - **अपूर्व्या** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **पुरुतमानि** = अत्यन्त अग्रगामी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वीराय** = वीर के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **तवसे** = तवस् के लिए, गति, वृद्धि, हिंसा के लिए (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **तुराय** = शीघ्रता के लिए, शीघ्रकारी, शीघ्रगामी के लिए (तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **विरिषिने** = स्पष्ट वक्ता (वि = विशेष, विना, विलोम, रप् = स्पष्ट बोलना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **शन्तमानि** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **वचांसि** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **आसा** = बैठने का साधन, स्थान (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **स्थविराय** = स्थविर के लिए (स्था - स्थित होना, ठहरना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **तक्षुः** = तक्ष, आच्छादित करते हैं, (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना) ॥ 1 ॥

(128) सूक्त 42

387. प्रति अस्मै पिपीषते, विश्वानि विदुषे भर ।

अरङ्गमाय जग्मये, अपश्चादध्वने नरे ॥ 1 ॥ 6-42-1

मन्त्रार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **अस्मै** = हमारे लिए **पिपीषते** = पीने की इच्छा करता है **विश्वानि** = सभी **विदुषे** = विद्वान् के लिए **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **अरङ्गमाय** = विद्या, गति, शब्द को जानने, पाने के लिए **जग्मये** = गम्य, जाने योग्य, गतिशील के लिए **अपश्चात्** = पीछे नहीं **अध्वने** = मार्ग के लिए **नरे** = नर के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **पिपीषते** = पीने की इच्छा करता है (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, पिष् - पीसना, चूर्ण करना)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **विदुषे** = विद्वान् के लिए (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **अरङ्गमाय** = विद्या, गति, शब्द को जानने, पाने के लिए (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **जग्मये** = गम्य, जाने योग्य, गतिशील के लिए (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **अपश्चात्** = पीछे नहीं (अव्यय)। **अध्वने** = मार्ग के लिए (अधु = चलना, विचरण करना)। **नरे** = नर के लिए (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना) ॥ 1 ॥

388. आ ईम् एनम् प्रति एतन, सोमेभिः सोमपातमम् ।

अमत्रेभिः ऋजीषिणम्, इन्द्रम् सुतेभिः इन्दुभिः ॥ 2 ॥ 6-42-2

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **ईम्** = समान, इस प्रकार **एनम्** = इसको, इसे **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **एतन** = प्राप्त हो, आओ **सोमेभिः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ताओं, सोमों द्वारा **सोमपातमम्** = अत्यन्त सोम पालक को, अत्यन्त सोमपान करने वाले को **अमत्रेभिः** = अमत्रों द्वारा, विद्वानों द्वारा, सेवियों द्वारा **ऋजीषिणम्** = ऋजीषियों को, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवानों को **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **सुतेभिः** = ऐश्वर्यवानों, उत्पन्न हुआओं द्वारा **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **एनम्** = इसको, इसे (सर्वनाम)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **एतन** = प्राप्त हो, आओ (इ = जाना, पाना)। **सोमेभिः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ताओं, सोमों द्वारा (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सोमपातमम्** = अत्यन्त सोम पालक को, अत्यन्त सोमपान करने वाले को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अमत्रेभिः** = अमत्रों द्वारा, विद्वानों द्वारा, सेवियों द्वारा (अम् = गति, शब्द, सेवा करना)। **ऋजीषिणम्** = ऋजीषियों को, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवानों को (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सुतेभिः** = ऐश्वर्यवानों, उत्पन्न हुआओं द्वारा (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 2 ॥

389. यदी सुतेभिः इन्दुभिः, सोमेभिः प्रतिभूषथ ।

वेदा विश्वस्य मेधिरो, धृषत् तम् तम् इत् आ ईषते ॥ 3 ॥ 6-42-3

मन्त्रार्थ :- यदी = यदि **सुतेभिः** = ऐश्वर्यवानों, उत्पन्न हुआओं द्वारा **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा **सोमेभिः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ताओं, सोमों द्वारा **प्रतिभूषथ** = भूषित हों **वेदा** = वेद, ज्ञान **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का, सब का **मेधिरो** = मेधावान् **धृषत्** = विजय, गर्व **तम्** = उसको, उसे **तम्** = उसको, उसे **इत्** = ही **आ** आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, **ईषते** = ऐश्वर्य, अधिकार, प्राप्त करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यदी = यदि (अव्यय)। **सुतेभिः** = ऐश्वर्यवानों, उत्पन्न हुआ द्वारा (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इन्दुभिः** = इन्दुओं द्वारा (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। **सोमेभिः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ताओं, सोमों द्वारा (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **प्रतिभूषथ** = भूषित हों (प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में, भूष् - भूषित होना, सजाना)। **वेदा** = वेद, ज्ञान (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का, सब का (सर्वनाम)। **मेधिरो** = मेधावान् (मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **धृषत्** = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **ईषते** = ऐश्वर्य, अधिकार, प्राप्त करते हैं (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना, इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 3 ॥

390. अस्मा अस्मा इत् अन्धसो, अध्वर्यो प्र भरा सुतम्।

कुवित् समस्य जेन्यस्य, शर्धतो अभिशस्तेः अवस्वरत् ॥ 4 ॥

6-42-4

मन्त्रार्थ :- अस्मा = इस अस्मा = इस इत् = ही अन्धसो = प्राणवान्, अन्धकार से अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक भरा = पोषण करो, भरण करो सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को कुवित् = कवि, शब्दज्ञ, शब्दज्ञानी, शब्द को जानने वाला समस्य = सब का, समान का जेन्यस्य = जेन्य का, जीतने योग्य का शर्धतो = सहन करते हुए, जीतते हुए अभिशस्तेः = सर्वथा हिंसा, विनती, स्तुति, निन्दा करने वाले का अवस्वरत् = रक्षा करता है, पालन करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अस्मा = इस (सर्वनाम)। अस्मा = इस (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। अन्धसो = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। भरा = पोषण करो, भरण करो (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। कुवित् = कवि, शब्दज्ञ, शब्दज्ञानी, शब्द को जानने वाला (कु, क्व = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। समस्य = सब का, समान का (सम - सब (सर्वनाम), सम - न घबराना, एक समान रहना)। जेन्यस्य = जेन्य का, जीतने योग्य का (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, जिन - मिलाना, अलग करना)। शर्धतो = सहन करते हुए, जीतते हुए (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। अभिशस्तेः = सर्वथा हिंसा, विनती, स्तुति, निन्दा करने वाले का (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, शष् = हिंसा करना, मारना, निन्दा करना, अभिशस् = विनती करना, प्रार्थना करना, शंस = चाहना, स्तुति करना)। अवस्वरत् = रक्षा करता है, पालन करता है (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 4 ॥

(129) सूक्त 43

391. यस्य त्यत् शम्बरम् मदे, दिवोदासाय रन्धयन्।

अयम् सः सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥ 1 ॥ 6-43-1

मन्त्रार्थ - यस्य = जिसका त्यत् = वह, उसने शम्बरम् = शम्बर को, कल्याणकारी को मदे = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में दिवोदासाय = दिवोदास के लिए, तेजस्वी की सेवा के लिए रन्धयन् = हिंसा करता है अयम् = यह सः = वह, उसने सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तर्कर्ता इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुतः

= ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए पिब = पी लो ॥ 1 ॥

पदार्थ - यस्य = जिसका (सर्वनाम)। **त्यत्** = वह, उसने (सर्वनाम)। **शम्बरम्** = शम्बर को, कल्याणकारी को (शम्बर = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना, बृ - ढकना, आच्छादित करना)। **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **दिवोदासाय** = दिवोदास के लिए, तेजस्वी की सेवा के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **रन्धयन्** = हिंसा करता है (रन् = अलग करना, मिलाना, रध - पूरा करना, समाप्त करना, अपकार करना, मार डालना या दुःख देना, पक्व होना, पकना, शुद्ध होना, निर्दोष होना, गलती न करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **सः** = वह, उसने। **सोम** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 48

(130) सूक्त 44

392. यो रयिम् वो रयिन्तमो, यो द्युम्नैः द्युम्नवत्तमः ।

सोमः सुतः सः इन्द्र ते, अस्ति स्वधापते मदः ॥ 1 ॥

6-44-1

मन्त्रार्थ - यो = जो **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **वो** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए **रयिन्तमो** = विद्या, ज्ञान वाला **यो** = जो। **द्युम्नैः** = प्रकाश। **द्युम्नवत्तमः** = अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान् (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सः** = वह, उसने **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **अस्ति** = है **स्वधापते** = हे स्वधापति, स्वयम्, अपनत्व, आत्मीयता को धारण करने वाले ऐश्वर्यवान् **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति ॥ 10 ॥

पदार्थ - यो = जो। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **वो** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **रयिन्तमो** = विद्या, ज्ञान वाला (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **यो** = जो। **द्युम्नैः** = प्रकाश (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **द्युम्नवत्तमः** = अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान् (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सः** = वह, उसने। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **स्वधापते** = हे स्वधापति, स्वयम्, अपनत्व, आत्मीयता को धारण करने वाले ऐश्वर्यवान् (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 1 ॥

393. त्यम् उ वो अप्रहणम्, गृणीषे शवसः पतिम्।

इन्द्रम् विश्वासाहम् नरम्, मंहिष्ठम् विश्ववेदसम् ॥ 4 ॥

6-44-4

मन्त्रार्थ - त्यम् = उस को उ = निश्चय ही, भी वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग अप्रहणम् = अप्रहार, अहिंसक, प्रहार न करने वाले गृणीषे = शब्द, स्तुति करते हैं शवसः = शवस् का, गति, ज्ञान का पतिम् = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को विश्वासाहम् = विश्व को सहन करने में समर्थ नरम् = नर को मंहिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को विश्ववेदसम् = विश्ववेद, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले ॥ 4 ॥

पदार्थ - त्यम् = उस को (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। अप्रहणम् = अप्रहार, अहिंसक, प्रहार न करने वाले (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, हन् - मारना)। गृणीषे = शब्द, स्तुति करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। शवसः = शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। पतिम् = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। विश्वासाहम् = विश्व को सहन करने में समर्थ (विश्व - सभी, सह - सहन करना, समर्थ होना)। नरम् = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। मंहिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। विश्ववेदसम् = विश्ववेद, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले (विश्व - सभी, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना) ॥ 4 ॥

(131) सूक्त 45

394. यः आनयत् परावतः, सुनीती तुर्वशम् यदुम्।

इन्द्रः सः नो युवा सखा ॥ 1 ॥ 6-45-1

मन्त्रार्थ - यः = जो आनयत् = सम्यक् जाना, संरक्षण करना परावतः = रक्षा करो, पालन करो सुनीती = अच्छी नीति तुर्वशम् = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को यदुम् = यदु को इन्द्रः = परम ऐश्वर्य दाता सः = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा युवा = युवा सखा = मित्र ॥ 1 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। आनयत् = सम्यक् जाना, संरक्षण करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। परावतः = रक्षा करो, पालन करो (परावतः = पराया, लौटा हुआ, अव्यय, परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय) अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। सुनीती = अच्छी नीति (सु - सुन्दर, अच्छा, नी = ले जाना)। तुर्वशम् = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना, वण् - शब्द करना, तुर्व - हिंसा करना, खुरचना)। यदुम् = यदु को (यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना, दुःख देना, मारना, ठोकना, चपेटना, आज्ञा करना, एकत्र करना, मना करना, रोकना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्य दाता (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सः = वह, उसने। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। युवा = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ 1 ॥

395. तत् वो गाय सुते सचा, पुरुहूताय सत्वने।

शम् यत् गवे न शाकिने ॥ 22 ॥ 6-45-22

मन्त्रार्थ - तत् = वह, उस को वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग गाय = गाने के लिए, गायन के लिए, गाकर सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में सचा = समझदार, जानकार, सहगामी पुरुहूताय = पुरुहूत, अग्र-दत्त के लिए सत्वने = सत्वन, सत्य के लिए शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी यत् = जिसे,

जो गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए न = नहीं, समान, उपमार्थक शाकिने = शक्तिदाता के लिए ॥ 22 ॥

पदार्थ - तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **गाय** = गाने के लिए, गायन के लिए, गाकर (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **पुरुहूताय** = पुरुहूत, अग्र-दत्त के लिए (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सत्त्वने** = सत्त्वन, सत्य के लिए (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गवे** = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शाकिने** = शक्तिदाता के लिए (शक्-शक्व - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सकना) ॥ 22 ॥

396. न घा वसुः नि यमते, दानम् वाजस्य गोमतः ।

यत् सीम् उप श्रवत् गिरः ॥ 23 ॥

6-45-23

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक घा = ही वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले नि = निश्चित, निरन्तर यमते = यमन करता है दानम् = दान को वाजस्य = विद्या का, गति का गोमतः = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले यत् = जिसे, जो सीम् = बन्धन को उप - समीप, श्रवत् = श्रवण करें, सुनें, श्रवण करें गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ॥ 23 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। घा = ही (अव्यय, निपात)। वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। यमते = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। दानम् = दान को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। वाजस्य = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। गोमतः = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। सीम् = बन्धन को (सि = बाँधना, मर्यादा होना, सीमा होना)। उप - समीप, श्रवत् = श्रवण करें, सुनें, श्रवण करें (शृ = सुनना, श्रवण करना, जाना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 23 ॥

397. कुवित्सस्य प्र हि व्रजम्, गोमन्तम् दस्युहा गमत् ।

शचीभिः अप नो वरत् ॥ 24 ॥

6-45-24

मन्त्रार्थ :- कुवित्सस्य = अत्यधिक हिंसक का प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक हि = ही, निश्चय व्रजम् = प्रगतिशील, पूर्ण सिद्ध को गोमन्तम् = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को दस्युहा = दस्यु-हन्ता, दस्यु को मारने वाले गमत् = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया शचीभिः = उत्तम वाणी द्वारा अप = दूर, नीचे, अपकार नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वरत् = वरण करता हुआ ॥ 24 ॥

पदार्थ :- कुवित्सस्य = अत्यधिक हिंसक का (कुवित् = बहुत (अव्यय), सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। व्रजम् = प्रगतिशील, पूर्ण सिद्ध को (व्रज = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना)। गोमन्तम् = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों,

उपदेशकों के मत वालों को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **दस्युहा** = दस्यु-हन्ता, दस्यु को मारने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया (गम् = जाना, जानना, पाना)। **शचीभिः** = उत्तम वाणी द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वरत्** = वरण करता हुआ (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) ॥ 24 ॥

398. इमा उ त्वा शतक्रतो, अभि प्र नोनुवुः गिरः ।

इन्द्र वत्सम् न मातरः ॥ 25 ॥

6-45-25

मन्त्रार्थ - **इमा** = ये **उ** = ही **त्वा** = तुम्हारे लिए **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशीले **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **नोनुवुः** = स्तुति करते हैं **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **इन्द्र** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **वत्सम्** = बोलने वाले को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **मातरः** = माता ॥ 25 ॥

पदार्थ - **इमा** = ये। **उ** = ही। **त्वा** = तुम्हारे लिए। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील (शत - सौ, कृ - करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नोनुवुः** = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **इन्द्र** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वत्सम्** = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मातरः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) ॥ 25 ॥

399. इमा उ त्वा सुते सुते, नक्षन्ते गिर्वणो गिरः ।

गावो वत्सम् न धेनवः ॥ 28 ॥

6-45-28

मन्त्रार्थ - **इमा** = यह, इसको **उ** = निश्चय ही, भी **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **नक्षन्ते** = प्राप्त करते हुए **गिर्वणो** = वाणी, बोध, सिञ्चन **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **वत्सम्** = वत्स, वाणी को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले ॥ 28 ॥

पदार्थ - **इमा** = यह, इसको (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **नक्षन्ते** = प्राप्त करते हुए (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **गिर्वणो** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वत्सम्** = वत्स, वाणी को (वद् = कहना, बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना) ॥ 28 ॥

(132) सूक्त 46

400. त्वाम् इत हि हवामहे, सातौ वाजस्य कारवः ।

त्वाम् वृत्रेषु इन्द्र सत्पतिम्, नरः त्वाम् काष्ठासु अर्वतः ॥ 1 ॥

6-46-1

मन्त्रार्थ - **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **इत्** = ही **हि** = ही, निश्चय **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते

हैं सातौं = सतत गतिशीलता के साथ वाजस्य = विद्या का, गति का कारवः = करने वाला त्वाम् = तुमको, तुम्हारी वृत्रेषु = वृत्रों में इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सत्पतिम् = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक नरः = नर त्वाम् = तुमको, तुम्हारी काष्ठासु = प्रकाशकों में अर्वतः = अर्व से, अर्वत् का ॥ 1 ॥

भावार्थ :- हम प्रत्येक कार्य में परमात्मा का ही आह्वान करते हैं।

पदार्थ- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। सातौं = सतत गतिशीलता के साथ (स - सहित, साथ, अत् = सतत् गति करना)। वाजस्य = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। कारवः = करने वाला (कृ - करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। वृत्रेषु = वृत्रों में (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सत्पतिम् = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। नरः = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। काष्ठासु = प्रकाशकों में (कास् = प्रकाश करना)। अर्वतः = अर्व से, अर्वत् का (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचाना, हिंसा करना) ॥ 1 ॥

401. यः सत्राहा विचर्षणिः, इन्द्रम् तम् हूमहे वयम्।

सहस्रमन्यो तुविनृम्ण, सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥ 3 ॥

6-46-3

मन्त्रार्थ - यः = जो सत्राहा = विस्तार, सम्बन्ध को जानने वाला विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले इन्द्रम् = इन्द्र को तम् = उसको, उसे हूमहे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं वयम् = हम, हम सब, हम लोग सहस्रमन्यो = हजारों मन वाला तुविनृम्ण = बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले सत्पते = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक भवा = हो, हो जाये समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में ॥ 3 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। सत्राहा = विस्तार, सम्बन्ध को जानने वाला (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, हा - त्याग करना, चलना, जाना)। विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। हूमहे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। सहस्रमन्यो = हजारों मन वाला (सहस्र = हजार, मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। तुविनृम्ण = बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, नृ - ले जाना, विनम्र होना)। सत्पते = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। भवा = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 4 ॥

402. इन्द्र ज्येष्ठम् नः आ भर, ओजिष्ठम् पपुरि श्रवः ।

येन इमे चित्र वज्रहस्त, रोदसी उभे सुशिप्र प्राः ॥ 5 ॥ 6-46-5

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को नः = हमको, हमारे लिए, हमारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ओजिष्ठम् = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को पपुरि = पालन, रक्षा, पूर्ण, तृप्त करने वाले श्रवः = श्रवण करने वाले येन = जिससे, जिसके द्वारा इमे = यह, इस, ये चित्र = चित्र वज्रहस्त = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले उभे = दोनों, पूर्णता सुशिप्र = हे उत्तम विद्वान् प्राः = पालन करते हैं, पूर्ण करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना) नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। ओजिष्ठम् = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। पपुरि = पालन, रक्षा, पूर्ण, तृप्त करने वाले (पृ-पूर - पालन करना, रक्षा करना, पूर्ण करना, तृप्त करना)। श्रवः = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा। इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। चित्र = चित्र (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। वज्रहस्त = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज्र - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। उभे = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। सुशिप्र = हे उत्तम विद्वान् (सु - अच्छा, उत्तम, शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। प्राः = पालन करते हैं, पूर्ण करते हैं (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना) ॥ 5 ॥

403. यत् इन्द्र नाहुषीषु आ, ओजो नृम्णम् च कृष्टिषु ।

यत् वा पञ्च क्षितीनाम् द्युम्नम्, आ भर सत्रा विश्वानि पौंस्या ॥ 7 ॥ 6-46-7

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली नाहुषीषु = बंधनों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ओजो = ओज नृम्णम् = नर, ले जाने वाले को च = और कृष्टिषु = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन यत् = जिसे, जो वा = अथवा पञ्च = पाँच क्षितीनाम् = निवास, क्षति, क्षय का द्युम्नम् = प्रकाशमान को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो सत्रा = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी विश्वानि = सभी पौंस्या = बढ़ाने वालों को ॥ 7 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नाहुषीषु = बंधनों में (नह - बांधना, अड़ाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ओजो = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। नृम्णम् = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। च = और। कृष्टिषु = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। वा = अथवा (अव्यय)। पञ्च = पाँच (पञ्च - पाँच, संख्या)। क्षितीनाम् = निवास, क्षति, क्षय का (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। द्युम्नम् = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। सत्रा = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। पौंस्या = बढ़ाने वालों को (पुंस - बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना) ॥ 7 ॥

404. इन्द्र त्रिधातु शरणम्, त्रिवरुथम् स्वस्तिमत् ।

छर्दिः यच्छ मघवद्भ्यः, च मह्यम् च यावया दिद्युम् एभ्यः ॥ 9 ॥

6-46-9

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली **त्रिधातु** = त्रिधातु **शरणम्** = शरण को **त्रिवरूथम्** = त्रिवरूथ, त्रिकामनाएँ, त्रि-आच्छादन **स्वस्तिमत्** = कल्याण के लिए, सुख के लिए **छर्दिः** = छर्दि, सम्यक् दीपन, कथन **यच्छ** = दो, प्रदान करो **मघवद्भ्यः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, मघ के लिए **च** = और **मह्यम्** = मेरे लिए **च** = और **यावया** = अलग करना, पृथक् करना **दिद्युम्** = प्रकाशित किया **एभ्यः** = इनके लिए ॥ 9 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **त्रिधातु** = त्रिधातु (त्रि - तीन संख्या, सर्वनाम, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **शरणम्** = शरण को (श्रण - देना, दान करना, रक्षा करना, श्री - सेवा करना)। **त्रिवरूथम्** = त्रिवरूथ, त्रिकामनाएँ, त्रि-आच्छादन (त्रि = तीन (संख्या)। वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **स्वस्तिमत्** = कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **छर्दिः** = छर्दि, सम्यक् दीपन, कथन (छर्द - सम्यक् दीपन करना, कहना, उद्गार होना, वमन होना)। **यच्छ** = दो, प्रदान करो (यच्छ = देना)। **मघवद्भ्यः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, मघ के लिए (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **च** = और। **मह्यम्** = मेरे लिए (सर्वनाम)। **च** = और। **यावया** = अलग करना, पृथक् करना (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **दिद्युम्** = प्रकाशित किया (द्युत - चमकना, प्रकाशित होना)। **एभ्यः** = इनके लिए (सर्वनाम) ॥ 9 ॥

(133) सूक्त 47

405. त्रातारम् इन्द्रम् अवितारम् इन्द्रम्, हवे हवे सुहवम् शूरम् इन्द्रम्।

ह्वयामि शक्रम् पुरुहूतम् इन्द्रम्, स्वस्ति नः मघवा धातु इन्द्रः ॥ 11 ॥ 6-47-11

मन्त्रार्थ - त्रातारम् = रक्षक, पालक, पोषक **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अवितारम्** = रक्षक को **इन्द्रम्** = इन्द्र को **हवे** = दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य **हवे** = दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य **सुहवम्** = सुन्दर आह्वान को **शूरम्** = शूर को, वीर को, पराक्रमी को **इन्द्रम्** = इन्द्र को **ह्वयामि** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **शक्रम्** = सक्षम को, समर्थ करने वाले को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को **इन्द्रम्** = इन्द्र को **स्वस्ति** = कल्याण **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **धातु** = धारण करने वाला **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान ॥ 11 ॥

पदार्थ - त्रातारम् = रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अवितारम्** = रक्षक को (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **हवे** = दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **हवे** = दानयोग्य, आदान-प्रदान योग्य, तृप्ति योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सुहवम्** = सुन्दर आह्वान को (सु - सुन्दर, अच्छा, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **शूरम्** = शूर को, वीर को, पराक्रमी को (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ह्वयामि** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **शक्रम्** = सक्षम को, समर्थ करने वाले को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स्वस्ति** = कल्याण (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **धातु** = धारण करने वाला (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य

(134) सूक्त 48

406. यज्ञा यज्ञा वो अग्नये, गिरा गिरा च दक्षसे।

प्र प्र वयम् अमृतम्, जातवेदसम् प्रियम्, मित्रम् न शंसिषम् ॥ 1 ॥ 6-48-1

मन्त्रार्थ :- यज्ञा = यजन वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए अग्नये = अग्नि के लिए गिरा = स्तुतियाँ, वाणियाँ च = और दक्षसे = दक्षता के लिए प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वयम् = हम अमृतम् = न मरने वाला, अमर जातवेदसम् = जातवेद को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को प्रियम् = प्रिय मित्रम् = मित्र को न = समान शंसिषम् = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाले को ॥ 1 ॥

भावार्थ :- प्रत्येक यजन अर्थात् देवपूजा, संगतिकरण, दान आदि सत्कर्मों में तथा प्रत्येक वाणी में हम दक्षता के लिए अमृत जातवेद परमात्मा का स्मरण करते हैं। वह हमारे लिए मित्र के समान प्रशंसित है ॥ 1 ॥

पदार्थ - यज्ञा = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। अग्नये = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। गिरा = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। गिरा = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। च = और। दक्षसे = दक्षता के लिए (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। प्र - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। अमृतम् = न मरने वाला, अमर (अ - नहीं, मृ = मरना)। जातवेदसम् = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। प्रियम् - प्रियम् = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। मित्रम् - मित्रम् = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञा, नरम होना, मृदुल होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। शंसिषम् = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाले को (शंस - इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ 1 ॥

407. ऊर्जो नपातम् सः हिन अयम्, अस्म युः दाशेम हव्यदातये।

भुवत् वाजेषु अविता भुवत्, वृधे उत त्राता तनूनाम् ॥ 2 ॥ 6-48-2

मन्त्रार्थ :- ऊर्जः = ऊर्जा। नपातम् = प्राप्त किया। सः = वह, उसने। हिन = गतिशील करो, बढ़ाओ, वृद्धि करो। अयम् = यह। अस्म = हमारे लिए। युः = बन्धन, सम्बन्धी। दाशेम = दानी। हव्यदातये = हव्यदाता के लिए। भुवत् = होता हैं। वाजेषु = वाजों में। अविता = रक्षक। भुवत् = होता हैं। वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में। उत = ही। त्राता = रक्षक, पालक, पोषक। तनूनाम् = विस्तार करने वाले का ॥ 2 ॥

भावार्थ :- जो हव्यदाता है, उसके लिए परमात्मा भी दानी है। वह वाज अर्थात् विद्या-प्रगतिशीलता में रक्षक बनता है। रक्षा करने वालों की वृद्धि करता है ॥ 2 ॥

पदार्थ - ऊर्जः = ऊर्जा (ऊर्ज = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। नपातम् = प्राप्त किया (न - नहीं, पा - पलन करना, रक्षा करना, नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। सः = वह, उसने। हिन = गतिशील करो, बढ़ाओ, वृद्धि करो (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। अयम् = यह (सर्वनाम)। अस्म = हमारे लिए (सर्वनाम)। युः = बन्धन, सम्बन्धी (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना)। दाशेम = दानी (दश् = देना)। हव्यदातये = हव्यदाता के लिए (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना, दा - दान करना, देना)। भुवत् = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। वाजेषु = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना,

तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अविता** = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **उत** = ही (अव्यय)। **त्राता** = रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **तनूनाम्** = विस्तार करने वाले का (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 2 ॥

408. बृहद्भिः अग्ने अर्चिभिः, शुक्रेण देव शोचिषा।

भरद्वाजे समिधानो, यविष्ठ्य रेवत् नः, शुक्र दीहिहि द्युमत् पावक दीदिहि ॥ 9 ॥ 6-48-7

मन्त्रार्थ - बृहद्भिः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा **अग्ने** = हे अग्नि **अर्चिभिः** = अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा **शुक्रेण** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **शोचिषा** = शोचमान द्वारा **भरद्वाजे** = भरण करने वाले विद्वान् **समिधानो** = सम्यक् प्रकाशित होता हुआ **यविष्ठ्य** = सर्वाधिक मिलाने व अलग करने योग्य **रेवत्** = प्रवाह **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **शुक्र** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **दीहिहि** = रूप बनाओ, वृद्धि करो (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना)। **द्युमत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **दीदिहि** = रूप बनाओ, वृद्धि करो ॥ 9 ॥

पदार्थ - बृहद्भिः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अर्चिभिः** = अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **शुक्रेण** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिक् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **भरद्वाजे** = भरण करने वाले विद्वान् (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना, वज् - जाना, चलना, गति करना, जानना, पाना, संस्कार करना, शस्त्र बनाना)। **समिधानो** = सम्यक् प्रकाशित होता हुआ (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। **यविष्ठ्य** = सर्वाधिक मिलाने व अलग करने योग्य (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **रेवत्** = प्रवाह (रिक् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **शुक्र** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **दीहिहि** = रूप बनाओ, वृद्धि करो (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना)। **द्युमत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **दीदिहि** = रूप बनाओ, वृद्धि करो (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना) ॥ 7 ॥

409. त्वम् नः चित्र ऊत्या वसो, राधांसि चोदय।

अस्य रायः त्वम् अग्ने रथीः असि, विदा गाधम् तुचे तु नः ॥ 9 ॥ 6-48-9

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **चित्र** = चित्र, आश्चर्य करना, चेतन **ऊत्या** = वाणी द्वारा **वसो** = वसु **राधांसि** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि हो **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो **अस्य** = इसका **रायः** = गति, विद्या, वाणी **त्वम्** = तुम **अग्ने** = हे अग्नि **रथीः** = रथी, रथवाला **असि** = हो **विदा** = विद्वान् **गाधम्** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को **तुचे** = गति, वृद्धि, प्रकाश करते हैं **तु** = तो, परन्तु, अब **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 9 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **चित्र** = चित्र, आश्चर्य करना, चेतन

(चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **ऊत्या** = वाणी द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **राधांसि** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **रायः** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रथीः** = रथी, रथवाला (रम् = रमना, क्रीडा करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **विदा** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **गाधम्** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **तुचे** = गति, वृद्धि, प्रकाश करते हैं (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 9 ॥

410. पर्षि तोकम् तनयम् पतृभिः, त्वम् अदब्धैः अप्रयुत्वभिः ।

अग्ने हेडांसि दैव्या युयोधि, नो अदेवानि ह्वरांसि च ॥ 10 ॥ 6-48-10

मन्त्रार्थ :- **पर्षि** = पूर्ण करो **तोकम्** = तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास को **तनयम्** = विस्तार को, तनय को **पतृभिः** = व्यापकों द्वारा **त्वम्** = तुम **अदब्धैः** = अहिंसक, अनिन्दक **अप्रयुत्वभिः** = एकत्रितों द्वारा, अमिश्रितों द्वारा **अग्ने** = हे अग्नि **हेडांसि** = घेरने वाला, तिरस्कार करने वाला, प्रगतिशील **दैव्या** = दिव्य **युयोधि** = युद्ध किया, बद्ध किया, अलग किया, दूर करो **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अदेवानि** = अदेव, अविद्वान् **ह्वरांसि** = अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल **च** = और ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **पर्षि** = पूर्ण करो (पृ- पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना)। **तोकम्** = तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास को (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल होना, दान करना, निवास करना, ग्रहण करना, चमकना)। **तनयम्** = विस्तार को, तनय को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **पतृभिः** = व्यापकों द्वारा (पृत - व्याप्त होना, बलपूर्वक निकालना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अदब्धैः** = अहिंसक, अनिन्दक (दभ = निन्दा करना, आज्ञा देना)। **अप्रयुत्वभिः** = एकत्रितों द्वारा, अमिश्रितों द्वारा (अ - नहीं, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बाँधना, बन्धन करना, गूँथना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **हेडांसि** = घेरने वाला, तिरस्कार करने वाला, प्रगतिशील (हेड् - लपेटना, घेरना, तिरस्कार करना, गति करना, जाना, जानना, पाना)। **दैव्या** = दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **युयोधि** = युद्ध किया, बद्ध किया, अलग किया, दूर करो (युध् = युद्ध करना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अदेवानि** = अदेव, अविद्वान् (अ - नहीं, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ह्वरांसि** = अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल (ह्वे = पुकारना, ह्वृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना, निवास करना)। **च** = और (अव्यय) ॥ 10 ॥

अनुवाक:- 49

(135) सूक्त 51

411. अप त्यम् वृजिनम् रिपुम्, स्तेनम् अग्ने दुराध्यम् ।

दविष्टम् अस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥ 13 ॥

6-51-13

मन्त्रार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार **त्यम्** = उस को **वृजिनम्** = वृजन, त्याग, वर्जना को **रिपुम्** = हिंसक को **स्तेनम्** = चोर को **अग्ने** = हे अग्नि **दुराध्यम्** = दुराध्य को **दविष्टम्** = दविष्ट को **अस्य** = इसका **सत्पते** = सत्य के पत के लिए, सत्य के पालक, रक्षक **कृधी** = करो **सुगम्** = सुगामी, विद्वान् ॥ 13 ॥

पदार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **त्यम्** = उस को (सर्वनाम)। **वृजिनम्** = वृजन, त्याग, वर्जना को (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **रिपुम्** = हिंसक को (रि = हिंसा करना, जानना)। **स्तेनम्** = चोर को (स्तेन - चुराना, लूटना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दुराध्यम्** = दुराध्य को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **दविष्टम्** = दविष्ट को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **सत्पते** = सत्य के पत के लिए, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **कृधी** = करो (कृ = करना)। **सुगम्** = सुगामी, विद्वान् (सु = अच्छा, अच्छा (उपसर्ग), गम् - जाना, जानना, पाना) ॥ 13 ॥

(136) सूक्त 52

412. उप नः सूनवो गिरः, शृण्वन्तु अमृतस्य ये।

सुमृडीका भवन्तु नः ॥ 9 ॥ 6-52-9

मन्त्रार्थ - ये जो अमृतस्य अमृत (अविनाशी) के **सूनवो** सन्तान, **नः** हमारे **गिरः** वाणियों को **उप** समीप **शृण्वन्तु** सुनें। **नः** हमारे लिए **सुमृडीका** सुखकारी **भवन्तु** हों ॥ 9 ॥

भावार्थ - हम सभी अमृत अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हैं, उसके सन्तान हैं। इसी भावना के साथ दूसरों से हम अपनी बात कहते हैं और इसी भावना के साथ सुनने की अपेक्षा भी की जाती है। 9 ॥

पदार्थ - **ये** = जो अमृतस्य अमृत, अविनाशी के (मृ - मरना)। **सूनवो** = सन्तान (सू - जन्म देना, उत्पन्न करना)। **नः** = हमारे। **गिरः** = वाणियों को (गृ - सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना)। **उप** = समीप। **शृण्वन्तु** = सुनें (शृ - सुनना)। **नः** = हमारे लिए। **सुमृडीका** = सुखकारी (सु - अच्छा, सुन्दर, मृड - सुख होना)। **भवन्तु** = हों (भू - होना) ॥ 9 ॥

413. विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञिया, उभे रोदसी अपाम् नपात् च मन्म।

मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचम्, सुम्नेषु इत् वो अन्तमा मदेम ॥ 14 ॥ 6-52-14

मन्त्रार्थ - **विश्वे** = सभी **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **मम** = मेरा **शृण्वन्तु** = सुनें **यज्ञिया** = यजन **उभे** = दोनों, पूर्णता **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **अपाम्** = अपा को, पालकों का **नपात्** = प्राप्त किया **च** = और। **मन्म** = विचार **मा** = नहीं, मत **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **वचांसि** = वचन **परिचक्ष्याणि** = परिचक्ष्य, परिदर्शनीय, सभी तरफ देखने, बोलने योग्य **वोचम्** = वाणी का **सुम्नेषु** = उत्तम चिन्तनों, ऐश्वर्यों, सृजनों में **इत्** = ही **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **अन्तमा** = प्राणवान् **मदेम** = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें ॥ 14 ॥

पदार्थ - **विश्वे** = सभी (सर्वनाम)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **शृण्वन्तु** = सुनें (शृ - सुनना)। **यज्ञिया** = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ - पूर्ण करना, भरना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **नपात्** = प्राप्त किया (नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं,

पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। च = और। मन्म = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। वचांसि = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। परिचक्ष्याणि = परिचक्ष्य, परिदर्शनीय, सभी तरफ देखने, बोलने योग्य (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। वोचम् = वाणी का (वच् - बोलना, कहना)। सुम्नेषु = उत्तम चिन्तनों, ऐश्वर्यों, सृजनों में (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। इत् = ही (अव्यय)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। अन्तमा = प्राणवान् (अन् = प्राणवान् होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना)। मदेम = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें (मद् - हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना) ॥ 14 ॥

(137) सूक्त 53

414. उत नो गोषणिम् धियम्, अश्वसाम् वाजसाम् उत।

नृवत् कृणुहि वीतये ॥ 10 ॥ 6-53-10

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा गोषणिम् = शब्दकर्ता, मननशील, उपदेशक को धियम् = धारणा शक्ति, बुद्धि को अश्वसाम् = अश्वों का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का वाजसाम् = वाजों का, बलों का उत = ही, भी, ओर नृवत् = नर के समान कृणुहि = करो वीतये = रक्षा के लिए ॥ 10 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। गोषणिम् = शब्दकर्ता, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। धियम् = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। अश्वसाम् = अश्वों का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। वाजसाम् = वाजों का, बलों का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। नृवत् = नर के समान (नृ - ले जाना)। कृणुहि = करो (कृ = करना)। वीतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 10 ॥

(138) सूक्त 57

415. इन्द्रा नु पूषणा वयम्, सख्याय स्वस्तये।

हुवेम वाजसातये ॥ 1 ॥ 6-57-1

मन्त्रार्थ - इन्द्रा = परम ऐश्वर्यशाली नु = निश्चय ही, शीघ्र ही पूषणा = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता वयम् = हम, हम सब, हम लोग सख्याय = मित्र के लिए, सखा के लिए स्वस्तये = कल्याण के लिए, सुख के लिए हुवेम = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं वाजसातये = विद्यावान् के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - इन्द्रा = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। पूषणा = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। सख्याय = मित्र के लिए, सखा के लिए (सख् = मित्र होना)। स्वस्तये = कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। हुवेम = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। वाजसातये = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना,

व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 1 ॥

416. यत् इन्द्रो अनयत् रितो, महीः अपो वृषन्तमः ।

तत्र पूषा भुवत् सचा ॥ 4 ॥ 6-57-4

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् अनयत् = नहीं ले जाते हुए, प्राणवान् करते हुए, न जानते हुए, न जाते हुए, न पाते हुए रितो = प्रगतिशील, विद्वान् महीः = मही, महिमावान्, महान् अपो = पालन करने वाला वृषन्तमः = शक्तिशाली, पराक्रमी तत्र = वहाँ पूषा = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता भुवत् = होता हैं सचा = समझदार, जानकार, सहगामी ॥ 4 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अनयत् = नहीं ले जाते हुए, प्राणवान् करते हुए, न जानते हुए, न जाते हुए, न पाते हुए (अ-नयन, अन्-अयन, अ - नहीं, नी-नय - ले जाना, अन् - जीना, समर्थ होना, जाना, अन् - नहीं, इ-अय् - जाना, जानना, पाना)। रितो = प्रगतिशील, विद्वान् (रि = हिंसा करना, जानना, री - जाना, बहना, झरना, चूना, टपकना, गिरना, नीचे आना, सुनना)। महीः = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। अपो = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। वृषन्तमः = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। तत्र = वहाँ (सर्वनाम)। पूषा = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। भुवत् = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। सचा = समझदार, जानकार, सहगामी (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना) ॥ 4 ॥

(139) सूक्त 58

417. शुक्रम् ते अन्यद् यजतम् ते अन्यद्, विषुरूपे अहनी द्यौः इव असि ।

विश्वा हि माया अवसि स्वधावः, भद्रा ते पूषन् इह रातिः अस्तु ॥ 1 ॥ 6-58-1

मन्त्रार्थ - शुक्रम् = शुक्र को, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अन्यद् = अन्य, कोई और, इतर यजतम् = यजन को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अन्यद् = अन्य, कोई और, इतर विषुरूपे = विषमरूप के लिए अहनी = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की द्यौः = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी इव = समान, की भाँति, के समान असि = हो विश्वा = विश्व, सभी, सब हि = ही, निश्चय माया = माया वसि = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले स्वधावः = स्वधा युक्त भद्रा = कल्याणकारी ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पूषन् = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता इह = इसमें, यहां, यह रातिः = अनुदान अस्तु = हो ॥

पदार्थ - शुक्रम् = शुक्र को, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी को (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अन्यद् = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। यजतम् = यजन को (यज - यज्ञ करना, हवन करना, देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अन्यद् = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। विषुरूपे = विषमरूप के लिए (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। अहनी = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। द्यौः = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, प्रकाश होना, जानना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। असि = हो (अस् - होना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब

(सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **माया** = माया (मय - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **वसि** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्वधावः** = स्वधा युक्त (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना)। **भद्रा** = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पूषन्** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **रातिः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 1 ॥

(140) सूक्त 59

418. इन्द्राग्नी अपात् इयम्, पूर्वा आगात् पद्वतीभ्यः ।

हित्वी शिरो जिह्वया वावदत्, चरत् त्रिंशत् पदा नि अक्रमीत ॥ 6 ॥ 6-59-6

मन्त्रार्थ - **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि **अपात्** = पदहीन, रक्षा की **इयम्** = यह, इसको **पूर्वा** = पूर्वा, पहले **आगात्** = घूमा, भ्रमण किया, विद्यमान, प्राप्त **पद्वतीभ्यः** = पदयुक्तों से **हित्वा** = बढ़ाकर, हित, गति, वृद्धि कर **शिरो** = शिर, सुनने वाला, तीक्ष्ण, कल्याणकारी **जिह्वया** = जिह्वा से **वावदत्** = बोलती हुई **चरत्** = विचरण करती हैं **त्रिंशत्** = तीस, **पदा** = पद, पद द्वारा **नि** = निश्चित, निरन्तर **अक्रमीत** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी ॥ 6 ॥

पदार्थ - **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **अपात्** = पदहीन, रक्षा की (पद् - चलना, भूषित होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना)। **इयम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **पूर्वा** = पूर्वा, पहले (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम)। **आगात्** = घूमा, भ्रमण किया, विद्यमान, प्राप्त (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **पद्वतीभ्यः** = पदयुक्तों से (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **हित्वा** = बढ़ाकर, हित, गति, वृद्धि कर (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **शिरो** = शिर, सुनने वाला, तीक्ष्ण, कल्याणकारी (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **जिह्वया** = जिह्वा से (जिह्व - जाना, चलना, जानना, पाना)। **वावदत्** = बोलती हुई (वद् - बोलना)। **चरत्** = विचरण करती हैं (चर् - चलना, विचरण करना)। **त्रिंशत्** = तीस, संख्या, सर्वनाम)। **पदा** = पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **अक्रमीत** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना) ॥ 6 ॥

(141) सूक्त 60

419. ता हुवे ययोः इदम्, पप्ने विश्वम् पुरा कृतम् ।

इन्द्राग्नी न मर्धतः ॥ 4 ॥ 6-60-4

मन्त्रार्थ :- **ता** = वे, वह, वे दोनो **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **ययोः** = पृथक् किया **इदम्** = यह, इसको **पप्ने** = स्तुति करते हुए, स्तुत्य **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को **पुरा** = पहले **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **मर्धतः** = हिंसा करते हैं, आर्द्र करते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **ता** = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द

करना, बुलाना, आह्वान करना)। **ययोः** = पृथक् किया (यु = मिलाना, अलग करना)। **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **पप्ने** = स्तुति करते हुए, स्तुत्य (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मर्धतः** = हिंसा करते हैं, आर्द्र करते हैं (मृध - दबाना, मृध - मार डालना या दुःख देना, आर्द्र करना, गीला करना, गीला होना) ॥ 4 ॥

420. उग्रा विघनिना मृधः, इन्द्राग्नी हवामहे।

ता नो मृडातः ईदृशे ॥ 5 ॥ 6-60-5

मन्त्रार्थ- उग्रा उग्र मृधः हिंसक विघनिना हनन करने वाले इन्द्राग्नी इन्द्र और अग्नि का हवामहे आह्वान करते हैं। ता वे दोनो नो हमे ईदृशे इस प्रकार मृडातः सुखी करें ॥ 5 ॥

भावार्थ - इन्द्राग्नी का युगल रूप में आह्वान किया गया है। इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्यवान् तथा अग्नि अर्थात् अग्रणी, ज्ञानी की आवश्यकता युगल रूप में एक साथ होती ही है। ज्ञान के बिना ऐश्वर्य तथा ऐश्वर्य के बिना ज्ञान अपेक्षित परिणाम नहीं दे पाते हैं। अतः परमात्मा के दोनो दिव्य स्वरूपों का आह्वान युगल रूप में किया गया है, तभी सुख प्राप्त होना सम्भव है। इसके लिए उग्र, हिंसक, हनन करने वालों का सामना करने के लिए हममें भी ऐसी क्षमता होना आवश्यक है। इसका भी सन्देश इस मन्त्र में स्पष्ट है ॥ 5 ॥

विशेष - मृध धातु के अर्थ दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, गीला करना, गीला होना हैं। घन - हन् धातु के अर्थ हिंसा करना, मार डालना हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ- उग्रा = उग्र मृधः = हिंसक (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, गीला करना, गीला होना) **विघनिना** = हनन करने वाले (घन्-हन् - मारना, हिंसा करना) **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना) **हवामहे** = आह्वान करते हैं (ह्वे - आह्वान करना)। **ता** = वे दोनो **नो** = हमे **ईदृशे** = इस प्रकार **मृडातः** = सुखी करें (मृड् - सुख होना) ॥ 5 ॥

421. हथो वृत्राणि आर्या, हतो दासानि सत्पती।

हथो विश्वाः अप द्विषः ॥ 6 ॥ 6-60-6

मन्त्रार्थ :- हथो = मारा गया वृत्राणि = वृत्रों को, हिंसा को आर्या = आर्य, सम्यक् वचन, वाणी, गति, प्राप्ति करने वाला हतो = मारा गया दासानि = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी सत्पती = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक हथो = मारा गया विश्वाः = विश्व, सभी, सब अप = दूर, नीचे, अपकार द्विषः = द्वेष करने वाला ॥ 6 ॥

पदार्थ :- हथो = मारा गया (हन् - मारना)। वृत्राणि = वृत्रों को, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। आर्या = आर्य, सम्यक् वचन, वाणी, गति, प्राप्ति करने वाला (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अर् - ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना)। हतो = मारा गया (हन् - मारना)। दासानि = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी (दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। सत्पती = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। हतो = मारा गया (हन् - मारना)। विश्वाः = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। द्विषः = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना) ॥ 6 ॥

422. इन्द्राग्नी युवाम् इमे, अभि स्तोमाः अनूषत।

पिबतम् शम्भुवा सुतम् ॥ 7 ॥ 6-60-7

मन्त्रार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि युवाम् = तुम दोनों ने, तुम दोनों को इमे = यह, इस, ये अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा स्तोमाः = स्तोम अनूषत = अनुताप किया पिबतम् = पियो, पान करें शम्भुवा =

कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को ॥ 7 ॥

पदार्थ :- इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। युवाम् = तुम दोनों ने, तुम दोनों को (सर्वनाम)। इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। स्तोमाः = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। अनूषत = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। पिबतम् = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। शम्भुवा = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 7 ॥

423. या वाम् सन्ति पुरुस्पृहो, नियुतो दाशुषे नरा ।

इन्द्राग्नी ताभिः आ गतम् ॥ 8 ॥

6-60-8

मन्त्रार्थ :- या = जो वाम् = तुम दोनों को सन्ति = हैं पुरुस्पृहो = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले नियुतो = नियुक्त दाशुषे = दानी के लिए नरा = नर इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि ताभिः = उनके द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गतम् = गये हुए को, संगत को ॥ 8 ॥

पदार्थ :- या = जो (सर्वनाम)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। सन्ति = हैं (अस् - होना)। पुरुस्पृहो = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले (स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। नियुतो = नियुक्त (नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, यु - मिलाना, अलग करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना)। नरा = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। ताभिः = उनके द्वारा (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। गतम् = गये हुए को, संगत को (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥

424. ताभिः आ गच्छतम् नरा, उप इदम् सवनम् सुतम् ।

इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥ 9 ॥

6-60-9

मन्त्रार्थ :- ताभिः = उनके द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गच्छतम् = जाओ नरा = नर उप = समीप इदम् = यह, इसको सवनम् = सवन को, उत्पन्न करने को सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए ॥ 9 ॥

पदार्थ :- ताभिः = उनके द्वारा (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। गच्छतम् = जाओ (गम् - गच्छ = जाना)। नरा = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। उप = समीप (उपसर्ग)। इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। सवनम् = सवन को, उत्पन्न करने को (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 9 ॥

425. तम् ईडिष्व यो अर्चिषा, वना विश्वा परिष्वजत् ।

कृष्णा कृणोति जिह्वया ॥ 10 ॥ 6-60-10

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे ईडिष्व = स्तुत्य, स्तुति करो यो = जो अर्चिषा = अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा वना = वन विश्वा = विश्व, सभी, सब परिष्वजत् = चारो ओर से घेरते हुए, लपेटते हुए कृष्णा = कृष्ण कृणोति = करता है जिह्वया = जिह्वा से ॥ 10 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ईडिष्व = स्तुत्य, स्तुति करो (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। यो = जो (सर्वनाम)। अर्चिषा = अर्चि, पूजा, सेवा, मान द्वारा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। वना = वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। परिष्वजत् = चारो ओर से घेरते हुए, लपेटते हुए (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्वज - घेरना, लपेटना, आलिङ्गन करना, गले लगाना)। कृष्णा = कृष्ण (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। कृणोति = करता है (कृ = करना)। जिह्वया = जिह्वा से (जिह्व - जाना, चलना, जानना, पाना) ॥ 10 ॥

426. यः इद्धे आविवासति, सुम्नम् इन्द्रस्य मर्त्यः ।

द्युम्नाय सुतराः अपः ॥ 11 ॥ 6-60-11

मन्त्रार्थ :- यः = जो इद्धे = प्राप्त करते हैं आविवासति = वास करते हैं सुम्नम् = सुविचार अथवा सृजन, रचनाशीलता को इन्द्रस्य = इन्द्र का मर्त्यः = मरणशील द्युम्नाय = प्रकाश, अग्रगामी के लिए सुतराः = उत्तम पार कराने वाले, उत्तम पार करने वाले अपः = पालन करने वाला ॥ 11 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। इद्धे = प्राप्त करते हैं (इ - जाना, जानना, पाना)। आविवासति = वास करते हैं (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, वस् - बसना, रहना, निवास करना)। सुम्नम् = सुविचार अथवा सृजन, रचनाशीलता को (सु - अच्छा, सुन्दर, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। मर्त्यः = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। द्युम्नाय = प्रकाश, अग्रगामी के लिए (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। सुतराः = उत्तम पार कराने वाले, उत्तम पार करने वाले (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। अपः = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना) ॥ 11 ॥

427. ता नो वाजवतीः इषः, आशून् पिपृतम् अर्वतः ।

आ इन्द्रम् अग्निम् च वोढवे ॥ 12 ॥ 6-60-12

मन्त्रार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वाजवतीः = वाजवान् इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि करने वाले आशून् = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक पिपृतम् = पूर्ण करो, भरो अर्वतः = अर्व से, अर्वत् का आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को च = और। वोढवे = प्राप्त करने के लिए, वहन करने के लिए ॥ 12 ॥

पदार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वाजवतीः = वाजवान् (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि करने वाले (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। आशून् = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। पिपृतम् = पूर्ण करो, भरो (पृ - पूर्ण करना, भरना)। अर्वतः = अर्व से, अर्वत् का (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना,

शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **च** = और। **वोढवे** = प्राप्त करने के लिए, वहन करने के लिए (वह - बहना, झरना, ढोना) ॥

(142) सूक्त 61

428. उत नः प्रिया प्रियासु, सप्त-स्वसा सुजुष्टा ।

सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥ 10 ॥

6-61-10

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर नः = हमको, हमारे लिए, हमारा प्रिया = प्रिय प्रियासु = प्रियों में सप्त = सात स्वसा = स्वत्व, सृजन, ऐश्वर्य सुजुष्टा = सुविचारित, सुसेवित सरस्वती = सरस्वती स्तोम्या = स्तोम्य, स्तुति योग्य भूत् = हो ॥ 10 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। प्रिया = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। प्रियासु = प्रियों में (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। सप्त = सात (संख्या)। स्वसा = स्वत्व, सृजन, ऐश्वर्य (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना)। सुजुष्टा = सुविचारित, सुसेवित (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। सरस्वती = सरस्वती (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना, स - साथ, सहित, रस् - स्वाद लेना, प्रीति करना, शब्द करना)। स्तोम्या = स्तोम्य, स्तुति योग्य (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। भूत् = हो (भू = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 10 ॥

अनुवाक:- 50

(143) सूक्त 70

429. घृतवती भुवनानाम् अभि श्रिया उर्वी, पृथ्वी मधुदुधे सुपेशसा ।

द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा, विष्कभिते अजरे भूरि रेतसा ॥ 1 ॥

6-70-1

मन्त्रार्थ - घृतवती घृतवती, भुवनानाम् भुवनों की अभि श्रिया अभिश्रिया, विष्कभिते विस्तृत पृथ्वी पृथ्वी मधुदुधे मधु का दोहन करने वाली उर्वी सहनशील, समर्थ सुपेशसा सुन्दर गति वाली (है)। द्यावापृथिवी द्यावा-पृथिवी वरुणस्य वरुण के धर्मणा धर्म से अजरे अजर (और) भूरि बहु रेतसा रेतस् है। 1 ॥

भावार्थ - पृथ्वी तथा द्यावा-पृथिवी हमारे जीवन का आश्रय हैं। पृथ्वी पर तो हमारा प्रत्यक्षतः निवास है ही, द्यावा-पृथिवी अर्थात् सूर्य आदि नक्षत्र तथा पृथिवी जैसे निवास योग्य ग्रह मिलकर ही जीवन को उत्पन्न तथा संरक्षण करने में सक्षम हैं। 1 ॥

पदार्थ :- घृतवती = घृतवती (घृ = सींचना, चमकना, प्रकाशित होना)। भुवनानाम् = भुवनों की (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। अभि = सभी ओर। श्रिया = अभिश्रिया (श्रि - सेवा करना)। उर्वी = सहनशील, समर्थ (उर्वी - सहना, समर्थ होना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। पृथ्वी = पृथ्वी (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना)। मधुदुधे = मधु का दोहन करने वाली (मध = मीठा होना, मधुर होना, दुह - दुहना)। सुपेशसा = सुन्दर गति वाली (सु - सुन्दर, पेश - जाना, भरना)। द्यावापृथिवी = आगे जाकर विस्तार करना, द्यावा और पृथिवी (द्यु = आगे जाना, प्रकाश होना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। वरुणस्य = वरुण का (वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। धर्मणा = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना)। विष्कभिते = विस्तृत (विष् - व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। अजरे = अजर (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, अ - नहीं, जृ - जीर्ण होना)। भूरि = बहुत। रेतसा = रेतस् (रि = जाना, जानना, पाना) ॥ 1 ॥

430. अवसृष्टा परापत, शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।

गच्छ अमित्रान् प्र पद्यस्व, मा अमीषाम् कम् चन उत् शिषः ॥ 16 ॥ 6-75-16

मन्त्रार्थ - अवसृष्टा = अवसर्जन किया हुआ, अवसर्जन करने वाला। परापत = परागति से ऊपर उठो। शरव्ये = शरव्य के लिए। ब्रह्मसंशिते = ब्रह्मसंशित के लिए। गच्छ = जाओ। अमित्रान् = अमित्रों को, अस्नेही जनों को। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक। पद्यस्व = चलो। मा = नहीं, मत। अमीषाम् = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक इच्छा को। कम् = किसको। चन = ही। उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। शिषः = शिष, प्रयोजन, अनुशासन ॥ 16 ॥

पदार्थ - अवसृष्टा = अवसर्जन किया हुआ, अवसर्जन करने वाला (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, सृज् - रचना करना, बनाना, उत्पादन करना, त्याग करना)। परापत = परागति से ऊपर उठो (पत् = ऐश्वर्य होना, जाना, जानना, पाना, नीचे गति करना, परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय))। शरव्ये = शरव्य के लिए (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शृ - मार डालना, दुःख देना, पीड़ा करना, फटना, हिंसा करना, मारना, श्रि - सेवा करना, आश्रय करना)। ब्रह्मसंशिते = ब्रह्मसंशित के लिए (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। गच्छ = जाओ (गम्-गच्छ् = जाना)। अमित्रान् = अमित्रों को, अस्नेही जनों को (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। पद्यस्व = चलो (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। अमीषाम् = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक इच्छा को (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना)। कम् = किसको (सर्वनाम)। चन = ही। उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। शिषः = शिष, प्रयोजन, अनुशासन (शिष् - प्रयोजन करना, शेष रखना, अनुशासन करना, आशीर्वाद देना, हिंसा करना) ॥ 16 ॥

431. यत्र वाणाः सम् पतन्ति, कुमाराः विशिखाः इव ।

तत्र नो ब्रह्मणः पतिः, अदितिः शर्म यच्छतु

विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥ 17 ॥ 6-75-17

मन्त्रार्थ :- यत्र = जहाँ वाणाः = वाणियाँ सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति पतन्ति = गिरते हैं, उड़ते हैं कुमाराः = कुमार विशिखाः = विशिखा इव = समान, की भाँति, के समान तत्र = वहाँ नो = हमको, हमारे लिए, हमारा ब्रह्मणः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक अदितिः = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि यच्छतु = दो, प्रदान करो विश्वाहा = सभी का हनन करने वाले शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि यच्छतु = दो, प्रदान करो ॥ 17 ॥

पदार्थ :- यत्र = जहाँ (सर्वनाम)। वाणाः = वाणियाँ (वण् - बोलना, भीड़ होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। पतन्ति = गिरते हैं, उड़ते हैं (पत् = जाना, उड़ना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। कुमारा = कुमार (कुमार - खेलना, बालक के समान क्रीड़ा करना, कुम् = चाहना, इच्छा करना)। विशिखाः = विशिखा (वि - विशेष, विपरीत, शि = तीक्ष्ण करना, पैना करना, छील के पैना करना, शि = तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, शी = सोना, शयन करना, शाख = शाखा फैलना, डालें पैदा होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। तत्र = वहाँ (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ब्रह्मणः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। अदितिः = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। यच्छतु = दो, प्रदान करो (यच्छ = देना)। विश्वाहा = सभी का हनन करने वाले (विश्व = सब, सर्वनाम, हन् - मारना)।

शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। यच्छतु = दो, प्रदान करो (यच्छ = देना) ॥ 17 ॥

432. मर्माणि ते वर्मणा छादयामि, सोमः त्वा राजा अमृतेन् अनु वस्ताम् ।

उरोः वरीयो वरुणः ते कृणोतु, जयन्तम् त्वा अनु देवा मदन्तु ॥ 18 ॥ 6-75-18

मन्त्रार्थ - मर्माणि = मर्म को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए । वर्मणा = वर्मण । छादयामि = आच्छादन करता हूँ । सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम । त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा । राजाम् = राजा । अमृतेन = अमृत द्वारा । अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल । वस्ताम् = वास कर । उरोः = बहुत, गमनीय, गतिशील, गति, व्यापकता, विस्तार । वरीयो = वरीय । वरुणः = वरुण । ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए । कृणोतु = करो । जयन्तम् = जीतने वाले । त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा । अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल । देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने । मदन्तु = हर्षित, तृप्त

पदार्थ - मर्माणि = मर्म को (मृ = मरना, देहत्याग करना) । ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) । वर्मणा = वर्मण (वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना) । छादयामि = आच्छादन करता हूँ (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना) । सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना) । त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम) । राजाम् = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) । अमृतेन = अमृत द्वारा (अ - नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना) । अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग) । वस्ताम् = वास कर (वस्त - प्रेरणा करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) । उरोः = बहुत, गमनीय, गतिशील, गति, व्यापकता, विस्तार (उरु - बहुत, अधिक, उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना) । वरीयो = वरीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) । वरुणः = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) । ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) । कृणोतु = करो (कृ = करना) । जयन्तम् = जीतने वाले (जि - सब से बढ़ कर होना, जीतना) । त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम) । अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग) । देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) । मदन्तु = हर्षित, तृप्त (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 18 ॥

433. यो नः स्वो अरणो यः, च निष्ठ्यो जिघांसति ।

देवाः तम् सर्वे धूर्वन्तु, ब्रह्म वर्म मम अन्तरम् । 19 ॥

6-75-19

मन्त्रार्थ :- यो = जो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा स्वो = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् अरणो = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त यः = जो च = और निष्ठ्यो = निष्ठ्य ने जिघांसति = हिंसा करता है देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने तम् = उसको, उसे सर्वे = सब धूर्वन्तु = हिंसा करो, प्रगति करो ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् वर्म = वर्म, आच्छादन मम = मेरा अन्तरम् = प्राणवान् को, अन्तर को, भीतर को ॥ 19 ॥

पदार्थ :- यो = जो (सर्वनाम) । नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) । स्वो = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना) । अरणो = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रण - शब्द करना, जाना) । यः = जो (सर्वनाम) । च = और (अव्यय) । निष्ठ्यो = निष्ठ्य ने (निष् - प्राप्त करना, ले जाना, स्तयै - शब्द करना, ध्वनि करना) । जिघांसति = हिंसा करता है (हन्-घ्न-जिघन् - हिंसा करना) । देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) । तम् = उसको, उसे (सर्वनाम) । सर्वे = सब (सर्वनाम) । धूर्वन्तु =

हिंसा करो, प्रगति करो (धूर् = हिंसा करना, गति करना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **वर्म** = वर्म, आच्छादन (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, पसन्द करना, नियोजित करना, नियमित करना, आच्छादित करना, ढंकना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **अन्तरम्** = प्राणवान् को, अन्तर को, भीतर को (अन् = प्राणवान् होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना)। ॥ 19 ॥

इति षष्ठ मण्डल

सप्तम मण्डल

अनुवाक:- 51

(145) सूक्त 1

434. अग्निम् नरो दीधितिभिः अरण्योः, हस्तच्युतम् जनयत प्रशस्तम्।

दूरेदृशम् गृहपतिम् अथर्युम् ॥ 1 ॥ 7-1-1

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को नरो = नर दीधितिभिः = दीधिति, बुद्धि द्वारा अरण्योः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त हस्तच्युतम् = हस्तच्युत को जनयत = उत्पन्न करता है प्रशस्तम् = प्रशस्त दूरेदृशम् = दूरेदृश को, दूर के दृश को गृहपतिम् = गृहपति को अथर्युम् = अथर्यु को ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नरो = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। दीधितिभिः = दीधिति, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। अरण्योः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रण - शब्द करना, जाना)। हस्तच्युतम् = हस्तच्युत को (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना, च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। जनयत = उत्पन्न करता है (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। प्रशस्तम् = प्रशस्त (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। दूरेदृशम् = दूरेदृश को, दूर के दृश को (दूरे = दूर (अव्यय), दृश्-पश्य -देखना)। गृहपतिम् = गृहपति को (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत- श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। अथर्युम् = अथर्यु को (अथ = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर, थर्व - जाना, अस्थिर होना, हिंसा करना) ॥ 1 ॥

435. तम् अग्निम् अस्ते वसवो नि ऋण्वन्, सुप्रतिचक्षम् अवसे कुतश्चित्।

दक्षाय्यो यो दमे आस नित्यः ॥ 2 ॥ 7-1-2

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को अस्ते = अस्त में, प्रगति में वसवो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले नि - निरन्तर, निश्चित ऋण्वन् = प्रगतिशील सुप्रतिचक्षम् = उत्तम लोक को अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो कुतश्चित् = सबसे दक्षाय्यो = दक्ष युक्त यो = जो दमे = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं आस = बैठने का साधन, स्थान नित्यः = निरन्तर, निश्चित, सतत ॥ 2 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अस्ते = अस्त में, प्रगति में (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। वसवो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। नि - निरन्तर, निश्चित। ऋण्वन् = प्रगतिशील (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। सुप्रतिचक्षम् = उत्तम लोक को (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। कुतश्चित् = कहीं से, सबसे (अव्यय)। दक्षाय्यो = दक्ष युक्त (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। यो = जो (सर्वनाम)। दमे = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं (दम् - शान्त

करना, दमन करना, दया करना, शमन करना, सन्धि करना, जीतना)। **आस** = बैठने का साधन, स्थान (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **नित्य** = निरन्तर, निश्चित, सतत (नि - निश्चित, निरन्तर) ॥ 2 ॥

436. प्र इद्धो अग्ने दीदिहि पुरो, नो अजस्रया सूर्या यविष्ठ ।

त्वाम् शश्वन्तः उप यन्ति वाजाः ॥ 3 ॥ 7-1-3

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **इद्धो** = प्राप्त को धारण करने वाला, गति, ज्ञान, प्रकाश को धारण करने वाला **अग्ने** = हे अग्नि **दीदिहि** = रूप बनाओ **पुरो** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **अजस्रया** = अजस्र, सतत, निरन्तर द्वारा **सूर्या** = सूर्य **यविष्ठ** = यविष्ठ **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **शश्वन्तः** = शश्वन्त **उप** = समीप **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **वाजाः** = विद्या, गति ॥ 3 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **इद्धो** = प्राप्त को धारण करने वाला, गति, ज्ञान, प्रकाश को धारण करने वाला (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **दीदिहि** = रूप बनाओ (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना)। **पुरो** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अजस्रया** = अजस्र, सतत, निरन्तर द्वारा (सर्वनाम, अव्यय)। **सूर्या** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **यविष्ठ** = यविष्ठ (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **शश्वन्तः** = शश्वन्त (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **वाजाः** = विद्या, गति (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) ॥ 3 ॥

(146) सूक्त 3

437. अग्निम् वो देवम् अग्निभिः सजोषा, यजिष्ठम् दूतम् अध्वरे कृणुध्वम् ।

यो मर्त्येषु निधुविः ऋतावा, तपुः मूर्धा घृतान्नः पावकः ॥ 1 ॥ 7-3-1

मन्त्रार्थ :- **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **देवम्** = देव, विद्वान्, तेजस्वी को **अग्निभिः** = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा **सजोषा** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी **अध्वरे** = अहिंसक में **कृणुध्वम्** = करो **यो** = जो **मर्त्येषु** = मरणशीलों में **निधुविः** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् **ऋतावा** = ऋत का रक्षक **तपुः** = तपस्वी **मूर्धा** = उच्च **घृतान्नः** = घृतान्न, प्रकाशजीवी, प्रकाशभोजी **पावकः** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **देवम्** = देव, विद्वान्, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अग्निभिः** = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सजोषा** = विचारशील, विवेकवान्, प्रीति करने वाले (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान

करना)। **दूतम्** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **अध्वरे** = अहिसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **कृणुध्वम्** = करो (कृ = करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **मर्त्येषु** = मरणशीलों में (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **निध्रुविः** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् (नि - निश्चित, नितराम्, निरन्तर, ध्रुव = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **ऋतावा** = ऋत का रक्षक (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, अव - रक्षा करना)। **तपुः** = तपस्वी (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **मूर्धा** = उच्च (मुर् - घेरना, लपेटना, मूर्द्ध - उच्च होना)। **घृतान्नः** = घृतान्न, प्रकाशजीवी, प्रकाशभोजी (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, अन - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना)। **पावकः** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना) ॥ 1 ॥

438. प्रोथत् अश्वो न यवसे अविष्यन्, यदा महः संवरणात् वि अस्थात्।

आत् अस्य वातो अनु वाति शोचिः, अध स्म ते व्रजनम् कृष्णम् अस्ति ॥ 2 ॥ 7-3-2

मन्त्रार्थ :- **प्रोथत्** = व्याप्त हुआ। **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक। **यवसे** = मिश्रित करो, पृथक् करो। **अविष्यन्** = रक्षा करते हुए, विष रहित, विषहीन। **यदा** = जब। **महः** = महान्। **संवरणात्** = सम्यक् रूप से वरण करना। **अस्थात्** = स्थित हैं। **आत्** = चिरन्तन, नित्य। **अस्य** = इसका। **वातो** = वायु के समान तीव्र गति वाले, वात समूह। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल। **वाति** = चलता है, वायु के समान तीव्र गति से बहता है। **शोचिः** = शोचि। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर। **स्म** = है। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए। **व्रजनम्** = पूर्ण सिद्ध को। **कृष्णम्** = कृष्ण को। **अस्ति** = है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **प्रोथत्** = व्याप्त हुआ (पुथ - शरण लेना, व्याप्त होना, पु - अधिक होना, गति करना, हिलना)। **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यवसे** = मिश्रित करो, पृथक् करो (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **अविष्यन्** = रक्षा करते हुए, विष रहित, विषहीन (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, विष - उपयोग न होने से अलग करना या निकाल देना)। **यदा** = जब (सर्वनाम)। **महः** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **संवरणात्** = सम्यक् रूप से वरण करना (सम् - सम्यक्, भलीभाँति (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था - स्थित होना, ठहरना)। **आत्** = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **वातो** = वायु के समान तीव्र गति वाले, वात समूह (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **वाति** = चलता है, वायु के समान तीव्र गति से बहता है (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **शोचिः** = शोचि (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **स्म** = है (अस् - होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **व्रजनम्** = पूर्ण सिद्ध को (व्रज = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना)। **कृष्णम्** = कृष्ण को (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 2 ॥

439. उत् यस्य ते नवजातस्य वृष्णो, अग्ने चरन्ति अजराः इधानाः ।

अच्छा द्याम् अरुषो धूमः एति सम्, दूतो अग्ने ईयसे हि देवान् ॥ 3 ॥ 7-3-3

मन्त्रार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नवजातस्य = नव-जात का वृष्णो = वर्षा करने वाला, पराक्रमी अग्ने = हे अग्नि चरन्ति = विचरण करते हैं, चलते हैं अजराः = अनेक जरा-हीन इधानाः = अनेक गति, ज्ञान, प्रकाश अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय अरुषो = हिंसक, गतिशील, व्यापक धूमः = धूम, कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति दूतो = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी अग्ने = हे अग्नि ईयसे = जाते हो हि = ही, निश्चय देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग) । यस्य = जिसका (सर्वनाम) । ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) । नवजातस्य = नव-जात का (नव = नौ (संख्या), जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) । वृष्णो = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) । अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) । चरन्ति = विचरण करते हैं, चलते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना) । अजराः = अनेक जरा-हीन (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना) । इधानाः = अनेक गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) । अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना) । द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना) । अरुषो = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना) । धूमः = धूम, कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना) । एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना) । सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) । दूतो = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना) । अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) । ईयसे = जाते हो (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) । हि = ही, निश्चय (अव्यय) । देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ 3 ॥

(147) सूक्त 6

440. प्र सम्राजः असुरस्य प्रशस्तम्, पुंसः कृष्टीनाम् अनुमाद्यस्य ।

इन्द्रस्य इव प्र तवसः कृतानि, वन्दत् वारा वन्दमाना विवष्टु ॥ 1 ॥ 7-6-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सम्राजः = सम्यक् प्रकाशमान असुरस्य = असुर का, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाले का, प्रकाश देने वाले का प्रशस्तम् = प्रशस्त को पुंसः = बढ़ाना, अभिवर्धन कृष्टीनाम् = कृष्टी का, कृष का, कर्षण का अनुमाद्यस्य = आनन्दित करते हैं इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का इव = समान, की भाँति, के समान प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक तवसः = तवस् द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा द्वारा कृतानि = किया वन्दत् = वन्दना करता है वारा = वरणीय, प्रिय वन्दमाना = वन्दमान विवष्टु = विवष्टु ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग) । सम्राजः = सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना) । असुरस्य = असुर का, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाले का, प्रकाश देने वाले का (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना,

विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **प्रशस्तम्** = प्रशस्त को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **पुंसः** = बढ़ाना, अभिवर्धन (पुंस = बढ़ना, बढ़ाना)। **कृष्टीनाम्** = कृष्ठी का, कृष का, कर्षण का (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **अनुमाद्यस्य** = आनन्दित करते हैं (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **तवसः** = तवस् द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा द्वारा (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **कृतानि** = किया (कृ = करना)। **वन्दत्** = वन्दना करता है (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। **वारा** = वरणीय, प्रिय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वन्दमाना** = वन्दमान (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना)। **विवष्टु** = विवष्ट (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना) ॥ 1 ॥

(148) सूक्त 8

441. इन्धे राजा सम् अर्यो नमोभिः, यस्य प्रतीकम् आहुतम् घृतेन।

नरो हव्येभिः ईडते सबाध आ, अग्निः अग्रे उषसाम् अशोचि ॥ 1 ॥ 7-8-1

मन्त्रार्थ - **इन्धे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें **राजा** = राजा **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अर्यो** = अर्य, ज्ञानी **नमोभिः** = बहुशः नमन द्वारा **यस्य** = जिसका **प्रतीकम्** = प्रतीक को **आहुतम्** = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त **घृतेन** = अभिसिञ्चित द्वारा, प्रकाशमान द्वारा **नरो** = नर **हव्येभिः** = दान द्वारा **ईडते** = स्तुति के लिए **सबाध** = सबाध **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **अग्रे** = अग्र, आगे **उषसाम्** = प्रभात, हिंसा को **अशोचि** = पवित्र किया ॥ 1 ॥

पदार्थ - **इन्धे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अर्यो** = अर्य, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **नमोभिः** = बहुशः नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **प्रतीकम्** = प्रतीक को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तिक्-तीक् - जाना)। **आहुतम्** = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **घृतेन** = अभिसिञ्चित द्वारा, प्रकाशमान द्वारा (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **हव्येभिः** = दान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ईडते** = स्तुति के लिए (ईड् = स्तुति करना)। **सबाध** = सबाध (स - सहित, साथ, बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अग्रे** = अग्र, आगे (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उषसाम्** = प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **अशोचि** = पवित्र किया (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना) ॥ 1 ॥

(149) सूक्त 12

442. अगन्म महा नमसा यविष्ठम्, यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे।

चित्रभानुम् रोदसी अन्तः उर्वी, स्वाहुतम् विश्वतः प्रत्यञ्चम् ॥ 1 ॥ 7-12-1

मन्त्रार्थ :- अगन्म = गये, पाया, प्राप्त हुए महा = महान् नमसा = नमन द्वारा यविष्ठम् = यविष्ठ को यो = जो दीदाय = दिया, देने वाले के लिए समिद्धः = सम्यक् प्रकाशवान् स्वे = अपने लिए, अपने साथ दुरोणे = दूर ले जाने में, ज्ञान, गमन, प्रप्ति में चित्रभानुम् = चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले को रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले अन्तः = बीच में, भीतर उर्वी = सहनशील, समर्थ, विस्तृत, गतिशील, समर्थ, बहु-दुःखदायी स्वाहुतम् = अच्छी तरह बुलाये हुए, सुन्दर दान को विश्वतः = सबसे, विश्व से प्रत्यञ्चम् = प्रत्यञ्च को ॥

पदार्थ :- अगन्म = गये, पाया, प्राप्त हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। महा = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। नमसा = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। यविष्ठम् = यविष्ठ को (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। यो = जो (सर्वनाम)। दीदाय = दिया, देने वाले के लिए (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। समिद्धः = सम्यक् प्रकाशवान् (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। स्वे = अपने लिए, अपने साथ (सर्वनाम)। दुरोणे = दूर ले जाने में, ज्ञान, गमन, प्रप्ति में (दू-द्रूण - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, हिंसा करना)। चित्रभानुम् = चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। अन्तः = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। उर्वी = सहनशील, समर्थ, विस्तृत, गतिशील, समर्थ, बहु-दुःखदायी (उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, उर्व - सहना, समर्थ होना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। स्वाहुतम् = अच्छी तरह बुलाये हुए, सुन्दर दान को (स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः, सु - अच्छा, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। प्रत्यञ्चम् = प्रत्यञ्च को (प्रत्यञ्चम् = तिरछे (अव्यय)) ॥ 1 ॥

443. सः महना विश्वा दुरितानि साह्वान्, अग्निः ष्टवे दमे आ जातवेदाः।

सः नो रक्षिषत् दुरितात् अवद्यात्, अस्मान् गृणतः उत नो मघोनः ॥ 2 ॥ 7-12-2

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने महना = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा विश्वा = विश्व, सभी, सब दुरितानि = बुराइयाँ, दुःख साह्वान् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् ष्टवे = स्तुति, प्रशंसा की जाती है दमे = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम जातवेदाः = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले सः = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा रक्षिषत् = रक्षा करे दुरितात् = बुराइयों से, दुःख से अवद्यात् = न बोलने योग्य से अस्मान् = हमें, हमको गृणतः = वाणी, बोध, सिञ्चन करते हुए उत = ही, भी, ओर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। महना = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। दुरितानि = बुराइयाँ, दुःख (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। साह्वान् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना,

पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ष्टवे** = स्तुति, प्रशंसा की जाती है (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **दमे** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं (दम् - शान्त करना, दमन करना, दया करना, शमन करना, सन्धि करना, जीतना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **जातवेदाः** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **रक्षिषत्** = रक्षा करे (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **दुरितात्** = बुराईयों से, दुःख से (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **अवद्यात्** = न बोलने योग्य से (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वद् - बोलना, कहना)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **गृणतः** = वाणी, बोध, सिञ्चन करते हुए (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मघोनः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 2 ॥

444. त्वम् वरुणः उत मित्रो अग्ने, त्वाम् वर्धन्ति मतिभिः वसिष्ठाः ।

त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयम्, पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ 3 ॥ 7-12-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम वरुणः = वरुण उत = ही, भी, ओर मित्रो = मित्र अग्ने = हे अग्नि त्वाम् = तुमको, तुम्हारी वर्धन्ति = बढ़ाते हैं मतिभिः = मति द्वारा, मनन द्वारा वसिष्ठाः = वसिष्ठ त्वे = तुममें वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले सुषणनानि = उत्तम प्रकाश, उत्तम दान, उत्तम सेवा सन्तु = हों यूयम् = तुम दोनों पात = पालन करो स्वस्तिभिः = स्वस्तियों द्वारा सदा = सदा, सर्व काल में। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। वरुणः = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। वर्धन्ति = बढ़ाते हैं (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। मतिभिः = मति द्वारा, मनन द्वारा (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। वसिष्ठाः = वसिष्ठ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। त्वे = तुममें (सर्वनाम)। वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। सुषणनानि = उत्तम प्रकाश, उत्तम दान, उत्तम सेवा (सु - उत्तम, अच्छा, सण - प्रकाश करना, शब्द करना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। सन्तु = हों (अस् - होना)। यूयम् = तुम दोनों (सर्वनाम)। पात = पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। स्वस्तिभिः = स्वस्तियों द्वारा (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। सदा = सदा, सर्व काल में। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

(150) सूक्त 15

445. सः नो वेदो अमात्यम्, अग्नी रक्षतु विश्वतः ।

उत अस्मान् पातु अंहसः ॥ 3 ॥ 7-15-3

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वेदो = वेद, ज्ञान अमात्यम् = अमात्य को अग्नी = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् रक्षतु = रक्षा करो, बचाओ विश्वतः = सबसे, विश्व से उत = ही, भी, ओर अस्मान् = हमें, हमको पातु = पालन करे, रक्षा करे अंहसः = प्रकाशमान ॥ 3 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वेदो = वेद, ज्ञान (विद् =

जानना, समझना, विद्यमान होना)। **अमात्यम्** = अमात्य को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, मा - मापना, मान करना)। **अग्नी** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रक्षतु** = रक्षा करो, बचाओ (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **पातु** = पालन करे, रक्षा करे (पा = पालन करना, बचाना)। **अंहसः** = प्रकाशमान (अंह = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना) ॥ 3 ॥

446. नि त्वा नक्ष्य विश्पते, द्युमन्तम् देव धीमहि ।

सुवीरम् अग्न आहुत ॥ 7 ॥ 7-15-7

मन्त्रार्थ - नि = निश्चित, निरन्तर **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **नक्ष्य** = गति, ज्ञान, प्राप्ति **विश्वते** = विश्वत के लिए **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **धीमहि** = धारण करते हैं **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **सुवीरम्** = उत्तम वीर को **अग्न** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **आहुत** = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त ॥ 7 ॥

पदार्थ - नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **नक्ष्य** = गति, ज्ञान, प्राप्ति (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **विश्वते** = विश्वत के लिए (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **धीमहे** = धारण करते हैं (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **सुवीरम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अग्न** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **आहुत** = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, हवे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना) ॥ 7 ॥

447. अग्ने रक्षा णो अंहसः, प्रति स्म देव रीषतः ।

तपिष्ठैः अजरो दह ॥ 13 ॥ 7-15-13

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि **रक्षा** = रक्षा करो **णो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **अंहसः** = प्रकाशमान **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **स्म** = है **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **रीषतः** = रीषत **तपिष्ठैः** = तपिष्ठ के लिए **अजरो** = जरा-हीन **दह** = जलाओ ॥ 13 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रक्षा** = रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **णो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अंहसः** = प्रकाशमान (अंह = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **स्म** = है (अस् - होना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **रीषतः** = रीषत (री - जाना, बहना, झरना, चूना, टपकना, गिरना, नीचे आना, सुनना, रिष - मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **तपिष्ठैः** = तपिष्ठ के लिए (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **अजरो** = जरा-हीन (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। **दह** = जलाओ (दह - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना) ॥ 13 ॥

448. एना वो अग्निम् नमसा, ऊर्जो नपातम् आ हुवे।

प्रियम् चेतिष्ठम् अरतिम्, स्वध्वरम् विश्वस्य दूतम् अमृतम् ॥ 1 ॥

7-16-1

मन्त्रार्थ - एना = प्रकाशित करने वाले वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग
अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को नमसा = नमन द्वारा ऊर्जो = ऊर्जा नपातम् = प्राप्त किया आ =
समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं प्रियम् = प्रिय
चेतिष्ठम् = अत्यन्त चेतन, एकत्र, विचार करने वाले अरतिम् = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने
वाले स्वध्वरम् = स्वधित, स्वयम् धारित को विश्वस्य = विश्व का, सभी का दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी
अमृतम् = न मरने वाला, अमर ॥ 1 ॥

पदार्थ - एना = प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना,
मिश्रण करना, विभाजन करना)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)।
अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति
करना, लेना, ग्रहण करना)। नमसा = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। ऊर्जो
= ऊर्जा (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। नपातम्
= प्राप्त किया (न - नहीं, पा - पलन करना, रक्षा करना, नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना,
चमकना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं,
तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द
करना, बुलाना, आह्वान करना)। प्रियम् = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)।
चेतिष्ठम् = अत्यन्त चेतन, एकत्र, विचार करने वाले (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन
करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। अरतिम् = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त,
रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रम् -
रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। स्वध्वरम् = स्वधित, स्वयम् धारित
को (स्व = निज, अपना, धृ - धारण करना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना
या होना, युक्त होना)। विश्वस्य = विश्व का, सभी का। दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना,
जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। अमृतम् = न मरने वाला, अमर (अ
- नहीं, मृ = मरना) ॥ 1 ॥

449. सः योजते अरुषा विश्वभोजसा, सः दुद्रवत् स्वाहुतः।

सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनाम्, देवम् राधो जनानाम् ॥ 2 ॥

7-16-2

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने योजते = जोड़ते हैं, मिलाते हैं अरुषा = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक,
गतिशील, व्यापक विश्वभोजसा = सबका पालक सः = वह, उसने दुद्रवत् = द्रुतगति से गया स्वाहुतः = अच्छी तरह
बुलाया हुआ, सुन्दर दान सुब्रह्मा = उत्तम ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् यज्ञः = यजन सुशमी = सुशीतल वसूनाम्
= वसुओं का देवम् = देव को राधो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। योजते = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र
करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। अरुषा = अहिंसक
अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना,
रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। विश्वभोजसा = सबका पालक (विश्वः = सभी, भुज
- संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। दुद्रवत् = द्रुतगति से गया (दुः =
बुरा, अनुचित, कठिन, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। स्वाहुतः = अच्छी तरह
बुलाया हुआ, सुन्दर दान (स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः, सु - अच्छा, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-

प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **सुब्रह्मा** = उत्तम ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (सु - सुन्दर, अच्छा, उत्तम, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **यज्ञः** = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **सुशमी** = सुशीतल (सु - अच्छा, सुन्दर, शम् - शान्त होना, ठण्डा होना)। **वसूनाम्** = वसुओं का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 2 ॥

450. त्वम् अग्ने गृहपतिः, त्वम् होता नो अध्वरे।

त्वम् पोता विश्ववार प्रचेता, यक्षि वेषि च वार्यम् ॥ 5 ॥

7-16-5

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम अग्ने = हे अग्नि गृहपतिः = गृहपति त्वम् = तुम होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो अध्वरे = अहिंसक में त्वम् = तुम पोता = पवित्र करने वाला विश्ववार = सबके लिए वरणीय प्रचेता = प्रकृष्ट विचार वाले यक्षि = पूजा करो वेषि = व्याप्त होने वाला, व्याप्त करने वाला, व्यापक, सिंचक च = और वार्यम् = वार्य, वरणीयों को, वरण को ॥ 5 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। गृहपतिः = गृहपति (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत- श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। पोता = पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। विश्ववार = सबके लिए वरणीय (विश्व - सब, वृ - वरण करना)। प्रचेता = प्रकृष्ट विचार वाले (चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। यक्षि = पूजा करो (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। वेषि = व्याप्त होने वाला, व्याप्त करने वाला, व्यापक, सिंचक (विष् = विलग करना, प्रयोग न होने से निकाल देना, विष = सींचना, व्यापना)। च = और। वार्यम् = वार्य, वरणीयों को, वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) ॥ 5 ॥

451. त्वे अग्ने स्वाहुत, प्रियासः सन्तु सूरयः।

यन्तारो ये मघवानो, जनानाम् ऊर्वम्, दयन्त गोनाम् ॥ 7 ॥

7-16-7

मन्त्रार्थ - त्वे तुम्हारे अग्ने हे अग्नि, स्वाहुत अच्छे प्रकार से आह्वान किये गये, प्रियासः प्रिय सन्तु हों सूरयः उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् लोग। ये जो मघवानो ऐश्वर्यवान् जनानाम् जनों के गोनाम् गो के यन्तारो नियमन-नियन्त्रण करने वाले ऊर्वान् ऊर्वों को दयन्त देते हैं ॥ 7 ॥

भावार्थ - जो मघवान् अर्थात् ऐश्वर्यवान् हैं, वे ही लोगों का नियमन-नियन्त्रण करते हैं। उर धातुका अर्थ जाना, उर्व धातु का अर्थ हिंसा करना, सहना होता है। उन ऊर्वों अर्थात् गतिशील, ज्ञानी, सहनशील को देते हैं। नियन्ता लोगों का कर्तव्य है कि जो लोग विद्वान् हैं, कर्मशील हैं, जिन्हें अनेक कारणों बहुत कुछ अनुचित भी सहना पड़ता है, उनको सहयोग देते रहें। 7 ॥

पदार्थ - त्वे = तुम्हारे अग्ने = हे अग्नि, (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना), स्वाहुत = अच्छे प्रकार से आह्वान किये गये (सु - अच्छा, सुन्दर, आ - समन्तात्, भलीभाँति, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना), प्रियासः = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना), सन्तु = हों (अस् -

होना), **सूरयः** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **ये** = जो, **मघवानो** = ऐश्वर्यवान् (मघ - ऐश्वर्य होना)। **जनानाम्** = जनों के (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **गोनानाम्** = गो के (गु - शब्द करना, बोलना, मनन करना)। **यन्तारो** = नियमन-नियन्त्रण करने वाले (यम - आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना)। **ऊर्वान्** = ऊर्वों को (ऊ - शब्द करना, ध्वनि करना, विश्वास करना)। **दयन्त** = देते हैं (दय - दान करना, पालन करना) ॥ 7 ॥

452. देवो वो द्रविणोदाः, पूर्णाम् विवष्टु आसिचम्।

उत् वा सिञ्चध्वम्, उप वा पृणध्वम्, आत् इत् वो देवः ओहते ॥ 11 ॥ 7-16-11

मन्त्रार्थ - देवो = देव वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **द्रविणोदाः** = द्रविण-दाता, ज्ञान-दाता। **पूर्णाम्** = पूर्ण **विवष्टु** = विशेष चाहने वाले **आसिचम्** = सिञ्चन करो **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **वा** = अथवा **सिञ्चध्वम्** = सिञ्चन करो **उप** = समीप **वा** = अथवा **पृणध्वम्** = पूर्ण करो, पालन करो **आत्** = चिरन्तन, नित्य **इत्** = ही **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **देवः** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **ओहते** = ऊह के लिए ॥ 11 ॥

पदार्थ - देवो = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **द्रविणोदाः** = द्रविण-दाता, ज्ञान-दाता (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **पूर्णाम्** = पूर्ण (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **विवष्टु** = विशेष चाहने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, वश - इच्छा करना, चाहना)। **आसिचम्** = सिञ्चन करो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, पूर्णतः, सिञ्च - सिञ्चन करना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **सिञ्चध्वम्** = सिञ्चन करो (सिञ्च - सिञ्चन करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **पृणध्वम्** = पूर्ण करो, पालन करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **आत्** = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **देवः** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ओहते** = ऊह के लिए (ऊह = अनुमान करना, कल्पना करना, तर्क करना) ॥ 11 ॥

453. तम् होतारम् अध्वरस्य प्रचेतसम्, वह्निम् देवाः अकृण्वत।

दधाति रत्नम् विधते सुवीर्यम्, अग्निः जनाय दाशुषे ॥ 12 ॥ 7-16-12

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को **अध्वरस्य** = अहिंसक, अवर्णनीय का **प्रचेतसम्** = प्रकृष्ट विचार वाले को **वह्निम्** = वहन करने वाले को **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **अकृण्वत** = किया **दधाति** = धारण करता है **रत्नम्** = मूल्यवान् को, रत्न को **विधते** = विशेष धारण के लिए **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् **जनाय** = जन के लिए **दाशुषे** = दानी के लिए ॥ 12 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **अध्वरस्य** = अहिंसक, अवर्णनीय का (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **प्रचेतसम्** = प्रकृष्ट विचार वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **वह्निम्** = वहन करने वाले को (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अकृण्वत** = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। **दधाति** = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **रत्नम्** = मूल्यवान् को, रत्न को (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)।

विधते = विशेष धारण के लिए (वि - विशेष, धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। जनाय = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना) ॥ 12 ॥

अनुवाकः- 52

(152) सूक्त 21

454. असावि देवम् गोऋजीकम् अन्धो, नि अस्मिन् इन्द्रो जनुषा ईम् उवोच।

बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैः बोधा, नः स्तोमम् अन्धसो मदेषु ॥ 1 ॥ 7-21-1

मन्त्रार्थ - असावि ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया देवम् = देव को गो-ऋजीकम् = वाणी में स्थिर अन्धो = आँख मूँदे हुए नि = निश्चित, निरन्तर अस्मिन् = इस, इसमें इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली जनुषा = जनों, लोगों, जन्म से ईम् = समान, इस प्रकार उवोच = बोला, कहा बोधामसि = बोध किया त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा हर्यश्व = हर्षित करो, प्रसन्न करो, प्रसन्न हो यज्ञैः = यज्ञों द्वारा बोधा = जानता हूँ नः = हमको, हमारे लिए, हमारा स्तोमम् = स्तोम अन्धसो = प्राणवान्, अन्धकार से मदेषु = मदों में, आनन्दों में ॥ 1 ॥

पदार्थ - असावि ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। गो-ऋजीकम् = वाणी में स्थिर (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीवित रहना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। अन्धो = आँख मूँदे हुए (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। अस्मिन् = इस, इसमें (सर्वनाम)। इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। जनुषा = जनों, लोगों, जन्म से (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। उवोच = बोला, कहा (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। बोधामसि = बोध किया (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। हर्यश्व = हर्षित करो, प्रसन्न करो, प्रसन्न हो (हृष् - प्रसन्न होना, सन्तुष्ट होना, हर्षित होना)। यज्ञैः = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। बोधा = जानता हूँ (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। स्तोमम् = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। अन्धसो = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। मदेषु = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 1 ॥

(153) सूक्त 22

455. पिबा सोमम् इन्द्र मन्दतु त्वा, यम् ते सुषाव हर्यश्व अद्रिः

सोतुः बाहुभ्याम् सुयतो न अर्वा ॥ 1 ॥ 7-22-1

मन्त्रार्थ :- पिबा = पियो, पान करें सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली मन्दतु = आनन्दित हो प्रकाशित हो त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा यम् = जिसे, जिसको, जहाँ ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुषाव = सृजित करना, आसवन करना हर्यश्व = प्रसन्न करो, प्रसन्न हो अद्रिः = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला सोतुः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, आसवन करने वाले बाहुभ्याम् = दोनों बाहुओं द्वारा, के लिए, प्रयास करने वाले के लिए

सुयतो = सुयत्न, उत्तम प्रयत्न करने वाला **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **अर्वा** = अर्वा ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पिबा = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मन्दतु** = आनन्दित हो प्रकाशित हो (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुषाव** = सृजित करना, आसवन करना (सु - अच्छा, सुन्दर, स - सहित, साथ, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **हर्यश्व** = प्रसन्न करो, प्रसन्न हो (हृष् - प्रसन्न होना, सन्तुष्ट होना, हर्षित होना)। **अद्रिः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **सोतुः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, आसवन करने वाले (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **बाहुभ्याम्** = दोनों बाहुओं द्वारा, के लिए, प्रयास करने वाले के लिए (बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। **सुयतो** = सुयत्न, उत्तम प्रयत्न करने वाला (सु - अच्छा, सुन्दर, यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अर्वा** = अर्वा (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना) ॥ 1 ॥

456. यः ते मदो युज्यः चारुः अस्ति, येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि ।

सः त्वाम् इन्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥ 2 ॥ 7-22-2

मन्त्रार्थ :- यः = जो **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मदो** = मद, हर्ष, तृप्ति **युज्यः** = युज्य **चारुः** = चारु **अस्ति** = है **येन** = जिससे, जिसके द्वारा। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को **हर्यश्व** = हर्षित करो, प्रसन्न करो, प्रसन्न हो **हंसि** = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो **सः** = वह, उसने **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **प्रभूवसो** = प्रभूवस, प्रभू का आच्छादन, प्रभू का वास **ममत्तु** = आनन्द दे ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मदो** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **युज्यः** = युज्य (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **चारुः** = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **येन** = जिससे, जिसके द्वारा। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हर्यश्व** = हर्षित करो, प्रसन्न करो, प्रसन्न हो (हृष् - प्रसन्न होना, सन्तुष्ट होना, हर्षित होना)। **हंसि** = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रभूवसो** = प्रभूवस, प्रभू का आच्छादन, प्रभू का वास (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **ममत्तु** = आनन्द दे (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 2 ॥

457. बोधा सु मे मघवन् वाचम् इमाम्, याम् ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम्।

इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥ 3 ॥ 7-22-3

मन्त्रार्थ :- बोधा = बोध, बोधयुक्त सु = सुन्दर, अच्छा मे = मेरा, मेरे लिए मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् वाचम् = वाणी को इमाम् = इसको, इस याम् = जिसको ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वसिष्ठो = वसिष्ठ अर्चति = पूजा करता है, सम्मान करता है प्रशस्तिम् = प्रशस्ति को इमा = यह, इसको ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् सधमादे = साथ आनन्द करते हैं जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- बोधा = बोध, बोधयुक्त (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। सु = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। मे = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। वाचम् = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। इमाम् = इसको, इस (सर्वनाम)। याम् = जिसको (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वसिष्ठो = वसिष्ठ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अर्चति = पूजा करता है, सम्मान करता है (अर्च - पूजा करना, मान करना)। प्रशस्तिम् = प्रशस्ति को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। इमा = यह, इसको (सर्वनाम)। ब्रह्म = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। सधमादे = साथ आनन्द करते हैं (सध = साथ (अव्यय), मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना) ॥ 3 ॥

458. श्रुधी हवम् विपिपानस्य अद्रेः, बोधा विप्रस्य अर्चतो मनीषाम्।

कृष्वा दुवांसि अन्तमा सचा इमा ॥ 4 ॥ 7-22-4

मन्त्रार्थ :- श्रुधी = सुनता है हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य विपिपानस्य = विशेष पान कराने वाले का अद्रेः = अद्रि का बोधा = बोध, बोधयुक्त, जानता हूँ विप्रस्य = विशेष पूर्ण करने वाले का अर्चतो = पूजा, सम्मान, सेवा करने वाले मनीषाम् = मनीषा को कृष्वा = करो दुवांसि = सेवाओं, पीड़ाओं, प्रगतियों को अन्तमा = प्राणवान् सचा = समझदार, जानकार, सहगामी इमा = यह, इसको ॥ 4 ॥

पदार्थ :- श्रुधी = सुनता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। विपिपानस्य = विशेष पान कराने वाले का (पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। अद्रेः = अद्रि का (दृ-द्रि-द्री - आदर करना, दृ - हिंसा करना, चीरना, तोड़ना, टुकड़े करना)। बोधा = बोध, बोधयुक्त, जानता हूँ (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। विप्रस्य = विशेष पूर्ण करने वाले का (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। अर्चतो = पूजा, सम्मान, सेवा करने वाले (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। मनीषाम् = मनीषा को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। कृष्वा = करो (कृ = करना)। दुवांसि = सेवाओं, पीड़ाओं, प्रगतियों को (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, दुवस् - पीड़ित होना, पीड़ित करना, सेवा करना)। अन्तमा = प्राणवान् (अन् = प्राणवान् होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना)। सचा = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। इमा = यह, इसको (सर्वनाम) ॥ 4 ॥

459. न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य, न सुष्टुतिम् असुर्यस्य विद्वान्।

सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ॥ 5 ॥ 7-22-5

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन अपि = भी, निकट मृष्ये = सहन, क्षमा, विचार, मार्जन करता हूँ तुरस्य = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक का सुष्टुतिम् = सुन्दर

स्तुति को असुर्यस्य = असुर्य अर्थात् असुर योग्य, अस्तित्व या प्राण योग्य, वर्तमान योग्य, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाले, प्रकाश देने वाले का विद्वान् = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी सदा = सदा, सर्व काल में। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नाम = नाम वाले स्वयशो = स्वयश, स्वकीर्ति विवक्ति = विशेष बोलता हूँ, कहता हूँ ॥ 5 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। अपि = भी, निकट (अव्यय)। मृष्ये = सहन, क्षमा, विचार, मार्जन करता हूँ (मृष - सहन करना, क्षमा करना, मार्जन करना, शुद्ध करना)। तुरस्य = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक का (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुर = शीघ्रता करना)। सुष्टुतिम् = सुन्दर स्तुति को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। असुर्यस्य = असुर्य अर्थात् असुर योग्य, अस्तित्व या प्राण योग्य, वर्तमान योग्य, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाले, प्रकाश देने वाले का (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। विद्वान् = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। सदा = सदा, सर्व काल में। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। नाम = नाम वाले (अव्यय)। स्वयशो = स्वयश, स्वकीर्ति (स्वयम् = अपने आप (अव्यय), यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। विवक्ति = विशेष बोलता हूँ, कहता हूँ (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ 5 ॥

460. भूरि हि ते सवना मानुषेषु, भूरि मनीषी हवते त्वाम् इत् ।

मा आरे अस्मत् मघवन् ज्योक् कः ॥ 6 ॥ 7-22-6

मन्त्रार्थ :- भूरि = बहु, बहुत हि = ही, निश्चय ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सवना = उत्पन्न करने से मानुषेषु = मानुषों, मननों में भूरि = बहु, बहुत मनीषी = मनीषी, विचारक, विद्वान् हवते = आह्वान करता है, आदान-प्रदान करता है त्वाम् = तुमको, तुम्हारी इत् = ही मा = नहीं, मत आरे = दूर अस्मत् = हमसे मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् ज्योक् = ज्योक्, सुदीर्घ, चिरकालीन, निरन्तर कः = कौन ॥ 6 ॥

पदार्थ :- भूरि = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सवना = उत्पन्न करने से (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। मानुषेषु = मानुषों, मननों में (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। भूरि = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। मनीषी = मनीषी, विचारक, विद्वान् (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। हवते = आह्वान करता है, आदान-प्रदान करता है (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। आरे = दूर (अव्यय)। अस्मत् = हमसे (सर्वनाम)। मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। ज्योक् = ज्योक्, सुदीर्घ, चिरकालीन, निरन्तर (ज्या - जीर्ण होना, वृद्ध होना, पुराना होना, ज्यु = गति होना)। कः = कौन (सर्वनाम) ॥ 6 ॥

(154) सूक्त 23

461. उत् उ ब्रह्माणि ऐरत श्रवस्य, इन्द्रम् सम् अर्ये महया वसिष्ठ ।

आ यो विश्वानि श्रवसा ततान्, आ उप-श्रोता मे ईवतो वचांसि ॥ 1 ॥ 7-23-1

मन्त्रार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च उ = निश्चय ही, भी ब्रह्माणि = ब्रह्ममय ऐरत = प्राप्त, शब्द, ध्वनि करो श्रवस्य = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील इन्द्रम् = इन्द्र को सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति अर्ये = अर्य में, ज्ञानी में महया = महान्, पूज्य, सम्मान करो वसिष्ठ = हे वसिष्ठ, वास करते हुए, धारण करता हुआ आ = समन्तात्, सम्यक्,

सम्पूर्ण, आगम **यो** = जो **विश्वानि** = सभी **श्रवसा** = श्रवः, श्रवण, वाणी से **ततान** = विस्तारित किया **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **उप** = समीप **श्रोता** = कान, श्रोत्र, सुनने वाला **मे** = मेरा, मेरे लिए **ईवतो** = व्याप्त, फैलना, प्राप्त हो, गमन करें **वचांसि** = वचन ॥ १ ॥

पदार्थ -उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी। **ब्रह्माणि** = ब्रह्ममय (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **ऐरत** = प्राप्त, शब्द, ध्वनि करो (इर् - ईर्ष्या करना, ऋ-ईर्य - जाना, चलना, फैलाना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **श्रवस्य** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अर्ये** = अर्य में, ज्ञानी में (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **महया** = महान्, पूज्य, सम्मान करो (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **वसिष्ठ** = हे वसिष्ठ, वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **यो** = जो। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **श्रवसा** = श्रवः, श्रवण, वाणी से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **ततान** = विस्तारित किया (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **श्रोता** = कान, श्रोत्र, सुनने वाला (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **ईवतो** = व्याप्त, फैलना, प्राप्त हो, गमन करें (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, फैलना)। **वचांसि** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ १ ॥

(155) सूक्त 24

462. योनिः ते इन्द्र सदने अकारि, तम् आ नृभिः पुरुहूत प्र याहि।

असो यथा नो अविता वृधे च, ददो वसूनि ममदः च सोमैः ॥ १ ॥ 7-24-1

मन्त्रार्थ - योनिः = बन्धन, मिलन **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **सदने** = सदन में, स्थान में **अकारि** = किया **तम्** = उसको, उसे **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नृभिः** = नरों द्वारा **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **असो** = अस् का, ऐश्वर्यवान् का, उत्पन्न करने वाले का **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **अविता** = रक्षक **वृधे** = वृद्धि **च** = और। **ददो** = दिया, दान किया **वसूनि** = वसुओं को **ममदः** = आनन्द, हर्षित प्रसन्न रहो **च** = और। **सोमैः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम ॥ १ ॥

पदार्थ - योनिः = बन्धन, मिलन (युन - यु - बांधना, बन्धन करना, गूँथना। यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सदने** = सदन में, स्थान में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अकारि** = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **असो** = अस् का, ऐश्वर्यवान् का, उत्पन्न करने वाले का (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **यथा** =

जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अविता** = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **वृधे** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **च** = और। **ददो** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **ममदः** = आनन्द, हर्षित प्रसन्न रहो (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **च** = और। **सोमैः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 1 ॥

(156) सूक्त 27

463. इन्द्रम् नरो नेमधिता हवन्ते, यत् पार्या युनजते धियः ताः।

शूरो नृषाता श्रवसः च कामे, आ गोमति व्रजे भजा त्वम् नः ॥ 1 ॥ 7-27-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्रम्** = इन्द्र को **नरो** = नर **नेमधिता** = मार्गदर्शक **हवन्ते** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **यत्** = जिसे, जो **पार्या** = पूर्ण करने योग्य **युनजते** = युक्त, मिश्रित होते हैं **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि **ताः** = वे **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी **नृषाता** = नर, ले जाने वाले दानी **श्रवसः** = श्रवः, श्रवण, वाणी से **च** = और **कामे** = कामना, इच्छा में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गोमति** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली **व्रजे** = व्रज में, व्रज के लिए **भजा** = सेवा करो, सेवा में लगाओ **त्वम्** = तुम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥

पदार्थ - **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **नेमधिता** = मार्गदर्शक (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **हवन्ते** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पार्या** = पूर्ण करने योग्य (पार - कार्य पूर्ण करना)। **युनजते** = युक्त, मिश्रित होते हैं (यु = बांधना, बन्धन करना, गूँथना, मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **ताः** = वे (सर्वनाम)। **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **नृषाता** = नर, ले जाने वाले दानी (नृ - ले जाना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **श्रवसः** = श्रवः, श्रवण, वाणी से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **च** = और। **कामे** = कामना, इच्छा में (कम् - चाहना, इच्छा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गोमति** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **व्रजे** = व्रज में, व्रज के लिए (व्रज् = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, तैयार करना, घूमना, वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **भजा** = सेवा करो, सेवा में लगाओ (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

464. इन्द्रो राजा जगतः वर्षणीनाम्, अधि क्षमा विश्वरूपम् यत् अस्य।

ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदत्, राधः उपस्तुतम् चित् अर्वाक् ॥ 30 ॥ 7-27-3

मन्त्रार्थ - **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **राजा** = राजा **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील का **वर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **क्षमा** = क्षमा **विश्वरूपम्** = विश्वरूप को **यत्** = जिसे, जो **अस्य** = इसका **ततो** = उससे, उसके अनन्तर **ददाति** = देता है **दाशुषे** = दानी के लिए **वसूनि** = वसुओं को **चोदत्** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **उपस्तुतम्** =

उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले स्तुत्य को चित् = भी, ही। अर्वाक् = पहले ॥ 30 ॥

पदार्थ - इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **क्षमा** = क्षमा (क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **विश्वरूपम्** = विश्वरूप को (विश्व - सब कुछ, रूप - आकार बनाना, रचना करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **ततो** = उससे, उसके अनन्तर (सर्वनाम)। **ददाति** = देता है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **चोदत्** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **राधः** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **उपस्तुतम्** = उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले स्तुत्य को (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **चित्** = भी, ही। **अर्वाक्** = पहले (अव्यय) ॥ 30 ॥

(157) सूक्त 31

465. प्र वः इन्द्राय मादनम्, हर्यश्वाय गायत ।

सखायः सोमपाले ॥ 1 ॥ 7-31-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वः = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **मदनम्** = हर्ष को, मादन को **हर्यश्वाय** = हर्यश्व, प्रकाशवान्, गतिवान्, इच्छावान्, के लिए **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **सखायः** = मित्र **सोमपाले** = सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वः = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्द्र-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मदनम्** = हर्ष को, मादन को (मदी-माद् = हर्ष होना)। **हर्यश्वाय** = हर्यश्व, प्रकाशवान्, गतिवान्, इच्छावान्, के लिए (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **सोमपाले** = सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा = पालन करना, बचाना) ॥ 1 ॥

466. शंस इत् उक्थम् सुदानवे, उत द्युक्षम् यथा नरः ।

चक्रमा सत्यराधसे ॥ 2 ॥ 7-31-2

मन्त्रार्थ :- शंस = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाला **इत्** = ही **उक्थम्** = उक्ति, कथन को **सुदानवे** = दानी। **उत** = ही, भी, ओर **द्युक्षम्** = सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **नरः** = नर **चक्रमा** = किया **सत्यराधसे** = सत्य की वृद्धि के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- शंस = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाला (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **उक्थम्** = उक्ति, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **सुदानवे** = दानी। (सु - सुन्दर, अच्छा, दा, दद् = देना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्युक्षम्** = सक्षम अग्रगामी,

अग्रगामी होने में समर्थ (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना, क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **नरः** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **चक्रमा** = किया (कृ = करना)। **सत्यराधसे** = सत्य की वृद्धि के लिए (सत् = सत्य होना, अस्तित्व होना, राध - सिद्ध होना, बढ़ना, निर्णय करना) ॥ 2 ॥

467. त्वम् नः इन्द्र वाजयुः, त्वम् गव्युः शतक्रतो ।

त्वम् हिरण्ययुः वसो ॥ 3 ॥ 7-31-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली वाजयुः = वाजयुक्त त्वम् = तुम गव्युः = गव्य शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला त्वम् = तुम हिरण्ययुः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाले को, युक्त वसो = वसु ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वाजयुः = वाजयुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। गव्युः = गव्य (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हिरण्ययुः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाले को, युक्त (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना)। वसो = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 3 ॥

468. प्र वो महे महि-वृधे भरध्वम्, प्रचेतसे प्र सुमतिम् कृणुध्वम् ।

विशः पूर्वीः प्र चर चर्षणिप्राः ॥ 10 ॥

7-31-10

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् महि-वृधे = महान् वृद्धि में, बढ़ने में भरध्वम् = पूर्ण करो, धारण करो, भरण करो प्रचेतसे = प्रकृष्ट विचार वाले के लिए प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सुमतिम् = सुमति को, सुबुद्धि को कृणुध्वम् = करो विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी पूर्वीः = पूर्व प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक चर = चलने वाला चर्षणिप्राः = हे आनन्द, चेतना, विचार को पूर्ण करने वाले ॥ 10 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। महि-वृधे = महान्-वृद्धि में, बढ़ने में (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। भरध्वम् = पूर्ण करो, धारण करो, भरण करो (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। प्रचेतसे = प्रकृष्ट विचार वाले के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सुमतिम् = सुमति को, सुबुद्धि को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। कृणुध्वम् = करो (कृ = करना)। विशः = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। पूर्वीः = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। चर = चलने वाला (चर् - चलना, विचरण करना)। चर्षणिप्राः = हे आनन्द, चेतना, विचार को पूर्ण करने वाले (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना) ॥

469. उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिम्, इन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।

तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥ 11 ॥ 7-31-11

मन्त्रार्थ :- उरुव्यचसे = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, विस्तार व्यापक में **महिने** = महि, महानता में **सुवृक्तिम्** = स्वीकार करने योग्य को **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **जनयन्त** = उत्पन्न किया **विप्राः** = विशेष पूर्ण करने वाले **तस्य** = उसका **व्रतानि** = व्रतों को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **मिनन्ति** = प्रक्षेपण करते हैं, स्थापना करते हैं, रक्षा करते हैं **धीराः** = धीर जन, धैर्यवान् जन, धीर लोग ॥ 11 ॥

पदार्थ :- उरुव्यचसे = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, विस्तार व्यापक में (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, व्यच् - जाना, व्यापना, ठगना)। **महिने** = महि, महानता में (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सुवृक्तिम्** = स्वीकार करने योग्य को (सु - अच्छा, सुन्दर, वृक् - लेना, मान्य करना, स्वीकार करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **जनयन्त** = उत्पन्न किया (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विप्राः** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि - विशेष, प्रा - पूर्ण करना)। **तस्य** = उसका (सर्वनाम)। **व्रतानि** = व्रतों को (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मिनन्ति** = प्रक्षेपण करते हैं, स्थापना करते हैं, रक्षा करते हैं (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **धीराः** = धीर जन, धैर्यवान् जन, धीर लोग (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धृ - धारण करना, सहना, स्थिर रहना) ॥

470. इन्द्रम् वाणीः अनुत्तमन्युम् एव, सत्रा राजानम् दधिरे सहध्वै ।

हर्यश्वाय बर्हया सम् आपीन् ॥ 12 ॥ 7-31-12

मन्त्रार्थ :- इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को **वाणीः** = वाणी **अनुत्तमन्युम्** = अत्यन्त गर्व रहित **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी **राजानम्** = राजा **दधिरे** = धारण किया **सहध्वै** = प्रतिरोध करने को **हर्यश्वाय** = हर्यश्व, प्रकाशवान्, गतिवान्, इच्छावान्, के लिए **बर्हया** = बढ़ा हुआ, विराट्, महान् **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **आपीन्** = प्राप्तों को, पालन करने वालों को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वाणीः** = वाणी (वण - शब्द करना)। **अनुत्तमन्युम्** = अत्यन्त गर्व रहित (अन्+उत्त+मन्यु, अन् - नहीं, उत् = ऊपर, उच्च (उपसर्ग), उद् - उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उद् - उन्द् - आर्द्र होना, गीला होना, कष्ट होना, मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **दधिरे** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **सहध्वै** = प्रतिरोध करने को (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **हर्यश्वाय** = हर्यश्व, प्रकाशवान्, गतिवान्, इच्छावान्, के लिए (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **बर्हया** = बढ़ा हुआ, विराट्, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **आपीन्** = प्राप्तों को, पालन करने वालों को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना) ॥ 12 ॥

(158) सूक्त 32

471. मो षु त्वा वाघतः चन, आरे अस्मत् नि रीरमन् ।

आरात्तात् वा सधमादम् नः, आ गहीह वा सन् उप श्रुधि ॥ 1 ॥

7-32-1

मन्त्रार्थ - मो = बन्धन पु = सुन्दर, अच्छा त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वाघतः = उत्थान से चन = और, ही आरे = दूर अस्मत् = हमसे नि = निश्चित, निरन्तर रीरमन् = रीरम करो, शब्द करो आरात्तात् = दूर, समीप वा = अथवा सधमादम् = साथ आनन्द को नः = हमको, हमारे लिए, हमारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गहीह = गति, ज्ञान, घना करें वा = अथवा सन् = ही। उप = समीप श्रुधि = सुनिये ॥ 1 ॥

पदार्थ - मो = बन्धन (मू = बाँधना)। पु = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वाघतः = उत्थान से (वघ् - रुकना, उठना, उत्थान करना)। चन = और, ही आरे = दूर (अव्यय)। अस्मत् = हमसे (सर्वनाम)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। रीरमन् = रीरम करो, शब्द करो (री - शब्द करना, ध्वनि करना, रम - रमना, क्रीडा करना, खेलना)। आरात्तात् = दूर, समीप (अव्यय)। वा = अथवा (अव्यय)। सधमादम् = साथ आनन्द को (सध = साथ (अव्यय), मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। गहीह = गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। वा = अथवा (अव्यय)। सन् = ही। उप = समीप (उपसर्ग)। श्रुधि = सुनिये (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥

472. इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते, सचा मधौ न मक्षः आसते।

इन्द्रे कामम् जरितारो वसूयवो, रथे न पादम् आ दधुः ॥ 2 ॥

7-32-2

मन्त्रार्थ :- इमे = यह, इस, ये हि = ही, निश्चय ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए ब्रह्मकृतः = ब्रह्मकृत, शब्दकर्ता सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सचा = समझदार, जानकार, सहगामी मधौ = मधु में न = नहीं, समान, उपमार्थक मक्षः = मक्ष आसते = बैठता है इन्द्रे = इन्द्र में कामम् = कामना, इच्छा को जरितारो = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व वसूयवो = वसुयुक्त रथे = रथ में न = नहीं, समान, उपमार्थक पादम् = पाद, चरण को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम दधुः = धारण किया ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। ब्रह्मकृतः = ब्रह्मकृत, शब्दकर्ता (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, कृ = करना)। सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सचा = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। मधौ = मधु में (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मक्षः = मक्ष (मक्ष - डसना)। आसते = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। इन्द्रे = इन्द्र में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। कामम् = कामना, इच्छा को (कम - चाहना, इच्छा करना)। जरितारो = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। वसूयवो = वसुयुक्त (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। रथे = रथ में (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पादम् = पाद, चरण को (पद् - चलना, जाना, भूषित होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। दधुः = धारण किया (दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 2 ॥

473. इमे इन्द्राय सुन्विरे, सोमासो दध्याशिरः।

तान् आ मदाय वज्रहस्त, पीतये हरिभ्याम् याहि ओकः आ ॥ 4 ॥

7-32-4

मन्त्रार्थ - इमे = यह, इस, ये इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए सुन्विरे = सुन्विर, उत्पन्न, ऐश्वर्य किये गये सोमासो = अनेक ऐश्वर्यमय दध्याशिरः = धारण, पालन को व्याप्त होने वाले, सुनने वाले तान् = उनको आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मदाय = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए वज्रहस्त = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले पीतये = पान के लिए हरिभ्याम् = हरण करने वाले के लिए, हरि-युगल के लिए याहि = जायें, प्राप्त

हों, प्राप्त करें ओक = निवास आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ॥ 4 ॥

पदार्थ - इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सुन्चिरे** = सुन्चिर, उत्पन्न, ऐश्वर्य किये गये (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **दध्याशिरः** = धारण, पालन को व्याप्त होने वाले, सुनने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **तान्** = उनको (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **वज्रहस्त** = वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **हरिभ्याम्** = हरण करने वाले के लिए, हरि-युगल के लिए (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **ओकः** = निवास (ओक - निवास करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) ॥ 4 ॥

474. सुनोता सोमपाप्ने, सोमम् इन्द्राय वज्रिणे ।

पचता पक्तीः अवसे कृणुध्वम्, इत् पृणत् इत् पृणते मयः ॥ 8 ॥

7-32-8

मन्त्रार्थ - सुनोता = उत्पन्न करो **सोमपाप्ने** = सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए **पचता** = पकाने वाले **पक्तीः** = पकाने वाले **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो **कृणुध्वम्** = करो **इत्** = ही **पृणत्** = पूर्ण करो, पालन करो **इत्** = ही **पृणते** = पूर्ण करता है **मयः** = गति, ज्ञान ॥ 8 ॥

पदार्थ - सुनोता = उत्पन्न करो (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सोमपाप्ने** = सोमपा के लिए, सोम-पालक के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा = पालन करना, बचाना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **पचता** = पकाने वाले (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **पक्तीः** = पकाने वाले (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **कृणुध्वम्** = करो (कृ = करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **पृणत्** = पूर्ण करो, पालन करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **पृणते** = पूर्ण करता है (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **मयः** = गति, ज्ञान (मय् - जाना, जानना, पाना) ॥ 8 ॥

475. कः तम् इन्द्र त्वा वसुम्, आ मर्त्यो दधर्षति ।

श्रद्धा इति ते मघवन् पार्ये, दिवि वाजी वाजम् सिषासति ॥ 14 ॥

7-32-14

मन्त्रार्थ - कः = कौन **तम्** = उसको, उसे **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **वसुम्** = वसु

को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **मर्त्यो** = मरणशील **दधर्षति** = जीतता है, गर्व करता है, धृष्टता करता है **श्रद्धा** = श्रद्धा, सत्य-धारण **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **पार्ये** = पार के लिए, पूर्णता के लिए **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **वाजम्** = विद्या को, गति को **सिषासति** = शुद्ध होता है ॥ 14 ॥

पदार्थ - कः = कौन (सर्वनाम)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वसुम्** = वसु को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मर्त्यो** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **दधर्षति** = जीतता है, गर्व करता है, धृष्टता करता है (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **श्रद्धा** = श्रद्धा, सत्य-धारण (श्रत् = सत्य (उपसर्ग))। **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **पार्ये** = पार के लिए, पूर्णता के लिए (पार - कार्य पूर्ण करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सिषासति** = शुद्ध होता है (सस् - शुद्ध करना) ॥ 14 ॥

476. मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय, ये ददति प्रिया वसु।

तव प्रणीती हरि अश्व सूरिभिः, विश्वा तरेम दुरिता ॥ 15 ॥ 7-32-15

मन्त्रार्थ :- **मघोनः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **स्म** = है **वृत्रहत्येषु** = वृत्रहत्यों में **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो **ये** = जो **ददति** = देते हैं **प्रिया** = प्रिय **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **तव** = तुम्हारा **प्रणीती** = ले जाने वाला **हरि** = हरि **अश्व** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **सूरिभिः** = सूर्यों द्वारा, सूरों द्वारा **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **तरेम** = तैरें, तैर जाये, पार हो जायें **दुरिता** = बुराई, दुःख ॥ 15 ॥

पदार्थ :- **मघोनः** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **स्म** = है (अस् - होना)। **वृत्रहत्येषु** = वृत्रहत्यों में (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **ये** = जो (सर्वनाम)। **ददति** = देते हैं (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **प्रणीती** = ले जाने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मिलना, ले जाना)। **हरि** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **अश्व** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **सूरिभिः** = सूर्यों द्वारा, सूरों द्वारा (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **तरेम** = तैरें, तैर जाये, पार हो जायें (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **दुरिता** = बुराई, दुःख (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना) ॥ 15 ॥

477. तव इत् इन्द्र अवमम्, वसु त्वम् पुष्यसि मध्यमम्।

सत्र आ विश्वस्य परमस्य, राजसि न किः त्वा गोषु वृण्वते ॥ 16 ॥ 7-32-16

मन्त्रार्थ - तव = तुम्हारा इत् = ही इन्द्र = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान अवमम् = प्रकाशित, रक्षा को वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले त्वम् = तुम पुष्यसि = पुष्ट करते हो मध्यमम् = मध्यम को सत्र = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विश्वस्य = विश्व का, सभी का परमस्य = अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम का, परम का राजसि = प्रकाशमान् न = नहीं, समान, उपमार्थक किः = कोई, किसी त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा गोषु = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में वृण्वते = वरण करता है ॥ 16 ॥

पदार्थ - तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। इन्द्र = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अवमम् = प्रकाशित, रक्षा को (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना)। वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। पुष्यसि = पुष्ट करते हो (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। मध्यमम् = मध्यम को (सर्वनाम)। सत्र = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। विश्वस्य = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। परमस्य = अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम का, परम का (सर्वनाम)। राजसि = प्रकाशमान् (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। किः = कोई, किसी (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। गोषु = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। वृण्वते = वरण करता है (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना) ॥ 16 ॥

478. यत् इन्द्र यावतः त्वम्, एतावत् अहम् ईशीय।

स्तोतारम् इत् दिधिषेय, रदावसो न पापत्वाय रंसिषम् ॥ 18 ॥

7-32-18

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली यावतः = गति, ज्ञान, प्राप्त त्वम् = तुम एतावत् = इनके अनुसार अहम् = मैं ईशीय = ऐश्वर्य, अधिकार, शासन के लिए स्तोतारम् = स्तुतिकर्ता को इत् = ही दिधिषेय = धारण किया रदावसो = हे वसुदाता, वसु को देने वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक पापत्वाय = पाप के लिए रंसिषम् = रमन करूँ ॥ 18 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। यावतः = गति, ज्ञान, प्राप्त (या - जाना, जानना, पाना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। एतावत् = इनके अनुसार (अव्यय)। अहम् = मैं (सर्वनाम)। ईशीय = ऐश्वर्य, अधिकार, शासन के लिए (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। स्तोतारम् = स्तुतिकर्ता को (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। इत् = ही (अव्यय)। दिधिषेय = धारण किया (दधि - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। रदावसो = हे वसुदाता, वसु को देने वाले (रद - विदारण करना, चीरना, खोदना, लिखना, देना, वस- वस्त्र पहिरना, ओढ़ना, पोशाक धारण करना, वसति करना, टिकना, निवास करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पापत्वाय = पाप के लिए (पाप् - पाप करना, दुष्ट आचरण करना)। रंसिषम् = रमन करूँ (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना) ॥ 18 ॥

479. शिक्षेयम् इत् महयते दिवेदिवे, रायः आ कुह चित् विदे।

न हि त्वत् अन्यत् मघवन् नः आप्यम्, वस्यो अस्ति पिता च न ॥ 19 ॥ 7-32-19

मन्त्रार्थ :- शिक्षेयम् = शिक्षा दूँ इत् = ही महयते = महान्, पूज्य, सम्मान करने वाले, पूजता है दिवेदिवे = प्रतिदिन रायः = गति, विद्या, वाणी आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम कुह = कहाँ चित् = भी, ही विदे = विद्वान् न = नहीं, समान, उपमार्थक हि = ही, निश्चय त्वत् = तुमसे अन्यत् = अन्य, कोई और, इतर मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् नः = हमको, हमारे लिए, हमारा आप्यम् = आप, व्याप्त, व्यापक को वस्यो = वस्य, वसने योग्य अस्ति = है पिता = पिता,

पालन करने वाला, पिता **च** = और **न** = नहीं, समान, उपमार्थक ॥ 19 ॥

पदार्थ :- शिक्षेयम् = शिक्षा दूँ (शिक्ष - शिक्षा देना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **महयते** = महान्, पूज्य, सम्मान करने वाले, पूजता है (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **दिवेदिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **रायः** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **कुह** = कहाँ (सर्वनाम)। **चित्** = भी, ही (अव्यय)। **विदे** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **अन्यत्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आप्यम्** = आप, व्याप्त, व्यापक को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **वस्यो** = वस्य, वसने योग्य (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अस्ति** = है (अस् - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **च** = और (अव्यय)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) ॥ 19 ॥

480. तरणिः इत् सिषासति, वाजम् पुरन्ध्या युजा ।

आ वः इन्द्रम् पुरुहूतम्, नमे गिरा नेमिम् तष्टा इव सुद्रुवम् ॥ 20 ॥ 7-32-20

मन्त्रार्थ :- तरणिः = तैरने वाला, तैरने का साधन **इत्** = ही **सिषासति** = शुद्ध होता है **वाजम्** = विद्या को, गति को **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा **युजा** = युक्त कीजिये **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **इन्द्रम्** = इन्द्र को **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को **नमे** = नमन में **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ **नेमिम्** = ले जाने वाले, मार्गदर्शक को **तष्टा** = स्थापित **इव** = समान, की भाँति, के समान **सुद्रुवम्** = सुद्रुव को, प्रवाहकामी, ज्ञान को ॥ 20 ॥

पदार्थ :- तरणिः = तैरने वाला, तैरने का साधन (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **सिषासति** = शुद्ध होता है (सस् - शुद्ध करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा (पुर = आगे जाना, धि-धा = धारण करना)। **युजा** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नमे** = नमन में (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **नेमिम्** = ले जाने वाले, मार्गदर्शक को (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **तष्टा** = स्थापित (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सुद्रुवम्** = सुद्रुव को, प्रवाहकामी, ज्ञान को (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना) ॥ 20 ॥

481. न दुष्टुतिः मर्त्यः विन्दते वसु, न स्नेधन्तम् रयिः नशत् ।

सुशक्तिः इत् मघवन् तुभ्यम्, मावते देष्णम् यत् पार्ये दिवि ॥ 21 ॥ 7-32-21

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक **दुष्टुतिः** = अनुचित स्तुति **मर्त्यः** = मरणशील **विन्दते** = प्राप्त करता है **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **स्नेधन्तम्** = हिंसा करने वाले को **रयिः** = विद्या, ज्ञान **नशत्** = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है **सुशक्तिः** = सुशक्ति, सु-सक्षमता, सु-सामर्थ्य **इत्** = ही **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए **मावते** = मेरे समान, सम्मान युक्त **देष्णम्** = संरक्षक को, दानी को **यत्** = जिसे, जो **पार्ये** = पार के लिए, पूर्णता के लिए **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 21 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **दुष्टुतिः** = अनुचित स्तुति (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन (उपसर्ग), स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **विन्दते** = प्राप्त करता है (विन्द - लाभ होना, प्राप्त करना, सम्पादित करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्नेधन्तम्** = हिंसा करने वाले को (सृधु - मर्दन करना, सम्पीडन करना)। **रयिः** = विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **नशत्** = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है (नश् - नष्ट होना, अदृश्य होना)। **सुशक्तिः** = सुशक्ति, सु-सक्षमता, सु-सामर्थ्य (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग), शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मावते** = मेरे समान, सम्मान युक्त (माम् = मुझको (सर्वनाम), मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **देष्णम्** = संरक्षक को, दानी को (दे-दै - संरक्षण करना, पोषण करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पार्ये** = पार के लिए, पूर्णता के लिए (पार - कार्य पूर्ण करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 21 ॥

482. अभि त्वा शूर नोनुमो, अदुग्धा इव धेनवः ।

ईशानम् अस्य जगतः, स्वर्दृशम् ईशानम् इन्द्र तस्थुषः ॥ 22 ॥ 7-32-22

मन्त्रार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **शूर** = वीर, पराक्रमी **नोनुमः** = ले जाते हैं **अदुग्धाः** = अदुग्ध, अदोहित **इव** = समान, की भाँति, के समान **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को **अस्य** = इसका **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील का **स्वर्दृशम्** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, दृष्टि **दृशानः** = देखने वाले **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **तस्थुषः** = स्थित का, स्थापित का ॥ 22 ॥

भावार्थ :- **इन्द्र अर्थात्** परम ऐश्वर्यशाली परमात्मा इस जगत् का शासन करने वाला है। **अदुग्धाः इव धेनवः** का अर्थ है विना दुही धेनु के समान। धेनु का शाब्दिक अर्थ है प्रिय, पालन करने वाले। पालन करने वाले स्वभावतः हमारे प्रिय होते ही हैं। गाय हमारे लिए उपयोगी प्राणी है। अतः वह हमें प्रिय भी है। उसके दुग्ध से पालन होता है। इसीलिए उसे धेनु भी कहते हैं। यहाँ विना दुही धेनु को ले जाने वाले शूरवीर पराक्रमी कहे गये हैं। उसी प्रकार हम ईश का वरण करते हैं। यही श्रेयस्कर है। 22 ॥

पदार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **शूर** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **नोनुमः** = ले जाते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अदुग्धाः** = अदुग्ध, अदोहित (अ = नहीं, खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **जगतः** = जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **स्वर्दृशम्** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, दृष्टि (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, दृश्-पश्य -देखना)। **दृशानः** = देखने वाले (दृश्-पश्य -देखना)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार

होना)। **इन्द्र** - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **तस्थुषः** = स्थित का, स्थापित का (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना) ॥ 22 ॥

483. अभीषतः तत् आ भर, इन्द्र ज्यायः कनीयसः ।

पुरुवसुः हि मघवन्, बभूविथ भरे भरे च हव्यः ॥ 24 ॥ 7-32-24

मन्त्रार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सतः** = सत्य **तत्** = वह, उस को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **ज्यायः** = ज्या का, वृद्ध, जयी करने वाले **कनीयसः** = कनीयस प्रकाशमानों का **पुरुवसुः** = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक **हि** = ही, निश्चय **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **बभूविथ** = हो गये **भरे** = भरण करते हैं **भरे** = भरण करते हैं **च** = और। **हव्यः** = आदान-प्रदान करने योग्य, हव्य ॥ 24 ॥

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सतः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ज्यायः** = ज्या का, वृद्ध, जयी करने वाले (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **कनीयसः** = कनीयस प्रकाशमानों का (कन् = प्रकाश प्रीति करना, तृप्त होना, जाना, जानना, पाना, चाहना)। **पुरुवसुः** = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, र्व - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **बभूविथ** = हो गये (भू = होना, प्राप्त होना)। **भरे** = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **भरे** = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **च** = और। **हव्यः** = आदान-प्रदान करने योग्य, हव्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 24 ॥

484. इन्द्र क्रतुम् न आ भर, पिता पुत्रेभ्यो यथा ।

शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत, यामनि जीवा ज्योतिः अशीमहि ॥ 26 ॥ 7-32-26

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **क्रतुम्** = कर्म को **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता **पुत्रेभ्यो** = पुत्रों द्वारा, पुत्रों के लिए, पुत्रों से **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **शिक्षा** = शिक्षा **णो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अस्मिन्** = इस, इसमें **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ **यामनि** = यम **जीवा** = जीव **ज्योतिः** = प्रकाश **अशीमहि** = भोजन करते हैं ॥ 26 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **पुत्रेभ्यो** = पुत्रों द्वारा, पुत्रों के लिए, पुत्रों से (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **शिक्षा** = शिक्षा (शिक्ष - शिक्षा देना)। **णो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **यामनि** = यम (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **जीवा** = जीव (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **अशीमहि** = भोजन करते हैं (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त

करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) ॥ 26 ॥

485. मा नो अज्ञाता वृजनाः, दुराध्यो मा अशिवासो अवक्रमुः ।

त्वया वयम् प्रवतः शश्वतीः, अपो अति शूर तराम् असि ॥ 27 ॥

7-32-27

मन्त्रार्थ :- मा = नहीं, मत नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अज्ञाता = अज्ञानी वृजना = वृजन, त्याग, वर्जना दुराध्यो = दुःख देने वाले मा = नहीं, मत अशिवासो = अशिव, व्यापक अव = नीचे, दूर, प्राप्त क्रमुः = क्रम, सम्यक् गति, रक्षण त्वया = तुम्हारे द्वारा, तुमसे वयम् = हम, हम सब, हम लोग प्रवतः = प्रवदा, प्रवक्ता, प्रकृष्ट बोलने वाला शश्वतीः = शश्वत अपो = पालन करने वाला अति = बहुत, अत्यधिक शूर = वीर, पराक्रमी तराम् = पार करने वाले को असि = हो ॥ 27 ॥

पदार्थ :- मा = नहीं, मत (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अज्ञाता = अज्ञानी (अ = नहीं, ज्ञा = जानना)। वृजना = वृजन, त्याग, वर्जना (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। दुराध्यो = दुःख देने वाले (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। अशिवासो = अशिव, व्यापक (अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अ - नहीं, शिव् = कल्याण करना)। अव = नीचे, दूर, प्राप्त क्रमुः = क्रम, सम्यक् गति, रक्षण (क्रम् = चलना, निर्भयता से चलना, रक्षा करना, बढ़ना)। त्वया = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। प्रवतः = प्रवदा, प्रवक्ता, प्रकृष्ट बोलने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वद - कहना, समझाना)। शश्वतीः = शश्वत (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। अपो = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। शूर = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। तराम् = पार करने वाले को (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 27 ॥

अनुवाकः- 44

(159) सूक्त 56

486. कः ईम् व्यक्ता नरः सनीडा, रुद्रस्य मर्याः अध स्वश्वाः ॥ 1 ॥ 7-56-1

मन्त्रार्थ - कः = कौन ईम् = समान, इस प्रकार व्यक्ता = व्यक्त को नरः = नर सनीडा = समान पहुँचाना, समान मार्ग दिखाना रुद्रस्य = रुद्र का मर्याः = मर्य, मरणशील अध = नीचे स्वश्वाः = उत्तम व्यापक ॥ 1 ॥

पदार्थ - कः = कौन (सर्वनाम)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। व्यक्ता = व्यक्त को (वि - विशेष, अक् - जाना, टेढ़ा जाना, वि-अक् - व्यक्त होना, स्पष्ट करना)। नरः = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। सनीडा = समान पहुँचाना, समान मार्ग दिखाना (स - सहित, साथ, समान, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। रुद्रस्य = रुद्र का (रुद् = रुदन करना, रुलाना)। मर्याः = मर्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। अध = नीचे (अव्यय)। स्वश्वाः = उत्तम व्यापक (सु = उत्तम, अच्छा, अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) ॥ 1 ॥

(160) सूक्त 59

487. न हि वः चरमम् च न, वसिष्ठः परि-मंसते ।

अस्माकम् अद्य मरुतः सुते सचा, विश्वे पिबन्तु कामिनः ॥ 3 ॥

7-59-3

मन्त्रार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक हि = ही, निश्चय वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए चरमम् = विचरण करने को च = और न = नहीं, समान, उपमार्थक वसिष्ठः = वसिष्ठ परिमंसते =

रूपान्तर करता है, मापता है, गति करता है **अस्माकम्** = हमारा **अद्य** = आज **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **विश्वे** = सभी **पिबन्तु** = पियें, पान करें **कामिनः** = कामना, इच्छा ॥ 3 ॥

पदार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **चरमम्** = विचरण करने को (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वसिष्ठः** = वसिष्ठ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **परिमंसते** = रूपान्तर करता है, मापता है, गति करता है (मंस-मस - रूपान्तर करना, आकार बदलना, नापना, गति करना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **विश्वे** = सभी (सर्वनाम)। **पिबन्तु** = पियें, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **कामिनः** = कामना, इच्छा (कम - चाहना, इच्छा करना) ॥ 3 ॥

(161) सूक्त 66

488. यत् अद्य सूरं उदिते, अनागाः मित्रो अर्यमा ।

सुवाति सविता भगः ॥ 4 ॥ 7-66-4

मन्त्रार्थ :- यत् जो अनागाः निष्पाप मित्रो मित्र अर्यमा ज्ञानी सविता उत्पन्न करने वाला भगः सेवित, सेवनीय (हैं), अद्य आज सूरं सूर्य के उदिते उदय होने पर सुवाति सुन्दर प्रवाह करता है, ऐश्वर्य प्रवाहित करता है ॥ 1 ॥

भावार्थ - परमात्मा के गुणों का स्मरण तथा स्तुति करते हुए कहा गया है कि वह सूर्योदय के साथ ही ऐश्वर्य का प्रवाह करता है। हम उपासना से पात्रता विकसित कर उसे प्राप्त कर सकते हैं।

विशेष - अनागा का अर्थ पाप रहित, अपराध रहित माना जाता है। (नग - स्थिर होना, जड़ होना, पाप करना)। अर्यमा पद का अर्थ ऋ धातु के अनुसार गति, ज्ञान, प्राप्ति करने वाले होगा। भग शब्द को भज् धातु से निष्पन्न माना जाता है। भज का अर्थ सेवा करना, दान करना आदि हैं। 4 ॥

पदार्थ :- यत् = जो। अनागाः = अपराध रहित, निष्पाप, निर्दोष (अन्- नहीं, आग- दोष होना, अनुचित आचरण करना)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, प्रीति करना, नरम होना, मृदुल होना)। अर्यमा = ज्ञानी, अर्यमा (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। सविता = उत्पन्न करने वाला (सु - उत्पन्न करना)। भगः = सेवित, सेवनीय (भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना)। अद्य = आज। सूरं = सूर्य के (सू - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। उदिते = उदय होने पर सुवाति सुन्दर प्रवाह करता है, ऐश्वर्य प्रवाहित करता है (सु - सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, वा - बहना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना) ॥ 4 ॥

489. सुप्रावीः अस्तु स क्षयः, प्र नु यामन् सुदानवः ।

ये नो अंहो अतिपिप्रति ॥ 5 ॥ 7-66-5

मन्त्रार्थ :- सुप्रावीः = सर्वोत्तम रक्षक अस्तु = हो स = वह, उसने क्षयः = निवास प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक नु = ही, भी यामन् = यम सुदानवः = दानी ये = जो नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अंहो = प्रकाशमान, शब्दकर्ता, कुटिल अतिपिप्रति = अत्यधिक पूर्ण करता है ॥ 5 ॥

पदार्थ :- सुप्रावीः = सर्वोत्तम रक्षक (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अक् - रक्षा करना)। अस्तु = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। स = वह, उसने (सर्वनाम) क्षयः = निवास (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना, निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक

(उपसर्ग)। नु = ही, भी (निपात, अव्यय)। यामन् = यम (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। सुदानवः = दानी (सु - उत्तम, अच्छा, दा, दद् = देना)। ये = जो (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अंहो = प्रकाशमान, शब्दकर्ता, कुटिल (अंह = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना)। अतिपिप्रति = अत्यधिक पूर्ण करता है (अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय), पृ - पूर्ण करना, भरना) ॥ 5 ॥

490. उत स्वराजो अदितिः, अदध्वस्य व्रतस्य ये।

महो राजानः ईशते ॥ 6 ॥ 7-66-6

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर स्वराजो = स्वयं प्रकाशमान अदितिः = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी अदध्वस्य = अहिंसनीय का व्रतस्य = व्रत वाले का ये = जो महो = बड़े, महिमावान्, महान् राजानः = राजा ईशते = ऐश्वर्य व अधिकार, शासन करते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। स्वराजो = स्वयं प्रकाशमान (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना)। अदितिः = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। अदध्वस्य = अहिंसनीय का (दध् - निन्दा करना, आज्ञा करना)। व्रतस्य = व्रत वाले का (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। ये = जो (सर्वनाम)। महो = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। राजानः = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। ईशते = ऐश्वर्य व अधिकार, शासन करते हैं (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना) ॥

491. प्रति वाम् सूर उदिते, मित्रम् गृणीषे वरुणम्।

अर्यमणम् रिशादसम् ॥ 7 ॥ 7-66-7

मन्त्रार्थ :- प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में वाम् = तुम दोनों को सूर = सूर्य उदिते = उदय होने पर, उदित में मित्रम् = मित्र को गृणीषे = शब्द करते हैं वरुणम् = वरुण को अर्यमणम् = अर्यमण को रिशादसम् = हिंसा-भक्षकों को, हिंसानाशक ॥ 7 ॥

पदार्थ :- प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। सूर = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। उदिते = उदय होने पर, उदित में (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, इ = जाना, उदि - उन्द = भिगोना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। मित्रम् = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञा करना, नरम होना, मृदुल होना)। गृणीषे = शब्द करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। वरुणम् = वरुण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। अर्यमणम् = अर्यमण को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। रिशादसम् = हिंसा-भक्षकों को, हिंसानाशक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना, अद् = नष्ट करना, खाना, दा - देना) ॥ 7 ॥

492. राया हिरण्यया मतिः, इयम् अवृकाय शवसे।

इयम् विप्रा मेधसातये ॥ 8 ॥ 7-66-8

मन्त्रार्थ :- राया = गति, विद्या, वाणी हिरण्यया = प्रकाशमान, गतिशील द्वारा मतिः = मति, मननशक्ति इयम् = यह, इसको अवृकाय = अहिंसकों के लिए, अवृकों के लिए शवसे = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए इयम् = यह, इसको विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले मेधसातये = मेधावी-सेवाभावी के लिए ॥ 8 ॥

पदार्थ :- राया = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, दान करना, रय् = गति करना, जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। हिरण्यया = प्रकाशमान, गतिशील द्वारा (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। मतिः = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। इयम् = यह, इसको (सर्वनाम)। अवृकाय = अहिसकों के लिए, अवृकों के लिए (अ- नहीं, वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच - हिंसा करना)। शवसे = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। इयम् = यह, इसको (सर्वनाम)। विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। मेधसातये = मेधावी-सेवाभावी के लिए (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, सन = सेवा करना, चाकरी करना, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 8 ॥

493. ते स्याम देव वरुण, ते मित्र सूरिभिः सह ।

इषम् स्वः च धीमहि ॥ 9 ॥ 7-66-9

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए स्याम = हों देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने वरुण = वरुण ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए मित्र = हे मित्र सूरिभिः = सूर्यों द्वारा, सूरों द्वारा सह = साथ, सहित इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् च = और धीमहि = धारण करते हैं ॥ 9 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। स्याम = हों (अस् - होना)। देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। वरुण = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मित्र = हे मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। सूरिभिः = सूर्यों द्वारा, सूरों द्वारा (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। सह = साथ, सहित (सर्वनाम)। इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। च = और धीमहि = धारण करते हैं (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना) ॥

अनुवाक:- 55

(162) सूक्त 74

494. इमाः उ वाम् दिविष्टयः, उम्ना हवन्ते अश्विना ।

अयम् वाम् अह्वे अवसे, शचीवसू विशम् विशम् हि गच्छथः ॥ 1 ॥ 7-74-1

मन्त्रार्थ - इमाः = ये उ = निश्चय ही, भी वाम् = तुमको दिविष्टयः = दिव्यता की इच्छा, तेजस्व की कामना उम्ना = उष्ण, उष्ण होने वाला, उष्ण करने वाला हवन्ते = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक अयम् = यह वाम् = तुमको अह्वे = आह्वान करता हूँ अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो शचीवसू = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले विशम् = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को विशम् = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को हि = ही, निश्चय गच्छथः = जाते हो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- इमाः = ये (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। वाम् = तुमको (सर्वनाम)। दिविष्टयः = दिव्यता की इच्छा, तेजस्व की कामना (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। उम्ना = उष्ण, उष्ण होने वाला, उष्ण करने वाला (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना, रोग होना)। हवन्ते = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना,

आह्वान करना)। **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **वाम्** = तुमको (सर्वनाम)। **अह्वे** = आह्वान करता हूँ (अ - नहीं, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना, बुलाना, पुकारना, अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **शचीवसू** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले, (शच- स्पष्ट बोलना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **विशम्** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **विशम्** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **गच्छथः** = जाते हो (गम्-गच्छ - जाना) ॥ 1 ॥

495. युवम् चित्रम् ददथुः भोजनम्, नरा चोदेथाम् सूनृतावते ।

अर्वाक् रथम् समनसा, नि यच्छतम् पिबतम् सोम्यम् मधु ॥ 2 ॥ 7-74-2

मन्त्रार्थ :- युवम् = तुमको चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को ददथुः = दान करते हो, त्याग करते हो भोजनम् = भोजन को नरा = नर चोदेथाम् = प्रेरित करे सूनृतावते = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली के लिए अर्वाक् = पहले रथम् = रथ को समनसा = समान मन वाले नि = निश्चित, निरन्तर यच्छतम् = प्रदान करें पिबतम् = पियो, पान करें सोम्यम् = सौम्य मधु = मीठा, मधु ॥ 2 ॥

पदार्थ :- युवम् = तुमको (सर्वनाम)। चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। ददथुः = दान करते हो, त्याग करते हो (दद-दा - दान करना, देना, त्याग करना)। भोजनम् = भोजन को (भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। नरा = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। चोदेथाम् = प्रेरित करे (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। सूनृतावते = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली के लिए (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना)। अर्वाक् = पहले (अव्यय)। रथम् = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। समनसा = समान मन वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। यच्छतम् = प्रदान करें (यच्छ = देना)। पिबतम् = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। सोम्यम् = सौम्य (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू - प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥

(163) सूक्त 81

497. प्रति उ अदर्शि आयती, उच्छन्ती दुहिता दिवः ।

अपो मही व्ययति, चक्षसे तमो ज्योतिः कृणोति सूनरी ॥ 1 ॥

7-81-1

मन्त्रार्थ :- प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में उ = निश्चय ही, भी अदर्शि = देखा आयती = आयती, शब्दकर्ता उच्छन्ती = बोलते हैं, रक्षा करते हैं दुहिता = दुही हुई, दुहने वाली दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय अपो = पालन करने वाला मही = मही, महिमावान्, महान् व्ययति = व्यय करते हो चक्षसे = नेत्रों से, दृष्टि से, स्पष्ट वाणी से तमो = अन्धकार, इच्छा, दुःख ज्योतिः = प्रकाश कृणोति = करता है सूनरी = प्रेरणा देने वाली ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। उ = निश्चय ही, भी। अदर्शि = देखा (दृश्-पश्य - देखना)। आयती = आयती, शब्दकर्ता (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। उच्छन्ती = बोलते हैं, रक्षा करते हैं (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना,

ऊ-अव् - रक्षा करना)। **दुहिता** = दुही हुई, दुहने वाली (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **मही** = मही, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **व्ययति** = व्यय करते हो (वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **चक्षसे** = नेत्रों से, दृष्टि से, स्पष्ट वाणी से (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **तमो** = अन्धकार, इच्छा, दुःख (तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **कृणोति** = करता है (कृ = करना)। **सूनरी** = प्रेरणा देने वाली (सु - सुन्दर, अच्छा, सू = प्रेरणा देना, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना) ॥ 1 ॥

498. उत् उस्त्रियाः सृजते सूर्यः सचा, उद्यत् नक्षत्रम् अर्चिवत् ।

तव इत् उषो व्युषि सूर्यस्य, च सम् भक्तेन गमेमहि ॥ 2 ॥ 7-81-2

मन्त्रार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **उस्त्रियाः** = प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को **सृजते** = सृजन करते हैं **सूर्यः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **उद्यन्** = उत्कृष्ट यमी, नियमी, पोषक **नक्षत्रम्** = नक्षत्र को **अर्चिवत्** = पूजा युक्त, सेवावान्, मानयुक्त **तव** = तुम्हारा **इत्** = ही **उषो** = प्रभात, हिंसा **व्युषि** = विशेष प्रभात, उषा में **सूर्यस्य** = सूर्य का **च** = और। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **भक्तेन** = सेवा द्वारा **गमेमहि** = जाते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **उस्त्रियाः** = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। **सृजते** = सृजन करते हैं (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **सूर्यः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **उद्यन्** = उत्कृष्ट यमी, नियमी, पोषक (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, यम् - नियमन करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना)। **नक्षत्रम्** = नक्षत्र को (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **अर्चिवत्** = पूजा युक्त, सेवावान्, मानयुक्त (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **उषो** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **व्युषि** = विशेष प्रभात, उषा में (वि - विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग, उषस् - प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **सूर्यस्य** = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **च** = और। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **भक्तेन** = सेवा द्वारा (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **गमेमहि** = जाते हैं (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥ 2 ॥

अनुवाकः- 56

(164) सूक्त 94

499. इयम् वाम् अस्य मन्मनः, इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः ।

अभ्रात् वृष्टिः इव अजनि ॥ 1 ॥ 7-94-1

मन्त्रार्थ :- इयम् = यह, इसको **वाम्** = तुम दोनों को **अस्य** = इसका **मन्मनः** = विचारशील **इन्द्राग्नी** = इन्द्र

और अग्नि **पूर्वस्तुतिः** = पूर्व स्तुति **अभ्रात्** = भरण किया **वृष्टिः** = वृष्टि, उच्च पराक्रम, पराक्रमी **इव** = समान, की भाँति, के समान **अजनि** = उत्पन्न किया ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **इयम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **वाम्** = तुम दोनों को (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **मन्मनः** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **पूर्वस्तुतिः** = पूर्व स्तुति (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना, स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **अभ्रात्** = भरण किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भृ = भरना, भरण करना)। **वृष्टिः** = वृष्टि, उच्च पराक्रम, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **अजनि** = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अज- जाना, गति करना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, जन - उत्पन्न करना) ॥

500. शृणुतम् जरितुः हवम्, इन्द्राग्नी वनतम् गिरः ।

ईशाना पिप्यतम् धियः ॥ 2 ॥ 7-94-2

मन्त्रार्थ :- **शृणुतम्** = सुनें, शृणुत को **जरितुः** = जरितु, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि **वनतम्** = शब्द करो, सेवा करो **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **ईशाना** = अधिकार करने वाला, ऐश्वर्य वाला **पिप्यतम्** = पान करो **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **शृणुतम्** = सुनें, शृणुत को (श्रु-शृण् = सुनना)। **जरितुः** = जरितु, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **वनतम्** = शब्द करो, सेवा करो (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **ईशाना** = अधिकार करने वाला, ऐश्वर्य वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **पिप्यतम्** = पान करो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 2 ॥

501. मा पापत्वाय नो नरा, इन्द्राग्नी मा अभिशस्तये ।

मा नो रीरधतम् निदे ॥ 3 ॥ 7-94-3

मन्त्रार्थ :- **मा** = नहीं, मत **पापत्वाय** = पाप के लिए **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **नरा** = नर **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि **मा** = नहीं, मत **अभिशस्तये** = सर्वथा हिंसा, विनती, स्तुति, निन्दा करने वाले के लिए **मा** = नहीं, मत **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **रीरधतम्** = पूर्ण करा **निदे** = निन्दा के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **पापत्वाय** = पाप के लिए (पाप् - पाप करना, दुष्ट आचरण करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **नरा** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **इन्द्राग्नी** = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **अभिशस्तये** = सर्वथा हिंसा, विनती, स्तुति, निन्दा करने वाले के लिए (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, शष् = हिंसा करना, मारना, निन्दा करना, अभिशस् = विनती करना, प्रार्थना करना, शंस् = चाहना, स्तुति करना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **रीरधतम्** = पूर्ण करो (रध - पूरा करना, समाप्त करना, अपकार करना, मार डालना या दुःख देना, पक्व होना,

पकना, शुद्ध होना, निर्दोष होना, गलती न करना)। निदे = निन्दा के लिए (निद - दोष लगाना, निन्दा करना, समीप जाना या पहुँचना) ॥ 3 ॥

502. इन्द्रे अग्ना नमो बृहत्, सुवृक्तिम् आ ईरयामहे ।

धिया धेनाः अवस्यवः ॥ 4 ॥ 7-94-4

मन्त्रार्थ :- इन्द्रे = इन्द्र में अग्ना = ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, अग्नियाँ नमो = नमन बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् सुवृक्तिम् = स्वीकार करने योग्य को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ईरयामहे = प्रेरणा करते हैं धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा धेनाः = धारणा, बुद्धि, प्रिय, पालन करने वाले अवस्यवः = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले ॥

पदार्थ :- इन्द्रे = इन्द्र में (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अग्ना = ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, अग्नियाँ (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नमो = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। सुवृक्तिम् = स्वीकार करने योग्य को (सु - अच्छा, सुन्दर, वृक् - लेना, मान्य करना, स्वीकार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ईरयामहे = प्रेरणा करते हैं (ईर् - ईर्ष्या करना, ऋ-ईर्य - जाना, चलना, फैलाना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। धेनाः = धारणा, बुद्धि, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। अवस्यवः = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 1 ॥

503. ता हि शश्वन्तः ईडते, इत्था विप्रासः ऊतये ।

सबाधो वाजसातये ॥ 5 ॥ 7-94-5

मन्त्रार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो हि = ही, निश्चय शश्वन्तः = शाश्वत, सनातन ईडते = स्तुति करते हैं इत्था = इत्था इस प्रकार विप्रासः = विप्रगण ऊतये = रक्षा के लिए सबाधो = सबाधित, सबाध वाजसातये = विद्यावान् के लिए ॥

पदार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। शश्वन्तः = शाश्वत, सनातन (शश्व - शशु - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। ईडते = स्तुति करते हैं (ईड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। इत्था = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। विप्रासः = विप्रगण (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। सबाधो = सबाधित, सबाध (स - सहित, साथ, बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। वाजसातये = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 5 ॥

504. ता वाम् गीर्भिः विपन्युवः, प्रयस्वन्तो हवामहे ।

मेधसाता सनिष्यवः ॥ 6 ॥ 7-94-6

मन्त्रार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो वाम् = तुम दोनों को गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा विपन्युवः = विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले प्रयस्वन्तो = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं मेधसाता = मेधावी-सेवाभावी सनिष्यवः = सेवा करने वाले, स्तुति करने वाले ॥ 6 ॥

पदार्थ :- ता = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। विपन्युवः = विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। प्रयस्वन्तो = प्रयत्नवान्, प्रयास करने वाले (प्र - प्रकृष्ट,

अधिक, यस - उपक्षय करना, वास करना, चलना, यत्न करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मेधसाता** = मेधावी-सेवाभावी (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, सन = सेवा करना, चाकरी करना, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **सनिष्यवः** = सेवा करने वाले, स्तुति करने वाले (स - सहित, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना, निष - प्राप्त करना, ले जाना) ॥ 6 ॥

(165) सूक्त 96

505. जनीयन्तो नु अग्रवः, पुत्रीयन्तः सुदानवः ।

सरस्वन्तम् हवामहे ॥ 4 ॥ 7-96-4

मन्त्रार्थ :- जनीयन्तो = उत्पन्न करने वाले की इच्छा वाले नु = ही, भी अग्रवः = अग्रणी, आने वाले पुत्रीयन्तः = पुत्र की इच्छा वाले सुदानवः = दानी सरस्वन्तम् = सरसवन्त को हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ :- जनीयन्तो = उत्पन्न करने वाले की इच्छा वाले (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। नु = ही, भी (निपात, अव्यय)। अग्रवः = अग्रणी, आने वाले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पुत्रीयन्तः = पुत्र की इच्छा वाले (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। सुदानवः = दानी (सु - उत्तम, अच्छा, दा, दद् = देना)। सरस्वन्तम् = सरसवन्त को (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना, स - साथ, सहित, रस् - स्वाद लेना, प्रीति करना, शब्द करना)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥

(166) सूक्त 100

506. प्र तत् ते अद्य शिपिविष्ट नाम, अर्यः शंसामि वयुनानि विद्वान् ।

तम् त्वा गृणामि तवसम् अतव्यान्, क्षयन्तम् अस्य रजसः पराके ॥ 5 ॥ 7-100-5

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक तत् = वह, उस को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अद्य = आज शिपिविष्ट = हे शिपि-विष्ट वाले, शिपि के विस्तार वाले नाम = नाम वाले अर्यः = अर्य को, प्रगतिशील को शंसामि = स्तुति, प्रशंसा करता हूँ वयुनानि = रचनाशील, ज्ञानमार्गी, वय या रचना करने वाले विद्वान् = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा गृणामि = वाणी, बोध, अभिसिंचन करता हूँ तवसम् = तवस को, गति, वृद्धि, हिंसा को अतव्यान् = हिंसा रहित क्षयन्तम् = निवास करने वाले को अस्य = इसका रजसः = रजस् का पराके = दूर ॥ 5 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अद्य = आज (अव्यय)। शिपिविष्ट = हे शिपि-विष्ट वाले, शिपि के विस्तार वाले (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। नाम = नाम वाले (अव्यय)। अर्यः = अर्य को, प्रगतिशील को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। शंसामि = स्तुति, प्रशंसा करता हूँ (शंस = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। वयुनानि = रचनाशील, ज्ञानमार्गी, वय या रचना करने वाले (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। विद्वान् = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। गृणामि = वाणी, बोध, अभिसिंचन करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन

करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **तवसम्** = तवस को, गति, वृद्धि, हिंसा को (तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **अतव्यान्** = हिंसा रहित (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **क्षयन्तम्** = निवास करने वाले को (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना, निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **रजसः** = रजस् का (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **पराके** = दूर (अव्यय) ॥ 5 ॥

507. किम् इत् ते विष्णो परिचक्ष्यम् भूत्, प्र यत् ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि।

मा वर्षो अस्मत् अपगूहः एतत्, यत् अन्यरूपः समिथे बभूथ ॥ 6 ॥ 7-100-6

मन्त्रार्थ :- किम् = क्या इत् = ही ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए विष्णो = हे विष्णु, हे सर्वव्यापी परिचक्ष्यम् = व्यापक वाणियाँ भूत् = हो प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक यत् = जिसे, जो ववक्षे = वक्ष करना चाहता है, पालन करना चाहता है शिपिविष्टो = शिपि-विष्ट वाले, शिपि के विस्तार वाले अस्मि = हूँ मा = नहीं, मत वर्षो = विविध रूपधारी अस्मत् = हमसे अप = दूर, नीचे, अपकार, गूहः = आच्छादित एतत् = यह यत् = जिसे, जो अन्यरूपः = अन्य रूप वाले समिथे = सम्यक् प्रकाशित में बभूथ = हो गये ॥ 6 ॥

पदार्थ :- किम् = क्या (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। विष्णो = हे विष्णु, हे सर्वव्यापी (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। परिचक्षि = व्यापक वाणियाँ (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। भूत् = हो (भू = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ववक्षे = वक्ष करना चाहता है, पालन करना चाहता है (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। शिपिविष्टो = शिपि-विष्ट वाले, शिपि के विस्तार वाले (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। अस्मि = हूँ (सर्वनाम)। मा = नहीं, मत (अव्यय)। वर्षो = विविध रूपधारी (वर्ष - विविध रूप धारण करना)। अस्मत् = हमसे (सर्वनाम)। अप = दूर, नीचे, अपकार, गूहः = आच्छादित (गूह - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। एतत् = यह (सर्वनाम)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अन्यरूपः = अन्य रूप वाले (अन्य - सर्वनाम, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। समिथे = सम्यक् प्रकाशित में (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। बभूथ = हो गये (भू = होना, प्राप्त होना) ॥ 6 ॥

508. वषट् ते विष्णो आसः आ कृणोमि, तत् मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम्।

वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे, यूयम् पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ 7 ॥ 7-100-7

मन्त्रार्थ :- वषट् = वषट्, इच्छा, वसना ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए विष्णो = व्यापक, विष्णु ने आसः = बैठने का साधन, स्थान आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम कृणोमि = करता हूँ तत् = वह, उस को मे = मेरा, मेरे लिए जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो शिपिविष्ट = हे शिपि-विष्ट वाले, शिपि के विस्तार वाले हव्यम् = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को वर्धन्तु = बढ़ाओ, बढ़ो त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा सुष्टुतयो = सुन्दर स्तुति गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन मे = मेरा, मेरे लिए यूयम् = तुम दोनों पात = पालन करो स्वस्तिभिः = स्वस्तियों द्वारा सदा = सदा, सर्व काल में। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 7 ॥

पदार्थ :- वषट् = वषट्, इच्छा, वसना (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। विष्णो = व्यापक, विष्णु ने (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना, वी = जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना। सम - घेरना, घेर लेना, लपेटना)। आसः = बैठने का साधन,

स्थान (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **कृणोमि** = करता हूँ (कृ = करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **जुषस्व** = सेवा करो, सन्तुष्ट करो (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **शिपिविष्ट** = हे शिपि-विष्ट वाले, शिपि के विस्तार वाले (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **वर्धन्तु** = बढ़ाओ, बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुष्टुतयो** = सुन्दर स्तुति (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **यूयम्** = तुम दोनों (सर्वनाम)। **पात** = पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **स्वस्तिभिः** = स्वस्तिथों द्वारा (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 7 ॥

इति सप्तम मण्डल

अष्टम मण्डल

अनुवाक:- 57

(167) सूक्त 1

509. मा चित् अन्यत् वि शंसत, सखायो मा रिषण्यत।

इन्द्रम् इत् स्तोता वृषणम्, सचा सुते मुहुः उक्था च शंसत ॥ 1 ॥ 8-1-1

मन्त्रार्थ - मा = नहीं, मत, मुझे चित् = भी, ही। अन्यत् = अन्य, कोई और, इतर वि = विशेष, विना, विलोम शंसत = स्तुति करो सखायो = मित्र मा = नहीं, मत, मुझे रिषण्यत = हिंसक इन्द्रम् = इन्द्र को इत् = ही स्तोता = स्तुतिकर्ता वृषणम् = पराक्रमी को सचा = समझदार, जानकार, सहगामी सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में मुहुः = प्रायः, बार-बार उक्था = उक्ति, कथन च = और शंसत = स्तुति करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। चित् = भी, ही (अव्यय)। अन्यत् = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। शंसत = स्तुति करो (शंस = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। सखायो = मित्र (सख् = मित्र होना)। मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। रिषण्यत = हिंसक (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इत् = ही (अव्यय)। स्तोता = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। सचा = समझदार, जानकार, सहगामी (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। मुहुः = प्रायः, बार-बार (अव्यय)। उक्था = उक्ति, कथन (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। च = और। शंसत = स्तुति करो (शंस = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ 1 ॥

510. अवक्रक्षिणम् वृषभम् यथा, अजुरम् गाम् न चर्षणीसहम्।

विद्वेषणम् संवनना उभयङ्करम्, मंहिष्ठम् उभयाविनम् ॥ 2 ॥ 8-1-2

मन्त्रार्थ :- अवक्रक्षिणम् = अवक्रक्षी को, खींचने वाले को वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार अजुरम् = गति, कम्पन को गाम् = गान, गाय, गायक, गाने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक चर्षणीसहम् = आनन्द, चेतना, विचार को सहन करने वाला, आनन्द, चेतना, विचार में समर्थ विद्वेषणम् = विद्वेषी को संवनना = सम्यक् सेवक उभयङ्करम् = उभयङ्कर को, दो के कर्ता को मंहिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को उभयाविनम् = उभयाविन को, दोनों के रक्षक को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अवक्रक्षिणम् = अवक्रक्षी को, खींचने वाले को (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, क्रक्ष - कृष - कृषिकर्म करना, जोतना, हल चलाना, रेखा करना)। वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। अजुरम् = गति, कम्पन को (अ = नहीं, अज- जाना, गति करना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना, जु - गति करना, जाना, भागना, दौड़ना)। गाम् = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। चर्षणीसहम् = आनन्द, चेतना, विचार को सहन करने वाला, आनन्द, चेतना, विचार में समर्थ (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना, सह - सहना, समर्थ होना, तृप्त होना,

सन्तुष्ट होना)। **विद्वेषणम्** = विद्वेषी को (वि - विशेष, द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **संवनना** = सम्यक् सेवक (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **उभयङ्करम्** = उभयङ्कर को, दो के कर्ता को (उभय - दोनों, कृ = करना)। **महिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **उभयाविनम्** = उभयाविन को, दोनों के रक्षक को (उभय - दोनों, अवि = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना) ॥ 2 ॥

511. महे च न त्वा अद्रिवः, परा शुल्काय देयाम्।

न सहस्राय न अयुताय, वज्रिवो न शताय शतामघ ॥ 5 ॥

8-1-5

मन्त्रार्थ - **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् **च** = और **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत **शुल्काय** = शुल्क के लिए **देयाम्** = देय को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सहस्राय** = हजार के लिए **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **अयुताय** = अयुत के लिए **वज्रिवो** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **शताय** = सौ के लिए **शतामघ** = अतिधनवान्, ऐश्वर्यवान् ॥ 5 ॥

पदार्थ - **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद्रु - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **शुल्काय** = शुल्क के लिए (शुल्क - कर लगाना, उत्पत्ति कर देना, उत्पन्न करना, पैदा करना, कहना, प्रीति करना, मिलाना, छोड़ देना, मुक्त कर देना)। **देयाम्** = देय को (दा, दद् = देना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सहस्राय** = हजार के लिए (संख्या)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अयुताय** = अयुत के लिए (अ = नहीं, युत् - बोलना, शब्द करना, चमकना, प्रकाश करना)। **वज्रिवो** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज्र - गति करना, जाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शताय** = सौ के लिए (सर्वनाम)। **शतामघ** = अतिधनवान्, ऐश्वर्यवान् (शता = सौ, मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 5 ॥

512. वस्यान् इन्द्र असि मे, पितुः उत भ्रातुः अभुञ्जतः।

माता च मे छदयथः समा, वसो वसुत्वनाय राधसे ॥ 6 ॥ 8-1-6

मन्त्रार्थ - **वस्यान्** = वस्य, वसने को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **असि** = हो **मे** = मेरा, मेरे लिए **पितुः** = पितु, गति, ज्ञान, पिता **उत** = ही, भी, ओर **भ्रातुः** = भ्राता **अभुञ्जतः** = रक्षा न करने वाले **माता** = माता **च** = और **मे** = मेरा, मेरे लिए **छदयथः** = आच्छादन, आवरण, बल **समा** = सम विभाग, सम्वत्सर, शरद्, वर्ष **वसो** = वसु **वसुत्वनाय** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने के लिए **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो ॥ 6 ॥

पदार्थ - **वस्यान्** = वस्य, वसने को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **पितुः** = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **भ्रातुः** = भ्राता (भृ = भरण करना)। **अभुञ्जतः** = रक्षा न करने वाले (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भुज-संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। **माता** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **च** = और। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **छदयथः** = आच्छादन, आवरण, बल (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना)। **समा**

= सम विभाग, सम्बत्सर, शरद्, वर्ष, (सम - सब, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वसुत्वनाय** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने के लिए (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)॥ 6 ॥

513. क्व इयथ क्व इत् असि, पुरुत्रा चित् हि ते मनः।

अलर्षि युध्म खजकृत्, पुरन्दर प्र गायत्राः अगासिषुः ॥ 7 ॥

8-1-7

मन्त्रार्थ - क्व = कहाँ **इयथ** = पायें **क्व** = कहाँ **इत्** = ही **असि** = हो **पुरुत्रा** = अग्रगामी, अग्रणी **चित्** = भी, ही **हि** = ही, निश्चय **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मनः** = मन **अलर्षि** = विद्या-सामर्थ्य वाला **युध्म** = युद्ध, बंधन के योग्य **खजकृत्** = मन्थन करते हैं **पुरन्दर** = अग्रगामी, अग्रणी का आदर करने वाला **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत्राः** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले **अगासिषुः** = स्तुति, गाना, गायन करते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - **क्व** = कहाँ (सर्वनाम)। **इयथ** = पायें (इ = जाना, जानना, पाना)। **क्व** = कहाँ (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **असि** = हो (अस् - होना)। **पुरुत्रा** = अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **चित्** = भी, ही। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मनः** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अलर्षि** = विद्या-सामर्थ्य वाला, (अल् = समापन होना, पर्याप्त होना, शब्द करना, ध्वनि करना, सहन करना, समर्थ होना, भूषित करना, निवारण करना)। **युध्म** = युद्ध, बंधन के योग्य (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना)। **खजकृत्** = मन्थन करते हैं (खज - मथना, हिलाना, मन्थन करना कृ - करना)। **पुरन्दर** = अग्रगामी, अग्रणी का आदर करने वाला (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, दृ = आदर करना, सम्मान करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत्राः** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **अगासिषुः** = स्तुति, गाना, गायन करते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) ॥ 7 ॥

514. आ तु अद्य सर्वदुघाम्, हुवे गायत्रवेपसम्।

इन्द्रम् धेनुम् सुदुघाम् अन्याम्, इषम् उरुधाराम् अरडकृतम् ॥ 10 ॥

8-1-10

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **अद्य** = आज **सर्वदुघाम्** = सब के लिए दोहन करने वाले **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **गायत्रवेपसम्** = गायत्र, गान, स्तुति करने वाले **इन्द्रम्** = इन्द्र को **धेनुम्** = धेनु को, प्रिय को, पालन करने वाले को **सुदुघाम्** = उत्तम दोहन वाले को **अन्याम्** = अन्य, कोई और, इतर **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **उरुधाराम्** = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति को **अरडकृतम्** = गति करने वाले को ॥ 10 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **सर्वदुघाम्** = सब के लिए दोहन करने वाले (सर्व = सब (सर्वनाम) दुह - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **गायत्रवेपसम्** = गायत्र, गान, स्तुति करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना वेप् = काँपना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **धेनुम्** = धेनु को, प्रिय को, पालन करने वाले को (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि

होना, धे - पालना, पीना)। **सुदुघाम्** = उत्तम दोहन वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, दुह - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। **अन्याम्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **इष्म्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **उरुधाराम्** = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति को (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **अरडकृतम्** = गति करना (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, कृ = करना) ॥ 10 ॥

515. यः ऋते चित् अभिश्रिषः, पुरा जत्रुभ्यः आतृदः ।

सन्धाता सन्धिम् मघवा, पुरुवसुः इष्कर्ता विहृतम् पुनः ॥ 12 ॥ 8-1-12

मन्त्रार्थ - यः = जो ऋते = विना चित् = भी, ही **अभिश्रिषः** = अभिश्रिष, सेवा करना, आश्रय होना, समृद्धि होना **पुरा** = पहले **जत्रुभ्यः** = जत्रु, उत्पन्न के लिए **आतृदः** = चिरन्तन, नित्य, सतत गतिशीलता, भोजन-पोषण द्वारा **सन्धाता** = सन्धियों का **सन्धिम्** = सन्धियों को **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **पुरुवसुः** = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक **इष्कर्ता** = विद्या, ज्ञान, इच्छा करने वाला **विहृतम्** = विशेष लेना, ग्रहण करना, लज्जित होना **पुनः** = फिर ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। **ऋते** = विना (अव्यय)। **चित्** = भी, ही। **अभिश्रिषः** = अभिश्रिष, सेवा करना, आश्रय होना, समृद्धि होना (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, श्री - सेवा करना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **जत्रुभ्यः** = जत्रु, उत्पन्न के लिए (जन = उत्पन्न होना, पैदा होना, उत्पन्न करना, पैदा करना)। **आतृदः** = चिरन्तन, नित्य, सतत गतिशीलता, भोजन-पोषण द्वारा (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अत् - निरन्तर गति करना, खाना, आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना)। **सन्धाता** = सन्धियों का (सम्-धि, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, धि - धारण करना)। **सन्धिम्** = सन्धियों को (सम्-धि, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, धि - धारण करना)। **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **पुरुवसुः** = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, र्व - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। **इष्कर्ता** = विद्या, ज्ञान, इच्छा करने वाला (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **विहृतम्** = विशेष लेना, ग्रहण करना, लज्जित होना (वि = विशेष, विना, विलोम उपसर्ग, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना, ह्री = लज्जा करना, लज्जित होना)। **पुनः** = फिर (अव्यय) ॥ 2 ॥

516. अध ज्मो अध वा दिवो, बृहतो रोचनात् अधि ।

अया वर्धस्व तन्वा गिरा मम, आ जाता सुक्रतो पृण ॥ 18 ॥

8-1-18

मन्त्रार्थ - अध = अथ, अब, इसके अनन्तर **ज्मो** = गति, जाना **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर **वा** = अथवा **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **रोचनात्** = प्रकाश **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **अया** = लाये, जाना, पाना **वर्धस्व** = बोलो, बढ़ो **तन्वा** = विस्तार, वृद्धि **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ **मम** = मेरा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **जाता** = उत्पन्न हुए **सुक्रतो** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता **पृण** = पूर्ण करो ॥ 18 ॥

पदार्थ - अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **ज्मो** = गति, जाना (जम् = खाना, निगलना, गति, जाना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **रोचनात्** = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **अया**

= लाये, जाना, पाना (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना, या = जाना, जानना, पाना)। **वर्धस्व** = बोलो, बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **तन्वा** = विस्तार, वृद्धि (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **मम** = मेरा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **जाता** = उत्पन्न हुए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सुकृतो** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)। **पूण** = पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना) ॥ 18 ॥

517. मा त्वा सोमस्य गल्दया, सदा याचन् अहम् गिरा।

भूर्णिम् मृगम् न सवनेषु, चुक्रुधम् कः ईशानम् न याचिषत् ॥ 20 ॥ 8-1-20

मन्त्रार्थ - मा = नहीं, मत, मुझे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सोमस्य** = सोम का **गल्दया** = उपभोग, भक्षण करना **सदा** = सदा, सर्व काल में **याचन्** = याचना करता हुआ **अहम्** = मैं **गिरा** = ज्या, वृद्ध, जयी **भूर्णिम्** = धारण-पोषण करने वाले **मृगम्** = मृग, अन्वेषी को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सवनेषु** = उत्पन्न करने, ऐश्वर्य का **चुक्रुधम्** = क्रोध किया **कः** = कौन **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **याचिषत्** = याचना करते हैं ॥ 20 ॥

पदार्थ - मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सोमस्य** = सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **गल्दया** = उपभोग, भक्षण करना (गल - निगलना, खाना, भक्षण करना)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **याचन्** = याचना करता हुआ (याच - याचना करना, मांगना, देने की चाहना करना)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **गिरा** = ज्या, वृद्ध, जयी (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **भूर्णिम्** = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना)। **मृगम्** = मृग, अन्वेषी को (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सवनेषु** = उत्पन्न करने, ऐश्वर्य का (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **चुक्रुधम्** = क्रोध किया (क्रुध - क्रोध करना, गुस्सा करना)। **कः** = कौन (सर्वनाम)। **ईशानम्** = अधिकार करने वाले को, शासन करने वाले को (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **याचिषत्** = याचना करते हैं (याच - याचना करना, मांगना, देने की चाहना करना) ॥ 20 ॥

518. आ त्वा सहस्रम् आ शतम्, युक्ता रथे हिरण्यये।

ब्रह्मयुजो हरयः इन्द्र, केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥ 24 ॥ 8-1-24

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सहस्रम्** = हजार को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **शतम्** = सौ **युक्ता** = युक्त, मिश्रित **रथे** = रथ में **हिरण्यये** = हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए **ब्रह्मयुजो** = ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त, विराट युक्त, बृहत् युक्त **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **केशिनो** = केशी द्वारा **वहन्तु** = वहन करें **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए ॥ 24 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सहस्रम्** = हजार को (संख्या)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **युक्ता** = युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **रथे** = रथ में (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **हिरण्यये** = हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **ब्रह्मयुजो** = ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त,

विराट युक्त, बृहत् युक्त (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **केशिनो** = केशी द्वारा (किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **वहन्तु** = वहन करें (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 24 ॥

519. आ त्वा रथे हिरण्यये, हरी मयूरशेष्या ।

शितिपृष्ठा वहताम् मध्वो, अन्धसो विवक्षणस्य पीतये ॥ 25 ॥ 8-1-25

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **रथे** = रथ में **हिरण्यये** = हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए **हरी** = हरि **मयूरशेष्या** = ज्ञान से क्षरण योग्य **शितिपृष्ठा** = शिति-पृष्ठ **वहताम्** = वहन करें **मध्वो** = मधुरता का **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से **विवक्षणस्य** = विशेष वक्षण का **पीतये** = पान के लिए ॥ 25 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रथे** = रथ में (रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **हिरण्यये** = हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **हरी** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **मयूरशेष्या** = ज्ञान से क्षरण योग्य (मय् - जाना, जानना, पाना, शिप = क्षरण होना, काटने योग्य होना)। **शितिपृष्ठा** = शिति-पृष्ठ (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, शिजि = अस्पष्ट ध्वनि करना (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **वहताम्** = वहन करें (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **मध्वो** = मधुरता का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **विवक्षणस्य** = विशेष वक्षण का (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना, वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 25 ॥

520. पिब तु अस्य गर्विणः, सुतस्य पूर्वपा इव ।

परिष्कृतस्य रसिनः इयम्, आसुतिः चारुः मदाय पत्यते ॥ 26 ॥ 8-1-26

मन्त्रार्थ :- **पिब** = पियो, पान करें **तु** = तो, परन्तु, अब **अस्य** = इसका **गर्विणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन **सुतस्य** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का **पूर्वपा** = पूर्व-पा, पूर्व पान वाले, पूर्व-रक्षक **इव** = समान, की भाँति, के समान **परिष्कृतस्य** = परिष्कृत, परिष्कार किये हुए का **रसिनः** = रस का **इयम्** = यह, इसको **आसुतिः** = आसुत, आसव किया हुआ, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला **चारुः** = चारु **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **पत्यते** = ऐश्वर्यवान् होता है ॥ 26 ॥

पदार्थ :- **पिब** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **तु** = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **गर्विणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **सुतस्य** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पूर्वपा** = पूर्व-पा, पूर्व पान वाले, पूर्व-रक्षक (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना, पा - रक्षा करना, पा-

पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **परिष्कृतस्य** = परिष्कृत, परिष्कार किये हुए का (परि: - सब ओर, कृ - करना)। **रसिनः** = रस का (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **इयम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **आसुतिः** = आसुत, आसव किया हुआ, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **चारुः** = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **पत्यते** = ऐश्वर्यवान् होता है (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 26 ॥

(168) सूक्त 2

521. इदम् वसो सुतम् अन्धः, पिबा सुपूर्णम् उदरम्।

अन् आभयिन् ररिमा ते ॥ 1 ॥

8-2-1

मन्त्रार्थ :- **इदम्** = यह, इसको **वसो** = वसु **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **अन्धः** = आँख मूँदे हुए **पिबा** = पियो, पान करें **सुपूर्णम्** = सुपूर्ण को, अच्छी तरह पूर्ण को **उदरम्** = उदर को, आद्र करने वाले को, आद्रता को देने वाले को **अन्** = नहीं **आभयिन्** = भयभीत होने वाले **ररिमा** = देते हैं **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **अन्धः** = आँख मूँदे हुए (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सुपूर्णम्** = सुपूर्ण को, अच्छी तरह पूर्ण को (सु - सुन्दर, अच्छा, पृ - पूर्ण करना, भरना)। **उदरम्** = उदर को, आद्र करने वाले को, आद्रता को देने वाले को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **अन्** = नहीं (उपसर्ग)। **आभयिन्** = भयभीत होने वाले (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भी - भय होना, डर होना, डराना)। **ररिमा** = देते हैं (रा = देना, लेना, ग्रहण करना, मिल जाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

522. तम् ते यवम् यथा गोभिः, स्वादुम् अकर्म श्रीणन्तः।

इन्द्र त्वा अस्मिन् सधमादे ॥ 3 ॥ 8-2-3

मन्त्रार्थ :- **तम्** = उसको, उसे **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **यवम्** = यव को **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **स्वादुम्** = स्वाद को **अकर्म** = कर्म रहित, कर्म न होना, कर्म न करना, अकरणीय, न करने योग्य **श्रीणन्तः** = सेवा करते हुए **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **अस्मिन्** = इस, इसमें **सधमादे** = साथ आनन्द करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **यवम्** = यव को (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **स्वादुम्** = स्वाद को (स्वद्-स्वाद - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **अकर्म** = कर्म रहित, कर्म न होना, कर्म न करना, अकरणीय, न करने योग्य (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। **श्रीणन्तः** = सेवा करते हुए (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **सधमादे** = साथ आनन्द करते हैं (सध = साथ (अव्यय), मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 3 ॥

523. इमे ते इन्द्र सोमाः, तीव्राः अस्मे, सुतासः शुक्राः आशिरम् याचन्ते ॥ 8-2-10

मन्त्रार्थ - इमे = यह, इस, ये ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सोमाः = ऐश्वर्यमय तीव्राः अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए सुतासः = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए शुक्राः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को याचन्ते = याचना करता हुआ ॥ 10 ॥

पदार्थ - इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोमाः = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। तीव्राः = तीव्र, स्थूल (तीव्र = मोटा, स्थूल होना)। अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम) सुतासो = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। शुक्राः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। याचन्ते = याचना करता हुआ (याच - याचना करना, मांगना, देने की चाहना करना) ॥ 10 ॥

524. रेवान् इत् रेवतः स्तोता, स्यात् त्वावतो मघोनः ।

प्र इत् उ हरिवः सुतस्य ॥ 13 ॥ 8-2-13-

मन्त्रार्थ :- रेवान् = विद्वान् इत् = ही रेवतः = प्रवाह, वाणी, शब्द स्तोता = स्तुतिकर्ता स्यात् = हों (अस् = होना)। त्वावतो = तुम्हारे समान मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक इत् = ही उ = निश्चय ही, भी हरिवः = हरि गण, हरण करने वाले सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का ॥ 13 ॥

पदार्थ :- रेवान् = विद्वान् (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना, रै = शब्द करना)। इत् = ही (अव्यय)। रेवतः = प्रवाह, वाणी, शब्द (रिव् = उड़ना, तैरना, बहना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। स्तोता = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। स्यात् = हों (अस् = होना)। त्वावतो = तुम्हारे समान (त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा, वतः - समान)। मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। इत् = ही (अव्यय)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। हरिवः = हरि गण, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 1 ॥

525. उक्थम् च न शस्यमानम्, अगोः अरिः आ चिकेत ।

न गायत्रम् गीयमानम् ॥ 14 ॥

8-2-14

मन्त्रार्थ - उक्थम् = उक्ति, कथन को च = और न = नहीं, समान, उपमार्थक शस्यमानम् = स्तुति, इच्छा करते हुए न = नहीं, समान, उपमार्थक अगोः = गये अरिः = हिंसक, गतिशील, व्यापक आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण चिकेत = विद्वान्, जानता हूँ न = नहीं, समान, उपमार्थक गायत्रम् = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को गीयमानम् = स्तुति करते हुए, गतिमान, गायन करते हुये ॥ 14 ॥

पदार्थ - उक्थम् = उक्ति, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। च = और। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। शस्यमानम् = स्तुति, इच्छा करते हुए (शंस - चाहना, इच्छा करना, स्तुति, प्रशंसा करने वाला, शस् - काटना, हिंसा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। अगोः = गये (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना,

कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **अरिः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (ऋ- अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **चिकेत** = विद्वान्, जानता हूँ (चिकित् - जानना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **गायत्रम्** = गायत्र, गाने वाले, स्तुति करने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **गीयमानम्** = स्तुति करते हुए, गतिमान, गायन करते हुये (गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना) ॥

526. मा नः इन्द्र पीयत्नवे, मा शर्धते परा दाः ।

शिक्ष आ शचीवः शचीभिः ॥ 15 ॥ 8-2-15

मन्त्रार्थ :- **मा** = नहीं, मत **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **पीयत्नवे** = प्राशन के लिए, पान करने के लिए **मा** = नहीं, मत **शर्धते** = शर्द्ध करता है, जीतता है, सहन करता है **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत **दाः** = दानी, दो **शिक्ष** = शिक्षा दो **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **शचीवः** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले **शचीभिः** = उत्तम वाणी द्वारा ॥ 15 ॥

पदार्थ :- **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **पीयत्नवे** = प्राशन के लिए, पान करने के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **शर्धते** = शर्द्ध करता है, जीतता है, सहन करता है (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **दाः** = दानी, दो (दा, दद् = देना)। **शिक्ष** = शिक्षा दो (शिक्ष - शिक्षा देना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **शचीवः** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले (शच- स्पष्ट बोलना)। **शचीभिः** = उत्तम वाणी द्वारा (शच- स्पष्ट बोलना) ॥ 15 ॥

527. वयम् उ त्वा तदित् अर्थाः, इन्द्र त्वा अयन्तः सखायः ।

कण्वाः उक्थेभिः जरन्ते ॥ 16 ॥ 8-2-16

मन्त्रार्थ :- **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **उ** = निश्चय ही, भी **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **तदित्** = वही **अर्थाः** = अर्थ, प्रयोजन **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **अयन्तः** = गति, ज्ञान, प्राप्ति **सखायः** = मित्र **कण्वाः** = कण्व **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा **जरन्ते** = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व करते हैं ॥ 16 ॥

पदार्थ :- **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **तदित्** = वही (अव्यय)। **अर्थाः** = अर्थ, प्रयोजन (अर्थ - मांगना, याचना करना, चाहना, प्रयोजन-तात्पर्य होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **अयन्तः** = गति, ज्ञान, प्राप्ति (अ - नहीं, यन् - उद्धार करना, प्रेरणा करना, अय् = जाना, जानना, पाना)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **कण्वाः** = कण्व (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **उक्थेभिः** = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **जरन्ते** = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व करते हैं (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना) ॥ 16 ॥

528. न घ ईम् अन्यत् आ पपन, वज्रिन् अपसो नविष्टौ ।

तव इत् उ स्तोमम् चिकेत ॥ 17 ॥ 8-2-17

मन्त्रार्थ :- **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **घ** = ही (अव्यय)। **ईम्** = समान, इस प्रकार **अन्यत्** = अन्य, कोई और, इतर **आ पपन** = प्राप्त किया, पालन किया **वज्रिन्** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त **अपसो** = पालनकर्ता **नविष्टौ** = स्तुति, नवीन **तव** = तुम्हारा **इत्** = ही **उ** = निश्चय ही, भी **स्तोमम्** = स्तुतियों को **चिकेत** = विद्वान्, जानता हूँ ॥ 17 ॥

पदार्थ :- **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **घ** = ही (अव्यय)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **अन्यत्** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **आपपन** = प्राप्त किया, पालन किया (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **वज्रिन्** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **अपसो** = पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **नविष्टौ** = स्तुति, नवीन (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)।

तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। स्तोमम् = स्तुतियों को (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। चिकेत = विद्वान्, जानता हूँ (चिकित् - जानना) ॥ 17 ॥

529. इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तम्, न स्वप्नाय स्पृहयन्ति ।

यन्ति प्रमादम् अतन्द्राः ॥ 18 ॥ 8-2-18

मन्त्रार्थ :- इच्छन्ति = चाहते हैं देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने सुन्वन्तम् = उत्पन्न करने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक स्वप्नाय = स्वप्न, सुपालक, सुरक्षक के लिए स्पृहयन्ति = चाहते हैं, इच्छा करते हैं यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं प्रमादम् = आनन्द को, प्रसन्नता को, हर्ष को अतन्द्राः = अतन्द्रा, तन्द्रा रहित ॥

पदार्थ :- इच्छन्ति = चाहते हैं (इच्छ - इच्छा करना, चाहना)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सुन्वन्तम् = उत्पन्न करने वाले को (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। स्वप्नाय = स्वप्न, सुपालक, सुरक्षक के लिए (सु - अच्छा, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना, स्वप - सोना, निद्रा लेना)। स्पृहयन्ति = चाहते हैं, इच्छा करते हैं (स्पृह - इच्छा करना, चाहना)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। प्रमादम् = आनन्द को, प्रसन्नता को, हर्ष को (मदी-माद् - हर्ष होना, प्र - प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग))। अतन्द्राः = अतन्द्रा, तन्द्रा रहित (अतम्+द्रा, तन्द - आलस्य होना, तन्द्रा होना, अत - चलना, निरन्तर चलना, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना, द्रा - भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना) ॥ 18 ॥

230. पन्यम् पन्यम् इत् सोतारः, आ धावत मद्याय ।

सोमम् वीराय शूराय ॥ 9 ॥ 8-2-25

मन्त्रार्थ - पन्यम् = प्रशंसा को, स्तुति को पन्यम् = प्रशंसा को, स्तुति को इत् = ही सोतारः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण धावत = दौड़ते हुए मद्याय = आनन्दित करने के लिए सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को वीराय = वीर के लिए शूराय = वीर, पराक्रमी के लिए ॥ 9 ॥

पदार्थ - पन्यम् = प्रशंसा को, स्तुति को (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। पन्यम् = प्रशंसा को, स्तुति को (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। इत् = ही (अव्यय)। सोतारः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। धावत = दौड़ते हुए (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। मद्याय = आनन्दित करने के लिए (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। वीराय = वीर के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। शूराय = वीर, पराक्रमी के लिए (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना) ॥ 9 ॥

531. पाता वृत्रहा सुतम् आ, घ आ गमत् न आरे अस्मत् ।

नि यमते शतम् ऊतिः ॥ 26 ॥

8-2-26

मन्त्रार्थ :- पाता = पालन करने वाला वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम घ = ही, भी आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम गमत् = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया न = नहीं, समान, उपमार्थक आरे = दूर अस्मत् = हमसे नि = निश्चित, निरन्तर यमते = यमन करता है शतम् = सौ ऊतिः = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला ॥ 26 ॥

पदार्थ :- पाता = पालन करने वाला (पा = रक्षा करना, पालन करना)। वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना,

बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **घ** = ही, भी (अव्यय, निपात)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया (गम् = जाना, जानना, पाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **आरे** = दूर (अव्यय)। **अस्मत्** = हमसे (सर्वनाम)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **यमते** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **ऊतिः** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 26 ॥

532. आ इह हरी ब्रह्मयुजा, शग्मा वक्षतः सखायम्।

गीर्भिः श्रुतम् गिर्वणसम् ॥ 27 ॥ 8-2-27

मन्त्रार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इह** = इसमें, यहां, यह **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले **ब्रह्मयुजा** = ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त, विराट युक्त, बृहत् युक्त **शग्मा** = शक्ति-सामर्थ्य **वक्षतः** = वक्ष, पालन करो **सखायम्** = मित्र को **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को **गिर्वणसम्** = वाणी, बोध, सिञ्चन के समान ॥ 27 ॥

पदार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **ब्रह्मयुजा** = ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त, विराट युक्त, बृहत् युक्त (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **शग्मा** = शक्ति-सामर्थ्य (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **वक्षतः** = वक्ष, पालन करो (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **सखायम्** = मित्र को (सख् = मित्र होना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **गिर्वणसम्** = वाणी, बोध, सिञ्चन के समान (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना) ॥ 27 ॥

(169) सूक्त 3

533. पिबा सुतस्य रसिनो, मत्स्वः आ नः इन्द्र गोमतः।

आपिः नो बोधि सधमाद्ये, वृधे अस्मान् अवन्तु ते धियः ॥ 1 ॥

8-3-1

मन्त्रार्थ - **पिबा** = पियो, पान करें **सुतस्य** = सुत का **रसिनो** = रस का **मत्स्वः** = हर्षित हो, तृप्त हो **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले **आपिः** = प्राप्त किया, पालन किया **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **बोधि** = जानता है **सधमाद्ये** = साथ आनन्द करते हैं **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में **अस्मान्** = हमें, हमको **अवन्तु** = प्रकाशित करें, रक्षा करें **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि ॥ 1 ॥

पदार्थ - **पिबा** = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सुतस्य** = सुत का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **रसिनो** = रस का (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **मत्स्वः** = हर्षित हो, तृप्त हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना,

अस्पष्ट बोलना)। **आपि:** = प्राप्त किया, पालन किया (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **बोधि** = जानता है (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **सधमाद्ये** = साथ आनन्द करते हैं (सध = साथ (अव्यय), मद्- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **अवन्तु** = प्रकाशित करें, रक्षा करें (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 1 ॥

534. भूयाम ते सुमतौ वाजिनो, वयम् मा नः स्तः अभिमातये।

अस्माम् चित्राभिः अवतात् अभिष्टिभिः, आ नः सुम्नेषु यामय ॥ 2 ॥ 8-3-2

मन्त्रार्थ :- **भूयाम** = हों **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **सुमतौ** = सुमति में, सुबुद्धि में **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **मा** = नहीं, मत **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **स्तः** = नष्ट करो **अभिमातये** = अभिमान के लिए, विशेष मापन के लिए **अस्मान्** = हमें, हमको **चित्राभिः** = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप द्वारा **अवतात्** = रक्षा करो **अभिष्टिभिः** = सर्वथा इष्ट, अभीष्ट द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **सुम्नेषु** = उत्तम चिन्तनों, ऐश्वर्यों, सृजनों में **यामय** = पोषण, नियमन करो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **भूयाम** = हों (भू = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुमतौ** = सुमति में, सुबुद्धि में (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **स्तः** = नष्ट करो (स्तृ - फैलाना, वस्त्रादि से आच्छादित करना, ढकना, हिंसा करना)। **अभिमातये** = अभिमान के लिए, विशेष मापन के लिए (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, मा = मान करना, मापना)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **चित्राभिः** = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप द्वारा (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **अवतात्** = रक्षा करो (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अभिष्टिभिः** = सर्वथा इष्ट, अभीष्ट द्वारा (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इष् = इच्छा करना, चाहना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सुम्नेषु** = उत्तम चिन्तनों, ऐश्वर्यों, सृजनों में (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। **यामय** = पोषण, नियमन करो (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना) ॥ 2 ॥

535. इमाः उ त्वा पुरुवसो, गिरो वर्धन्तु याः मम।

पावकवर्णाः शुचयो, विपश्चितो अभि स्तोमैः अनूषत ॥ 3 ॥ 8-3-3

मन्त्रार्थ - **पुरुवसो** हे अग्र-वसन वाले, **इमाः** ये उ ही त्वा तुम्हारे लिए **या** जो **मम** मेरा **गिरो** वाणी वर्द्धन्तु बढ़े। **पावक-वर्णाः** पवित्रता का वरण करने वाले **शुचयो** पवित्र **विपश्चितो** विशेष दृष्टियुक्त **अभि** = सब ओर। **स्तोमैः** स्तुतियों से **अनूषत** प्राणवान् किया ॥ 3 ॥

भावार्थ - हमारी वाणी परमात्मा को समर्पित हो तो शुद्ध पवित्र रहेगी और उसका प्रभाव भी बढ़ेगा। पवित्र दृष्टि वाले स्तुतियों से हमें प्राणवान् करते हैं।

पदार्थ- पुरुवसो = हे अग्र-वसन वाले (पुर् - अभिगमन करना, आगे जाना, वस् - वसना, वास करना)। इमाः = ये। उ = ही। त्वा = तुम्हारे लिए। या = जो। मम = मेरा। गिरो = वाणी (गृ - शब्द करना)। वर्द्धन्तु = बढ़े (वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। पावक-वर्णाः = पवित्रता का वरण करने वाले (पू - पवित्र करना, पवित्र होना, वर्ण - वर्णन करना, विस्तृत करना, प्रशंसा करना, प्रकाशित होना, वृ - वरण करना)। शुचयो = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। विपश्चितो = विशेष दृष्टियुक्त (वि - विशेष, पश् - देखना)। अभि = सब ओर। स्तोमैः = स्तुतियों से (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। अनूषत = प्राणवान् किया (प्राण होना, स्पन्दन होना, चेतन होना) ॥ 3 ॥

536. अयम् सहस्रम् ऋषिभिः सहस्कृतः, समुद्र इव पप्रथे।

सत्यः सो अस्य महिमा गृणे, शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥ 4 ॥

8-3-4

मन्त्रार्थ- अयम् यह सहस्रम् सहस्रशः (हजारों बार, बहुधा) ऋषिभिः ऋषियों द्वारा सहस्कृतः शक्तिशाली बनाया गया समुद्र इव समुद्र के समान पप्रथे विस्तृत हुआ। सो वह अस्य इसकी सत्यः सत्य महिमा महत्व यज्ञेषु यज्ञों में विप्रराज्ये विप्र-राज्य में शवो आगमन, ज्ञान गृणे जानते हैं ॥ 4 ॥

भावार्थ - ऋषियों ने बहुत प्रयास कर परमात्मा तथा उसकी वाणी वेद को विस्तार दिया तथा शक्तिशाली बनाया। शक्तिशाली बनाने से आशय समाज में प्रभावशाली बनाना, अन्यथा परमात्मा अथवा वेद को भी कोई अन्य शक्तिशाली बनाये, न इसकी आवश्यकता है और न ही यह सम्भव है। इतना अवश्य है कि परमात्मा के उपासकों तथा वेद के विद्वानों को व्यापक तथा शक्तिशाली बनाने के लिए ऋषियों का प्रयास करना स्वाभाविक है।

पदार्थ- अयम् यह सहस्रम् सहस्रशः (हजारों बार, बहुधा) ऋषिभिः ऋषियों द्वारा (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना) सहस्कृतः शक्तिशाली बनाया गया (सह - सहन करना, समर्थ होना) समुद्र समुद्र (सम् - सम्यक्, उदी-उन्द् - आद्र करना) इव समान पप्रथे विस्तृत हुआ (प्रथ् - विस्तार होना)। सो वह अस्य इसकी सत्यः सत्य (सत् - सत्य होना) महिमा महत्व (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) यज्ञेषु यज्ञों में (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) विप्रराज्ये विप्र-राज्य में (वि - विशेष, राज् - दीप्त होना, प्रकाशित होना, शोभित होना) शवो गमन, ज्ञान (जाना, जानना, पाना) गृणे जानते हैं (गृ - सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, शब्द करना) ॥ 4 ॥

537. इन्द्रम् इत् देवतातये, इन्द्रम् प्रयति अध्वरे।

इन्द्रम् समीके वनिनो, हवामहे इन्द्रम् धनस्य सातये ॥ 5 ॥

8-3-5

मन्त्रार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को इत् = ही देवतातये = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए इन्द्रम् = इन्द्र को प्रयति = प्रयत्न में अध्वरे = अहिंसक में इन्द्रम् = इन्द्र को समीके = सम्यक् रूप से इच्छा करना, चाहना के लिए वनिनो = वन हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं इन्द्रम् = इन्द्र को धनस्य = धन का सातये = सतत गतिशीलता के साथ ॥ 5 ॥

पदार्थ - इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इत् = ही (अव्यय)। देवतातये = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। प्रयति = प्रयत्न में (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यत् = यत्न करना, निश्चय करना, यन् - उद्धार करना, यम् - आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। समीके = सम्यक् रूप से इच्छा करना, चाहना के लिए (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, ई - जाना, फैलना, व्यापना, गर्भवती होना, इच्छा करना, चाहना, खाना, उड़ाना, फेंकना, भेजना, प्रेरणा करना)। वनिनो = वन (वन

- शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **धनस्य** = धन का (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **सातये** = सतत गतिशीलता के साथ (स - सहित, साथ, अत् = सतत गति करना) ॥ 5 ॥

538. इन्द्रो महना रोदसी पप्रथत्, शवः इन्द्रः सूर्यम् अरोचयत् ।

इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिरे, इन्द्रे सुवानासः इन्द्रवः ॥ 6 ॥

8-3-6

मन्त्रार्थ :- **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **महना** = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **पप्रथत्** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया **शवः** = शव, गति, ज्ञान **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को **अरोचयत्** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ **इन्द्रे** = इन्द्र में **ह** = ही, निश्चय ही **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **भुवनानि** = भुवन, वर्तमान **येमिरे** = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ **इन्द्रे** = इन्द्र में **सुवानासः** = शब्दकर्ता **इन्द्रवः** = इन्दुगण ॥ 6 ॥

पदार्थ :- **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **महना** = पूज्य, महिमावान्, महान् द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **पप्रथत्** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **शवः** = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अरोचयत्** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। **इन्द्रे** = इन्द्र में (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **भुवनानि** = भुवन, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **येमिरे** = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **इन्द्रे** = इन्द्र में (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सुवानासः** = शब्दकर्ता (स्वन - शब्द करना)। **इन्द्रवः** = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 6 ॥

539. अभि त्वा पूर्वपीतये, इन्द्र स्तोमेभिः आयवः ।

समीचीनास ऋभवः, सम् अस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥ 7 ॥

8-3-7

मन्त्रार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **पूर्वपीतये** = पूर्वपीत, पूर्व पान के लिए **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **स्तोमेभिः** = स्तुतिकर्ता द्वारा **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना **समीचीनास** = पूजक, विद्वान् **ऋभवः** = प्रगतिशील, विद्वान् **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए **रुद्रा** = रुद्रगण, करुणामय **गृणन्त** = वाणी, बोध, सिञ्चन करने वाले **पूर्व्यम्** = पहले, पूर्व ॥ 7 ॥

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **पूर्वपीतये** = पूर्वपीत, पूर्व पान के लिए (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तोमेभिः** = स्तुतिकर्ता द्वारा (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना। (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव -

समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **समीचीनास** = पूजक, विद्वान् (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, इज् - पूजना, जाना, जानना)। **ऋभवः** = प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - अर् - जाना, फैलाना, ऋ - जाना, चलना, जानना, पाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अस्वरन्** = स्वर किया, स्वर करते हुए (स्वृ-स्वर् = शब्द करना)। **रुद्रा** = रुद्रगण, करुणामय (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **गृणन्त** = वाणी, बोध, सिञ्चन करने वाले (गृ- गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा- गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **पूर्वम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना) ॥ 7 ॥

540. अस्य इत् इन्द्रो वावृधे, वृष्यम् शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।

अद्या तम् अस्य महिमानम्, आयवो अनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ॥ 8 ॥

8-3-8

मन्त्रार्थ :- इन्द्रो इन्द्र (ऐश्वर्यवान् परमात्मा) अस्य इसका इत् ही वृष्यम् सिञ्चन, शवो ज्ञान, सुतस्य सुत के मदे आनन्द में विष्णवि व्यापकता में वावृधे बढ़ाता है। अद्या आज तम् उसको अस्य इसकी महिमानम् महिमा को, आयवो आयुवान् अनु अनुकूल ष्टुवन्ति स्तुति करते हैं पूर्वथा पूर्व की भाँति ॥ 8 ॥

पदार्थ :- इन्द्रो = इन्द्र, ऐश्वर्यवान् (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। अस्य = इसका। इत् = ही। वृष्यम् = सिञ्चन (वृष् - बरसना, सींचना, पराक्रमी होना)। शवो = गति, ज्ञान (शव - जाना, जानना, पाना)। सुतस्य = सुत के (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। मदे = आनन्द में (मद् - मद होना, हर्ष होना, तृप्त होना, थकना)। विष्णवि = व्यापकता में (विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। वावृधे = बढ़ाता है (वृध् - वृद्धि होना, बढ़ना)। अद्या = आज। तम् = उसको। अस्य = इसकी। महिमानम् = महिमा को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। आयवो = आयुवान् (अय् - जाना, चलना, जानना, पाना, ऐ-आय् - शब्द करना, शासन करना)। अनु = पीछे, अनुकूल। ष्टुवन्ति = स्तुति करते हैं (स्तु - स्तुति करना)। पूर्वथा = पूर्व की भाँति ॥ 8 ॥

541. उत् उ त्ये मधुमत्तमा, गिरः स्तोमासः ईरते ।

सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो, वाजयन्तो रथा इव ॥ 15 ॥

8-3-15

मन्त्रार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च उ = निश्चय ही, भी। त्ये = वे। मधुमत्तमा = अत्यन्त मधुयुक्त गिर = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन स्तोमास = स्तुति में, प्रशंसा में ईरते = कम्पित करता है सत्राजितो = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना धनसा = धनसात में, धन के संभजन में अक्षितोतयो = अक्षित रक्षक, व्याप्त वाणी, अविनाशी रक्षक वाजयन्तो = गतिमान, बलवान् रथा = रथ इव = समान, की भाँति, के समान ॥ 15 ॥

पदार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी। त्ये = वे (सर्वनाम)। मधुमत्तमा = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। गिर = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। स्तोमास = स्तुति में, प्रशंसा में (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। ईरते = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। सत्राजितो = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। धनसा = धनसात में, धन के संभजन में (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना, स - सहित, साथ)। अक्षितोतयो = अक्षित रक्षक, व्याप्त वाणी, अविनाशी रक्षक (अक्षित+ऊतयो, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना, क्षि - क्षय होना, नष्ट होना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। वाजयन्तो = गतिमान, बलवान् (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। रथा = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना,

आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 15 ॥

542. कण्वाः इव भृगवः सूर्या, इव विश्वम् इत् धीतम् आनशु।

इन्द्रम् स्तोमेभिः महयन्तः आयवः, प्रियमेधासो अस्वरन् ॥ 16 ॥

8-3-16

मन्त्रार्थ :- कण्वाः = कण्व इव = समान, की भाँति, के समान भृगवः = पोषण करने वाले, भृगुगण सूर्या = सूर्य, उत्पन्न करने वाला इव = समान, की भाँति, के समान विश्वम् = सबको, विश्व को इत् = ही धीतम् = ज्ञानीजन, धारण करने वाले को आनशु = प्राणवान् होता है, स्तुति करता है, नष्ट होता है इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को स्तोमेभिः = प्रशंसाओं, स्तुतियों द्वारा महयन्तः = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ आयवः = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना प्रियमेधासो = प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना अस्वरन् = शब्द किया ॥ 16 ॥

पदार्थ :- कण्वाः = कण्व (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। भृगवः = पोषण करने वाले, भृगुगण (भृ - भरण-पोषण, धारण करना, भृज् - भूँजना, तलना, सँकना, भृग् = चमकना, तेज होना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना)। सूर्या = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। विश्वम् = सबको, विश्व को (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। धीतम् = ज्ञानीजन, धारण करने वाले को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। आनशुः = प्राणवान् होता है, स्तुति करता है, नष्ट होता है (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन्- चेतन होना, प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, नश - खो जाना, नष्ट होना, दिखाई नहीं देना, नु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नु-नव - शब्द करना, निश्चय करना, नु-नुव - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। स्तोमेभिः = प्रशंसाओं, स्तुतियों द्वारा (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। महयन्तः = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। आयवः = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। प्रियमेधासो = प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। अस्वरन् = शब्द किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्वर = शब्द करना) ॥ 16 ॥

543. युङ्क्वा हि वृत्रहन्तम, हरी इन्द्र परावतः।

अर्वाचीनो मघवन् सोमपीतये, उग्र ऋषेभिः आ गहि ॥ 17 ॥

8-3-17

मन्त्रार्थ - युङ्क्वा = युक्त, मिलाप कीजिये हि = ही, निश्चय वृत्रहन्तम = हे वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली परावतः = रक्षा करो, पालन करो अर्वाचीनो = अर्वाचीन, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् सोमपीतये = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए उग्र = उग्र ऋषेभिः = ऋषियों द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गहि = गति, ज्ञान, घना करें ॥ 17 ॥

पदार्थ - युङ्क्वा = युक्त, मिलाप कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। वृत्रहन्तम = हे वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। परावतः = रक्षा करो, पालन करो (परावतः = पराया, लौटा हुआ, अव्यय, परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय) अर्वाचीनो = अर्वाचीन, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना,

शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **उग्र** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **ऋषेभिः** = ऋषियों द्वारा (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 17 ॥

(170) सूक्त 4

544. यत् इन्द्र प्राक् अपाक् उदक्, न्यक् वा ह्यसे नृभिः ।

सिमा पुरु नृषूतो असि, आनवे असि प्रशर्ध तुर्वशे ॥ 1 ॥

8-4-1

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **प्राक्** = पहले, पूर्व दिशा **अपाक्** = पालनकर्ता **उदक्** = उदक **न्यक्** = ले जाने वाला **वा** = अथवा **ह्यसे** = आह्वान करते हो, दान करते हो **नृभिः** = नरों द्वारा **सिमा** = सम्पूर्ण **पुरु** = पहले, आगे **नृषूतो** = नृरो से प्रेरित, नृरो से उत्पन्न **असि** = हो **आनवे** = सम्यक् चेतन-प्राणवान् के लिए **असि** = हो **प्रशर्ध** = समर्थ विजेता **तुर्वशे** = शीघ्रकारी ॥ 1 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **प्राक्** = पहले, पूर्व दिशा (अव्यय)। **अपाक्** = पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **उदक्** = उदक (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, अक् - जाना, टेढ़ा जाना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **न्यक्** = ले जाने वाला (नी - ले जाना)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **ह्यसे** = आह्वान करते हो, दान करते हो (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **सिमा** = सम्पूर्ण (सर्वनाम)। **पुरु** = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **नृषूतो** = नृरो से प्रेरित, नृरो से उत्पन्न (नृ - ले जाना, सु = प्रेरणा देना, उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना,)। **असि** = हो (अस् - होना)। **आनवे** = सम्यक् चेतन-प्राणवान् के लिए (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन् - चेतन होना, चेतन करना, प्राण होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **प्रशर्ध** = समर्थ विजेता (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शृध - मुस्कराना, सहना, सहन करना, पराभव करना, जीतना, अपमान करना, अनादर करना)। **तुर्वशे** = शीघ्रकारी (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना, तुर्व - हिंसा करना, खुरचना) ॥ 1 ॥

545. यत् वा रुमे रुशमे श्यावके, कृपे इन्द्र मादयसे सचा ।

कण्वासः त्वा ब्रह्मभिः स्तोम-वाहसः, इन्द्र आ यच्छन्ति आ गहि ॥ 2 ॥ 8-4-2

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **वा** = जिसे, जो, यद्यपि **रुमे** = वाणी, प्रगति, वृद्धि, प्राप्ति में **रुशमे** = प्रकाश में **श्यावके** = श्यावक, तारण, तरण, प्रगति में **कृपे** = कृपा, दया में **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **मादयसे** = आनन्दित, प्राप्त, हर्षित, तृप्त होते हो **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। **कण्वासः** = अनेक कण्व **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **ब्रह्मभिः** = ब्रह्म द्वारा **स्तोम-वाहसः** = स्तोम वाहक **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **यच्छन्ति** = देते हैं **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वा** = अथवा (अव्यय)। **रुमे** = वाणी, प्रगति, वृद्धि, प्राप्ति में (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **रुशमे** = प्रकाश में (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। **श्यावके** = श्यावक, तारण, तरण, प्रगति में (श्यै - जाना, तैरना)। **कृपे** = कृपा, दया में (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मादयसे** = आनन्दित, प्राप्त, हर्षित,

तृप्त होते हो (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **कण्वासः** = अनेक कण्व (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **ब्रह्मभिः** = ब्रह्म द्वारा (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **स्तोम-वाहसः** = स्तोम वाहक (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **यच्छन्ति** = देते हैं (यच्छ = देना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 2 ॥

546. यथा गौरो अपा कृतम्, तृष्यन् एति अव इरिणम्।

आपित्वे नः प्रपित्वे तूयम् आ गहि, कण्वेषु सु सचा पिब ॥ 3 ॥

8-4-3

मन्त्रार्थ - यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **गौरो** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता **अपा** = पालनकर्ता, जल **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ **तृष्यन्** = तृषा, प्यास, इच्छा, चाह **एति** = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **इरिणम्** = शब्दयोग्य के लिए **आपित्वे** = पालन, रक्षण करने के लिए **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **प्रपित्वे** = जाने पर **तूयम्** = तूय को, वर्द्धन को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें **कण्वेषु** = कण्वेषु, शब्द करना, कण बनना **सु** = सुन्दर, अच्छा **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **पिब** = पी लो ॥ 3 ॥

पदार्थ - यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **गौरो** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अपा** = पालनकर्ता, जल (अप = पालन करना)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **तृष्यन्** = तृषा, प्यास, इच्छा, चाह (तृष् = तृषा होना, प्यासा होना, इच्छा करना, चाहना)। **एति** = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **इरिणम्** = शब्दयोग्य के लिए (इरण् - शब्द करना)। **आपित्वे** = पालन, रक्षण करने के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **प्रपित्वे** = जाने पर (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, पि = जाना, जानना, पाना)। **तूयम्** = तूय को, वर्द्धन को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **कण्वेषु** = कण्वेषु, शब्द करना, कण बनना (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **सु** = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 3 ॥

547. मन्दन्तु त्वा मघवन् इन्द्र इन्दवो, राधो देयाय सुन्वते।

आमुष्य आ सोमम् अपिबः चमू सुतम्, ज्येष्ठम् तत् दधिषे सहः ॥ 4 ॥

8-4-4

मन्त्रार्थ :- **मन्दन्तु** = प्रकृष्ट आनन्द, प्रकृष्ट हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश करें **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **इन्दवो** = इन्दुगण **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **देयाय** = देय के लिए **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है **आमुष्य** = प्रगतिशील, सेवाशील का, चुरा कर **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को **अपिबः** = पिया, पान किया **चमू** = भोजन, खाने वाला, प्राप्ति **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े को **तत्** = वह, उस को **दधिषे** = धारण किया **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **मन्दन्तु** = प्रकृष्ट आनन्द, प्रकृष्ट हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश करें (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)।

इन्दवो = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **देयाय** = देय के लिए (दा, दद = देना)। **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **अमुष्य** = प्रगतिशील, सेवाशील का, चुरा कर (अमुष्य = इस के (सर्वनाम), आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः (उपसर्ग), मुष् - चुराना, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अपिबः** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब = पीना, पान करना)। **चमू** = भोजन, खाने वाला, प्राप्ति (चम् - खाना, पाना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **ज्येष्ठम्** = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **दधिषे** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना) ॥ 4 ॥

548. मा भेम मा श्रमिष्मः, उग्रस्य सख्ये तव।

महत् ते वृष्णो अभिचक्ष्यम्, कृतम् पश्येम तुर्वशम् यदुम् ॥ 7 ॥ 8-4-7

मन्त्रार्थ :- मा = नहीं, मत **भेम** = डरो, भयभीत हो **मा** = नहीं, मत **श्रमिष्मः** = श्रम करते हैं **उग्रस्य** = उग्र का **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में **तव** = तुम्हारा **महत्** = महान् **ते** = तुम्हारे लिए **वृष्णो** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी **अभिचक्ष्यम्** = अभिमुख देखने योग्य को, अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, शब्द करने वाले, मनन करने वाले को **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ **पश्येम** = देखें **तुर्वशम्** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को **यदुम्** = यदु को ॥

पदार्थ :- मा = नहीं, मत (अव्यय)। **भेम** = डरो, भयभीत हो (भी - डरना, घबराना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **श्रमिष्मः** = श्रम करते हैं (श्रम - थकना, श्रान्त होना, पीड़ित होना, दुःखित होना, तपश्चर्या करना, व्रत करना)। **उग्रस्य** = उग्र का (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **महत्** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वृष्णो** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अभिचक्ष्यम्** = अभिमुख देखने योग्य को, अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, शब्द करने वाले, मनन करने वाले को (अभि = सभी ओर, सर्वथा, चक्ष - अनुमोदन करना, कहना, देखना)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **पश्येम** = देखें (पश्-दृश् = देखना)। **तुर्वशम्** = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना, वण् - शब्द करना, तुर्व - हिंसा करना, खुरचना)। **यदुम्** = यदु को (यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना) ॥ 7 ॥

549. सव्याम् अनु स्फिग्यम् वावसे, वृषा न दानो अस्य रोषति।

मध्वा सम्पृक्ताः सारघेण धेनवः, तूयम् आ इहि द्रवा पिब ॥ 8 ॥ 8-4-8

मन्त्रार्थ :- सव्याम् = बाएं को **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **स्फिग्यम्** = स्थूल को **वावसे** = वर्तमान हैं **वृषा** = पराक्रमी **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **दानो** = दान **अस्य** = इसका **रोषति** = हिंसा करता है, क्रोध करता है **मध्वा** = मधुरता का **सम्पृक्ताः** = सम्यक् मिलाने वाले, भलीभांति मिलने वाले **सारघेण** = सारघ **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **तूयम्** = गति को, तूय को, वर्द्धन को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इहि** = आओ, जानों **द्रवा** = प्रवाही,

ज्ञान पिब = पी लो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- सव्याम् = बाएं को (सर्वनाम)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। स्फिग्यम् = स्थूल को (स्फी - मोटा होना, स्थूल होना)। वावसे = वर्तमान हैं (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। दानो = दान (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। रोषति = हिंसा करता है, क्रोध करता है (रुष - मार डालना या दुःख देना, मार डालने का यत्न करना, रुष - क्रोध करना, गुस्सा करना)। मध्वा = मधुरता का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। सम्यक्ताः = सम्यक् मिलाने वाले, भलीभांति मिलने वाले (सम् = सम्यक्, भलीभांति, पृक् - मिलना)। सारघेण = सारघ (सार - कृश होना, लघुकाय होना, दुर्बल होना, सृ- जाना, सरकना, घस् = खाना)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। तूयम् = गति को, तूय को, वर्द्धन को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। इहि = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना)। द्रवा = प्रवाही, ज्ञान (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। पिब = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 8 ॥

550. अश्वी रथी सुरुपः इत्, गोमान् यत् इन्द्र ते सखा ।

श्वात्रभाजा वयसा सचते, सदा चन्द्रः याति सभाम् उप ॥ 9 ॥

8-4-9

मन्त्रार्थ - अश्वी = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक रथी = रथी, रथवाला सुरुप = सुरुप, उत्तम रूप वाले को इत् = ही गोमान् = गोमान, विद्वान् यत् = जिसे, जो इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सखा = मित्र श्वात्रभाजा = प्रगतिशील सेवाभावी, प्रगति सेवी वयसा = वय, गति, ज्ञान, रचना द्वारा सचते = अभिसिञ्चन करता है सदा = सदा, सर्व काल में। चन्द्रः = चन्द्र, आनन्द, प्रकाश दायक याति = जाता है सभाम् = सभा को उप = समीप ॥

पदार्थ - अश्वी = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। रथी = रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। सुरुपः = सुरुप, उत्तम रूप वाले को (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। इत् = ही (अव्यय)। गोमान् = गोमान, विद्वान् (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। श्वात्रभाजा = प्रगतिशील सेवाभावी, प्रगति सेवी (शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना, भज् = सेवा करना, भजन करना, भाग करना, अलग करना)। वयसा = वय, गति, ज्ञान, रचना द्वारा (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सचते = अभिसिञ्चन करता है (सच् - सींचना, सेवा करना, सन्तुष्ट करना, पूर्णतः समझना, सम्बन्धी होना)। सदा = सदा, सर्व काल में। चन्द्रः = चन्द्र, आनन्द, प्रकाश दायक (चन्द् - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। याति = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। सभाम् = सभा को (स - सहित, साथ, भा - चमकना, प्रकाशित होना)। उप = समीप (उपसर्ग) ॥ 9 ॥

551. अध्वर्यो द्रावया त्वम्, सोमम् इन्द्रः पिपासति ।

उप नूनम् युयुजे, वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥ 11 ॥

8-4-11

मन्त्रार्थ - अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय द्रावया = प्राप्त, अनुसरण किया त्वम् = तुम सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान पिपासति = रक्षण, पान करते हैं उप = समीप नूनम् = निश्चय

ही युयुजे = जोड़ते हैं, मिलाते हैं वृषणा = वर्षा करने वाला, बरसाओ, पराक्रमी हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम च = और जगाम = गया वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले ॥ 11 ॥

पदार्थ - अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। द्रावया = प्राप्त, अनुसरण किया (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। पिपासति = रक्षण, पीने की इच्छा करता है (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। नूनम् = निश्चय ही (अव्यय)। युयुजे = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। वृषणा = वर्षा करने वाला, बरसाओ, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। च = और। जगाम = गया (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना) ॥ 11 ॥

(171) सूक्त 5

552. दूरात् इह इव यत् सतो, अरुणप्सुः अशिश्वितत्।

वि भानुम् विश्वधा अतनत् ॥ 1 ॥ 8-5-1

मन्त्रार्थ - दूरात् = दूर से इह = इसमें, यहां, यह इव = समान, की भाँति, के समान यत् = जिसे, जो सतो = सत्य अरुणप्सुः = अरुणप्सु, हिंसक, गतिशील, व्यापक अशिश्वितत् = अशिश्वित वि = विशेष, विना, विलोम भानुम् = भानु, प्रकाशमान को विश्वधा = सबको, विश्व को धारण करने वाला अतनत् = विस्तार किया ॥ 1 ॥

पदार्थ - दूरात् = दूर से (अव्यय)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। सतो = सत्य (सत् = सत्य होना, अस्तित्व होना)। अरुणप्सुः = अरुणप्सु, हिंसक, गतिशील, व्यापक (ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। अशिश्वितत् = अशिश्वित, प्रकाशवान् (श्वित - श्वेत होना, सफेद होना, शुभ्र होना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। भानुम् = भानु, प्रकाशमान को (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। विश्वधा = सबको, विश्व को धारण करने वाला (विश्व - सब कुछ, सभी, धा - धारण करना)। अतनत् = विस्तार किया (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 58

(172) सूक्त 6

553. महान् इन्द्रो यः ओजसा, पर्जन्यो वृष्टिमान् इव।

स्तोमैः वत्सस्य वावृधे ॥ 1 ॥ 8-6-1

मन्त्रार्थ :- महान् - महान्, बड़ा, पूज्य, इन्द्रो - इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान्, यः - जो, ओजसा - ओज द्वारा, पर्जन्यो - पर्जन्य, वृष्टिमान् - वर्षा करते हुए, इव - के समान। स्तोमैः - स्तोमों द्वारा, वत्सस्य - वत्स का, बोलने वाले का, वावृधे - वृद्धि के लिए ॥ 1 ॥

भावार्थ :- पर्जन्य अर्थात् पोषण उत्पन्न करने वाले बादलों की भाँति परमात्मा की चेतना शक्ति सदैव हमारे लिए बरसती रहती है। स्तोम अर्थात् स्तुतियों से हम उसके अधिकारी बनते हैं।

पदार्थ :- महान् = महान्, बड़ा, पूज्य। इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। यः = जो। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। पर्जन्यो = पोषण उत्पन्न करने वाले, पर्जन्य (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। वृष्टिमान् = वर्षा करते हुए (वृष् = उच्च पराक्रम करना, बरसना)। इव = समान। स्तोमैः = स्तोमों द्वारा (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आत्मश्लाघा करना)। वत्सस्य = वत्स का, बोलने वाले का (वद् = बोलना)। वावृधे = वृद्धि के लिए (वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 1 ॥

554. प्रजाम् ऋतस्य पिप्रतः, प्र यद् भरन्त वहनयः ।

विप्राः ऋतस्य धारया ॥ 2 ॥ 8-6-2

मन्त्रार्थ :- प्रजाम् = प्रजा को ऋतस्य = ऋत का पिप्रतः = पूर्ण करने वाले प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक यद् = जो भरन्त = भरता है वहनयः = वहन करने वाला विप्राः = विशेष पूर्ण करने वाले ऋतस्य = ऋत का धारया = धार द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- प्रजाम् = प्रजा को (प्र - बहुत, प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। पिप्रतः = पूर्ण करने वाले (पृ - पूर्ण करना, भरना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। यद् = जो (सर्वनाम)। भरन्त = भरता है (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। वहनयः = वहन करने वाला (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। विप्राः = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 2 ॥

555. कण्वाः इन्द्रम् यत् अक्रत, स्तोमैः यज्ञस्य साधनम् ।

जामि ब्रुवते आयुधम् ॥ 3 ॥ 8-6-3

मन्त्रार्थ :- कण्वाः = कण्व इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को यत् = जिसे, जो अक्रत = किया स्तोमैः = स्तुतियों से यज्ञस्य = यजन का साधनम् = साधन को जामि = भोजन ब्रुवते = कहते हैं, बोलते हैं आयुधम् = आयुध को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- कण्वाः = कण्व (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अक्रत = किया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ = करना)। स्तोमैः = स्तुतियों से (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। साधनम् = साधन को (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। जामि = भोजन (जम् = खाना, निगलना, जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। ब्रुवते = कहते हैं, बोलते हैं (ब्रू - कहना, बोलना)। आयुधम् = आयुध को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना) ॥ 3 ॥

556. सम् अस्य मन्यवे विशो, विश्वा नमन्त कृष्टयः ।

समुद्राय इव सिन्धवः ॥ 4 ॥ 8-6-4

मन्त्रार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति अस्य = इसका मन्यवे = मन्यु के लिए, मानते हैं विशो = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी विश्वा = विश्व, सभी, सब नमन्त = नमन करें कृष्टयः = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन समुद्राय = समुद्र के लिए इव = समान, की भाँति, के समान सिन्धवः = सिन्धु ॥ 4 ॥

पदार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। मन्यवे = मन्यु के लिए, मानते

हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **विशो** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **विश्व** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **नमन्त** = नमन करें (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **कृष्टयः** = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। **समुद्राय** = समुद्र के लिए (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सिन्धवः** = सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना) ॥ 4 ॥

557. ओजः तत् अस्य तित्विष, उभे यत् समवर्तयत्।

इन्द्रः चर्मव रोदसी ॥ 5 ॥ 8-6-5

मन्त्रार्थ - ओजः = ओज तत् = वह, उस को अस्य = इसका तित्विष = प्रकाश का उभे = दोनों, पूर्णता यत् = जिसे, जो समवर्तयत् = समवर्तय, सम्यक् रूप से वरण करना इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान चर्मव = चर्म, आवरण के रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले ॥

पदार्थ - ओजः = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। तित्विष = प्रकाश का (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। उभे = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। समवर्तयत् = समवर्तय, सम्यक् रूप से वरण करना (सम - सब, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना)। इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। चर्मव = चर्म, आवरण के (चर्म - चर्म होना, आवरण होना, चर् - चलना, आचरण करना, वीरता दिखाना, प्रयास करना)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना) ॥ 5 ॥

558. वि चित् वृत्रस्य दोधतः।

वज्रेण शतपर्वणा, शिरो बिभेद वृष्णिना ॥ 6 ॥ 8-6-6

मन्त्रार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम चित् = भी, ही वृत्रस्य = प्रकाश, वाणी के दोधतः = कम्पन करने वाला, दोहन करने वाला वज्रेण = वज्र, गतिमान द्वारा शतपर्वणा = शत-पर्व द्वारा शिरो = शिर, सुनने वाला, तीक्ष्ण, कल्याणकारी बिभेद = भेदन किया वृष्णिना = पराक्रमी द्वारा ॥ 6 ॥

पदार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। चित् = भी, ही (अव्यय)। वृत्रस्य = प्रकाश, वाणी के (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। दोधतः = कम्पन करने वाला, दोहन करने वाला (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना, धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। वज्रेण = वज्र, गतिमान द्वारा (वज् - गति करना, जाना)। शतपर्वणा = शत-पर्व द्वारा (शत = सौ, पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना) शिरो = शिर, सुनने वाला, तीक्ष्ण, कल्याणकारी (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। बिभेद = भेदन किया (भिद् - भाग करना, हिस्सा करना, चीरना, तोड़ना)। वृष्णिना = पराक्रमी द्वारा (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। ॥ 6 ॥

559. अहम् इत् हि पितुः परि, मेधाम् ऋतस्य जग्रह।

अहम् सूर्य इव अजनि ॥ 10 ॥

8-6-10

मन्त्रार्थ - अहम् = मैं इत् = ही हि = ही, निश्चय पितुः = पितु, गति, ज्ञान, पिता परि = सभी तरफ मेधाम् =

मेधा को ऋतस्य = ऋत का जग्रह = गृहण किया, जाना अहम् = मैं सूर्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाला इव = समान, की भाँति, के समान अजनि = उत्पन्न किया ॥ 10 ॥

पदार्थ - अहम् = मैं (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। पितुः = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। मेधाम् = मेधा को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। जग्रह = गृहण किया, जाना (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृम्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। अहम् = मैं (सर्वनाम)। सूर्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। अजनि = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना) ॥ 10 ॥

560. अहम् प्रत्नेन मन्मना, गिरः शुष्मामि कण्ववत्।

येन इन्द्रः शुष्मम् इत् दधे ॥ 11 ॥ 8-6-11

मन्त्रार्थ :- अहम् = मैं प्रत्नेन = पुरातन द्वारा मन्मना = विचारशील द्वारा गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन शुष्मामि = प्रकाशित, शोभित करता हूँ कण्ववत् = कण्व के समान येन = जिससे, जिसके द्वारा इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली शुष्मम् = शुष्म, सुखाने वाले को इत् = ही दधे = धारण करते हैं ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अहम् = मैं (सर्वनाम)। प्रत्नेन = पुरातन द्वारा (प्र+त्न+इत्, प्र - प्रकृष्ट, अधिक (विशेषण))। मन्मना = विचारशील द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। शुष्मामि = प्रकाशित, शोभित करता हूँ (शुष्म - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। कण्ववत् = कण्व के समान (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा (सर्वनाम)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। शुष्मम् = शुष्म, सुखाने वाले को (शुष् - सुखाना)। इत् = ही (अव्यय)। दधे = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 11 ॥

561. ये त्वाम् इन्द्र न तुष्टुवुः, ऋषयो ये च तुष्टुवुः।

मम इत् वर्धस्व सुष्टुतः ॥ 12 ॥ 8-6-12

मन्त्रार्थ :- ये = जो (सर्वनाम)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। तुष्टुवुः = तृप्त करते हैं (तुष् = सन्तुष्ट होना, तृप्त होना, तृप्त करना, प्रीति करना)। ऋषयो = ऋषिगण (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। ये = जो (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। तुष्टुवुः = तृप्त करते हैं (तुष् = सन्तुष्ट होना, तृप्त होना, तृप्त करना, प्रीति करना)। मम = मेरा (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। वर्धस्व = बोलो, बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। सुष्टुतः = उत्तम स्तुति करते हुए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना) ॥ 12 ॥

पदार्थ :- ये = जो (सर्वनाम)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। तुष्टुवुः = तृप्त करते हैं (तुष् = सन्तुष्ट होना, तृप्त होना, तृप्त करना, प्रीति करना)। ऋषयो = ऋषिगण (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। ये = जो (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। तुष्टुवुः = तृप्त करते हैं (तुष् = सन्तुष्ट होना, तृप्त होना, तृप्त करना, प्रीति करना)। मम = मेरा (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। वर्धस्व = बोलो, बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। सुष्टुतः = उत्तम स्तुति करते हुए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना) ॥ 12 ॥

562. इमाः ते इन्द्र पृश्नयो, घृतम् दुहत आशिरम्।

एनाम् ऋतस्य पिप्युषीः ॥ 19 ॥ 8-6-19

मन्त्रार्थ - इमाः = ये ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली पृश्नयो = प्रश्नकर्ता घृतम् = प्रकाशमान को दुहते = दुहने वाले के लिए आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को एनाम् = प्रकाशित करने वाले को ऋतस्य = ऋत का पिप्युषीः = पीते हैं, पान करते हैं ॥ 19 ॥

पदार्थ - इमाः = ये (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। पृश्नयो = प्रश्नकर्ता (पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना)। घृतम् = प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। दुहते = दुहने वाले के लिए (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को (आ-समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। एनाम् = प्रकाशित करने वाले को (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। पिप्युषीः = पीते हैं, पान करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 19 ॥

563. उपह्वरे गिरीणाम्, सङ्गमे च नदीनाम्।

धिया विप्रो अजायत ॥ 28 ॥ 8-6-28

मन्त्रार्थ :- उपह्वरे = समीप पुकारने में, वरण, आच्छादन, निवास में गिरीणाम् = वाणियों का, बोध का, सिञ्चन का सङ्गमे = संगमन में च = और नदीनाम् = नदियों का, शब्दों का, प्रकाश का धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा विप्रो = विप्र, पूर्ण, तृप्त करने वाले अजायत = उत्पन्न हुए ॥ 28 ॥

भावार्थ :- गिरीणाम् अर्थात् वाणियों का, बोध का, सिञ्चन का। उपह्वरे का अर्थ है समीप पुकारने में, उपवास में अथवा निकट रहकर वरण, आच्छादन, निवास के संगमन में और नदियों अर्थात् शब्दों के, प्रकाश के संगम में विप्र अर्थात् पूर्ण, तृप्त करने वाले ऋषि, मनीषी धिया अर्थात् धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा उत्पन्न हुए। इस मन्त्र का यही मुख्य सन्देश है कि विप्र अर्थात् पूर्ण, तृप्त करने वाले ऋषि, मनीषी धिया अर्थात् धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा उत्पन्न होते हैं। विप्रस, ऋषि, मनीषी बनने के लिए गहन साधना तथा स्वाध्याय की अपेक्षा है ॥ 28 ॥

पदार्थ - उपह्वरे = उपकुटिल में (उप - समीप, ह्वे = पुकारना, ह्वृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना, निवास करना)। गिरीणाम् = वाणियों का, बोध का, सिञ्चन का (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। सङ्गमे = संगमन में (सम् - सम्यक्, गम् - जाना, सम्-गम्, सङ्गम् - मिलना, साथ चलना)। च - च = और। नदीनाम् = नदियों का (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। विप्रो = विप्र, पूर्ण, तृप्त करने वाले (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। अजायत = उत्पन्न हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना) ॥ 28 ॥

564. आत् इत् प्रत्नस्य रेतसो, ज्योतिः पश्यन्ति वासरम्।

परो यत् इध्यते दिवि ॥ 30 ॥ 8-6-30

मन्त्रार्थ - आत् = चिरन्तन, नित्य इत् = ही। प्रत्नस्य = प्रसिद्ध का, प्रकृष्टता को रेतसो = रेतस् ज्योतिः = प्रकाश पश्यन्ति = देखते हैं वासरम् = घर, निवास को परो = पराया, परे यत् = जिसे, जो इध्यते = गति, ज्ञान, प्रकाश दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 30 ॥

पदार्थ - आत् = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। इत् = ही (अव्यय)। प्रत्नस्य = प्रसिद्ध का, प्रकृष्टता को, (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। रेतसो = रेतस् (रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना,

शब्द करना, सुनना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **पश्यन्ति** = देखते हैं (पश् - देखना)। **वासरम्** = घर, निवास को (वस् = रहना, निवास करना)। **परो** = पराया, परे (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इध्यते** = गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 30 ॥

(173) सूक्त 11

565. आ ते वत्सो मनो यमत्, परमात् चित् सधस्थात्।

अग्ने त्वाम् कामये गिरा ॥ 8 ॥ 8-11-7

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **वत्सो** = वत्स **मनो** = मन **यमत्** = यमन करता है **परमात्** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम **चित्** = चेतन **सधस्थात्** = सहस्थान, सहगामी, साथ **अग्ने** = हे अग्नि **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **कामया** = कामना करना, इच्छा करना **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ ॥ 8 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वत्सो** = वत्स (वद् = कहना, बोलना, सु - चलना, सरकना)। **मनो** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **यमत्** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **परमात्** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम (सर्वनाम)। **चित्** = चेतन (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **सधस्थात्** = सहस्थान, सहगामी, साथ (सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **कामया** = कामना करना, इच्छा करना (कम् - चाहना, इच्छा करना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सीचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 8 ॥

566. पुरुत्रा हि सदृङ् असि, विशः विश्वाः अनु प्रभुः।

समत्सु त्वा हवामहे ॥ 8 ॥ 8-11-8

मन्त्रार्थ :- **पुरुत्रा** = अग्रगामी, अग्रणी **हि** = ही, निश्चय **सदृङ्** = सदृङ्, समान देखना **असि** = हो **विशः** = व्याप्त, प्रविष्ट, प्रवेशी **विश्वाः** = विश्व, सभी, सब **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **प्रभुः** = अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **पुरुत्रा** = अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **सदृङ्** = सदृङ्, समान देखना (दृक्ष्-दृश् -देखना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **विशः** = व्याप्त, प्रविष्ट, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, धंसना)। **विश्वाः** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **प्रभुः** = अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 8 ॥

567. समत्सु अग्निम् अवसे, वाजयन्तो हवामहे।

वाजेषु चित्राधसम् ॥ 9 ॥ 8-11-9

मन्त्रार्थ :- समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो वाजयन्तो = गतिमान, बलवान हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं वाजेषु = वाजों में चित्रराधसम् = चित्रराध वाला ॥ 9 ॥

पदार्थ :- समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। वाजयन्तो = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। वाजेषु = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। चित्रराधसम् = चित्रराध वाला (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना, रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना) ॥ 9 ॥

(174) सूक्त 12

568. यः इन्द्र सोमपातमो, मदः शविष्ठ चेतति।

येन आहंसि नि अत्रिणम् तम् ईमहे ॥ 1 ॥ 8-12-1

मन्त्रार्थ - यः = जो इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली सोमपातमो = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को मदः = मद, हर्ष, तृप्ति शविष्ठ = हे अत्यन्त समीपगामी चेतति = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है येन = जिससे, जिसके द्वारा। आहंसि = नष्ट करते हो नि = निश्चित, निरन्तर अत्रिणम् = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को तम् = उसको, उसे ईमहे = आते हैं, जानते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोमपातमो = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। मदः = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। शविष्ठ = हे अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। चेतति = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा। आहंसि = नष्ट करते हो (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। अत्रिणम् = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना, खाना, नष्ट करना, इ = जाना, जानना, पाना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ईमहे = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 1 ॥

569. यत् सोमम् इन्द्र विष्णवि, यत् वा घ त्रिते आस्ये।

यद्वा मरुत्सु मन्दसे सम् इन्दुभिः ॥ 12 ॥ 8-12-16

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली विष्णवि = विस्तृत, व्यापक यत् = जिसे, जो वा = अथवा घ = ही, भी त्रिते = त्रित, तीन के लिए आस्ये = आप, व्याप्त, व्यापक के लिए

यद्वा = जिसे, जो, यद्यपि मरुत्सु = मरुत्, मरणशील मन्दसे = आनन्दित होते हो, विनाश करते हो सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति इन्दुभिः = परम ऐश्वर्य द्वारा ॥ 16 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। विष्णुवि = विस्तृत, व्यापक (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। वा = अथवा (अव्यय)। घ = ही, भी (अव्यय, निपात)। त्रिते = त्रित, तीन के लिए (संख्या, सर्वनाम)। आत्ये = आप, व्याप्त, व्यापक के लिए (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। यद्वा = जिसे, जो, यद्यपि (अव्यय)। मरुत्सु = मरुत्, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। मन्दसे = आनन्दित होते हो, विनाश करते हो (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। इन्दुभिः = परम ऐश्वर्य द्वारा (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 16 ॥

अनुवाकः- 59

(175) सूक्त 13

570. इन्द्र सुतेषु सोमेषु, क्रतुम् पुनीते उक्थ्यम्।

विदे वृधस्य दक्षसः महान् हि षः ॥ 1 ॥ 8-13-1

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में सोमेषु = सोमों में, सौम्यताओं में, श्रद्धा व उपकार की भावनाओं में क्रतुम् = कर्म को पुनीते = पवित्र करते हो उक्थ्यम् = कथनीय को विदे = विद्वान् वृधस्य = वृद्धि का दक्षसः = दक्ष का महान् = बड़े, पूज्य, महान् हि = ही, निश्चय षः = वह, उसने ॥ 1 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सोमेषु = सोमों में, सौम्यताओं में, श्रद्धा व उपकार की भावनाओं में (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। क्रतुम् = कर्म को (कृ = करना)। पुनीते = पवित्र करते हो (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। उक्थ्यम् = कथनीय को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। विदे = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। वृधस्य = वृद्धि का (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। दक्षसः = दक्ष का (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। षः = वह, उसने (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

571. स प्रथमे व्योमनि, देवानम् सदने वृधः।

सुषारः सुश्रवस्तमः सम् अप्सुजित् ॥ 2 ॥ 8-13-2

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने प्रथमे = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में व्योमनि = व्योम में, विशेष रक्षक में देवानाम् = देवों का सदने = सदन में, स्थान में वृधः = वृद्धि सुषारः = उत्तम रूप से कार्य पूर्ण करने वाला, उत्तम कार्यकर्ता सुश्रवस्तमः = उत्तम विद्वान्, उत्तम श्रवणशील, उत्तम प्रगतिशील सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति अप्सुजित् = अप्सु को जीतने वाला, अप्सु के लिए विजेता ॥ 2 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। प्रथमे = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में (प्रथ् = विस्तार होना,

प्रसिद्ध होना)। **व्योमनि** = व्योम में, विशेष रक्षक में (वि - विशेष, उ - शब्द करना, रक्षा करना, सुखाना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ओ - बुलाना, आह्वान करना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सदने** = सदन में, स्थान में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **वृधः** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **सुपारः** = उत्तम रूप से कार्य पूर्ण करने वाला, उत्तम कार्यकर्ता (सु = अच्छा, उत्तम (उपसर्ग), पार - कार्य पूर्ण करना)। **सुश्रवस्तमः** = उत्तम विद्वान्, उत्तम श्रवणशील, उत्तम प्रगतिशील (सु - अच्छा, सुन्दर, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अप्सुजित्** = अप्सु को जीतने वाला, अप्सु के लिए विजेता (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, रक्षण करना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना) ॥ 2 ॥

572. तम् अह्वे वाजसातये, इन्द्रम् भराय शुष्मिणम्।

भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥ 3 ॥ 8-13-3

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे अह्वे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं वाजसातये = विद्यावान् के लिए इन्द्रम् = इन्द्र को भराय = पोषण के लिए, भरण के लिए शुष्मिणम् = शुष्मी को भवा = हो, हो जाये नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सुम्ने = सत् चिन्तन में अन्तमः = प्राणवान् सखा = मित्र वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में ॥ 3 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। अह्वे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) वाजसातये = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। भराय = पोषण के लिए, भरण के लिए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। शुष्मिणम् = शुष्मी को (शुष् - सुखाना)। भवा = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सुम्ने = सत् चिन्तन में (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। अन्तमः = प्राणवान् (अन् = प्राणवान् होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 3 ॥

(176) सूक्त 14

573. यत् इन्द्र अहम् यथा त्वम्, ईशीय वस्वः एक इत्।

स्तोता मे गोसखा स्यात् ॥ 8 ॥ 8-14-1

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली अहम् = मैं यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार त्वम् = तुम ईशीय = ऐश्वर्य, अधिकार, शासन के लिए वस्वः = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले एक = एक इत् = ही स्तोता = स्तुतिकर्ता मे = मेरा, मेरे लिए गोसखा = मननशील मित्र स्यात् = हो ॥ 8 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अहम् = मैं (सर्वनाम)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। ईशीय = ऐश्वर्य, अधिकार, शासन के लिए (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। वस्वः = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। एक = एक (संख्या)। इत् = ही (अव्यय)। स्तोता = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। मे = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। गोसखा = मननशील मित्र (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, सख् = मित्र होना)। स्यात् = हो (अस् = होना) ॥ 8 ॥

574. शिक्षेयम् अस्मै दित्सेयम्, शचीपते मनीषिणे।

यत् अहम् गोपतिः स्याम् ॥ 2 ॥ 8-14-2

मन्त्रार्थ :- शिक्षेयम् = शिक्षा दूँ अस्मै = हमारा, हममें, हमारे लिए दित्सेयम् = दान दूँ शचीपते = हे उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी मनीषिणे = हे मनीषी यत् = जिसे, जो अहम् = मैं गोपतिः = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक स्याम् = हों ॥ 2 ॥

पदार्थ :- शिक्षेयम् = शिक्षा दूँ (शिक्ष - शिक्षा देना)। अस्मै = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। दित्सेयम् = दान दूँ (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना, दी = क्षय होना, ह्रास होना, नष्ट होना, झरना)। शचीपते = हे उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी (शच - स्पष्ट बोलना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। मनीषिणे = हे मनीषी (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अहम् = मैं (सर्वनाम)। गोपतिः = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। स्याम् = हों (अस् = होना) ॥ 2 ॥

575. धेनुः ते इन्द्र सूनृता, यजमानाय सुन्वते।

गाम् अश्वम् पिप्युषी दुहे ॥ 3 ॥ 8-14-3

मन्त्रार्थ :- धेनुः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सूनृता = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली यजमानाय = यजमान के लिए सुन्वते = स्नान करता है, सवन करता है गाम् = गान, गाय, गायक, गाने वाले को अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को पिप्युषी = पान करने इच्छा वाली, संरक्षण करने की इच्छा वाली दुहे = दुह के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- धेनुः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सूनृता = सुनृता, उत्पत्ति-सृजन को ले जाने वाली (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, नृ = ले जाना)। यजमानाय = यजमान के लिए (यज = देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। सुन्वते = स्नान करता है, सवन करता है (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। गाम् = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। पिप्युषी = पान करने इच्छा वाली, संरक्षण करने की इच्छा वाली (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। दुहे = दुह के लिए (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना) ॥ 3 ॥

576. यज्ञ इन्द्रम् अवर्धयद्, यत् भूमिम् व्यवर्तयत्।

चक्राण ओपशम् दिवि ॥ 5 ॥ 8-14-5

मन्त्रार्थ - यज्ञ = यजन इन्द्रम् = इन्द्र को अवर्धयद् = बढ़ाया यत् = जिसे, जो भूमिम् = भूमि को वि - विशेष, अवर्तयत् = अवर्तय चक्राण = चक्रण करता हुआ, चक्रण करते हुए ओपशम् = ओपश को दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 5 ॥

पदार्थ - यज्ञ = यजन (यज = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अवर्धयद् = बढ़ाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृध् - बढ़ना, बढ़ाना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। भूमिम् = भूमि को (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। वि - विशेष, अवर्तयत् = अवर्तय (वि - विशेष, अ - नहीं, वृत् = वर्तना, वर्तमान होना)। चक्राण = चक्रण करता हुआ, चक्रण करते हुए (चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। ओपशम् = ओपश को (शि = तीक्ष्ण

करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, शी = सोना, शयन करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 5 ॥

577. वि अन्तरिक्षम् अतिरत्, मदे सोमस्य रोचना ।

इन्द्रो यत् अभिनत् बलम् ॥ 7 ॥ 8-14-7

मन्त्रार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम **अन्तरिक्षम्** = अन्तरिक्ष या आकाश **अतिरत्** = पूर्ण करता है, पार करता है, सतत गतिशील करता है **मदे** = मद, हर्ष, तृप्ति में **सोमस्य** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का **रोचना** = प्रकाश **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **यत्** = जिसे, जो **अभिनत्** = सभी ओर, सर्वथा, नत, विनयी, विनम्र **बलम्** = बल को ॥ 7 ॥

पदार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **अन्तरिक्षम्** = अन्तरिक्ष या आकाश (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। **अतिरत्** = पूर्ण करता है, पार करता है, सतत गतिशील करता है (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तीर - पूर्ण करना, समाप्त करना, पार लगाना)। **मदे** = मद, हर्ष, तृप्ति में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोमस्य** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **रोचना** = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अभिनत्** = सभी ओर, सर्वथा, नत, विनयी, विनम्र (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, नम् - नमना, नमन करना)। **बलम्** = बल को (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना) ॥ 7 ॥

578. उत् गाः आजत् अङ्गिरोभ्यः, आविः कृण्वन् गुहा सतीः ।

अर्वाञ्चम् नुनुदे बलम् ॥ 8 ॥ 8-14-8

मन्त्रार्थ :- उत् = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले **आजत्** = आता है **अङ्गिरोभ्यः** = अङ्गिरा, विद्वान्, गतिशील, पाने वाले के लिए **आविः** = सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त **कृण्वन्** = करते हुए, करने वाला **गुहा** = गुह्य, गुहा **सतीः** = सत्य युक्त **अर्वाञ्चम्** = प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक, सम्मुख को **नुनुदे** = भेजा, प्राप्त किया, गया **बलम्** = बल को ॥ 8 ॥

पदार्थ :- उत् = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (अव्यय)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **आजत्** = आता है (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आगम, अज् = जानना, जाना, पहुँचना, स्थापित करना, फेंकना, आ-अज - आना)। **अङ्गिरोभ्यः** = अङ्गिरा, विद्वान्, गतिशील, पाने वाले के लिए (अङ्ग् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **आविः** = सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त (उपसर्ग) **कृण्वन्** = करते हुए, करने वाला (कृ = करना)। **गुहा** = गुह्य, गुहा (गुह् - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। **सतीः** = सत्य युक्त (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **अर्वाञ्चम्** = प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक, सम्मुख को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **नुनुदे** = भेजा, प्राप्त किया, गया (नुद् = भेजना, प्रेरणा करना, जाना)। **बलम्** = बल को (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना) ॥ 8 ॥

579. अपाम् फेनेन नमुचेः, शिरः इन्द्र उत् अवर्त्तयः ।

विश्वा यत् अजयः स्पृधः ॥ 13 ॥ 8-14-13

मन्त्रार्थ - अपाम् = अपा को, पालकों का **फेनेन** = फेन द्वारा, वृद्धि द्वारा **नमुचेः** = नमनशील का **शिरः** = शिर **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **अवर्त्तयः** = न वर्तने योग्य **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **यत्** = जिसे, जो **अजयः** = जय-हीन, जय न होना, जिसको जय न किया जा सके **स्पृधः** = स्पर्धा करने वाले ॥ 13 ॥

पदार्थ - अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **फेनेन** = फेन द्वारा, वृद्धि द्वारा (स्फी-फेय्-स्फाय= बढ़ना, मोटा होना, स्थूल होना)। **नमुचेः** = नमनशील का (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **शिरः** = शिर (शिर - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **अवर्त्तयः** = न वर्तने योग्य (अ - नहीं, वृत् = वर्तना, वर्तमान होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अजयः** = जय-हीन, जय न होना, जिसको जय न किया जा सके (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जि-जय - जीतना, जय होना)। **स्पृधः** = स्पर्धा करने वाले (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना) ॥ 13 ॥

(177) सूक्त 15

580. तम् उ अभि प्र गायत, पुरुहूतम् पुरुष्टुतम्।

इन्द्रम् गीर्भिः तविषम् आ विवासत ॥ 1 ॥

8-15-1

मन्त्रार्थ - तम् = उसको, उसे **उ** = निश्चय ही, भी **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को **पुरुष्टुतम्** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति करो **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **तविषम्** = तविषी को, गति, वृद्धि, हिंसा, प्रकाशमान को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **विवासत** = विशेष वास करता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **पुरुहूतम्** = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पुरुष्टुतम्** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति करो (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुत् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **तविषम्** = तविषी को, गति, वृद्धि, हिंसा, प्रकाशमान को (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना, तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **विवासत** = विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) ॥ 1 ॥

581. तम् ते मदम् गृणीमसि, वृषणम् पृक्षु सासहिम्।

उ लोक-कृत्नुम् अद्रिवो हरिश्रियम् ॥ 4 ॥

8-15-4

मन्त्रार्थ - तम् = उसको, उसे **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को **गृणीमसि** = शब्द करते हैं, अभिसिंचित करते हैं, प्रशंसा करते हैं **वृषणम्** = पराक्रमी को **पृक्षु** = सम्पर्क **सासहिम्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले **उ** = निश्चय ही, भी **लोक-कृत्नुम्** = लोककृता, लोगों द्वारा किया गया **अद्रिवो** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **हरिश्रियम्** = ले जाने वाले श्रिय को, हरण करने वाले श्रिय को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मदम् = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। गृणीमसि = शब्द करते हैं, अभिसिंचित करते हैं, प्रशंसा करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। पृक्षु = सम्पर्क (पृक् - मिलना)। सासहिम् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। लोक-कृत्नुम् = लोककृता, लोगों द्वारा किया गया (लोक = देखना, प्रकाशित होना, बोलना, कृ = करना)। अद्रिवो = अद्रि, अहिसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद्रु - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। हरिश्रियम् = ले जाने वाले श्रिय को, हरण करने वाले श्रिय को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना, श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 4 ॥

582. येन ज्योतीषि आयवे, मनवे च विवेदिथ ।

मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥ 5 ॥ 8-15-5

मन्त्रार्थ :- येन = जिससे, जिसके द्वारा ज्योतीषि = अनेक प्रकाश आयवे = उपसंहार करने, मिश्रित करने, पृथक् पृथक् करने, शासन करने, में, के लिए मनवे = मनु के लिए, मननशील के लिए च = और। विवेदिथ = विद्वान्, जानते हुए मन्दानो = आनन्दित होते हुए, प्रकाशित होते हुए अस्य = इसका बर्हिषो = बढ़ा हुआ, विराट, महान् वि = विशेष, विना, विलोम राजसि = प्रकाशमान् ॥ 5 ॥

पदार्थ :- येन = जिससे, जिसके द्वारा ज्योतीषि = अनेक प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। आयवे = उपसंहार करने, मिश्रित करने, पृथक् पृथक् करने, शासन करने, में, के लिए (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। मनवे = मनु के लिए, मननशील के लिए (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। च = और। विवेदिथ = विद्वान्, जानते हुए (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। मन्दानो = आनन्दित होते हुए, प्रकाशित होते हुए (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। बर्हिषो = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। राजसि = प्रकाशमान् (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) ॥ 5 ॥

583. तत् अद्या चित् ते उक्थिनो, अनु स्तुवन्ति पूर्वथा ।

वृषपत्नीः अपो जया दिवे दिवे ॥ 6 ॥ 8-15-6

मन्त्रार्थ :- तत् = वह, उस को अद्या = आज चित् = भी, ही। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए उक्थिनो = कथनशील, कहने वाले अनु = पश्चात्, पीछे, स्तुवन्ति = स्तुति करते हैं पूर्वथा = पूर्व की भाँति वृषपत्नीः = वर्षा करने वाली ऐश्वर्यवती, पराक्रमी ऐश्वर्यवान् अपो = पालन करने वाला जया = जय करो दिवे = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में दिवे = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 6 ॥

पदार्थ :- तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। अद्या = आज (अव्यय)। चित् = भी, ही। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। उक्थिनो = कथनशील, कहने वाले (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)।

अनु = पश्चात्, पीछे, स्तुवन्ति = स्तुति करते हैं (स्तु - स्तुति करना)। पूर्वथा = पूर्व की भाँति (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। वृषपत्नीः = वर्षा करने वाली ऐश्वर्यवती, पराक्रमी ऐश्वर्यवान् (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। अपो = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। जया = जय करो (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। दिवे = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। दिवे = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 6 ॥

584. तव त्यत् इन्द्रियम् बृहत्, तव शुष्मम् उत क्रतुम्।

वज्रम् शिशाति धिषणा वरेण्यम् ॥ 7 ॥ 8-15-7

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा त्यत् = वह, उसने इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् तव = तुम्हारा शुष्मम् = शुष्म, सुखाने वाले को उत = ही, भी, ओर क्रतुम् = कर्म को वज्रम् = वज्र, गतिमान को शिशाति = तीक्ष्ण करता है, कल्याण करता है धिषणा = वाणी द्वारा वरेण्यम् = वरण योग्य ॥ 7 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। त्यत् = वह, उसने (सर्वनाम)। इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। शुष्मम् = शुष्म, सुखाने वाले को (शुष् - सुखाना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। क्रतुम् = कर्म को (कृ = करना)। वज्रम् = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना)। शिशाति = तीक्ष्ण करता है, कल्याण करता है (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना, शास् - शासन करना)। धिषणा = वाणी द्वारा (धिष् = शब्द करना, बोलना)। वरेण्यम् = वरण योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) ॥ 7 ॥

585. तव द्यौः इन्द्र पौंस्यम्, पृथिवी वर्धति श्रवः।

त्वाम् आपः पर्वतासः च हिन्विरे ॥ 8 ॥ 8-15-8

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा द्यौः = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली पौंस्यम् = बढ़ाने वाले को पृथिवी = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार वर्धति = बढ़ाती है श्रवः = श्रवण करने वाले त्वाम् = तुमको, तुम्हारी आपः = आप, व्याप्त, व्यापक पर्वतासः = पर्वत, पर्वतों ने च = और हिन्विरे = संतृप्त, तृप्ति करते हैं ॥ 8 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। द्यौः = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, प्रकाश होना, जानना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। पौंस्यम् = बढ़ाने वाले को (पुंस् - बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। पृथिवी = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। वर्धति = बढ़ाती है (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। श्रवः = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। आपः = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। पर्वतासः = पर्वत, पर्वतों ने (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। च = और (अव्यय)। हिन्विरे = संतृप्त, तृप्ति करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना) ॥ 8 ॥

586. त्वाम् विष्णुः बृहत् क्षयो, मित्रो गृणाति वरुणः।

त्वाम् शर्धः मदति अनु मारुतम् ॥ 9 ॥ 8-15-9

मन्त्रार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी विष्णुः = व्यापक, विष्णु ने बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् क्षयो = निवास मित्रो = मित्र गृणाति = वाणी, बोध, अभिसिंचन करता है वरुणः = वरुण त्वाम् = तुमको, तुम्हारी शर्द्धा = विजय, शर्द्ध, बल युक्त मदति = मद, हर्ष, तृप्त करता है अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल मारुतम् = मरणशील, मारुत को ॥ 9 ॥

पदार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। विष्णुः = व्यापक, विष्णु ने (विष्णु-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना, वी = जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना। सम - घेरना, घेर लेना, लपेटना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। क्षयो = निवास (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना, निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। गृणाति = वाणी, बोध, अभिसिंचन करता है (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। वरुणः = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। शर्द्धः = विजय, शर्द्ध, बल युक्त (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। मदति = मद, हर्ष, तृप्त करता है (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। मारुतम् = मरणशील, मारुत को (मृ = मरना, देहत्याग करना) ॥ 9 ॥

(178) सूक्त 16

587. प्र सम्राजम् चर्षणीनाम्, इन्द्रम् स्तोता नव्यम् गीर्भिः ।

नरम् नृषाहम् मंहिष्ठम् ॥ 1 ॥ 8-16-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सम्राजम् = सम्यक् प्रकाशमान चर्षणीनाम् = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का इन्द्रम् = इन्द्र को स्तोता = स्तुतिकर्ता नव्यम् = नवीनता, स्तुति को गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा नरम् = नर को नृषाहम् = नृषद मंहिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा को ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सम्राजम् = सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। चर्षणीनाम् = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। स्तोता = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। नव्यम् = नवीनता, स्तुति को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। नरम् = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। नृषाहम् = नृषद (नृ - ले जाना, सद्-सीद-सद्ल - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना, बैठना, चढ़ाई करना, सूखना)। मंहिष्ठम् = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 1 ॥

588. अपाम् नपातम् सुभगम्, सुदीदितिम् अग्निम् उ श्रेष्ठशोचिषम् ।

स नो मित्रस्य वरुणस्य सो, अपाम् आ सुम्नम् यक्षते दिवि ॥ 4 ॥ 8-16-4

मन्त्रार्थ :- अपाम् = अपा को, पालकों का नपातम् = प्राप्त किया सुभगम् = अच्छी सेवा, भजन को सुदीदितिम् = उत्तम क्षरण को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को उ = निश्चय ही, भी श्रेष्ठशोचिषम् = श्रेष्ठ-पवित्रता को स = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मित्रस्य = मित्र का वरुणस्य = वरुण का सो = वह, उसने अपाम् = अपा को, पालकों का आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सुम्नम् = सुविचार अथवा सृजन, रचनाशीलता को यक्षते = पूजा, सत्कार करता है दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। नपातम् = प्राप्त किया (न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, नप - पहुँचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। सुभगम् = अच्छी सेवा, भजन को (सु - सुन्दर, अच्छा, भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। सुदीदितिम् = उत्तम क्षरण को (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, दी - ह्रास (हरास) होना, झरना, नष्ट होना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। श्रेष्ठशोचिषम् = श्रेष्ठ-पवित्रता को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना, शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना)। स = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मित्रस्य = मित्र का (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। वरुणस्य = वरुण का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। सो = वह, उसने (सर्वनाम)। अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सुम्नम् = सुविचार अथवा सृजन, रचनाशीलता को (सु - अच्छा, सुन्दर, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। यक्षते = पूजा, सत्कार करता है (यक्ष = पूजा करना, पूजना, सत्कार करना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 4 ॥

(179) सूक्त 17

589. आ याहि सुषुमा हि ते, इन्द्र सोमम् पिबा इमम्।

आ इदम् बर्हिः सदो मम ॥ 1 ॥ 8-17-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें सुषुमा = सुसृजन किया, उत्तम उत्पन्न किया हि = ही, निश्चय ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को पिबा = पियो, पान करें इमम् = इसको आ = समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति इदम् = यह, सर्वनाम बर्हिः = बढ़ा हुआ, विराट, महान् सदो = विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य मम = मेरा ॥ 1 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। सुषुमा = सुसृजन किया, उत्तम उत्पन्न किया (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। पिबा = पियो, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। इमम् = इसको (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति। इदम् = यह, सर्वनाम। बर्हिः = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। सदो = विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। मम = मेरा (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

590. आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी, वहताम् इन्द्र केशिना।

उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥ 2 ॥ 8-17-2

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा ब्रह्मयुजा = ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त, विराट युक्त, बृहत् युक्त हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले वहताम् = वहन करें इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली केशिना = केशी द्वारा उप = समीप ब्रह्माणि = ब्रह्ममय नः = हमको, हमारे लिए, हमारा शृणु = सुनो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। ब्रह्मयुजा = ब्रह्मयुक्त, महान् युक्त, दीर्घ युक्त, विराट युक्त, बृहत् युक्त (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। वहताम् = वहन करें (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। केशिना = केशी द्वारा (किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। उप = समीप (उपसर्ग)। ब्रह्माणि = ब्रह्ममय (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। शृणु = सुनो (श्रु-शृण् = सुनना) ॥ 2 ॥

591. ब्रह्माणः त्वा युजा वयम्, सोमपाम् इन्द्र सोमिनः ।

सुतावन्तो हवामहे ॥ 3 ॥ 8-17-3

मन्त्रार्थ :- ब्रह्माणः = ब्रह्ममय त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा युजा = युक्त कीजिये वयम् = हम, हम सब, हम लोग सोमपाम् = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सोमिनः = सोमिन, सोम वाले सुतावन्तो = सुतावान्, रचनावान् हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- ब्रह्माणः = ब्रह्ममय (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। युजा = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। सोमपाम् = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोमिनः = सोमिन, सोम वाले (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। सुतावन्तो = सुतावान्, रचनावान् (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 3 ॥

592. अयम् ते इन्द्र सोमो, निपूतो अधि बर्हिषि ।

आ इहि ईम् अस्य द्रवा पिब ॥ 11 ॥ 8-17-11

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम निपूतो = निश्चित पवित्रकर्ता अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम इहि = जाओ, प्राप्त करो ईम् = समान, इस प्रकार अस्य = इसका द्रवा = प्रवाहकामी, ज्ञान पिब = पी लो ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। निपूतो = निश्चित पवित्रकर्ता (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह -

वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इहि** = जाओ, प्राप्त करो (ई - जाना)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **द्रवा** = प्रवाहकामी, ज्ञान (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **पिब** = पी लो (पी-पिब - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 11 ॥

593. शाचिगो शाचिपूजन, अयम् रणाय ते सुतः ।

आखण्डल प्र हूयसे ॥ 12 ॥ 8-17-12

मन्त्रार्थ :- शाचिगो = स्पष्ट वक्ता को शाचिपूजन = हे स्पष्टवक्ताओं को पूजने वाले! अयम् = यह रणाय = रण, शब्द के लिए ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए आखण्डल = हे खण्डनकर्ता! प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक हूयसे = आह्वान करते हो, दान करते हो ॥ 12 ॥

पदार्थ :- शाचिगो = स्पष्ट वक्ता को (शच = स्पष्ट बोलना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। शाचिपूजन = हे स्पष्टवक्ताओं को पूजने वाले (शच = स्पष्ट बोलना, पूज् - पूजा करना, अर्चा करना, सम्मान करना)। अयम् = यह (सर्वनाम)। रणाय = रण, शब्द के लिए (रण - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। आखण्डल = हे खण्डनकर्ता! (आ = सम्यक्, समन्तात्, सम्पूर्ण, खण्ड - टुकड़े करना, विभाग करना, खण्डित करना, मथना, बिलोना, कूटना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। हूयसे = आह्वान करते हो, दान करते हो (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 12 ॥

594. यः ते शृङ्गवृषो नपात्, प्रणपात् कुण्डपायः ।

नि अस्मिन् दध आ मनः ॥ 13 ॥ 8-17-13

मन्त्रार्थ :- यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शृङ्गवृषो = शृङ्गवृष, विद्वान् पराक्रमी नपात् = प्राप्त किया प्रणपात् = अधिक प्राप्त किया कुण्डपायः = रक्षकों का रक्षक, कुण्ड-पालक नि = निश्चित, निरन्तर अस्मिन् = इस, इसमें दध = धारण किया आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मनः = मन ॥ 13 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। शृङ्गवृषो = शृङ्गवृष, विद्वान् पराक्रमी (श्रु-शृण् = सुनना, जाना, शृ = मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। नपात् = प्राप्त किया (न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। प्रणपात् = अधिक प्राप्त किया (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। कुण्डपायः = रक्षकों का रक्षक, कुण्ड-पालक (कुण्ड - कुण्ठित करना, दुःखादि से कुण्ठित होना, कुण्ड - जलना। कुण्ड - असत्य बोलना, कुण्ड - रक्षा करना, संभालना, पय् - चलना, जाना, रक्षा करना, पालन करना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। अस्मिन् = इस, इसमें (सर्वनाम)। दध = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मनः = मन (मन् = जानना, समझना, रुकना) ॥ 13 ॥

595. वास्तोः पते ध्रुवा स्थूणाम्, सत्रम् सोम्यानाम् ।

द्रप्सः पुराम् भेत्ता, शश्वतीनाम् इन्द्रो मुनीनाम् सखा ॥ 14 ॥ 8-17-14

मन्त्रार्थ - वास्तोः = वास करने वाले, निवास करने वाले पते = वास्तोष्पत के लिए ध्रुवा = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् स्थूणाम् = स्थूयों का सत्रम् = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी को सोम्यानाम् = सौम्य, ऐश्वर्यवान् का द्रप्सः = हर्ष, आनन्द, गर्व पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को भेत्ता = भय शश्वतीनाम् =

शश्वत को इन्द्रो = परम ऐश्वर्यवान् मुनीनाम् = मुनीयों का सखा = मित्र ॥ 14 ॥

पदार्थ - वास्तोः = वास करने वाले, निवास करने वाले (वस् = रहना, निवास करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पते** = पत के लिए (वस् = रहना, निवास करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **ध्रुवा** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **स्थूणाम्** = स्थूयों का (स्था - स्थित होना, ठहरना)। **सत्रम्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी को (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। **सोम्यानाम्** = सौम्य, ऐश्वर्यवान् का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू - प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्रप्सः** = हर्ष, आनन्द, गर्व (दृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **भेत्ता** = भय (भी - डरना, घबराना)। **शश्वतीनाम्** = शश्वत को (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मुनीनाम्** = मुनीयों का (मुण - प्रण करना, वचन देना, शब्द करना, सींचना, मु - बाँधना, मू - बांधना, जकड़ना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ 14 ॥

(180) सूक्त 18

596. उत स्या नो दिवा मतिः, अदितिः ऊत्या अगमत्।

सा शन्ताति मयः करत् अप स्त्रिधः ॥ 7 ॥ 8-18-7

मन्त्रार्थ - उत = ही **स्या** = वह, बन्धन **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **मतिः** = मति, मननशक्ति **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी **ऊत्या** = वाणी, रक्षा द्वारा **अगमत्** = गये, पाया, प्राप्त हुए **सा** = वह **शन्ताति** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **मयः** = गति, ज्ञान **करत्** = करते हुए **अप** = दूर, नीचे, अपकार **स्त्रिधः** = स्त्रिध ॥ 7 ॥

पदार्थ - उत = ही (अव्यय)। **स्या** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्। सि = बाँधना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम्)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **मतिः** = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **ऊत्या** = वाणी, रक्षा द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **अगमत्** = गये, पाया, प्राप्त हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **सा** = वह (सर्वनाम्)। **शन्ताता** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **मयः** = गति, ज्ञान (मय् - जाना, जानना, पाना)। **करत्** = करते हुए (कृ - करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **स्त्रिधः** = स्त्रिध (सृधु - मर्दन करना, सम्पीडन करना, सू - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना। सु = जाना, जानना, पाना) ॥ 7 ॥

597. अप अमीवाम् अप स्त्रिधम्, अप सेधत दुर्मतिम्।

आदित्यासो युयोतना नो अंहस ॥ 10 ॥ 8-18-10

मन्त्रार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार करो **अमीवाम्** = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक, रोग को **अप** = दूर, नीचे, अपकार करो **स्त्रिधम्** = स्त्रिध, हिंसा करने वाले को **अप** = दूर, नीचे, अपकार **सेधत** = सिद्ध हो **दुर्मतिम्** = दुर्मति को **आदित्यासो** = हे आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी **युयोतना** = अलग करे, मिलाये **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **अंहस** = प्रकाशमान से ॥ 10 ॥

पदार्थ - अप = दूर, नीचे, अपकार करो (उपसर्ग)। **अमीवाम्** = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक, रोग को (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार करो (उपसर्ग)। **स्त्रिधम्** = स्त्रिध, हिंसा करने वाले को (सृधु - मर्दन करना, सम्पीडन करना,। सृ - मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, स्त्रु = जाना, जानना, पाना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **सेधत** = सिद्ध हो (सिध् = जाना, सिद्ध होना)। **दुर्मतिम्** = दुर्मति को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, मन् - मनन करना, विचार करना, जानना, समझना)। **आदित्यासो** = हे आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **युयोतना** = अलग करे, मिलाये (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गुँथना, यु- पृथक् पृथक् करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अंहस** = प्रकाशमान से (अंह = प्रकाशित होना, चमकना, शब्द करना, कुटिल गति करना, मथना) ॥ 10 ॥

598. तुचे तुनाय तत् सु नो, द्राघीय आयुः जीवसे ।

आदित्यासः समहसः कृणोतन ॥ 18 ॥ 8-18-18

मन्त्रार्थ - तुचे = गति, वृद्धि, प्रकाश करते हैं **तुनाय** = गति, वृद्धि, पूर्ण करने के लिए **तत्** = वह, उस को **सु** = सुन्दर, अच्छा **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **द्राघीय** = समर्थ, सरल, सूचना देने वाले **आयुः** = आयु **जीवसे** = जीव के लिए, जीवन के लिए **आदित्यासः** = हे आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी **समहसः** = सम्यक् व्याप्त **कृणोतन** = करो ॥ 18 ॥

पदार्थ - तुचे = गति, वृद्धि, प्रकाश करते हैं (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल, दान, निवास, प्रकाश करना)। **तुनाय** = गति, वृद्धि, पूर्ण करने के लिए (तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **सु** = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **द्राघीय** = समर्थ, सरल, सूचना देने वाले (द्राघ - सामर्थ्य होना, तानना, लम्बा करना, सूचना करना, पीड़ा होना, सरल होना)। **आयुः** = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **जीवसे** = जीव के लिए, जीवन के लिए (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना)। **आदित्यासः** = हे आदित्यगण, अदिति, अक्षय-अविनाशी (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **समहसः** = सम्यक् व्याप्त (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अह्-अहनु - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, व्याप्त होना, विस्तार करना, अर्पण करना, समर्पण करना, देना, हस्-हंस् = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **कृणोतन** = करो (कृ = करना) ॥ 18 ॥

(181) सूक्त 19

599. तम् गूर्धया स्वः नरम् देवासो, देवम् अरतिम् दधन्चिरे ।

देवत्रा हव्यम् ऊहिषे ॥ 1 ॥ 8-19-1

मन्त्रार्थ - तम् = उसको, उसे **गूर्धया** = प्रयास, शब्द करो **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् **नरम्** = नर को **देवासो** = देवगण **देवम्** = देव को **अरतिम्** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले **दधन्चिरे** = दधन्चिर के लिए **देवत्रा** = देवों का त्राण करने वाले **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को **ऊहिषे** = तर्क, विचार करने के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **गूर्धया** = प्रयास, शब्द करो (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुर्द - क्रीड़ा करना, खेलना)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **नरम्** = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **देवासो** = देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अरतिम्** = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व

दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **दधन्चिरे** = दधन्चिर के लिए (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **देवत्रा** = देवों का त्राण करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, त्रै - त्राण करना, रक्षा करना)। **हव्यम्** = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ऊहिषे** = तर्क, विचार करने के लिए (ऊह् = परिकल्पना करना, तर्क करना) ॥ 1 ॥

600. विभूतरातिम् विप्र चित्रशोचिषम्, अग्निम् ईडिष्व यन्तुरम्।

अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे, प्र ईम् अध्वराय पूर्व्यम् ॥ 2 ॥

8-19-2

मन्त्रार्थ :- विभूतरातिम् = विभूत-राति को विप्र = विशेष पूर्ण करने वाले चित्रशोचिषम् = चित्र-पवित्रता को, विचित्र-शुद्धता को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को ईडिष्व = स्तुत्य यन्तुरम् = पोषणकर्ता को अस्य = इसका मेधस्य = मेध का सोम्यस्य = सोम का सोभरे = हे प्रकाशमान प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ईम् = समान, इस प्रकार अध्वराय = अध्वर, अहिंसक के लिए पूर्व्यम् = पहले, पूर्व ॥ 2 ॥

पदार्थ :- विभूतरातिम् = विभूत-राति को (वि = विशेष, विविध, विना, विलोम (उपसर्ग), भू - होना, पाना, चिन्तन करना, रा - देना, मिल जाना)। विप्र = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। चित्रशोचिषम् = चित्र-पवित्रता को, विचित्र-शुद्धता को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ईडिष्व = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। यन्तुरम् = पोषणकर्ता को (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। मेधस्य = मेध का (मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। सोम्यस्य = सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सोभरे = हे प्रकाशमान (सु = अच्छा (उपसर्ग), सुभ = बोलना, दुःख देना, मारना, सुन्दर होना, भा - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर दीखना, फूँकना, धौंकना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। अध्वराय = अध्वर, अहिंसक के लिए (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। पूर्व्यम् = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना) ॥ 2 ॥

601. यजिष्ठम् त्वा ववृमहे, देवम् देवत्रा होतारम् अमर्त्यम्।

अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥ 3 ॥

8-19-3

मन्त्रार्थ - यजिष्ठम् = देवपूजक को त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा ववृमहे = वरण करते हैं देवम् = देव को देवत्रा = देवों का त्राण करने वाले होतारम् = हवन करने वाले को अमर्त्यम् = अमर्त्य को अस्य = इसका यज्ञस्य = यजन का सुक्रतुम् = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता को ॥ 3 ॥

पदार्थ - यजिष्ठम् = देवपूजक को (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। ववृमहे = वरण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवत्रा = देवों का त्राण करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, त्रै - त्राण करना, रक्षा करना)। होतारम् = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। अमर्त्यम् = अमर्त्य को (अ = नहीं, मृ = मरना,

देहत्याग करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। सुक्रतुम् = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता को (कृ - करना) ॥ 3 ॥

602. तत् अग्ने द्युम्नम् आ भर, यत् सासहत् आ सदने, कञ्चित् अत्रिणम्।

मन्युम् जनस्य दूढ्यम् ॥ 15 ॥

8-19-15

मन्त्रार्थ - तत् = वह, उस को अग्ने = अग्नि का द्युम्नम् = प्रकाशमान को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो यत् = जिसे, जो सासहत् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सदने = सदन में, स्थान में कञ्चित् = किसी को, क्या अत्रिणम् = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को मन्युम् = मन्यु को जनस्य = जन का दूढ्यम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी को ॥ 15 ॥

पदार्थ - तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। अग्ने = अग्नि का (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। द्युम्नम् = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। सासहत् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सदने = सदन में, स्थान में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। कञ्चित् = किसी को, क्या (सर्वनाम)। अत्रिणम् = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। मन्युम् = मन्यु को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। जनस्य = जन का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। दूढ्यम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी को (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना) ॥ 15 ॥

603. भद्रो नो अग्निः आहुतो, भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः।

भद्राः उत प्रशस्तयः ॥ 19 ॥ 8-19-19

मन्त्रार्थ - भद्रो = कल्याण करने वाला, कल्याणकारी नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् आहुतो = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त भद्रा = कल्याणकारी रातिः = अनुदान सुभग = अच्छी सेवा, भजन भद्रो = कल्याण करने वाला, कल्याणकारी अध्वरः = अहिसक, अवर्णनीये भद्राः = कल्याणकारी उत = ही प्रशस्तयः = प्रशस्तियाँ ॥ 19 ॥

पदार्थ - भद्रो = कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। आहुतो = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, हवे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। भद्रा = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। रातिः = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। सुभग = अच्छी सेवा, भजन (सु - सुन्दर, अच्छा, भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। भद्रो = कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। अध्वरः = अहिसक, अवर्णनीये (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। भद्राः = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। उत = ही (अव्यय)। प्रशस्तयः = प्रशस्तियाँ (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना) ॥ 19 ॥

604. भद्रम् मनः कृणुषु आ वृत्रतूर्ये, येन आ समत्सु सासहिः।

अव स्थिरा तनुहि भूरि, शर्धताम् वनेम आ ते अभिष्टये ॥ 20 ॥ 8-19-20

मन्त्रार्थ :- भद्रम् = कल्याणकारी को मनः = मन कृणुषु = करो आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वृत्रतूर्ये = वरणीय, सेवा, प्रकाश की शीघ्रता में येन = जिससे, जिसके द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में सासहिः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले अव = नीचे, दूर, प्राप्त स्थिरा = स्थिर तनुहि = विस्तार करो भूरि = बहु, बहुत शर्धताम् = शर्द्ध हो, बल हो वनेम = बोलें, सेवा करें आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अभिष्टये = सर्वथा इष्ट करने वाले के लिए, अभीष्ट के लिए ॥ 20 ॥

पदार्थ :- भद्रम् = कल्याणकारी को (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। मनः = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। कृणुषु = करो (कृ = करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वृत्रतूर्ये = वरणीय, सेवा, प्रकाश की शीघ्रता में (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, तुर = शीघ्र जाना, त्वरा करना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। सासहिः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। अव = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। स्थिरा = स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। तनुहि = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। भूरि = बहु, बहुत (अव्यय, सर्वनाम)। शर्धताम् = शर्द्ध हो, बल हो (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। वनेम = बोलें, सेवा करें (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अभिष्टये = सर्वथा इष्ट करने वाले के लिए, अभीष्ट के लिए (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इष् = इच्छा करना, चाहना) ॥ 20 ॥

605. प्र सो अग्ने तव ऊतिभिः, सुवीराभिः तिरते वाजकर्मभिः ।

यस्य त्वम् सख्यम् आविथ ॥ 30 ॥ 8-19-30

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सो = वह, उसने अग्ने = हे अग्नि तव = तुम्हारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा सुवीराभिः = उत्तम वीर द्वारा तिरते = तैरने के लिए वाजकर्मभिः = वाज कर्म द्वारा यस्य = जिसका त्वम् = तुम सख्यम् = सखाभाव, मित्रता आविथ = आविथ ॥ 30 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सो = वह, उसने। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। सुवीराभिः = उत्तम वीर द्वारा (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। तिरते = तैरने के लिए (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। वाजकर्मभिः = वाज कर्म द्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, कृ - करना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। सख्यम् = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। आविथ = आविथ (विथ - याचना, करना, मांगना) ॥ 30 ॥

606. तव द्रप्सो नीलवान् वाशः ऋत्विग्यः, इन्धानः सिष्णो आ ददे ।

त्वम् महीनाम् उषसाम् असि, प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥ 2 ॥ 8-19-31

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा द्रप्सो = हर्ष, आनन्द, गर्व नीलवान् = नील युक्त वाशः = प्रकाश, इच्छा करने वाले ऋत्विग्यः = ऋतुओं का इन्धानः = प्रकाशित होने वाले, प्रकाशित करने वाले सिष्णो = प्रोक्षण करने वाले, सिञ्चन करने

वाले आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ददे = दिया, दान किया त्वम् = तुम महीनाम् = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का उषसाम् = प्रभात, हिंसा को असि = हो प्रियः = प्रिय क्षपो = प्रेरक, सहनशील, संयमी वस्तुषु = वस्तुओं में राजसि = प्रकाशमान् ॥ 31 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। द्रप्सो = हर्ष, आनन्द, गर्व (दृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। नीलवान् = नील युक्त (नील = रंगना, रंगाना, नीलरंग लगाना)। वाशः = प्रकाश, इच्छा करने वाले (वश - प्रकाश करना, इच्छा करना, चाहना)। ऋत्वियः = ऋतुओं का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। इन्धानः = प्रकाशित होने वाले, प्रकाशित करने वाले (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। सिष्णो = प्रोक्षण करने वाले, सिञ्चन करने वाले (सिष् - सिञ्च - छिड़कना, प्रोक्षण करना, छीटा देना, सींचना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। ददे = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। महीनाम् = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। उषसाम् = प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। असि = हो (अस् - होना)। प्रियः = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। क्षपो = प्रेरक, सहनशील, संयमी (क्षप = प्रेरणा करना, भेजना, सहन करना, हूकना, संयमी होना)। वस्तुषु = वस्तुओं में (वस्त - प्रेरणा करना, प्रातः होना, प्रभात होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। राजसि = प्रकाशमान् (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) ॥ 31 ॥

(182) सूक्त 20

607. आ गन्ता मा रिषण्यत, प्रस्थावानो मा अप रथात समन्यवः ।

दृढा चित् यमयिष्णवः ॥ 1 ॥

8-20-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम गन्ता = गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। रिषण्यत = हिंसक करो (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। प्रस्थावानो = हे प्रस्था के समान, प्रकृष्ट स्थिति के समान (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्थ = स्थित होना, ठहरना)। मा = नहीं अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। रथात = स्थित (स्था- स्थित होना, ठहरना)। समन्यवः = साथ मनन करने वाले (स- सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। दृढा = दृढ़ (दृद्-दृढ - दृढ़ होना, धारण करना, सहना, समर्थ होना, दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना) चित् = भी, ही। यमयिष्णवः = नियमन करने वाले, पोषण करने वाले हैं (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना) ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। गन्ता = गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। रिषण्यत = हिंसक करो (रिश्-रिष - हिंसा करना, मार डालना या दुःख देना, मारने का यत्न करना)। प्रस्थावानो = हे प्रस्था के समान, प्रकृष्ट स्थिति के समान (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्थ = स्थित होना, ठहरना)। मा = नहीं, मत, मुझे (मा - नहीं, अव्यय, मा-माम् - मुझे, सर्वनाम)। अप= दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। रथात = स्थित (स्था- स्थित होना, ठहरना)। समन्यवः = साथ मनन करने वाले (स- सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। दृढा = दृढ़ (दृद्-दृढ - दृढ़ होना, धारण करना, सहना, समर्थ होना, दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना) चित् = भी, ही। यमयिष्णवः = नियमन करने वाले, पोषण करने वाले हैं (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना) ॥ 1 ॥

608. गावः चित् घा समन्यवः, सजात्येन मरुतः सबन्धवः ।

रिहते ककुभो मिथः ॥ 21 ॥ 8-20-21

मन्त्रार्थ - गावः = शब्द, वाणी, वचन चित् = भी, ही घा = ही **समन्यवः** = साथ मनन करने वाले **सजात्येन** = जन्मे लोगों, सहजन्माओं के **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का **सबन्धवः** = बन्धु सहित **रिहते** = स्तुति, दान करते हैं **ककुभो** = ककुभ, गर्वित, चञ्चल, प्यासा, धारण करने वाला **मिथः** = एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी ॥ 21 ॥

पदार्थ - गावः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **चित्** = भी, ही। **घा** = ही (अव्यय, निपात)। **समन्यवः** = साथ मनन करने वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **सजात्येन** = जन्मे लोगों, सहजन्माओं के (स - साथ, सहित, सज्, संज = सम्बन्धी होना, आलिंगन करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **मरुतः** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सबन्धवः** = बन्धु सहित (बन्ध - बांधना)। **रिहते** = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। **ककुभो** = ककुभ, गर्वित, चञ्चल, प्यासा, धारण करने वाला (कक - गर्व करना, चञ्चल होना, प्यासा होना, कुभ - धारण करना, घर्षण करना)। **मिथः** = एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी (मिथ् - समझना, जानना, पीड़ा करना, दुःख देना, एकत्र करना, जोड़ना, जुड़ाना, संयुक्त करना) ॥ 21 ॥

अनुवाकः- 60

(183) सूक्त 21

609. वयम् उ त्वाम् अपूर्य स्थूरम्, न कच्चित् भरन्तो अवस्यवः ।

वाजे चित्रम् हवामहे ॥ 1 ॥ 8-21-1

मन्त्रार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग उ = निश्चय ही, भी त्वाम् = तुमको, तुम्हारी **अपूर्य** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण **स्थूरम्** = स्थूर को, स्थूल को न = नहीं, समान, उपमार्थक **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **चित्** = भी, ही। **भरन्तो** = भरण करने वाले **अवस्यवः** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **वाजे** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **अपूर्य** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **स्थूरम्** = स्थूर को, स्थूल को (स्था - स्थित होना, ठहरना, स्थूल = मोटा होना, स्थूल होना, शरीर पुष्ट होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **चित्** = भी, ही। **भरन्तो** = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **अवस्यवः** = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वज्रिन्** = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 1 ॥

610. उप त्वा कर्मन् ऊतये, सः नो युवा उग्रः चक्राम यो धृषत् ।

त्वाम् इत् अवितारम् ववृमहे, सखाय इन्द्र सानसिम् ॥ 2 ॥

8-21-2

मन्त्रार्थ :- उप = समीप त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **कर्मन्** = कर्म **ऊतये** = रक्षा के लिए **सः** = वह, उसने। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **युवा** = युवा **उग्रः** = उग्र **चक्राम** = किया **यो** = जो **धृषत्** = विजय, गर्व **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **इत्** = ही **अवितारम्** = रक्षक को **ववृमहे** = वरण करते हैं **सखाय** = मित्र **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **सानसिम्**

= सेवाभावी, दानी, सेवनीय को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। कर्मन् = कर्म (कृ = करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। स = वह, उसने। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। युवा = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। उग्रः = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। चक्राम = किया (कृ - करना)। यो = जो (सर्वनाम)। धृषत् = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। अवितारम् = रक्षक को (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। ववृमहे = वरण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। सखाय = मित्र (सख् = मित्र होना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सानसिम् = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 2 ॥

611. आ याहि इमे इन्द्रवो, अश्वपते गोपते उर्वरापते।

सोमम् सोमपते पिब ॥ 3 ॥

8-21-3

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें इमे = यह इन्द्रवो = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् अश्वपते = हे अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक गोपत = हे रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक उर्वरापते = हे बहुत इच्छा, गति युक्त, बहु-दुःखदायी की रक्षा, पालन करने वाला सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को सोमपते = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तर्कर्ता सोम का पालक, रक्षक पिब = पी लो ॥ 3 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। इन्द्रवो = इन्दु, परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। अश्वपते = हे अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। गोपत = हे रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। उर्वरापते = हे बहुत इच्छा, गति युक्त, बहु-दुःखदायी की रक्षा, पालन करने वाला (उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, उर्व - सहना, समर्थ होना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सोमपते = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तर्कर्ता सोम का पालक, रक्षक (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। पिब = पी लो (पी-पिब - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 3 ॥

612. सीदन्तः ते वयो यथा, गोश्रीते मधौ मदरे विवक्षणे।

अभि त्वाम् इन्द्र नोनुमः ॥ 5 ॥

8-21-5

मन्त्रार्थ - सीदन्तः = बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वयो = वय, रचना, विद्या का उपदेश यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार गोश्रीते = शब्दों द्वारा, ज्ञान द्वारा व्याप्त होना, आश्रय होना मधौ = मधु में मदरे = अति आनन्दित करने वाले के लिए विवक्षणे = हे विशेष वक्ष अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा त्वाम् = तुमको, तुम्हारी इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली नोनुमः = स्तुति करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ - सीदन्तः = बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वयो = वय, रचना, विद्या

का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **गोश्रीते** = शब्दों द्वारा, ज्ञान द्वारा व्याप्त होना, आश्रय होना (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना,)। **मधौ** = मधु में (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदिरे** = अति आनन्दित करने वाले के लिए (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **विवक्षणे** = हे विशेष वक्ष (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **नोनुमः** = स्तुति करते हैं (नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ 5 ॥

613. यो नः इदम् इदम् पुरा, प्र वस्यः आनिनाय तम् उ वः स्तुषे ।

सखाय इन्द्रम् ऊतये ॥ 9 ॥ 8-21-9

मन्त्रार्थ - यो = जो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इदम् = यह, इसको इदम् = यह, इसको पुरा = पहले प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वस्यः = वस्य, वसने योग्य आनिनाय = सम्यक् चेतन किया, जीवन दिया तम् = उसको, उसे उ = निश्चय ही, भी वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए स्तुषे = स्तुति करता है सखाय = हे मित्र इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को ऊतये = रक्षा के लिए ॥ 9 ॥

पदार्थ - यो = जो। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। पुरा = पहले (अव्यय)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वस्यः = वस्य, वसने योग्य (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। आनिनाय = सम्यक् चेतन किया, जीवन दिया (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन् - चेतन होना, प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। स्तुषे = स्तुति करता है (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। सखाय = हे मित्र (सख् = मित्र होना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 9 ॥

614. त्वया ह स्वित् युजा वयम्, प्रति श्वसन्तम् वृषभ ब्रुवीमहि ।

संस्थे जनस्य गोमतः ॥ 11 ॥

8-21-11

मन्त्रार्थ - त्वया = तुम्हारे द्वारा, तुमसे ह = ही, निश्चय ही स्वित् = ही युजा = युक्त कीजिये वयम् = हम, हम सब, हम लोग प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में श्वसन्तम् = श्वनिन को वृषभ = पराक्रमी ब्रुवीमहि = कहें संस्थे = संस्था के लिए सम्यक् स्थित को, जनस्य = जन गोमतः = गोकुल का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले ॥ 11 ॥

पदार्थ - त्वया = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। ह = ही, निश्चय ही (अव्यय)। स्वित् = ही (इत् = ही (अव्यय)। युजा = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। श्वसन्तम् = श्वनिन को (श्व-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना, श्वित - श्वेत होना, शुभ्र होना, शो - तीक्ष्ण करना, पैना करना, शान धरना, छील के पैना करना, शिव = जानना, जाना, बढ़ना)। वृषभ = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। ब्रुवीमहि = कहें (ब्रू - कहना, बोलना)। संस्थे = संस्था के लिए सम्यक् स्थित को, (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), स्था - स्थित होना, ठहरना)। जनस्य = जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। गोमतः = गोकुल का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों,

मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ 11 ॥

615. अभ्रातृव्यो अना त्वम्, अनापिः इन्द्र जनुषा सनात् असि ।

युधा इत् आपित्वम् इच्छसे ॥ 13 ॥

8-21-13

मन्त्रार्थ - अभ्रातृव्यो = भ्रातृव्यहीन, अभरणीय, भरण के अयोग्य अना = जीवन, प्राण, चेतना त्वम् = तुम अनापिः = अनापि, अरक्षित इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली जनुषा = जनों, लोगों, जन्म से सनात् = सेवा से असि = हो युधा = युद्ध करने वाला इत् = ही आपित्वम् = पालन, रक्षण करने को इच्छसे = इच्छा करता है, चाहता है, कामना करता है

पदार्थ - अभ्रातृव्यो = भ्रातृव्यहीन, अभरणीय, भरण के अयोग्य (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भृ = भरना, भरण करना, तृ - तरना, पार करना, तैरना)। अना = जीवन, प्राण, चेतना (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, अन - चेतन होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। अनापिः = अनापि, अरक्षित (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, अप - पालन करना, पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। जनुषा = जनों, लोगों, जन्म से (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। सनात् = सेवा से (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। असि = हो (अस् - होना)। युधा = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। इत् = ही (अव्यय)। आपित्वम् = पालन, रक्षण करने को (अप - पालन करना, पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। इच्छसे = इच्छा करता है, चाहता है, कामना करता है (इच्छ = इच्छा करना, कामना करना, चाहना) ॥ 13 ॥

616. न की रेवन्तम् सख्याय, विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः ।

यदा कृणोषि नदनुम् सम् ऊहसि, आत् इत् पिता इव हूयसे ॥ 14 ॥

8-21-14

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक की = कोई, किसी रेवन्तम् = रेवन्त, प्रगतिशील, विद्वान् को सख्याय = सखाभाव, मित्रता के लिए, मित्र के लिए, सखा के लिए विन्दसे = प्राप्त करता है पीयन्ति = पीते हैं, पान करते हैं ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुराश्वः = सुव्यापक, सामर्थ्ययुक्त ऐश्वर्यवान् यदा = जब कृणोषि = करते हैं नदनुम् = शब्द करने वाले, प्रकाश करने वाले को सम् = सम्यक्, भलीभाँति, ऊहसि = ऊहन करते हो, तर्क करते हो आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण इत् = ही पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता इव = समान, की भाँति, के समान हूयसे = आह्वान करते हो, दान करते हो ॥ 14 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। की = कोई, किसी (अव्यय)। रेवन्तम् = रेवन्त, प्रगतिशील, विद्वान् को (रिक् = उड़ना, तैरना, बहना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। सख्याय = सखाभाव, मित्रता के लिए, मित्र के लिए, सखा के लिए (सख् = मित्र होना)। विन्दसे = प्राप्त करता है (विन्द - लाभ होना, प्राप्त करना, सम्पादित करना)। पीयन्ति = पीते हैं, पान करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सुराश्वः = सुव्यापक, सामर्थ्ययुक्त ऐश्वर्यवान् (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सुर - अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। यदा = जब (सर्वनाम)। कृणोषि = करते हैं (कृ = करना)। नदनुम् = शब्द करने वाले, प्रकाश करने वाले को (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। सम् = सम्यक्, भलीभाँति, ऊहसि = ऊहन करते हो, तर्क करते हो (ऊह = परिकल्पना करना, तर्क करना)। आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। इत् = ही (अव्यय)। पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। हूयसे = आह्वान करते हो, दान करते हो (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 14 ॥

617. ईडिष्वा हि प्रतीव्यम्, यजस्व जातवेदसम्।

चरिष्णुधूमम् अगृभीत शोचिषम् ॥ 1 ॥ 8-23-1

मन्त्रार्थ - ईडिष्वा = स्तुत्य हि = ही, निश्चय प्रतीव्यम् = प्रत्येक में व्याप्त यजस्व = यजन करो जातवेदसम् = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को चरिष्णु-धूमम् = चरिष्णुधूम को अगृभीत = गर्भ हुआ, सिंचन किया शोचिषम् = पवित्रता को ॥ 1 ॥

पदार्थ - ईडिष्वा = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। प्रतीव्याम् = प्रत्येक में व्याप्त (प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय) वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। यजस्व = यजन करो (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। जातवेदसम् = जातवेद को, जन्म से विद्वान् को, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले को (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। चरिष्णु-धूमम् = चरिष्णुधूम को (चर् = विचरना, आचरण करना, धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। अगृभीत = गर्भ हुआ, सिंचन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गृ = सींचना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना, गृह - ग्रहण लेना, स्वीकार करना)। शोचिषम् = पवित्रता को (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना) ॥ 1 ॥

618. यद् वा उ विशपतिः शितः, सुप्रीतो मनुषो विशि।

विश्व इत् अग्निः प्रति, रक्षांसि सेधति ॥ 13 ॥ 8-23-13

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो वा = अथवा उ = निश्चय ही, भी विशपतिः = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी शितः = शित, तीक्ष्ण, श्रुति सुप्रीतो = सुप्रीत मनुषो = विचारशील का विशि = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी विश्व = सभी इत् = ही अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में रक्षांसि = रक्षक सेधति = सिद्ध करता है ॥ 13 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। वा = अथवा (अव्यय)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। विशपतिः = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। शितः = शित, तीक्ष्ण, श्रुति (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। सुप्रीतो = सुप्रीत (सु = अच्छा (उपसर्ग)। प्री = प्रेम करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। मनुषो = विचारशील का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। विशि = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। विश्व = सभी। इत् = ही (अव्यय)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। रक्षांसि = रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। सेधति = सिद्ध करता है (सिध् = जाना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना) ॥ 13 ॥

619. श्रुष्टी अग्ने नवस्य मे, स्तोमस्य वीर विशपते।

नि मायिनः तपुसा रक्षसो दह ॥ 14 ॥ 8-23-14

मन्त्रार्थ - श्रुष्टि = श्रुष्टि अग्ने = हे अग्नि नवस्य = स्तुति के लिए मे = मेरा, मेरे लिए स्तोमस्य = स्तोम के लिए वीर = पराक्रमी, वीर विशपते = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी नि = निश्चित, निरन्तर मायिनः = माया वालों का तपुसा = तप द्वारा रक्षसो = रक्षा करने वाला, रक्षस् दह = जलाओ ॥ 14 ॥

पदार्थ - श्रुष्टि = श्रुष्टि (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नवस्य = स्तुति के लिए (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। मे = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। स्तोमस्य = स्तोम के लिए (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। वीर = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। विशपते

= विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। **मायिनः** = माया वालों का (मय - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **तपुसा** = तप द्वारा (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **दह** = जलाओ (दह - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना) ॥ 14 ॥

620. न तस्य मायया च न, रिपुः ईशीत मर्त्यः ।

यो अग्नये ददाश हव्यदातिभिः ॥ 15 ॥ 8-23-15

मन्त्रार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक **तस्य** = उसका **मायया** = माया द्वारा **च** = और **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **रिपुः** = हिंसक **ईशीत** = ऐश्वर्य व अधिकार हो, शासन करे **मर्त्यः** = मरणशील **यो** = जो **अग्नये** = अग्नि के लिए **ददाश** = दिया है **हव्यदातये** = हव्यदाता के लिए ॥ 15 ॥

पदार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तस्य** = उसका (सर्वनाम)। **मायया** = माया द्वारा (मय - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **च** = और। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रिपुः** = हिंसक (रि = हिंसा करना, जानना)। **ईशीत** = ऐश्वर्य व अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यो** = जो। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ददाश** = दिया है (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **हव्यदातये** = हव्यदाता के लिए (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना, दा - दान करना, देना) ॥ 15 ॥

(185) सूक्त 24

621. सखायः आ शिषामहि, ब्रह्म इन्द्राय वज्रिणे ।

स्तुषे उ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥ 1 ॥ 8-24-1

मन्त्रार्थ - **सखायः** = हे मित्र **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **शिषामहि** = शिष द्वारा, प्रयोजन द्वारा, अनुशासन द्वारा **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए **स्तुषे** = स्तुति करते हैं **उ** = निश्चय ही, भी **षु** = उत्तम, अच्छा **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **नृतमाय** = नरों में उत्तम, श्रेष्ठजन **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - **सखाय** = हे मित्र (सख् = मित्र होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **शिषामहि** = शिष द्वारा, प्रयोजन द्वारा, अनुशासन द्वारा (शिष् - प्रयोजन करना, शेष रखना, अनुशासन करना, आशीर्वाद देना, हिंसा करना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **स्तुषे** = स्तुति करते हैं (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **षु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **नृतमाय** = नरों में उत्तम, श्रेष्ठजन (नृ - ले जाना)। **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना) ॥ 1 ॥

622. आ इन्दुम् इन्द्राय सिञ्चत, पिबाति सोम्यम् मधु ।

प्र राधसा चोदयाते महित्वना ॥ 13 ॥

8-24-13

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इन्दुम्** = इन्दु, ऐश्वर्यवान को **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **सिञ्चत** = सिञ्चन करो **पिबाति** = पान, संरक्षण करते हैं **सोम्यम्** = सौम्य, ऐश्वर्य की **मधु** = मीठा, मधु **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **राधसा** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **चोदयाते** = प्रेरित किया **महित्वना** = महित्व द्वारा ॥ 13 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्दुम्** = इन्दु, ऐश्वर्यवान को (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सिञ्चत** = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **पिबाति** = पान, संरक्षण करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सोम्यम्** = सौम्य, ऐश्वर्य की (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू - प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **राधसा** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **चोदयाते** = प्रेरित किया (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **महित्वना** = महित्व द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 13 ॥

623. उपो हरीणाम् पतिम्, दक्षम् पृञ्चन्तम् अब्रवम्।

नूनम् श्रुधि स्तुवतो अश्वस्य ॥ 14 ॥ 8-24-14

मन्त्रार्थ :- उप = समीप उ = निश्चय ही, भी **हरीणाम्** = ले जाने वाले, हरण करने वाले का **पतिम्** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक को **दक्षम्** = दक्ष को **पृञ्चन्तम्** = संयम, तपस्या, स्पर्श, योग करने वाले को **अब्रवम्** = बोले **नूनम्** = निश्चय ही **श्रुधि** = सुनिये **स्तुवतो** = स्तुति करते हुए **अश्वस्य** = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का ॥ 14 ॥

पदार्थ :- **उपो** = समीप (उपसर्ग)। **हरीणाम्** = ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **पतिम्** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक को (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **दक्षम्** = दक्ष को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **पृञ्चन्तम्** = संयम, तपस्या, स्पर्श, योग करने वाले को (पृच् = संयम करना, तपस्या करना, स्पर्श करना, संयोग करना, मिलना)। **अब्रवम्** = बोले (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वद् - बोलना)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **श्रुधि** = सुनिये (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **स्तुवतो** = स्तुति करते हुए (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **अश्वस्य** = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचाना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचाना, भोजन करना) ॥ 14 ॥

615. न हि अङ्ग पुरा च, न जज्ञे वीरतरः त्वत्।

न की राया नः एवथा न भन्दना ॥ 15 ॥ 8-24-15

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक **हि** = ही, निश्चय **अङ्ग** = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला **पुरा** = पहले **च** = और **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **जज्ञे** = उत्पन्न हुए **वीरतरः** = अत्यन्त पराक्रमी, वीर **त्वत्** = तुमसे **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **की** = कोई, किसी **राया** = गति, विद्या, वाणी **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **एवथा** = रक्षा करने वाले **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **भन्दना** = कल्याणकारी, सुखकारी ॥ 15 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **अङ्ग** = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **च** = और (अव्यय)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जज्ञे** = उत्पन्न हुए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **वीरतरः** = अत्यन्त पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **त्वत्** = तुमसे (सर्वनाम)। **न** =

नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **की** = कोई, किसी (अव्यय)। **राया** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना, रय् = गति करना, जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **एवथा** = रक्षा करने वाले (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भन्दना** = कल्याणकारी, सुखकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना) ॥ 15 ॥

616. आ इत् उ मधोः मदित्तरम्, सिञ्च वा अध्वर्यो अन्धसः ।

एवा हि वीर स्तवते सदावृधः ॥ 16 ॥

8-24-16

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम इत् = ही उ = निश्चय ही, भी मधोः = मधु का मदित्तरम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले को सिञ्च = सिञ्चन करो वा = अथवा अध्वर्यो = हे अध्वर्य, अहिंसनीय अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से एवा = ही हि = ही, निश्चय वीर = पराक्रमी, वीर को स्तवते = स्तुति करो सदावृधः = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले ॥ 16 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। इत् = ही (अव्यय)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। मधोः = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। मदित्तरम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सिञ्च = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। वा = अथवा (अव्यय)। अध्वर्यो = हे अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। एवा = ही (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। वीर = पराक्रमी, वीर को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। स्तवते = स्तुति करो (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। सदावृधः = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥

617. इन्द्र स्थातः हरीणाम्, न किः ते पूर्वस्तुतिम् ।

उदानंश शवसा न भन्दना ॥ 17 ॥

8-24-17

मन्त्रार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली स्थातः = स्थित हरीणाम् = ले जाने वाले, हरण करने वाले का न = नहीं, समान, उपमार्थक किः = कोई, किसी ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पूर्वस्तुतिम् = पूर्व स्तुति को उदानंश = कोई भी विनाश नहीं कर सकता शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा न = नहीं, समान, उपमार्थक भन्दना = कल्याणकारी, सुखकारी ॥ 17 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। स्थातः = स्थित (स्था- स्थित होना, ठहरना)। हरीणाम् = ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। किः = कोई, किसी (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पूर्वस्तुतिम् = पूर्व स्तुति को (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना, स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। उदानंश = कोई भी विनाश नहीं कर सकता (उत्+आ+नंश, उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आगम, नश - खो जाना, नष्ट होना, दिखाई नहीं देना)। शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। भन्दना = कल्याणकारी, सुखकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना) ॥ 17 ॥

618. तम् वो वाजानाम् पतिम्, अहूमहि श्रवस्यवः ।

अप्रायुभिः यज्ञेभिः वावृधेन्यम् ॥ 18 ॥

8-24-18

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग वाजानाम्

= वाजों का, विद्या का, गति का **पतिम्** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक को **अहूमहि** = आह्वान किया, पुकारा, व्याप्त करो **श्रवस्यवः** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील **अप्रायुभिः** = अपूर्णों, अतृप्तों, अप्रगतिशीलों द्वारा **यज्ञेभिः** = यजनों द्वारा **वावृधेन्यम्** = वृद्धि योग्य को ॥ 18 ॥

पदार्थ :- **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पतिम्** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक को (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **अहूमहि** = आह्वान किया, पुकारा, व्याप्त करो (अ - नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, द्वे - आह्वान करना, बुलाना, पुकारना, अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **श्रवस्यवः** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **अप्रायुभिः** = अपूर्णों, अतृप्तों, अप्रगतिशीलों द्वारा (अ - नहीं, प्रा = पूर्ण होना, पूर्ण करना, व्याप्त होना, प्राय - तृप्त करना, प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), इ-अय् = जाना, जानना, पाना)। **यज्ञेभिः** = यजनों द्वारा (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **वावृधेन्यम्** = वृद्धि योग्य को (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना) ॥ 18 ॥

619. एतो नु इन्द्रम् स्तवाम, सखायः स्तोम्यम् नरम्।

कृष्टीः यो विश्वाः अभि अस्ति एकः इत् ॥ 19 ॥

8-24-19

मन्त्रार्थ - **एतो** = प्राप्त हो, आएँ **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **स्तवाम** = स्तुति करो **सखायः** = हे मित्र **स्तोम्यम्** = स्तोम, स्तुति को **नरम्** = नर को **कृष्टीः** = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन **यो** = जो **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **अस्ति** = सभी ओर प्रगति करते हैं, विद्यमान है, प्रकाशमान है **एकः** = एक **इत्** = ही ॥ 19 ॥

पदार्थ - **एतो** = प्राप्त हो, आएँ (इ = जाना, पाना)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तवाम** = स्तुति करो (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **सखायः** = हे मित्र (सख् = मित्र होना)। **स्तोम्यम्** = स्तोम, स्तुति को (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **नरम्** = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **कृष्टीः** = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। **यो** = जो। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), **अस्ति** = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय) ॥ 19 ॥

620. वेत्था हि निऋतीनाम्, वज्रहस्त परिवृजम्।

अहरहः शुन्ध्युः परिपदाम् इव ॥ 24 ॥

8-24-24

मन्त्रार्थ - **वेत्था** = जानें, जानते हो **हि** = ही, निश्चय **निऋतीनाम्** = ऋतहीनता **वज्रहस्त** = हे वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले **परिवृजम्** = परिवृज को, सब ओर वर्जित को **अहरहः** = व्यापक, दिनोदिन **शुन्ध्युः** = शुन्ध्यू, शुद्ध होना, पवित्र होना **परिपदाम्** = सब ओर प्रगतिशील को **इव** = समान, की भाँति, के समान ॥ 24 ॥

पदार्थ - **वेत्था** = जानें, जानते हो। (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **निऋतीनाम्** = ऋतहीनता (निः - विना, बाहर, निश्चित, नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, हिंसा करना)। **वज्रहस्त** = हे वज्रहस्त, गतिग्राही, वज्र ग्रहण करने वाले, हाथ में वज्र वाले (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **परिवृजम्** = परिवृज को, सब ओर वर्जित को (परि - सब ओर, वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **अहरहः** = व्यापक, दिनोदिन (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **शुन्ध्युः** = शुन्ध्यू, शुद्ध होना, पवित्र होना (शुच्-शुक्-शुध-शुन्ध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **परिपदाम्** = सब ओर प्रगतिशील को (परि - सब ओर, पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **इव** = समान, की

(186) सूक्त 27

621. अग्निः उक्थे पुरोहितो, ग्रावाणो बर्हिः अध्वरे ।

ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणः पतिम्, देवान् अवो वरेण्यम् ॥ 1 ॥ 8-27-1

मन्त्रार्थ - अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् उक्थे = कहते हैं, एकत्र होते हैं पुरोहितो = पुरोहित ग्रावाणो = सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द करने वाले बर्हिः = बढ़ा हुआ, विराट, महान् अध्वरे = अहिंसक में ऋचा = ऋचायें यामि = जाता हूँ मरुतो = मरणशीलों का ब्रह्मणः = ब्रह्मण, विराट, महान्, पतिम् = पति को देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने अवो = रक्षक, विद्वान् वरेण्यम् = वरण योग्य ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। उक्थे = कहते हैं, एकत्र होते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। पुरोहितो = पुरोहित (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हि - चलना, जाना, जानना, पाना)। ग्रावाणो = सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द करने वाले (गृ = सींचना, समझना, जानना, खाना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गीला करना, घर्षण करना)। बर्हिः = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। ऋचा = ऋचायें (ऋच् - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। यामि = जाता हूँ (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। मरुतो = मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। ब्रह्मणः = ब्रह्मण, विराट, महान्, (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। पतिम् = पति को (पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अवो = रक्षक, विद्वान् (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। वरेण्यम् = वरण योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 61

(187) सूक्त 32

622. वयम् घा ते अपि स्मसि, स्तोतारः इन्द्र गर्वणः ।

त्वम् नो जिन्व सोमपाः ॥ 7 ॥ 8-32-7

मन्त्रार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग घा = ही ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अपि = भी, निकट स्मसि = हैं स्तोतारः = स्तुतिकर्ता इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली गर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन त्वम् = तुम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो जिन्व = प्रसन्न करो सोमपाः = सोम का पालक, सोमपान करने वाला ॥ 7 ॥

पदार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। घा = ही (अव्यय, निपात)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। अपि = भी, निकट (अव्यय)। स्मसि = हैं (अस् = होना)। स्तोतारः = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। गर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। जिन्व = प्रसन्न करो (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। सोमपाः = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना,

अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 7 ॥

623. बृबदुक्थम् हवामहे, सृप्रकरस्नम् ऊतये ।

साधु कृण्वन्तम् अवसे ॥ 10 ॥ 8-32-10

मन्त्रार्थ - बृबदुक्थम् = महान् वाणी, स्तुति, वचन को हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं सृप्रकरस्नम् = गतिशील हाथ ऊतये = रक्षा के लिए साधु = साधु कृण्वन्तम् = करने, करते हुए को अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो ॥ 10 ॥

पदार्थ - बृबदुक्थम् = महान् वाणी, स्तुति, वचन को (बृबद् = महान् (अव्यय) बद् - स्थिर होना, स्वस्थ होना, उक् - उच्-वद् - कहना, समझना)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान- प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। सृप्रकरस्नम् = गतिशील हाथ (सृप - जाना, सरकना, कृ - करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। साधु = साधु (साध् - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, साधना करना, यशस्वी होना)। कृण्वन्तम् = करने, करते हुए को (कृ = करना)। अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना) ॥ 10 ॥

624. अतीहि मन्युषाविणम्, सुषुवांसम् उप अरणे ।

इमम् रातम् सुतम् पिब ॥ 21 ॥ 8-32-21

मन्त्रार्थ - अतीहि = अतिशय जानें मन्युषाविणम् = विचार सामर्थ्य वाले सुषुवांसम् = सुन्दर सृजन किया, श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् करने वाले उप = समीप अरणे = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त के लिए इमम् = इसको (सर्वनाम)। रातम् = अनुदान, देन को सुतम् = ऐश्वर्यवान् को, उत्पन्न हुआ को पिब = पी लो ॥ 21 ॥

पदार्थ - अतीहि = अतिशय जानें (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। मन्युषाविणम् = विचार सामर्थ्य वाले (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, सु - उत्पन्न करना, आसवन करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्यवान्)। सुषुवांसम् = सुन्दर सृजन किया, श्रेष्ठ ऐश्वर्यवान् करने वाले (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, शुष - शुष्क होना, सूखना, शूष - जनना, उत्पन्न करना, प्रसूत होना)। उप = समीप (उपसर्ग)। अरणे = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त के लिए (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रण - शब्द करना, जाना)। इमम् = इसको (सर्वनाम)। रातम् = अनुदान, देना को (रा - देना, मिल जाना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान् को, उत्पन्न हुआ को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पिब = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥

(188) सूक्त 33

625. वयम् घ त्वा सुतावन्त, आपो न वृक्तबर्हिषः ।

पवित्रस्य प्रस्रवणेषु, वृत्रहन् परि स्तोतारः आसते ॥ 1 ॥ 8-33-1

मन्त्रार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग घ = ही, भी त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा सुतावन्तः = सुतावान्, रचनावान् आपो = आप, व्याप्त, व्यापक न = नहीं, समान, उपमार्थक वृक्तबर्हिषः = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ पवित्रस्य = पवित्र का प्रस्रवणेषु = प्रस्रवणों में वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले परि = सभी तरफ स्तोतारः = स्तुतिकर्ता आसते = बैठता है ॥ 1 ॥

पदार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। घ = ही, भी (अव्यय, निपात)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा

(सर्वनाम)। **सुतावन्तः** = सुतावान्, रचनावान् (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वृक्तबर्हिषः** = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ (वृक् - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच - हिंसा करना, बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **पवित्रस्य** = पवित्र का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **प्रस्रवणेषु** = प्रस्रवणों में (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्त्रु = जाना, जानना, पाना, स्तु - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्तोतारः** = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **आसते** = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 1 ॥

626. स्वरन्ति त्वा सुते नरो, वसो निरेके उक्थिनः ।

कदा सुतम् तृषाणः ओकः, आगमः इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ॥ 2 ॥

8-33-2

मन्त्रार्थ :- **स्वरन्ति** = स्वर करते हैं, शब्द करते हैं **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **नरो** = नर **वसो** = वसु **निरेके** = निरेके **उक्थिनः** = कथनशील, कहने वाले **कदा** = कब **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **तृषाणः** = तृषा, प्यास, इच्छा, चाह **ओकः** = निवास **आगमः** = आया **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **स्वब्दीव** = सुपालक, सुरक्षक **वंसगः** = वंशगामी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **स्वरन्ति** = स्वर करते हैं, शब्द करते हैं (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्तु-स्वर् = शब्द करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **निरेके** = निरेके (निः - विना, बाहर, निश्चित, नि - निश्चित रूप से, निरन्तर, ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, हिंसा करना)। **उक्थिनः** = कथनशील, कहने वाले (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **कदा** = कब (सर्वनाम)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **तृषाणः** = तृषा, प्यास, इच्छा, चाह (तृष् = तृषा होना, प्यासा होना, इच्छा करना, चाहना)। **ओकः** = निवास (ओक - निवास करना)। **आगमः** = आया (गम् - जाना, आ-गम् = आना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स्वब्दीव** = सुपालक, सुरक्षक (सु - उत्तम, सुन्दर, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना)। **वंसगः** = वंशगामी (वंश्- वंस् - बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना) ॥ 2 ॥

627. कण्वेभिः धृष्णावा धृषत्, वाजम् दर्षि सहस्रिणम् ।

पिशङ्गरूपम् मघवन् विचर्षणे, मक्षू गोमन्तम् ईमहे ॥ 3 ॥

8-33-3

मन्त्रार्थ :- **कण्वेभिः** = कण्वियों द्वारा, शब्दों द्वारा **धृष्णावा** = विजय, गर्व द्वारा **धृषत्** = विजय, गर्व **वाजम्** = विद्या को, गति को **दर्षि** = आदर देते हो **सहस्रिणम्** = सहस्री को **पिशङ्गरूपम्** = प्रकाशगामी रूप को **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **विचर्षणे** = हे! विशेष विचार करने वाले **मक्षू** = मक्षू **गोमन्तम्** = गोकुल को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **कण्वेभिः** = कण्वियों द्वारा, शब्दों द्वारा (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **धृष्णावा** = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **धृषत्** = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता

दिखाना, वञ्चना करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **दर्षि** = आदर देते हो (दृ - आदर करना, सत्कार करना, दृष - बहना, सहना)। **सहस्रिणम्** = सहस्री को (संख्या)। **पिशङ्गरूपम्** = प्रकाशगामी रूप को (पिश् - जाना, प्रकाश होना, चीरना, टुकड़े करना, रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। **मधवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मध् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **विचर्षणे** = हे! विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **मक्षू** = मक्षू (मक्ष - डसना, मच - गर्व करना, दुराचारी होना, बोलना, पीसना, कूटना)। **गोमन्तम्** = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥

628. पाहि गाय अन्धसो मदे, इन्द्राय मेध्यातिथे ।

यः सम्मिश्रलो हर्योः, यः सुते सचा, वज्री रथो हिरण्ययः ॥ 4 ॥ 8-33-4

मन्त्रार्थ - **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो **गाय** = गान, गायक, गाय **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा **मदे** = मद, हर्ष, तृप्ति **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **मेध्यातिथे** = हे मेध के अतिथि, मेध्य अतिथि **यः** = जो **सम्मिश्रलो** = सम्यक् वाणी **हर्यो** = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का **यः** = जो। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान **रथो** = रथ **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला ॥ 4 ॥

पदार्थ - **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **गाय** = गान, गायक, गाय (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मद** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मेध्यातिथे** = हे मेध के अतिथि, मेध्य अतिथि (मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, अत् - सतत गमन करना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **सम्मिश्रलो** = सम्यक् वाणी (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), मिश्र - शब्द करना, आवाज करना, क्रोध करना, गुस्सा करना)। **हर्यो** = हर्य का, प्रकाश का, गतिशील का (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **यः** = जो। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **रथो** = रथ (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **हिरण्ययः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना) ॥ 4 ॥

629. कः ईम् वेद सुते सचा, पिबन्तम् कत् वयो दधे ।

अयम् यः पुरो विभिनति, ओजसा मन्दानः शिप्री अन्धसः ॥ 7 ॥

8-33-7

मन्त्रार्थ - **कः** = कौन **ईम्** = समान, इस प्रकार **वेद** = ज्ञान, जानो, जानता है **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी **पिबन्तम्** = पान करते हैं **कत्** = कितना **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश **दधे** = धारण करते हैं **अयम्** = यह **यः** = जो **पुरो** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी **विभिनति** = विशेष भेदन, भाग करते हैं **ओजसा** = ओज द्वारा **मन्दानः** = आनन्दित होते हुए, प्रकाशित होते हुए **शिप्री** = शिप्र **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से ॥ 7 ॥

पदार्थ -कः = कौन (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **वेद** = ज्ञान, जानो, जानता है (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सचा** = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना)। **पिबन्तम्** = पान करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **कत्** = कितना (सर्वनाम)। **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **पुरो** = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **विभिनति** = विशेष भेदन, भाग करते हैं (वि - विशेष, भिद्-भिन्द् - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **मन्दानः** = आनन्दित होते हुए, प्रकाशित होते हुए (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **शिप्री** = शिप्र (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना) ॥ 7 ॥

630. दाना मृगो न वारणः, पुरुत्रा चरथम् दधे।

न किः त्वा नि यमत् आ सुते, गमो महान् चरसि ओजसा ॥ 8 ॥ 8-33-8

मन्त्रार्थ :- दाना = दान मृगो = मृग, अन्वेषी न = नहीं, समान, उपमार्थक वारणः = वरणीय, वरण करने वाला पुरुत्रा = अग्रगामी, अग्रणी चरथम् = विचरणशील को दधे = धारण करते हैं न = नहीं, समान, उपमार्थक किः = कोई, किसी त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा नि = निश्चित, निरन्तर यमत् = यमन करता है आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सुते = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुआओं में गमो = गतिमान, जाने वाले महान् = बड़े, पूज्य, महान् चरसि = विचरण करते हो ओजसा = ओज द्वारा ॥ 8 ॥

पदार्थ :- दाना = दान (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। मृगो = मृग, अन्वेषी (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वारणः = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। पुरुत्रा = अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। चरथम् = विचरणशील को (चर् - चलना, विचरण करना)। दधे = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। किः = कोई, किसी (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। यमत् = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सुते = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुआओं में (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। गमो = गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। चरसि = विचरण करते हो (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) ॥ 8 ॥

631. यः उग्रः सन् अनिष्टतः, स्थिरो रणाय संस्कृतः।

यदि स्तोतुः मघवा शृणवत्, हवम् न इन्द्रो योषति आ गमत् ॥ 9 ॥ 8-33-9

मन्त्रार्थ :- यः = जो उग्रः = उग्र सन् = होते हुए अनिष्टतः = विचार से परे स्थिरो = स्थिर रणाय = रण, शब्द के लिए संस्कृतः = संस्कारित यदि = यदि स्तोतुः = स्तुति करने वाले मघवा = मघवान्, ऐश्वर्यवान्, धनवान् शृणवत् = सुने हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य न = नहीं, समान, उपमार्थक इन्द्रो

= परम ऐश्वर्यशाली **योषति** = हिंसा करता है **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **यः** = जो (सर्वनाम)। **उग्रः** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **सन्** = होते हुए (असन्, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **अनिष्टतः** = विचार से परे (अ - नहीं, निश्चय)। **स्थिरो** = स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **रणाय** = रण, शब्द के लिए (रण - शब्द करना, जाना)। **संस्कृतः** = संस्कारित (सम्-संस् = सम्यक्, भलीभांति, कृ = करना)। **यदि** = यदि (अव्यय)। **स्तोतुः** = स्तुति करने वाले (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **मघवा** = मघवान्, ऐश्वर्यवान्, धनवान् (मघ् = ऐश्वर्य होना, धन होना)। **शृणवत्** = सुने (श्रु-शृण् = सुनना, जाना)। **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **योषति** = हिंसा करता है (युष् = हिंसा करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है, गया (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥ 9 ॥

632. सत्यम् इत्था वृषा इत् असि, वृषजूतिः नो अविता ।

वृषा हि उग्र शृण्विषे, परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥ 10 ॥

8-33-10

मन्त्रार्थ - **सत्यम्** = सत्य को **इत्था** = इत्था इस प्रकार **वृषा** = पराक्रमी **इत्** = ही **असि** = हो **वृषजूतिः** = पराक्रमी वेगवान् चंचल **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **अविता** = रक्षक **वृषा** = पराक्रमी **हि** = ही, निश्चय **उग्र** = उग्र **शृण्विषे** = श्रोता के लिए, शृण्वती **परावति** = पराया, दूर, लौटा हुआ **वृषो** = पराक्रमी **अर्वावति** = अर्वावत, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक **श्रुतः** = श्रुत, सुने हुए ॥ 10 ॥

पदार्थ - **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इत्था** = इत्था इस प्रकार (अव्यय)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **असि** = हो (अस् - होना)। **वृषजूतिः** = पराक्रमी वेगवान् चंचल (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अविता** = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **उग्र** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **शृण्विषे** = श्रोता के लिए, शृण्वती (श्रु-शृण् = सुनना)। **परावति** = पराया, दूर, लौटा हुआ, (अव्यय)। **वृषो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अर्वावति** = अर्वावत, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचाना, हिंसा करना)। **श्रुतः** = श्रुत, सुने हुए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 10 ॥

(189) सूक्त 34

633. आ इन्द्र याहि हरिभिः, उप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।

दिवो अमुष्य शासतो, दिवम् यय दिवावसो ॥ 1 ॥

8-34-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा **उप** = समीप **कण्वस्य** = कण्व, शब्द करने वाले के **सुष्टुतिम्** = सुन्दर स्तुति को

दिवो = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **अमुष्य** = यह, इसका **शासतो** = शासन करने वाले **दिवम्** = दिव को, तेजस्वी को **यय** = प्राप्त करो **दिवावसो** = हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ -आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **कण्वस्य** = कण्व, शब्द करने वाले के (कण् - शब्द करना, लघु होना, कण बनाना)। **सुष्टुतिम्** = सुन्दर स्तुति को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अमुष्य** = यह, इसका (सर्वनाम)। **शासतो** = शासन करने वाले (शास् - शासन करना)। **दिवम्** = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **यय** = प्राप्त करो (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **दिवावसो** = हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 1 ॥

634. आ त्वा ग्रावा वदन्, इह सोमी घोषेण वक्षतु।

दिवो अमुष्य शासतो, दिवम् यय दिवावसो ॥ 2 ॥

8-34-2

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **ग्रावा** = सींचने वाला, सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द, वाणी से युक्त **वदन्** = बोलते हुए, कहते हुए **इह** = इसमें, यहां, यह **सोमी** = ऐश्वर्यमय **घोषेण** = घोष द्वारा **वक्षतु** = वक्ष, पालन करो **दिवो** = दिव, तेजस्वी **अमुष्य** = यह, इसका **शासतो** = शासन करने वाले **दिवम्** = दिव को, तेजस्वी को **दिवावसो** = हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **ग्रावा** = सींचने वाला, सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द, वाणी से युक्त (गृ = सींचना, समझना, जानना, खाना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गीला करना, घर्षण करना)। **वदन्** = बोलते हुए, कहते हुए (वद - कहना, स्पष्ट कहना, बोलना, समझाना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **सोमी** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **घोषेण** = घोष द्वारा (घुष् - घोषणा करना, शब्द करना, प्रशंसा करना)। **वक्षतु** = वक्ष, पालन करो (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना, वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **दिवो** = दिव, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **अमुष्य** = यह, इसका (सर्वनाम)। **शासतो** = शासन करने वाले (शास् - शासन करना)। **दिवम्** = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **यय** = प्राप्त करो (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **दिवावसो** = हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 2 ॥

635. अत्र आ वि नेमिः एषाम्, उराम् न धूनुते वृकः ।

दिवो अमुष्य शासतो, दिवम् यय दिवावसो ॥ 3 ॥

8-34-3

मन्त्रार्थ :- अत्र = यहाँ आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वि = विशेष, विना, विलोम नेमिः = ले जाने वाला, मार्गदर्शक एषाम् = इनका उराम् = उरा को, विस्तृत को, मन्थन करने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक धूनुते = धुनता है, कंपाता है, हिलाता है वृकः = हिंसक, लुटेरे दिवो = दिव, तेजस्वी अमुष्य = यह, इसका शासतो = शासन करने वाले दिवम् = दिव को, तेजस्वी को यय = प्राप्त करो दिवावसो = हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अत्र = यहाँ (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। नेमिः = ले जाने वाला, मार्गदर्शक (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। एषाम् = इनका (सर्वनाम)। उराम् = उरा को, विस्तृत को, मन्थन करने वाले को (उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, मथ् - मथना, विलोडन करना, विचार करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। धूनुते = धुनता है, कंपाता है, हिलाता है (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। वृकः = हिंसक, लुटेरे (वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच - हिंसा करना)। दिवो = दिव, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। अमुष्य = यह, इसका (सर्वनाम)। शासतो = शासन करने वाले (शास् - शासन करना)। दिवम् = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। यय = प्राप्त करो (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। दिवावसो = हे दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु, आवास देने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 3 ॥

(190) सूक्त 38

636. यज्ञस्य हि स्थः ऋत्विजा, सस्नी वाजेषु कर्मसु ।

इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥ 1 ॥

8-38-1

मन्त्रार्थ :- यज्ञस्य = यजन का हि = ही, निश्चय स्थः = हो ऋत्विजा = ऋतु से उत्पन्न सस्नी = शुद्ध वाजेषु = वाजों में कर्मसु = कर्मों में इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि तस्य = उसका बोधतम् = जानो, समझो, बोध करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। स्थः = हो (स्था - स्थित होना, ठहरना)। ऋत्विजा = ऋतु से उत्पन्न (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। सस्नी = शुद्ध (सस् = शुद्ध करना)। वाजेषु = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। कर्मसु = कर्मों में (कृ = करना)। इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। तस्य = उसका (सर्वनाम)। बोधतम् = जानो, समझो, बोध करो (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना) ॥ 1 ॥

637. तोशासा रथयावाना, वृत्रहणा अपराजिता ।

इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥ 2 ॥

8-38-2

मन्त्रार्थ :- तोशासा = हिंसकों को अनुशासित करने वाले रथयावाना = रथगामी वृत्रहणा = हिंसा का हनन करने वाले अपराजिता = अपराजित, पराजित न हुए इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि तस्य = उसका बोधतम् = जानो, समझो, बोध करो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- तोशासा = हिंसकों को अनुशासित करने वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, शास् - शासन करना)। रथयावाना = रथगामी (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना, या - जाना, जानना, पाना)। वृत्रहणा = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। अपराजिता = अपराजित, पराजित न हुए (अ - नहीं, परा - अन्य, जि - जीतना, जय होना, अप = दूर, नीचे, अपकार, राज - प्रकाश होना, चमकना)। इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। तस्य = उसका (सर्वनाम)। बोधतम् = जानो, समझो, बोध करो (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना) ॥ 2 ॥

638. इदम् वाम् मदिरम् मधु, अधुक्षन् अद्रिभिः नरः ।

इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥ 3 ॥ 8-38-3

मन्त्रार्थ :- इदम् = यह, इसको वाम् = तुम दोनों को मदिरम् = आनन्दित को मधु = मीठा, मधु अधुक्षन् = प्रदीप्त किया अद्रिभिः = अद्रियों के लिए, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए नरः = नर इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि तस्य = उसका बोधतम् = जानो, समझो, बोध करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। वाम् = तुम दोनों को (सर्वनाम)। मदिरम् = आनन्दित को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अधुक्षन् = प्रदीप्त किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, धुक्ष - प्रदीप्त करना, जलाना, जीना, श्रान्त होना या थक जाना)। अद्रिभिः = अद्रियों के लिए, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। नरः = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। इन्द्राग्नी = इन्द्र और अग्नि (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। तस्य = उसका (सर्वनाम)। बोधतम् = जानो, समझो, बोध करो (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना) ॥ 3 ॥

अनुवाक:- 62

(191) सूक्त 44

639. उत् ते बृहन्तो अर्चयः, समिधानस्य दीदिवः ।

अग्ने शुक्रासः ईरते ॥ 4 ॥ 8-44-4

मन्त्रार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए बृहन्तो = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा अर्चयः = अर्चना करने वाले समिधानस्य = प्रकाशमान का दीदिवः = तेजस्वी! अग्ने = हे अग्नि शुक्रासः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी ईरते = कम्पित करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। बृहन्तो = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् द्वारा (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। अर्चयः = अर्चना करने वाले (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। समिधानस्य = प्रकाशमान का (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। दीदिवः = तेजस्वी! (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना,

आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **शुक्रासः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना) ॥ 4 ॥

640. उप त्वा जुह्वो मम, घृताचीः यन्तु हर्यत ।

अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥ 5 ॥ 8-44-5

मन्त्रार्थ :- उप = समीप त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा जुह्वो = दान करने वाले, आदान-प्रदान करने वाले मम = मेरा घृताचीः = प्रकाशगामी यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें हर्यत = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य अग्ने = हे अग्नि हव्या = दान योग्य जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 5 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। जुह्वो = दान करने वाले, आदान-प्रदान करने वाले (हु-जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, ग्रहण करना, तृप्त करना, जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। मम = मेरा (सर्वनाम)। घृताचीः = प्रकाशगामी (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, अच् - जाना, चलना, आदर करना, मांगना)। यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। हर्यत = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। हव्या = दान योग्य (ह्व = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। जुषस्व = सेवा करो, सन्तुष्ट करो (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 5 ॥

641. मन्द्रम् होतारम् ऋत्विजम्, चित्रभानुम् विभावसुम् ।

अग्निम् ईडे सः उ श्रवत् ॥ 6 ॥ 8-44-6

मन्त्रार्थ :- मन्द्रम् = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को होतारम् = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को ऋत्विजम् = ऋत्विज को, ऋतु से उत्पन्न को चित्रभानुम् = चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले को विभावसुम् = विशेष प्रकाशित को, विभावसु को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को ईडे = स्तुति करता हूँ सः = वह, उसने उ = निश्चय ही, भी श्रवत् = श्रवण करता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- मन्द्रम् = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। होतारम् = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। ऋत्विजम् = ऋत्विज को, ऋतु से उत्पन्न को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। चित्रभानुम् = चित्रभानु, आश्चर्यजनक प्रकाश वाले को (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। विभावसुम् = विशेष प्रकाशित को, विभावसु को (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ईडे = स्तुति करता हूँ (ईड् = स्तुति करना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। श्रवत् = श्रवण करता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 6 ॥

642. अग्निः प्रत्नेन मन्मना, शुम्भानः तन्वाम् स्वाम्।

कविः विप्रेण वावृधे ॥ 12 ॥ 8-44-12

मन्त्रार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् प्रत्नेन = पुरातन द्वारा मन्मना = जन्म से, जन्म द्वारा शुम्भानः = प्रकाशित, शोभित होता हुआ तन्वाम् = विस्तार, वृद्धि को स्वाम् = अपने कविः = ज्ञानी, कवि विप्रेण = विप्र, पूर्ण, तृप्त करने वाले द्वारा वावृधे = वृद्धि की ॥ 12 ॥

पदार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। प्रत्नेन = पुरातन द्वारा (प्र+त्न+इत्, प्र - प्रकृष्ट, अधिक (विशेषण))। मन्मना = विचारशील द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। शुम्भानः = प्रकाशित, शोभित होता हुआ (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। तन्वाम् = विस्तार, वृद्धि को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। स्वाम् = अपने (स्व = अपना (सर्वनाम))। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। विप्रेण = विप्र, पूर्ण, तृप्त करने वाले द्वारा (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। वावृधे = वृद्धि की (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना) ॥ 12 ॥

643. ऊर्जो नपातम् आ हुवे, अग्निम् पावकशोचिषम्।

अस्मिन् यज्ञे स्वध्वरे ॥ 13 ॥ 8-44-13

मन्त्रार्थ :- ऊर्जो = ऊर्जा नपातम् = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को पावकशोचिषम् = पावक पवित्रता वाले को अस्मिन् = इस, इसमें यज्ञे = यजन में स्वध्वरे = उत्तम अहिंसा में ॥ 13 ॥

पदार्थ :- ऊर्जो = ऊर्जा (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। नपातम् = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को (नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पावकशोचिषम् = पावक पवित्रता वाले को (पू - पवित्र करना, पवित्र होना, शुच = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। अस्मिन् = इस, इसमें (सर्वनाम)। यज्ञे = यजन में (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। स्वध्वरे = उत्तम अहिंसा में (सु = सुष्ठु, उत्तम, अ = नहीं, ध्व - हिंसा करना)।

644. सः नो मित्रमहः त्वम्, अग्ने शुक्रेण शोचिषा।

देवैः आ सत्सि बर्हिषि ॥ 14 ॥

8-44-14

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मित्रमहः = मित्रमह त्वम् = तुम अग्ने = हे अग्नि शुक्रेण = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से शोचिषा = शोचमान द्वारा देवैः = देवों द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सत्सि = जाते हो बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में ॥ 14 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मित्रमहः = मित्रमह (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। शुक्रेण = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता,

शीघ्रकारी से (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **देवैः** = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सत्सि** = जाते हो (सद् - बैठना, जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **बहिषि** = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 14 ॥

645. अग्निः मूर्धा दिवः ककुत्, पतिः पृथिव्या अयम्।

अपाम् रेतांसि जिन्वति ॥ 16 ॥ 8-44-16

मन्त्रार्थ : अयम् यह दिवः प्रकाशमानों में मूर्धा उच्च, पृथिव्याः पृथिवी का ककुत् महान् पतिः स्वामी ऐश्वर्यवान् अग्निः अग्नि रेतांसि प्राणशक्ति का जिन्वति संचार करता है ॥ 16 ॥

भावार्थ : अग्नि का भाव परमात्मा तथा उपासक विद्वान् दोनो है। दोनों ही सृष्टि तथा समाज में उच्च और उपयोगी स्थान रखते हैं ॥ 16 ॥

पदार्थ : **अग्निः** = ऊर्ध्वगामी (अग् = गति करना, आगे जाना)। **मूर्धा** = उच्च, (मूर्द्ध = उच्च होना)। **दिवः** = प्रकाशमानों में (दिव् = तेजस्वी होना, स्तुति करना)। **ककुत्** = महान् (कक् = गर्व करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान् स्वामी (पत् = ऐश्वर्य होना)। **पृथिव्याः** = पृथ्वी का (पृथु - व्याप्त होना, विस्तार करना, फैलना)। **अयम्** = यह। **अपाम्** = जलों का, प्राणों का (अप - पालन करना)। **रेतांसि** = विद्या, गतिशीलता (रि = जाना, जानना, पाना)। **जिन्वति** = सन्तुष्ट करता है, प्रकाशित होता है (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रकाशित होना, बोलना) ॥ 16 ॥

646. उत् अग्ने शुचयः तव, शुक्रा भ्राजन्तः ईरते।

तव ज्योतीषि अर्चयः ॥ 17 ॥ 8-44-17

मन्त्रार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च अग्ने = हे अग्नि शुचयः = पवित्र तव = तुम्हारा शुक्रा = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी भ्राजन्तः = प्रकाशमान ईरते = कम्पित करता है तव = तुम्हारा ज्योतीषि = ज्योतियों को अर्चयः = अर्चना करने वाले ॥ 17 ॥

पदार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **शुचयः** = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **शुक्रा** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **भ्राजन्तः** = प्रकाशमान (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **ज्योतीषि** = ज्योतियों को (ज्युत् - प्रकाशित होना, चमकना)। **अर्चयः** = अर्चना करने वाले (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना) ॥ 17 ॥

647. ईशिषे वार्यस्य हि, दात्रस्य अग्ने स्वः पतिः।

स्तोता स्याम् तव शर्मणि ॥ 18 ॥ 8-44-18

मन्त्रार्थ :- ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे वार्यस्य = वार्य, वरणीयों का, वरण का हि = ही, निश्चय दात्रस्य = दानी का अग्ने = हे अग्नि स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक स्तोता = स्तुतिकर्ता स्याम् = हों तव = तुम्हारा शर्मणि = सुख में ॥ 18 ॥

पदार्थ :- ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **वार्यस्य** = वार्य, वरणीयों का, वरण का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **दात्रस्य** = दानी का (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **अग्ने**

= हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **स्तोता** = स्तुतिकर्ता (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना, प्रशंसा करना)। **स्याम्** = हों (अस् - होना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **शर्मणि** = सुख में (शर्म - सुख होना) ॥ 18 ॥

(192) सूक्त 45

648. आ घा ये अग्निम् इन्धते, स्तृणन्ति बर्हिः आनुषक्।

येषाम् इन्द्रो युवा सखा ॥ 1 ॥ 8-45-1

मन्त्रार्थ :- आ - समन्तात्, पूर्णतः, घा - ही, ये - जो, अग्निम् - अग्नि को, इन्धते - प्रदीप्त करते हैं, प्रकाशित करते हैं, स्तृणन्ति - आच्छादित करते हैं, बर्हिः - बढ़ा हुआ, विराट, महान्, बाहर, आनुषक् - अनुकूलतया, क्रमशः। **येषाम्** - जिनका, **इन्द्रो** - इन्द्र, **युवा** - युक्त, **सखा** - मित्र ॥ 1 ॥

भावार्थ :- जो अपने जीवन में अग्नि अर्थात् परमात्मा की चेतना को प्रकाशित करते हैं तथा बाह्य आचरण को भी उस अनुशासन से आच्छादित करते हैं, उनके लिए इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा युवा सखा बन जाता है। परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा जिनका मित्र हो, सखा हो, उनको सुख - शान्ति स्वतः अनुभव होती है, यह स्वाभाविक है।

पदार्थ :- आ = उपसर्ग। घा - ही। ये = जो। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना)। इन्धते - प्रदीप्त करते हैं, प्रकाशित करते हैं (इन्ध = प्रकाश होना)। स्तृणन्ति - आच्छादित करते हैं (स्तृ = आच्छादित करना, ढकना)। बर्हिः = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बृह = बढ़ना)। आनुषक् - अनुकूलतया, स्तोता, स्तुति करने वाला (नु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। येषाम् - जिनका। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यवान् (इन्ध = परम ऐश्वर्य होना)। युवा = युवा, युवा वय वाले, तुम दोनों। सखा - मित्र (सख = मित्र होना) ॥

649. बृहन् इत् इध्म एषाम्, भूरि शस्त्रम् पृथुः स्वरुः।

येषाम् इन्द्रो युवा सखा ॥ 2 ॥ 8-45-2

मन्त्रार्थ :- येषाम् जिनका इन्द्रो ऐश्वर्यवान् (परमात्मा) युवा युवा सखा मित्र (है), एषाम् इनका बृहन् महान् इत् ही इध्म प्रकाश, भूरि बहुत शस्त्रम् शस्त्र, पृथुः विस्तृत स्वरुः वाणी (है) ॥ 2 ॥

भावार्थ - इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा चिर युवा है। वह जिनका सखा है, मित्र है, उनको कोई अभाव हो नहीं सकता है।

पदार्थ :- येषाम् = जिनका। इन्द्रो = ऐश्वर्यवान् (इन्ध - परम ऐश्वर्य होना)। युवा = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। सखा = मित्र (सख - मित्र होना)। एषाम् = इनका। बृहन् = महान् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इत् = ही। इध्म = गति, ज्ञान, प्रकाश (इ - जाना, जानना, पाना, इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। भूरि = बहुत। शस्त्रम् = शस्त्र को (शस् - काटना, हिंसा करना)। पृथुः = विस्तृत (पृथ - विस्तार होना)। स्वरुः = वाणी (स्वर - शब्द करना) ॥ 2 ॥

650. अयुद्ध इत् युधा, वृत्तम् शूरः आजति सत्वभिः।

येषाम् इन्द्रो युवा सखा ॥ 3 ॥ 8-45-3

मन्त्रार्थ :- अयुद्ध = युद्ध किया इत् = ही युधा = युद्ध करने वाला वृत्तम् = वरण किया हुआ शूरः = वीर, पराक्रमी आजति = आता है सत्वभिः = सत्वों द्वारा, सत्वों द्वारा येषाम् = जिनका। इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली युवा = युवा सखा = मित्र ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अयुद्ध = युद्ध किया (अ = नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। इत् = ही (अव्यय)। युधा = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। वृत्तम् = वरण किया हुआ (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)।

शूरः = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **आजति** = आता है (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आगम, अज् = जानना, जाना, पहुँचना, स्थापित करना, फेंकना, आ-अज - आना)। **सत्त्वभिः** = सत्त्वों द्वारा, सत्त्वों द्वारा (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **येषाम्** = जिनका। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **युवा** = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना) ॥ 3 ॥

651. आ बुन्दम् वृत्रहा ददे, जातः पृच्छात् वि मातरम्।

के उग्राः के हा शृण्विरे ॥ 4 ॥ 8-45-4

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **बुन्दम्** = जानने, समझने वाले को **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **ददे** = दिया, दान किया **जातः** = उत्पन्न **पृच्छात्** = पूछता है, पूछा **वि** = विशेष, विना, विलोम **मातरम्** = माता को **के** = कौन, कोई **उग्राः** = उग्र **के** = कौन, कोई **हा** = ही **शृण्विरे** = श्रोता के लिए, शृण्वती ॥ 4 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **बुन्दम्** = जानने, समझने वाले को (बुन्द- जानना, समझना, बूझना, सूक्ष्म दृष्टि से जानना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **ददे** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **जातः** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पृच्छात्** = पूछता है, पूछा (पृश्-पृच्छ - पूछना, प्रश्न करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मातरम्** = माता को (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **के** = कौन, कोई (सर्वनाम)। **उग्राः** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **के** = कौन, कोई (सर्वनाम)। **हा** = ही (निपात, अव्यय)। **शृण्विरे** = श्रोता के लिए, शृण्वती (श्रु-शृण् = सुनना) ॥ 4 ॥

652. इमे उ त्वा वि चक्षते, सखायः इन्द्र सोमिनः।

पुष्टावन्तो यथा पशुम् ॥ 16 ॥

8-45-16

मन्त्रार्थ - इमे = यह, इस, ये **उ** = निश्चय ही, भी **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **वि** = विशेष, विना, विलोम **चक्षते** = देखने के लिए **सखायः** = मित्र **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **सोमिनः** = सोमिन, सोम वाले **पुष्टावन्तो** = पुष्टों का, पोषितों का **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को ॥ 16 ॥

पदार्थ - इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **चक्षते** = देखने के लिए (चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमिनः** = सोमिन, सोम वाले (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुष्टावन्तो** = पुष्टों का, पोषितों का (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को (पश्-दृश् = देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना) ॥ 16 ॥

653. अभि त्वा वृषभा सुते, सुतम् सृजामि पीतये।

तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥ 22 ॥ 8-45-22

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **वृषभा** = पराक्रमी **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **सृजामि** = त्याग, रचना, उत्पन्न करता हूँ **पीतये** = पान के लिए **तृम्पा** = तृप्त, शान्ति, प्रेम **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), **अश्नुही** = विशेष व्यापक हो, विशेष पोषणीय

हो मदम् = मद को, हर्ष को, तृप्ति को ॥ 22 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वृषभा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। सुते = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सृजामि = त्याग, रचना, उत्पन्न करता हूँ (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना)। पीतये = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। तृम्पा = तृप्त, शान्ति, प्रेम (तृम्प - तृप्त होना या करना, शान्त होना, प्रेम करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), अश्नुही = व्यापक हो, पोषणीय हो (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। मदम् = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 22 ॥

654. इह त्वा गोपरीणसम्, महे मदन्तु राधसे।

सरो गौरो यथा पिब ॥ 22 ॥

8-45-22

मन्त्रार्थ :- इह = इसमें, यहां, यह त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा गोपरीणसम् = महाज्ञानी, पूर्ण ज्ञानी महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् मदन्तु = आनन्दित हों, हर्षित हों, तृप्त हों राधसे = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो सरो = सर गौरो = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। पिब = पी लो ॥

पदार्थ :- इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। गोपरीणसम् = महाज्ञानी, पूर्ण ज्ञानी (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पृ - भरना, पूर्ण करना, रि = हिंसा करना, जानना)। महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। मदन्तु = आनन्दित हों, हर्षित हों, तृप्त हों (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। राधसे = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। सरो = सर (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। गौरो = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। पिब = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 22 ॥

655. अपिबत् कद्रुवः सुतम्, इन्द्रः सहस्रबाह्वे।

अत्र आददिष्ट पौंस्यम् ॥ 26 ॥

8-45-26

मन्त्रार्थ - अपिबत् = पिया, पान किया कद्रुवः = भ्रमित, व्याकुल सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को इन्द्रः = परम ऐश्वर्य दाता सहस्रबाह्वे = सहस्रबाह्व के लिए अत्र = यहाँ आददिष्ट = आददिष्ट, ग्रहण किया पौंस्यम् = बढ़ाने वाले को ॥ 26 ॥

पदार्थ - अपिबत् = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। कद्रुवः = भ्रमित, व्याकुल (कद - भ्रमित होना, घबरा जाना, व्याकुल होना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्य दाता (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सहस्रबाह्वे = सहस्रबाह्व के लिए (सहस्र = हजार, संख्या, बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। अत्र = यहाँ (अव्यय)। आददिष्ट = ग्रहण किया (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दद-दा - दान करना, देना, त्याग करना)। पौंस्यम् = बढ़ाने वाले को (पुंस - बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना) ॥ 26 ॥

656. तरणिम् वो जनानाम्, त्रदम् वाजस्य गोमतः।

समानम् उ प्र शंसिषम् ॥ 28 ॥

8-45-28

मन्त्रार्थ - तरणिम् = तैरने वाले को, तैरने के साधन को **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का **त्रदम्** = त्रद को, रक्षा को **वाजस्य** = विद्या का, गति का **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले **समानम्** = समान को **उ** = निश्चय ही, भी **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **शंसिषम्** = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाले को ॥ 28 ॥

पदार्थ - तरणिम् = तैरने वाले को, तैरने के साधन को (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **त्रदम्** = त्रद को, रक्षा को (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना, तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वाजस्य** = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **शंसिषम्** = स्तुति करने वाला, प्रशंसा करने वाले को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ 28 ॥

657. भिन्धि विश्वा अप द्विषः, परि बाधो जही मृधः ।

वसु स्पर्हम् तत् आभर ॥ 40 ॥ 8-45-40

मन्त्रार्थ - भिन्धि = भेदन करने वाले **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अप** = दूर, नीचे, अपकार **द्विषः** = द्वेष करने वाला **परि** = सभी तरफ **बाधो** = बाधित **जही** = हनन करो, नष्ट करो **मृधः** = हिंसक, आद्र **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **स्पर्हम्** = स्पर्ह, सेवक को **तत्** = वह, उस को **आभर** = भरण करो ॥ 40 ॥

पदार्थ - भिन्धि = भेदन करने वाले (भिद्-भिन्द् - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **बाधो** = बाधित (बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **जही** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना)। **मृधः** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्पर्हम्** = स्पर्ह, सेवक को (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आभर** = भरण करो (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना) ॥ 40 ॥

658. यत् वीडौ इन्द्र यत् स्थिरे, यत् पर्शाने पराभृतम् ।

वसु स्पर्हम् तत् आ भर ॥ 41 ॥ 8-45-41

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो **वीडौ** = विशेष स्तुति कीजिए, दृढ़ कीजिए **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **यत्** = जिसे, जो **स्थिरे** = स्थिरों द्वारा **यत्** = जिसे, जो **पर्शाने** = स्नेह, सरलता, गति, सिंचन में **पराभृतम्** = पराभृत को **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **स्पर्हम्** = स्पर्ह, सेवक को **तत्** = वह, उस को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 41 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वीडौ** = विशेष स्तुति कीजिए, दृढ़ कीजिए (वि = विशेष, ईड् = स्तुति करना, वीड् - स्थिर होना, दृढ़ होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **स्थिरे** = स्थिरों द्वारा (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पर्शाने** = स्नेह, सरलता, गति, सिंचन

में (पर्ष - स्निग्ध होना, स्नेह चिकना होना, तेल लगाना, पृष् - सींचना, सहन करना, सरल होना, जाना, चलना)। **पराभृतम्** = पराभृत को (परा - परम, परे, पीछे, विपरीत, भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्पार्हम्** = स्पार्ह, सेवक को (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 41 ॥

659. यस्य ते विश्व-मानुषो भूरेः दत्तस्य वेदति ।

वसु स्पार्हम् तत् आ भर ॥ 42 ॥ 8-45-42

मन्त्रार्थ :- यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए विश्वम् = सबको, सब विश्व को मानुषो = निरन्तर, सम्यक् प्रशंसक भूरेः = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का दत्तस्य = दिये हुए का, दत्त का वेदति = ज्ञान, जानो, जानता है वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले स्पार्हम् = स्पार्ह, सेवक को तत् = वह, उस को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 42 ॥

पदार्थ :- यस्य = जिसका (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। विश्व = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। मानुषक् = निरन्तर, सम्यक् प्रशंसक (आनुषक् = निरन्तर (अव्यय), आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। भूरेः = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का (भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। दत्तस्य = दिये हुए का, दत्त का (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। वेदति = ज्ञान, जानो, जानता है (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। स्पार्हम् = स्पार्ह, सेवक को (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 42 ॥

(193) सूक्त 46

660. त्वावतः पुरुवसो, वयम् इन्द्र प्रणेतः ।

स्मसि स्थातः हरीणाम् ॥ 1 ॥ 8-46-1

मन्त्रार्थ - त्वावतः = तुम्हारे समान पुरुवसो = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक वयम् = हम, हम सब, हम लोग इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली प्रणेतः = ले जाने वाला, ले जायी गयी स्मसि = हैं स्थातः = स्थित हरीणाम् = ले जाने वाले, हरण करने वाले का ॥ 1 ॥

पदार्थ - त्वावतः = तुम्हारे समान (त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा, वतः - समान)। पुरुवसो = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, रव् - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। प्रणेतः = ले जाने वाला, ले जायी गयी (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मिलना, ले जाना)। स्मसि = हैं (अस् = होना)। स्थातः = स्थित (स्था - स्थित होना, ठहरना)। हरीणाम् = ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना) ॥ 1 ॥

661. सुनीथो घा सः मर्त्यो, यम् मरुतो यम् अर्यमा ।

मित्राः पान्ति अद्रुहः ॥ 4 ॥ 8-46-4

मन्त्रार्थ - सुनीथो = स्तुति करना **घा** = ही **सः** = सहित, साथ **मर्त्यो** = मृत्यु, मरणशील **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **मरुतो** = मरणशीलों का **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी **मित्राः** = मित्र **पान्ति** = पालन करें, **अद्रुहः** = द्रोह न करने वाला ॥ 4 ॥

पदार्थ - सुनीथो = स्तुति करना (सु - सुन्दर, अच्छा, नी = ले जाना, नीथ - स्तुति करना, प्रशंसा करना, नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **घा** = ही (अव्यय, निपात)। **सः** = सहित, साथ (उपसर्ग)। **मर्त्यो** = मृत्यु, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **मरुतो** = मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **मित्राः** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **पान्ति** = पालन करें, (पा = रक्षा करना)। **अद्रुहः** = द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना) ॥ 4 ॥

662. गव्या उ षु णो यथा, पुरा अश्वया उत्त रथया ।

वरिवस्य महामह ॥ 10 ॥

8-46-10

मन्त्रार्थ - गव्या = गव्य, कहने योग्य, कथनीय **उ** = निश्चय ही, भी **षु** = अच्छा **णो** = हमारा, हमारे लिए, हमको **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **पुरा** = पहले **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **उत्त** = ही **रथया** = रथ के लिए **वरिवस्य** = वरणीय का **महामह** = महान् ॥ 9 ॥

पदार्थ - गव्या = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **षु** = अच्छा। **णो** = हमारा, हमारे लिए, हमको (सर्वनाम)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचाना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचाना, भोजन करना)। **उत्त** = ही (अव्यय)। **रथया** = रथ के लिए (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **वरिवस्य** = वरणीय का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **महामह** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) ॥ 10 ॥

663. अभि वो वीरम् अन्धसो मदेषु, गाय गिरा महा विचेतसम् ।

इन्द्रम् नाम श्रुत्यम् शाकिनम् वचो यथा ॥ 14 ॥

8-46-14

मन्त्रार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **वीरम्** = पराक्रमी, वीर **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में **गाय** = गाने के लिए, गायन के लिए, गाकर **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ **महा** = महान् **विचेतसम्** = विशेष चेतना **इन्द्रम्** = इन्द्र को **नाम** = नाम वाले **श्रुत्यम्** = श्रुति **शाकिनम्** = शक्तिदाता के लिए **वचो** = वचन को **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार ॥ 14 ॥

पदार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वीरम्** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **गाय** = गाने के लिए, गायन के लिए, गाकर (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **महा** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **विचेतसम्** = विशेष चेतना (वि = विशेष, विपरीत, चित - विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **श्रुत्यम्** = श्रुति (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **शाकिनम्** = शक्तिदाता के लिए (शक्-

शक्व - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सकना)। वचो = वचन को (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार ॥ 14 ॥

अनुवाक:- 64

(194) सूक्त 49

664. अभि प्र वः सुराधसम्, इन्द्रम् अर्च यथा विदे ।

यो जरितृभ्यो मघवा, पुरुवसुः सहस्रेण इव शिक्षति ॥ 1 ॥ 8-49-1

मन्त्रार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए सुराधसम् = उत्तम राध, उत्तम सिद्धि को इन्द्रम् = इन्द्र को अर्च = पूजते हैं, पूजा यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार विदे = विद्वान् यो = जो जरितृभ्यो = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों के लिए मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् पुरुवसुः = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक सहस्रेण = हजार इव = समान, की भाँति, के समान शिक्षति = शिक्षित करता है, सिखाता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। सुराधसम् = उत्तम राध, उत्तम सिद्धि को (राध - सिद्ध करना, पूरा करना, बढ़ना, निर्णय करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अर्च = पूजते हैं, पूजा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। विदे = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। यो = जो। जरितृभ्यो = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों के लिए (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। पुरुवसुः = हे अग्र-वसन वाले, अग्रगामी, अग्रणी दानी प्रकाशक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, रा = दान करना, र्व - जाना, प्रकाश करना, वस् - वसना, वास करना)। सहस्रेण = हजार (संख्या)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। शिक्षति = शिक्षित करता है, सिखाता है (शिक्ष - शिक्षा देना) ॥ 1 ॥

665. शतानीका इव प्र जिगाति धृष्णुया, हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।

गिरेः इव प्र रसाः अस्य, पिन्चिरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥ 2 ॥ 8-49-2

मन्त्रार्थ :- शतानीका = शतायु, शतनायकों वाला इव = समान, की भाँति, के समान प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक जिगाति = स्तुति करता है धृष्णुया = विजय, गर्व द्वारा हन्ति = मारता है वृत्राणि = वृत्रों को, हिंसा को दाशुषे = दानी के लिए गिरेः = गिरि से, स्तुति, वाणी, बोध, सिञ्चन से इव = समान, की भाँति, के समान प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक रसाः = रसयुक्त अस्य = इसका पिन्चिरे = प्रगति करते हैं, बहते हैं दत्राणि = दानियों को पुरुभोजसः = पुरु-भोज, अग्रणी संरक्षक ॥ 2 ॥

पदार्थ :- शतानीका = शतायु, शतनायकों वाला (शतम् = सौ, अन - जीना, समर्थ होना, जाना, नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। जिगाति = स्तुति करता है (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। धृष्णुया = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। हन्ति = मारता है (हन् - मारना)। वृत्राणि = वृत्रों को, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना)। गिरेः = गिरि से, स्तुति, वाणी, बोध, सिञ्चन से (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। रसाः = रसयुक्त (रस् - स्वाद लेना, शब्द करना, स्नेह होना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। पिन्चिरे = प्रगति करते हैं, बहते हैं (पि = गति करना, जाना, जानना,

पाना, पिन्व = सेवा करना, सेचन करना, प्रोक्षण करना, पिण् - शब्द करना)। **दत्राणि** = दानियों को (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **पुरुभोजसः** = पुरु-भोज, अग्रणी संरक्षक (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना) ॥ 2 ॥

666. त्वम् इत् सप्रथा असि, अग्ने त्रातः ऋतः कविः।

त्वाम् विप्रासः समिधान, दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥ 5 ॥

8-49-5

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम इत् = ही सप्रथा = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत असि = हो अग्ने = हे अग्नि त्रातः = रक्षक, पालक, पोषक ऋतः = ऋत, सञ्चालन नियम कविः = ज्ञानी, कवि त्वाम् = तुमको, तुम्हारी विप्रासः = विप्रगण समिधान = सम्यक् प्रकाश, प्रकाशित होता हुआ दीदिव = तेजस्वी! आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विवासन्ति = विशेष वास करते हैं वेधसः = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए ॥ 5 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। सप्रथा = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। असि = हो (अस् - होना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। त्रातः = रक्षक, पालक, पोषक (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। ऋतः = ऋत, सञ्चालन नियम (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। विप्रासः = विप्रगण (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। समिधान = सम्यक् प्रकाश, प्रकाशित होता हुआ (सम् = सम्यक्, भलीभांति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। दीदिव = तेजस्वी! (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। विवासन्ति = विशेष वास करते हैं (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना)। वेधसः = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) ॥ 5 ॥

667. आ नो अग्ने वयोवृधम्, रयिम् पावक शंस्यम्।

रास्वा च नः उपमाते, पुरुस्पृहम् सुनीती सुयशस्तरम् ॥ 11 ॥

8-49-11

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अग्ने = हे अग्नि वयोवृधम् = वयोवृध को रयिम् = विद्या, ज्ञान को पावक = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला शंस्यम् = स्तुत्य को रास्वा = दान दो च = और नः = हमको, हमारे लिए, हमारा उपमाते = उपमान, निकट मान-मापन के लिए पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को सुनीती = अच्छी नीति सुयशस्तरम् = उत्तम यश, कीर्ति वाले ॥ 11 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वयोवृधम् = वयोवृध को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। पावक = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। शंस्यम् = स्तुत्य को (शंस् = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ रास्वा = दान दो (रा- देना, लेना, ग्रहण करना, रस्, रास् = शब्द करना, रस् = रस होना, स्वाद लेना, प्रीति करना, प्यार करना, शब्द करना, रस लेना)। च = और। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। उपमाते = उपमान, निकट मान-मापन के लिए (उप- सपीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (स्पृह - इच्छा

करना, लिप्सा करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **सुनीती** = अच्छी नीति (सु - सुन्दर, अच्छा, नी = ले जाना)। **सुयशस्तरम्** = उत्तम यश, कीर्ति वाले (सु - सुन्दर, अच्छा, यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) ॥ 11 ॥

668. अग्ने जरितः विश्वपतिः, तेपानो देव रक्षसः ।

अप्रोषिवान् गृहपतिः महान् असि, दिवः पायुः दुरोणयुः ॥ 19 ॥

8-49-19

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि जरितः = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व विश्वपतिः = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी तेपानो = तपते हुए, तप करते हुए देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप रक्षसः = रक्षा करने वाला, रक्षस् अप्रोषिवान् = पूर्ण, सौम्य गृहपतिः = हे गृहपति ! महान् = बड़े, पूज्य, महान् असि = हो दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय पायुः = पायु, गति, पालन, रक्षण दुरोणयुः = दूर ले गया, ज्ञान, गमन, प्रप्ति हुआ ॥ 19 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। जरितः = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। विश्वपतिः = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। तेपानो = तपते हुए, तप करते हुए (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। रक्षसः = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। अप्रोषिवान् = पूर्ण, सौम्य (पुष = सौम्य होना, स्निग्ध होना, चिकना होना, प्रोक्षण करना, सींचना, पूर्ण करना, भरना)। गृहपतिः = हे गृहपति ! (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। असि = हो (अस् - होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। पायुः = पायु, गति, पालन, रक्षण (पय् - चलना, जाना, रक्षा करना, पालन करना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। दुरोणयुः = दूर ले गया, ज्ञान, गमन, प्रप्ति हुआ (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, ओण् - दूर ले जाना, द्रू-द्रूण - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, हिंसा करना) ॥ 19 ॥

(195) सूक्त 50

669. त्वम् हि आ इहि चेरवे, विदा भगम् वसुत्तये ।

उत् वावृषस्व मघवन् गविष्टये, उत् इन्द्र अश्वम् इष्टये ॥ 7 ॥

8-50-7

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। इहि = आओ, जानों चेरवे = चेरु के लिए, मिलन के लिए, वियोग के लिए विदा = विद्वान् भगम् = भग, सेवा को वसुत्तये = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले के लिए उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च वावृषस्व = वर्षा करो मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् गविष्टये = गविष्ट युगल, वाणी, ज्ञान, इच्छा के लिए उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को इष्टये = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि के लिए ॥ 7 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। इहि = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना)। चेरवे = चेरु के लिए, मिलन के लिए, वियोग के लिए (चिर - वियोग होना, मिलना)। विदा = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। भगम् = भग, सेवा को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। वसुत्तये = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले के लिए (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना,

सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **वावृषस्व** = वर्षा करो (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **गविष्टये** = गविष्ट युगल, वाणी, ज्ञान, इच्छा के लिए (गु = शब्द करना, मनन करना, गम् = जाना, जानना, पाना, इष् - इच्छा करना, एक-एक कर चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **इष्टये** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 7 ॥ साम 1581

670. यतः इन्द्र भयामहे, ततो नो अभयम् कृधि।

मघवन् शग्धि तव तत् नः ऊतये, वि द्विषो वि मृधो जहि ॥ 13 ॥ 8-50-13

मन्त्रार्थ - **यतः** = जिससे **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **भयामहे** - भयभीत होते हैं **ततो** = उससे, उसके अनन्तर **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **अभयम्** = अभय, भय-हीन, भय-मुक्त **कृधि** = करो **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **शग्धि** = शक्ति-सामर्थ्य हो **तव** = तुम्हारा **तत्** = उसको, उसे **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **ऊतये** = रक्षा के लिए **वि** = विशेष, विना, विलोम । **द्विषो** = द्वेष करने वाला **वि** = विशेष, विना, विलोम **मृधो** = हिंसक, आद्र **जहि** = हनन करो, नष्ट करो ॥ 13 ॥

पदार्थ - **यतः** = जिससे (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **भयामहे** = भयभीत होते हैं (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **ततो** = उससे, उसके अनन्तर (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **अभयम्** = अभय, भय-हीन, भय-मुक्त (अ - नहीं, भी = भय होना, डरना, घबराना)। **कृधि** = करो (कृ = करना)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **शग्धि** = शक्ति-सामर्थ्य हो (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **तत्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ - अच् - रक्षा करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना) ॥ 13 ॥ साम 1321

(196) सूक्त 51

671. कदा चन स्तरीः असि, नः इन्द्र सश्चसि दाशुषे।

उप उप इत् नु मघवन्, भूय इत् नु ते दानम् देवस्य पृच्यते ॥ 7 ॥ 8-51-7

मन्त्रार्थ - **कदा** = कब **चन** = ही **स्तरीः** = आच्छादन, विस्तार **असि** = हो **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **सश्चसि** = जाता है **दाशुषे** = दानी के लिए **उप** = समीप **उप** = समीप **इत्** = ही **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **भूय** = मानो पुनः, बहुत, अतिशय अधिक **इत्** = ही **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **दानम्** = दान को **देवस्य** = देव का **पृच्यते** = स्पर्श करता है ॥ 7 ॥

पदार्थ - **कदा** = कब (सर्वनाम)। **चन** = ही। **स्तरीः** = आच्छादन, विस्तार (स्तृ = आच्छादित करना, विस्तार करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सश्चसि** = जाता है (सश्च् = पाना, जानना, जाना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **इत्** = ही (अव्यय)। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्

(मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। भूय = मानो पुनः, बहुत, अतिशय अधिक (अव्यय)। इत् = ही (अव्यय)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। दानम् = दान को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। देवस्य = देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। पृच्यते = स्पर्श करता है (पृच् = संयम करना, तपस्या करना, स्पर्श करना, संयोग करना, मिलना) ॥ 7 ॥

672. यस्य अयम् विश्वः आर्यो, दासः शेवधिपा अरिः।

तिरः चित् अर्ये रुशमे पवीरवि, तुभ्य इत् सो अज्यते रयिः ॥ 9 ॥ 8-51-9

मन्त्रार्थ- यस्य जिसका अयम् यह विश्व सब आर्यो आर्य, दासः दास, शेवधिपा शेवधिप अरिः अरि, शत्रु। तिरश्चित् भीतर रखने वाला ही अर्ये अर्य में रुशमे हिंसा में पवीरवि पवित्र प्रकाश में तुभ्य तुम्हारे लिए इत् ही सो वह रयिः ज्ञान अज्यते स्थापित करता है ॥ 9 ॥

भावार्थ - यस्य जिसका अयम् यह विश्व सब आर्यो आर्य, दासः दास, शेवधिपा शेवधिप अरिः। इसका भावार्थ यह ले सकते हैं कि आर्य, दास, शेवधिप, अरि सभी उसके हैं। परमात्मा के तो सभी हैं, उसके लिए तो कोई भी पराया हो नहीं सकता है। तिरश्चित् भीतर रखने वाला ही अर्ये अर्य में रुशमे हिंसा में पवीरवि पवित्र प्रकाश में तुभ्य तुम्हारे लिए इत् ही सो वह रयिः ज्ञान अज्यते स्थापित करता है। इसका भावार्थ है कि वह सभी परिस्थितियों में हमारे लिए ज्ञान को स्थापित करता है। रयि का अर्थ धन भी मानते हैं तो कह सकते हैं कि परमात्मा हमारे लिए ज्ञान और धन व्यवस्था सभी स्थितियों में करता है, उसका लाभ उठाना हमारे प्रयासों तथा भावना पर निर्भर है।

विशेष - अर् - ऋ धातु के अर्थ गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना हैं। दास् धातु के अर्थ काटना, दान करना, सेवा करना है। शेव धातु का अर्थ सेचन, घर्षण, सेवा करना तथा सभा में बैठना है। धि धातु का अर्थ धारण करना है। अरि शब्द का सामान्यतः शत्रु अर्थ लिया जाता है। इस अर्थ में अरि को ऋ धातु से निष्पन्न मानने में ऋ धातु का अर्थ हिंसा करना लेना होगा। अरर धातु का अर्थ काटना होता है, इससे भी अरि शब्द को निष्पन्न माना जाता है। हिंसा करने वाला अथवा काटने वाला अरि अर्थात् शत्रु होता है। तिर् धातु का अर्थ भीतर रखना है। तिरः का अर्थ भीतर रखने वाला तथा तिरश्चित् का अर्थ भीतर रखने वाला ही होगा। पु धातु के अर्थ गति-ज्ञान-प्राप्ति करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पवित्र करना हैं। र्व धातु के अर्थ गति, ज्ञान, प्राप्ति, प्रकाश करना तथा रु धातु के अर्थ शब्द करना, गति करना, सम्भाषण करना, क्रोध करना, हिंसा करना हैं। इस प्रकार पवी-रवि का अर्थ पवित्र प्रकाश में लेना उचित है।

पदार्थ - यस्य = जिसका अयम् यह विश्व सब आर्यो आर्य (अर् - ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना), दासः = दास (दास् - काटना, दान करना, सेवा करना), शेवधिपा = शेवधिप (शेव - सेचन, घर्षण, सेवा करना, सभा में बैठना, धि - धारण करना) अरिः = अरि, शत्रु, तिरश्चित् = भीतर रखने वाला ही (तिर् - भीतर रखना) अर्ये = अर्य में (अर् - ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना) रुशमे = हिंसा में (रुश् - हिंसा करना) पवीरवि = पवित्र प्रकाश में (पु - गति-ज्ञान-प्राप्ति करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पवित्र करना, र्व - गति, ज्ञान, प्राप्ति, प्रकाश करना, रु - शब्द करना, गति करना, सम्भाषण करना, क्रोध करना, हिंसा करना) तुभ्य = तुम्हारे लिए इत् ही सो वह रयि - ज्ञान (रय्-रि, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना), अज्यते स्थापित करता है (अज् - जाना, स्थापना करना, अ - नहीं, जन् - जन्म होना, पाल् - पालन करना) ॥ 9 ॥

673. तुरण्यवो मधुमन्तम् घृतश्चुतम्, विप्रासो अर्कम् आनृचुः।

अस्मे रयिः पप्रथे वृष्ण्यम्, शवो अस्मे सुवानासः इन्दवः ॥ 10 ॥ 8-51-10

मन्त्रार्थ :- तुरण्यवो = शीघ्रतायुक्त मधुमन्तम् = मधुरता युक्त को घृतश्चुतम् = प्रकाश से सिञ्चित, प्रकाशयुक्त को विप्रासो = विप्रगण अर्कम् = अर्क, स्तोता, प्रशंसक को आनृचुः = स्तुति करते हैं अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए रयिः = विद्या, ज्ञान पप्रथे = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया वृष्ण्यम् = वर्षा करने वाले, पराक्रमी को शवो = शव, गति,

ज्ञान अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए सुवानासः = शब्दकर्ता इन्दवः = इन्दुगण ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **तुरण्यवो** = शीघ्रतायुक्त (तुर-तुरण् = शीघ्रता करना)। **मधुमन्तम्** = मधुरता युक्त को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **धृतश्च्युतम्** = प्रकाश से सिञ्चित, प्रकाशयुक्त को (धृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, श्च्युत् - टपकना, झरना, सींचना)। **विप्रासो** = विप्रगण (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। **अर्कम्** = अर्क, स्तोता, प्रशंसक को (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **आनृचुः** = स्तुति करते हैं (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **रयिः** = विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **पप्रथे** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **वृष्यम्** = वर्षा करने वाले, पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **शवो** = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **सुवानासः** = शब्दकर्ता (स्वन - शब्द करना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 10 ॥

(197) सूक्त 52

674. सः पूर्व्यो महानाम् वेनः, क्रतुभिः आनजे।

यस्य द्वारा मनुः पिता, देवेषु धियः आनजे ॥ 1 ॥ 8-52-1

मन्त्रार्थ - स = वह, उसने **पूर्व्यो** = पूर्व **महानाम्** = महान् का **वेनः** = विद्वान्, कान्तिमान् **क्रतुभिः** = क्रतुओं द्वारा **आनजे** = सम्यक् लज्जा में, प्राप्त होते हैं **यस्य** = जिसका **द्वारा** = द्वारा **मनुः** = विचार **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता **देवेषु** = देवों में **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि **आनजे** = सम्यक् लज्जा में ॥ 1 ॥

पदार्थ - सः = वह, उसने। **पूर्व्यो** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **महानाम्** = महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वेनः** = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। **क्रतुभिः** = क्रतुओं द्वारा (कृ = करना)। **आनजे** = सम्यक् लज्जा में, प्राप्त होते हैं (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नज् - लज्जा करना, नज्ज् - गति करना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, विस्मरण करना, नाश होना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **द्वारा** = द्वारा (द्वृ-द्वृ - वरण करना, स्वीकार करना, आच्छादन करना, अपनाना, रोकना)। **मनुः** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **आनजे** = सम्यक् लज्जा में (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नज् - लज्जा करना) ॥ 1 ॥

675. अस्तावि मन्म पूर्व्यम्, ब्रह्म इन्द्राय वोचत।

पूर्वीः ऋतस्य बृहतीः अनूषत, स्तोतुः मेधाः असृक्षत ॥ 9 ॥

8-52-9

मन्त्रार्थ :- **अस्तावि** = स्तुति की है, प्रकाशमान **मन्म** = विचार **पूर्व्यम्** = पहले, पूर्व **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **वोचत** = बोलो, कहो **पूर्वीः** = पूर्व **ऋतस्य** = ऋत का **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **अनूषत** = स्तुति की **स्तोतुः** = स्तुति करने वाले **मेधाः** = मेधा **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **अस्तावि** = स्तुति की है, प्रकाशमान (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, अस - होना, रहना, जाना,

लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **मन्म** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **पूर्वम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वोचत** = बोलो, कहो (वच् - बोलना, कहना)। **पूर्वीः** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अनूषत** = स्तुति की (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **स्तोतुः** = स्तुति करने वाले (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **मेधाः** = मेधा (मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना) ॥ 9 ॥

676. सम् इन्द्रो रायो बृहतीः अधूनुत, सम् क्षोणी सम् उ सूर्यम् ।

सम् शुक्रासः शुचयः सम् गवाशिरः, सोमाः इन्द्रम् अमन्दिषुः ॥ 10 ॥ 8-52-10

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली **रायो** = गति, विद्या, वाणी **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **अधूनुत** = कम्पित किया, क्षोभित किया **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **क्षोणी** = गति, ध्वनि करने वाली **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **उ** = निश्चय ही, भी **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **शुक्रासः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **शुचयः** = पवित्र **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **गवाशिरः** = गवाशिर **सोमाः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **अमन्दिषुः** = आनन्दित, प्रकाशित, तुष्ट किया ॥ 10 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **रायो** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **बृहतीः** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अधूनुत** = कम्पित किया, क्षोभित किया (धून् - कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **क्षोणी** = गति, ध्वनि करने वाली (क्षु - शब्द करना, जाना, जानना, पाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **शुक्रासः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शुचयः** = पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **गवाशिरः** = गवाशिर (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **सोमाः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अमन्दिषुः** = आनन्दित, प्रकाशित, तुष्ट किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना) ॥ 10 ॥

(198) सूक्त 53

677. इन्द्र नेदीय आ इत्, इहि मितमेधाभिः ऊतिभिः ।

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली नेदीय = निन्दनीय, निकट रखने योग्य आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण इत् = ही इहि = आओ, जानों मितमेधाभिः = मितमेधावियों द्वारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण शन्तम = हे कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी शन्तमाभिः = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी द्वारा अभिष्टिभिः = सर्वथा इष्ट, अभीष्टि द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण स्वापे = उत्तम पालक स्वापिभिः = उत्तम पालकों द्वारा ॥ 5 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नेदीय = निन्दनीय, निकट रखने योग्य (निद = निन्दा करना, समीप जाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। इत् = ही (अव्यय)। इहि = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना)। मितमेधाभिः = मितमेधावियों द्वारा (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। शन्तम = हे कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। शन्तमाभिः = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी द्वारा (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। अभिष्टिभिः = सर्वथा इष्ट, अभीष्टि द्वारा (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इष् = इच्छा करना, चाहना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। स्वापे = उत्तम पालक (सु - अच्छा, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना)। स्वापिभिः = उत्तम पालकों द्वारा (सु - अच्छा, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना) ॥ 5 ॥

(199) सूक्त 55

678. वयम् एनम् इत् आ ह्यो, अपीपेम इह वज्रिणम्।

तस्मा उ अद्य समना, सुतम् भर आ नूनम् भूषत श्रुते ॥ 7 ॥ 8-55-7

मन्त्रार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग एनम् = इसको, इसे इत् = ही आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ह्यो = कल अपीपेम = पिया, पान किया इह = इसमें, यहां, यह वज्रिणम् = वज्र, गतिमान को तस्मा = इससे उ = निश्चय ही, भी अद्य = आज समना = समान मन वाले सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नूनम् = निश्चय ही भूषत = भूषित हों, भूषित करो श्रुते = श्रुति करने के लिए ॥ 7 ॥

पदार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। एनम् = इसको, इसे (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ह्यो = कल (बीता हुआ दिन, अव्यय)। अपीपेम = पिया, पान किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ - नहीं, पी- पीना, पान करना)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। वज्रिणम् = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। तस्मा = इससे (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी। अद्य = आज (अव्यय)। समना = समान मन वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नूनम् = निश्चय ही (अव्यय)। भूषत = भूषित हों, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। श्रुते = श्रुति करने के लिए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 7 ॥

(200) सूक्त 56

679. अचेति अग्निः चिकितुः, हव्यवाड् न सुमद्रथः

अग्निः शुक्रेण शोचिषा, बृहत् सूर्यो अरोचत, दिवि सूर्यो अरोचत ॥ 5 ॥ 8-56-5

मन्त्रार्थ - अचेति = अचेत है, आदर करते हैं, मानते हैं **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **चिकितुः** = विद्वान् **हव्यवाङ्** = हव्य को वहन करने वाले **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सुमद्रथः** = सुमति, सुबुद्धि रथ **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **शुक्रेण** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से **शोचिषा** = शोचमान द्वारा **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **सूरो** = सूर्य **अरोचत** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **अरोचत** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ ॥ 5 ॥

पदार्थ - अचेति = अचेत है, आदर करते हैं, मानते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अच् - मरना, जाना, चलना, आदर करना, मांगना, चित् - चेतन होना, सम्यक् जानना, चिन्तन करना, विचार करना, सन्देह करना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **चिकितुः** = विद्वान् (चिकित् - जानना)। **हव्यवाङ्** = हव्य को वहन करने वाले (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सुमद्रथः** = सुमति, सुबुद्धि रथ (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना, रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **शुक्रेण** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सूरो** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अरोचत** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अरोचत** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना) ॥ 5 ॥

(201) सूक्त 60

680. अग्ने आ याहि अग्निभिः, होतारम् त्वा वृणीमहे।

आ त्वाम् अनक्तु प्रयता हविष्मती, यजिष्ठम् बर्हिः आसदे ॥ 1 ॥

8-60-1

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **अग्निभिः** = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **अनक्तु** = प्रकाशित करे, प्राणवान् बनाये **प्रयता** = प्रयत्न करने वाला **हविष्मती** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन को **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट्, महान् **आसदे** = बैठे, प्राप्त हो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अग्निभिः** = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **होतारम्** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना,

आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वृणीमहे** = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **अनक्तु** = प्रकाशित करे, प्राणवान् बनाये (अनक् = जाना, स्वच्छ करना, सराहना, विख्यात करना, चमकना, प्रकाशित होना, तैलमर्दन करना, अभ्यञ्जन करना, संवारना, सजाना, अन् - जीना, समर्थ होना, जाना)। **प्रयता** = प्रयत्न करने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, यत् = यत्न करना, निश्चय करना, यन् - उद्धार करना, यम् - आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **हविष्वती** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **यजिष्ठम्** = यजिष्ठ को, यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **आसदे** = बैठे, प्राप्त हो (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥

681. अच्छा हि त्वा सहसः सूनो, अङ्गिरः स्रुचः चरन्ति अध्वरे ।

ऊर्जो नपातम् घृतकेशम् ईमहे, अग्निम् यज्ञेषु पूर्वम् ॥ 2 ॥ 8-60-2

मन्त्रार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **हि** = ही, निश्चय **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सहसः** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए **सूनो** = उत्पन्नकर्ता, ऐश्वर्यवान् **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला **स्रुचः** = स्रुच **चरन्ति** = विचरण करते हैं, चलते हैं **अध्वरे** = अहिंसक में **ऊर्जो** = ऊर्जा **नपातम्** = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को **घृतकेशम्** = घृत-केश को, प्रकाश से आच्छादित को, व्यापक प्रकाश को **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **यज्ञेषु** = यजनों में **पूर्वम्** = पहले, पूर्व ॥

पदार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सहसः** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **सूनो** = उत्पन्नकर्ता, ऐश्वर्यवान् (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **स्रुचः** = स्रुच (स्रु = जाना, जानना, पाना, सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **चरन्ति** = विचरण करते हैं, चलते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व - ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **ऊर्जो** = ऊर्जा (ऊर्ज = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **नपातम्** = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को (नप - पहुँचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। **घृतकेशम्** = घृत-केश को, प्रकाश से आच्छादित को, व्यापक प्रकाश को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **यज्ञेषु** = यजनों में (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **पूर्वम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना) ॥ 2 ॥

682. पाहि नो अग्ने एकया, पाहि उत्त द्वितीयया ।

पाहि गीर्भिः तिसृभिः, ऊर्जाम् पते पाहि, चतसृभिः वसो ॥ 9 ॥ 8-60-9

मन्त्रार्थ :- पाहि = पालन करो, रक्षा करो **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अग्ने** = हे अग्नि **एकया** = एक द्वारा **पाहि** = पालन करो, रक्षा करा **उत्त** = ही **द्वितीयया** = द्वित या दो के लिए **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो **गीर्भिः** =

वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **तिसृभिः** = तीन **ऊर्जाम्** = ऊर्जा, बल, प्राण, चेतना **पते** = पति **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो **चतसृभिः** = चार **वसो** = वसु ॥ 9 ॥

भावार्थ :- एक वाणी से रक्षा करो, दूसरी वाणी से रक्षा करो, तीसरी वाणी से रक्षा करो, चौथी वाणी से रक्षा करो। हम परमात्मा से प्रार्थना कर रहे हैं कि एक, दो, तीन, चार वाणियों से रक्षा करो। वेद को हम परमात्मा की वाणी मानते हैं। अतः चार वाणियों का भावार्थ चार वेदों को प्रमुखता से माना जाता है। 9 ॥

पदार्थ - **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **एकया** = एक द्वारा (एक = एक, एक - विचार करना)। **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **उत** = ही (अव्यय)। **द्वितीयया** = द्वित या दो के लिए (द्वि = दो, संख्या)। **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **तिसृभिः** = तीन (संख्या)। **ऊर्जाम्** = ऊर्जा, बल, प्राण, चेतना (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **चतसृभिः** = चार। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-रुनेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 9 ॥

683. पाहि विश्वस्मात् रक्षसो, अराव्यः प्र स्म वाजेषु नो अव।

त्वाम् इत् नेदिष्ठम् देवातातये, आपिम् नक्षामहे वृधे ॥ 10 ॥ 8-60-10

मन्त्रार्थ :- **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो **विश्वस्मात्** = विश्व से, सब से **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् **अराव्यः** = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **स्म** = है **वाजेषु** = वाजों में, विद्याओं में, गतियों में **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **इत्** = ही **नेदिष्ठम्** = अति निन्दक, अति निकट को **देवातातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए **आपिम्** = पालक को, प्राप्त को **नक्षामहे** = प्राप्त करते हैं **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **विश्वस्मात्** = विश्व से, सब से (सर्वनाम)। **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **अराव्यः** = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रा - देना, रव - जाना, प्रकाश करना, रु - शब्द करना, ध्वनि करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **स्म** = है (अस् - होना)। **वाजेषु** = वाजों में, विद्याओं में, गतियों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **नेदिष्ठम्** = अति निन्दक, अति निकट को (निद = निन्दा करना, समीप जाना)। **देवातातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आपिम्** = पालक को, प्राप्त को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **नक्षामहे** = प्राप्त करते हैं (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)। **वृधे** = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 10 ॥

684. शेषे वनेषु मात्रोः, सम् त्वा मर्त्तास इन्धते।

अतन्द्रो हव्या वहसि, हविष्कृत आत् इत् देवेषु राजसि ॥ 15 ॥ 8-60-15

मन्त्रार्थ - **शेषे** = शेष के लिए **वनेषु** = वाणी में, वनों में **मात्रोः** = माताओं में **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति

त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा मर्त्तास = मर्य, मरणशील इन्धते = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं अतन्द्रो = विस्तृत किया हव्या = आदान-प्रदान करने योग्य, हव्य, देय वहसि = वहन करते हो हविष्कृत = हविकर्ता आत् = चिरन्तन, नित्य इत् = ही देवेषु = देवों में राजसि = प्रकाशित होता है ॥ 15 ॥

पदार्थ - शेषे = शेष के लिए (शिष - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **वनेषु** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **मात्रोः** = माताओं में (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **मर्त्तास** = मर्य, मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **इन्धते** = प्रकाशित होते हैं, प्रकाशित करते हैं (इध्-इधि-इन्ध - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **अतन्द्रो** = विस्तृत किया (तन् - विस्तार करना, भरोसा करना, आश्रय देना, सहाय करना, शब्द करना, पीड़ा करना, दुःख देना, तन्त्र = देखना, दिखाना)। **हव्या** = आदान-प्रदान करने योग्य, हव्य, देय (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **वहसि** = वहन करते हो (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **हविष्कृत** = हविकर्ता (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, कृ - करना)। **आत्** = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **राजसि** = प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) ॥ 15 ॥

(202) सूक्त 61

685. उभयम् शृणवत् च नः, इन्द्रो अर्वाक् इदम् वचः।

सत्राच्या मघवान् सोमपीतये, धिया शविष्ठ आ गमत् ॥ 1 ॥ 8-61-1

मन्त्रार्थ - उभयम् = दोनों को **शृणवत्** = सुनें **च** = और **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् **अर्वाक्** = गतिशील, शब्दकर्ता **इदम्** = यह, इसको **वचः** = वचन **सत्राच्या** = विस्तार, सम्बन्ध, सत्य देने वाला **मघवान्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **शविष्ठ** = अत्यन्त समीपगामी **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - उभयम् = दोनों को (सर्वनाम)। **शृणवत्** = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना, जाना)। **च** = और। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यवान् (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्वाक्** = गतिशील, शब्दकर्ता (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **इदम्** = यह, इसको (सर्वनाम)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **सत्राच्या** = विस्तार, सम्बन्ध, सत्य देने वाला (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, चि - चुनना, एकत्र करना, सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, रा - देना, मिल जाना)। **मघवान्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सोमपीतये** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पान के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **शविष्ठ** = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले, जाता है (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥ 1 ॥

686. तम् हि स्वराजम् वृषभम्, तम् ओजसा धिषणे निष्टतक्षतुः ।

उत उपमानाम् प्रथमो नि षीदसि, सोमकामम् हि ते मनः ॥ 2 ॥ 8-61-2

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे हि = ही, निश्चय स्वराजम् = स्वयं प्रकाशमान को वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को तम् = उसको, उसे ओजसा = ओज द्वारा धिषणे = वाणी में निष्टतक्षतुः = निष्टतक्ष होते हैं, वाणी से प्राप्त होते हैं उत = ही, भी, ओर उपमानाम् = उपमानों का प्रथमो = प्रथम, पहला, विस्तार नि = निश्चित, निरन्तर षीदसि = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो सोमकामम् = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता की कामना को, सोम की इच्छा को हि = ही, निश्चय ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए मनः = मन ॥ 2 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। स्वराजम् = स्वयं प्रकाशमान को (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना)। वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। धिषणे = वाणी में (धिष् = शब्द करना, बोलना)। निष्टतक्षतुः = निष्टतक्ष होते हैं, वाणी से प्राप्त होते हैं (नि - निश्चित, निरन्तर, निष् - प्राप्त करना, ले जाना, तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। उपमानाम् = उपमानों का (उप- समीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना, मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। प्रथमो = प्रथम, पहला, विस्तार (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। षीदसि = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। सोमकामम् = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता की कामना को, सोम की इच्छा को (सु - उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू - प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना, कम - चाहना, इच्छा करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मनः = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 2 ॥

687. शग्धि उ षु शचीपत, इन्द्र विश्वाभिः ऊतिभिः ।

भगम् न हि त्वा यशसम्, वसुविदम् अनु शूर चरामसि ॥ 5 ॥

8-61-5

मन्त्रार्थ - शग्धि = शक्ति-सामर्थ्य हो उ = निश्चय ही, भी षु = उत्तम, अच्छा शचीपत = उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली विश्वाभिः = सभी द्वारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा भगम् = भग, सेवा को न = नहीं, समान, उपमार्थक हि = ही, निश्चय त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा यशसम् = यश, कीर्ति को वसुविदम् = वसुविद् को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल शूर = वीर, पराक्रमी चरामसि = चरते हो, विचरण करते हैं ॥

पदार्थ - शग्धि = शक्ति-सामर्थ्य हो (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। उ = निश्चय ही, भी। षु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। शचीपत = उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी (शच- स्पष्ट बोलना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। विश्वाभिः = सभी द्वारा (सर्वनाम)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। भगम् = भग, सेवा को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करेना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। यशसम् = यश, कीर्ति को (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। वसुविदम् = वसुविद् को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-रुनेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना,

वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **शूर** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **चरामसि** = चरते हो, विचरण करते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना) ॥ 5 ॥

688. पौरो अश्वस्य पुरुकृत् गवाम्, असि उत्सो देव हिरण्ययः ।

न किः हि दानम् परिमर्धिषत् त्वे, यत् यत् यामि तत् आ भर ॥ 6 ॥ 8-61-6

मन्त्रार्थ :- पौरो = पूर्ण करने वाले अश्वस्य = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का पुरुकृत् = पहले से किया हुआ, बहुत किया हुआ गवाम् = गवा को, गौ को असि = हो उत्सो = उत्स देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप हिरण्ययः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला न = नहीं, समान, उपमार्थक किः = कोई, किसी हि = ही, निश्चय दानम् = दान को परिमर्धिषत् = परिमर्द्धित किया, नष्ट किया त्वे = तुममें यत् = जिसे, जो यत् = जिसे, जो यामि = जाता हूँ तत् = वह, उस को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 6 ॥

पदार्थ :- पौरो = पूर्ण करने वाले (पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। अश्वस्य = अश्व का, तीव्र गति युक्त, व्यापक का (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। पुरुकृत् = पहले से किया हुआ, बहुत किया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, कृ = करना)। गवाम् = गवा को, गौ को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना)। असि = हो (अस् - होना)। उत्सो = उत्स (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, सु = उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। हिरण्ययः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। किः = कोई, किसी (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। दानम् = दान को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। परिमर्धिषत् = परिमर्द्धित किया, नष्ट किया (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, मृध - दबाना, मृध - मार डालना या दुःख देना, आर्द्र करना, गीला करना, गीला होना)। त्वे = तुममें (सर्वनाम)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। यामि = जाता हूँ (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 6 ॥

689. त्वम् पुरु सहस्राणि शतानि, च यूथा दानाय मंहसे ।

आ पुरन्दरम् चकृम, विप्रवचसः इन्द्रम् गायन्तो अवसे ॥ 8 ॥ 8-61-8

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम पुरु = पहले, आगे सहस्राणि = हजार शतानि = सौ को च = और यूथा = यूथ दानाय = दान के लिए मंहसे = महान् के लिए, महः के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम पुरन्दरम् = पुरन्दर को, अग्रगामी, अग्रणी का आदर करने वाले को चकृम = किया विप्रवचसः = विशेष उत्तम वचन वाले इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को गायन्तो = गाते हैं, गायन करने वाले अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। पुरु = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। सहस्राणि = हजार (संख्या)। शतानि = सौ को (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। यूथा = यूथ (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना)। दानाय = दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। मंहसे = महान् के लिए, महः के लिए (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। पुरन्दरम् = पुरन्दर को, अग्रगामी, अग्रणी का आदर करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, दृ = आदर करना, सम्मान

करना)। **चकृम्** = किया (कृ = करना)। **विप्रवचसः** = विशेष उत्तम वचन वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गायन्तो** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना) ॥ 8 ॥

690. त्वम् हि राधसस्पते राधसो, महः क्षयस्य असि विधर्ता ।

तम् त्वा वयम् मघवन् इन्द्र गिर्वणः, सुतावन्तो हवामहे ॥ 14 ॥ 8-61-14

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम **हि** = ही, निश्चय **राधसस्पते** = हे राधस-पति, शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का पति **राधसो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का **महः** = महान् **क्षयस्य** = निवास का **असि** = हो **विधर्ता** = विधर्ता, विशेष धारणकर्ता **तम्** = उसको, उसे **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन **सुतावन्तो** = सुतावान्, रचनावान् **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 14 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **राधसस्पते** = हे राधस-पति, शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का पति (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **राधसो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **महः** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **क्षयस्य** = निवास का (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना, निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **विधर्ता** = विधर्ता, विशेष धारणकर्ता (वि - विशेष, धृ = धारण करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **सुतावन्तो** = सुतावान्, रचनावान् (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 14 ॥

691. अद्य अद्य आ श्वः श्वः, इन्द्र त्रास्व परे च नः ।

विश्वा च नो जरितृन् सत्पते, अहा दिवा नक्तम् च रक्षिषः ॥ 17 ॥ 8-61-17

मन्त्रार्थ :- अद्य = आज **अद्य** = आज **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **श्वः-श्वः** = सभी प्रगतिशील **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **त्रास्व** = रक्षण, पालन, पोषण करे **परे** = पर, परम, बाद में **च** = और **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **च** = और **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **जरितृन्** = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व का **सत्पते** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक **अहा** = दिन, व्यापक, विस्तृत **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **नक्तम्** = नक्त, नष्ट, विनाशक को **च** = और **रक्षिषः** = रक्षा करता है ॥ 17 ॥

पदार्थ :- अद्य = आज (अव्यय)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **श्वः-श्वः** = सभी प्रगतिशील (श्व-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **त्रास्व** = रक्षण, पालन, पोषण करे (त्रै = पालन करना, रक्षा करना, पोषण करना)। **परे** = पर, परम, बाद में (पर = पराया, अन्य, दूसरा, परे, पश्चात्, बाद में (उपसर्ग))। **च** = और (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **च** = और (अव्यय)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **जरितृन्** = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व का (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **सत्पते** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना,

निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **अहा** = दिन, व्यापक, विस्तृत (अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **नक्तम्** = नक्त, नष्ट, विनाशक को (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **च** = और (अव्यय)। **रक्षिषः** = रक्षा करता है (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना) ॥ 17 ॥

692. प्रभङ्गी शूरो मघवा, तुवीमघः संमिशलो वीर्याय कम्।

उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो, नि या वज्रम् मिमिक्षतुः ॥ 18 ॥ 8-61-18

मन्त्रार्थ :- प्रभङ्गी = प्रभञ्जन करने वाला शूरो = वीर, पराक्रमी मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् तुवीमघः = बहुत धन वाले, महाधनी संमिशलो = सम्यक् व्यापक वीर्याय = पराक्रम, वीरता के लिए कम् = किसको उभा = दोनों, पूर्णता ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए बाहू = प्रयास करने वाले वृषणा = वर्षा करने वाला, बरसाओ, पराक्रमी शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला नि = निश्चित, निरन्तर या = जो वज्रम् = वज्र, गतिमान को मिमिक्षतुः = सिंचन करते हैं ॥ 18 ॥

पदार्थ :- प्रभङ्गी = प्रभञ्जन करने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भञ्ज् = प्रकाशित होना, चमकना, बोलना, कहना, हिंसा करना, गति करना, खेलना, नष्ट करना)। शूरो = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। तुवीमघः = बहुत धन वाले, महाधनी (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। संमिशलो = सम्यक् व्यापक (सम् = सम्यक्, भलीभांति, मिश्र - मिश्रित करना, एकत्र करना)। वीर्याय = पराक्रम, वीरता के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। कम् = किसको (सर्वनाम)। उभा = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। बाहू = प्रयास करने वाले (बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। वृषणा = वर्षा करने वाला, बरसाओ, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। या = जो (सर्वनाम)। वज्रम् = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना)। मिमिक्षतुः = सिंचन करते हैं (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मिह - गीला करना, सींचना, प्रोक्षण करना) ॥ 18 ॥

(203) सूक्त 62

693. गृणे तत् इन्द्र ते शवः, उपमाम् देवतातये।

यत् हंसि वृत्रम् ओजसा शचीपते भद्राः इन्द्रस्य रातयः ॥ 8 ॥ 8-62-8

मन्त्रार्थ - गृणे = वाणी, बोध, अभिसिंचन करते हैं, शब्द करता हूँ तत् = वह, उस को इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शवः = शव, गति, ज्ञान उपमाम् = उपमा को देवतातये = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए यत् = जिसे, जो हंसि = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो वृत्रम् = वृत्र, हिंसा को ओजसा = ओज द्वारा शचीपते = हे उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी भद्राः = भद्र, कल्याणकारी इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का रातयः = अनुदान ॥ 8 ॥

पदार्थ - गृणे = वाणी, बोध, अभिसिंचन करते हैं, शब्द करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र् = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। शवः = शव, गति, ज्ञान (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। उपमाम् = उपमा को (उप- सपीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) देवतातये = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। यत् = जिसे, जो

(सर्वनाम)। **हंसि** = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **शचीपते** = हे उत्तम वाणी वाला ऐश्वर्यवान्, स्वामी (शच- स्पष्ट बोलना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **भद्राः** = भद्र, कल्याणकारी (भदि-भन्द - सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **रातयः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना) ॥ 8 ॥

(204) सूक्त 63

694. यम् त्वा गोपवनो गिरा, जनिष्ठत् अग्ने अङ्गिरः ।

सः पावक श्रुधी हवम् ॥ 11 ॥

8-63-11

मन्त्रार्थ - यम् = उसको, उसे **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **गोपवनो** = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ **जनिष्ठत्** = जनों में निष्ठा रखने वाले, लोगों का ध्यान रखने वाले, श्रेष्ठ जन **अग्ने** = हे अग्नि **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला **सः** = वह, उसने **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **श्रुधी** = सुनता है **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य ॥ 11 ॥

पदार्थ - यम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गोपवनो** = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **जनिष्ठत्** = जनों में निष्ठा रखने वाले, लोगों का ध्यान रखने वाले, श्रेष्ठ जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अङ्गिरः** = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **सः** = वह, उसने। **पावक** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **श्रुधी** = सुनता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **हवम्** = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 11 ॥

(205) सूक्त 64

695. उ त्वा मदन्तु स्तोमाः, कृणुष्व राधो अद्रिवः ।

अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥ 1 ॥ 8-64-1

मन्त्रार्थ - उ = निश्चय ही, भी **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **मदन्तु** = आनन्दित हों, हर्षित हों, तृप्त हों **स्तोमाः** = स्तोम **कृणुष्व** = कीजिये **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त, रक्षा करो, पालन करो **ब्रह्मद्विषो** = ब्रह्म द्वेष को, विराट, महान् द्वेष को **जहि** = हनन करो, नष्ट करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - उ = निश्चय ही, भी। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **मदन्तु** = आनन्दित हों, हर्षित हों, तृप्त हों (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **स्तोमाः** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **कृणुष्व** = कीजिये (कृ - करना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद्रु - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त। (अव्यय), रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना,

प्रभु होना)। **ब्रह्मद्विषो** = ब्रह्म द्वेष को, विराट्, महान् द्वेष को (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, द्विष = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना) ॥ 1 ॥

696. पदा पणीन् अराधसो, नि बाधस्व महान् असि ।

न हि त्वा कश्चन प्रति ॥ 2 ॥ 8-64-2

मन्त्रार्थ :- पदा = पद, पद द्वारा पणीन् = पणिगण, स्तुतिकर्ता, उद्योगी, व्यवहारी को अराधसो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि, दान से रहित नि = निश्चित, निरन्तर बाधस्व = बाधित करो महान् = बड़े, पूज्य, महान् असि = हो न = नहीं, समान, उपमार्थक हि = ही, निश्चय त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा कश्चन = कोई प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में ॥ 2 ॥

पदार्थ :- पदा = पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। पणीन् = पणिगण, स्तुतिकर्ता, उद्योगी, व्यवहारी को (पण् = व्यवहार करना, उद्योग करना, व्यापार करना, स्तुति करना)। अराधसो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि, दान से रहित (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। बाधस्व = बाधित करो (बाध - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। असि = हो (अस् - होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। कश्चन = कोई (सर्वनाम)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय) ॥ 2 ॥

697. त्वम् ईशिषे सुतानाम्, इन्द्र त्वम् असुतानाम् ।

त्वम् राजा जनानाम् ॥ 3 ॥ 8-64-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे सुतानाम् = सुतों का, उत्पन्न हुआ का, ऐश्वर्यवानों का इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली त्वम् = तुम असुतानाम् = असुतों का, उत्पन्न नहीं हुआ का त्वम् = तुम राजा = राजा जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। सुतानाम् = सुतों का, उत्पन्न हुआ का, ऐश्वर्यवानों का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। असुतानाम् = असुतों का, उत्पन्न नहीं हुआ का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। राजा = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 3 ॥

698. क्व स्य वृषभो युवा, तुविग्रीवो अनानतः ।

ब्रह्मा कः तम् सपर्यति ॥ 7 ॥ 8-64-7

मन्त्रार्थ - क्व = कहाँ स्य = वह, बन्धन वृषभो = पराक्रमी युवा = युवा तुविग्रीवो = तुविग्रीव अनानतः = प्राणवान् ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् कः = कौन, किस ने तम् = उसको, उसे सपर्यति = सेवा करो ॥ 27 ॥

पदार्थ - क्व = कहाँ। स्य = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्। सि = बाँधना)। वृषभो = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। युवा = युवा (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। तुविग्रीवो = तुविग्रीव (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, गृ = सींचना, समझना, जानना, खाना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गीला करना, घर्षण करना)।

अनानतः = प्राणवान् (आ - सम्यक्, समन्तात्, अन - प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, जानना, पाना, चेतन होना, चेतन करना)। **ब्रह्मा** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **कः** = कौन, किस ने (पुल्लिङ्ग)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **सपर्यति** = सेवा करो (सपर - पूजा करना, सेवा करना) ॥ 7 ॥

699. नमः ते अग्ने ओजसे, गृणन्ति देव कृष्टयः।

अमैः अमित्रम् अर्दय ॥ 10 ॥ 8-64-10

मन्त्रार्थ - **नमः** = नमन **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **ओजसे** = ओज के लिए **गृणन्ति** = वाणी, बोध, सिञ्चन करते हैं **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **कृष्टयः** = कृष्टय **अमैः** = सेवाभावी, विद्वान् **अमित्रम्** = अमित्र, अस्नेही को **अर्दय** = मार दिया, अर्दित किया ॥ 10 ॥

पदार्थ - **नमः** = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **ओजसे** = ओज के लिए (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **गृणन्ति** = वाणी, बोध, सिञ्चन करते हैं (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **कृष्टयः** = कृष्टय (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **अमैः** = सेवाभावी, विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना,)। **अमित्रम्** = अमित्र, अस्नेही को (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। **अर्दय** = मार दिया, अर्दित किया (अर्द - मारना, बध करना) ॥ 10 ॥

(206) सूक्त 66

700. तरोभिः वो विदत् वसुम्, इन्द्रम् सबाध ऊतये।

बृहद् गायन्तः सुतसोमे, अध्वरे हुवे भरम् न कारिणम्। 1 ॥ 8-66-1

मन्त्रार्थ :- **तरोभिः** = तरने वालों द्वारा, तैरने वालों द्वारा **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **विदत्** = जानें **वसुम्** = वसुओं को **इन्द्रम्** = इन्द्र को **सबाध** = सबाधित, बाधा सहित **ऊतये** = रक्षा के लिए **बृहद्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **गायन्तः** = गाते हैं, गायन करने वाले **सुतसोमे** = सुतसोम में, ऐश्वर्यवान् प्रेरणा में **अध्वरे** = अहिंसक में **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं **भरम्** = भरण करने वाले को, पोषण करने वाले को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **कारिणम्** = करने वाले को, कर्त्ता को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **तरोभिः** = तरने वालों द्वारा, तैरने वालों द्वारा (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **विदत्** = जानें (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **वसुम्** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सबाध** = सबाधित, बाधा सहित (स - सहित, साथ, बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **बृहद्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **गायन्तः** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **सुतसोमे** = सुतसोम में, ऐश्वर्यवान् प्रेरणा में (सु = अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना,

दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **अध्वरे** = अहिसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **हुवे** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **भरम्** = भरण करने वाले को, पोषण करने वाले को (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कारिणम्** = करने वाले को, कर्त्ता को (कृ - करना) ॥ 1 ॥

701. न यम् दुधा वरन्ते न, स्थिरा मुरो मदेषु शिप्रम् अन्धसः ।

यः आदृत्या शशमानाय, सुन्वते दाता जरित्रे उक्थ्यम् ॥ 2 ॥

8-66-2

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **दुधा** = दोहन करने वाले, दुःख देने वाले **वरन्ते** = वरते न = नहीं, समान, उपमार्थक **स्थिरा** = स्थिर **मुरो** = घेरा, घेरने वाले **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में **शिप्रम्** = शिप्र को **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से **यः** = जो **आदृत्या** = समादर द्वारा, सम्यक् सत्कार द्वारा **शशमानाय** = शशमान के लिए, कूर्दन करने वाले के लिए **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है **दाता** = देने वाला **जरित्रे** = जरित्र, जीर्ण, वृद्ध, परिपक्व, में, के लिए **उक्थ्यम्** = उक्ति को, कथन को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **दुधा** = दोहन करने वाले, दुःख देने वाले (दुह - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना, दु-दुन - दुःख भोगना, जलना, तप्त करना, जलाना, दू - दुःख में जर्जर होना, दुःख सहन करना, दुःख देना, पीड़ा करना)। **वरन्ते** = वरते (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्थिरा** = स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **मुरो** = घेरा, घेरने वाले (मुर - घेरना, लपेटना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शिप्रम्** = शिप्र को (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **आदृत्या** = समादर द्वारा, सम्यक् सत्कार द्वारा (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), दृ - आदर करना, सत्कार करना)। **शशमानाय** = शशमान के लिए, कूर्दन करने वाले के लिए (शश - कूर्दन करना, कूदना, उछलना, कूदते हुए चलना)। **सुन्वते** = स्नान करता है, सवन करता है (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **दाता** = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **जरित्रे** = जरित्र, जीर्ण, वृद्ध, परिपक्व, में, के लिए (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **उक्थ्यम्** = उक्ति को, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना) ॥ 2 ॥

702. वृकः चित् अस्य वारणः उरामथिः, आ वयुनेषु भूषति ।

सा इमम् नः स्तोमम् जुजुषाणः आ गहि, इन्द्र प्र चित्रया धिया ॥ 8 ॥ 8-66-8

मन्त्रार्थ :- **वृकः** = हिसक, लुटेरे **चित्** = भी, ही **अस्य** = इसका **वारणः** = वरणीय, वरण करने वाला **उरामथिः** = विस्तृत मन्थन करने वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वयुनेषु** = जानने वालों, वयनों, उड्डयनों में **भूषति** = भूषित होता है **सा** = वह, उसने **इमम्** = इसको **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **स्तोमम्** = स्तोम **जुजुषाणः** = विचार, सेवा करने वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **चित्रया** = चित्र, अद्भुत चेतना, आश्चर्यरूप द्वारा **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **वृकः** = हिसक, लुटेरे (वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच - हिंसा करना)। **चित्** = भी, ही (अव्यय)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **वारणः** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **उरामथिः** = विस्तृत मन्थन करने वाले (उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, मथ् - मथना, विलोडन करना, विचार करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वयुनेषु** = जानने वालों, वयनों, उड्डयनों में (वय = जाना,

जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **भूषति** = भूषित होता है (भूष् - भूषित होना, सजाना)। **सा** = वह, उसने (सर्वनाम)। **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **स्तोमम्** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **जुजुषाणः** = विचार, सेवा करने वाले (जुष - विचार करना, सेवा करना, चाहना, दुलारना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **गहि** = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **चित्रया** = चित्र, अद्भुत चेतना, आश्चर्यरूप द्वारा (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 8 ॥

(207) सूक्त 68

703. आ त्वा रथम् यथा ऊतये, सुम्नाय वर्तयामसि।

तुविकूर्मिम् ऋतीषहम्, इन्द्रम् शविष्ठ सत्पते। 1 ॥ 8-68-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **रथम्** = रथ को **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **ऊतये** = रक्षा के लिए **सुम्नाय** = ऐश्वर्य के लिए **वर्तयामसि** = वर्तमान हो **तुविकूर्मिम्** = बहुत, कर्म करने वाले **ऋतीषहम्** = ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित **इन्द्रम्** = इन्द्र को **शविष्ठ** = अत्यन्त समीपगामी **सत्पते** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **सुम्नाय** = ऐश्वर्य के लिए (सु = उत्पन्न कराना, ऐश्वर्य होना)। **वर्तयामसि** = वर्तमान हो (वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। **तुविकूर्मिम्** = बहुत, कर्म करने वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, कृ = करना)। **ऋतीषहम्** = ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, ऋती - कृपा करना, दया करना, निन्दा करना, दोष लगाना, घृणा करना, सह - शक्ति-सामर्थ्य होना, साथ होना, तृप्त होना, प्रसन्न होना, सहन करना, सन्तुष्ट होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **शविष्ठ** = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **सत्पते** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक के लिए (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥

704. तुविशुष्म तुविक्रतो, शचीवो विश्वया मते।

आ पप्राथ महित्वना ॥ 2 ॥ 8-68-2

मन्त्रार्थ :- **तुविशुष्म** = हे अत्यन्त शोषक, बहुत सुखाने वाले **तुविक्रतो** = अत्यन्त कर्मशील **शचीवो** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले **विश्वया** = सबके द्वारा, विश्व द्वारा **मते** = मति **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **पप्राथ** = व्याप्त किया **महित्वना** = महित्व द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **तुविशुष्म** = हे अत्यन्त शोषक, बहुत सुखाने वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, शुष् - सुखाना)। **तुविक्रतो** = अत्यन्त कर्मशील (तुवि = बहुत, अधिक (अव्यय, सर्वनाम), कृ = करना)। **शचीवो** = विद्वान्, उत्तम वाणियों को धारण करने वाले (शच - स्पष्ट बोलना)। **विश्वया** = सबके द्वारा, विश्व द्वारा (विश्व - सब कुछ)। **मते** = मति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पप्राथ** = व्याप्त किया (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **महित्वना** = महित्व द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना,

सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 2 ॥

705. यस्य ते महिना महः, परि ज्मायन्तम् ईयतुः ।

हस्ता वज्रम् हिरण्ययम् ॥ 3 ॥ 8-68-3

मन्त्रार्थ :- यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए महिना = महि द्वारा, महानता द्वारा महः = महान् परि = परे, सभी ओर, साथ ज्मायन्तम् = भोजन करते हुए को, भोजन कराते हुए को ईयतुः = व्याप्त हो, प्राप्त हो, गमन करें हस्ता = हाथ वज्रम् = वज्र, गतिमान को हिरण्ययम् = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाले को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यस्य = जिसका (सर्वनाम) । ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) । महिना = महि द्वारा, महानता द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) । महः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) । परि = परे, सभी ओर, साथ (उपसर्ग) । ज्मायन्तम् = भोजन करते हुए को, भोजन कराते हुए को (जम् = खाना, निगलना) । ईयतुः = व्याप्त हो, प्राप्त हो, गमन करें (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) । हस्ता = हाथ (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना) । वज्रम् = वज्र, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना) । हिरण्ययम् = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाले को (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना) ॥ 3 ॥

706. विश्वानरस्य वः पतिम्, अनानतस्य शवसः ।

एवैः च चर्षणीनाम्, ऊती हुवे रथानाम् ॥ 4 ॥ 8-68-4

मन्त्रार्थ - विश्वानरस्य = विश्व-नर का वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए । पतिम् = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक अनानतस्य = नही झुके हुये द्वारा शवसः = शवस् का, गति, ज्ञान का एवैः = प्रगतिशील, विद्वानों द्वारा च = और चर्षणीनाम् = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं रथानाम् = रथों का ॥ 5 ॥

पदार्थ - विश्वानरस्य = विश्व-नर का (विश्व = सब, नृ = ले जाना) । वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए । पतिम् = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) । अनानतस्य = नही झुके हुये द्वारा (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना) । शवसः = शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) । एवैः = प्रगतिशील, विद्वानों द्वारा (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, जानना, पाना, प्रेरित करना) । च = और । चर्षणीनाम् = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना) । ऊती = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) । हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) । रथानाम् = रथों का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना) ॥ 4 ॥

(208) सूक्त 69

707. प्रप्र वः त्रिष्टुभम् इषम्, वन्दद्-वीराय इन्दवे ।

धिया वो मेधसातये, पुरन्ध्या विवासति ॥ 1 ॥ 8-69-1

मन्त्रार्थ - प्रप्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए । त्रिष्टुभम् = त्रिष्टुभ को इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को वन्दद्-वीराय = वीर प्रशंसक, वन्दनीय वीर, वन्दना करने वाले वीर के लिए इन्दवे = इन्दु ऐश्वर्य के लिए धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा वो = तुम सबको, तुम सबके

लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **मेधसातये** = मेधावी-सेवाभावी के लिए **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा **विवासति** = विशेष वास करता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - **प्रप्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **त्रिष्टुभम्** = त्रिष्टुभ को (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, स्था - स्थित होना, ठहरना, बैठना)। **इष्म्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **वन्दद्-वीराय** = वीर प्रशंसक, वन्दनीय वीर, वन्दना करने वाले वीर के लिए (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **इन्दवे** = इन्दु ऐश्वर्य के लिए (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मेधसातये** = मेधावी-सेवाभावी के लिए (मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, सन = सेवा करना, चाकरी करना, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा (पुर = आगे जाना, धि-धा = धारण करना)। **विवासति** = विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) ॥ 1 ॥

708. नदम् वः ओदतीनाम्, नदम् योयुवतीनाम्।

पतिम् वो अघ्न्यानाम्, धेनूनाम् इषुध्यसि ॥ 2 ॥ 8-69-2

मन्त्रार्थ :- **नदम्** = शब्द, प्रकाश को **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **ओदतीनाम्** = ओदितों का, आद्र करने वालों का **नदम्** = शब्द, प्रकाश को **योयुवतीनाम्** = युवतियों का, मिलाने वालों का **पतिम्** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक को **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **अघ्न्यानाम्** = अहिसकों, अहिसनीयों का **धेनूनाम्** = धेनुओं, प्रियों, पालन करने वालों का **इषुध्यसि** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि धारण करता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **नदम्** = शब्द, प्रकाश को (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **ओदतीनाम्** = ओदितों का, आद्र करने वालों का (उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **नदम्** = शब्द, प्रकाश को (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **योयुवतीनाम्** = युवतियों का, मिलाने वालों का (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु-पृथक् पृथक् करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पतिम्** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक को (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अघ्न्यानाम्** = अहिसकों, अहिसनीयों का (घ्न, हन् = हिंसा करना)। **धेनूनाम्** = धेनुओं, प्रियों, पालन करने वालों का (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **इषुध्यसि** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि धारण करता है (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना, धि - धारण करना) ॥ 2 ॥

709. अभि प्र गोपतिम् गिरा, इन्द्रम् अर्च यथा विदे।

सूनुम् सत्यस्य सत्पतिम् ॥ 4 ॥ 8-69-4

मन्त्रार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अर्च** = पूजा, सम्मान, सेवा **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **विदे** = विद्वान् **सूनुम्** = सूनु को, ऐश्वर्य को, उत्पन्न को **सत्यस्य** = सत्य का **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)।

गोपतिम् = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **गिरा** = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अर्च** = पूजा, सम्मान, सेवा (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **विदे** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **सूनुम्** = सूनु को, ऐश्वर्य को, उत्पन्न को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **सत्यस्य** = सत्य का (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **सत्पतिम्** = सत्य के पति, सत्य के पालक, रक्षक (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥ 4 ॥

710. आ हरयः ससृजिरे, अरुषीः अधि बर्हिषि।

यत्र अभि सम् नवामहे ॥ 5 ॥ 8-69-5

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **ससृजिरे** = सृजित किया, सर्जना की **अरुषीः** = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **बर्हिषि** = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में **यत्र** = जहाँ **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **नवामहे** = स्तुति करते हैं ॥ 5 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **ससृजिरे** = सृजित किया, सर्जना की (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **अरुषीः** = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **बर्हिषि** = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **यत्र** = जहाँ (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **नवामहे** = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना) ॥ 5 ॥

711. इन्द्राय गाव आशिरम्, दुदुहे वज्रिणे मधु।

यत् सीम् उपह्वरे विदत् ॥ 6 ॥ 8-69-6

मन्त्रार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए **गाव** = शब्द, वाणी, वचन **आशिरम्** = आशिर को, शीर्षस्थ को **दुदुहे** = दोहते हैं **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए **मधु** = मीठा, मधु **यत्** = जिसे, जो **सीम्** = बन्धन को **उपह्वरे** = उपकुटिल में **विदत्** = जानें ॥ 6 ॥

पदार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गाव** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **आशिरम्** = आशिर को, शीर्षस्थ को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **दुदुहे** = दोहते हैं (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज्र - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **सीम्** = बन्धन को (सि = बाँधना, मर्यादा होना, सीमा होना)। **उपह्वरे** = उपकुटिल में (उप - समीप, ह्वे

= पुकारना, हवृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना, निवास करना)। **विदत्** = जानें (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 6 ॥

712. अर्चत प्रार्चता, प्रियमेधासो अर्चत ।

अर्चन्तु पुत्रकाः उत्त, पुरम् इत् धृष्णु अर्चत ॥ 8 ॥

8-69-8

मन्त्रार्थ - अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **प्रार्चता** = प्रकृष्ट पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **प्रियमेधासो** = हे प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **अर्चन्तु** = अर्चना करें **पुत्रकाः** = अनेक पुत्रक **उत्त** = ही, भी, ओर **पुरम्** = पुर को, अग्रगामी, अग्रणी को **इत्** = ही **धृष्णु** = विजय, गर्व **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो ॥ 8 ॥

पदार्थ - अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **प्रार्चता** = प्रकृष्ट पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **प्रियमेधासो** = हे प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **अर्चन्तु** = अर्चना करें (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **पुत्रकाः** = अनेक पुत्रक (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **उत्त** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **पुरम्** = पुर को, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **धृष्णु** = विजय, गर्व (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना) ॥ 8 ॥

अनुवाक:- 65

(209) सूक्त 70

713. यो राजा चर्षणीनाम्, याता रथेभिः अधिगुः ।

विश्वासाम् तरुता पृतनानाम्, ज्येष्ठो यो वृत्रहा गृणे ॥ 1 ॥

8-70-1

मन्त्रार्थ :- यो = जो **राजा** = राजा **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **याता** = प्राप्त **रथेभिः** = रथों द्वारा **अधिगुः** = जिस गति को कोई धारण न कर सके **विश्वासाम्** = सभी **तरुता** = तारने वाला, तारक **पृतनानाम्** = पृतनों का, व्यापकों, बल वालों का **ज्येष्ठो** = ज्येष्ठ, बड़े को **यो** = जो **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **गृणे** = शब्द करता हूँ ॥ 1 ॥

पदार्थ :- यो = जो (सर्वनाम)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **याता** = प्राप्त (या-जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **रथेभिः** = रथों द्वारा (रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अधिगुः** = जिस गति को कोई धारण न कर सके (अ+धि+गुः, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, जानना, पाना)। **विश्वासाम्** = सभी (सर्वनाम)। **तरुता** = तारने वाला, तारक (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **पृतनानाम्** = पृतनों का, व्यापकों, बल वालों का (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **ज्येष्ठो** = ज्येष्ठ, बड़े को (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)।

गृणे = शब्द करता हूँ (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना) ॥ 1 ॥

714. इन्द्रम् तम् शुम्भ पुरुहन्मन्, अवसे यस्य द्विता विधर्त्तरि।

हस्ताय वज्रः प्रतिधायि, दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ॥ 2 ॥ 8-70-2

मन्त्रार्थ :- इन्द्रम् = इन्द्र को तम् = उसको, उसे शुम्भ = प्रकाशित, सुशोभित पुरुहन्मन् = बहुत हनन करने वाला अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो यस्य = जिसका द्विता = द्वित विधर्त्तरि = विधर्त्ता में, विशेष धारणकर्ता में हस्ताय = हाथ के लिए वज्रः = वज्र, गतिमान प्रतिधायि = धारण करता है दर्शतो = देखने वाला, देखने से महो = बड़े, पूज्य, महान् दिवे = देव के लिए न = नहीं, समान, उपमार्थक सूर्यः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। शुम्भ = प्रकाशित, सुशोभित (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। पुरुहन्मन् = बहुत हनन करने वाला (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हन् - मारना)। अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। द्विता = द्वित (द्वि = दो, संख्या)। विधर्त्तरि = विधर्त्ता में, विशेष धारणकर्ता में (वि - विशेष, धृ = धारण करना)। हस्ताय = हाथ के लिए (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। वज्रः = वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। प्रतिधायि = धारण करता है (प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में, धृ = धारण करना)। दर्शतो = देखने वाला, देखने से (दृश् - देखना)। महो = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। दिवे = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। सूर्यः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 2 ॥

715. न किः तम् कर्मणा नशत्, यः चकार सदावृधम्।

इन्द्रम् न यज्ञैः विश्वगूर्तम्, ऋभ्वसम् अधृष्टम् धृष्णव ओजसम् ॥ 3 ॥ 8-70-3

मन्त्रार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक किः = कोई, किसी तम् = उसको, उसे कर्मणा = कर्म नशत् = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है यः = जो चकार = किया सदावृधम् = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले को इन्द्रम् = इन्द्र को न = नहीं, समान, उपमार्थक यज्ञैः = यज्ञों द्वारा विश्वगूर्तम् = सभी प्रयत्न करने वाले को ऋभ्वसम् = प्रगतिशील, विद्वान् अधृष्टम् = विजय, गर्व किया धृष्णव = विजय, गर्व को ओजसम् = ओज को ॥ 3 ॥

पदार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। किः = कोई, किसी (अव्यय)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। कर्मणा = कर्म (कृ - करना)। नशत् = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है (नश् - नष्ट होना, अदृश्य होना)। यः = जो (सर्वनाम)। चकार = किया (कृ = करना)। सदावृधम् = सदस्यों द्वारा, सभायोग्य, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विद्वानों द्वारा वर्धित, बढ़ने वाले को (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना -वृध् - वृद्धि होना, बढ़ना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। यज्ञैः = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। विश्वगूर्तम् = सभी प्रयत्न करने वाले को (विश्व - सभी, गूर - उद्योग करना, प्रयत्न करना, भक्षण करना, खाना, हिंसा करना)। ऋभ्वसम् = प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - अर् - जाना, फैलाना, ऋ - जाना, चलना, जानना, पाना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अधृष्टम् = विजय, गर्व किया (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। धृष्णव = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। ओजसम् = ओज को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना,

716. अषाढहम् उग्रम् पृतनासु, सासहिम् यस्मिन् महीः उरुजयः ।

सम् धेनवो जायमाने अनोनवुः, द्यावः क्षामो अनोनवुः ॥ 4 ॥ 8-70-4

मन्त्रार्थ :- अषाढहम् = असहनीय, दीप्तिमान् को उग्रम् = उग्र को पृतनासु = व्यापक, बलों में सासहिम् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले यस्मिन् = जिसमें महीः = मही, महिमावान्, महान् उरुजयः = वृद्धि करने वाला, विजेता सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति धेनवो = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले जायमाने = उत्पन्न होने में अनोनवुः = स्तुति की द्यावः = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा क्षामो = क्षमा, सामर्थ्य युक्त अनोनवुः = स्तुति की ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अषाढहम् = असहनीय, दीप्तिमान् को (अ - नहीं, सह- सहन करना, अस् - फेंकना, उड़ाना, अष् - ग्रहण करना, जाना, जानना, पाना, चमकना, प्रकाश करना)। उग्रम् = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। पृतनासु = व्यापक, बलों में (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। सासहिम् = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहने वाले (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। यस्मिन् = जिसमें (सर्वनाम)। महीः = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। उरुजयः = वृद्धि करने वाला, विजेता (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, जि - जीतना, जय पाना, कम होना, न्यून होना, वृद्ध होना, जीर्ण होना, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना, वृद्धि करना, पुराना होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। धेनवो = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। जायमाने = उत्पन्न होने में (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अनोनवुः = स्तुति की (अ = नहीं, अन् - नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। द्यावः = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। क्षामीः = क्षमा, सामर्थ्य युक्त (क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। अनोनवुः = स्तुति की (अ = नहीं, अन् - नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, नु = स्तुति करना, प्रशंसा करना) ॥ 4 ॥

717. यत् द्यावः इन्द्र ते शतम्, शतम् भूमीः उत स्युः

न त्वा वज्रिन् सहस्रम्, सूर्याः अनु न जातम् अष्ट रोदसी ॥ 5 ॥ 8-70-5

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो द्यावः = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शतम् = सौ शतम् = सौ भूमीः = भूमि उत = ही, भी, ओर स्युः = हों न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त सहस्रम् = हजार को सूर्याः = सूर्ये, उत्पन्न करने वाला अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल न = नहीं, समान, उपमार्थक जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को अष्ट = आठ रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले ॥ 5 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। द्यावः = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। शतम् = सौ (सर्वनाम)। शतम् = सौ (सर्वनाम)। भूमीः = भूमि (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। स्युः = हों (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेंकना, उड़ाना, विखेरना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज्र - गति करना, जाना)। सहस्रम् = हजार को (संख्या)। सूर्याः = सूर्ये, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अष्ट = आठ (संख्या)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की

सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना) ॥ 5 ॥

718. आ पप्राथ महिना वृष्या, वृषन् विश्वा शविष्ठ शवसा ।

अस्मान् अव मघवन् गोमति, व्रजे वज्रिन् चित्राभिः ऊतिभिः ॥ 6 ॥ 8-70-6

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पप्राथ = व्याप्त किया महिना = महि द्वारा, महानता द्वारा वृष्या = वर्षा करने वाले, पराक्रमी द्वारा वृषन् = शक्तिशाली, पराक्रमी विश्वा = विश्व, सभी, सब शविष्ठ = अत्यन्त समीपगामी शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा अस्मान् = हमें, हमको अव = नीचे, दूर, प्राप्त । मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् गोमति = गोजुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली व्रजे = व्रज में, व्रज के लिए वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त चित्राभिः = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप द्वारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा ॥ 6 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) । पप्राथ = व्याप्त किया (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना) । महिना = महि द्वारा, महानता द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) । वृष्या = वर्षा करने वाले, पराक्रमी द्वारा (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) । वृषन् = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) । विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम) । शविष्ठ = अत्यन्त समीपगामी (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) । शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) । अस्मान् = हमें, हमको (सर्वनाम) । अव = नीचे, दूर, प्राप्त । मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना) । गोमति = गोजुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना) । व्रजे = व्रज में, व्रज के लिए (व्रज् = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, तैयार करना, घूमना, वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना) । वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज् - गति करना, जाना) । चित्राभिः = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप द्वारा (चित्र् = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना) । ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ - अक् - रक्षा करना) ॥ 6 ॥

719. न सीम् अदेव आपत्, इषम् दीर्घायो मर्त्यः ।

एतग्वा चित् यः एतशा, युयोजते इन्द्रो हरी युयोजते ॥ 7 ॥

8-70-7

मन्त्रार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक सीम् = बन्धन को अदेव = अदेव, अविद्वान् आपत् = आप, व्याप्त, व्यापक इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को दीर्घायो = दीर्घ आयु वाला मर्त्यः = मरणशील एतग्वा = गति, व्याप्ति, चाहने वाला चित् = भी, ही यः = जो एतशा = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से युयोजते = जोड़ते हैं, मिलाते हैं इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले युयोजते = जोड़ते हैं, मिलाते हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) । सीम् = बन्धन को (सि = बाँधना, मर्यादा होना, सीमा होना) । अदेव = अदेव, अविद्वान्, (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना) । आपत् = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना) । इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) । दीर्घायो = दीर्घ आयु वाला (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना) । मर्त्यः =

मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **एतग्वा** = गति, व्याप्ति, चाहने वाला (ए - जाना, फैलना, व्यापना, गर्भवती होना, इच्छा करना, चाहना, खाना, उड़ाना, फेंकना, भेजना, प्रेरणा करना)। **चित्** = भी, ही। **यः** = जो (सर्वनाम)। **एतशा** = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **युयोजते** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **हरी** = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **युयोजते** = जोड़ते हैं, मिलाते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना) ॥ 7 ॥

(210) सूक्त 71

720. त्वम् नो अग्ने महोभिः, पाहि विश्वस्या अरातेः ।

उत द्विषो मर्त्यस्य ॥ 1 ॥ 8-71-1

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो अग्ने = हे अग्नि महोभिः = महान् द्वारा पाहि = पालन करो, रक्षा करो विश्वस्या = विश्व का, सभी का अरातेः = अदानी के लिए उत = ही द्विषो = द्वेष करने वाला मर्त्यस्य = मरणशील का ॥ 1 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। महोभिः = महान् द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। पाहि = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। विश्वस्या = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। अरातेः = अदानी के लिए (रा = देना)। उत = ही (अव्यय)। द्विषो = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। मर्त्यस्य = मरणशील का (मृ = मरना, देहत्याग करना) ॥ 1 ॥

721. अच्छा नः शीर-शोचिषम्, गिरो यन्तु दर्शतम् ।

अच्छा यज्ञासो नमसा पुरुवसुम्, पुरुप्रशस्तम् ऊतये ॥ 10 ॥ 8-71-10

मन्त्रार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ नः = हमको, हमारे लिए, हमारा शीर-शोचिषम् = शीर-शोचिष को गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें दर्शतम् = देखा, दर्शनीय को, देखने वाले को अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ यज्ञासो = यजन नमसा = नमन द्वारा पुरुवसुम् = पुरुवसु को पुरुप्रशस्तम् = पुरुप्रशस्त को ऊतये = रक्षा के लिए ॥ 10 ॥

पदार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। शीर-शोचिषम् = शीर-शोचिष को (शि - तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिर - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शुच - शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। दर्शतम् = देखा, दर्शनीय को, देखने वाले को (दृश् - देखना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। यज्ञासो = यजन (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। नमसा = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। पुरुवसुम् = पुरुवसु को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। पुरुप्रशस्तम् = पुरुप्रशस्त को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना,

अग्रसर होना, पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 10 ॥

722. अग्निम् सूनुम् सहस्रो, जातवेदसम् दानाय वार्याणाम्।

द्विता यो भूत् अमृतो मर्त्येषु, आ होता मन्द्रतमो विशि ॥ 11 ॥ 8-71-11

मन्त्रार्थ :- अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को सूनुम् = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य को सहस्रो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए जातवेदसम् = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले दानाय = दान के लिए वार्याणाम् = वार्यों, वरणीयों, वरण करने योग्यों का द्विता = द्वित यो = जो भूत् = हो अमृतो = अमृत, मृत्यु से परे मर्त्येषु = मरणशीलों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले मन्द्रतमो = अत्यन्त आनन्दित करने वाले, अत्यन्त प्रकाश वाले विशि = विश में, प्रतिष्ठित में ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सूनुम् = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य को (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, आसवन करना)। सहस्रो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। जातवेदसम् = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। दानाय = दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। वार्याणाम् = वार्यों, वरणीयों, वरण करने योग्यों का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। द्विता = द्वित (द्वि = दो, संख्या)। यो = जो (सर्वनाम)। भूत् = हो (भु - जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अमृतो = अमृत, मृत्यु से परे (अ - नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। मर्त्येषु = मरणशीलों में (मृ = मरना, देहत्याग करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। मन्द्रतमो = अत्यन्त आनन्दित करने वाले, अत्यन्त प्रकाश वाले (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। विशि = विश में, प्रतिष्ठित में (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना) ॥ 11 ॥

723. अग्निम् ईडिष्य अवसे, गाथाभिः शीरशोचिषम्।

अग्निम् राये पुरुमीढ श्रुतम्, नरो अग्निः सुदीतये छर्दिः ॥ 14 ॥ 8-71-14

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को ईडिष्य = स्तुत्य अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो गाथाभिः = गान, गाय, गायक द्वारा शीर-शोचिषम् = शीर-शोचिष को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को राये = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में पुरुमीढ = पुरुमीढ, अग्रगामी विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को नरो = नर अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् सुदीतये = सुदीतय के लिए छर्दिः = छर्दि ॥ 14 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। ईडिष्य = स्तुत्य (ईड - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। गाथाभिः = गान, गाय, गायक द्वारा (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। शीर-शोचिषम् = शीर-शोचिष को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिर = शीर्ष होना,

मुख्य होना, उच्च होना, शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **पुरुमीढ** = पुरुमीढ, अग्रगामी विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मी = समझना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मिह - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **श्रुतम्** = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **नरो** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सुदीतये** = सुदीतय के लिए (सु - अच्छा, सुन्दर, दी = हास (हरास) होना, झरना, नष्ट होना। दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना। दो - दान करना, दया करना, कतरना, विभाग करना)। **छर्दिः** = छर्दि (छर्द = सन्दीपे - कथने, वमने। उद्गार करना, वमन करना या होना, कै करना) ॥ 14 ॥

(211) सूक्त 72

724. सिञ्चन्ति नमसा अवटम्, उच्चाचक्रम् परिज्मानम्।

नीचीनवारम् अक्षितम् ॥ 10 ॥ 8-72-10

मन्त्रार्थ :- सिञ्चन्ति = सिञ्चन करते हैं नमसा = नमन द्वारा अवटम् = अवट को उच्चाचक्रम् = उच्च चक्र को परिज्मानम् = सर्वतोमुख को नीचीनवारम् = निम्न-वरण को, नीच का वरण करने वाले को अक्षितम् = अक्षित को, व्याप्त को, अविनाशी को ॥ 10 ॥

पदार्थ :- सिञ्चन्ति = सिञ्चन करते हैं (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। नमसा = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। अवटम् = अवट को (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, अ = नहीं, वट् = गूँथना, बटना, लपेटना, एकत्र करना, पीसना, विभाग करना, बोलना, स्पष्ट कहना)। उच्चाचक्रम् = उच्च चक्र को (उच्च - ऊँचा, सर्वनाम, चक्र - चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। परिज्मानम् = सर्वतोमुख को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, जम् - खाना, भक्षण करना, निगलना, गति करना)। नीचीनवारम् = निम्न-वरण को, नीच का वरण करने वाले को (नीच् - निम्न होना, चाकरी करना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना, वृ-वर्-वरण करना, इच्छा करना, आशा करना, वृ - निवारण करना, हटाना, आच्छादन करना, ढकना, घेरना)। अक्षितम् = अक्षित को, व्याप्त को, अविनाशी को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना, क्षि - क्षय होना, नष्ट होना) ॥ 10 ॥

725. अभि आरम् इत् अद्रयो, निषिक्तम् पुष्करे मधु।

अवतस्य विसर्जने ॥ 11 ॥ 8-72-11

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा आरम् = सम्यक् गति, ज्ञान, प्राप्ति को इत् = ही अद्रयो = आदर युक्त, अहिंसक निषिक्तम् = अभिषिक्त पुष्करे = पुष्कर में मधु = मीठा, मधु अवतस्य = अवत का, रक्षा, पालक का विसर्जने = विसर्जन में ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। आरम् = सम्यक् गति, ज्ञान, प्राप्ति को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अर् - ऋ - गति, ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना)। इत् = ही (अव्यय)। अद्रयो = आदर युक्त, अहिंसक (द्र - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना)। निषिक्तम् = अभिषिक्त (नि - निश्चित, नितराम्, निरन्तर, षिञ्च्-सिञ्च् - सेचन करना, सिञ्चन करना, सींचना, सिक्-सिङ्क् - ध्वनि करना)। पुष्करे = पुष्कर में (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना, कृ = करना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अवतस्य = अवत का, रक्षा, पालक का (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना,

जानना, प्रभु होना, अ = नहीं, वट् = गूँथना, बटना, लपेटना, एकत्र करना, पीसना, विभाग करना, बोलना, स्पष्ट कहना)।
विसर्जने = विसर्जन में (वि + सृज् = छोड़ना) ॥ 11 ॥

726. गावः उप वद अवटे, मही यज्ञस्य रप्सुदा ।

उभा कर्णा हिरण्यया ॥ 12 ॥ 8-72-12

मन्त्रार्थ - मही महान् (पूज्य) यज्ञस्य यज्ञ की रप्सुदा स्पष्ट वाणी देने वाले वद बोलो गावः शब्दों या वचनों की उप समीप हिरण्यया हिरण्यमय उभा दोनों कर्णा कानों से अवटे अवट ॥ 12 ॥

भावार्थ - यजन की स्पष्ट वाणी देने वाले, रक्षा की गयी वाणी की हिरण्यमय दोनों कानों से निकट रक्षा करो। स्पष्ट वाणी बोलने की क्षमता मनुष्य को परमात्मा का विशेष उपहार है। परमात्मा से प्रार्थना है कि हमारे निकट, हमारे दोनों कानों से उसकी रक्षा करे। स्पष्ट वाणी की रक्षा कानों से ही हो सकती है, हम सुनकर ही स्पष्ट बोलना सीख सकते हैं, स्पष्ट उच्चारण की रक्षा कर सकते हैं। इसके लिए कानों को हिरण्यमय होना चाहिए। हिरण धातु का अर्थ है दीप्त होना, शब्द करना। हिरण्य का अर्थ हुआ दीप्त शब्द। कानों को ऐसा होना चाहिए कि वे दीप्त वचन सुनें, अनुचित निन्दनीय वाणी न सुनें।

विशेष - रप धातु का अर्थ है स्पष्ट बोलना। रप्सुदा का अर्थ हुआ स्पष्टवाणी देने वाले। अव धातु अथवा अवति, अवते, आवयति क्रिया-रूपों के अर्थ बहुत व्यापक हैं।

पदार्थ - मही - महान्, पूज्य (मह - पूज्य होना) यज्ञस्य - यज्ञ की (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) रप्सुदा स्पष्ट वाणी देने वाले (रप - स्पष्ट बोलना)। गावः - शब्दों या वचनों की (गु - शब्द करना) उप - समीप। हिरण्यया - हिरण्यमय (हिरण्य - प्रकाश, शब्द होना)। उभा - दोनों। कर्णा- कानों से (श्रु - सुनना, कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना)। वद = बोलो (वद - कहना, समझाना)। अवटे = अवट (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, अ = नहीं, वट् = गूँथना, बटना, लपेटना, एकत्र करना, पीसना, विभाग करना, बोलना, स्पष्ट कहना) ॥ 12 ॥

727. आ सुते सिञ्चत श्रियम्, रोदस्योः अभिश्रियम् ।

रसा दधीत वृषभम् ॥ 13 ॥ 8-72-13

मन्त्रार्थ - आ सुते आसुत में (उत्पन्न हुए, ऐश्वर्य में) श्रियम् श्री रोदस्योः रोदसी के अभिश्रियम् अभिश्री का सिञ्चत सिञ्चन करो। रसा रसयुक्त वृषभम् वृषभ को (पराक्रमी, वर्षा करने वाले को) दधीत धारण करे ॥ 13 ॥

भावार्थ - श्री धातु का मुख्य अर्थ सेवा करना है। सेवा भावना वैदिक संस्कृति में अति महत्वपूर्ण है, सेवा से ही किसी व्यक्ति की शोभा होती है। अतः श्री का अर्थ शोभा, सम्पदा, सम्मान भी माना जाता है। हम सभी श्री चाहते हैं, यहाँ कहा गया है कि सर्वत्र श्री का सिञ्चन करो, तभी तो सभी को श्री की उपलब्धि हो सकेगी।

विशेष - रु धातु का अर्थ शब्द करना, गति करना, तथा रुद् धातु का अर्थ रोना होता है। वृष धातु का अर्थ बरसना, सींचना, पराक्रम करना है। विन धातु का अर्थ कान्ति होना, तथा वेन धातु का अर्थ ज्ञान होना, रक्षा करना है।

पदार्थ - आ सुते = आसुत में, उत्पन्न हुए, ऐश्वर्य में (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। श्रियम् = श्री को (श्री - सेवा करना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना)। रोदस्योः = रोदसी के (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। अभिश्रियम् = अभिश्री का (अभि - सब ओर, श्री - सेवा करना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना)। सिञ्चत = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। रसा = रसयुक्त (रस् - स्वाद लेना, शब्द करना, स्नेह होना)। वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष् - बरसना, सींचना, पराक्रमी होना)। दधीत = धारण करे (दध्-धा - धारण करना) ॥ 1 ॥

728. ते जानत स्वम् ओक्व्याम्, सम् वत्सासो न मातृभिः ।

मिथो नसन्त जामिभिः ॥ 14 ॥ 8-72-14

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए जानत = जानो स्वम् = अपने को, स्वयम् को ओक्याम् = निवास को सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति वत्सासो = अनेक वत्स, वाणी से चलने वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक मातृभिः = माताओं द्वारा मिथो = मिथ, एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी नसन्त = कुटिल, वक्र जामिभिः = जामियों द्वारा, पोषण करने वालों द्वारा ॥ 14 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। जानत = जानो, जानते हैं (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। स्वम् = अपने को, स्वयम् को (सर्वनाम)। ओक्याम् = निवास को (ओक - निवास करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। वत्सासो = अनेक वत्स, वाणी से चलने वाले (वद् = कहना, बोलना, सू - चलना, सरकना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मातृभिः = माताओं द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। मिथो = मिथ, एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी (मिथ् - समझना, जानना, पीड़ा करना, दुःख देना, एकत्र करना, जोड़ना, जुड़ना, संयुक्त करना)। नसन्त = कुटिल, वक्र (नस् - कुटिल होना, वक्र होना, नमना)। जामिभिः = जामियों द्वारा, पोषण करने वालों द्वारा (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 2 ॥

729. उप स्रक्वेषु बप्सतः, कृण्वते धरुणम् दिवि ।

इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ॥ 15 ॥

8-72-15

मन्त्रार्थ :- उप = समीप स्रक्वेषु = सृजनों में, सृजनकर्ताओं में बप्सतः = भक्षण करने वाले, संरक्षण करने वाले कृण्वते = करते हैं धरुणम् = धारण करने वाले को दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में इन्द्रे = परम ऐश्वर्यशाली में अग्ना = अग्निगण, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, अग्नियाँ नमः = नमन स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् ॥ 15 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। स्रक्वेषु = सृजनों में, सृजनकर्ताओं में (सृज - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, बनाना, रचना करना)। बप्सतः = भक्षण करने वाले, संरक्षण करने वाले (प्सा - भक्षण करना, संरक्षण करना)। कृण्वते = करते हैं (कृ = करना)। धरुणम् = धारण करने वाले को (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। इन्द्रे = परम ऐश्वर्यशाली में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। अग्ना = अग्निगण, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्, अग्नियाँ (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नमः = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना) ॥ 3 ॥

(212) सूक्त 73

730. प्रेष्ठम् वो अतिथिम् स्तुषे, मित्रम् इव प्रियम् ।

अग्ने रथम् न वेद्यम् ॥ 1 ॥ 8-73-1

मन्त्रार्थ - प्रेष्ठम् = भेजने वालों को वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग अतिथिम् = सतत गतिशील, अतिथि को स्तुषे = स्तुष के लिए, स्तुति के लिए मित्रम् = मित्र को इव = समान, की भाँति, पाना, आना, भोजना)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। अतिथिम् = सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। स्तुषे = स्तुष के लिए, स्तुति के लिए (स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। मित्रम् = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। प्रियम् = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। रथम्

= रथ को (रथ् = जाना, ले जाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वेद्यम् = वेद-योग्य, ज्ञान-योग्य, जानने योग्य को (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्रेष्ठम् = भेजने वालों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इष्-ईष् - जाना, जानना, पाना, देना, प्रेष् - जाना, जानना, पाना, आना, भेजना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अतिथिम्** = सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। **स्तुषे** = स्तुष के लिए, स्तुति के लिए। (स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **मित्रम्** = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञा, नरम होना, मृदुल होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **प्रियम्** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वेद्यम्** = वेद-योग्य, ज्ञान-योग्य, जानने योग्य को (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) ॥ 1 ॥

731. कस्य नूनम् परीणसि, धियो जिन्वसि दम्पते।

गोषाता यस्य ते गिरः ॥ 7 ॥ 8-73-7

मन्त्रार्थ - कस्य = किसका **नूनम्** = निश्चय ही **परीणसि** = सब ओर से व्याप्त **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि **जिन्वसि** = प्रसन्न करो **दम्पते** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय, ऐश्वर्ययुक्त, दम्पती युगल के लिए **गोषाता** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में **यस्य** = जिसका **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ॥ 7 ॥

पदार्थ - कस्य = किसका (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **परीणसि** = सब ओर से व्याप्त (परि - सब ओर, ई - जाना, व्याप्त होना, प्रेरणा करना)। **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **जिन्वसि** = प्रसन्न करो (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **दम्पते** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय, ऐश्वर्ययुक्त, दम्पती युगल के लिए (दम् - शान्त करना, दमन करना, दया करना, शमन करना, सन्धि करना, जीतना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। **गोषाता** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 7 ॥

(213) सूक्त 74

732. विशोविशो वो अतिथिम्, वाजयन्तः पुरुप्रियम्।

अग्निम् वो दुर्यम् वचः, स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥ 1 ॥

8-74-1

मन्त्रार्थ - विशोविशो = विशोविश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **अतिथिम्** = सतत गतिशील, अतिथि को **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान **पुरुप्रियम्** = पुरुप्रिय को **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **दुर्यम्** = दुर्य को, दूर को **वचः** = वचन **स्तुषे** = स्तुत, स्तुह **शूषस्य** = उत्पन्न करने वाले हैं **मन्मभिः** = विचार द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - विशोविशो = विशोविश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अतिथिम्** = सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। **वाजयन्तः** = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पुरुप्रियम्** = पुरुप्रिय को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, प्री = प्रिय होना)।

अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **दुर्यम्** = दुर्य को, दूर को (दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **स्तुषे** = स्तुत, स्तुह (स्तुञ् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **शूषस्य** = उत्पन्न करने वाले हैं (शूष - जनना, उत्पन्न करना, प्रसूत होना)। **मन्मभिः** = विचार द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 1 ॥

733. यम् जनासो हविष्मन्तो, मित्रम् न सर्पिरासुतिम्।

प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥ 2 ॥ 8-74-2

मन्त्रार्थ :- यम् = जिसे, जिसको, जहाँ **जनासो** = जन, लोग, उत्पन्न हुए, उत्पन्न करने वाले **हविष्मन्तो** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त **मित्रम्** = मित्र को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सर्पिरासुतिम्** = प्रगतिशील ऐश्वर्यवान् को, प्रवाही-आसवन को **प्रशंसन्ति** = प्रशंसा, स्तुति करते हैं **प्रशस्तिभिः** = प्रशस्तियों द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **जनासो** = जन, लोग, उत्पन्न हुए, उत्पन्न करने वाले (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **हविष्मन्तो** = दानयुक्त, आदान-प्रदान, तृप्ति युक्त (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **मित्रम्** = मित्र को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सर्पिरासुतिम्** = प्रगतिशील ऐश्वर्यवान् को, प्रवाही-आसवन को (सृप् - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना, आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **प्रशंसन्ति** = प्रशंसा, स्तुति करते हैं (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **प्रशस्तिभिः** = प्रशस्तियों द्वारा (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना) ॥ 2 ॥

734. पन्यांसम् जातवेदसम्, यो देवताति उद्यता।

हव्यानि ऐरयत् दिवि ॥ 3 ॥ 8-74-3

मन्त्रार्थ :- पन्यांसम् = स्तुति करने योग्य, प्रशंसा योग्य **जातवेदसम्** = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले **यो** = जो **देवताति** = देवत्व में, दिव्यता में **उद्यता** = उद्यत, उद्योगी, उद्यमी **हव्यानि** = दान योग्य **ऐरयत्** = प्रेरणा करते हुए **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 3 ॥

पदार्थ :- पन्यांसम् = स्तुति करने योग्य, प्रशंसा योग्य (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **जातवेदसम्** = विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **देवताति** = देवत्व में, दिव्यता में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **उद्यता** = उद्यत, उद्योगी, उद्यमी (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना, यातना देना, दुःख देना, मारना, ठोकना, चपेटना, आज्ञा करना, एकत्र करना, मना करना, रोकना)। **हव्यानि** = दान योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **ऐरयत्** = प्रेरणा करते हुए (इर् - ईर्ष्या करना, ऋ-इर्य - जाना, चलना, फैलाना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 3 ॥

735. अगन्म वृत्रहन्तमम्, ज्येष्ठम् अग्निम् आनवम्।

मन्त्रार्थ - अगन्म = गये, पाया, प्राप्त हुए वृत्रहन्तमम् = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़ा अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को आनवम् = सम्यक् चेतन-प्राणवान् को यस्य श्रुतर्वा = श्रुतर्व को, श्रुत को, सुने हुए को आर्क्षो = ऋक्ष, हिंसक, प्रकाशकर्ता के लिए बृहन् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् अनीक = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण इध्यते = गति, ज्ञान, प्रकाश के लिए ॥ 4 ॥

पदार्थ - अगन्म = गये, पाया, प्राप्त हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, कुटिल गति करना, टेढ़ा जाना, लेना, ग्रहण करना, गम् = जाना, जानना, पाना)। वृत्रहन्तमम् = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। ज्येष्ठम् = ज्येष्ठ, बड़ा (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। आनवम् = सम्यक् चेतन-प्राणवान् को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन् - चेतन होना, चेतन करना, प्राण होना)। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। श्रुतर्वा = श्रुतर्व को, श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। आर्क्षो = ऋक्ष, हिंसक, प्रकाशकर्ता के लिए (ऋक्ष - काटना, हिंसा करना, प्रकाश करना)। बृहन् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। अनीक = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। इध्यते = गति, ज्ञान, प्रकाश के लिए (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना) ॥ 4 ॥

(214) सूक्त 75

736. कुवित् सु नो गविष्टये, अग्ने सम् वेषिषो रयिम्।

उरुकृत् उरु णः कृधि ॥ 11 ॥ 8-75-11

मन्त्रार्थ :- कुवित् = कवि, शब्दज्ञ, शब्दज्ञानी, शब्द को जानने वाला सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा गविष्टये = गविष्ट के लिए, अत्यन्त विद्वान् के लिए अग्ने = हे अग्नि सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति वेषिषो = व्याप्त होने वाला, व्याप्त करने वाला, व्यापक, सिंचक रयिम् = विद्या, ज्ञान को उरुकृत् = बहुकृत, बहुत करने वाला उरु = बहुत, विराट् णः = हमको, हमारे लिए, हमारा कृधि = करो ॥ 11 ॥

पदार्थ :- कुवित् = कवि, शब्दज्ञ, शब्दज्ञानी, शब्द को जानने वाला (कु, क्व = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। सु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। गविष्टये = गविष्ट के लिए, अत्यन्त विद्वान् के लिए (गु = शब्द करना, मनन करना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। वेषिषो = व्याप्त होने वाला, व्याप्त करने वाला, व्यापक, सिंचक (विष् = विलग करना, प्रयोग न होने से निकाल देना, विष = सींचना, व्यापना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। उरुकृत् = बहुकृत, बहुत करने वाला (उरु = बहुत, विराट् (अव्यय, सर्वनाम), कृ = करना)। उरु = बहुत, विराट् (अव्यय, सर्वनाम)। णः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। कृधि = करो (कृ = करना) ॥ 11 ॥

737. मा नो अस्मिन् महाधने, परा वर्क भारभृत् यथा।

सम् वर्गम् सम् रयिम् जय ॥ 12 ॥ 8-75-12

मन्त्रार्थ :- मा = नहीं, मत नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अस्मिन् = इस, इसमें महाधने = हे महाधन परा =

परम्, परे, पीछे, विपरीत **वर्क** = स्वीकार करें, मान्य करें **भारभृत्** = भार को वहन करने वाला, भार को पूर्ण करने वाला **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **वर्गम्** = वर्ग को, वरण को **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **जय** = विजय ॥ 12 ॥

पदार्थ :- **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम) ॥ **महाधने** = हे महाधन (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **वर्क** = स्वीकार करें, मान्य करें (वृक - लेना, मान्य करना, स्वीकार करना)। **भारभृत्** = भार को वहन करने वाला, भार को पूर्ण करने वाला (भृ - भरण-पोषण, धारण करना, भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **वर्गम्** = वर्ग को, वरण को (वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **जय** = विजय (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना) ॥ 12 ॥

(215) सूक्त 76

738. उत्तिष्ठन् ओजसा सह, पीत्वी शिप्रे अवेपयः।

सोमम् इन्द्र चमू सुतम् ॥ 10 ॥ 8-76-10

मन्त्रार्थ :- **उत्** - ऊपर, उच्च, **तिष्ठन्** - स्थित, **ओजसा** - ओज के, **सह** - साथ, **पीत्वी** - पीकर, **शिप्रे** - शिप्रे - तीक्ष्णता में, श्रवण में, **अवेपयः** - अकम्पित। **सोमम्** - सोम को, **इन्द्र** - हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यवान्, **चमू** - भोजन, **सुतम्** - सुत को, उत्पन्न, ऐश्वर्यवान्, आसवित को ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **उत्** = ऊपर, उच्च। **तिष्ठन्** - स्थित (तिष्ठ = ठहरना)। **ओजसा** - ओज के (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **सह** = साथ। **पीत्वी** - पीकर (पा-पिब् = पीना, पान करना)। **शिप्रे** - तीक्ष्णता में, श्रवण में (शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना, प्रा - पूर्ण करना)। **अवेपयः** - अकम्पित (अ - नहीं, वेप् - कम्पन करना)। **सोमम्** - सोम को (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, आसवन करना, सू = प्रेरणा देना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **चमू** - भोजन (चम् - खाना, पाना)। **सुतम्** - सुत को, उत्पन्न, ऐश्वर्यवान्, आसवित को (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, आसवन करना, सू = प्रेरणा देना) ॥ 10 ॥

739. अनु त्वा रोदसी उभे, कक्षमाणम् अकृपेताम्।

इन्द्र यत् दस्युहा भवः ॥ 11 ॥ 8-76-11

मन्त्रार्थ :- **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **उभे** = दोनों, पूर्णता **कक्षमाणम्** = कक्षों का, **अकृपेताम्** = दया, दुर्बल को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **यत्** = जिसे, जो **दस्युहा** = दस्यु-हन्ता, दस्यु को मारने वाले **भवः** = हो, होने वाले ॥

पदार्थ :- **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **कक्षमाणम्** = कक्षों का, (कक्ष - धारण करना, घर्षण करना)। **अकृपेताम्** = दया, दुर्बल को (कृप-दया करना, दुर्बल होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दस्युहा** = दस्यु-हन्ता, दस्यु को मारने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **भवः** = हो, होने वाले (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 11 ॥

740. वाचम् अष्टापदीम् अहम्, नवस्रक्तिम् ऋतस्पृशम्।

इन्द्रात् परि तन्वम् ममे ॥ 12 ॥ 8-76-12

मन्त्रार्थ :- वाचम् = वाणी को अष्टापदीम् = आठ पद युक्त को अहम् = मैं नवस्रक्तिम् = नवगतियों को ऋतस्पृशम् = ऋत को स्पर्श करने वाला इन्द्रात् = इन्द्र से, परम ऐश्वर्य से परि = सभी तरफ तन्वम् = तन्व को, विस्तार को ममे = परिमाण करता है ॥ 12 ॥

पदार्थ :- वाचम् = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। अष्टापदीम् = आठ पद युक्त को (अष्ट - आठ, संख्या, पद - चलना)। अहम् = मैं (सर्वनाम)। नवस्रक्तिम् = नव-गतियों को (नव - नौ (संख्या), सृ - जाना, सरकना)। ऋतस्पृशम् = ऋत को स्पर्श करने वाला (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। इन्द्रात् = इन्द्र से, परम ऐश्वर्य से (इन्द्र - इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। तन्वम् = तन्व को, विस्तार को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। ममे = परिमाण करता है (मा - शब्द करना, नापना, तौलना, समाना) ॥ 12 ॥

(216) सूक्त 81

741. आ तू नः इन्द्र क्षुमन्तम्, चित्रम् ग्राभम् सम् गृभाय।

महाहस्ती दक्षिणेन ॥ 1 ॥ 8-81-1

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण तू = तो, परन्तु, और अब नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली क्षुमन्तम् = विद्वान् को, गतिशील को, शब्दकर्ता को चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को ग्राभम् = ग्राही को, ग्रहण करने वाले को सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति गृभाय = गृभ के लिए, ग्रहण करने वाले, वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले के लिए महाहस्ती = महाहस्ती, महान् हाथ वाला दक्षिणेन = दक्षिण द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। तू = तो, परन्तु, और अब (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। क्षुमन्तम् = विद्वान् को, गतिशील को, शब्दकर्ता को (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। ग्राभम् = ग्राही को, ग्रहण करने वाले को (गृभ - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। गृभाय = गृभ के लिए, ग्रहण करने वाले, वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले के लिए (गृह - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना, निवास करना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ-गर्भ - ग्रहण करना, लेना, अन्दर होना, अन्तःवास करना)। महाहस्ती = महाहस्ती, महान् हाथ वाला (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। दक्षिणेन = दक्षिण द्वारा (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना) ॥ 1 ॥

742. विद्मा हि त्वा तुवि-कूर्मिम्, तुवि-देष्णम् तुवी-मघम्।

तुवि-मात्रम् अवोभिः ॥ 2 ॥ 8-81-2

मन्त्रार्थ :- विद्मा = विद्म, जानने वाले हि = ही, निश्चय त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा तुवि-कूर्मिम् = वृद्धिकर्ता को तुवि-देष्णम् = महादानी को तुवी-मघम् = महाधनी को तुवि-मात्रम् = महाज्ञानी को अवोभिः = रक्षण द्वारा, रक्षा-साधनों से ॥ 2 ॥

पदार्थ :- विद्मा = विद्म, जानने वाले (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा

(सर्वनाम)। **तुवि-कूर्मिम्** = वृद्धिकर्ता को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, कृ - करना)। **तुवि-देष्णम्** = महादानी को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, दा, दद् = देना, दान करना, रखना)। **तुवी-मघम्** = महाधनी को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **तुवि-मात्रम्** = महाज्ञानी को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अवोभिः** = रक्षण द्वारा, रक्षा-साधनों से (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना) ॥ 2 ॥

743. न हि त्वा शूर देवा, न मर्तासो दित्सन्तम्।

भीमम् न गाम् वारयन्ते ॥ 3 ॥ 8-81-3

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक हि = ही, निश्चय त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा शूर = वीर, पराक्रमी देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने न = नहीं, समान, उपमार्थक मर्तासो = मर्य, मरणशील दित्सन्तम् = दान-योग्य पूजनीय को भीमम् = भयंकर को न = नहीं, समान, उपमार्थक गाम् = गान, गाय, गायक, गाने वाले को। वारयन्ते = निवारण करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। शूर = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मर्तासो = मर्य, मरणशील (मृ - मरना, देहत्याग करना)। दित्सन्तम् = दान-योग्य पूजनीय को (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना, दी = क्षय होना, ह्रास होना, नष्ट होना, झरना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। भीमम् = भयंकर को (भी - डरना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। गाम् = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। वारयन्ते = निवारण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना, यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना) ॥ 3 ॥

(217) सूक्त 82

744. यः इन्द्र चमसेषु आ, सोमः चमूषु ते सुतः।

पिब इत् अस्य त्वम् ईशिषे ॥ 7 ॥ 8-82-7

मन्त्रार्थ - यः = जो इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली चमसेषु = चमस, भोजन-पात्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम चमूषु = भोजन, खाने वाला ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए पिब = पी लो इत् = ही अस्य = इसका त्वम् = तुम ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे ॥ 7 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। चमसेषु = चमस, भोजन-पात्र (चम् - खाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। चमूषु = भोजन, खाने वाला (चम् - खाना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पिब = पी लो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। इत् = ही (अव्यय)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। ईशिषे = ऐश्वर्य, अधिकार हो, शासन करे (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना) ॥ 7 ॥

अनुवाकः - 66

745. देवानाम् इत अवो महत्, तत् आ वृणीमहे वयम्।

वृष्णाम् अस्मभ्यम् ऊतये ॥ 1 ॥ 8-83-1

मन्त्रार्थ - देवानाम् = देवों का इत = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया अवो = रक्षक, विद्वान् महत् = महान् तत् = वह, उस को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं वयम् = हम, हम सब, हम लोग वृष्णाम् = पराक्रमी को अस्मभ्यम् = हमारे लिए ऊतये = रक्षा के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इत = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। अवो = रक्षक, विद्वान् (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। महत् = महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्त्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। वृष्णाम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 1 ॥

746. कविम् इव प्रचेतसम्, यम् देवासः अध द्विता।

नि मर्त्येषु आदधुः ॥ 2 ॥ 8-84-2

मन्त्रार्थ :- कविम् = ज्ञानी, कवि को इव = समान, की भाँति, के समान प्रचेतसम् = प्रकृष्ट विचार वाले को यम् = जिसे, जिसको, जहाँ देवासः = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण अध = अथ, अब, इसके अनन्तर द्विता = द्वित नि = निश्चित, निरन्तर मर्त्येषु = मरणशीलों में आदधुः = धारण करते हुए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- कविम् = ज्ञानी, कवि को (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। प्रचेतसम् = प्रकृष्ट विचार वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना) यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। देवासः = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। द्विता = द्वित (द्वि = दो, संख्या)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। मर्त्येषु = मरणशीलों में (मृ = मरना, देहत्याग करना)। आदधुः = धारण करते हुए (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दध - धारण करना, पालन करना) ॥ 2 ॥

747. त्वम् यविष्ठ दाशुषो, नृन् पाहि शृणुधी गिरः।

रक्षा तोकम् उत त्मना ॥ 3 ॥ 8-84-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम। यविष्ठ = यविष्ठ। दाशुषो = दानी। नृन् = नरों। पाहि = पालन करो, रक्षा करो। शृणुधी = सुनें। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन। रक्षा = रक्षा करो। तोकम् = तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास को। उत = ही। त्मना = आत्मा द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। यविष्ठ = यविष्ठ (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। दाशुषो = दानी (दश् = देना)। नृन् = नरों (नृ - ले जाना)। पाहि = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। शृणुधी = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। रक्षा = रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। तोकम् = तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास को (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल होना, दान करना, निवास करना, ग्रहण करना, चमकना)। उत

= ही (अव्यय)। **त्मना** = आत्मा द्वारा (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में आ का लोप हो सकता है) ॥ 3 ॥

748. कया ते अग्ने अङ्गिरः, ऊर्जो नपात् उपस्तुतिम्।

वराय देव मन्यवे ॥ 4 ॥ 8-84-4

मन्त्रार्थ :- कया = किससे ते = उससे, उसके द्वारा अग्ने = हे अग्नि अङ्गिरः = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला ऊर्जो = ऊर्जा नपात् = प्राप्त किया उपस्तुतिम् = उपस्तुति को वराय = वर के लिए देव = हे देव, विद्वान्, तेजस्वी मन्यवे = मन्यु के लिए, मानते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ :- कया = किससे (सर्वनाम)। ते = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। अङ्गिरः = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अंग् = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। ऊर्जो = ऊर्जा (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। नपात् = प्राप्त किया (नप - पहुँचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। उपस्तुतिम् = उपस्तुति को (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। वराय = वर के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। देव = हे देव, विद्वान्, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। मन्यवे = मन्यु के लिए, मानते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 4 ॥

749. दाशेम कस्य मनसा, यज्ञस्य सहसो यहो।

कत् उ वोचे इदम् नमः ॥ 5 ॥ 8-84-5

मन्त्रार्थ :- दाशेम = दान करें कस्य = किसका मनसा = मन से, मन द्वारा यज्ञस्य = यजन का सहसो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए यहो = पूज्य, सम्मानित कत् = कितना उ = निश्चय ही, भी वोचे = बोलता है इदम् = यह, इसको नमः = नमन ॥ 5 ॥

पदार्थ :- दाशेम = दान करें (दाश् - देना)। कस्य = किसका (सर्वनाम)। मनसा = मन से, मन द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। सहसो = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। यहो = पूज्य, सम्मानित (यह-मह = पूजा करना, सम्मान करना)। कत् = कितना (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। वोचे = बोलता है (वच् - बोलना, कहना)। इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। नमः = नमन (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना) ॥ 5 ॥

750. अध आ त्वम् हि नः करो, विश्वा अस्मभ्यम् सुक्षितीः।

वाजद्रविणसो गिरः ॥ 6 ॥ 8-84-6

मन्त्रार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय नः = हमको, हमारे लिए, हमारा करो = करो विश्वा = विश्व, सभी, सब अस्मभ्यम् = हमारे लिए सुक्षितीः = सुन्दर निवास वाले वाजद्रविणसो = वाज-द्रविण, विद्या-द्रवणशील, प्रगतिशील विद्वान् गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। करो = करो (कृ - करना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। सुक्षितीः = सुन्दर निवास वाले (सु = अच्छा, उपसर्ग, क्षि = निवास करना, रहना)। वाजद्रविणसो = वाज-द्रविण, विद्या-द्रवणशील, प्रगतिशील विद्वान् (वाज् = गति करना,

जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। गिरः = वाणियों, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 6 ॥

(220) सूक्त 88

751. तम् वो दस्मम् ऋतीषहम्, वसोः मन्दानम् अन्धसः ।

अभि वत्सम् न स्वसरेषु धेनवः, इन्द्रम् गीर्भिः नवामहे ॥ 1 ॥

8-88-1

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए दस्मम् = रक्षण, पालन, स्थापन करने वाले को, नष्ट करने वाले को ऋतीषहम् = ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित वसोः = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का मन्दानम् = आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा वत्सम् = बोलने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक स्वसरेषु = स्वसरों में धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले इन्द्रम् = इन्द्र को गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा नवामहे = स्तुति करते हैं ॥ 1 ॥

भावार्थ :- परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा की स्तुति वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा करते हैं। वाणी का भावार्थ वेदवाणी मानना समुचित है। उसका बोध होना भी आवश्यक है। बोध हो जाये तो समाज को उस बोध से अभिसिंचित करें, लाभान्वित करें, यह भी आवश्यक है ॥ 1 ॥

पदार्थ - तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। दस्मम् = रक्षण, पालन, स्थापन करने वाले को, नष्ट करने वाले को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। ऋतीषहम् = ऋतगामी, ऋत से प्रकाशित (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, ऋती - कृपा करना, दया करना, निन्दा करना, दोष लगाना, घृणा करना, सह - शक्ति-सामर्थ्य होना, साथ होना, तृप्त होना, प्रसन्न होना, सहन करना, सन्तुष्ट होना)। वसोः = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। मन्दानम् = आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। वत्सम् = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। स्वसरेषु = स्वसरों में (स्व - अपना, सु - अच्छा, सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना। सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना। सृ - गति करना, जानना, पाना)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। नवामहे = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना) ॥ 1 ॥

752. द्युक्षम् सुदानुम् तविषीभिः, आवृतम् गिरिम् न पुरुभोजसम् ।

क्षुमन्तम् वाजम् शतिनम् सहस्त्रिणम्, मक्षू गोमन्तम् ईमहे ॥ 2 ॥ 8-88-2

मन्त्रार्थ :- द्युक्षम् = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ सुदानुम् = उत्तम दानी को तविषीभिः = तविषियों, गतियों, वृद्धियों, हिंसाओं द्वारा, प्रकाशमानों द्वारा आवृतम् = प्रकाश आदि को, आवृत को गिरिम् = गिरि को, स्तुति, वाणी, बोध, सिञ्चन को न = नहीं, समान, उपमार्थक पुरुभोजसम् = पुरु-भोज को, अग्रणी संरक्षक को क्षुमन्तम् = विद्वान् को, गतिशील को, शब्दकर्ता को वाजम् = विद्या को, गति को शतिनम् = शतक को सहस्त्रिणम् =

सहस्री को **मक्षू** = मक्षू, वाणी **गोमन्तम्** = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **द्युक्षम्** = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। **सुदानुम्** = उत्तम दानी को (सु - सुन्दर, अच्छा, दा, दद् = देना)। **तविषीभिः** = तविषियों, गतियों, वृद्धियों, हिंसाओं द्वारा, प्रकाशमानों द्वारा (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना, तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **आवृतम्** = प्रकाश आदि को, आवृत को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भलीभाँति, वृत् = रहना, होना, वर्ताव करना, वरण करना, चमकना, बोलना)। **गिरिम्** = गिरि को, स्तुति, वाणी, बोध, सिञ्चन को (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पुरुभोजसम्** = पुरु-भोज को, अग्रणी संरक्षक को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। **क्षुमन्तम्** = विद्वान् को, गतिशील को, शब्दकर्ता को (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **शतिनम्** = शतक को (शतम् = सौ, शी-शद्-शत् - जीर्ण होना)। **सहस्रिणम्** = सहस्री को (संख्या)। **मक्षू** = मक्षू, वाणी (मक्ष - डसना, मच - गर्व करना, दुराचारी होना, बोलना, पीसना, कूटना)। **गोमन्तम्** = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 2 ॥

753. न त्वा बृहन्तो अद्रयो, वरन्ते इन्द्र वीडवः ।

यत् दित्ससि स्तुवते मावते, वसु न किः तत् आ मिनाति ते ॥ 3 ॥ 8-88-3

मन्त्रार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **बृहन्तो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा **अद्रयो** = आदर युक्त, अहिंसक **वरन्ते** = वरते **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **वीडवः** = वीडव, विशेष स्तुति योग्य **यत्** = जिसे, जो **दित्ससि** = क्षयमान, क्षयकारी **स्तुवते** = स्तुति करने वाले के लिए **मावते** = सम्मान युक्त **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **किः** = कोई, किसी **तत्** = वह, उस को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **मिनाति** = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ - **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **बृहन्तो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अद्रयो** = आदर युक्त, अहिंसक (द्र - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना)। **वरन्ते** = वरते (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वीडवः** = वीडव, विशेष स्तुति योग्य (वि = विशेष, ईड् = स्तुति करना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **दित्ससि** = क्षयमान, क्षयकारी (दी = क्षय होना, ह्रास होना, नष्ट होना, झरना)। **स्तुवते** = स्तुति करने वाले के लिए (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **मावते** = सम्मान युक्त (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **किः** = कोई, किसी (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **मिनाति** = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

754. प्र हि रिरिक्षे ओजसा, दिवः अन्तेभ्यः परि।

न त्वा विव्याच रज, इन्द्र पार्थिवम् अनु स्वधाम् ववक्षिथ ॥ 5 ॥

8-88-5

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक हि = ही, निश्चय रिरिक्षे = अतिरिक्त स्थिति है ओजसा = ओज द्वारा दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय अन्तेभ्यः = प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य, स्थानों के लिए परि = सभी तरफ न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा विव्याच = व्याप्त हुआ रज = रज इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली पार्थिवम् = पार्थिव को, पृथ्वी को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल स्वधाम् = स्वधा को ववक्षिथ = पालन, रक्षा किया ॥ 5 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। रिरिक्षे = अतिरिक्त स्थिति है (रिङ्क्-रिच - रिक्त करना, मल शुद्धि होना, गर्भपात कराना, गर्भ गिराना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। अन्तेभ्यः = प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य, स्थानों के लिए (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। विव्याच = व्याप्त हुआ (वि - विशेष, व्यच - व्यापना, ठगना, फसाना, जाना)। रज = रज (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। पार्थिवम् = पार्थिव को, पृथ्वी को (पृथ - फैकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। स्वधाम् = स्वधा को (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना)। ववक्षिथ = पालन, रक्षा किया (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना) ॥

(221) सूक्त 89

755. बृहत् इन्द्राय गायत, मरुतो वृत्रहन्तमम्।

येन ज्योतिः अजनयम् ऋतावृधो, देवम् देवाय जागृवि ॥ 1 ॥

8-89-1

मन्त्रार्थ - बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए गायत = गाते हैं, गायन करने वाले मरुतो = मरणशीलों का वृत्रहन्तमम् = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले येन = जिससे, जिसके द्वारा ज्योतिः = प्रकाश अजनयम् = जय किया ऋतावृधो = ऋतावृध, ऋत से वर्धित देवम् = देव को देवाय = देव के लिए जागृवि = जागा हुआ, जाग्रत ॥ 1 ॥

पदार्थ - बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। गायत = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। मरुतो = मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। वृत्रहन्तमम् = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा। ज्योतिः = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। अजनयम् = जय किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जि-जय - जीतना, जय होना)। ऋतावृधो = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवाय = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। जागृवि = जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना) ॥ 1 ॥

756. प्र वः इन्द्राय बृहते, मरुतो ब्रह्म अर्चत।

वृत्रम् हनति वृत्रहा, शतक्रतुः वजेण शतपर्वणा ॥ 3 ॥

8-89-3

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **बृहते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **मरुतो** = मरणशीलों का **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को **हनति** = मारता है **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **शतक्रतुः** = सैकड़ों कर्म करने वाला **वज्रेण** = वज्र, गतिमान। **शतपर्वणा** = शतपर्व ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **बृहते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **मरुतो** = मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हनति** = मारता है (हन् - मारना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **शतक्रतुः** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **वज्रेण** = वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **शतपर्वणा** = शतपर्व (शत = सौ, पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना) ॥ 3 ॥

757. यत् जायथाः अपूर्व्य, मघवन् वृत्रहत्याय ।

तत् पृथिवीम् अप्रथयः, तत् अस्तम्नाः उत द्याम् ॥ 5 ॥ 8-89-5

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **जायथाः** = उत्पन्न होने वाले, उत्पन्न करने वाले **अपूर्व्य** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **वृत्रहत्याय** = वृत्रहत्या के लिए **तत्** = वह, उस को **पृथिवीम्** = पृथिवी को **अप्रथयः** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया, प्रसिद्ध न करें, न फैलायें **तत्** = वह, उस को **अस्तम्नाः** = स्तम्भित किया **उत** = ही, भी, ओर **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय । 5 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। **जायथाः** = उत्पन्न होने वाले, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अपूर्व्य** = अपूर्व, जो पहले नहीं हुआ अर्थात् विशिष्ट या विलक्षण (अ - नहीं, पूर्व - पहले)। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **वृत्रहत्याय** = वृत्रहत्या के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अप्रथयः** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया, प्रसिद्ध न करें, न फैलायें (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **अस्तम्नाः** = स्तम्भित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तम्भ - दृढ़ होना, अचल होना, स्तब्ध होना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना) ॥

758. तत् ते यज्ञो अजायत, तत् अर्कः उत हस्कृतिः ।

तत् विश्वम् अभिभूः असि, यत् जातम् यत् च जन्त्वम् ॥ 6 ॥

8-89-6

मन्त्रार्थ :- तत् = वह, उस को **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **यज्ञो** = यजन **अजायत** = उत्पन्न हुए **तत्** = वह, उस को **अर्कः** = अर्क **उत** = ही, भी, ओर **हस्कृतिः** = हासकारी, आह्लादकारी **तत्** = वह, उस को **विश्वम्** = विश्व, सभी, सब को **अभिभूः** = सभी ओर, सर्वथा होने वाला **असि** = हो **यत्** = जिसे, जो **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को **यत्** = जिसे, जो **च** = और **जन्त्वम्** = जन्तु को ॥ 6 ॥

पदार्थ :- तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **यज्ञो** = यजन (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **अजायत** = उत्पन्न हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् - उत्पन्न होना)।

तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। अर्कः = अर्क (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। हस्कृतिः = हासकारी, आह्लादकारी (हस - हंसना, ठट्ठा करना, कृ = करना)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। विश्वम् = विश्व, सभी, सब को (सर्वनाम)। अभिभूः = सभी ओर, सर्वथा होने वाला (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, भू - होना)। अस्मि = हो (अस् - होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। जन्त्वम् = जन्तु को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 6 ॥

759. आमासु पक्वम् ऐरयः, आ सूर्यम् रोहयो दिवि।

घर्मम् न सामम् तपता, सुवृक्तिभिः जुष्टम् गिर्वणसे बृहत् ॥ 7 ॥

8-89-7

मन्त्रार्थ :- आमासु = विद्वानों में, खिलाने वालों में, वाणी-शब्द देने वालों में पक्वम् = पक्व, पका हुआ, प्रकाश को ऐरयः = प्राप्त होते हैं आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को रोहयो = बढ़ता हुआ, चढ़ता हुआ दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में घर्मम् = घर्म को न = नहीं, समान, उपमार्थक सामम् = साम को तपता = तपो, तपाओ सुवृक्तिभिः = सुवृक्तियों द्वारा, उत्तम आदानों द्वारा जुष्टम् = सुविचारित सेवा को गिर्वणसे = वाणी, बोध, सिञ्चन युक्त के लिए बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥ 7 ॥

पदार्थ :- आमासु = विद्वानों में, खिलाने वालों में, वाणी-शब्द देने वालों में (अम् - शब्द करना, सेवा करना, जाना, खाना, भूँखा होना, रोगी होना)। पक्वम् = पक्व, पका हुआ, प्रकाश को (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। ऐरयः = प्राप्त होते हैं (इर् - ईर्ष्या करना, ऋ-इर्य - जाना, चलना, फैलाना, ईर - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। रोहयो = बढ़ता हुआ, चढ़ता हुआ (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। घर्मम् = घर्म को (घृ = सींचना, चमकना, प्रकाश होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। सामम् = साम को (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। तपता = तपो, तपाओ (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। सुवृक्तिभिः = सुवृक्तियों द्वारा, उत्तम आदानों द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, वृक - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना)। जुष्टम् = सुविचारित सेवा को (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। गिर्वणसे = वाणी, बोध, सिञ्चन युक्त के लिए (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 7 ॥

(222) सूक्त 90

760. आ नो विश्वासु हव्यम्, इन्द्रः समत्सु भूषत।

उप ब्रह्माणि सवनानि, वृत्रहा परमज्या ऋचीषमः ॥ 1 ॥

8-90-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो विश्वासु = सभी हव्यम् = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को इन्द्रम् = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान को समत्सु = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में भूषत = भूषित हों उप = समीप ब्रह्माणि = ब्रह्ममय सवनानि = उत्पन्न करने से वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले परमज्या = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम ऋचीषमः = स्तुति करें ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। विश्वासु = सभी (सर्वनाम)। हव्यम् = आदान-प्रदान करने योग्य को, हव्य को, देय को (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान

करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **भूषत** = भूषित हों, (भूष् - भूषित होना, सजाना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **ब्रह्माणि** = ब्रह्ममय (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सवनानि** = उत्पन्न करने से (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **परमज्या** = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम (सर्वनाम)। **ऋचीषम** = स्तुति करें (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 1 ॥

761. त्वम् दाता प्रथमो राधसाम् असि, असि सत्यः ईशानकृत् ।

तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे, पुत्रस्य शवसो महः ॥ 2 ॥

8-90-2

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम दाता = देने वाला प्रथमो = प्रथम राधसाम् = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि को असि = हो असि = हो सत्यः = सत्य ईशानकृत् = ईश-कृत, शासन-कृत तुविद्युम्नस्य = अत्यन्त प्रकाशमान का युज्या = युज्य वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं पुत्रस्य = पुत्र का शवसो = शवस् का, गति, ज्ञान का महः = महान् ॥ 2 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। दाता = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। प्रथमो = प्रथम (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। राधसाम् = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि को (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। असि = हो (अस् - होना)। असि = हो (अस् - होना)। सत्यः = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। ईशानकृत् = ईश-कृत, शासन-कृत (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना, कृ = करना)। तुविद्युम्नस्य = अत्यन्त प्रकाशमान का (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना, द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। युज्या = युज्य (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। पुत्रस्य = पुत्र का (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। शवसो = शवस् का, गति, ज्ञान का (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। महः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) ॥ 2 ॥

762. त्वम् इन्द्र यशा असि, ऋजीषी शवसस्पते ।

त्वम् वृत्राणि हंसि अप्रतीनि, एक इत् पुरु अनुत्तः चर्षणीधृतिः ॥ 5 ॥ 8-90-5

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली यशा = यश, कीर्ति असि = हो ऋजीषी = ऋजीषी, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् शवसस्पते = हे विद्वानों के पति, प्रगतिशीलों के अधिपति त्वम् = तुम वृत्राणि = वृत्रों को, आच्छादनों को हंसि = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो अप्रतीनि = अप्रतीनि एक = एक इत् = ही पुरु = पहले, आगे अनुत्तः = अश्रेष्ठ चर्षणीधृतिः = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाला ॥ 5 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। यशा = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। असि = हो (अस् - होना)। ऋजीषी = ऋजीषी, स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना)। शवसस्पते = हे विद्वानों के पति, प्रगतिशीलों के अधिपति (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। वृत्राणि = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। हंसि = प्रसन्न करते हो, नष्ट करते हो (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना,

प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **अप्रतीनि** = अप्रतीनि (अ - नहीं, प्रति - सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में, अव्यय, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, इ - जाना, जानना, पाना, इन् - प्रकाश करना)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **पुरु** = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **अनुत्तः** = अश्रेष्ठ (अन् - नहीं, उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च)। **चर्षणीधृतिः** = आनन्द, चेतना, विचार को धारण करने वाला (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना, धृ - धारण करना) ॥ 5 ॥

763. तम् उ त्वा नूनम् असुर, प्रचेतसम् राधो भागम् इव ईमहे।

मही इव कृतिः शरणा ते इन्द्र, प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ॥ 6 ॥ 8-90-6

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे उ = निश्चय ही, भी त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा नूनम् = निश्चय ही असुर = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश देने वाला प्रचेतसम् = प्रकृष्ट विचार वाले को राधो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि भागम् = सेवा, दान, भोजन, भाग को इव = समान, की भाँति, के समान ईमहे = आते हैं, जानते हैं मही = मही, महिमावान्, महान् इव = समान, की भाँति, के समान कृतिः = करने वाला शरणा = शरण में ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सुम्ना = ऐश्वर्य नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अश्नवन् = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त हों ॥ 6 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। नूनम् = निश्चय ही (अव्यय)। असुर = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश देने वाला (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। प्रचेतसम् = प्रकृष्ट विचार वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। राधो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। भागम् = सेवा, दान, भोजन, भाग को (भज् = सेवा करना, दान करना, भोजन पकाना, भज - अंश या भाग होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। ईमहे = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। मही = मही, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। कृतिः = करने वाला (कृ - करना, कृत - कतरना, काटना)। शरणा = शरण में (श्रण - देना, दान करना, रक्षा करना, श्री - सेवा करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सुम्ना = ऐश्वर्य (सु = उत्पन्न कराना, ऐश्वर्य होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अश्नवन् = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त हों (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) ॥ 6 ॥

(223) सूक्त 91

764. अग्निम् वो वृधन्तम्, अध्वराणाम् पुरुतमम्।

अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥ 7 ॥ 8-91-7

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग वृधन्तम् = वृद्धि को अध्वराणाम् = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का पुरुतमम् = अग्रगामी, अग्रणी को अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ नप्त्रे = प्राप्त किया, ज्ञानियों में सहस्वते = सहनशील, समर्थ को ॥ 7 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। वृधन्तम् = वृद्धि को (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। अध्वराणाम् = अहिंसकों का, अवर्णनीयों का (अ - नहीं,

ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **पुरुतमम्** = अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। **नप्त्रे** = प्राप्त किया, ज्ञानियों में (न - नहीं, पा - पलन करना, रक्षा करना, नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **सहस्वते** = सहनशील, समर्थ को (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना) ॥ 7 ॥

765. उप त्वा जामयो गिरो, देदिशतीः हविष्कृतः ।

वायोः अनीके अस्थिरन् ॥ 13 ॥ 8-91-13

मन्त्रार्थ - उप = समीप त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **जामयो** = पोषण करने वाली **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **देदिशतीः** = दिशा देते हैं **हविष्कृतः** = हविकर्ता **वायोः** = वायु का, गतिशील, रचनाशील का **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में **अस्थिरन्** = स्थित हों ॥ 13 ॥

पदार्थ - उप = समीप (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **जामयो** = पोषण करने वाली (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **देदिशतीः** = दिशा देते हैं (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। **हविष्कृतः** = हविकर्ता (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना, कृ - करना)। **वायोः** = वायु का, गतिशील, रचनाशील का (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। **अस्थिरन्** = स्थित हों (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था - स्थित होना, ठहरना) ॥ 13 ॥

766. अग्निम् इन्धानो मनसा, धियम् सचेत मर्त्यः ।

अग्निम् ईधे विवस्वभिः ॥ 22 ॥ 8-91-22

मन्त्रार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **इन्धानो** = प्रकाशित होने वाले, प्रकाशित करने वाले **मनसा** = मन से, मन द्वारा **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को **सचेत** = समान चित्त वाले **मर्त्यः** = मरणशील **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **ईधे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें **विवस्वभिः** = विशेष वास द्वारा ॥ 22 ॥

पदार्थ - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **इन्धानो** = प्रकाशित होने वाले, प्रकाशित करने वाले (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **मनसा** = मन से, मन द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **सचेत** = समान चित्त वाले (चित - विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **मर्त्यः** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ईधे** = प्रकाशित हो, प्रकाशित करें (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **विवस्वभिः** = विशेष वास द्वारा (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) ॥ 22 ॥

(224) सूक्त 92

767. पान्तम् आ वो अन्धसः, इन्द्रम् अभि प्र गायत ।

मन्त्रार्थ :- पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से **इन्द्रम्** = इन्द्र को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **विश्वासाहम्** = विश्व को सहन करने में समर्थ **शतक्रतुम्** = सैकड़ों कर्म करने वाले को **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **विश्वासाहम्** = विश्व को सहन करने में समर्थ (विश्व - सभी, सह - सहन करना, समर्थ होना)। **शतक्रतुम्** = सैकड़ों कर्म करने वाले को (शत - सौ, कृ - करना)। **मंहिष्ठम्** = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा, को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना) ॥ 1 ॥

768. पुरुहूतम् पुरुष्टुतम्, गाथान्याम् सनश्रुतम्।

इन्द्र इति ब्रवीतन ॥ 2 ॥ 8-92-2

मन्त्रार्थ :- पुरुहूतम् = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को **पुरुष्टुतम्** = पूर्व स्तुति को, पूर्ण स्तुति को **गाथान्याम्** = गाथा योग्य **सनश्रुतम्** = सन-श्रुत को, सेवा, दान के लिए विख्यात्, सेव्य वाणी को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार **ब्रवीतन** = बोलो, कहो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- पुरुहूतम् = पुरुहूत को, अग्र-दत्त को, पहले दिया हुआ को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **पुरुष्टुतम्** = पूर्व स्तुति को, पूर्ण स्तुति को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुत् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **गाथान्याम्** = गाथा योग्य (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **सन-श्रुतम्** = सन-श्रुत को, सेवा, दान के लिए विख्यात्, सेव्य वाणी को (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। **ब्रवीतन** = बोलो, कहो (ब्रू - कहना, बोलना) ॥ 2 ॥

769. इन्द्र इत् नो महोनाम्, दाता वाजानाम् नृतुः।

महान् अभिज्ञ आ यमत् ॥ 3 ॥ 8-92-3

मन्त्रार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली **इत्** = ही **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **महोनाम्** = महान् का **दाता** = देने वाला **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का **नृतुः** = ले जाने वाला, नचाने वाला **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् **अभिज्ञ** = अभिज्ञान रखने वाला **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **यमत्** = यमन करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **महोनाम्** = महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि

- चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **दाता** = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **वाजानाम्** = वाजों का, विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **नृतुः** = ले जाने वाला, नचाने वाला (नृ- ले जाना, नृत - नाचना, नृत्य करना)। **महान्** = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अभिज्ञु** = अभिज्ञान रखने वाला (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), ज्ञा-जान - जानना, समझना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **यमत्** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना) ॥ 3 ॥

770. अपात् उ शिप्री अन्धसः, सुदक्षस्य प्रहोषिणः।

इन्द्रोः इन्द्रो यवाशिरः ॥ 4 ॥ 8-92-4

मन्त्रार्थ - **अपात्** = पदहीन, रक्षा की **उ** = निश्चय ही, भी **शिप्री** = शिप्र **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से **सुदक्षस्य** = सुदक्ष, सुसमृद्ध के लिए **प्रहोषिणः** = प्रहोषिण, अधिक आदान-प्रदान करना **इन्द्रोः** = इन्दु का **इन्द्रो** = इन्दु का **यवाशिरः** = यवाशिर ॥ 4 ॥

पदार्थ - **अपात्** = पदहीन, रक्षा की (पद् - चलना, भूषित होना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **शिप्री** = शिप्र (शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **सुदक्षस्य** = सुदक्ष, सुसमृद्ध के लिए (सु - सुन्दर, अच्छा, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **प्रहोषिणः** = प्रहोषिण, अधिक आदान-प्रदान करना (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **इन्द्रोः** = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रो** = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **यवाशिरः** = यवाशिर (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना) ॥ 4 ॥

771. यः विश्वा दयते वसु, होता मन्द्रो जनानाम्।

मधोः न पात्रा प्रथमानि, अस्मै प्र स्तोमा यन्तु अग्नये ॥ 6 ॥

8-92-6

मन्त्रार्थ - **यः** = जो **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **दयते** = देते हैं **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले **मन्द्रो** = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का **मधोः** = मधु का **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **पात्रा** = पात्र, पालन, रक्षा साधन **प्रथमानि** = प्रथम, विस्तार **अस्मै** = हमारे लिए **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **स्तोमा** = स्तोम **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें **अग्नये** = अग्नि के लिए ॥ 6 ॥

पदार्थ - **ये** = जो। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **दयते** = देते हैं (दय - दान करना, पालन करना, गति करना, हिंसा करना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **होता** = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **मन्द्रो** = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **जनानाम्** = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मधोः** = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पात्रा** = पात्र, पालन, रक्षा साधन (पत्

- ऐश्वर्य होना, निम्न गति होना, पा = पालन करना, बचाना, रक्षा करना)। **प्रथमानि** = प्रथम, विस्तार (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, विस्तार करना, फैलना, फैलाना)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **स्तोमा** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना, स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 6 ॥

772. त्यम् उ वः सत्रासाहम्, विश्वासु गीर्षु आयतम्।

आ च्यावयसि ऊतये ॥ 7 ॥ 8-92-7

मन्त्रार्थ - त्यम् = उस को उ = निश्चय ही, भी वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए **सत्रासाहम्** = सत्र में समर्थ को, विस्तार, सम्बन्ध बनाने में समर्थ **विश्वासु** = सब में वास करने वाले **गीर्षु** = वाणियों, बोध, सिञ्चन का **आयतम्** = आयत को **आ** - सम्यक्, समन्तात्, **च्यावयसि** = आदरणीय प्रगतिशील विद्वान् में ॥ 7 ॥

पदार्थ - त्यम् = उस को (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **सत्रासाहम्** = सत्र में समर्थ को, विस्तार, सम्बन्ध बनाने में समर्थ (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **विश्वासु** = सब में वास करने वाले (वस् = निवास करना, स्नेह करना)। **गीर्षु** = वाणियों, बोध, सिञ्चन का (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **आयतम्** = आयत को (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **आ** - सम्यक्, समन्तात्, **च्यावयसि** = आदरणीय प्रगतिशील विद्वान् में (अच् - चलना, जाना, आदर करना, मांगना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना) ॥ 7 ॥

773. युध्मम् सन्तम् अनर्वाणम्, सोमपाम् अनपच्युतम्।

नरम् अवार्यक्रतुम् ॥ 2 ॥ 8-92-8

मन्त्रार्थ :- युध्मम् = युद्ध को सन्तम् = सन्त को, सेवाभावी को, दानी को **अनर्वाणम्** = अहिंसक को **सोमपाम्** = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को **अनपच्युतम्** = व्यक्त न करने वाले को **नरम्** = नर को **अवार्यक्रतुम्** = अवार्य-कृत, रक्षा-कृत, पालन-कर्ता को ॥ 8 ॥

पदार्थ :- युध्मम् = युद्ध को (युध् - युद्ध करना, लड़ाई करना)। सन्तम् = सन्त को, सेवाभावी को, दानी को (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **अनर्वाणम्** = अहिंसक को (अन् - नहीं, अर्व - हिंसा करना)। **सोमपाम्** = सोमपालक को, सोमपान करने वाले को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अनपच्युतम्** = व्यक्त न करने वाले को (अन् - नहीं, पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **नरम्** = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **अवार्यक्रतुम्** = अवार्य-कृत, रक्षा-कृत, पालन-कर्ता को (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना, वृ-वर्-वरण करना, इच्छा करना, आशा करना, वृ - निवारण करना, हटाना, आच्छादन करना, ढकना, घेरना, कृ = करना) ॥ 8 ॥

774. शिक्षा णः इन्द्र रायः आ, पुरु विद्वान् ऋचीषम्।

अव आ नः पार्ये धने ॥ 9 ॥ 8-92-9

मन्त्रार्थ :- शिक्षा = शिक्षा णः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली रायः = गति, विद्या, वाणी आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम पुरु = पहले, आगे विद्वान् = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी ऋचीषम = हे प्रकाशमान, प्रशंसनीय, स्तुत्य अव = नीचे, दूर, प्राप्त आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पार्ये = पार के लिए, पूर्णता के लिए धने = धन ॥ 9 ॥

पदार्थ :- शिक्षा = शिक्षा (शिक्ष - शिक्षा देना)। णः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। रायः = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। पुरु = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। विद्वान् = विद्वान्, जानने वाला, ज्ञानी (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना)। ऋचीषम = हे प्रकाशमान, प्रशंसनीय, स्तुत्य (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। अव = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। पार्ये = पार के लिए, पूर्णता के लिए (पार - कार्य पूर्ण करना)। धने = धन (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 9 ॥

775. अतः चित् इन्द्र नः उपा, याहि शतवाजया ।

इषा सहस्रवाजया ॥ 10 ॥

8-92-10

मन्त्रार्थ - अतः = इसलिए चित् = भी, ही इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली नः = हमको, हमारे लिए, हमारा उप = समीप आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें शतवाजया = शतवाज के लिए, विद्या-गति के लिए इषा = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि सहस्रवाजया = सहस्रवाज, हजार विद्या, गति ॥ 10 ॥

पदार्थ - अतः = इसलिए (अव्यय)। चित् = भी, ही (अव्यय)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। उप = समीप (उपसर्ग)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। शतवाजया = शतवाज के लिए, विद्या-गति के लिए (शत = सौ, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना)। इषा = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। सहस्रवाजया = सहस्रवाज, हजार विद्या, गति (सहस्र = हजार, वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना) ॥ 10 ॥

767. मा नो हणीताम् अतिथिम्, वसुः अग्निः पुरुप्रशस्त एषः ।

यः सुहोता स्वध्वरः ॥ 12 ॥

8-92-12

मन्त्रार्थ - मा = नहीं, मत नो = हमको, हमारे लिए, हमारा हणीताम् = हणीत को अतिथिम् = सतत गतिशील, अतिथि को वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् पुरुप्रशस्त = पुरुप्रशस्त एषः = यह यः = जो सुहोता = सुन्दर दान स्वध्वरः = स्वध्वर, स्वयम् धारित ॥ 12 ॥

पदार्थ - मा = नहीं, मत (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। हणीताम् = हणीत को (ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। अतिथिम् = सतत गतिशील, अतिथि को (अत् = सतत गमन करना, निरन्तर चलना, जाना, सदैव जाते रहना)। वसुः = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। पुरुप्रशस्त = पुरुप्रशस्त (पुरु - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना,

मारना, हिंसा करना)। **एषः** = यह (सर्वनाम)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **सुहोता** = सुन्दर दान (सु - सुन्दर, अच्छा, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **स्वध्वरः** = स्वध्वर, स्वयम् धारित (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना) ॥ 12 ॥

768. यः ते नूनम् शतक्रतो, इन्द्र द्युम्नितमो मदः ।

तेन नूनम् मदे मदेः ॥ 16 ॥

8-92-16

मन्त्रार्थ - **यः** = जो **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **नूनम्** = निश्चय ही **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **द्युम्नितमो** = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक **मदः** = मद, आनन्द **तेन** = उससे, उसके द्वारा **नूनम्** = निश्चय ही **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में **मदेः** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में ॥ 16 ॥

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **द्युम्नितमो** = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **मदः** = मद, आनन्द (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **तेन** = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **मदे** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदेः** = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 16 ॥

769. इन्द्राय मद्धने सुतम्, परि षोभन्तु नो गिरः ।

अर्कम् अर्चन्तु कारवः ॥ 19 ॥

8-92-19

मन्त्रार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **मद्धने** = आनन्द में, हर्ष में, प्रसन्नता में **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **परि** = सभी तरफ **षोभन्तु** = स्तुति करें **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **अर्कम्** = अर्क को **अर्चन्तु** = अर्चना करें **कारवः** = करने वाला ॥ 19 ॥

पदार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्द्र-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मद्धने** = आनन्द में, हर्ष में, प्रसन्नता में (मद - हृष्ट होना, हर्षित होना, थकना, श्रान्त होना, मद - तृप्त करना, समाधान करना, मद - हृष्ट होना, हर्षित होना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **षोभन्तु** = स्तुति करें (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना। स्तुच - सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना, प्रकाशित होना, चमकना, तेजस्वी होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **अर्कम्** = अर्क को (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **अर्चन्तु** = अर्चना करें (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **कारवः** = करने वाला (कृ - करना) ॥ 19 ॥

770. यस्मिन् विश्वा अधि श्रियो, रणन्ति सप्त संसदः ।

इन्द्रम् सुते हवामहे ॥ 2 ॥

8-92-20

मन्त्रार्थ :- **यस्मिन्** = जिसमें **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **श्रियो** = श्री, शोभाओं को **रणन्ति** = रण, शब्द करते हैं **सप्त** = सात, पूर्ण, संलग्न **संसदः** = सम्यक् विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य **इन्द्रम्** = इन्द्र को **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 20 ॥

पदार्थ :- **यस्मिन्** = जिसमें (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **श्रियो** = श्री, शोभाओं को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय

होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **रणन्ति** = रण, शब्द करते हैं (रण - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। **सप्त** = सात, पूर्ण, संलग्न (सप - पूर्ण होना, पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **संसदः** = सम्यक् विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सुते** = ऐश्वर्यवान् में, उत्पन्न हुए में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 20 ॥

771. त्रिकद्रु केषु चेतनम्, देवासो यज्ञम् अत्नत ।

तम् इत् वर्धन्तु नो गिरः ॥ 21 ॥ 8-92-21

मन्त्रार्थ :- त्रिकद्रु = तीन भ्रम केषु = किनमें चेतनम् = चेतन, चुना गया, एकत्र को देवासो = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण यज्ञम् = यजन को अत्नत = विस्तार किया तम् = उसको, उसे इत् = ही वर्धन्तु = बढ़ें नो = हमको, हमारे लिए, हमारा गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ॥ 21 ॥

पदार्थ :- त्रिकद्रु = तीन भ्रम (त्रि = तीन (संख्या), कद्रु - वैकल्ये वैकल्ये वा। भ्रमित होना, घबरा जाना, व्याकुल होना)। **केषु** = किनमें (सर्वनाम)। **चेतनम्** = चेतन, चुना गया, एकत्र को (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **देवासो** = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **यज्ञम्** = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **अत्नत** = विस्तार किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **वर्धन्तु** = बढ़ें (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गिरः** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 21 ॥

772. आ त्वा विशन्तु इन्द्रवः, समुद्रम् इव सिन्धवः ।

न त्वाम् इन्द्र अति रिच्यते ॥ 22 ॥ 8-92-22

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा विशन्तु = प्रवेश करें इन्द्रवः = इन्दुगण समुद्रम् = समुद्र को इव = समान, की भाँति, के समान सिन्धवः = सिन्धु न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वाम् = तुमको, तुम्हारी इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली अति = बहुत, अत्यधिक रिच्यते = एकत्र करता है ॥ 22 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **विशन्तु** = प्रवेश करें (विश् - घुसना भीतर जाना, चारो ओर फैलाना)। **इन्द्रवः** = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **समुद्रम्** = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सिन्धवः** = सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **रिच्यते** = एकत्र करता है (रिच - एकत्र करना, जोड़ना, बांधना, अलग-अलग करना, फैलाना, रेचक दवा देना) ॥ 22 ॥

773. विव्यक्थ महिना वृषन्, भक्षम् सोमस्य जागृवे ।

यः इन्द्र जठरेषु ते ॥ 23 ॥ 8-92-23

मन्त्रार्थ :- विव्यक्थ = व्याप्त महिना = महि द्वारा, महानता द्वारा वृषन् = शक्तिशाली, पराक्रमी भक्षम् = भक्ष को

सोमस्य = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का **जागृवे** = हे जाग्रत, जागरूक **यः** = जो **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **जठरेषु** = धारणों में **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए ॥ 23 ॥

पदार्थ :- विव्यवथ = व्याप्त (वि - विशेष, व्यच - व्यापना, ठगना, फसाना, जाना)। **महिना** = महि द्वारा, महानता द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **भक्षम्** = भक्ष को (भक्ष - खाना, ग्रहण करना)। **सोमस्य** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **जागृवे** = हे जाग्रत, जागरूक (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जठरेषु** = धारणों में (जठ - धारण करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम) ॥ 23 ॥

774. अरम् ते इन्द्र कुक्षये, सोमो भवतु वृत्रहन्।

अरम् धामभ्यः इन्द्रवः ॥ 24 ॥

8-92-24

मन्त्रार्थ :- **अरम्** = पर्याप्त **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **कुक्षये** = पूर्ण करने वाले, भरने वाले के लिए **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **भवतु** = हो, हो जाये **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले **अरम्** = पर्याप्त **धामभ्यः** = धामों के लिए **इन्द्रवः** = इन्दुगण ॥ 24 ॥

पदार्थ :- **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **कुक्षये** = पूर्ण करने वाले, भरने वाले के लिए (कुक्ष = पूर्ण करना, भरना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **भवतु** = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय)। **धामभ्यः** = धामों के लिए (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **इन्द्रवः** = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 24 ॥

775. अरम् अश्वाय गायति, श्रुतकक्ष अरम् गवे।

अरम् इन्द्रस्य धाम्ने ॥ 25 ॥ 8-92-25

मन्त्रार्थ - **अरम्** = पर्याप्त **अश्वाय** = अश्व के लिए, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **गायति** = गाते हैं, गायन करने वाले **श्रुतकक्ष** = श्रुतकक्ष **अरम्** = पर्याप्त **गवे** = वाणी के लिए, गौ के लिए **अरम्** = पर्याप्त **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का **धाम्ने** = धाम में ॥ 25 ॥

पदार्थ - **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय)। **अश्वाय** = अश्व के लिए, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **गायति** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **श्रुतकक्ष** = श्रुतकक्ष (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, कक्ष - धारण करना, घर्षण करना)। **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय)। **गवे** = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अरम्** = पर्याप्त (अव्यय)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **धाम्ने** = धाम में (धा - धारण करना, पोषण करना,

776. एव आ हि असि वीरयुः, एव आ शूर उत स्थिरः ।

एव आ ते राध्यम् मनः ॥ 28 ॥ 8-92-28

मन्त्रार्थ - एव = ही आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण हि = ही, निश्चय असि = हो वीरयुः = वीरता युक्त एव = ही आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण शूर = वीर, पराक्रमी उत = ही स्थिरः = स्थिर एव = ही आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए राध्यम् = राध्य को, सिद्ध करने वाले को, सिद्धयुक्त को, पूर्णयुक्त को मनः = मन ॥

पदार्थ - एव = ही (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। असि = हो (अस् - होना)। वीरयुः = वीरता युक्त (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। एव = ही (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। शूर = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। उत = ही (अव्यय)। स्थिरः = स्थिर (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। एव = ही (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। राध्यम् = राध्य को, सिद्ध करने वाले को, सिद्धयुक्त को, पूर्णयुक्त को (रथ - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। मनः = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 28

777. एवा रातिः तुवीमघ, विश्वेभिः धायि धातृभिः ।

अधा चित् इन्द्र मे सचा ॥ 29 ॥ 8-92-29

मन्त्रार्थ :- एवा = ही रातिः = अनुदान तुवीमघ, = हे बहुत धन वाले, हे महाधनी विश्वेभिः = सबके द्वारा धायि = धारण किया गया है धातृभिः = धारण करने वालों द्वारा, धाताओं द्वारा अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर चित् = भी, ही। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली मे = हमको, हमारे लिए, हमारा सचा = समझदार, जानकार, सहगामी ॥ 29 ॥

पदार्थ :- एवा = ही (अव्यय)। रातिः = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। तुवीमघ, = हे बहुत धन वाले, हे महाधनी (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। विश्वेभिः = सबके द्वारा (सर्वनाम)। धायि = धारण किया गया है (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। धातृभिः = धारण करने वालों द्वारा, धाताओं द्वारा (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। चित् = भी, ही। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। मे = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सचा = समझदार, जानकार, सहगामी। (सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना, सम्बन्धी होना, संसर्गी होना) ॥ 29 ॥

778. मा उ षु ब्रह्मा इव तन्द्रयुः, भुवो वाजानाम् पते ।

मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥ 30 ॥ 8-92-30

मन्त्रार्थ :- मा = नहीं, मत उ = निश्चय ही, भी षु = उत्तम, अच्छा ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् इव = ही तन्द्रयुः = तन्द्रा युक्त, आलस्य युक्त भुवो = भुवः वाजानाम् = वाजों का, विद्या का, गति का पते = पति मत्स्वा = हर्षित हो, तृप्त हो, तृप्त करो, हर्षित करो सुतस्य = सुत का गोमतः = गायुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले ॥ 30 ॥

पदार्थ :- मा = नहीं, मत (अव्यय)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। षु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इव = ही (अव्यय)। तन्द्रयुः = तन्द्रा युक्त, आलस्य युक्त (तन्द्र - आलस्य होना, तन्द्रा होना, अत - चलना, निरन्तर चलना, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना, द्रा - भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना)। भुवो = भुवः (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। वाजानाम् = वाजों का,

विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **मत्स्वा** = हर्षित हो, तृप्त हो, तृप्त करो, हर्षित करो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सुतस्य** = सुत का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **गोमतः** = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ 30 ॥

779. मा नः इन्द्र अभि आ दिशः, सूरौ अक्नुषु आ यमत्।

त्वा युजा वनेम तत् ॥ 31 ॥

8-92-31

मन्त्रार्थ - मा = नहीं, मत नः = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दिशः** = दिशायें, दिशाओं को **सूरौ** = सूर्य **अक्नुषु** = अक्तुओं, कुटिलता, गति में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **यमत्** = यमन करता है **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **युजा** = युक्त कीजिये **वनेम** = बोलें, सेवा करें **तत्** = वह, उस को ॥ 31 ॥

पदार्थ - मा = नहीं, मत (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दिशः** = दिशायें, दिशाओं को (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। **सूरौ** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अक्नुषु** = अक्तुओं, कुटिलता, गति में (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **यमत्** = यमन करता है (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **युजा** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वनेम** = बोलें, सेवा करें (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम) ॥ 31 ॥

(225) सूक्त 93

780. उत् घ इत् अभि श्रुतामघम्, वृषभम् नर्यापसम्।

अस्तारम् एषि सूर्य ॥ 1 ॥

8-93-1

मन्त्रार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **घ** = ही, भी **इत्** = ही **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **श्रुतामघम्** = श्रुतामघ को **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को **नर्यापसम्** = नरो के पालक को **अस्तारम्** = प्रकाशमान को **एषि** = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो **सूर्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला ॥

पदार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **घ** = ही, भी (अव्यय, निपात)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **श्रुतामघम्** = श्रुतामघ को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, अध - पाप करना, अपराध करना, मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **नर्यापसम्** = नरो के पालक को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना, अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **अस्तारम्** = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **एषि** = प्रयत्न

करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। **सूर्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 1 ॥

781. नव यो नवतिम् पुरो, बिभेद बाह्वोजसा ।

अहिम् च वृत्रहा अवधीत् ॥ 2 ॥ 8-93-2

मन्त्रार्थ :- नव = नौ यो = जो नवतिम् = नब्बे को, स्तुतियों को पुरो = पहले बिभेद = भेदन किया बाह्वोजसा = बाहु-ओज द्वारा, प्रयास के ओज द्वारा अहिम् = व्यापक च = और वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले अवधीत् = वध किया, मार दिया, नष्ट कर दिया ॥ 2 ॥

पदार्थ :- नव = नौ (संख्या)। यो = जो (सर्वनाम)। नवतिम् = नब्बे को, स्तुतियों को (संख्या, नु-नव - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। पुरो = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। बिभेद = भेदन किया (भिद् - भाग करना, हिस्सा करना, चीरना, तोड़ना)। बाह्वोजसा = बाहु-ओज द्वारा, प्रयास के ओज द्वारा (बाह - प्रयास करना, बह - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना, ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। अहिम् = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। च = और (अव्यय)। वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। अवधीत् = वध किया, मार दिया, नष्ट कर दिया (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, धी - धारण करना, आधार होना, उपेक्षा करना, अनादर करना, वध-हन् - हिंसा करना) ॥ 2 ॥

782. स नः इन्द्रः शिवः सखा, अश्वावत् गोमत् यवमत् ।

उरुधारा इव दोहते ॥ 3 ॥ 8-93-3

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली शिवः = कल्याणकारी सखा = मित्र अश्वावत् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त यवमत् = संयुक्त उरुधारा = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति इव = समान, की भाँति, के समान दोहते = दोहन करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। शिवः = कल्याणकारी (शिव् = कल्याण करना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। अश्वावत् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। यवमत् = संयुक्त (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। उरुधारा = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। दोहते = दोहन करता है (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना) ॥ 3 ॥

783. तम् इन्द्रम् वाजयामसि, महे वृत्राय हन्तवे ।

स वृषा वृषभो भुवत् ॥ 7 ॥ 8-93-7

मन्त्रार्थ - तम् = उसको, उसे इन्द्रम् = इन्द्र को वाजयामसि = गतिमान, बलवान् महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् वृत्राय = वृत्र, हिंसा के लिए हन्तवे = मारने के लिए स = सहित, साथ वृषा = पराक्रमी वृषभो = पराक्रमी भुवत् = होता हैं ॥ 7 ॥

पदार्थ - तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वाजयामसि = गतिमान,

बलवान (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वृत्राय** = वृत्र, हिंसा के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हन्तवे** = मारने के लिए (हन् - मारना)। **स** = सहित, साथ (उपसर्ग)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृषभो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 7 ॥

784. इन्द्रः स दामने कृतः, ओजिष्ठः स मदे हितः ।

द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः ॥ 8 ॥ 8-93-8

मन्त्रार्थ :- इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली **स** = वह, उसने **दामने** = दान, दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय के लिए **कृतः** = किया **ओजिष्ठः** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् **स** = वह, उसने **मदे** = बल में **हितः** = हित, गति, वृद्धि **द्युम्नी** = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक **श्लोकी** = श्लोक वाला **स** = वह, उसने **सोम्यः** = सौम्य ॥ 8 ॥

पदार्थ :- इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **दामने** = दान, दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय के लिए (दम् - शान्त करना, दमन करना, दया करना, शमन करना, सन्धि करना, जीतना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **कृतः** = किया (कृ = करना)। **ओजिष्ठः** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **मदे** = बल में (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **हितः** = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **द्युम्नी** = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **श्लोकी** = श्लोक वाला (श्लोक = साथ जाना, श्लोक बनाना, कविता करना, रचना करना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **सोम्यः** = सौम्य (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 8 ॥

785. गिरा वज्रो न सम्भृतः, सबलो अनपच्युतः ।

ववक्षे उग्रो अस्तुतः ॥ 9 ॥ 8-93-9

मन्त्रार्थ :- गिरा = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **वज्रो** = वज्र, गतिमान **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सम्भृतः** = सम्यक् भरण-पोषण किये हुए **सबलो** = सबल **अनपच्युतः** = व्यक्त न करने वाले **ववक्षे** = वक्ष करना चाहता है, पालन करना चाहता है **उग्रो** = उग्र **अस्तुतः** = अनाच्छादित, अपूर्ण ॥ 9 ॥

पदार्थ :- गिरा = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **वज्रो** = वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सम्भृतः** = सम्यक् भरण-पोषण किये हुए (सम् - सम्यक्, भृ - भरण-पोषण करना)। **सबलो** = सबल (स - सहित, साथ, बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **अनपच्युतः** = व्यक्त न करने वाले (अन् - नहीं, पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)।

ववक्षे = वक्ष करना चाहता है, पालन करना चाहता है (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **उग्रो** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **अस्तृतः** = अनाच्छादित, अपूर्ण (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तृ - पूर्ण करना, आच्छादित करना, ढकना, फैलाना) ॥ 9 ॥

786. त्वम् एतत् आधारयः, कृष्णासु रोहिणीषु च।

परुष्णीषु रुशत् पयः ॥ 13 ॥ 8-93-13

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम एतत् = यह आधारयः = धारण किया कृष्णासु = कृष्ण रोहिणीषु रोहिणियों में, आरोहिणियों में, च = और। **परुष्णीषु** = परुष्णियों में **रुशत्** = प्रकाशमान **पयः** = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण ॥ 13 ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **एतत्** = यह (सर्वनाम)। **आधारयः** = धारण किया (अधः = नीचे, अव्यय, धृ - धारण करना)। **कृष्णासु** = कृष्ण (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **रोहिणीषु** रोहिणियों में, आरोहिणियों में (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **च** = और। **परुष्णीषु** = परुष्णियों में (पा = रक्षा करना, पालन करना, पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **रुशत्** = प्रकाशमान (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। **पयः** = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण (पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥ 13 ॥

787. श्रुतम् वो वृत्रहन्तमम्, प्र शर्धम् चर्षणीनाम्।

आशिषे राधसे महे ॥ 16 ॥ 8-93-16

मन्त्रार्थ - श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **वृत्रहन्तमम्** = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **शर्धम्** = विजय, शर्द्ध, बल को **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **आशिषे** = विशेषताएं, आशीष के लिए **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् ॥ 16 ॥

पदार्थ - श्रुतम् = श्रुत को, सुने हुए को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **वृत्रहन्तमम्** = हिंसा का अत्यन्त हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **शर्धम्** = विजय, शर्द्ध, बल को (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **आशिषे** = विशेषताएं, आशीष के लिए (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना, शिष् = शेष रहना, अधिक होना, विशेषता होना)। **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 5 ॥

788. अया धिया च गव्यया, पुरुणामन् पुरुष्टुत।

यत् सोमे सोम आभवः ॥ 17 ॥ 8-93-17

मन्त्रार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **च** = और **गव्यया** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय **पुरुणामन्** = पुरुणाम वाले **पुरुष्टुत** = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति **यत्** = जिसे, जो **सोमे** = सोम के लिए **सोमे** = सोम के लिए **आभवः** = हो गया ॥ 17 ॥

पदार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना,

युक्त होना)॥ च = और। गव्यया = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। पुरुणामन् = पुरुणाम वाले (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, नाम - नाम होना, नाम रखना, नम् = नमन करना, सम्मान करना, शब्द करना)। पुरुषुतु = पूर्व स्तुति, पूर्ण स्तुति (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्तुत् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। सोमे = सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। सोमे = सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। अभवः = हो गया (आ - समन्तात्, पूर्णतः, भू - होना)॥ 17 ॥

789. बोधन्मना इत् अस्तु, नो वृत्रहा भूर्यासुतिः।

शृणोतु शक्रः आशिषम्॥ 18 ॥ 8-93-18

मन्त्रार्थ - बोधन्मना = बोध का इत् = ही अस्तु = हो नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो वृत्रहा = वृत्र का हनन करने वाले भूर्यासुतिः = बहुत ऐश्वर्यवान् शृणोतु = सुनें शक्रः = शक्तिवान्, समर्थ आशिषम् = विशेषताएं, आशीष को॥ 18 ॥

पदार्थ - बोधन्मना = बोध का (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। इत् = ही (अव्यय)। अस्तु = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। भूर्यासुतिः = बहुत ऐश्वर्यवान् (भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। शृणोतु = सुनें। (शृ-शृण् = सुनना)। शक्रः = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। आशिषम् = विशेषताएं, आशीष को (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना, शिष् = शेष रहना, अधिक होना, विशेषता होना)॥ 18 ॥

790. कया त्वम् नः ऊत्या, अभि प्र मन्दसे वृषन्।

कया स्तोतृभ्य आ भर॥ 19 ॥

8-93-19

मन्त्रार्थ :- त्वम् तुम वृषन् शक्तिशाली कया किस ऊत्या वाणी, रक्षण, विश्वास से नः हमारे लिए मन्दसे आनन्दित होते हो, कया किस स्तोतृभ्यः स्तुति से आ भर पूर्ण करते हो॥ 19 ॥

भावार्थ :- हम परमात्मा को विश्वास और वाणी से ही प्रसन्न कर सकते हैं। हमारे पास जो कुछ भी है, परमात्मा का ही दिया हुआ है, अतः किसी वस्तु से तो प्रसन्न करने की बात सोचना भी उचित नहीं है।

पदार्थ :- कया = किसके द्वारा। त्वम् = तुम। नः = हमारा, हमारे लिए। ऊत्या = वाणी द्वारा (ऊ - शब्द करना, ध्वनि करना)। अभि = सभी ओर। प्र = अधिक। मन्दसे = आनन्दित होते हो (मन्द - स्तुति करना, तुष्ट करना, आनन्द करना, उन्मत्त होना)। वृषन् = शक्तिशाली (वृष - अमानवी पराक्रम विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना)। स्तोतृभ्यः = स्तुति से (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। आ = उपसर्ग। भर = पूर्ण होते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना)॥ 19 ॥ यजुर्वेद 36.7

791. इष्टा होत्रा असृक्षत, इन्द्रम् वृधासो अध्वरे।

अच्छ अवभृथम् ओजसा॥ 23 ॥

8-93-23

मन्त्रार्थ - इष्टा = विद्या, ज्ञान, इच्छा होत्रा = दानी, दानकर्ता असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया इन्द्रम्

= इन्द्र को वृधासो = वृद्धि अध्वरे = अहिंसक में अच्छ = अच्छा, निर्मल करो अवभृथम् = अवभरण को ओजसा = ओज द्वारा ॥ 23 ॥

पदार्थ - इष्टा = विद्या, ज्ञान, इच्छा (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **होत्रा** = दानी, दानकर्ता (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वृधासो** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **अध्वरे** = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। **अवभृथम्** = अवभरण को (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, भृ - भरण करने वाले)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) ॥ 23 ॥

792. तुभ्यम् सोमाः सुता इमे, स्तीर्णम् बर्हिः विभावसो ।

स्तोतृभ्य इन्द्रमा मृडय ॥ 25 ॥

8-93-25

मन्त्रार्थ - तुभ्यम् = तुम्हारे लिए **सोमाः** = ऐश्वर्यमय **सुता** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **इमे** = यह, इस, ये **स्तीर्णम्** = स्तीर्ण को, आच्छादन को **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् **विभावसो** = विशेष प्रकाशित होता है, वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का **स्तोतृभ्य** = स्तुति के लिए। **इन्द्रमा** = परम ऐश्वर्यशाली **मृडय** = सुखी करो ॥

पदार्थ - तुभ्यम् = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सोमाः** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुता** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **स्तीर्णम्** = स्तीर्ण को, आच्छादन को (स्तृ = आच्छादित करना, विस्तार करना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **विभावसो** = विशेष प्रकाशित होता है, वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्तोतृभ्य** = स्तुति के लिए। (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **इन्द्रमा** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मृडय** = सुखी करो (मृड - सुखी होना, सुख देना) ॥ 25 ॥

793. भद्रम् भद्रम् नः आ भर, इषम् ऊर्जम् शतक्रतो ।

यत् इन्द्र मृडयासि नः ॥ 28 ॥

8-93-28

मन्त्रार्थ - भद्रम् = कल्याणकारी **भद्रम्** = कल्याणकारी **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **ऊर्जम्** = ऊर्जा को **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला **यत्** = जिसे, जो **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **मृडयासि** = सुखी करता है **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 28 ॥

पदार्थ - भद्रम् = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **भद्रम्** = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **ऊर्जम्** = ऊर्जा को (ऊर्ज = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान् होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)।

इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। मृडयासि = सुखी करता है (मृड - सुखी होना, सुख देना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 28 ॥

794. उप नो हरिभिः सुतम्, याहि मदानाम् पते ।

उप नो हरिभिः सुतम् ॥ 31 ॥

8-93-31

मन्त्रार्थ - उप = समीप नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें मदानाम् = मदों का, तृप्तियों का पते = पति उप = समीप नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को ॥

पदार्थ - उप = समीप (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। मदानाम् = मदों का, तृप्तियों का (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, समाधान करना)। पते = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। उप = समीप (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 31 ॥

795. द्विता यो वृत्रहन्तमो, विदे इन्द्रः शतक्रतुः ।

उप नो हरिभिः सुतम् ॥ 32 ॥

8-93-32

मन्त्रार्थ :- द्विता = द्वित यो = जो वृत्रहन्तमो = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले विदे = विद्वान् इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली शतक्रतुः = सैकड़ों कर्म करने वाला उप = समीप नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को ॥ 32 ॥

पदार्थ :- द्विता = द्वित (द्वि = दो, संख्या)। यो = जो (सर्वनाम)। वृत्रहन्तमो = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। विदे = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। शतक्रतुः = सैकड़ों कर्म करने वाला (शत - सौ, कृ - करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 32 ॥

796. त्वम् हि वृत्रहन् एषाम्, पाता सोमानाम् असि ।

उप नो हरिभिः सुतम् ॥ 33 ॥

8-93-33

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले एषाम् = इनका, प्रयत्न करने वाले, समीप जाने वाले, आने वाले, चाहने वाले को पाता = पालन करने वाला सोमानाम् = ऐश्वर्यमय, सोम का असि = हो उप = समीप नो = हमको, हमारे लिए, हमारा हरिभिः = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को ॥ 33 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। एषाम् = इनका, प्रयत्न करने वाले, समीप जाने वाले, आने वाले, चाहने वाले को (एषाम् = इनका (सर्वनाम), आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। पाता

= पालन करने वाला (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **सोमानाम्** = ऐश्वर्यमय, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **हरिभिः** = हरियों द्वारा, हरि-गण द्वारा (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 33 ॥

797. इन्द्र इषे ददातु न, ऋभुक्षणम् ऋभुम् रयिम्।

वाजी ददातु वाजिनम् ॥ 34 ॥

8-93-34

मन्त्रार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए **ददातु** = प्रदान करें **न** = हमको, हमारे लिए, हमारा **ऋभुक्षणम्** = मारना **ऋभुम्** = ऋभु, प्रगतिशील, विद्वान् **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **ददातु** = प्रदान करें **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को ॥ 34 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **ददातु** = प्रदान करें (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **न** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऋभुक्षणम्** = मारना (ऋभुक्ष - घात करना, मारना)। **ऋभुम्** = ऋभु, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, भा - प्रकाश होना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **ददातु** = प्रदान करें (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) ॥ 34 ॥

798. यत् अद्य कच्च वृत्रहन्, उदगा अभि सूर्य

सर्वम् तत् इन्द्र ते वशे ॥ 42 ॥

8-93-42

मन्त्रार्थ - **यत्** = जिसे, जो **अद्य** = आज **कच्च** = कुछ भी **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले **उदगा** = उत्क्रष्ट अग्रणी **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सूर्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **सर्वम्** = सब कुछ **तत्** = वह, उस को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **वशे** = वश में ॥ 42 ॥

पदार्थ - **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **कच्च** = कुछ भी (अव्यय)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **उदगा** = उत्क्रष्ट अग्रणी (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सूर्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **सर्वम्** = सब कुछ (सर्वनाम)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **वशे** = वश में (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना) ॥ 42 ॥

799. गौः धयति मरुताम्, श्रवस्युः माता मघोनाम्।

युक्ता वह्नी स्थानाम् ॥ 1 ॥ 8-94-1

मन्त्रार्थ - गौः = शाब्दिक, मननशील, उपदेशक धयति = धारण, पोषण, रक्षण करते हैं मरुताम् = मरुतों का, मरणशीलों का श्रवस्युः = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील माता = माता मघोनाम् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को युक्ता = युक्त, मिश्रित वह्नी = वहन करने वाले स्थानाम् = रथों का ॥ 1 ॥

पदार्थ - गौः = शाब्दिक, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। धयति = धारण, पोषण, रक्षण करते हैं (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। मरुताम् = मरुतों का, मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। श्रवस्युः = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। माता = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। मघोनाम् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। युक्ता = युक्त, मिश्रित (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वह्नी = वहन करने वाले (वह् = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। स्थानाम् = रथों का (स्थ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना) ॥ 1 ॥

800. अस्ति सोमो अयम् सुतः, पिबन्ति अस्य मरुतः।

उत स्वराजो अश्विना ॥ 4 ॥ 8-94-4

मन्त्रार्थ - अस्ति = है सोमो = ऐश्वर्यमय अयम् = यह सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए पिबन्ति = पीता है, पान करते हैं अस्य = इसका मरुतः = मरणशील, मरुतों का उत = ही स्वराजो = स्वयं प्रकाशमान अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक ॥ 4 ॥

पदार्थ - अस्ति = है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। सोमो = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। अयम् = यह (सर्वनाम)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पिबन्ति = पीता है, पान करते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। मरुतः = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। उत = ही (अव्यय)। स्वराजो = स्वयं प्रकाशमान (स्व - स्वयम्, अपना, राज् = चमकना, प्रकाशित शोभित होना)। अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना) ॥ 4 ॥

801. पिबन्ति मित्रो अर्यमा, तना पूतस्य वरुणः।

त्रिषधस्थस्य जावतः ॥ 5 ॥ 8-94-5

मन्त्रार्थ :- पिबन्ति = पीते हैं मित्रो = मित्र अर्यमा = अर्यमा, ज्ञानी तना = विस्तार करो पूतस्य = पवित्रता युक्त, रक्षित का वरुणः = वरुण त्रिषधस्थस्य = तीन सहस्थान, त्रिषधस्थ का जावतः = वेगवान् को, प्रगतिशील ॥ 5 ॥

पदार्थ :- पिबन्ति = पीते हैं (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। अर्यमा = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। तना = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। पूतस्य = पवित्रता युक्त, रक्षित का (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। वरुणः = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना,

प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **त्रिषधस्थस्य** = तीन सहस्थान, त्रिसधस्थ का (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, सध - साथ (अव्यय), स्था- स्थित होना, ठहरना)। **जावतः** = वेगवान् को, प्रगतिशील (जु - जाना, वेग से जाना, दौड़ना, जल्दी जाना, भागना) ॥ 5 ॥

802. उत उ नु अस्य जोषम् आ, इन्द्रः सुतस्य गोमतः ।

प्रातः होता इव मत्सति ॥ 6 ॥ 8-94-6

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर उ = निश्चय ही, भी नु = ही, भी अस्य = इसका जोषम् = विचारशील, सेवाभावी को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का गोमतः = गोकुल का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले प्रातः = प्रातः होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले इव = समान, की भाँति, के समान मत्सति = आनन्दित होता है, हर्षित, तृप्त, विचारशील होता है, कामना करता है, स्तुति करता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। नु = ही, भी (निपात, अव्यय)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। जोषम् = विचारशील, सेवाभावी को (जुष् = विचार करना, सेवा करना, विवेक-प्रीति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। गोमतः = गोकुल का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। प्रातः = प्रातः (अव्यय)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। मत्सति = आनन्दित होता है, हर्षित, तृप्त, विचारशील होता है, कामना करता है, स्तुति करता है (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, स्तुति करना, कामना करना) ॥ 6 ॥

(227) सूक्त 95

803. आ त्वा गिरो रथीः इव, अस्थुः सुतेषु गिर्वणः ।

अभि त्वा सम् अनूषत, गावो वत्सम् न धेनवः ॥ 1 ॥

8-95-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन रथीः = रथी, रथवाला इव = समान, की भाँति, के समान अस्थुः = अस्थि, अस्तित्व का आधार सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में गिर्वणः = हे वाणी, बोध, सिञ्चन अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति अनूषत = अनुताप, स्तुति किया गावो = शब्द, वाणी, वचन वत्सम् = बोलने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। गिरो = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। रथीः = रथी, रथवाला (रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। अस्थुः = अस्थि, अस्तित्व का आधार (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना)। सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। गिर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। अनूषत = अनुताप, स्तुति किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना,

जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। वत्सम् = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना) ॥ 1 ॥

804. श्रुधी हवम् तिरश्च्या, इन्द्र यः त्वा सपर्यति।

सुवीर्यस्य गोमतो, रायः पूर्धि महान् असि ॥ 4 ॥ 8-95-4

मन्त्रार्थ - श्रुधी = सुनता है हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य तिरश्च्या = तिरछा, तिर्यक् इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली यः = जो त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा सपर्यति = सेवा, आराधना करता है सुवीर्यस्य = उत्तम वीरता का गोमतो = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले रायः = गति, विद्या, वाणी पूर्धि = पूर्ण करो महान् = बड़े, पूज्य, महान् असि = हो ॥ 4 ॥

पदार्थ :- श्रुधी = सुनता है (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। हवम् = दान को, आह्वान को, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। तिरश्च्या = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। यः = जो (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। सपर्यति = सेवा, आराधना करता है (सपर - पूजा करना, सेवा करना)। सुवीर्यस्य = उत्तम वीरता का (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। गोमतो = गोयुक्त का, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। रायः = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। पूर्धि = पूर्ण करो (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 4 ॥

805. इन्द्र यः ते नवीयसीम्, गिरम् मन्द्राम् अजीजनत्।

चिकित्तिन्मनसम् धियम्, प्रत्नाम् ऋतस्य पिप्युषीम् ॥ 5 ॥

8-95-5

मन्त्रार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नवीयसीम् = उत्तम स्तुति को गिरम् = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन को मन्द्राम् = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ चिकित्तिन्मनसम् = विद्वानों के मन को धियम् = धारणा शक्ति, बुद्धि को प्रत्नाम् = प्रसिद्ध करने वाले को ऋतस्य = ऋत का पिप्युषीम् = वृद्धि को, बढ़ने को ॥ 5 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। नवीयसीम् = उत्तम स्तुति को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। गिरम् = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन को (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। मन्द्राम् = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को (मन्द्र - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। चिकित्तिन्मनसम् = विद्वानों के मन को (चिकित् - जानना, मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। धियम् = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। प्रत्नाम् = प्रसिद्ध करने वाले को (प्रथ् = प्रसिद्ध होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। पिप्युषीम् = वृद्धि को, बढ़ने को (प्याय-प्यायी-प्यै - बढ़ना, बढ़ा होना, फूलना, प्याय-प्यै - भूख लगना, प्यास लगना) ॥ 5 ॥

806. एत उ नु इन्द्रम् स्तवाम्, शुद्धम् शुद्धेन साम्ना।

शुद्धैः उक्थैः वावृध्वासम्, शुद्धैः आशीर्वान् ममत्तु ॥ 7 ॥ 8-95-7

मन्त्रार्थ - एत = प्राप्त हो, आएँ उ = निश्चय ही, भी नु = निश्चय ही, शीघ्र ही इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को

स्तवाम = स्तुति करो शुद्धम् = शुद्ध, पवित्र को शुद्धेन = शुद्ध, पवित्र साम्ना = साम द्वारा शुद्धैः = शुद्ध, पवित्र उक्थैः = कहते हैं, एकत्र होते हैं वावृधांसम् = वृद्धि करने वाले को शुद्धैः = शुद्ध, पवित्र आशीर्वान् = विशेषताएं, आशीष देने वाले ममत्तु = आनन्द दे, हर्षित हों ॥ 7 ॥

पदार्थ - एत = प्राप्त हो, आएँ (इ = जाना, पाना)। **उ** = निश्चय ही, भी। **नु** = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तवाम** = स्तुति करो (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **शुद्धम्** = शुद्ध, पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शुद्धेन** = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **साम्ना** = साम द्वारा (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। **शुद्धैः** = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **उक्थैः** = कहते हैं, एकत्र होते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **वावृधांसम्**, = वृद्धि करने वाले को (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **शुद्धैः** = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **आशीर्वान्** = विशेषताएं, आशीष देने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना, शिष् = शेष रहना, अधिक होना, विशेषता होना)। **ममत्तु** = आनन्द दे, हर्षित हों (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 7 ॥

807. तम् उ ष्टवाम यम् गिरः, इन्द्रम् उक्थ्यानि वावृधुः ।

पुरुणि अस्य पौस्या, सिषासन्तो वनामहे ॥ 6 ॥ 8-95-6

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे उ = निश्चय ही, भी ष्टवाम = स्तुति करते हैं यम् = जिसे, जिसको, जहाँ गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन इन्द्रम् = इन्द्र को उक्थ्यानि = कथनीय को वावृधुः = वृद्धि करते हुए पुरुणि = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी अस्य = इसका पौस्या = बढ़ाने वालों को सिषासन्तो = शुद्ध वनामहे = शब्द करते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। ष्टवाम = स्तुति करते हैं (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। उक्थ्यानि = कथनीय को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। वावृधुः = वृद्धि करते हुए (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। पुरुणि = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। पौस्या = बढ़ाने वालों को (पुंस् - बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। सिषासन्तो = शुद्ध (सस् - शुद्ध करना, सि - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। वनामहे = शब्द करते हैं (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना) ॥ 6 ॥

808. इन्द्र शुद्धो न आ गहि, शुद्धः शुद्धाभिः ऊतिभिः ।

शुद्धो रयिम् नि धारय, शुद्धो ममद्धि सोम्य ॥ 8 ॥ 8-95-8

मन्त्रार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली शुद्धो = शुद्ध, पवित्र न = नहीं, समान, उपमार्थक आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम गहि = गति, ज्ञान, घना करें शुद्धः = शुद्ध, पवित्र शुद्धाभिः = शुद्ध, पवित्र द्वारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा शुद्धो = शुद्ध, पवित्र रयिम् = विद्या, ज्ञान को नि = निश्चित, निरन्तर धारय = धारण करो शुद्धो = शुद्ध, पवित्र ममद्धि = आनन्दित हों, हर्षित हों सोम्य = सौम्य ॥ 8 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। शुद्धो = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। गहि = गति, ज्ञान, घना करें (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। शुद्धः = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। शुद्धाभिः = शुद्ध, पवित्र द्वारा (शुच्-शुक्-

शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **शुद्धो** = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **धारय** = धारण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **शुद्धो** = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **ममद्धि** = आनन्दित हों, हर्षित हों (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोम्य** = सौम्य (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 2 ॥

809. इन्द्र शुद्धो हि नो रयिम्, शुद्धो रत्नानि दाशुषे।

शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे, शुद्धो वाजम् सिषाससि ॥ 9 ॥ 8-95-9

मन्त्रार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली शुद्धो = शुद्ध, पवित्र हि = ही, निश्चय नो = हमको, हमारे लिए, हमारा रयिम् = विद्या, ज्ञान को शुद्धो = शुद्ध, पवित्र रत्नानि = मूल्यवान्, रत्न दाशुषे = दानी के लिए शुद्धो = शुद्ध, पवित्र वृत्राणि = वृत्रों को, आच्छादनों को जिघ्नसे = हिंसा करता है शुद्धो = शुद्ध, पवित्र वाजम् = विद्या को, गति को सिषाससि = शुद्ध करते हो ॥ 9 ॥

पदार्थ :- इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। शुद्धो = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। शुद्धो = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। रत्नानि = मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। दाशुषे = दानी के लिए (दश् - देना)। शुद्धो = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। वृत्राणि = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। जिघ्नसे = हिंसा करता है (हन्-घ्न-जिघ् - हिंसा करना)। शुद्धो = शुद्ध, पवित्र (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सिषाससि = शुद्ध करते हो (सस् - शुद्ध करना) ॥ 9 ॥

(228) सूक्त 96

810. वृत्रस्य त्वा श्वसथात् ईषमाणा, विश्वे देवा अजहुः ये सखायः।

मरुद्भिः इन्द्र सख्यम् ते अस्तु, अथ इमा विश्वाः पृतना जयासि ॥ 7 ॥ 8-96-7

मन्त्रार्थ - वृत्रस्य = प्रकाश, वाणी के त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा श्वसथात् = श्वास से ईषमाण = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला विश्वे = सभी देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने अजहुः = परित्याग ये = जो सखायः = मित्र मरुद्भिः = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली सख्यम् = सखाभाव, मित्रता ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अस्तु = हो अथ = अब, इसके अनन्तर इमा = यह, इसको विश्वाः = विश्व, सभी, सब पृतना = व्यापक, बल वाले जयासि = ज्या, वृद्ध, जयी, जीतते हो ॥ 7 ॥

पदार्थ - वृत्रस्य = प्रकाश, वाणी के (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। श्वसथात् = श्वास से (श्वस - श्वास लेना, श्वासोच्छ्वास करना, जीना, जीते रहना)। ईषमाण = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईष = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अजहुः = परित्याग (जहा - हा -

छोड़ना, परित्याग करना, जाना, चलना)। **ये** = जो। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **मरुद्भिः** = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **अथ** = अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **इमा** = यह, इसको (सर्वनाम)। **विश्वाः** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **पृतना** = व्यापक, बल वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **जयासि** = ज्या, वृद्ध, जयी, जीतते हो (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना) ॥

८११. अव द्रप्सो अंशुमतीम् अतिष्ठत्, ईयानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः ।

आवत् तम् इन्द्रः शच्या धमन्तम्, अप स्नीहितम् नृमणाः अध द्राः ॥ १३ ॥ ८-९६-१३

मन्त्रार्थ - अव = नीचे, दूर, प्राप्त द्रप्सो = हर्ष, आनन्द, गर्व अंशुमतीम् = अंशुमती को अतिष्ठत् = ठहरा, स्थित है ईयानः = प्राप्त करता हुआ, जानता हुआ कृष्णो = कृष्ण दशभिः = दश द्वारा, दस द्वारा सहस्रैः = हजार आवत् = रक्षा की, रक्षक तम् = उसको, उसे इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली शच्या = उत्तम वाणी द्वारा धमन्तम् = वाद्य बजाते, धौंकते, फूँकते हुये अप = दूर, नीचे, अपकार स्नीहितम् = स्नेही को नृमणाः = नर, ले जाने वाले अध = अथ, अब, इसके अनन्तर द्राः = निन्दा, लज्जित करता है ॥ १३ ॥

पदार्थ - अव = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **द्रप्सो** = हर्ष, आनन्द, गर्व (द्रप् = हर्ष होना, गर्व होना)। **अंशुमतीम्** = अंशुमती को (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **अतिष्ठत्** = ठहरा, स्थित है (तिष्ठ - ठहरना, स्थित होना)। **ईयानः** = प्राप्त करता हुआ, जानता हुआ (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **कृष्णो** = कृष्ण (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। **दशभिः** = दश द्वारा, दस द्वारा (दश = दश, दस, संख्या)। **सहस्रैः** = हजार (संख्या)। **आवत्** = रक्षा की, रक्षक (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **शच्या** = उत्तम वाणी द्वारा (शच - स्पष्ट बोलना)। **धमन्तम्** = वाद्य बजाते, धौंकते, फूँकते हुये (धम् - धौंकना, फूँकना, अग्नि सुलगाना, वाद्य बजाना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **स्नीहितम्** = स्नेही को (स्निह - प्रीति करना, स्नेह करना, मित्रता करना, स्निग्ध होना)। **नृमणाः** = नर, ले जाने वाले (नृ - ले जाना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **द्राः** = निन्दा, लज्जित करता है (द्रा = भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना) ॥ १३ ॥

८१२. त्वम् ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानो, अशत्रुभ्यो अभवः शत्रुः इन्द्र ।

गूढे द्यावापृथिवी अनु-अविन्दो, विभुमद्भ्योः भुवनेभ्यो रणम् धाः ॥ १६ ॥ ८-९६-१६

मन्त्रार्थ - त्वम् = तुम ह = ही, निश्चय ही त्यत् = वह, उसने सप्तभ्यो = सात जायमानो = उत्पन्न होता हुआ अशत्रुभ्यो = अशत्रु अभवः = हुआ शत्रुः = शत्रु इन्द्र = हे परम ऐश्वर्यशाली गूढे = गूढ द्यावापृथिवी = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी अनु-अविन्दो = प्राप्त होता है विभुमद्भ्योः = विभू के आनन्द के लिए भुवनेभ्यो = भुवनों द्वारा रणम् = रण, शब्द, आवाज को धाः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो ॥ १६ ॥

पदार्थ - त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)। **त्यत्** = वह, उसने (सर्वनाम)। **सप्तभ्यो** = सात (संख्या)। **जायमानो** = उत्पन्न होता हुआ (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अशत्रुभ्यो** = अशत्रु (शी - शब्द - शत्रु - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **अभवः** = हुआ (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। **शत्रुः** = शत्रु (शी - शब्द - शत्रु - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गूढे** = गूढ (गूढ - रहना, निवास करना, घर बनाना, गुड - संरक्षण करना, बनाना मधुर होना, गुह - हिंसा करना, गति करना, छिपाना, वस्त्रादि से ढाँकना)। **द्यावापृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **अनु-अविन्दो** = प्राप्त होता है (अनु = पश्चात्, पीछे, विन्द - प्राप्त करना, सम्पादित करना)। **विभुमद्भ्योः** = विभू के आनन्द के लिए

(वि - विशेष, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, मद - हृष्ट होना, हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **भुवनेभ्यो** = भुवनों द्वारा (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **रणम्** = रण, शब्द, आवाज को (रण् - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। **धाः** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो (धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना) ॥ 16 ॥

(229) सूक्त 97

813. या इन्द्र भुज आभरः, स्वर्वान् असुरेभ्यः।

स्तोतारम् इत् मघवन्, अस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तवर्हिषः ॥ 1 ॥ 8-97-1

मन्त्रार्थ - या = जो इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली भुज = भक्षण करो, भोग करो आभरः = भरण करो स्वर्वान् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् असुरेभ्यः = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश द्वारा स्तोतारम् = स्तुतिकर्ता को इत् = ही मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् अस्य = इसका वर्धय = बढ़ें ये = जो च = और त्वे = तुममें वृक्तवर्हिषः = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ ॥ 1 ॥

पदार्थ - या = जो (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। भुज = भक्षण करो, भोग करो (भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण करना)। आभरः = भरण करो (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना)। स्वर्वान् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वर-स्वर = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। असुरेभ्यः = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। स्तोतारम् = स्तुतिकर्ता को (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। इत् = ही (अव्यय)। मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। वर्धय = बढ़ें (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। ये = जो। च = और। त्वे = तुममें (सर्वनाम)। वृक्तवर्हिषः = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ (वृक् - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना, बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 1 ॥

814. यत् शक्र असि परावति, यत् अर्वावति वृत्रहन्।

अतः त्वा गीर्भिः द्युगत्, इन्द्र केशिभिः सुतावान् आ विवासति ॥ 4 ॥ 8-97-4

मन्त्रार्थ - यत् = जिसे, जो शक्र = शक्तिवान्, समर्थ असि = हो परावति = पराया, दूर, लौटा हुआ यत् = जिसे, जो अर्वावति = अर्वावत, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले अतः = इसलिए त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा द्युगत् = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली केशिभिः = केशी द्वारा सुतावान् = सुतावान्, रचनावान् आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विवासति = विशेष वास करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। शक्र = शक्तिवान्, समर्थ (शक् - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। असि = हो (अस् - होना)। परावति = पराया, दूर, लौटा हुआ, (अव्यय)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अर्वावति = अर्वावत, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचाना, हिंसा करना)। वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा

करना, हन् - हिंसा करना)। **अतः** = इसलिए (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **द्युगत्** = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **केशिभिः** = केशी द्वारा (किश्-केश्-किस् - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **सुतावान्** = सुतावान्, रचनावान् (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **विवासति** = विशेष वास करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस - निवास करना) ॥ 4 ॥

815. मा नः इन्द्र परा वृणक्, भवा न सधमाद्ये ।

त्वम् नः ऊती त्वम् इत् न आप्यम्, मा नः इन्द्र परा वृणक् ॥ 7 ॥ 8-97-7

मन्त्रार्थ - **मा** = नहीं, मत **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत **वृणक्** = वरण किया **भवा** = हो, हो जाये **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सधमाद्ये** = साथ आनन्द करते हैं **त्वम्** = तुम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला **त्वम्** = तुम **इत्** = ही **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **आप्यम्** = आप, व्याप्त, व्यापक को **मा** = नहीं, मत **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत **वृणक्** = वरण किया ॥ 7 ॥

पदार्थ - **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **वृणक्** = वरण किया (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **भवा** = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सधमाद्ये** = साथ आनन्द करते हैं (सध = साथ (अव्यय), मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आप्यम्** = आप, व्याप्त, व्यापक को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **परा** = परम्, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। **वृणक्** = वरण किया (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना) ॥ 7 ॥

816. विश्वाः पृतना अभिभूतरम् नरम्, सजूः ततक्षुः इन्द्रम् जजनुः च राजसे ।

क्रत्वा वरिष्ठम् वर आमुरीम् उत, उग्रम् ओजिष्ठम् तरसम् तरस्विनम् ॥ 10 ॥ 8-97-10

मन्त्रार्थ - **विश्वाः** = विश्व का, सब का **पृतनाः** = व्यापक, बल वाले **अभिभूतरम्** = अभिभूत को **नरम्** = नर **सजूः** = विचारशील, सेवाभावी, गले लगाने वाला **ततक्षुः** = आच्छादित करने वाले **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **जजनुः** = उत्पन्न, प्रकट करने वाले **च** = और। **राजसे** = राजस् के लिए, प्रकाश के लिए **क्रत्वे** = कृतु के लिए, करने वाले के लिए **वरिष्ठम्** = वरिष्ठ को **वर** = वर **स्थेमनि** = स्थान में, स्थिति में **आमुरीम्** = घेरने वाले, लपेटने वाले **उत** = ही, भी, ओर **उग्रम्** = उग्र को **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को **तरसम्** = तसर को, रक्षक को, खोदने, फेकने, उड़ाने वाले को **तरस्विनम्** = तरस्वी, वेगवान्, जीतने वाले को ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **विश्वाः** = विश्व का, सब का (विश् = भीतर जाना, सभी तरह फैलना)। **पृतनाः** = व्यापक, बल वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **अभिभूतरम्** = अभिभूत को (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **नरम्** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना,

चलना, ले जाना)। **सजूः** = विचारशील, सेवाभावी, गले लगाने वाला (स - साथ, सहित, संज-सज् = गले लगाना, सम्बन्धी होना, स + जूः, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **ततक्षुः** = आच्छादित करने वाले (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जजनुः** = उत्पन्न, प्रकट करने वाले (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **च** = और। **राजसे** = राजस् के लिए, प्रकाश के लिए (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **क्रत्वे** = कृतु के लिए, करने वाले के लिए (कृ = करना)। **वरिष्ठम्** = वरिष्ठ को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वर** = वर (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **स्थेमनि** = स्थान में, स्थिति में (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **आमुरीम्** = घेरने वाले, लपेटने वाले (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः (उपसर्ग), मुर - घेरना, लपेटना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **ओजिष्ठम्** = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् को (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **तरसम्** = तसर को, रक्षक को, खोदने, फेकने, उड़ाने वाले को (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, भेजना, फेकना, उड़ाना, खोदना, कुम्हलाना)। **तरस्विनम्** = तरस्वी, वेगवान्, जीतने वाले को (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना) ॥ 10 ॥

817. सम् उ रेभासो अस्वरन्, इन्द्रम् सोमस्य पीतये ।

स्वः पतिः यत् ई वृधे धृतव्रतो, हि ओजसा सम् ऊतिभिः ॥ 11 ॥ 8-97-11

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति उ = निश्चय ही, भी रेभासो = शब्द करने वाले अस्वरन् = शब्द किया इन्द्रम् = इन्द्र को सोमस्य = सोम का पीतये = पान के लिए स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् पतिः = ऐश्वर्यवान्, स्वामी यत् = जिसे, जो ई = समान, इस प्रकार वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में धृतव्रतो = व्रतधारी हि = ही, निश्चय ओजसा = ओज द्वारा सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा ॥ 11 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। रेभासो = शब्द करने वाले (रेभ - शब्द करना)। अस्वरन् = शब्द किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्वरु = शब्द करना)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोमस्य = सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पीतये = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। पतिः = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ई = समान, इस प्रकार (वैदिक उपसर्ग)। वृधे = वृद्धि में, बढ़ने में (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। धृतव्रतो = व्रतधारी (धृ - रहना, स्थिर रहना, धारण करना, पास रखना, युक्त होना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 11 ॥

818. नेमिम् नमन्ति चक्षसा, मेषम् विप्रा अभिस्वराः ।

सुदीतयो वो अद्रुहो अपि, कर्णे तरस्विनः सम् ऋक्वभिः ॥ 12 ॥ 8-97-12

मन्त्रार्थ :- नेमिम् = ले जाने वाले, मार्गदर्शक को नमन्ति = नमन करते हैं चक्षसा = दृष्टि, वाणी मेषम् = मेष को विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले अभिस्वराः = अभिस्वर में, अभिस्वर करने वाले सुदीतयो = सुदीतय, उत्तम क्षय करने वाले, उत्तम दानी वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग अद्रुहो = अद्रोही, द्रोह न

करने वाला **अपि** = भी, निकट **कर्णे** = कर्ण में **तरस्विनः** = तरस्वी, वेगवान्, जीतने वाला **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **ऋक्वभिः** = ऋचाओं द्वारा ॥ 12 ॥

पदार्थ :- **नेमिम्** = ले जाने वाले, मार्गदर्शक को (नी - पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना)। **नमन्ति** = नमन करते हैं (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **चक्षसा** = दृष्टि, वाणी (चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **मेषम्** = मेष को (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना)। **विप्रा** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **अभिस्वराः** = अभिस्वर में, अभिस्वर करने वाले (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग), स्तु-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **सुदीतयो** = सुदीतय, उत्तम क्षय करने वाले, उत्तम दानी (सु - अच्छा, सुन्दर, दी - हास (हरास) होना, झरना, नष्ट होना। दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना। दो - दान करना, दया करना, कतरना, विभाग करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अद्रुहो** = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना)। **अपि** = भी, निकट (अव्यय)। **कर्णे** = कर्ण में (कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, त्याग करना, भेदना, छेदन करना)। **तरस्विनः** = तरस्वी, वेगवान्, जीतने वाला (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **ऋक्वभिः** = ऋचाओं द्वारा (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना) ॥ 2 ॥

819. तम् इन्द्रम् जोहवीमि मघवानम् उग्रम्, सत्रा दधानम् प्रतिष्कृतम् श्रवांसि।

मंहिष्ठो गीर्भिः आ च यज्ञियो ववर्तत्, राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥ 13 ॥ 8-97-13

मन्त्रार्थ - **तम्** = उसको, उसे **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **जोहवीमि** = दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **उग्रम्** = उग्र को **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी **दधानम्** = धारण करने वाले **अप्रतिष्कृतम्** = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन को **श्रवांसि** = श्रवण करो **मंहिष्ठो** = मंहिष्ठ का, महिमावान् का, महान् का **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **च** = और। **यज्ञियो** = यजनकर्ता **ववर्तत्** = वर्तमान रहने वाला **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **सुपथा** = अच्छे मार्गों पर **कृणोतु** = करो **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान ॥ 13 ॥

पदार्थ - **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जोहवीमि** = दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू-जुहू = दान करना, आदान-प्रदान करना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **सत्रा** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। **दधानम्** = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अप्रतिष्कृतम्** = अप्रतिष्कृत, प्रतिकूल शब्द हीन को (अ - नहीं, प्रति - प्रतिकार, समान, समकक्ष, कु - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, भौरे के समान शब्द करना)। **श्रवांसि** = श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **मंहिष्ठो** = मंहिष्ठ का, महिमावान् का, महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **च** = और। **यज्ञियो** = यजनकर्ता (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **ववर्तत्** = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **सुपथा** = अच्छे मार्गों पर (सु - अच्छा, सुन्दर, पथ - चलना)। **कृणोतु** = करो (कृ = करना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना) ॥ 13 ॥

(230) सूक्त 98

820. इन्द्राय साम गायत, विप्राय बृहते बृहत्।

धर्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥ 1 ॥

8-98-1

मन्त्रार्थ - इन्द्राय = इन्द्र के लिए साम = हे साम गायत = गाते हैं, गायन करो विप्राय = विप्र के लिए बृहते = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् धर्मकृते = धर्मकृत, धर्मकर्ता के लिए विपश्चिते = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त के लिए पनस्यवे = प्रशंसा, स्तुति के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। साम = हे साम (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। गायत = गाते हैं, गायन करो (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। विप्राय = विप्र के लिए (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। बृहते = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। धर्मकृते = धर्मकृत, धर्मकर्ता के लिए (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, कृ = करना)। विपश्चिते = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम, पश् = देखना)। पनस्यवे = प्रशंसा, स्तुति के लिए (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 1 ॥

821. त्वम् इन्द्र अभिभूः असि, त्वम् सूर्यम् अरोचयः।

विश्वकर्मा विश्वदेवो महान् असि ॥ 2 ॥

8-98-2

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली अभिभूः = सभी ओर, सर्वथा होने वाला असि = हो त्वम् = तुम सूर्यम् = सूर्य को अरोचयः = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता है विश्वकर्मा = हे विश्वकर्मा, सबका कर्म करने वाले विश्वदेवो = विश्वदेव, सभी देव महान् = बड़े, पूज्य, महान् असि = हो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अभिभूः = सभी ओर, सर्वथा होने वाला (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, भू - होना)। असि = हो (अस् - होना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। सूर्यम् = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। अरोचयः = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता है (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। विश्वकर्मा = हे विश्वकर्मा, सबका कर्म करने वाले (विश्व - सभी, कृ - करना)। विश्वदेवो = विश्वदेव, सभी देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 2 ॥

822. विभ्राजम् ज्योतिषा स्वः, अगच्छो रोचनम् दिवः।

देवाः ते इन्द्र सख्याय येमिरे ॥ 3 ॥

8-98-3

मन्त्रार्थ :- विभ्राजम् = विशेष भ्राज, विशेष प्रकाशित को ज्योतिषा = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् अगच्छो = गया, प्राप्त किया रोचनम् = प्रकाश को दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली सख्याय = सखाभाव, मित्रता के लिए येमिरे = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ ॥ 3 ॥

पदार्थ :- विभ्राजम् = विशेष भ्राज, विशेष प्रकाशित को (वि - विशेष, भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। ज्योतिषा = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। अगच्छो = गया, प्राप्त किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गच्छ - जाना, जानना, पाना)। रोचनम् = प्रकाश को (रुच् - रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न

करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सख्याय** = सखाभाव, मित्रता के लिए (सख् = मित्र होना)। **येमिरे** = संयुक्त करता हूँ, मिलाता हूँ (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना) ॥ 3 ॥

823. आ इन्द्र नो गधि प्रिय, सत्राजित् अगोह्य ।

गिरिः न विश्वतः पृथुः पतिः दिवः ॥ 4 ॥ 8-98-4

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **गधि** = मिश्रित करो, मिलाओ **प्रिय** = हे प्रिय **सत्राजित्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना **अगोह्य** = हे अहिंसनीय, अनावरणीय, न छिपाने योग्य, अगम्य **गिरिः** = स्तुति, वाणी **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **विश्वतः** = सबसे, विश्व से **पृथुः** = विस्तार, विस्तृत **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय ॥ 4 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गधि** = मिश्रित करो, मिलाओ (गध - मिश्रित होना, मिल जाना, मिश्रित करना, मिलाना)। **प्रिय** = हे प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **सत्राजित्** = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **अगोह्य** = हे अहिंसनीय, अनावरणीय, न छिपाने योग्य, अगम्य (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गुह - गति करना, छिपाना, वस्त्रादि से ढांकना, हिंसा करना)। **गिरिः** = स्तुति, वाणी (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **पृथुः** = विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥

824. अभि हि सत्य सोमपाः, उभे बभूथ रोदसी ।

इन्द्र असि सुन्वतो वृधः पतिः दिवः ॥ 5 ॥ 8-98-5

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **हि** = ही, निश्चय **सत्य** = सत्य **सोमपाः** = सोम का पालक, सोमपान करने वाला **उभे** = दोनों, पूर्णता **बभूथ** = हो गये **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **असि** = हो **सुन्वतो** = स्नान करने वाले, सवन करने वाले **वृधः** = वृद्धि **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **सत्य** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **सोमपाः** = सोम का पालक, सोमपान करने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **बभूथ** = हो गये (भू = होना, प्राप्त होना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **सुन्वतो** = स्नान करने वाले, सवन करने वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **वृधः** = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य

होना, पराक्रम होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 5 ॥

825. त्वम् हि शश्वतीनाम्, इन्द्र दत्ता पुराम् असि ।

हन्ता दस्योः मनोः वृधः पतिः दिवः ॥ 6 ॥ 8-98-6

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय शश्वतीनाम् = शाश्वत का इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली दत्ता = आदर करने वाले पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को असि = हो हन्ता = मारने वाला दस्योः = अनेक दस्यु, रक्षणीय मनोः = मन वृधः = वृद्धि पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय ॥ 6 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। शश्वतीनाम् = शाश्वत का (शश्व - नित्य होना, सदैव रहना, शाश्वत होना, शाश्वत होना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। दत्ता = आदर करने वाले (दृ - आदर करना, हिंसा करना)। पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। असि = हो (अस् - होना)। हन्ता = मारने वाला (हन् - मारना)। दस्योः = अनेक दस्यु, रक्षणीय (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। मनोः = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। वृधः = वृद्धि (वृध - बढ़ना, अधिक होना)। पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 6 ॥

826. अधा हि इन्द्र गर्वणः, उप त्वा काम ईमहे ससृज्महे ।

उदः इव यन्तः उदभिः ॥ 7 ॥ 8-98-7

मन्त्रार्थ :- अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर हि = ही, निश्चय इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली गर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन उप = समीप त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा काम = कामना, इच्छा ईमहे = आते हैं, जानते हैं ससृज्महे = सृजन करते हैं, सरकते हैं, प्राप्त करते हैं उदा = उदा के समान इव = समान, की भाँति, के समान यन्तः = यन्ता, संयमन करने वाले उदभिः = उदों द्वारा, आद्रक को धारण करने वालों द्वारा ॥ 7 ॥

पदार्थ :- अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। गर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। काम = कामना, इच्छा (कम् - चाहना, इच्छा करना)। ईमहे = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। ससृज्महे = सृजन करते हैं, सरकते हैं, प्राप्त करते हैं (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। उदा = उदा के समान (उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। यन्तः = यन्ता, संयमन करने वाले (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना)। उदभिः = उदों द्वारा, आद्रक को धारण करने वालों द्वारा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना) ॥ 7 ॥

827. वाः न त्वा यव्याभिः, वर्द्धन्ति शूर ब्रह्माणि ।

वावृध्वांसम् चित् अद्रिवो दिवे दिवे ॥ 8 ॥ 8-98-8

मन्त्रार्थ :- वाः = गतिशील न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा यव्याभिः = यव्यों द्वारा वर्द्धन्ति = बढ़ाता है शूर = वीर, पराक्रमी ब्रह्माणि = ब्रह्ममय वावृध्वांसम् = वृद्धि करने वाले को चित् = चेतन अद्रिवो = अद्रि,

अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला दिवे-दिवे = प्रतिदिन ॥ 8 ॥

पदार्थ :- वाः = गतिशील (वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। यव्याभिः = यव्यों द्वारा (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। वर्द्धन्ति = बढ़ाता है (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। शूर = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। ब्रह्माणि = ब्रह्ममय (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। वावृध्वांसम् = वृद्धि करने वाले को (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। चित् = चेतन, (चित = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। अद्रिवो = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्र - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। दिवे-दिवे = प्रतिदिन (अव्यय) ॥ 8 ॥

828. युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथया, ऊरौ रथ उरु युगे ॥

इन्द्रवाहा वचोयुजा स्वर्विदा ॥ 9 ॥ 8-98-9

मन्त्रार्थ :- युञ्जन्ति = नियोजित करते हैं, जोड़ते हैं हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले इषिरस्य = विद्वान्, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि देने वाले का गाथया = गाथा द्वारा ऊरौ = निरन्तर गति, विस्तार करने वाले रथ = रथ उरु = बहुत, विराट युगे = युग, युक्त में इन्द्रवाहा = इन्द्रवाही, इन्द्र को वहन करने वाला वचोयुजा = वचन-युक्त, वाणी-युक्त स्वर्विदा = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् ॥ 9 ॥

पदार्थ :- युञ्जन्ति = नियोजित करते हैं, जोड़ते हैं (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। इषिरस्य = विद्वान्, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि देने वाले का (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। गाथया = गाथा द्वारा (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। ऊरौ = निरन्तर गति, विस्तार करने वाले (उरु - बहुत, अधिक, उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, ऊ - शब्द करना, ध्वनि करना, विश्वास करना)। रथ = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। उरु = बहुत, विराट (सर्वनाम)। युगे = युग, युक्त में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना)। वचोयुजा = वचन-युक्त, वाणी-युक्त (वच् - बोलना, कहना, समझाना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। इन्द्रवाहा = इन्द्रवाही, इन्द्र को वहन करने वाला (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना, वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। स्वर्विदा = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (स्वर् - शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना) ॥ 3 ॥

829. त्वम् नः इन्द्र आ भर ओजो, नृष्णम् शतक्रतो विचर्षणे ।

आ वीरम् पृतनासहम् ॥ 10 ॥

8-98-10

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ओजो = ओज नृष्णम् = नर, ले जाने वाले को शतक्रतो = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील विचर्षणे = हे! विशेष विचार करने वाले आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वीरम् = पराक्रमी, वीर पृतनासहम् = व्यापक शक्तिमान, समर्थ बलवान् ॥ 10 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण

करना, पूर्ण करना)। **ओजो** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **नृणम्** = नर, ले जाने वाले को (नृ - ले जाना)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील (शत - सौ, कृ - करना)। **विचर्षणे** = हे! विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वीरम्** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **पृतनासहम्** = व्यापक शक्तिमान्, समर्थ बलवान् (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना) ॥ 10 ॥ साम 1169

830. त्वम् हि नः पिता वसो, त्वम् माता शतक्रतो बभूविथ ।

अथा ते सुम्नम् ईमहे ॥ 11 ॥ 8-98-11

मन्त्रार्थ :- **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता **वसो** = वसु **त्वम्** = तुम **माता** = माता **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील **बभूविथ** = हो गये **अथा** = अब, इसके अनन्तर **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **सुम्नम्** = सुविचार अथवा सृजन, रचनाशीलता को **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं ॥ 11 ॥

पदार्थ :- **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। **वसो** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **माता** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **शतक्रतो** = सैकड़ों कर्म करने वाला, अत्यन्त कर्मशील (शत - सौ, कृ - करना)। **बभूविथ** = हो गये (भू = होना, प्राप्त होना)। **अथा** = अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुम्नम्** = सुविचार अथवा सृजन, रचनाशीलता को (सु - अच्छा, सुन्दर, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 11 ॥

831. त्वाम् शुभिन् पुरुहूत वाजयन्तम्, उप ब्रुवे शतक्रतो ।

स नो रास्व सुवीर्यम् ॥ 11 ॥ 8-98-12

मन्त्रार्थ :- **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **शुभिन्** = शुष्कता, सुखाने वाला **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ **वाजयन्तम्** = गतिमान, बलवान् को **उप** = समीप **ब्रुवे** = कहें **शतक्रतो** = हे सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहनशीलता के कर्ता **स** = वह, उसने **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **रास्व** = दान दो **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **शुभिन्** = शुष्कता, सुखाने वाला (शुष् = सूखना, शुष्क होना)। **पुरुहूत** = पुरुहूत, अग्र-दत्त, पहले दिया हुआ (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। **वाजयन्तम्** = गतिमान, बलवान् को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **ब्रुवे** = कहें (ब्रू - कहना, बोलना)। **शतक्रतो** = हे सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, सहनशीलता के कर्ता (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, कृ - करना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **रास्व** = दान दो (रा- देना, लेना, ग्रहण करना, रस्, रास् = शब्द करना, रस् = रस होना, स्वाद लेना, प्रीति करना, प्यार करना, शब्द करना, रस लेना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 11 ॥

832. त्वाम् इदा ह्यो नरो, अपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः ।

सः इन्द्र स्तोमवाहसः, इह श्रुधि उप स्वसरम् आ गहि ॥ 1 ॥ 8-99-1

मन्त्रार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी इदा = आज, अब ह्यो = कल नरो = नर अपीप्यन् = पुष्ट किया, पोषण करते थे वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त भूर्णयः = धारण-पोषण करने वाले सः = वह, उसने इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली स्तोमवाहसः = स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले इह = इसमें, यहां, यह श्रुधि = सुनिये उप = समीप स्वसरम् = स्वगति को, उत्तम गति को, उत्तम गृह को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गहि = गति, ज्ञान, घना करें ॥ 1 ॥

पदार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। इदा = आज, अब (सर्वनाम, अव्यय)। ह्यो = कल (बीता हुआ दिन, अव्यय)। नरो = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। अपीप्यन् = पुष्ट किया, पोषण करते थे (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। वज्रिन् = वज्रयुक्त, गतिमानयुक्त (वज्र - गति करना, जाना)। भूर्णयः = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। स्तोमवाहसः = स्तुति वाहक, स्तुतियों का वहन करने वाले (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। श्रुधि = सुनिये (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। उप = समीप (उपसर्ग)। स्वसरम् = स्वगति को, उत्तम गति को, उत्तम गृह को (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। गहि = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥

833. मत्स्वा सुशिप्रि हरिवः तम्, ईमहे त्वे आ भूषन्ति वेधसः ।

तव श्रवांसि उपमानि उक्थ्य, सुतेषु इन्द्र गिर्वणः ॥ 2 ॥ 8-99-2

मन्त्रार्थ :- मत्स्वा = हर्षित हो, तृप्त हो, तृप्त करो, हर्षित करो सुशिप्रि = हे उत्तम विद्वान् हरिवः = हरि गण, हरण करने वाले तम् = उसको, उसे ईमहे = आते हैं, जानते हैं त्वे = तुम्हारे द्वारा, तुमसे आ भूषन्ति = भूषित हों, भूषित करो वेधसः = विद्वान् तव = तुम्हारा श्रवांसि = श्रवण करो उपमानि = अनेक उपमान, निकट मान-मापन उक्थ्य = कथनीय सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली गिर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन ॥ 2 ॥

पदार्थ :- मत्स्वा = हर्षित हो, तृप्त हो, तृप्त करो, हर्षित करो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सुशिप्रि = हे उत्तम विद्वान् (सु - अच्छा, उत्तम, शिप - क्षरण होना, काटने योग्य होना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, पतला करना, सुनना)। हरिवः = हरि गण, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ईमहे = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। त्वे = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। आ भूषन्ति = भूषित हों, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। वेधसः = विद्वान् (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। श्रवांसि = श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। उपमानि = अनेक उपमान, निकट मान-मापन (उप- समीप, नम् - नमन करना, नमना, नत होना)। उक्थ्य = कथनीय (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। सुतेषु = ऐश्वर्यवानों में, उत्पन्न हुआओं में (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। गिर्वणः = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना) ॥ 2 ॥

834. श्रायन्त इव सूर्यम्, विश्वा इत् इन्द्रस्य भक्षत ।

वसूनि जाता उ जनमान, ओजसा प्रति भागम् न दीधिम ॥ 3 ॥ 8-99-3

मन्त्रार्थ :- इन्द्रस्य इन्द्र के सूर्यम् सूर्य का श्रायन्त इव आश्रय लेने के समान विश्वा सब इत् ही भक्षत भक्षण करें ।

ओजसा ओज द्वारा **वसूनि** वसुओं के **जातो** उत्पन्न **जनमान** उत्पन्न होने वाले **प्रति-भागम्** प्रत्येक भाग के **न** समान **दीधिम** धारण करते हैं ॥ 3 ॥

भावार्थ - जैसे इन्द्र सूर्य का आश्रय लेता है, वैसे ही विश्व भक्षण करता है। इन्द्र का अर्थ है ऐश्वर्यवान् तथा सूर्य का अर्थ है उत्पन्न करने वाला तथा ऐश्वर्यवान्। उत्पन्नकर्ता होने का महत्व विशेष है, इसीलिए सूर्य का आश्रय इन्द्र लेता है। अनेक मन्त्रों में इन्द्र तथा सूर्य दोनों ही परमात्मा के विशेषण के रूप में आये हैं। परमात्मा में सभी गुण तथा शक्तियाँ समाहित हैं, अतः उसके विशेषण के रूप में इन्द्र, सूर्य, वरुण, यम, शिव, विष्णु, अग्नि, आदित्य आदि शब्द प्रयोग होते हैं। इस मन्त्र में विशेष सन्देश देते हुए कहा गया है कि ऐश्वर्य होने पर भी उत्पन्न करने वाले का आश्रय लेना होता है। ऐश्वर्य किसी को किसी से प्राप्त भी हो सकता है, परन्तु जो उसे उत्पन्न करता है तथा विविध प्रकार से सृजनशील है, रचनाशील है, उसका आश्रय लेना ही महत्वपूर्ण है। 3 ॥

पदार्थ :- **श्रायन्त** = आश्रय (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **इव** = समान, की भाँति। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। **विश्वा** = सभी। **इत्** = ही। **इन्द्रस्य** = इन्द्र के, परम ऐश्वर्यवान् के (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **भक्षत** = भक्षण करें (भक्ष - खाना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, उपभोग करना)। **वसूनि** = वसुओं के (वस् = निवास करना, दया करना, प्रीति करना, आच्छादन करना, कतरना, लेना)। **जातो** = उत्पन्न (जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **जनमान** = उत्पन्न होने वाले (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में। **भागम्** = भाग (भज - अंश या भागहोना)। **न** = नहीं। **दीधिमः** = धारण करते हैं, प्रकाशित करते हैं (दीध - चमकना, प्रकाशित होना, खेलना, क्रीडा करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना, धारण करना) ॥ 3 ॥

835. अनर्शरातिम् वसुदाम् उप, स्तुहि भद्राः इन्द्रस्य रातयः।

यो अस्य कामम् विधतो न रोषति, मनो दानाय चोदयन् ॥ 4 ॥ 8-99-4

मन्त्रार्थ :- **अनर्शरातिम्** = सामर्थ्य-अनुदान को **वसुदाम्** = वसु-दाता को, वास देने वाले दानी को **उप** = समीप **स्तुहि** = स्तुत, स्तुह **भद्राः** = भद्र, कल्याणकारी **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **रातयः** = अनुदान **यो** = जो **अस्य** = इसका **कामम्** = कामना, इच्छा को **विधतो** = विशेष धारण वाले **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **रोषति** = हिंसा करता है, क्रोध करता है **मनो** = मन **दानाय** = दान के लिए **चोदयन्** = प्रेरित करते हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **अनर्शरातिम्** = सामर्थ्य-अनुदान को (अन् - नहीं, अन-चेतन होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना। रा - देना, मिल जाना)। **वसुदाम्** = वसु-दाता को, वास देने वाले दानी को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **स्तुहि** = स्तुत, स्तुह (स्तुज् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **भद्राः** = भद्र, कल्याणकारी (भदि-भन्द - सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **रातयः** = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **कामम्** = कामना, इच्छा को (कम - चाहना, इच्छा करना)। **विधतो** = विशेष धारण वाले (वि - विशेष, धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रोषति** = हिंसा करता है, क्रोध करता है (रुष - मार डालना या दुःख देना, मार डालने का यत्न करना, रुष - क्रोध करना, गुस्सा करना)। **मनो** = मन (मन् - जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दानाय** = दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **चोदयन्** = प्रेरित करते हुए (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना) ॥ 4 ॥

836. त्वम् इन्द्र प्रतूर्तिषु, अभि विश्वा असि स्पृधः।

अशस्तिहा जनिता, वृत्रतूः असि, त्वम् तूर्य तरुष्यतः ॥ 5 ॥ 8-99-5

मन्त्रार्थ - इन्द्र हे इन्द्र, विश्वा सब, त्वम् तुम प्रतूर्तिषु तीव्रगतियों में, अभि स्पृधः स्पर्धा करने वाले असि हो। त्वम्

तुम् अशस्तिहा अहिंसक को गति, ज्ञान देने वाले **जनिता** उत्पन्न करने वाले **वृत्रतूः** शीघ्र शुभकर्म करने के लिए **तरुष्यतः** तरने के इच्छुकों को **तूर्य्य** वृद्धि, पूर्ण करने वाले **असि** हो ॥ 5 ॥

भावार्थ - जो भी तीव्रतम गति सम्भव है, वह परमात्मा की इच्छा से ही है। अतः तीव्रता में इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा से स्पर्धा कोई नहीं कर सकता है। इसे ध्यान में रखें तो हम उतावलेपन से बच सकते हैं, हमारी गति सन्तुलित तथा संयमित बनी रहेगी और हमारा जीवन शास्तिमय बना रहेगा। परमात्मा अहिंसक को सहायता देता है, उसको पूर्णता प्रदान करता है। जो वास्तव में तरना चाहते हैं, पार जाना चाहते हैं, उनको भी उनके लक्ष्य में पूर्णता प्रदान करता है।

विशेष - प्रतूर्तिषु पद में तु या तुर धातु होना सम्भव है। तु धातु का अर्थ गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना है। तुर धातु का अर्थ शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना है। शस् धातु का अर्थ हिंसा करना, मारना, दुःख देना, काटना है। हा धातु का अर्थ गति करना, त्याग करना है। अशस्तिहा पद में कुछ विद्वानों ने शस् (स्तुति, प्रशंसा करना) धातु का शस् रूप हो जाना तथा हन् (हिंसा करना, मारना) धातु का हा रूप हो जाना माना है। 5 ॥

पदार्थ - **इन्द्र** हे इन्द्र (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना), **त्वम्** तुम् **विश्वा** सब, **प्रतूर्तिषु** - तीव्रगतियों में (तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना। तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना), **अभि** - सब ओर, **स्पृधः** स्पर्धा करने वाले (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना) **असि** हो (अस् - होना)। **त्वम्** तुम् **अशस्तिहा** अहिंसक को, गति, ज्ञान देने वाले (शस् - हिंसा करना, मारना, दुःख देना, काटना)। **हा** - गति करना, त्याग करना है। **शस्-शस्** - स्तुति, प्रशंसा करना, हन् - हिंसा करना, मारना) **जनिता** उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न करना)। **वृत्रतूः** = शीघ्र शुभकर्म करने के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, तुर = शीघ्र जाना, त्वरा करना)। **तरुष्यतः** तरने के इच्छुकों को (तृ - तरना, तैरना, पार होना) **तूर्य्य** वृद्धि, पूर्ण करने वाले (तु - गति, वृद्धि, पूर्ण, हिंसा करना। तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना) **असि** हो (अस् - होना) ॥ 5 ॥

837. अनु ते शुष्मम् तुरयन्तम्, ईयतुः क्षोणी शिशुम् न मातरा।

विश्वाः ते स्पृधः श्नथयन्त, मन्यवे वृत्रम् यत् इन्द्र तूर्वसि ॥ 6 ॥

8-99-6

मन्त्रार्थ - ते तुम्हारा शुष्मम् शुष्म (सुखाना) **तुरयन्तम्** शीघ्रता करने वाला, **क्षोणी** गति, ध्वनि करने वाली **मातरा** माता के न समान **शिशुम्** शिशु को **अनु ईयतुः** अनुगमन करे। **इन्द्र** हे इन्द्र, ते तुम्हें **विश्वाः** सब **स्पृधः** स्पर्धायें **श्नथयन्त** मारने वाले **मन्यवे** मानते हैं, **यत्** जो **वृत्रम्** वृत्र (हिंसा) को **तूर्वसि** मारते हो ॥ 6 ॥

भावार्थ - परमात्मा इन्द्र शीघ्रता से सुखाने वाला है। वह हमारे दुःखों के सागर को, हमारे कष्ट के घावों को उसी तरह शीघ्रता से सुखा देता है जैसे माता अपने शिशु के पीछे शीघ्रता से भगती है। क्षोणी शब्द का प्रयोग यहाँ महत्वपूर्ण है। क्षु धातु का अर्थ गति करना तथा ध्वनि करना दोनों हैं। और ध्वनि भी ऐसी जिसका कोई विशेष महत्वपूर्ण या गम्भीर अर्थ नहीं होता है। माता खोये हुए या कष्ट में पड़े हुए या रोते हुए शिशु के पीछे भागती है तो कुछ बोलते हुए भागती है, शिशु को पुकारते हुए भागती है, परन्तु उन शब्दों का अर्थ महत्वपूर्ण नहीं होता है। महत्वपूर्ण होती है उसकी भावना, उसका प्रेम। 6 ॥

विशेष - क्षु धातु के अर्थ गति करना, शब्द करना हैं।

पदार्थ - **ते** = तुम्हारा शुष्मम् शुष्म (शुष् - सुखाना)। **तुरयन्तम्** = शीघ्रता करने वाला (तुर - शीघ्र गति करना, शीघ्रता करना)। **क्षोणी** = गति, ध्वनि करने वाली (क्षु - शब्द करना, जाना, जानना, पाना)। **मातरा** = माता के (मा - मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, शब्द करना)। **न** = समान। **शिशुम्** = शिशु को (शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **अनु ईयतुः** = अनुगमन करे (अनु - पीछे, ई - चलना, जाना)। **इन्द्र** = हे इन्द्र (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **ते** = तुम्हें। **विश्वाः** = सब। **स्पृधः** = स्पर्धायें (स्पृध-स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **श्नथयन्त** = मारने वाले (श्नथ - हिंसा करना, मारना)। **मन्यवे** = मानते हैं (मन् - जानना, समझना, मान्य करना)। **यत्** = जो। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत्

- वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **तूर्वसि** = मारते हो (तूर्व - हिंसा करना, मारना) ॥ 6 ॥

838. इत ऊती वो अजरम्, प्रहेतारम् अप्रहितम्।

आशुम् जेतारम् हेतारम् रथीतमम्, अतूर्तम् तुग्यावृधम् ॥ 7 ॥ 8-99-7

मन्त्रार्थ - इत = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **अजरम्** = जरा-हीन को **प्रहेतारम्** = प्रकृष्ट गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को **अप्रहितम्** = अधिक हित, गति, वृद्धि को **आशुम्** = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक **जेतारम्** = जीतने वाले को **हेतारम्** = गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को **रथीतमम्** = उत्तम रथी, उत्तम रथवाला **अतूर्तम्** = अशीघ्रकारी **तुग्यावृधम्** = प्रकाश, बलवान् को बढ़ाने वाले को ॥ 7 ॥

पदार्थ - इत = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अजरम्** = जरा-हीन को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। **प्रहेतारम्** = प्रकृष्ट गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। **अप्रहितम्** = अधिक हित, गति, वृद्धि को (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **आशुम्** = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **जेतारम्** = जीतने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **हेतारम्** = गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणाओं को (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। **रथीतमम्** = उत्तम रथी, उत्तम रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अतूर्तम्** = अशीघ्रकारी (तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **तुग्यावृधम्** = प्रकाश, बलवान् को बढ़ाने वाले को (तुज - रहना, बसति करना, मजबूत या बलवान् होना, ग्रहण करना, लेना, चमकना, प्रकाशित होना, दुःख देना, मार डालना, वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 7 ॥

(232) सूक्त 101

839. प्र मित्राय प्र अर्यम्णे, सचथ्यम् ऋतावसो।

वरुथ्ये वरुणे छन्द्यम्, वचः स्तोत्रम् राजसु गायत ॥ 5 ॥ 8-101-5

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मित्राय** = मित्र के लिए **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **अर्यम्णे** = अर्यमा, ज्ञानी **सचथ्यम्** = अभिसिञ्चन, सेवा को **ऋतावसो** = ऋतावसु **वरुथ्ये** = वरण करने योग्य के लिए **वरुणे** = वरणीय, वरण करने के लिए **छन्द्यम्** = छन्द को **वचः** = वचन **स्तोत्रम्** = स्तोत्र को, स्तुति होने को **राजसु** = राजाओं में, प्रकाशमानों में **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले ॥ 5 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मित्राय** = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **अर्यम्णे** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **सचथ्यम्** = अभिसिञ्चन, सेवा को, (सच् - सेवा करना, सन्तुष्ट करना, सींचना, पूर्णतया समझना, सम्बन्धी होना, सच - पूरा समझना, अच्छी तरह जानना)। **ऋतावसो** = ऋतावसु (ऋ = जाना, जानना, पहुँचाना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वरुथ्ये** = वरण करने योग्य के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वरुणे** = वरणीय, वरण करने के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना,

आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **छन्दम्** = छन्द को (छन्द - बल-प्राण होना, आच्छादन करना)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **स्तोत्रम्** = स्तोत्र को, स्तुति होने को (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **राजसु** = राजाओं में, प्रकाशमानों में (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना) ॥ 5 ॥

840. बट् महान् असि सूर्य, बट् आदित्य महान् असि।

महः ते सतो महिमा, पनस्यते श्रद्धा देव महान् असि ॥ 11 ॥

8-101-11

मन्त्रार्थ- सूर्य हे सूर्य (उत्पन्न कर्ता, प्रेरक, ऐश्वर्यवान्), बट् सत्य ही, निश्चय ही महान् महान् असि हो, बट् सत्य ही, निश्चय ही आदित्य है आदित्य, अखण्ड, अविनाशी महान् महान् असि हो। महः हे पूज्य, ते तुम्हारी सतो सत्य महिमा महिमा पनस्यते = प्रशंसा करे, स्तुति करे देव हे देव, श्रद्धा = सत्य महान् महान् असि हो ॥ 11 ॥

भावार्थ - परमात्मा को उत्पन्न करने, प्रेरित करने तथा परम ऐश्वर्यवान् होने से सूर्य कहा गया है और अखण्ड, अविनाशी होने से उसे आदित्य कहा गया है।

विशेष - बट् तथा अद्धा निपात, अव्यय हैं, इनके अर्थ सत्य ही, निश्चय ही होते हैं।

पदार्थ- बट् - सत्य ही, निश्चय ही (अव्यय, निपात)। महान् = महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। असि = हो। सूर्य = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। बट् - सत्य ही, निश्चय ही (अव्यय, निपात)। आदित्य = आदित्य (अदिति से उत्पन्न, अदिति = अ + दी, दी = क्षय होना, नष्ट होना, अद् = खाना)। महान् = महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। असि = हो। महः = महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए। सतो = सत्य। (सत् = सत्य होना, अस्तित्व होना)। महिमा = महिमा है (महि = पूजा करना, सम्मान करना)। पनस्यते = प्रशंसा करे, स्तुति करे (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। श्रद्धा = श्रद्धा, सत्य-धारण (श्रत् = सत्य (उपसर्ग))। देव = तेजस्वी, देव (देव्, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना)। महान् = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 11 ॥

841. बट् सूर्य श्रवसा महान् असि, सत्रा देव महान् असि।

महना देवानाम् असुर्यः पुरोहितो, विभु ज्योतिः अदाभ्यम् ॥ 12 ॥

8-101-12

मन्त्रार्थ- बट् सत्य ही, निश्चय ही सूर्य हे सूर्य (उत्पन्न कर्ता, प्रेरक, ऐश्वर्यवान्), श्रवसा श्रवण से, ज्ञान से महान् महान् असि हो। देव हे देव, सत्रा सत्य ही महान् महान् असि हो। देवानाम् देवों के महना महिमा से असुर्यः अजन्मा पुरोहितो पुरोहित, अग्रगामी, हितकारी विभु विशेष हुआ ज्योतिः प्रकाश अदाभ्यम् अनिन्द्य, निन्दारहित (हो) ॥ 12 ॥

भावार्थ - परमात्मा सत्य ही सबसे महान् है, वह अजन्मा, अनिन्दनीय, विभु तथा ज्योति-स्वरूप है। 12

विशेष - विभु शब्द वि उपसर्ग सहित भू धातु से बनता है। परमात्मा का होना, उसका अस्तित्व ही विशेष है, शेष सब तो उसकी रचना ही है। असुर्य शब्द में अ उपसर्ग का अर्थ न है। सु धातु का अर्थ उत्पन्न करना या होना है। परमात्म असुर्य अर्थात् उत्पन्न करने योग्य नहीं है, उसको उत्पन्न नहीं किया जा सकता है। वह पुरोहित अग्रगामी है। पुर का अर्थ है पहले, आगे तथा हि धातु का अर्थ है जाना। वह पहले सबका हित करने वाला है। 12

पदार्थ- बट् = सत्य ही, निश्चय ही (अव्यय, निपात)। सूर्य = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। श्रवसा = श्रवः (श्रवण, वाणी) से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। महान् = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। असि = हो (अस् - होना)। सत्रा (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना)। देव = तेजस्वी, देव (देव्, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना)। महान्। असि = हो। महना (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, स्तुति करना आदि)। असुर्यः = असुर्य अर्थात् असुर योग्य, अस्तित्व या प्राण योग्य, वर्तमान योग्य {अस् = होना, अस्तित्व होना, वर्तमान होना, फेंकना, बिखेरना, उड़ाना, असु = प्राण}। पुरोहितो (पुर - अग्रभाग में जाना,

आगे जाना, मुख्य होना)। विभू = विभू (वि + भू = होना, पाना, चिन्तन करना)। ज्योतिः = ज्योति द्वारा (ज्युत - चमकना, प्रकाशित होना)। अदाभ्यम् = अहिंसनीय, अनिन्दनीय (दभ = निन्दा करना, आज्ञा देना) ॥ 12 ॥

(233) सूक्त 102

842. और्वभृगुवत् शुचिम्, अज्वानवत् आ हुवे।

अग्निम् समुद्रवाससम् ॥ 4 ॥ 8-102-4

मन्त्रार्थ - और्वभृगुवत् = ऊर्व को, हिंसक को शुचिम् = पवित्र को अज्वानवत् = अज्वानव, पालन-रक्षण करने वाली वाणी बोलने वाले आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को समुद्रवाससम् = समुद्र में रहने वाला ॥ 4 ॥

पदार्थ - और्वभृगुवत् = ऊर्व को, हिंसक को (ऊर्व - हिंसा करना, सहन करना, मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना, भृ - भरण-पोषण, धारण करना, भृज् - भूँजना, तलना, सेंकना, भृग् = चमकना, तेज होना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना)। शुचिम् = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। अज्वानवत् = अज्वानव, पालन-रक्षण करने वाली वाणी बोलने वाले (अप् - पालन करना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। हुवे = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। समुद्रवाससम् = समुद्र में रहने वाला (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना, वस् = रहना, निवास करना) ॥ 4 ॥

843. अयम् यथा न आभुवत्, त्वष्टा रूपा इव तक्ष्या।

अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥ 8 ॥ 8-102-8

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार न = नहीं, समान, उपमार्थक आभुवत् = होता हुआ त्वष्टा = त्वष्ट, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला रूपा = रूप इव = समान, की भाँति, के समान तक्ष्या = तक्ष योग्य, आच्छादन योग्य अस्य = इसका क्रत्वा = करके, करने के अनन्तर, करने के बाद यशस्वतः = यशवान् हो, यश के समान, यश युक्त ॥ 8 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। आभुवत् = होता हुआ (आ - समन्तात्, पूर्णतः, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। त्वष्टा = त्वष्ट, प्रकाशक, सूक्ष्म करने वाला (त्वक्ष् = छीलना, रेतना, त्विष् = प्रकाशित होना, चमकना)। रूपा = रूप (रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। तक्ष्या = तक्ष योग्य, आच्छादन योग्य (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। क्रत्वा = करके, करने के अनन्तर, करने के बाद (कृ - करना)। यशस्वतः = यशवान् हो, यश के समान, यश युक्त (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) ॥

844. अयम् विश्वा अभि श्रियो, अग्निः देवेषु पत्यते।

आ वाजैः उप नो गमत् ॥ 9 ॥ 8-102-9

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह विश्वा = विश्व, सभी, सब अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा श्रियो = श्री, शोभाओं को अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् देवेषु = देवों में पत्यते = ऐश्वर्यवान् होता है आ = समन्तात्,

सम्यक्, सम्पूर्ण **वाजैः** = वाजियों के लिए, विद्या-गति के लिए **उप** = समीप **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **गमत्** = गया ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **श्रियो** = श्री, शोभाओं को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पत्यते** = ऐश्वर्यवान् होता है (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वाजैः** = वाजियों के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गमत्** = गया (गम् = जाना, जानना, पाना) ॥ 9 ॥

845. यस्य त्रिधातु अवृतम्, बर्हिः तस्थौ असन्दिनम्।

आपः चित् नि दधा पदम् ॥ 14 ॥ 8-102-14

मन्त्रार्थ :- **यस्य** = जिसका **त्रिधातु** = त्रिधातु **अवृतम्** = अवृत को, अनाच्छादन को **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् **तस्थौ** = स्थित किया है, स्थित हैं **असन्दिनम्** = असन्दिन को, सम्यक् अदान को **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक **चित्** = भी, ही **नि** = निश्चित, निरन्तर **दधा** = धारण करो, धारण करते हैं **पदम्** = पद को ॥ 14 ॥

पदार्थ :- **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **त्रिधातु** = त्रिधातु (त्रि - संख्या, सर्वनाम, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अवृतम्** = अवृत को, अनाच्छादन को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **तस्थौ** = स्थित किया है, स्थित हैं (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **असन्दिनम्** = असन्दिन को, सम्यक् अदान को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, दा - देना, काटना, तोड़ना, दी - क्षय होना, हास होना, झरना, नष्ट होना, सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **चित्** = भी, ही। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **दधा** = धारण करो, धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **पदम्** = पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना) ॥ 14 ॥

846. पदम् देवस्य मीहुषो, अनाधृष्टाभिः ऊतिभिः।

भद्रा सूर्यः इव उपदृक् ॥ 15 ॥ 8-102-15

मन्त्रार्थ :- **पदम्** = पद को **देवस्य** = देव का **मीहुषो** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला **अनाधृष्टाभिः** = अनाधृष्टियों, निरभिमानीयों, अजेयों द्वारा **ऊतिभिः** = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा **भद्रा** = कल्याणकारी **सूर्यः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **इव** = समान, की भाँति, के समान **उपदृक्** = उपदृष्टि ॥ 15 ॥

पदार्थ :- **पदम्** = पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **देवस्य** = देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मीहुषो** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मी = समझना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मिह् - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **अनाधृष्टाभिः** = अनाधृष्टियों, निरभिमानीयों, अजेयों द्वारा (अन्

- नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, धृष् = जीतना, अधीर होना, घबराना, धृषा = गर्व करना, स्वयम् को बड़ा समझना)।
ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **भद्रा** =
 कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **सूर्यः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य
 होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **इव** = समान,
 की भाँति, के समान (अव्यय)। **उपदृक्** = उपदृष्टि (उप - समीप, दृश्-पश्य - देखना) ॥ 15 ॥

(234) सूक्त 103

847. अदर्शि गातुवित्तमो, यस्मिन् व्रतानि आ दधुः।

उपो षु जातम् आर्यस्य वर्धनम्, अग्निम् नक्षन्तु नो गिरः ॥ 1 ॥ 8-103-1

मन्त्रार्थ - अदर्शि = देखा हुआ गातुवित्तमो = स्तुति जानने वाले, गान, गायन को जानने वाले यस्मिन् = जिसमें
 व्रतानि = व्रतों को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण दधुः = धारण किया उपो = समीप, निकट षु = अच्छा जातम् =
 उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को आर्यस्य = आर्य, सम्यक् वचन, वाणी, गति, प्राप्ति का वर्धनम् = वृद्धि को अग्निम्
 = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को नक्षन्तु = प्राप्त करते हुए नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो गिरः =
 वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ॥ 1 ॥

पदार्थ - अदर्शि = देखा हुआ (दृश्-पश्य -देखना)। गातुवित्तमो = स्तुति जानने वाले, गान, गायन को जानने
 वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना, विद् = जानना)।
 यस्मिन् = जिसमें (सर्वनाम)। व्रतानि = व्रतों को (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव
 करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्,
 सम्पूर्ण (उपसर्ग)। दधुः = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। उपो = समीप, निकट
 (उपसर्ग, सर्वनाम)। षु = अच्छा। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना,
 उत्पन्न करना)। आर्यस्य = आर्य, सम्यक् वचन, वाणी, गति, प्राप्ति का (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अर् - ऋ - गति,
 ज्ञान, प्राप्ति करना, फैलाना, शब्द करना, ध्वनि करना, महत्व प्रदर्शन करना, हिंसा करना)। वर्धनम् = वृद्धि को (वृध् =
 बढ़ना, चमकना, बोलना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना,
 आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नक्षन्तु = प्राप्त करते हुए (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना)।
 नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना,
 जानना, गृ - शब्द करना) ॥ 1 ॥

848. प्र दैवोदासो अग्निः, देवान् अच्छा न मज्मना।

अनु मातरम् पृथिवीम्, वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ॥ 2 ॥

8-103-2

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक दैवोदासो = दिव्यदास अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् देवान्
 = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ न = नहीं, समान, उपमार्थक मज्मना =
 शब्दकर्ता अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल मातरम् = माता को पृथिवीम् = पृथिवी को वि = विशेष, विना, विलोम वावृते
 = वरण के लिए तस्थौ = स्थित किया है, स्थित हैं नाकस्य = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल का सानवि = हे
 सेवाभावी, दानी ॥ 2 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। दैवोदासो = दिव्यदास (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा
 करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। अग्निः = अग्नि,
 ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)।
 देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द
 करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। न = नहीं,
 समान, उपमार्थक (अव्यय)। मज्मना = शब्दकर्ता (मज् - शब्द करना, ध्वनि करना, कामातुर शब्द करना)। अनु = पश्चात्,

पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **मातरम्** = माता को (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **वावृते** = वरण के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **तस्थौ** = स्थित किया है, स्थित हैं (तस - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **नाकस्य** = नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल का (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क् - नाश होना)। **सानवि** = हे सेवाभावी, दानी (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 2 ॥

849. यस्मात् रेजन्त कृष्टयः, चर्कृत्यानि कृण्वतः ।

सहस्रसाम् मेधसातौ इव त्मना, अग्निम् धीभिः सपर्यत ॥ 3 ॥ 8-103-3

मन्त्रार्थ :- यस्मात् = जिससे रेजन्त = प्रकाशित करते हैं कृष्टयः = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन चर्कृत्यानि = कृत्यों कृण्वतः = करने वाले सहस्रसाम् = हजारों का मेधसातौ = मेधावी और सेवाभावी इव = समान, की भाँति, के समान त्मना = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को धीभिः = बुद्धियों द्वारा, धारणा द्वारा सपर्यत = सेवा करो । 3 ॥

पदार्थ :- यस्मात् = जिससे (सर्वनाम)। रेजन्त = प्रकाशित करते हैं (रेज् - चमकना, प्रकाशित होना)। कृष्टयः = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना)। चर्कृत्यानि = कृत्यों (चर्क - तृप्त करना, प्रतिघात करना, कृ - करना)। कृण्वतः = करने वाले (कृ = करना)। सहस्रसाम् = हजारों का (सहस्र = हजार, संख्या)। मेधसातौ = मेधावी और सेवाभावी (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, सन = सेवा करना, चाकरी करना, सन = दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। त्मना = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा (तु - गति-वृद्धि, हिंसा करना, तम् - इच्छा करना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में अ या आ का लोप हो सकता है)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। धीभिः = बुद्धियों द्वारा, धारणा द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। सपर्यत = सेवा करो (सपर - पूजा करना, सेवा करना) ॥ 3 ॥

850. प्र यम् राये निनीषसि, मर्त्तो यः ते वसो दाशत् ।

स वीरम् धत्ते अग्न, उक्थशंसिनम् त्मना सहस्रपोषिणम् ॥ 4 ॥

8-103-4

मन्त्रार्थ - प्र - प्रकृष्ट, अधिक यम् = जिसे, जिसको, जहाँ राये = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में निनीषसि = ले जाता है मर्त्तो = मरणशील यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए वसो = वसु दाशत् = दाश अर्थात् दान करने वाले स = सहित, साथ वीरम् = पराक्रमी, वीर धत्ते = धारण करने के लिए अग्न = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् उक्थशंसिनम् = उक्ति, कथन की स्तुति करने वाले त्मना = आत्मा द्वारा सहस्रपोषिणम् = हजारों का पोषण करने वाले को ॥ 4 ॥

पदार्थ - प्र - प्रकृष्ट, अधिक। यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। राये = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। निनीषसि = ले जाता है (नि - निरन्तर, निश्चित, नी - ले जाना)। मर्त्तो = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वसो = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। दाशत् = दाश अर्थात् दान करने वाले (दश् = देना)। स = सहित, साथ (उपसर्ग)। वीरम् = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर

होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **धत्ते** = धारण करने के लिए (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। **अग्न** = हे अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् = जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, गति करना, घूमना, टेढ़ा जाना, आगे जाना, लेना, ग्रहण करना)। **उक्थशंसिनम्** = उक्ति, कथन की स्तुति करने वाले (उक् - उच् - वद् - कहना, समझना, शंस = इच्छा करना, स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **त्मना** = आत्मा द्वारा (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में आ का लोप हो सकता है)। **सहस्रपोषिणम्** = हजारों का पोषण करने वाले को (सहस्र = हजार, पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना) ॥ 4 ॥

851. अश्वम् न गीर्भी रथ्यम्, सुदानवो मर्मज्यन्ते देवयवः ।

उभे तोके तनये दस्म विश्पते, पर्षि राधो मघोनाम् ॥ 7 ॥

8-103-7

मन्त्रार्थ :- **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **गीर्भी** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **रथ्यम्** = रथ्य को **सुदानवो** = दानी **मर्मज्यन्ते** = अत्यन्त शुद्ध करते हैं, अत्यन्त पवित्र करते हैं **देवयवः** = देव-यव, देवों से मिलाने वाले, देवों से मिलने वाले **उभे** = दोनों, पूर्णता **तोके** = तोक में, तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास में **तनये** = तनय के लिए **दस्म** = हे रक्षा करने वाले **विश्वपते** = हे विश्व के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी **पर्षि** = पूर्ण करो **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **मघोनाम्** = मघों का, धनवानों का, ऐश्वर्यवानों का ॥ 7 ॥

पदार्थ :- **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **गीर्भी** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **रथ्यम्** = रथ्य को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **सुदानवो** = दानी (सु - उत्तम, अच्छा, दा, दद् = देना)। **मर्मज्यन्ते** = अत्यन्त शुद्ध करते हैं, अत्यन्त पवित्र करते हैं (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **देवयवः** = देव-यव, देवों से मिलाने वाले, देवों से मिलने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **तोके** = तोक में, तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास में (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल होना, दान करना, निवास करना, ग्रहण करना, चमकना)। **तनये** = तनय के लिए (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **दस्म** = हे रक्षा करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **विश्वपते** = हे विश्व के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश्व - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। **पर्षि** = पूर्ण करो (पृ-पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **मघोनाम्** = मघों का, धनवानों का, ऐश्वर्यवानों का (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 7 ॥

852. प्र मंहिष्ठाय गायत, ऋताले बृहते शुक्रशोचिषे ।

उपस्तुतासो अग्नये ॥ 8 ॥

8-103-8

मन्त्रार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मंहिष्ठाय** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **ऋताले** = ऋताल के लिए **बृहते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् **शुक्रशोचिषे** = शुक्र-शुचि के लिए **उपस्तुतासो** = उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले स्तुत्य **अग्नये** = अग्नि के लिए ॥ 8 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मंहिष्ठाय** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् के लिए (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **ऋताब्ने** = ऋताब्ने के लिए (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। **बृहते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **शुक्रशोचिषे** = शुक्र-शुचि के लिए (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **उपस्तुतासो** = उपस्तुति योग्य, समीप स्तुत्य, समीप रहने वाले स्तुत्य (उप - समीप, स्तु = स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अग्नये** = अग्नि के लिए (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥

853. आ वंसते मघवा वीरवत्, यशः समिद्धो द्युम्नी आहुतः ।

कुवित् नो अस्य सुमतिः, भवीयसी अच्छा वाजेभिः अगमत् ॥ 9 ॥ 8-103-9

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वंसते = देता है मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् वीरवत् = वीरयुक्त यशः = यश, कीर्ति समिद्धो = सम्यक् प्रकाशवान् द्युम्नी = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक आहुतः = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त कुवित् = कवि, शब्दज्ञ, शब्दज्ञानी, शब्द को जानने वाला नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अस्य = इसका सुमतिः = सुमति, सुबुद्धि भवीयसी = होते हो अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ वाजेभिः = वाजद्वारा आगमत् = आया ॥ 9 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वंसते = देता है (वंश्-वंस् - देना, बढ़ना, ऊँचा होना, उठना, ऊपर चढ़ना)। मघवा = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। वीरवत् = वीरयुक्त (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। यशः = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। समिद्धो = सम्यक् प्रकाशवान् (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। द्युम्नी = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। आहुतः = आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। कुवित् = कवि, शब्दज्ञ, शब्दज्ञानी, शब्द को जानने वाला (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। सुमतिः = सुमति, सुबुद्धि (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। भवीयसी = होते हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। वाजेभिः = वाजद्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। आगमत् = आया (गम् - जाना, आ-गम् = आना) ॥ 9 ॥

इति अष्टम मण्डल

नवम मण्डल

अनुवाक:- 67

(235) सूक्त 1

854. स्वादिष्टया मदिष्टया, पवस्व सोम धारया।

इन्द्राय पातवे सुतः ॥ 1 ॥ 9-1-1

मन्त्रार्थ :- स्वादिष्टया = स्वादिष्ट द्वारा। मदिष्टया = अत्यन्त आनन्दित द्वारा। पवस्व = पवित्र करो। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम। धारया = धारण द्वारा। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए। पातवे = पालन करने वाले के लिए। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 1 ॥

भावार्थ :- हे सोम, ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता परमात्मा, स्वाद, आनन्द, धारणा द्वारा पवित्र करो। पालन करने वाले इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्यवान् परमात्मा के लिए उत्पन्न हुआ है, ऐश्वर्यवान् है ॥ 1 ॥

पदार्थ- स्वादिष्टया = स्वादिष्ट द्वारा (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। मदिष्टया = अत्यन्त आनन्दित द्वारा (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। पातवे = पालन करने वाले के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 1 ॥

855. रक्षोहा विश्वचर्षणिः, अभि योनिम् अयो हतम्।

द्रुणा सधस्थम् आसदत् ॥ 2 ॥ 9-1-2

मन्त्रार्थ :- रक्षोहा = राक्षस का हनन करने वाला विश्वः = सभी चर्षणिः = आनन्द, चेतना, विचार वाला अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा योनिम् = योनि को अयो = गतिशील, विद्वान् हतम् = मारे गये, हत को द्रुणा = हिंसा, गति, कुटिलता में सधस्थम् = सहस्थान, सहगामी, साथ आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण असदत् = बैठे, स्थित हुए, गये ॥ 2 ॥

भावार्थ :- विश्व-चर्षणिः का अर्थ है सभी विचारशील। अयो अर्थात् गतिशील, विद्वान् के हते मारे जाने पर। द्रोण का अर्थ है हिंसा, गति, कुटिलता। सन्देश है कि विचारशीलता का हनन होने पर राक्षस को मारने वाले कुटिलता, हिंसा में साथ आ जाते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ - रक्षोहा = राक्षस का हनन करने वाला (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना, हन - मार डालना, प्राप्त करना, जाना, किसी प्रकार समाप्त करना)। विश्व = सभी। चर्षणिः = आनन्द, चेतना, विचार वाला (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। अभि - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। योनिम् - योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। अयो (अयः = गतिशील, विद्वान् (अय् = जाना, जानना, पाना)। हतम् = मारे गये, हत में (हन् - मारना)। द्रुणा = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। सधस्थम् = सहस्थान, सहगामी, साथ (सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। आ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। असदत् = बैठे, स्थित हुए, गये (अ = नहीं,

अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 2 ॥

856. वरिवो धातमो भव, मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः ।

परि राधो मघोनाम् ॥ 3 ॥ 9-1-3

मन्त्रार्थ :- वरिवो = वरणीय धातमो = दान, धारण करने वाला भव = भुवः मंहिष्ठो = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा वृत्रहन्तमः = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले परि = पूर्ण करो राधो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि मघोनाम् = मघों का, धनवानों का, ऐश्वर्यवानों का ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वरिवो = वरणीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। धातमो = दान, धारण करने वाला (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। भव = भुवः (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। मंहिष्ठो = महानतम, सर्वाधिक प्रकाशित, सबसे बड़ा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। वृत्रहन्तमः = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। परि = पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना)। राधो = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। मघोनाम् = मघों का, धनवानों का, ऐश्वर्यवानों का (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 3 ॥

(236) सूक्त 2

857. पवस्व देववीः अति, पवित्रम् सोम रंह्या ।

इन्द्रम् इन्दो वृषा विश ॥ 1 ॥ 9-2-1

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो देववीः = देवों को प्राप्त करने वाले अति = बहुत, अत्यधिक पवित्रम् = पवित्र को सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम रंह्या = प्रगतिशील, प्रकाशमान द्वारा इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को इन्दो = इन्दु का वृषा = पराक्रमी विश = प्रतिष्ठित हो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। देववीः = देवों को प्राप्त करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। रंह्या = प्रगतिशील, प्रकाशमान द्वारा (रंह = चलना, वेग से जाना, रंह = चमकना, प्रकाशित होना, बोलना, सम्भाषण करना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। विश = प्रतिष्ठित हो (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना) ॥ 1 ॥

858. आ वच्यस्व महि प्सरो, वृषेन्दो द्युम्वत्तमः ।

आ योनिम् धर्णसिः सदः ॥ 2 ॥ 9-2-2

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वच्यस्व = बोलो महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं प्सरो =

भोक्ता, संरक्षक वृषेन्दो = पराक्रमी इन्दु का द्युम्नवत्तमः = अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान् आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण योनिम् = योनि को धर्णसिः = धारण करने वाला, धारणकर्ता सदः = विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वच्यस्व = बोलो (वच् - बोलना, कहना, समझाना)। महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। प्सरो = भोक्ता, संरक्षक (प्सा - भक्षण करना, संरक्षण करना, पष - जाना, बांधना, फांस लगाना, पष - धारण करना, घर्षण करना)। वृषेन्दो = पराक्रमी इन्दु का (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। द्युम्नवत्तमः = अत्यन्त अग्रगामी, प्रकाशमान् (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। धर्णसिः = धारण करने वाला, धारणकर्ता (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। सदः = विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 2 ॥

859. अधुक्षत प्रियम् मधु, धारा सुतस्य वेधसः।

अपो वसिष्ठ सुक्रतुः ॥ 3 ॥ 9-2-3

मन्त्रार्थ :- अधुक्षत = प्रदीप्त किया प्रियम् = प्रिय को मधु = मीठा, मधु धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का वेधसः = विधान करने वाले अपो = पालन करने वाला वसिष्ठ = वसिष्ठ, वास करता है, धारण करता है, आच्छादन करता है सुक्रतुः = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अधुक्षत = प्रदीप्त किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, धुक्ष - प्रदीप्त करना, जलाना, जीना, श्रान्त होना या थक जाना)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। वेधसः = विधान करने वाले (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। अपो = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। वसिष्ठ = वसिष्ठ, वास करता है, धारण करता है, आच्छादन करता है (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। सुक्रतुः = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना) ॥ 3 ॥

860. महान्तम् त्वा महीः अनु, आपो अर्षन्ति सिन्धवः।

यद् गोभिः वासयिष्यसे ॥ 4 ॥ 9-2-4

मन्त्रार्थ :- महान्तम् = महान् को त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा महीः = महान् अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल आपो = आप, व्याप्त, व्यापक अर्षन्ति = प्राप्त होते हैं सिन्धवः = सिन्धु यद् = जिसे, जो गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ वासयिष्यसे = वसाओगे, वास करोगे, आच्छादन करोगे ॥ 4 ॥

पदार्थ :- महान्तम् = महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। महीः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। आपो = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। अर्षन्ति = प्राप्त होते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। सिन्धवः = सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे

से पकड़ना, सिञ्ज - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **यद्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **वासयिष्यसे** = वसाओगे, वास करोगे, आच्छादन करोगे (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 4 ॥

861. समुद्रो अप्सु मामृजे, विष्टम्भो धरुणो दिवः ।

सोमः पवित्रे अस्मयुः ॥ 5 ॥

9-2-5

मन्त्रार्थ :- समुद्रो = समुद्र अप्सु = पालन-रक्षण में मामृजे = शुद्ध किया जाता है, पवित्र किया जाता है विष्टम्भो = विस्तृत धरुणो = धारणकर्ता, धारण करने वाला दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अस्मयुः = हमारा ॥ 5 ॥

पदार्थ :- समुद्रो = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। अप्सु = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। मामृजे = शुद्ध किया जाता है, पवित्र किया जाता है (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। विष्टम्भो = विस्तृत (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। धरुणो = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अस्मयुः = हमारा (सर्वनाम) ॥

862. अचिक्रदत् वृषा हरिः, महान् मित्रो न दर्शतः ।

सम् सूर्येण रोचते ॥ 6 ॥

9-2-6

मन्त्रार्थ :- हरिः हरि ने वृषा पराक्रमी अचिक्रदत् किया, महान् महान् मित्रः मित्र दर्शतः दिखायी न नहीं पड़ता है। सूर्येण सूर्य के सम् सम्यक्, साथ रोचते = प्रकाश करता है ॥ 6 ॥

भावार्थ :- परमात्मा निराकार है, वह दिखायी नहीं देता है। परन्तु हम सबको उसने ही पराक्रमी किया है। उसकी शक्ति से ही हम पराक्रम करने में समर्थ हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अचिक्रदत् = किया (कृ- करना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। महान् = महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। मित्रः = मित्र (मिद - स्निग्ध होना, पिघलना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, प्रीति करना, प्यार करना)। न = नहीं। दर्शतः = दिखता (दृश् - देखना)। सम् = साथ, सम्यक् रूप से, भलीभाँति (उपसर्ग)। सूर्येण = सूर्य के (सुर् = प्रकाश होना, ऐश्वर्य होना)। रोचते = प्रकाश करता है (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना) ॥ 6 ॥

863 गिरः ते इन्दः ओजसा, मर्मज्यन्ते अपस्युवः ।

याभिः मदाय शुम्भसे ॥ 7 ॥

9-2-7

मन्त्रार्थ :- गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्दः = इन्दु का ओजसा = ओज द्वारा मर्मज्यन्ते = शुद्ध किये जाते हैं, पवित्र किये जाते हैं अपस्युवः = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता याभिः = जिसके द्वारा मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए शुम्भसे = शोभित किया जाता है, प्रकाशित किया जाता है ॥ 7 ॥

पदार्थ :- गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्दः = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज -

शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **मर्मज्यन्ते** = शुद्ध किये जाते हैं, पवित्र किये जाते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **अपस्युवः** = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **याभिः** = जिसके द्वारा (सर्वनाम)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शुम्भसे** = शोभित किया जाता है, प्रकाशित किया जाता है (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना) ॥ 7 ॥

864. तम् त्वा मदाय घृष्वये, उ लोक कृत्नुम् ईमहे ।

तव प्रशस्तये महे ॥ 8 ॥ 9-2-8

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए घृष्वये = संघर्षशील, प्रकाश करने वाले के लिए उ = निश्चय ही, भी लोक = लोक कृत्नुम् = कृत को ईमहे = आते हैं, जानते हैं तव = तुम्हारा प्रशस्तये = प्रशस्ति के लिए महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् ॥ 8 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। घृष्वये = संघर्षशील, प्रकाश करने वाले के लिए (घृष - पीसना, कूटना, घिसना, घृ - गीला करना, तरडा देना, सींचना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, घृ - टपकना, क्षरित होना, चमकना, प्रकाशित होना)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। लोक = लोक (लोक = देखना, प्रकाशित होना, बोलना)। कृत्नुम् = कृत को (कृ = करना)। ईमहे = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। प्रशस्तये = प्रशस्ति के लिए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 8 ॥

865. अस्मभ्यम् इन्दो इन्द्रियम्, मधोः पवस्व धारया ।

पर्जन्यो वृष्टिमान् इव ॥ 9 ॥ 9-2-9

मन्त्रार्थ :- अस्मभ्यम् = हमारे लिए इन्दो = इन्दु का इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित मधोः = मधु का पवस्व = पवित्र करो धारया = धार द्वारा पर्जन्यो = पोषण उत्पन्न करने वाले, पर्जन्य वृष्टिमान् = पराक्रमी इव = समान, की भाँति, के समान ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। इन्दो = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। मधोः = मधु का (मधु = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। पर्जन्यो = पोषण उत्पन्न करने वाले, पर्जन्य (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। वृष्टिमान् = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 9 ॥

866. गोषाः इन्दो नृषा असि, अश्वसा वाजसा उत ।

आत्मा यज्ञस्य पूर्यः ॥ 10 ॥ 9-2-10

मन्त्रार्थ :- गोषाः = गो, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक दाता इन्दो = इन्दु का नृषाः = नर, ले जाने वाले दानी असि = हो अश्वसा = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक दानी वाजसा = वाज दानी उत = ही, भी, ओर आत्मा = आत्मा यज्ञस्य = यजन का पूर्यः = पूर्व ॥ 10 ॥

पदार्थ :- गोषाः = गो, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक दाता (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना,

सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। **नृषाः** = नर, ले जाने वाले दानी (नृ - ले जाना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **अश्वसा** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक दानी (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **वाजसा** = वाज दानी (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **आत्मा** = आत्मा (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **यज्ञस्य** = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **पूर्वः** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना) ॥ 10 ॥

(237) सूक्त 3

867. एषः देवो अमर्त्यः, पर्णवीरिव दीयति।

अभि द्रोणानि आसदम् ॥ 1 ॥ 9-3-1

मन्त्रार्थ :- एषः = यह देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **अमर्त्यः** = अमर्त्य **पर्णवीः** = पर्णवी, पूर्ण रूप से व्याप्त, पूर्णता को प्राप्त होने वाला **इव** = समान, की भाँति, के समान **दीयति** = क्षरित होता है **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में **आसदम्** = सम्यक् बैठने को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अमर्त्यः** = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **पर्णवीः** = पर्णवी, पूर्ण रूप से व्याप्त, पूर्णता को प्राप्त होने वाला (पर्ण - हरा करना, हरा होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **दीयति** = क्षरित होता है (दी - ह्रास (ह्रास) होना, झरना, नष्ट होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **आसदम्** = सम्यक् बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 1 ॥

868. एषः देवो विपा कृतो, अति ह्वरांसि धावति।

पवमानो अदाभ्यः ॥ 2 ॥ 9-3-2

मन्त्रार्थ :- एषः = यह देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **विपा** = विशेष रक्षक, पालक **कृतो** = किया **अति** = बहुत, अत्यधिक **ह्वरांसि** = अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल **धावति** = दौड़ता है **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **अदाभ्यः** = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **विपा** = विशेष रक्षक, पालक (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना)। **कृतो** = किया (कृ = करना, कृत - कतरना, काटना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **ह्वरांसि** = अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल (ह्वे = पुकारना, ह्वृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना, निवास करना)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अदाभ्यः** = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना, आज्ञा देना, दा - देना) ॥ 2 ॥

869. एषः देवो विपन्युभिः, पवमानः ऋतायुभिः ।

हरिः वाजाय मृज्यते ॥ 3 ॥ 9-3-3

मन्त्रार्थ :- एषः = यह देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **विपन्युभिः** = विशेष व्यवहारों, स्तुति करने वालों द्वारा **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **ऋतायुभिः** = ऋतायुओं, ऋत तथा आयु द्वारा **हरिः** = हरि **वाजाय** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए **मृज्यते** = शुद्ध करता है, पवित्र करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **विपन्युभिः** = विशेष व्यवहारों, स्तुति करने वालों द्वारा (वि = विशेष, विना, विलोम, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ऋतायुभिः** = ऋतायुओं, ऋत तथा आयु द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **वाजाय** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मृज्यते** = शुद्ध करता है, पवित्र करता है (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना) ॥ 3

870. एषः विश्वानि वार्या, शूरो यन् इव सत्त्वभिः ।

पवमानः सिषासति ॥ 4 ॥ 9-3-4

मन्त्रार्थ :- एषः = यह विश्वानि = सभी वार्या = वार्या, वरणीय, वरण करने योग्य शूरो = शूर, वीर, पराक्रमी यन् = उद्धार करता हुआ इव = समान, की भाँति, के समान सत्त्वभिः = सत्त्वों द्वारा, सत्त्वों द्वारा पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला सिषासति = शुद्ध होता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। वार्या = वार्या, वरणीय, वरण करने योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। शूरो = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। यन् = उद्धार करता हुआ (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचाना, जानना, यन् - उद्धार करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। सत्त्वभिः = सत्त्वों द्वारा, सत्त्वों द्वारा (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सिषासति = शुद्ध होता है (सस् - शुद्ध करना) ॥ 4 ॥

871. एषः देवो रथर्यति, पवमानो दशस्यति ।

आविष्कृणोति वग्वनुम् ॥ 5 ॥ 9-3-5

मन्त्रार्थ :- एषः = यह देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण रथर्यति = रमणीय बनाता है पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला दशस्यति = दान देता है, दिखाता है, समझाता है आविष्कृणोति = आविष्कार करता है, अनावृत्त करता है वग्वनुम् = वग्वनु को, वाणी-सेवायुक्त को ॥ 5 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। रथर्यति = रमणीय बनाता है (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। दशस्यति = दान देता है, दिखाता है, समझाता है (दाश् - देना, दश् - डसना, काटना, दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। आविष्कृणोति = आविष्कार करता है, अनावृत्त करता है (आविः = सम्मुख, प्रत्यक्ष, अनावृत्त (उपसर्ग), कृ = करना)। वग्वनुम् = वग्वनु को, वाणी-सेवायुक्त को (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना,

पढ़ना, अध्ययन करना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना) ॥ 5 ॥

872. एषः विप्रैः अभिष्टुतो, अपो देवो वि गाहते ।

दधत् रत्नानि दाशुषे ॥ 6 ॥

9-3-6

मन्त्रार्थ :- एषः = यह विप्रैः = विप्रों द्वारा, विशेष पूर्णों द्वारा, विशेष पूर्ण करने वालों द्वारा **अभिष्टुतो** = अभिस्तुति, अभिस्तुत्य **अपो** = पालन करने वाला **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **वि** = विशेष, विना, विलोम **गाहते** = विलोडन करता है **दधत्** = धारण किया **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न **दाशुषे** = दानी के लिए ॥ 6 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। विप्रैः = विप्रों द्वारा, विशेष पूर्णों द्वारा, विशेष पूर्ण करने वालों द्वारा (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **अभिष्टुतो** = अभिस्तुति, अभिस्तुत्य (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **गाहते** = विलोडन करता है (गाह - नष्ट करना, मर्म भेद करना, फेरना, हिलाना, गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **दधत्** = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **रत्नानि** = मूल्यवान्, रत्न (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना) ॥ 6 ॥

873. एषः दिवम् वि धावति, तिरो रजांसि धारया ।

पवमानः कनिक्रदत् ॥ 7 ॥

9-3-7

मन्त्रार्थ :- एषः = यह दिवम् = दिव को, तेजस्वी को **वि** = विशेष, विना, विलोम **धावति** = दौड़ता है **तिरो** = पार कराने वाले **रजांसि** = लोकों को, रजः को **धारया** = धार द्वारा **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए ॥ 7 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। दिवम् = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **तिरो** = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **रजांसि** = लोकों को, रजः को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना) ॥ 7 ॥

874. एषः दिवम् व्यासरत्,

तिरो रजांसि अस्तृतः ।

पवमानः स्वध्वरः ॥ 8 ॥

9-3-8

मन्त्रार्थ :- एषः = यह दिवम् = दिव को, तेजस्वी को **व्यासरत्** = जाता है, आता है **तिरो** = पार कराने वाले **रजांसि** = लोकों को, रजः को **अस्तृतः** = अनाच्छादित, अपूर्ण **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **स्वध्वरः** = स्वध्वर, स्वयम् धारित ॥ 8 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। दिवम् = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना,

स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **व्यासरत्** = जाता है, आता है (वि - विशेष, आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, आगम, सु - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **तिरो** = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **रजांसि** = लोकों को, रजः को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **अस्तृतः** = अनाच्छादित, अपूर्ण (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तृ - पूर्ण करना, आच्छादित करना, ढकना, फैलाना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **स्वध्वरः** = स्वध्वर, स्वयम् धारित (स्व = निज, अपना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना) ॥ 8 ॥

875. एषः प्रत्नेन जन्मना, देवो देवेभ्यः सुतः।

हरिः पवित्रे अर्षति ॥ 9 ॥

9-3-9

मन्त्रार्थ :- एषः = यह प्रत्नेन = प्रसिद्ध, प्रकृष्टता, विस्तार द्वारा जन्मना = जन्म से, जन्म द्वारा देवो = देव देवेभ्यः = देवों के लिए सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए हरिः = हरि पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है ॥ 9 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। प्रत्नेन = प्रसिद्ध, प्रकृष्टता, विस्तार द्वारा (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। जन्मना = जन्म से, जन्म द्वारा (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। देवो = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवेभ्यः = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचाना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना) ॥ 9 ॥

876. एषः उ स्य पुरुव्रतो, जज्ञानो जनयन् इषः।

धारया पवते सुतः ॥ 10 ॥

9-3-10

मन्त्रार्थ :- एषः = यह उ = निश्चय ही, भी स्य = वह, बन्धन पुरुव्रतो = पुरुव्रती, अग्रणी व्रतधारी जज्ञानो = उत्पन्न किया, जाना जनयन् = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि धारया = धार द्वारा पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 10 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। स्य = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। पुरुव्रतो = पुरुव्रती, अग्रणी व्रतधारी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, वृत् - रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ - नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। जज्ञानो = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। जनयन् = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 10 ॥

(238) सूक्त 4

877. सन आ च सोम जेषि, च पवमान महि श्रवः ।

अथा नो वस्यसः कृधि ॥ 1 ॥ 9-4-1

मन्त्रार्थ :- सन = सेवा, दान, पूजा कर आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण च = और। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम जेषि = सेवा, विजय करो च = और। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं श्रवः = श्रवण करने वाले अथा = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वस्यसः = वसने वाले कृधि = करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- सन = सेवा, दान, पूजा कर (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। च = और। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। जेषि = सेवा, विजय करो (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। च = और। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। श्रवः = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। अथा = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वस्यसः = वसने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। कृधि = करो (कृ = करना) ॥ 1 ॥

878. रयिम् नः चित्रम् अश्विनम्, इन्दो विश्वायुम् आ भर ।

अथा नो वस्यसः कृधि ॥ 10 ॥ 9-4-10

मन्त्रार्थ :- रयिम् = विद्या, ज्ञान को नः = हमको, हमारे लिए, हमारा चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को अश्विनम् = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक को इन्दो = इन्दु का विश्वायुम् = सम्पूर्ण आयु को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो अथा = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वस्यसः = वसने वाले कृधि = करो ॥ 10 ॥

पदार्थ :- रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। अश्विनम् = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। विश्वायुम् = सम्पूर्ण आयु को (विश्व + आयुः, विश्व - सभी, सर्वनाम, अय - जाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। अथा = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वस्यसः = वसने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। कृधि = करो (कृ = करना) ॥ 10 ॥

(239) सूक्त 6

879. मन्द्रया सोम धारया, वृषा पवस्व देवयुः ।

अव्यो वारेषु अस्मयुः ॥ 1 ॥ 9-6-1

मन्त्रार्थ - मन्द्रया = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा सोम = हे ऐश्वर्यवान्

सृष्टिकर्ता, सोम धारया = धार द्वारा वृषा = पराक्रमी पवस्व = पवित्र करो देवयुः = देव-यु, देव-मिलन अव्यो = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा वारेषु = वरणों , इच्छाओं का अस्मयुः = हमारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - मन्द्रया = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **देवयुः** = देव-यु, देव-मिलन (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारेषु** = वरणों , इच्छाओं का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अस्मयुः** = हमारा (सर्वनाम) ॥ 1 ॥

(240) सूक्त 7

880. असृग्रम् इन्दवः पथा, धर्मन् ऋतस्य सुश्रियः।

विदानाः अस्य योजम् ॥ 1 ॥ 9-7-1

मन्त्रार्थ :- असृग्रम् = सृजित किया, असृजनकर्ता को **इन्दवः** = इन्दुगण **पथा** = पथ **धर्मन्** = धर्म **ऋतस्य** = ऋत का **सुश्रियः** = उत्तम श्री **विदानाः** = विद्वान्, दानी **अस्य** = इसका **योजनम्** = योजना को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- असृग्रम् = सृजित किया, असृजनकर्ता को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **पथा** = पथ (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। **धर्मन्** = धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सुश्रियः** = उत्तम श्री (सु - अच्छा, सुन्दर, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **विदानाः** = विद्वान्, दानी (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **योजनम्** = योजना को (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना) ॥ 1 ॥

881. प्र धारा मध्वोः अग्रियो, महीः अपो वि गाहते।

हविः हविःषु वन्द्यः ॥ 2 ॥ 9-7-2

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **धारा** = धार **मध्वोः** = मधु का **अग्रियो** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य **महीः** = मही, महिमावान्, महान् **अपो** = पालन करने वाला **वि** = विशेष, विना, विलोम **गाहते** = विलोड़न करता है **हविः** = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य **हविःषु** = हवियों, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य में **वन्द्यः** = वन्दनीय, स्तुति करने योग्य ॥ 2 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **धारा** = धार (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण

करना, रक्षा करना, दान करना)। **मध्वोः** = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **अग्रियो** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **महीः** = मही, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **गाहते** = विलोडन करता है (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, गाह - नष्ट करना, मर्म भेद करना, फेरना, हिलाना)। **हविः** = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **हविःषु** = हवियों, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य में (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **वन्द्यः** = वन्दनीय, स्तुति करने योग्य (वन्द् = स्तुति करना, प्रणाम करना, वन्दना करना, प्रशंसा करना) ॥ 2 ॥

882. प्र युजो वाचो अग्रियो, वृषा अव चक्रदत् वने।

सद्म अभि सत्यो अध्वरः ॥ 3 ॥

9-7-3

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **युजो** = युक्त कीजिये **वाचो** = वाणी **अग्रियो** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य **वृषा** = पराक्रमी **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **चक्रदत्** = किया **वने** = वाणी में, वनों में **सद्म** = सदन, स्थान **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सत्यो** = सत्य **अध्वरः** = अहिंसक, अवर्णनीय ॥ 3 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **युजो** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **वाचो** = वाणी (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **अग्रियो** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष् - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **चक्रदत्** = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। **वने** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **सद्म** = सदन, स्थान (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सत्यो** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **अध्वरः** = अहिंसक, अवर्णनीय (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना) ॥ 3 ॥

883. परि यत् काव्या कविः, नृम्णा वसानो अर्षति।

स्वः वाजी सिषासति ॥ 4 ॥

9-7-4

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ **यत्** = जिसे, जो **काव्या** = काव्य **कविः** = ज्ञानी, कवि **नृम्णा** = नर, ले जाने वाले **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **सिषासति** = शुद्ध होता है ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **काव्या** = काव्य (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **नृम्णा** = नर, ले जाने वाले (नृ - ले जाना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना,

उत्पन्न करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सिषासति** = शुद्ध होता है (सस् - शुद्ध करना) ॥ 4 ॥

884. पवमानो अभि स्पृधो, विशो राजा इव सीदति ।

यत् ईम् ऋण्वन्ति वेधसः ॥ 5 ॥

9-7-5

मन्त्रार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **स्पृधो** = स्पर्धा करने वाले **विशो** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **राजा** = राजा **इव** = समान, की भाँति, के समान **सीदति** = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है **यत्** = जिसे, जो **ईम्** = समान, इस प्रकार **ऋण्वन्ति** = जाते हैं **वेधसः** = विद्वान् ॥ 5 ॥

पदार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **स्पृधो** = स्पर्धा करने वाले (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **विशो** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सीदति** = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **ऋण्वन्ति** = जाते हैं (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **वेधसः** = विद्वान् (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) ॥ 5 ॥

885. अव्या वारे परि प्रियो, हरिः वनेषु सीदति ।

रेभो वनुष्यते मती ॥ 6 ॥

9-7-6

मन्त्रार्थ :- अव्या = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा **वारे** = वरण में, इच्छाओं में **परि** = सभी तरफ **प्रियो** = प्रिय **हरिः** = हरि **वनेषु** = वाणी में, वनों में **सीदति** = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है **रेभो** = शब्दकर्ता **वनुष्यते** = सेवन किया जाता है, वास किया जाता है **मती** = मति वाले ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अव्या = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारे** = वरण में, इच्छाओं में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रियो** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **वनेषु** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **सीदति** = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **रेभो** = शब्दकर्ता (रेभ - शब्द करना)। **वनुष्यते** = सेवन किया जाता है, वास किया जाता है (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वनु - याचना करना, मांगना)। **मती** = मति वाले (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना) ॥ 6 ॥

886. स वायुम् इन्द्रम् अश्विना, साकम् मदेन गच्छति ।

रणा यो अस्य धर्मभिः ॥ 7 ॥

9-7-7

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **वायुम्** = वायु को **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **अश्विना** = अश्विन, तीव्र गति युक्त,

व्यापक साकम् = साथ मदेन = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें गच्छति = जाता है रणा = रण यो = जो अस्य = इसका धर्मभिः = धर्म द्वारा ॥ 7 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। वायुम् = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। साकम् = साथ (अव्यय)। मदेन = आनन्दित करते हैं, तृप्त करें। (मद् - हर्षित होना, हर्षित करना, तृप्त करना)। गच्छति = जाता है (गम्, गच्छ् = जाना)। रणा = रण (रण् - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। यो = जो (सर्वनाम)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। धर्मभिः = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना) ॥ 7 ॥

887. आ मित्रे वरुणे भगम्, मध्वः पवन्ते ऊर्मयः ।

विदानाः अस्य शक्मभिः ॥ 8 ॥ 9-7-8

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मित्रे = मित्र के लिए वरुणे = वरुण में, के लिए भगम् = भग, सेवा, सेवन को मध्वः = मधु का पवन्ते = पवित्र करते हैं, पालन करते हैं, रक्षा करते हैं ऊर्मयः = ऊर्मियाँ विदानाः = विद्वान्, दानी अस्य = इसका शक्मभिः = शक्तिवानों क्षमयुक्तों, सामर्थ्ययुक्तों द्वारा ॥ 8 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मित्रे = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। वरुणे = वरुण में, के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। भगम् = भग, सेवा, सेवन को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। मध्वः = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। पवन्ते = पवित्र करते हैं, पालन करते हैं, रक्षा करते हैं (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। ऊर्मयः = ऊर्मियाँ (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। विदानाः = विद्वान्, दानी (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। शक्मभिः = शक्तिवानों क्षमयुक्तों, सामर्थ्ययुक्तों द्वारा (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना) ॥ 8 ॥

888. अस्मभ्यम् रोदसी रयिम्, मध्वो वाजस्य सातये ।

श्रवो वसूनि सम्-जितम् ॥ 9 ॥ 9-7-9

मन्त्रार्थ :- अस्मभ्यम् = हमारे लिए रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले रयिम् = विद्या, ज्ञान को मध्वो = मधुरता का वाजस्य = विद्या का, गति का सातये = सतत गतिशीलता के साथ श्रवो = श्रवण करने वाले वसूनि = वसुओं को सम्-जितम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति जीतने वाले को ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। मध्वो = मधुरता का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। वाजस्य = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सातये = सतत गतिशीलता के साथ (स - सहित, साथ, अत् = सतत् गति करना)। श्रवो = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-

अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सम्-जितम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति जीतने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना) ॥ 9 ॥

(241) सूक्त 8

889. एते सोमाः अभि प्रियम्, इन्द्रस्य कामम् अक्षरन्।

वर्धन्तो अस्य वीर्यम् ॥ 1 ॥ 9-8-1

मन्त्रार्थ :- एते = यह सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा प्रियम् = प्रिय को इन्द्रस्य = इन्द्र का कामम् = कामना, इच्छा को अक्षरन् = क्षरित हुए वर्धन्तो = बढ़ाता हुआ अस्य = इसका वीर्यम् = वीर को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एते = यह (सर्वनाम)। सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। कामम् = कामना, इच्छा को (कम - चाहना, इच्छा करना)। अक्षरन् = क्षरित हुए (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। वर्धन्तो = बढ़ाता हुआ (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। वीर्यम् = वीर को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 1 ॥

890. पुनानासः चमूषदो, गच्छन्तो वायुम् अश्विना।

ते नो धत्त सुवीर्यम् ॥ 2 ॥ 9-8-2

मन्त्रार्थ :- पुनानासः = अनेक पवित्रकर्ता चमूषदो = प्राप्त करने वाला, प्राप्ति के लिए जाने वाला गच्छन्तो = जाते हुए वायुम् = वायु को अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नो = हमको, हमारे लिए, हमारा धत्त = धारण, पोषण करो सुवीर्यम् = उत्तम वीर को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- पुनानासः = अनेक पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। चमूषदो = प्राप्त करने वाला, प्राप्ति के लिए जाने वाला (चम् - खाना, पाना, सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। गच्छन्तो = जाते हुए (गम्-गच्छ् = जाना)। वायुम् = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। अश्विना = अश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। धत्त = धारण, पोषण करो (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 2 ॥

891. इन्द्रस्य सोम राधसे, पुनानो हार्दि चोदय।

ऋतस्य योनिम् आसदम् ॥ 3 ॥ 9-8-3

मन्त्रार्थ :- इन्द्रस्य = इन्द्र का सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम राधसे = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो पुनानो = पवित्रकर्ता हार्दि = हृदय में चोदय = प्रेरित करो, प्रेरणा दो ऋतस्य = ऋत का योनिम् = योनि को आसदम् = सम्यक् बैठने को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना,

स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **हार्दि** = हृदय में (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आसदम्** = सम्यक् बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 3 ॥

892. मृजन्ति त्वा दश क्षिपो, हिन्वन्ति सप्त धीतयः ।

अनु विप्रा अमादिषुः ॥ 4 ॥ 9-8-4

मन्त्रार्थ :- मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा दश = दश क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं सप्त = सात धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले अमादिषुः = आनन्दित हुए, तृप्त हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। दश = दश (दश = दश, संख्या)। क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला (क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना)। हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। सप्त = सात (संख्या)। धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। अमादिषुः = आनन्दित हुए, तृप्त हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, तृप्त करना, समाधान करना) ॥ 4 ॥

893. देवेभ्यः त्वा मदाय कम्, सृजानम् अति मेष्यः ।

सम् गोभिः वासयामः असि ॥ 5 ॥ 9-8-5

मन्त्रार्थ :- देवेभ्यः = देवों के लिए त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए कम् = किसको सृजानम् = त्याग करने वाले को, उत्पन्न करने वाले को अति = बहुत, अत्यधिक मेष्यः = मेष्य, सिञ्चन करने वाला, प्रोक्षण करने वाला सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ वासयामः = वास करते हैं, आच्छादन करते हैं, धारण करते हैं असि = हो ॥ 5 ॥

पदार्थ :- देवेभ्यः = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। कम् = किसको (सर्वनाम)। सृजानम् = त्याग करने वाले को, उत्पन्न करने वाले को (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना)। अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। मेष्यः = मेष्य, सिञ्चन करने वाला, प्रोक्षण करने वाला (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। वासयामः = वास करते हैं, आच्छादन करते हैं, धारण करते हैं (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 5 ॥

894. पुनानः कलशेषु आ, वस्त्राणि अरुषो हरिः ।

परि गव्यानि अव्यत ॥ 6 ॥ 9-8-6

मन्त्रार्थ :- पुनानः = पवित्रकर्ता कलशेषु = कलशों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम वस्त्राणि = वस्त्रों

को अरुषो = हिंसक, गतिशील, व्यापक हरिः = हरि परि = सभी तरफ गव्यानि = गव्यों में अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **कलशेषु** = कलशों में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वस्त्राणि** = वस्त्रों को (वस्त्र - प्रेरणा करना, प्रातः होना, प्रभात होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अरुषो** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **गव्यानि** = गव्यों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अव्यत** = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, व्याप्त होना, प्रकाश करना) ॥ 6 ॥

895. मघोनः आ पवस्व नो, जहि विश्वा अप द्विषः ।

इन्दो सखायम् आ विश ॥ 7 ॥ 9-8-7

मन्त्रार्थ :- मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **पवस्व** = पवित्र करो **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **जहि** = हनन करो, नष्ट करो **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अप** = दूर, नीचे, अपकार **द्विषः** = द्वेष करने वाला **इन्दो** = इन्दु का **सखायम्** = मित्र को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **विश** = प्रतिष्ठित हो ॥

पदार्थ :- मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **सखायम्** = मित्र को (सख् = मित्र होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **विश** = प्रतिष्ठित हो (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना) ॥ 7 ॥

896. वृष्टिम् दिवः परिस्रव, द्युम्नम् पृथिव्या अधि ।

सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥ 8 ॥ 9-8-8

मन्त्रार्थ :- वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **परिस्रव** = सर्वत्रगामी, सर्वत्र प्रवाहित, विद्वान् **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को **पृथिव्या** = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **सहो** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पृत्सु** = पूर्णता में, जीवन में **धाः** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **परिस्रव** = सर्वत्रगामी, सर्वत्र प्रवाहित, विद्वान् (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्त्रु = जाना, बहना, जानना, पाना)। **द्युम्नम्** = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **पृथिव्या** = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सहो** =

सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पृत्सु** = पूर्णता में, जीवन में (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **धाः** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो, दान करो (धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना) ॥ 8 ॥

897. नृचक्षसम् त्वा वयम्, इन्द्रपीतम् स्वर्विदम्।

भक्षीमहि प्रजाम् इषम् ॥ 9 ॥ 9-8-9

मन्त्रार्थ :- नृचक्षसम् = नरों को देखने वाले त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वयम् = हम, हम सब, हम लोग इन्द्रपीतम् = इन्द्रपीत को स्वर्विदम् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् भक्षीमहि = आत्मसात् करें, भक्षण करें, ग्रहण करें, प्रदान करें प्रजाम् = प्रजा को इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को ॥ 9 ॥

पदार्थ :- नृचक्षसम् = नरों को देखने वाले (नृ- ले जाना, चक्ष - देखना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। इन्द्रपीतम् = इन्द्रपीत को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, पी- पीना, पाशन करना)। स्वर्विदम् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। भक्षीमहि = आत्मसात् करें, भक्षण करें, ग्रहण करें, प्रदान करें (भक्ष - खाना, ग्रहण करना)। प्रजाम् = प्रजा को (प्र - बहुत, प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 9 ॥

(242) सूक्त 9

898. परि प्रिया दिवः कविः, वयांसि नप्त्योः हितः।

सुवानो याति कविक्रतुः ॥ 1 ॥ 9-9-1

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ प्रिया = प्रिय दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय कविः = ज्ञानी, कवि वयांसि = वय या रचना युक्त को नप्त्योः = प्राप्त करने वाले, विद्वान् हितः = हित, गति, वृद्धि सुवानो = उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्य वाला याति = जाता है कविक्रतुः = शब्द करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। प्रिया = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। वयांसि = वय या रचना युक्त को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। नप्त्योः = प्राप्त करने वाले, विद्वान् (न - नहीं, नप - पहुँचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। हितः = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। सुवानो = उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्य वाला (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, स्वन - शब्द करना)। याति = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। कविक्रतुः = शब्द करने वाले (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना, कृ - करना) ॥ 1 ॥

899. प्र प्र क्षयाय पन्यसे, जनाय जुष्टो अद्रुहे।

वीति अर्ष चनिष्टया ॥ 2 ॥ 9-9-2

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक क्षयाय = निवास के लिए पन्यसे = स्तुति करने वाले के लिए, स्तुति करते हो जनाय = जन के लिए जुष्टो = सेवित, विचारशील, सेवाभावी अद्रुहे = अद्रोही, द्रोह न करने वाला वीति = गति, व्याप्ति, प्रकाश अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन चनिष्टया = वाणी, विश्वास के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। क्षयाय = निवास के लिए (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। पन्यसे = स्तुति करने वाले के लिए, स्तुति करते हो (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। जनाय = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। जुष्टो = सेवित, विचारशील, सेवाभावी (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। अद्रुहः = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना)। वीति = गति, व्याप्ति, प्रकाश (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। चनिष्टया = वाणी, विश्वास के लिए (चन् - स्मरण करना, शब्द करना, विश्वास करना, मिलाना, अलग करना, हिंसा करना) ॥ 2 ॥

900. सः सूनुः मातरा शुचिः, जातो जाते अरोचयत्।

महान् मही ऋतावृधा ॥ 3 ॥ 9-9-3

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने सूनुः = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य मातरा = माता के शुचिः = शुद्धता जातो = उत्पन्न जाते = उत्पन्न हुए में अरोचयत् = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ महान् = बड़े, पूज्य, महान् मही = महान् ऋतावृधा = ऋतावृध, ऋत से वर्धित ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। सूनुः = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। मातरा = माता के (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। शुचिः = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। जातो = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। जाते = उत्पन्न हुए में (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अरोचयत् = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। मही = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। ऋतावृधा = ऋतावृध, ऋत से वर्धित (ऋ = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 3 ॥

(243) सूक्त 10

901. प्र स्वानासो रथा इव, अर्वन्तो न श्रवस्यवः।

सोमासो राये अक्रमुः ॥ 1 ॥ 9-10-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक स्वानासो = शब्द करते हुए रथा = रथ इव = समान, की भाँति, के समान अर्वन्तो = अर्वन्त, प्रगतिशील, विद्वान् न = नहीं, समान, उपमार्थक श्रवस्यवः = उत्तम विद्वान्, उत्तम श्रवणशील, उत्तम प्रगतिशील सोमासो = अनेक ऐश्वर्यमय राये = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में अक्रमुः = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। स्वानासो = शब्द करते हुए (स्वन - शब्द करना)। रथा = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। अर्वन्तो = अर्वन्त, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक

(अव्यय)। **श्रवस्यवः** = उत्तम विद्वान्, उत्तम श्रवणशील, उत्तम प्रगतिशील (सु - अच्छा, सुन्दर, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **राये** = विद्या, गतिशीलता में, प्राप्ति के लिए, शब्द अर्थात् वाणी में (रै = शब्द करना, रय् = गति करना, जाना, रा - देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना)। **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

902. हिन्वानासो रथा इव, दधन्विरे गभस्त्योः ।

भरासः कारिणाम् इव ॥ 2 ॥ 9-10-2

मन्त्रार्थ :- हिन्वानासो = संतृप्त करते हुए, प्रेरणा देते हुए **रथा** = रथ **इव** = समान, की भाँति, के समान **दधन्विरे** = दधन्विर के लिए **गभस्त्योः** = गहन **भरासः** = भरण करने वाले **कारिणाम्** = कारियों का, कर्त्ताओं का **इव** = समान, की भाँति, के समान ॥ 2 ॥

पदार्थ :- हिन्वानासो = संतृप्त करते हुए, प्रेरणा देते हुए (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **रथा** = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **दधन्विरे** = दधन्विर के लिए (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **गभस्त्योः** = गहन (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **भरासः** = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **कारिणाम्** = कारियों का, कर्त्ताओं का (कृ - करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 2 ॥

903. राजानो न प्रशस्तिभिः, सोमासो गोभिः अञ्जते ।

यज्ञो न सप्त धातृभिः ॥ 3 ॥ 9-10-3

मन्त्रार्थ :- राजानो = राजा **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **प्रशस्तिभिः** = प्रशस्तियों द्वारा **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **अञ्जते** = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है **यज्ञो** = यजन **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सप्त** = सात, पूर्ण, संलग्न **धातृभिः** = धारण करने वालों द्वारा, धाताओं द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- राजानो = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्रशस्तिभिः** = प्रशस्तियों द्वारा (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शास्-शस् - अनुशासन करना, इच्छा करना, आशीर्वाद देना, शस् - काटना, मारना, हिंसा करना)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **अञ्जते** = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है (अञ्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **यज्ञो** = यजन (यज् = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सप्त** = सात, पूर्ण, संलग्न (सप - पूर्ण होना, पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **धातृभिः** = धारण करने वालों द्वारा, धाताओं द्वारा (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 3 ॥

904. परि सुवानासः इन्दवो, मदाय बर्हणा गिरा ।

मधो अर्षन्ति धारया ॥ 4 ॥ 9-10-4

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ **सुवानासः** = उत्पन्न करते हुए ऐश्वर्य करते हुए **इन्दवो** = इन्दुगण **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **बर्हणा** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् **गिरा** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **मधो** = मधु का **अर्षन्ति** = अन्तर्गमन

करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं धारया = धार द्वारा ॥ 4 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। सुवानासः = उत्पन्न करते हुए ऐश्वर्य करते हुए (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। इन्दवो = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। बर्हणा = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। गिरा = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। मधो = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अर्षन्ति = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 4 ॥

905. आपानासो विवस्वतो, जनन्तः उषसो भगम्।

सूराः अण्वम् वि तन्वते ॥ 5 ॥ 9-10-5

मन्त्रार्थ :- आपानासो = सम्पूर्ण रक्षण करने वाले, पान करने वाले विवस्वतो = विशेष वास वाले जनन्तः = उत्पन्न करता है, प्रकट करता है उषसो = उषायें भगम् = भग, सेवा को सूराः = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् अण्वम् = प्राणवान्, सूक्ष्म, शब्दकर्ता को वि = विशेष, विना, विलोम तन्वते = विस्तार करता है ॥ 5 ॥

पदार्थ :- आपानासो = सम्पूर्ण रक्षण करने वाले, पान करने वाले (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। विवस्वतो = विशेष वास वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। जनन्तः = उत्पन्न करता है, प्रकट करता है (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। उषसो = उषायें (उषस् - प्रभात होना, पौ फटना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। भगम् = भग, सेवा को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। सूराः = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। अण्वम् = प्राणवान्, सूक्ष्म, शब्दकर्ता को (अन्-अण् - प्राण होना, सूक्ष्म होना, शब्द करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। तन्वते = विस्तार करता है (तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 5 ॥

906. अप द्वारा मतीनाम्, प्रत्नाः ऋण्वन्ति कारवः।

वृष्णो हरसे आयवः ॥ 6 ॥ 9-10-6

मन्त्रार्थ :- अप = दूर, नीचे, अपकार द्वारा = द्वार मतीनाम् = मतियों के प्रत्नाः = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति ऋण्वन्ति = जाते हैं कारवः = करने वाला वृष्णो = वर्षा करने वाला, पराक्रमी हरसे = हर के लिए आयवः = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। द्वारा = द्वार (द्व-द्वृ - वरण करना, स्वीकार करना, आच्छादन करना, अपनाना, रोकना)। मतीनाम् = मतियों के (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। प्रत्नाः = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। ऋण्वन्ति = जाते हैं (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। कारवः = करने वाला (कृ - करना)। वृष्णो = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। हरसे = हर के लिए (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। आयवः = उपसंहार करना, मिश्रित

करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना) ॥ 6 ॥

907. समीचीनासः आसते, होतारः सप्तजामयः ।

पदम् एकस्य पिप्रतः ॥ 7 ॥

9-10-7

मन्त्रार्थ :- समीचीनासः = पूजक, विद्वान् आसते = बैठता है होतारः = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले सप्तजामयः = जनसमूह, जानने वालों का समूह पदम् = पद एकस्य = एक का पिप्रतः = पूर्ण करने वाले ॥ 7 ॥

पदार्थ :- समीचीनासः = पूजक, विद्वान् (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इज् - पूजना, जाना, जानना)। आसते = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। होतारः = आह्वान्, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। सप्तजामयः = जनसमूह, जानने वालों का समूह (सप - पूर्ण होना, पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना, जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। पदम् = पद (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। एकस्य = एक का (एक = एक संख्या)। पिप्रतः = पूर्ण करने वाले (पृ - पूर्ण करना, भरना) ॥

908. नाभा नाभिम् नः आ ददे, चक्षुः चित् सूर्ये सचा ।

कवेः अपत्यम् आ दुहे ॥ 8 ॥

9-10-8

मन्त्रार्थ :- नाभा = नाभि में नाभिम् = नाभि को नः = हमको, हमारे लिए, हमारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ददे = दिया, दान किया चक्षुः = नेत्रों से, दृष्टि से, स्पष्ट वाणी से चित् सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को दृशे = देखने के लिए कवेः = कवि अपत्यम् = अपत्य, पाल्य, पालनीय को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण दुहे = दुह के लिए ॥

पदार्थ :- नाभा = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। नाभिम् = नाभि को (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ददे = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। चक्षुषा = नेत्रों से, दृष्टि से, स्पष्ट वाणी से (चक्षु - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। दृशे = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। कवेः = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। अपत्यम् = अपत्य, पाल्य, पालनीय को (अप् - पालन करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। दुहे = दुह के लिए (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना) ॥ 8 ॥

909. अभि प्रियम् दिवः पदम्, अध्वर्युभिः गुहा हितम् ।

सूरः पश्यति चक्षसा ॥ 9 ॥

9-10-9

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा प्रियम् = प्रिय को दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय पदम् = पद अध्वर्युभिः = अहिंसकों द्वारा गुहा = गुह्य, गुहा हितम् = हित, गति, वृद्धि को सूरः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला पश्यति = देखता है चक्षसा = दृष्टि, वाणी ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। पदम् = पद (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। अध्वर्युभिः = अहिंसकों द्वारा (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। गुहा

= गुह्य, गुहा (गुह - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। **हितम्** = हित, गति, वृद्धि को (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **सूरः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **पश्यति** = देखता है (पश् = देखना)। **चक्षसा** = दृष्टि, वाणी (चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 9 ॥

(244) सूक्त 11

910. उप अस्मै गायता नरः, पवमानाय इन्दवे।

अभि देवान् इयक्षते ॥ 1 ॥ 9-11-1

मन्त्रार्थ- नरः (लोग) अस्मै इस पवमानाय पवित्र करने वाले इन्दवे इन्दु के लिए उप समीप, निकट गायता गायन करते हुए देवान् देवों को अभि सब ओर इयक्षते पूजते हैं ॥ 1 ॥

भावार्थ - इन्दु अर्थात् ऐश्वर्यवान् परमात्मा पवित्र करने वाला है। उसके लिए निकट होकर गायन करना है। निकट होने का भाव स्वयम् की चेतना को उसके साथ लीन कर देना है। हमारी चेतना उसी का अंश है। एकाकार हो जाने पर भेद मिट जाता है। इस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर हम देवों अर्थात् उसकी दिव्य शक्तियों को पूजते हैं। पूजन का अर्थ सन्तुष्ट करना, सेवा करना होता है। जो प्राकृतिक शक्तियाँ हैं, उनका संरक्षण करना ही देवपूजा है। इसी प्रकार देवजनों का भी पूजन करने की भावना अनेक स्थलों पर व्यक्त की गयी है ॥ 1 ॥

विशेष - इयक्षसि क्रिया पद है, इसमें इयक्ष धातु स्पष्ट है। इयक्ष धातु यक्ष (पूजा करना, श्रेष्ठ होना) धातु का ही वैदिक रूप है। यक्ष तथा इयक्ष को स्वतन्त्र धातु मानने पर भी दोनों को समानार्थी माना जाता है।

पदार्थ- नरः = नर (नृ - ले जाना) अस्मै = इस पवमानाय = पवित्र करने वाले (पू - पवित्र करना) इन्दवे = इन्दु के लिए (इन्द - परम ऐश्वर्य होना) उप = समीप, निकट, गायता = गायन करते हुए (गा-गै - गायन करना) देवान् = देवों को (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना), अभि = सब ओर इयक्षते = पूजते हैं (इयक्ष - पूजा करना, श्रेष्ठ होना) ॥ 1 ॥

911. अभि ते मधुना पयो, अथर्वाणो अशिश्युः।

देवम् देवाय देवयुः ॥ 2 ॥ 9-11-2

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए मधुना = मधु द्वारा पयो = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण अथर्वाणो = अविचलित-अहिंसक! अशिश्युः = अशिश्य, व्याप्त किया, प्राप्त परिपक्व किया देवम् = देव को देवाय = देव के लिए देवयुः = देव-यु, देव-मिलन ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मधुना = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। पयो = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण (पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। अथर्वाणो = अविचलित-अहिंसक! (अ - नहीं, थर्व - अस्थिर होना, हिंसा करना)। अशिश्युः = अशिश्य, व्याप्त किया, प्राप्त परिपक्व किया (अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना, अ - नहीं, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। देवम् = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवाय = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवयुः = देव-यु, देव-मिलन (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना) ॥ 2 ॥

912. स नः पवस्व शम् गवे, शम् जनाय शम् अर्वते ।

शम् राजान् ओषधीभ्यः ॥ 3 ॥ 9-11-3

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पवस्व = पवित्र करो शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी जनाय = जन के लिए शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी अर्वते = अर्वत् के लिए शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी राजान् = राजा ओषधीभ्यः = ओषधियों के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। जनाय = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। अर्वते = अर्वत् के लिए (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर् - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। राजान् = राजा (राज - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। ओषधीभ्यः = ओषधियों के लिए (उषध - ओषध = चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना) ॥ 3 ॥

913. बभ्रवे नु स्वतवसे, अरुणाय दिविस्पृशे ।

सोमाय गाथम् अर्चत ॥ 4 ॥ 9-11-4

मन्त्रार्थ :- बभ्रवे = भरण पोषण करने वाले के लिए नु = ही, भी स्वतवसे = अपनी गति-वृद्धि के लिए अरुणाय = अरुण के लिए, हिंसक, गतिशील, व्यापक दिविस्पृशे = दिव्य को स्पर्श करने वाले के लिए सोमाय = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम के लिए गाथम् = गाथा को अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो ॥ 4 ॥

पदार्थ :- बभ्रवे = भरण पोषण करने वाले के लिए (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। नु = ही, भी (निपात, अव्यय)। स्वतवसे = अपनी गति-वृद्धि के लिए (स्व = अपना (सर्वनाम), तव - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। अरुणाय = अरुण के लिए, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। दिविस्पृशे = दिव्य को स्पर्श करने वाले के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, स्पृश - स्पर्श करना, छूना, संयोग करना, हाथ से लेना)। सोमाय = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। गाथम् = गाथा को (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। अर्चत = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना) ॥ 4 ॥

914. हस्तच्युतेभिः अद्रिभिः, सुतम् सोमम् पुनीतन ।

मधौ आ धावता मधु ॥ 5 ॥ 9-11-5

मन्त्रार्थ :- हस्तच्युतेभिः = हस्तच्युतों द्वारा अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को सोमम्

= ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को पुनीतन = पवित्र करो मधौ = मधु में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम धावता = जायें मधु = मीठा, मधु ॥ 5 ॥

पदार्थ :- हस्तच्युतेभिः = हस्तच्युतों द्वारा (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना, च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनीतन** = पवित्र करो (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **मधौ** = मधु में (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **धावता** = जायें (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 5 ॥

915. नमसा इत् उप सीदत, दध्ना इत् अभि श्रीणीतन।

इन्दुम् इन्द्रे दधातन ॥ 6 ॥ 9-11-6

मन्त्रार्थ :- नमसा = नमन द्वारा इत् = ही उप = समीप सीदत = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों दध्ना = धारण द्वारा इत् = ही अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा श्रीणीतन = श्री करो, व्याप्त करो इन्दुम् = इन्दु को इन्द्रे = इन्द्र में दधातन = धारण करे ॥ 6 ॥

पदार्थ :- नमसा = नमन द्वारा (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **सीदत** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुझाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **दध्ना** = धारण द्वारा (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **श्रीणीतन** = श्री करो, व्याप्त करो (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **इन्दुम्** = इन्दु को (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रे** = इन्द्र में दधातन = धारण करे ॥ 9 ॥

916. अमित्रहा विचर्षणिः, पवस्व सोम शम् गवे।

देवेभ्यो अनुकामकृत् ॥ 7 ॥ 9-11-7

मन्त्रार्थ :- अमित्रहा = अमित्र का हनन करने वाला विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले पवस्व = पवित्र करो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए देवेभ्यो = देवों के लिए अनुकामकृत् = अनुकूल कामना करने वाला ॥ 7 ॥

पदार्थ :- अमित्रहा = अमित्र का हनन करने वाला (अ - नहीं, मिद् - प्रीति करना, स्नेह करना, हा, हन् - मार डालना, हिंसा करना, मा - मापना, मान करना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **शम्** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **गवे** = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **देवेभ्यो** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अनुकामकृत्**

= अनुकूल कामना करने वाला (अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग), कम - चाहना, इच्छा करना, कृ - करना) ॥

917. इन्द्राय सोम पातवे, मदाय परि विच्यसे ।

मनश्चित् मनसस्पतिः ॥ 8 ॥ 9-11-8

मन्त्रार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पातवे = पालन करने वाले के लिए मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए परि = सभी तरफ विच्यसे = सिञ्चन करता है मनश्चित् = मन ही मनसस्पतिः = मन का पति, अधिपति, रक्षक, पालक ॥ 8 ॥

पदार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पातवे = पालन करने वाले के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। विच्यसे = सिञ्चन करता है (सिञ्च - सिञ्चन करना)। मनश्चित् = मन ही (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, चित् = भी, ही)। मनसस्पतिः = मन का पति, अधिपति, रक्षक, पालक (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 8 ॥

918. पवमान सुवीर्यम्, रयिम् सोम रिरीहि नः ।

इन्दो इन्द्रेण नो युजा । 9 ॥

9-11-9

मन्त्रार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला सुवीर्यम् = उत्तम वीर को रयिम् = विद्या, ज्ञान को सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम रिरीहि = दान, स्तुति करें नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्दो = इन्दु का इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा नो = हमको, हमारे लिए, हमारा युजा = युक्त कीजिये ॥ 9 ॥

पदार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। रिरीहि = दान, स्तुति करें (रिह् = कहना, प्रशंसा करना, दान करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्दो = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। युजा = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना) ॥ 6 ॥

(245) सूक्त 12

919. सोमाः असृग्रम् इन्दवः, सुताः ऋतस्य सादने ।

इन्द्राय मधुमत्तमाः ॥ 1 ॥

9-12-1

मन्त्रार्थ :- सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम असृग्रम् = सृजित किया, सृजन किया, असृजनकर्ता को इन्दवः = इन्दुगण सुताः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ऋतस्य = ऋत का सादने = स्थापन में इन्द्राय = इन्द्र के लिए मधुमत्तमाः = अत्यन्त मीठा, अत्यन्त मधुयुक्त ॥ 1 ॥

पदार्थ :- सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना,

अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **असृग्रम्** = सृजित किया, सृजन किया, असृजनकर्ता को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **इन्द्रवः** = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **सुताः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सादने** = स्थापन में (साद् = जाना, ले जाना, स्थापित करना, होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मधुमत्तमाः** = अत्यन्त मीठा, अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 1 ॥

920. अभि विप्राः अनूषत, गावो वत्सम् न मातरः।

इन्द्रम् सोमस्य पीतये ॥ 2 ॥

9-12-2

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **विप्राः** = विशेष पूर्ण करने वाले **अनूषत** = अनुताप किया **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **वत्सम्** = बोलने वाले को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **मातरः** = माता **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **सोमस्य** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का **पीतये** = पान के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विप्राः** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **अनूषत** = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वत्सम्** = बोलने वाले को (वद् -वच्- बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मातरः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमस्य** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम का (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 2 ॥

921. मदच्युत् क्षेति सादने, सिन्धोः ऊर्मा विपश्चित्।

सोमो गौरी अधि श्रितः ॥ 3 ॥

9-12-3

मन्त्रार्थ :- मदच्युत् = आनन्द-सिंचित होता हुआ **क्षेति** = निवास करता है **सादने** = सादन में, स्थान में **सिन्धोः** = सिन्धु **ऊर्मा** = ऊर्म **विपश्चित्** = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **गौरी** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **श्रितः** = सेवित, परिपक्व, आश्रित ॥ 3 ॥

पदार्थ :- मदच्युत् = आनन्द-सिंचित होता हुआ (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। **क्षेति** = निवास करता है (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **सादने** = सादन में, स्थान में (साद् = जाना, ले जाना, स्थापित करना, होना)। **सिन्धोः** = सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिज् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **ऊर्मा** = ऊर्म (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **विपश्चित्** = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त (वि = विशेष, विना, विलोम, पश् = देखना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **गौरी** = उद्योगी, प्रयासरत, शब्दकर्ता (गुर - उद्योग करना, प्रयत्न

करना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **श्रितः** = सेवित, परिपक्व, आश्रित (श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 3 ॥

922. दिवो नाभा विचक्षणो, अव्यो वारे महीयते।

सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥ 4 ॥ 9-12-4

मन्त्रार्थ :- **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **नाभा** = नाभि में **विचक्षणो** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा **वारे** = वरण में, इच्छाओं में **महीयते** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् के लिए **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **यः** = जो **सुक्रतुः** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता **कविः** = ज्ञानी, कवि ॥

पदार्थ :- **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **नाभा** = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। **विचक्षणो** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारे** = वरण में, इच्छाओं में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **महीयते** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् के लिए (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **सुक्रतुः** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) ॥ 4 ॥

923. यः सोमः कलशेषु आः, अन्तः पवित्रे आहितः।

तम् इन्दुः परि षस्वजे ॥ 5 ॥ 9-12-5

मन्त्रार्थ :- **यः** = जो **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **कलशेषु** = कलशों में **आः** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **अन्तः** = बीच में, भीतर **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **आहितः** = आह्वान, व्याप्त **तम्** = उसको, उसे **इन्दुः** = इन्दु **परि** = सभी तरफ **षस्वजे** = घेरता है, लपेटता है, आलिङ्गन करता है ॥ 5 ॥

पदार्थ :- **यः** = जो (सर्वनाम)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **कलशेषु** = कलशों में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **आः** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **आहितः** = आह्वान, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **षस्वजे** = घेरता है, लपेटता है, आलिङ्गन करता है (स्वज - घेरना, लपेटना, आलिङ्गन करना, गले लगाना) ॥ 5 ॥

924. प्र वाचम् इन्दुः इषिति, समुद्रस्य अधि विष्टपि।

जिन्वन् कोशम् मधुश्चुतम् ॥ 6 ॥ 9-12-6

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वाचम्** = वाणी को **इन्दुः** = इन्दु **इष्यति** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति करता है **समुद्रस्य** = समुद्र का **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **विष्टपि** = विशेष व्याप्ति में, विशेष सिञ्चन में, विष्टप में **जिन्वन्** = प्रसन्न करता हुआ, सन्तुष्ट करता हुआ **कोशम्** = कोश को **मधुश्चुतम्** = मधुश्चुत को ॥ 6 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वाचम्** = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जानाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **इष्यति** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति करता है (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **समुद्रस्य** = समुद्र का (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **विष्टपि** = विशेष व्याप्ति में, विशेष सिञ्चन में, विष्टप में (विष् - प्रवेश, सूचना, प्रेरणा करना, विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। **जिन्वन्** = प्रसन्न करता हुआ, सन्तुष्ट करता हुआ (जिन्व = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **कोशम्** = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मधुश्चुतम्** = मधुश्चुत को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना) ॥ 6 ॥

925. नित्यस्तोत्रो वनस्पतिः, धीनाम् अन्तः सवर्दुघः ।

हिन्वानो मानुषा युजा ॥ 7 ॥

9-12-7

मन्त्रार्थ :- नित्यस्तोत्रो = निरन्तर स्तुति वाले, निरन्तर प्रशंसा वाले **वनस्पतिः** = विद्वान्, वनस्पति **धीनाम्** = धारणा, बुद्धि, प्रिय, पालन करने वाले को **अन्तः** = बीच में, भीतर **सवर्दुघः** = सब के लिए दोहन करने वाले **हिन्वानो** = संतुष्ट करता हुआ, प्रेरणा देने वाला **मानुषा** = मानुष, मनन के लिए **युजा** = युक्त कीजिये ॥ 7 ॥

पदार्थ :- नित्यस्तोत्रो = निरन्तर स्तुति वाले, निरन्तर प्रशंसा वाले (नि - निश्चित, निरन्तर, नी = पहुँचाना, प्राप्त होना, मार्ग दिखाना, पाना, मिलना, ले जाना, स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **वनस्पतिः** = विद्वान्, वनस्पति (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **धीनाम्** = धारणा, बुद्धि, प्रिय, पालन करने वाले को (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **सवर्दुघः** = सब के लिए दोहन करने वाले (सर्व = सब (सर्वनाम) दुह - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना, सर्व - जाना)। **हिन्वानो** = संतुष्ट करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **मानुषा** = मानुष, मनन के लिए (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **युजा** = युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना) ॥ 7 ॥

926. अभि प्रिया दिवस्पदा सोमो हिन्वानो अर्षति ।

, विप्रस्य धारया कविः ॥ 8 ॥

9-12-8

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्रिया** = प्रिय **दिवस्पदा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **हिन्वानो** = संतुष्ट में, तृप्ति में **अर्षति** = पराया, दूर, लौटा हुआ **विप्रस्य** = विशेष पूर्ण करने वाले का **धारया** = धार द्वारा **कविः** = ज्ञानी, कवि ॥ 8 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार

करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **दिवस्पदा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **हिन्वानो** = संतृप्त में, तृप्ति में (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **विप्रस्य** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) ॥ 8 ॥

927. आ पवमान धारय, रयिम् सहस्रवर्चसम् ।

अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ॥ 9 ॥

9-12-9

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **धारय** = धार द्वारा **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **सहस्रवर्चसम्** = हजार प्रकाश को, अत्यधिक तेज को **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए **इन्दो** = इन्दु का **स्वाभुवम्** = स्वयम्भू ॥ 9 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारय** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **सहस्रवर्चसम्** = हजार प्रकाश को, अत्यधिक तेज को (सहस्र = हजार, वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **स्वाभुवम्** = स्वयम्भू (स्व = अपना (सर्वनाम), भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 9 ॥

(246) सूक्त 13

928. सोमः पुनानो अर्षति, सहस्रधारो अत्यविः ।

वायोः इन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ 1 ॥

9-13-1

मन्त्रार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पुनानो** = पवित्रकर्ता **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **सहस्रधारो** = हजारों धाराओं वाला **अत्यविः** = अत्यन्त रक्षक **वायोः** = हे वायु, हे प्रवाहमान **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ ॥ 1 ॥

पदार्थ :- सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **सहस्रधारो** = हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः - धारा होना, धार बाँधना)। **अत्यविः** = अत्यन्त रक्षक (अति - बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय), अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वायोः** = हे वायु, हे प्रवाहमान (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना,

गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना) ॥ 1 ॥

929. पवमानम् अवस्यवो, विप्रम् अभि प्र गायत ।

सुष्वाणम् देववीतये ॥ 2 ॥ 9-13-2

मन्त्रार्थ :- पवमानम् = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले को अवस्यवो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले विप्रम् = विशेष पूर्ण करने वाले को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा प्र = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में गायत = गाते हैं, गायन करने वाले सुष्वाणम् = उत्पन्नकर्ता को देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- पवमानम् = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अवस्यवो = स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। विप्रम् = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्र = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। गायत = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। सुष्वाणम् = उत्पन्नकर्ता को (सुष-सूष-सुस - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना)। देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना) ॥ 2 ॥

930. पवन्ते वाजसातये, सोमाः सहस्रपाजसः ।

गृणाना देववीतये ॥ 3 ॥ 9-13-3

मन्त्रार्थ :- पवन्ते = पवित्र करते हैं, पालन करते हैं, रक्षा करते हैं वाजसातये = विद्यावान् के लिए सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम सहस्रपाजसः = हजार प्रकार से रक्षा करने वाला गृणाना = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- पवन्ते = पवित्र करते हैं, पालन करते हैं, रक्षा करते हैं (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। वाजसातये = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सहस्रपाजसः = हजार प्रकार से रक्षा करने वाला (सहस्र = हजार, संख्या, पद् - चलना, पत् - चलना, ऐश्वर्य होना, पा - रक्षा करना, पालन करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। गृणाना = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना) ॥ 3 ॥

931. उत नो वाजसातये, पवस्व बृहतीः इषः ।

द्युमत् इन्दो सुवीर्यम् ॥ 4 ॥ 9-13-4

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वाजसातये = विद्यावान् के लिए पवस्व = पवित्र करो बृहतीः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि द्युमत् = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ इन्दो = इन्दु का सुवीर्यम् = उत्तम वीर को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वाजसातये = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। बृहतीः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। द्युमत् = अग्रगामी हुआ, प्रकाशमान हुआ (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 4 ॥

932. ते नः सहस्रिणम् रयिम्, पवन्ताम् आ सुवीर्यम्।

सुवाना देवासः इन्दवः ॥ 5 ॥

9-13-5

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सहस्रिणम् = सहस्री को रयिम् = विद्या, ज्ञान को पवन्ताम् = पवित्र करें, पालन करें, रक्षा करें आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सुवीर्यम् = उत्तम वीर को सुवाना = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले देवासः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों इन्दवः = इन्दुगण ॥ 5 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सहस्रिणम् = सहस्री को (संख्या)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। पवन्ताम् = पवित्र करें, पालन करें, रक्षा करें (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। सुवानाम् = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। देवासः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों (दिक् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इन्दवः = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 5 ॥

933. अत्या हियाना न हेतृभिः, असृग्रम् वाजसातये।

विवारम् अव्यम् आशवः ॥ 6 ॥

9-13-6

मन्त्रार्थ :- अत्या = सतत गमनीय हियाना = गतिवान्, गति-वृद्धि, शीतल करते हुए न = नहीं, समान, उपमार्थक हेतृभिः = हेति, गति, ज्ञान, प्राप्ति, प्रेरणा द्वारा असृग्रम् = सृजित किया, सृजन किया, असृजनकर्ता को वाजसातये = विद्यावान् के लिए विवारम् = विशेष वरण को अव्यम् = व्यय हो, समाप्त हो आशवः = अशन करो, भोजन करो ॥ 6 ॥

पदार्थ :- अत्या = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। हियाना = गतिवान्, गति-वृद्धि, शीतल करते हुए (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हेतृभिः = हेति, गति, ज्ञान, प्राप्ति, प्रेरणा द्वारा (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना)। असृग्रम् = सृजित किया, सृजन किया, असृजनकर्ता को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। वाजसातये = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। वारम् = विशेष वरण को (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वर - इच्छा

करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्ययम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **आशवः** = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना) ॥ 6 ॥

934. वाश्राः अर्षन्ति इन्दवो, अभि वत्सम् न धेनवः ।

दधन्विरे गभस्त्योः ॥ 7 ॥ 9-13-7

मन्त्रार्थ :- वाश्राः = प्रगतिशील, व्याप्त करते हुए, व्याप्त होते हुए, प्रकाश करते हुए **अर्षन्ति** = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं **इन्दवो** = इन्दुगण **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **वत्सम्** = बोलने वाले को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **दधन्विरे** = दधन्विर के लिए **गभस्त्योः** = गहन ॥ 7 ॥

पदार्थ :- वाश्राः = प्रगतिशील, व्याप्त करते हुए, व्याप्त होते हुए, प्रकाश करते हुए (वश - प्रकाश करना, इच्छा करना, चाहना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। **अर्षन्ति** = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **इन्दवो** = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वत्सम्** = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **दधन्विरे** = दधन्विर के लिए (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **गभस्त्योः** = गहन (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 7 ॥

935. जुष्टः इन्द्राय मत्सरः, पवमानः कनिक्रदत् ।

विश्वा अप द्विषो जहि ॥ 8 ॥ 9-13-8

मन्त्रार्थ :- जुष्टः = सुविचारित सेवा **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अप** = नीचे, दूर, प्राप्त **द्विषो** = द्वेष करने वाला **जहि** = हनन करो, नष्ट करो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- जुष्टः = सुविचारित सेवा (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अप** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना) ॥ 8 ॥

936. अपघ्नन्तो अराव्यः, पवमानाः स्वर्दृशः ।

योनौ ऋतस्य सीदत ॥ 9 ॥ 9-13-9

मन्त्रार्थ :- अपघ्नन्तो = अपघ्नन्त, मारने वालों से दूर करने वाले **अराव्यः** = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले **पवमानाः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **स्वर्दृशः** = स्वर्दृश, सृष्टि के दृष्टा **योनौ** = योनि में, मिलाने

अलग करने में, सम्बन्ध में ऋतस्य = ऋत का सीदत = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अपघ्नन्तो = अपघ्नन्त, मारने वालों से दूर करने वाले (अप = दूर, नीचे, अपकार, हन् - मारना)।
अराव्यः = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रा - देना, रव - जाना, प्रकाश करना, रु - शब्द करना, ध्वनि करना)। **पवमानाः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **स्वर्दृशः** = स्वर्दृश, सृष्टि के दृष्टा (स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, दृश्-पश्य - देखना)। **योनौ** = योनि में, मिलाने अलग करने में, सम्बन्ध में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सीदत** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना) ॥ 9 ॥

(247) सूक्त 14

937. परि प्रासिष्यदत् कविः, सिन्धोः ऊर्मो अधि श्रितः।

कारम् बिभ्रत् पुरुस्पृहम् ॥ 1 ॥ 9-14-1

मन्त्रार्थ - परि = सभी तरफ प्रासिष्यदत् = शीघ्रगामी कविः = ज्ञानी, कवि सिन्धोः = समुद्र ऊर्मो = ऊर्मि का अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार श्रितः = सेवित, परिपक्व, आश्रित कारम् = कार को बिभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को ॥ 1 ॥

पदार्थ - परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। प्रासिष्यदत् = शीघ्रगामी (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, प्रा - पूर्ण करना, भरना) कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। सिन्धोः = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूथना, फन्दे से पकड़ना)। ऊर्मो = ऊर्मि का (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। श्रितः = सेवित, परिपक्व, आश्रित (श्रा = पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। कारम् = कार को (कृ = करना)। बिभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना) ॥ 1 ॥

(248) सूक्त 15

938. एषः धिया याति अण्व्या, शूरो रथेभिः आशुभिः।

गच्छन् इन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ 1 ॥ 9-15-1

मन्त्रार्थ :- एषः = यह धिया = धारणा शक्ति, बुद्धि याति = जाता है अण्व्या = प्राणवान्, सूक्ष्म, शब्दकर्ता शूरो = शूर, वीर, पराक्रमी रथेभिः = रथों द्वारा आशुभिः = आशुओं, तीव्र गति युक्त, व्यापकों द्वारा गच्छन् = जाते हुए इन्द्रस्य = इन्द्र का निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। धिया = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। याति = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। अण्व्या = प्राणवान्, सूक्ष्म, शब्दकर्ता (अन्-अण् - प्राण होना, सूक्ष्म होना, शब्द करना)। शूरो = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। रथेभिः = रथों द्वारा (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। आशुभिः = आशुओं, तीव्र गति युक्त, व्यापकों द्वारा (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश्

= भोजन करना)। गच्छन् = जाते हुए (गम्-गच्छ = जाना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना) ॥ 1 ॥

939. एषः पुरु धियायते, बृहते देवतातये ।

यत्र अमृतासः आसते ॥ 2 ॥ 9-15-2

मन्त्रार्थ :- एषः = यह पुरु = पहले, आगे धियायते = धारण करता है बृहते = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् के लिए देवतातये = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए यत्र = जहाँ अमृतासः = अमृत आसते = बैठता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। पुरु = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। धियायते = धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। बृहते = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् के लिए (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। देवतातये = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। यत्र = जहाँ (सर्वनाम)। अमृतासः = अमृत (अ - नहीं, मृ - मरना)। आसते = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 2 ॥

940. एषः हितो वि नीयते, अन्तः शुभावता पथा ।

यदी तुज्जन्ति भूर्णयः ॥ 3 ॥ 9-15-3

मन्त्रार्थ :- एषः = यह हितो = हित, गति, वृद्धि वि = विशेष, विना, विलोम नीयते = ले जाता है अन्तः = बीच में, भीतर शुभावता = शुभ्र, प्रकाशित, प्रकाश युक्त पथा = पथ यदी = यदि तुज्जन्ति = दान, रक्षा, निवास, निन्दा, प्रकाश करते हैं भूर्णयः = धारण-पोषण करने वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। हितो = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। नीयते = ले जाता है (नी - ले जाना)। अन्तः = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। शुभावता = शुभ्र, प्रकाशित, प्रकाश युक्त (शुभ् - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। पथा = पथ (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। यदी = यदि (अव्यय)। तुज्जन्ति = दान, रक्षा, निवास, निन्दा, प्रकाश करते हैं, (तुज्ज - रक्षा करना, प्रतिपालन करना, संभालना, मार डालना, तुज्ज - मार डालना, बलवान् होना, ग्रहण करना, रहना, वसति करना, चमकना, प्रकाशित होना, तुज्ज - निन्दा करना, चमकना, प्रकाशित होना)। भूर्णयः = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना) ॥ 3 ॥

941. एषः शृङ्गाणि दोधुवत्, शिशीते यूथ्यो वृषा ।

नृम्णा दधानः ओजसा ॥ 4 ॥ 9-15-4

मन्त्रार्थ :- एषः = यह शृङ्गाणि = शृङ्गों के दोधुवत् = कम्पन करता है, दोहन करता है शिशीते = शिशीता है, कल्याण करता है, तीक्ष्ण करता है यूथ्यो = यूथ्य वृषा = पराक्रमी नृम्णा = नर, ले जाने वाले दधानः = धारण करता है ओजसा = ओज द्वारा ॥ 4 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। शृङ्गाणि = शृङ्गों के (श्रु-शृण् = सुनना, जाना, शृ = मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। दोधुवत् = कम्पन करता है, दोहन करता है (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना, धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। शिशीते = शिशीता है, कल्याण करता है, तीक्ष्ण करता है (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। यूथ्यो = यूथ्य (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। नृम्णा = नर, ले

जाने वाले (नृ - ले जाना)। **दधानः** = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) ॥ 4 ॥

942. एषः रुक्मिभिः ईयते, वाजी शुभ्रेभिः अंशुभिः ।

पतिः सिन्धूनाम् भवन् ॥ 5 ॥ 9-15-5

मन्त्रार्थ :- एषः = यह **रुक्मिभिः** = रुक्मियों द्वारा **ईयते** = व्याप्त होता है, गतिमान होता है **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **शुभ्रेभिः** = शुभ्रों, प्रकाशितों द्वारा **अंशुभिः** = अंशुओं द्वारा **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक **सिन्धूनाम्** = सिन्धुओं का, समुद्रों का **भवन्** = होते हुए ॥ 5 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **रुक्मिभिः** = रुक्मियों द्वारा (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **ईयते** = व्याप्त होता है, गतिमान होता है (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **शुभ्रेभिः** = शुभ्रों, प्रकाशितों द्वारा (शुभ् - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। **अंशुभिः** = अंशुओं द्वारा (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। **पतिः** = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **सिन्धूनाम्** = सिन्धुओं का, समुद्रों का (सिध् - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **भवन्** = होते हुए (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 5 ॥

943. एषः वसूनि पिबन्ः, परुषा ययिवान् अति ।

अव शादेषु गच्छति ॥ 6 ॥ 9-15-6

मन्त्रार्थ :- एषः = यह **वसूनि** = वसुओं को **पिबन्ः** = पीने वाले, पान कराने वाले **परुषा** = परुष **ययिवान्** = प्रगतिवान् **अति** = बहुत, अत्यधिक **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **शादेषु** = शादों में, जीर्णों में, प्रगतिशीलों में **गच्छति** = जाता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **पिबन्ः** = पीने वाले, पान कराने वाले (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **परुषा** = परुष (पा = रक्षा करना, पालन करना, पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **ययिवान्** = प्रगतिवान् (या - जाना, जानना, पाना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **शादेषु** = शादों में, जीर्णों में, प्रगतिशीलों में (शद-शी - जीर्ण होना, धीरे धीरे कम होना, मुरझाना, गिरना, जाना, नीचे फेंकना, नीचे गिराना)। **गच्छति** = जाता है (गम्, गच्छ् = जाना) ॥ 6 ॥

944. एतम् मृजन्ति मर्ज्यम्, उप द्रोणेषु आयवः ।

प्रचक्राणम् महीः इषः ॥ 7 ॥ 9-15-7

मन्त्रार्थ :- एतम् = यह, इसको **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं **मर्ज्यम्** = मार्जनीय, शुद्धतायुक्त, पवित्रतायुक्त को **उप** = समीप **द्रोणेषु** = द्रोणों, हिंसा, गति, कुटिलताओं में **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना **प्रचक्राणम्** = प्रकृष्ट चक्रण करने वाले को **महीः** = मही, महिमावान्, महान् **इषः** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि ॥ 7 ॥

पदार्थ :- एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज् - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज् - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **मर्ज्यम्** = मार्जनीय, शुद्धतायुक्त, पवित्रतायुक्त को (मृज् - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज् - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)।

उप = समीप (उपसर्ग)। **द्रोणेषु** = द्रोणों, हिंसा, गति, कुटिलताओं में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **प्रचक्राणम्** = प्रकृष्ट चक्रण करने वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **महीः** = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **इषः** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 7 ॥

945. एतम् उ त्यम् दश क्षिपो, मृजन्ति सप्त धीतयः ।

स्वायुधम् मदन्तिमम् ॥ 8 ॥ 9-15-8

मन्त्रार्थ :- एतम् = यह, इसको उ = निश्चय ही, भी त्यम् = उस को दश = दश क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं सप्त = सात धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले स्वायुधम् = उत्तम आयुध युक्त को मदन्तिमम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले ॥ 8 ॥

पदार्थ :- एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। त्यम् = उस को (सर्वनाम)। दश = दश (दश = दश, संख्या)। क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला (क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। सप्त = सात (संख्या)। धीतयः = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। स्वायुधम् = उत्तम आयुध युक्त को (सु+आयुधः, सु - सुन्दर, अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। मदन्तिमम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 8 ॥

(249) सूक्त 18

946. परि स्वानो गिरिष्ठाः, पवित्रे सोमो अक्षाः ।

मदेषु सर्वधा असि ॥ 9 ॥ 9-18-1

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ स्वानो = स्वान गिरिष्ठाः = वाणी में स्थिर पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम अक्षाः = क्षरित हुआ मदेषु = मदों में, आनन्दों में सर्वधा = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला असि = हो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्वानो = स्वान (स्वन - शब्द करना)। गिरिष्ठाः = वाणी में स्थिर (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना, शी-शय् - शयन करना, स्था - स्थिर होना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। अक्षाः = क्षरित हुआ (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। मदेषु = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सर्वधा = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला (सर्व = सब, सबने (सर्वनाम), सर्व - जाना, सर्व - जाना, दुःख देना, पीड़ा करना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 1 ॥

947. त्वम् विप्रः त्वम् कविः, मधु प्र जातम् अन्धसः ।

मदेषु सर्वधा असि ॥ 2 ॥ 9-18-2

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम विप्रः = विशेष पूर्ण करने वाले त्वम् = तुम कविः = ज्ञानी, कवि मधु = मीठा, मधु प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से मदेषु = मदों में, आनन्दों में सर्वधा = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला असि = हो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। विप्रः = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। त्वम् = तुम (सर्वनाम)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। मधु = मीठा, मधु (मधु = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। मदेषु = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सर्वधा = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला (सर्व = सब, सबने (सर्वनाम), सर्व - जाना, सर्व - जाना, दुःख देना, पीड़ा करना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 2 ॥

948. तव विश्वे सजोषसो, देवासः पीतिम् आशत ।

मदेषु सर्वधा असि ॥ 3 ॥ 9-18-3

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा विश्वे = सभी सजोषसो = विचारवान्, सेवाभावी देवासः = देवगण पीतिम् = पीने को, पान को आशत = अशन करो, भोजन करो मदेषु = मदों में, आनन्दों में सर्वधा = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला असि = हो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। सजोषसो = विचारवान्, सेवाभावी (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। देवासः = देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। पीतिम् = पीने को, पान को (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। आशत = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। मदेषु = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सर्वधा = सबका धारण करने वाला, सबका पोषण करने वाला (सर्व = सब, सबने (सर्वनाम), सर्व - जाना, सर्व - जाना, दुःख देना, पीड़ा करना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। असि = हो (अस् - होना) ॥ 3 ॥

(250) सूक्त 19

949. यत् सोम चित्रम् उक्थ्यम्, दिव्यम् पार्थिवम् वसु ।

तत् नः पुनानः आ भर ॥ 1 ॥ 9-19-1

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को उक्थ्यम् = कथनीय को दिव्यम् = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को पार्थिवम् = पार्थिव को, पृथ्वी को वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले तत् = वह, उस को नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पुनानः = पवित्रकर्ता आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन

होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **उक्थ्यम्** = कथनीय को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **दिव्यम्** = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पार्थिवम्** = पार्थिव को, पृथ्वी को (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 1 ॥

950. युवम् हि स्थः स्वः पती, इन्द्रः च सोम गोपती ।

ईशाना पिप्यतम् धियः ॥ 2 ॥

9-19-2

मन्त्रार्थ :- युवम् = तुमको हि = ही, निश्चय स्थः = हो स्वर्पती = ऐश्वर्यवान्, स्वामी इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली च = और। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम गोपती = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक ईशाना = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला पिप्यतम् = पान करो धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि ॥

पदार्थ :- युवम् = तुमको (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। स्थः = हो (स्था - स्थित होना, ठहरना)। स्वर्पती = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। च = और। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। गोपती = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। ईशाना = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। पिप्यतम् = पान करो (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 2 ॥

951. वृषा पुनानः आयुषु, स्तनयन् अधि बर्हिषि ।

हरिः सन् योनिम् आसदः ॥ 3 ॥

9-19-3

मन्त्रार्थ :- वृषा = पराक्रमी पुनानः = पवित्रकर्ता आयुषु = आयु में स्तनयन् = शब्द करते हुए अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में हरिः = हरि सन् = ही योनिम् = योनि को आसदः = आसीन, स्थित ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आयुषु = आयु में (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। स्तनयन् = शब्द करते हुए (स्तन - मेघ की गर्जना होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। सन् = ही (अव्यय)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग

करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आसदः** = आसीन, स्थित (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना, सद् = जाना, आसद् = आना) ॥ 3 ॥

(251) सूक्त 20

952. प्र कविः देववीतये, अव्यो वारेभिः अर्षति ।

साह्वान् विश्वा अभि स्पृधः ॥ 1 ॥ 9-20-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **कविः** = ज्ञानी, कवि **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा **वारेभिः** = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **साह्वान्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **स्पृधः** = स्पर्धा करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारेभिः** = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **साह्वान्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **स्पृधः** = स्पर्धा करने वाले (स्पर्ध - प्रतिद्वन्द्वी से आगे बढ़ने का यत्न करना, मत्सर करना, दूसरे के अहित की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना) ॥ 1 ॥

953. स हि ष्म आ जरितृभ्यः, आ वाजम् गोमन्तम् इन्वति ।

पवमानः सहस्रिणम् ॥ 2 ॥ 9-20-2

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **हि** = ही, निश्चय **ष्म** = है **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **जरितृभ्यः** = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वाजम्** = विद्या को, गति को **गोमन्तम्** = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को **इन्वति** = तृप्त करता है, प्रसन्न करता है **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **सहस्रिणम्** = सहस्री को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **ष्म** = है (अस् - होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **जरितृभ्यः** = जरितृ, जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व लोगों के लिए (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **गोमन्तम्** = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **इन्वति** = तृप्त करता है, प्रसन्न करता है (इन्व् - व्याप्त होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सहस्रिणम्** = सहस्री को (संख्या) ॥ 2 ॥

954. परि विश्वानि चेतसा, मृशसे पवसे मती ।

सः नः सोम श्रवो विदः ॥ 3 ॥ 9-20-3

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ विश्वानि = सभी चेतसा = चेतना द्वारा मृशसे = विचार करता है पवसे = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए मती = मति वाले सः = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम श्रवो = श्रवण करने वाले विदः = विद्वान् ॥ 3 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। चेतसा = चेतना द्वारा (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। मृशसे = विचार करता है (मृश - विचार करना, स्पर्श करना, देखना)। पवसे = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मती = मति वाले (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। श्रवो = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। विदः = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 3 ॥

955. अभि अर्ष बृहत् यशो, मघवद्भ्यो ध्रुवम् रयिम्।

इषम् स्तोतृभ्यः आ भर ॥ 4 ॥ 9-20-4

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् यशो = यश, कीर्ति मघवद्भ्यो = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, मघ के लिए ध्रुवम् = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील को रयिम् = विद्या, ज्ञान को इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। यशो = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। मघवद्भ्यो = धनवान्, ऐश्वर्यवान्, मघ के लिए (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। ध्रुवम् = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील को (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्तोतृभ्यः = स्तुति के लिए (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 4 ॥

956. त्वम् राजा इव सुव्रतो, गिरः सोम आ विवेशिथ।

पुनानो वह्ने अद्भुत ॥ 5 ॥ 9-20-5

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम राजा = राजा इव = समान, की भाँति, के समान सुव्रतो = सुव्रत, उत्तम व्रत वाले गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विवेशिथ = विवेशित, प्रवेशित पुनानो = पवित्रकर्ता वह्ने = वहन करने वाले अद्भुत = अद्भुत, आश्चर्यजनक ॥ 5 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। राजा = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। सुव्रतो = सुव्रत, उत्तम व्रत वाले (सु = अच्छा (उपसर्ग), वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। गिरः = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य

या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **विवेशिथ** = विवेशित, प्रवेशित (वि - विशेष, विश् - प्रवेश करना, अन्तर्गमन करना, सूचना करना, प्रेरणा करना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वहने** = वहन करने वाले (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **अद्भुत** = अद्भुत, आश्चर्यजनक (अव्यय) ॥ 5 ॥

957. सः वह्निः अप्सु दुष्टरो, मृज्यमानो गभस्त्योः ।

सोमः चमूषु सीदति ॥ 6 ॥ 9-20-6

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने वह्निः = वहन करने वाला अप्सु = पालन-रक्षण में दुष्टरो = दुष्ट मृज्यमानो = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ गभस्त्योः = गहन सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम चमूषु = भोजन में सीदति = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। वह्निः = वहन करने वाला (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। अप्सु = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। दुष्टरो = दुष्ट (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन)। मृज्यमानो = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। गभस्त्योः = गहन (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। चमूषु = भोजन में (चम् - खाना)। सीदति = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना) ॥ 6 ॥

958. क्रीडुः मखो न मंहयुः, पवित्रम् सोम गच्छसि ।

दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥ 7 ॥ 9-20-7

मन्त्रार्थ :- क्रीडुः = क्रीड़ा करने वाला मखो = मख, प्रगतिशील न = नहीं, समान, उपमार्थक मंहयुः = महान् पवित्रम् = पवित्र को सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम गच्छसि = जाता है दधत् = धारण किया स्तोत्रे = स्तुति होने में सुवीर्यम् = उत्तम वीरता को ॥ 7 ॥

पदार्थ :- क्रीडुः = क्रीड़ा करने वाला (क्रीड् - खेलना)। मखो = मख, प्रगतिशील (मख - जाना, स्थानान्तर करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मंहयुः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। गच्छसि = जाता है (गम्, गच्छ् = जाना)। दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। स्तोत्रे = स्तुति होने में (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीरता को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 7 ॥

(252) सूक्त 23

959. अनु प्रत्नासः आयवः, पदम् नवीयो अक्रमुः ।

रुचे जनन्त सूर्यम् ॥ 2 ॥ 9-23-2

मन्त्रार्थ - अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल प्रत्नासः = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति आयवः =

उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना **पदम्** = पद को **नवीयो** = उत्तम स्तुति को **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी **रुचे** = रुचि के लिए, प्रकाश के लिए, रुचि में, प्रकाश में **जनन्त** = उत्पन्न करता है **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला ॥ 2 ॥

पदार्थ - अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **प्रत्नासः** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति (प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **पदम्** = पद को (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **नवीयो** = उत्तम स्तुति को (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **रुचे** = रुचि के लिए, प्रकाश के लिए, रुचि में, प्रकाश में (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **जनन्त** = उत्पन्न करता है (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 2 ॥

(253) सूक्त 24

960. प्र सोमासो अधन्विषुः, पवमानासः इन्दवः ।

श्रीणानाः अप्सु वृज्जते ॥ 1 ॥ 9-24-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय **अधन्विषुः** = प्राप्त किया, गये **पवमानासः** = अनेक पवमान, पवित्र करते हुए, पालन-रक्षा करते हुए **इन्दवः** = इन्दुगण **श्रीणानाः** = सेवा करते हुए **अप्सु** = पालन-रक्षण में **वृज्जते** = त्यागता है ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अधन्विषुः** = प्राप्त किया, गये (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना)। **पवमानासः** = अनेक पवमान, पवित्र करते हुए, पालन-रक्षा करते हुए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **श्रीणानाः** = सेवा करते हुए (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **अप्सु** = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वृज्जते** = त्यागता है (वृज - छोड़ना, वर्जित करना) ॥ 1 ॥

961. अभि गावो अधन्विषुः, आपो न प्रवता यतीः ।

पुनानाः इन्द्रम् आशत ॥ 2 ॥ 9-24-2

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **अधन्विषुः** = प्राप्त किया, गये **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **प्रवता** = प्रवदा, प्रवक्ता, प्रकृष्ट बोलने वाला **यतीः** = यत्न करने वाला **पुनानाः** = पवित्र करते हुए **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **आशत** = अशन करो, भोजन करो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अधन्विषुः** = प्राप्त किया, गये (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना)। **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्रवता** = प्रवदा, प्रवक्ता, प्रकृष्ट बोलने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वद - कहना, समझाना)। **यतीः** = यत्न करने वाला (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना,

जानना, यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **पुनानाः** = पवित्र करते हुए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **आशत** = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) ॥ 2 ॥

962. इन्द्रो यत् अद्रिभिः सुतः, पवित्रम् परि दीयसे।

अरम् इन्द्रस्य धाम्ने ॥ 2 ॥ 9-24-2

मन्त्रार्थ :- इन्द्रो = इन्दु का यत् = जिसे, जो अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए पवित्रम् = पवित्र को परि = सभी तरफ दीयसे = क्षरित होता है अरम् = पर्याप्त इन्द्रस्य = इन्द्र का धाम्ने = धाम में, धारण करने वाले में ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इन्द्रो = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। दीयसे = क्षरित होता है (दी - ह्रास (हरास) होना, झरना, नष्ट होना)। अरम् = पर्याप्त (अव्यय)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। धाम्ने = धाम में, धारण करने वाले में (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 2 ॥

963. प्र पवमान धन्वसि, सोम इन्द्राय मादनः।

नृभिः यतो वि नीयसे ॥ 3 ॥ 9-24-3

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला धन्वसि = प्राप्त करता है, जाता है सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए मादनः = हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता देने वाला नृभिः = नरों द्वारा यतो = जिससे वि = विशेष, विना, विलोम नीयसे = ले जाता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। धन्वसि = प्राप्त करता है, जाता है। (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्द्र-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। मादनः = हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता देने वाला (मदी-माद् - हर्ष होना)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। यतो = जिससे (सर्वनाम)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। नीयसे = ले जाता है (नी - ले जाना) ॥ 3 ॥

964. त्वम् सोम नृमादनः, पवस्व चर्षणीसहेः।

सस्निः यो अनुमाद्यः ॥ 4 ॥ 9-24-4

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम नृमादनः = नर को आनन्द देने वाला पवस्व = पवित्र करो चर्षणीसहेः = आनन्द, चेतना, विचार, सहन करने वाला, आनन्द, चेतना, विचार के लिए सस्निः = शुद्ध यो = जो अनुमाद्यः = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य ॥ 4 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न

होना)। **नृमादनः** = नर को आनन्द देने वाला (नृ - ले जाना, मदी-माद् - हर्ष होना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **चर्षणीसहेः** = आनन्द, चेतना, विचार, सहन करने वाला, आनन्द, चेतना, विचार के लिए (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना, सह - सहना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **सस्निः** = शुद्ध (सस् = शुद्ध करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **अनुमाद्यः** = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना) ॥ 4 ॥

965. पवस्व वृत्रहन्तमः, उक्थेभिः अनुमाद्यः।

शुचिः पावको अद्भुतः ॥ 6 ॥ 9-24-6

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो वृत्रहन्तमः = हिंसा का हनन करने वालों में उत्तम उक्थेभिः = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा अनुमाद्यः = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य शुचिः = शुद्धता पावको = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला अद्भुतः = अद्भुत, आश्चर्यजनक ॥ 6 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। वृत्रहन्तमः = हिंसा का हनन करने वालों में उत्तम (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - मारना, हिंसा करना) उक्थेभिः = वाणियों द्वारा, उक्तियों द्वारा, कथनों द्वारा (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। अनुमाद्यः = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना)। शुचिः = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। पावको = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अद्भुतः = अद्भुत, आश्चर्यजनक (अव्यय) ॥ 6 ॥

966. शुचिः पावकः उच्यते, सोमः सुतस्य मध्वः

देवावीः अघशंसहा ॥ 7 ॥ 9-24-7

मन्त्रार्थ :- शुचिः = शुद्धता पावकः = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला उच्यते = उच्चारण करते हैं, कहते हैं सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम सुतस्य = सुत का मध्वः = मधुरता का देवावीः = देवों को प्राप्त करने वाले अघशंसहा = पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला ॥ 7 ॥

पदार्थ :- शुचिः = शुद्धता (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। पावकः = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। उच्यते = उच्चारण करते हैं, कहते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सुतस्य = सुत का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। मध्वः = मधुरता का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। देवावीः = देवों को प्राप्त करने वाले (दिक् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। अघशंसहा = पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला (अघ् - पाप करना, अपराध करना, गिरना, शंस - स्तुति करना, प्रशंसा करना, हन् - मारना) ॥ 7 ॥

अनुवाकः-68

(254) सूक्त 25

967. पवस्व दक्षसाधनो, देवेभ्यः पीतये हरे।

मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥ 1 ॥ 9-25-1

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो दक्षसाधनो = दक्षता के साधन देवेभ्यः = देवों के लिए पीतये = पान के लिए

हरे = हे हरि! हे! ले जाने वाले, हे! हरण करने वाले **मरुद्भ्यो** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए **वायवे** = वायु के लिए **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **दक्षसाधनो** = दक्षता के साधन (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **देवेभ्यः** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **हरे** = हे हरि! हे! ले जाने वाले, हे! हरण करने वाले (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **मरुद्भ्यो** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **वायवे** = वायु के लिए (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 1 ॥

968. पवमान धिया हितो, अभि योनिम् कनिक्रदत् ।

धर्मणा वायुम् आ विश ॥ 2 ॥

9-25-2

मन्त्रार्थ :- **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि **हितो** = हित, गति, वृद्धि **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **योनिम्** = योनि को **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए **धर्मणा** = धर्म द्वारा **वायुम्** = वायु को **आ** - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः **विश** = व्याप्त, प्रविष्ट, प्रवेशी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) **हितो** = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना)। **धर्मणा** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **वायुम्** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आ** - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, **विश** = व्याप्त, प्रविष्ट, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, धंसना) ॥ 2 ॥

969. सम् देवैः शोभते वृषा, कविः योनौ अधि प्रियः ।

वृत्रहा देवीतमः ॥ 3 ॥

9-25-3

मन्त्रार्थ :- **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **देवैः** = देवों द्वारा **शोभते** = शोभित होता है **वृषा** = पराक्रमी **कविः** = ज्ञानी, कवि **योनौ** = योनि में, मिलाने अलग करने में **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **प्रियः** = प्रिय **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **देवीतमः** = अत्यन्त देव-व्याप्ति, दिव्य ज्ञान ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **देवैः** = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **शोभते** = शोभित होता है (शुभ - चमकना, प्रकाशित होना, देदीप्यमान होना, शोभा पाना, सुन्दर होना, शोभायमान होना, भाषण करना, बोलना, मार डालना या दुःख देना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **योनौ** = योनि में, मिलाने अलग करने में (यु - मिश्रित करना,

मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **प्रियः** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **देववीतमः** = अत्यन्त देव-व्याप्ति, दिव्य ज्ञान (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना) ॥ 3 ॥

(255) सूक्त 27

970. एषः कविः अभिष्टुतः, पवित्रे अधि तोशते।

पुनानो घ्नन अप द्विषः ॥ 1 ॥ 9-27-1

मन्त्रार्थ :- **एषः** = यह **कविः** = ज्ञानी, कवि **अभिष्टुतः** = अभिस्तुति, अभिस्तुत्य **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **तोशते** = तुष्ट करता है **पुनानो** = पवित्रकर्ता **घ्नन** = नष्ट, मारने करने वाले **अप** = दूर, नीचे, अपकार **द्विषः** = द्वेष करने वाला ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **एषः** = यह (सर्वनाम)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **अभिष्टुतः** = अभिस्तुति, अभिस्तुत्य (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **तोशते** = तुष्ट करता है (तुष् - सन्तुष्ट करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **घ्नन** = नष्ट, मारने करने वाले (हन् - मारना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना) ॥ 1 ॥

971. एषः इन्द्राय वायवे, स्वर्जित् परि षिच्यते।

पवित्रे दक्षसाधनः ॥ 2 ॥ 9-27-2

मन्त्रार्थ :- **एषः** = यह **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **वायवे** = वायु के लिए **स्वर्जित्** = स्वः को जीतने वाला, जगत को जीतने वाला **परि** = सभी तरफ **षिच्यते** = सिञ्चन करता है **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **दक्षसाधनः** = दक्षता के साधन ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **एषः** = यह (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वायवे** = वायु के लिए (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **स्वर्जित्** = स्वः को जीतने वाला, जगत को जीतने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **षिच्यते** = सिञ्चन करता है (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **दक्षसाधनः** = दक्षता के साधन (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना) ॥ 2 ॥

972. एषः नृभिः वि नीयते, दिवो मूर्धा वृषा सुतः।

सोमो वनेषु विश्ववित् ॥ 3 ॥ 9-27-3

मन्त्रार्थ :- **एषः** = यह **नृभिः** = नरों द्वारा **वि** = विशेष, विना, विलोम **नीयते** = ले जाता है **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **मूर्धा** = उच्च **वृषा** = पराक्रमी **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **वनेषु** =

वाणियों में, वनों में विश्ववित् = सबको जानने वाला ॥ 3 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। नीयते = ले जाता है (नी - ले जाना)। दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। मूर्धा = उच्च (मुर् - घेरना, लपेटना, मूर्द्ध - उच्च होना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। वनेषु = वाणियों में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। विश्ववित् = सबको जानने वाला (विश्व - सब, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 3 ॥

973. एषः गव्युः अचिक्रदत्, पवमानो हिरण्ययुः ।

इन्दुः सत्राजित् अस्तृतः ॥ 4 ॥ 9-27-4

मन्त्रार्थ :- एषः = यह गव्युः = गव्य अचिक्रदत् = किया पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला हिरण्ययुः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाले को, युक्त इन्दुः = इन्दु सत्राजित् = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना अस्तृतः = अनाच्छादित, अपूर्ण ॥ 4 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। गव्युः = गव्य (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। अचिक्रदत् = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। हिरण्ययुः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाले को, युक्त (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। सत्राजित् = विस्तार, सम्बन्ध, सम्बन्धी जीतना (सत्र - फैलाना, विस्तार करना, सम्बन्ध करना, संसर्गी होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। अस्तृतः = अनाच्छादित, अपूर्ण (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्तृ - पूर्ण करना, आच्छादित करना, ढकना, फैलाना) ॥ 4 ॥

974. एषः सूर्येण हासते, पवमानो अधि द्यवि ।

पवित्रे मत्सरो मदः ॥ 5 ॥ 9-27-5

मन्त्रार्थ :- एषः = यह सूर्येण = सूर्य के साथ हासते = छोड़ा जाता है, परित्याग करता है, हंसता है, हंसाता है पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार द्यवि = द्यु में पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र मत्सरो = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो मदः = मद, हर्ष, तृप्ति ॥ 5 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। सूर्येण = सूर्य के साथ (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। हासते = छोड़ा जाता है, परित्याग करता है, हंसता है, हंसाता है, (हा - छोड़ना, परित्याग करना, जाना, चलना, हस - हंसना, ठट्ठा करना)। पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। द्यवि = द्यु में (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। मत्सरो = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार

करना, विचार करना, मानना, मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 5 ॥

975. एषः शुष्मी असिष्यदत्, अन्तरिक्षे वृषा हरिः ।

पुनानः इन्दुः इन्द्रम् आ ॥ 6 ॥ 9-27-6

मन्त्रार्थ :- एषः = यह शुष्मी = शुष्म युक्त, सुखाने वाला असिष्यदत् = सिञ्चन किया अन्तरिक्षे = अन्तरिक्ष में वृषा = पराक्रमी हरिः = हरि पुनानः = पवित्रकर्ता इन्दुः = इन्दु इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ॥ 6 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। शुष्मी = शुष्म युक्त, सुखाने वाला (शुष् - सुखाना)। असिष्यदत् = सिञ्चन किया (स्यन्द - टपकना, झरना, चूना, सींचना, छींटा देना, जाना)। अन्तरिक्षे = अन्तरिक्ष में (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष - स्वाद लेना, देखना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) ॥ 6 ॥

(256) सूक्त 28

976. एषः वाजी हितो नृभिः, विश्ववित् मनसः पतिः ।

अव्यो वारम् वि धावति ॥ 1 ॥ 9-28-1

मन्त्रार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त हितो = हित, गति, वृद्धि नृभिः = नरों द्वारा विश्ववित् = सबको जानने वाला मनसः = मन का पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक अव्यो = व्यय हो, समाप्त हो वारम् = वरण को वि = विशेष, विना, विलोम धावति = दौड़ता है ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। हितो = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। विश्ववित् = सबको जानने वाला (विश्व - सब, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। मनसः = मन का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। पतिः = पति, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। अव्यो = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। वारम् = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। धावति = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना) ॥ 1 ॥

977. एषः पवित्रे अक्षरत्, सोमो देवेभ्यः सुतः ।

विश्वा धामानि आविशन् ॥ 2 ॥ 9-28-2

मन्त्रार्थ :- एषः = यह पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अक्षरत् = क्षरित हुआ सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम देवेभ्यः = देवों के लिए सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए विश्वा = विश्व, सभी, सब धामानि = धामों को आविशन् = प्रवेश

करते हुए, प्रवेश करने वाले ॥ 2 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अक्षरत्** = क्षरित हुआ (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **देवेभ्यः** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **धामानि** = धामों को (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **आविशन्** = प्रवेश करते हुए, प्रवेश करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, विश् - प्रवेश करना, फैलना) ॥ 2 ॥

978. एषः देवः शुभायते, अधि योनौ अमर्त्यः ।

वृत्रहा देववीतमः ॥ 3 ॥ 9-28-3

मन्त्रार्थ :- एषः = यह **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **शुभायते** = शोभायित होता है, शोभित होता है, प्रकाशित होता है **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **योनौ** = योनि में, मिलाने अलग करने में, सम्बन्ध में **अमर्त्यः** = अमर्त्य **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **देववीतमः** = अत्यन्त देव-व्याप्ति, दिव्य ज्ञान ॥ 3 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **शुभायते** = शोभायित होता है, शोभित होता है, प्रकाशित होता है (शुभ् - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **योनौ** = योनि में, मिलाने अलग करने में, सम्बन्ध में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **अमर्त्यः** = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **देववीतमः** = अत्यन्त देव-व्याप्ति, दिव्य ज्ञान (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना) ॥ 3 ॥

979. एषः वृषा कनिक्रदत्, दशभिः जामिभिः यतः ।

अभि द्रोणानि धावति ॥ 4 ॥ 9-28-4

मन्त्रार्थ :- एषः = यह **वृषा** = पराक्रमी **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए **दशभिः** = दशों द्वारा, दसों द्वारा **जामिभिः** = जामियों द्वारा, भोजन के साधनों द्वारा, पोषण करने वालों द्वारा **यतः** = जिससे **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में **धावति** = दौड़ता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना)। **दशभिः** = दशों द्वारा, दसों द्वारा (दश = दश, दस, संख्या)। **जामिभिः** = जामियों द्वारा, भोजन के साधनों द्वारा, पोषण करने वालों द्वारा (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **यतः** = जिससे (सर्वनाम)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ

980. एषः सूर्यम् अरोचयत्, पवमानो विचर्षणिः

विश्वा धामानि विश्ववित् ॥ 5 ॥ 9-28-5

मन्त्रार्थ :- एषः = यह सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को अरोचयत् = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले विश्वा = विश्व, सभी, सब धामानि = धामों को विश्ववित् = सबको जानने वाला ॥ 5 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। अरोचयत् = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। धामानि = धामों को (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। विश्ववित् = सबको जानने वाला (विश्व - सब, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 5 ॥

981. एषः शुष्मी अदाभ्यः, सोमः पुनानो अर्षति।

देवावीः अघशंसहा ॥ 6 ॥ 9-28-6

मन्त्रार्थ :- एषः = यह शुष्मी = शुष्म युक्त, सुखाने वाला अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पुनानो = पवित्रकर्ता अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है देवावीः = देवों को प्राप्त करने वाले अघशंसहा = पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला ॥ 6 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। शुष्मी = शुष्म युक्त, सुखाने वाला (शुष् - सुखाना)। अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना, आज्ञा देना, दा - देना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। देवावीः = देवों को प्राप्त करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। अघशंसहा = पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला (अघ् - पाप करना, अपराध करना, गिरना, शंस - स्तुति करना, प्रशंसा करना, हन् - मारना) ॥ 6 ॥

(257) सूक्त 29

982. प्र अस्य धाराः अक्षरन्, वृष्णः सुतस्य ओजसः।

देवान् अनु प्रभूषतः ॥ 1 ॥ 9-29-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक अस्य = इसका धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो अक्षरन् = क्षरित हुए वृष्णः = वर्षा करने वाला, पराक्रमी सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का ओजसः = ओज द्वारा देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल प्रभूषतः = प्रभूषित होने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। अक्षरन् = क्षरित हुए (अ =

नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)।
वृष्णः = वर्षा करने वाला, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)।
सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **ओजसः** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **प्रभूषतः** = प्रभूषित होने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भूष - भूषित होना, सजाना) ॥ 1 ॥

983. सप्तिम् मृजन्ति वेधसो, गृणन्तः कारवो गिरा।

ज्योतिः जज्ञानम् उक्थ्यम् ॥ 2 ॥ 9-29-2

मन्त्रार्थ :- सप्तिम् = सात, पूर्ण, संलग्न को मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं वेधसो = विद्वान्, विधान करने वाले गृणन्तः = वाणी, बोध, सिञ्चन करने वाले कारवो = करने वाला गिरा = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन ज्योतिः = प्रकाश जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना उक्थ्यम् = कथन को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सप्तिम् = सात, पूर्ण, संलग्न को (सप - पूर्ण होना, पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। वेधसो = विद्वान्, विधान करने वाले (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। गृणन्तः = वाणी, बोध, सिञ्चन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। कारवो = करने वाला (कृ - करना)। गिरा = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। ज्योतिः = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। उक्थ्यम् = कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना) ॥ 2 ॥

982. सुषहा सोम तानि ते, पुनानाय प्रभूवसो।

वर्धा समुद्रम् उक्थ्य ॥ 3 ॥ 9-29-3

मन्त्रार्थ :- सुषहा = उत्तम सहनशील, उत्तम सामर्थ्यवान् सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम तानि = वे, उन को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पुनानाय = पवित्रकर्ता के लिए प्रभूवसो = हे प्रभूवसु वर्धा = बढ़ाये, वृद्धि करे समुद्रम् = समुद्र को उक्थ्य = कथन ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सुषहा = उत्तम सहनशील, उत्तम सामर्थ्यवान् (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। तानि = वे, उन को (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पुनानाय = पवित्रकर्ता के लिए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। प्रभूवसो = हे प्रभूवसु (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। वर्धा = बढ़ाये, वृद्धि करे (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। समुद्रम् = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। उक्थ्य = कथन (उक् - उच्-वद् - कहना,

(258) सूक्त 32

983. प्र सोमासो मदच्युतः, श्रवसे नो मघोनः ।

सुता विदथे अक्रमुः ॥ 1 ॥

9-32-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सोमासो = ऐश्वर्यमय मदच्युतः = आनन्द-सिंचित श्रवसे = श्रवः, श्रवण, वाणी के लिए नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को सुता = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए विदथे = विदथ में अक्रमुः = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सोमासो = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। मद-च्युतः = आनन्द-सिंचित (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। श्रवसे = श्रवः, श्रवण, वाणी के लिए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। मघोनः = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ = धन होना, ऐश्वर्य होना)। सुता = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। विदथे = विदथ में (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। अक्रमुः = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

984. आत् ईम् त्रितस्य योषणो, हरिम् हिन्वति अद्रिभिः ।

इन्दुम् इन्द्राय पीतये ॥ 2 ॥

9-32-2

मन्त्रार्थ :- आत् = चिरन्तन, नित्य ईम् = समान, इस प्रकार त्रितस्य = त्रित या तीन का योषणो = योषण हरिम् = हरि को हिन्वति = संतृप्त करता है अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा इन्दुम् = इन्दु को इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए पीतये = पान के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आत् = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। त्रितस्य = त्रित या तीन का (त्रि = तीन, संख्या, सर्वनाम)। योषणो = योषण (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूंथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। हिन्वति = संतृप्त करता है (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, तृप्त करना, शान्त करना)। अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। इन्दुम् = इन्दु को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। पीतये = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 2 ॥

985. आत् ईम् हंसो यथा गणम्, विश्वस्य अवीवशत् मतिम् ।

अत्यो न गोभिः अज्यते ॥ 3 ॥

9-32-3

मन्त्रार्थ :- आत् = चिरन्तन, नित्य ईम् = समान, इस प्रकार हंसो = मारने वाला, हंसने वाला, प्रसन्न रहने वाला, प्रसन्न करने वाला यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार गणम् = गणक, गण, समूह विश्वस्य = विश्व का, सभी का अवीवशत् = वश में किया मतिम् = मति को अत्यो = सतत गमनीय न = नहीं, समान, उपमार्थक गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ अज्यते = स्वच्छत करते हैं, प्रकाश करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- आत् = चिरन्तन, नित्य (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। हंसो = मारने वाला, हंसने वाला, प्रसन्न

रहने वाला, प्रसन्न करने वाला (हन् - मारना, हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **गणम्** = गणक, गण, समूह (गण् - गिनना, शब्द करना, नापना, मानना, समझाना, समूह बनाना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **अवीवशत्** = वश में किया (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वश् - इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **मतिम्** = मति को (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **अत्यो** = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **अज्यते** = स्वच्छ करते हैं, प्रकाश करते हैं (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना) ॥ 3 ॥

(259) सूक्त 33

986. प्र सोमासो विपश्चितो, अपो न यन्ते ऊर्मयः ।

वनानि महिषा इव ॥ 1 ॥

9-33-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सोमासो** = ऐश्वर्यमय **विपश्चितो** = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त **अपो** = पालन करने वाला **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **ऊर्मयः** = ऊर्मियाँ **वनानि** = अनेक वन **महिषा** = महिष, महिमावान्, महान् **इव** = समान, की भाँति, के समान ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सोमासो** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विपश्चितो** = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त (वि = विशेष, विना, विलोम, पश् = देखना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **वनानि** = अनेक वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **महिषा** = महिष, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 1 ॥

987. अभि द्रोणानि बभ्रवः, शुक्रा ऋतस्य धारया ।

वाजम् गोमन्तम् अक्षरन् ॥ 2 ॥

9-33-2

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में **बभ्रवः** = भरण पोषण करने वाले **शुक्राः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **ऋतस्य** = ऋत का **धारया** = धार द्वारा **वाजम्** = विद्या को, गति को **गोमन्तम्** = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को **अक्षरन्** = क्षरित हुए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **बभ्रवः** = भरण पोषण करने वाले (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। **शुक्राः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)।

गोमन्तम् = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **अक्षरन्** = क्षरित हुए (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना) ॥ 2 ॥

988. सुताः इन्द्राय वायवे, वरुणाय मरुद्भ्यः ।

सोमाः अर्षन्ति विष्णवे ॥ 3 ॥ 9-33-3

मन्त्रार्थ :- सुताः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए वायवे = वायु के लिए वरुणाय = वरुण के लिए मरुद्भ्यः = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम अर्षन्ति = प्राप्त हों विष्णवे = व्यापक के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सुताः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। वायवे = वायु के लिए (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। वरुणाय = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। मरुद्भ्यः = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। अर्षन्ति = प्राप्त हों (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। विष्णवे = व्यापक के लिए (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना) ॥ 3 ॥

989. तिस्रो वाचः उदीरते, गावो मिमन्ति धेनवः ।

हरिः एति कनिक्रदत् ॥ 4 ॥ 9-33-4

मन्त्रार्थ :- तिस्रो = तीन वाचः = वाणी उदीरते = उत्तम उच्चारण करते हैं गावो = शब्द, वाणी, वचन मिमन्ति = गति करते हैं, शब्द करते हैं, रक्षा करते हैं धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले हरिः = हरि एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है कनिक्रदत् = प्रकाश करते हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- तिस्रो = तीन (संख्या)। वाचः = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। उदीरते = उत्तम उच्चारण करते हैं (उत्+ईर् - कहना बोलना, उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। मिमन्ति = गति करते हैं, शब्द करते हैं, रक्षा करते हैं (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मीम - जाना, शब्द करना)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। कनिक्रदत् = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना) ॥ 4 ॥

990. अभि ब्रह्मीः अनूषत, यहवीः ऋतस्य मातरः ।

मर्मज्यन्तेः दिवः शिशुम् ॥ 5 ॥ 9-33-5

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा ब्रह्मीः = ब्रह्म, विराट, महान् अनूषत = अनुताप को, अनूषत को यहवीः = महान् ऋतस्य = ऋत का मातरः = माता मर्मज्यन्तेः = शुद्ध करता हुआ दिवः = दिव्य,

तेजस्वी, ज्योतिर्मय **शिशुम्** = शिशु को ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **ब्रह्मीः** = ब्रह्मा, विराट, महान् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अनूषतम्** = अनुताप को, अनूषत को (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **यह्वीः** = महान् (यह्व-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **मातरः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **ममृज्यन्तेः** = शुद्ध करता हुआ (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना। मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **शिशुम्** = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना) ॥ 5 ॥

991. रायः समुद्रान् चतुरो, अस्मभ्यम् सोम विश्वतः ।

आ पवस्व सहस्रिणः ॥ 6 ॥ 9-33-6

मन्त्रार्थ :- रायः = गति, विद्या, वाणी **समुद्रान्** = समुद्रों का **चतुरो** = चार **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **विश्वतः** = सबसे, विश्व से **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **पवस्व** = पवित्र करो **सहस्रिणः** = सहस्री ॥ 6 ॥

पदार्थ :- रायः = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **समुद्रान्** = समुद्रों का (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **चतुरो** = चार (संख्या)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सहस्रिणः** = सहस्री (संख्या) ॥

(260) सूक्त 36

992. असर्जि रथ्यो यथा, पवित्रे चम्बोः सुतः ।

कार्ष्णन् वाजी न्यक्रमीत् ॥ 1 ॥

9-36-1

मन्त्रार्थ - असर्जि = सृजन किया **रथ्यो** = रथ्य **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **चम्बोः** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **कार्ष्णन्** = कार्ष्ण में **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **न्यक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी ॥ 1 ॥

पदार्थ - असर्जि = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **रथ्यो** = रथ्य (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **चम्बोः** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला (चम्ब - मर्दन करना, भय दिखाना, चम - खाना, पाना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **कार्ष्णन्** = कार्ष्ण में (कृ - करना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त

होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **न्यक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय) अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

(261) सूक्त 37

993. सः सुतः पीतये वृषा, सोमः पवित्रे अर्षति ।

विघ्नन् रक्षांसि देवयुः ॥ 1 ॥ 9-37-1

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए पीतये = पान के लिए वृषा = पराक्रमी सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है विघ्नन् = विशेष हनन करते हुए रक्षांसि = रक्षक देवयुः = देव-यु, देव-मिलन ॥ 1 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पीतये = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। विघ्नन् = विशेष हनन करते हुए (घन्-हन् - मारना, हिंसा करना)। रक्षांसि = रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। देवयुः = देव-यु, देव-मिलन (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना) ॥

994. सः पवित्रे विचक्षणो, हरिः अर्षति धर्णसिः ।

अभि योनिम् कनिक्रदत् ॥ 2 ॥ 9-37-2

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है विचक्षणो = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी हरिः = हरि अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है धर्णसिः = धारण करने वाला, धारणकर्ता अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा योनिम् = योनि को कनिक्रदत् = प्रकाश करते हुए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। विचक्षणो = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। धर्णसिः = धारण करने वाला, धारणकर्ता (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बाँधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। कनिक्रदत् = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना) ॥ 2 ॥

995. स वाजी रोचना दिवः, पवमानो वि धावति ।

रक्षोहा वारम् अव्ययम् ॥ 3 ॥ 9-37-3

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त रोचनम् = प्रकाश को दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला वि = विशेष, विना, विलोम धावति = दौड़ता है रक्षोहा = राक्षस का हनन करने वाला वारम् = वरण को अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। रोचनम् = प्रकाश को (रुच् - रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। धावति = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। रक्षोहा = राक्षस का हनन करने वाला (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना, हन - मार डालना, प्राप्त करना, जाना, किसी प्रकार समाप्त करना)। वारम् = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना) ॥ 3 ॥

996. सः त्रितस्य अधि सानवि, पवमानो अरोचयत् ।

जामिभिः सूर्यम् सह ॥ 4 ॥ 9-37-4

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने त्रितस्य = त्रित या तीन का अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार सानवि = हे सेवाभावी, दानी पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला अरोचयत् = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ जामिभिः = जामियों द्वारा, भोजन के साधनों द्वारा, पोषण करने वालों द्वारा सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को सह = साथ, सहित ॥ 4 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। त्रितस्य = त्रित या तीन का (त्रि = तीन, संख्या, सर्वनाम)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। सानवि = हे सेवाभावी, दानी (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अरोचयत् = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। जामिभिः = जामियों द्वारा, भोजन के साधनों द्वारा, पोषण करने वालों द्वारा (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। सह = साथ, सहित (सर्वनाम) ॥ 4 ॥

997. सः वृत्रहा वृषा सुतो, वरिवोवित् अदाभ्यः ।

सोमो वाजम् इव असरत् ॥ 5 ॥ 9-37-5

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले वृषा = पराक्रमी सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए वरिवोवित् = इच्छा को जानने वाले अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम वाजम् = विद्या को, गति को इव = समान, की भाँति, के समान असरत् = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह होता हुआ ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन

करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **वरिवोवित्** = इच्छा को जानने वाले (वर् - इच्छा करना, आशा करना, विद् - जानना)। **अदाभ्यः** = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना, आज्ञा देना, दा - देना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **असरत्** = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना) ॥ 5 ॥

998. सः देवः कविना इषितो, अभि द्रोणानि धावति ।

इन्दुः इन्द्राय मंहना ॥ 6 ॥ 9-37-6

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने देवः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण कविना = ज्ञानियों, कवियों द्वारा इषितो = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि युक्त अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा द्रोणानि = हिंसा, गति, कुटिलता में धावति = दौड़ता है इन्दुः = इन्दु इन्द्राय = इन्द्र के लिए मंहना = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। देवः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। कविना = ज्ञानियों, कवियों द्वारा (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। इषितो = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि युक्त (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। द्रोणानि = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। धावति = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। मंहना = महान्, पूज्य, सम्मान करता हुआ (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना) ॥ 6 ॥

(262) सूक्त 38

999. एषः उ स्य वृषा रथो, अव्या वारेभिः अर्षति ।

गच्छन् वाजम् सहस्रिणम् ॥ 1 ॥ 9-38-1

मन्त्रार्थ :- एषः = यह उ = निश्चय ही, भी स्य = वह, बन्धन वृषा = पराक्रमी रथो = रथ अव्या = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा वारेभिः = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है गच्छन् = जाते हुए वाजम् = विद्या को, गति को सहस्रिणम् = सहस्री को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। स्य = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। रथो = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। अव्या = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अक् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। वारेभिः = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना,

प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **गच्छन्** = जाते हुए (गम्-गच्छ = जाना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सहस्रिणम्** = सहस्री को (संख्या) ॥ 1 ॥

1000. एतम् त्रितस्य योषणो, हरिम् हिन्वन्ति अद्रिभिः ।

इन्दुम् इन्द्राय पीतये ॥ 2 ॥ 9-38-2

मन्त्रार्थ :- एतम् = यह, इसको त्रितस्य = त्रित या तीन का योषणो = योषण, सम्बन्ध हरिम् = हरि को हिन्वन्ति = संतुष्ट करते हैं अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा इन्दुम् = इन्दु को इन्द्राय = इन्द्र के लिए पीतये = पान के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। त्रितस्य = त्रित या तीन का (त्रि = तीन, संख्या, सर्वनाम)। योषणो = योषण, सम्बन्ध (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना, युष = हिंसा करना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। हिन्वन्ति = संतुष्ट करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। इन्दुम् = इन्दु को (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। पीतये = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 2 ॥

1001. एतम् त्यम् हरितो दश, मर्मज्यन्ते अपस्युवः ।

याभिः मदाय शुम्भते ॥ 3 ॥ 9-38-3

मन्त्रार्थ :- एतम् = यह, इसको त्यम् = उस को हरितो = हरित, हरि से दश = दश मर्मज्यन्ते = अत्यन्त शुद्ध करते हैं, अत्यन्त पवित्र करते हैं अपस्युवः = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता याभिः = जिसके द्वारा मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए शुम्भते = प्रकाशित होता है, सुशोभित होता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। त्यम् = उस को (सर्वनाम)। हरितो = हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। दश = दश (दश = दश, संख्या)। मर्मज्यन्ते = अत्यन्त शुद्ध करते हैं, अत्यन्त पवित्र करते हैं (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। अपस्युवः = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता (अप = पालन करना)। याभिः = जिसके द्वारा (सर्वनाम)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। शुम्भते = प्रकाशित होता है, सुशोभित होता है (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना) ॥ 3 ॥

1002. एषः स्य मानुषीषु आ, श्येनो न विक्षु सीदति ।

गच्छन् जारो न योषितम् ॥ 4 ॥ 9-38-4

मन्त्रार्थ :- एषः = यह स्य = वह, बन्धन मानुषीषु = मानुषियों, मनन करने वालों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम श्येनो = श्येन न = नहीं, समान, उपमार्थक विक्षु = प्रजा में सीदति = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है गच्छन् = जाते हुए जारो = जार, वृद्ध, विजेता न = नहीं, समान, उपमार्थक योषितम् = योषित, हिंसक, सम्बन्धित को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। स्य = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। मानुषीषु = मानुषियों, मनन करने वालों में (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। श्येनो = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। विक्षु = प्रजा में (विक्षु - विवेक करना, तारतम्य देखना, पृथक् करना, पृथक् होना)। सीदति = सीदता

है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **गच्छन्** = जाते हुए (गम्-गच्छ् = जाना)। **जारो** = जार, वृद्ध, विजेता (जृ - वृद्ध होना, जि - जय होना, वृद्ध होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योषितम्** = योषित, हिंसक, सम्बन्धित को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना, युष = हिंसा करना) ॥ 4 ॥

1003. एषः स्य मद्यो रसो, अव चष्टे दिवः शिशुः ।

यः इन्दु वारम् आविशत् ॥ 5 ॥ 9-38-5

मन्त्रार्थ :- **एषः** = यह **स्य** = वह, बन्धन **मद्यो** = आनन्दित करने योग्य **रसो** = रस **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **चष्टे** = खाते हैं, बोलते, देखते हैं **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **शिशुः** = शिशु **यः** = जो **इन्दु** = इन्दु **वारम्** = वरण को **आविशत्** = प्रवेश करता है, फैल जाता है ॥ 5 ॥

पदार्थ :- **एषः** = यह (सर्वनाम)। **स्य** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। **मद्यो** = आनन्दित करने योग्य (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **रसो** = रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **चष्टे** = खाते हैं, बोलते, देखते हैं (चष् - खाना, बोलना, देखना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **शिशुः** = शिशु (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **इन्दु** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **आविशत्** = प्रवेश करता है, फैल जाता है (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, विश् = प्रवेश करना, फैलना) ॥ 5 ॥

1004. एषः स्य पीतये सुतो, हरिः अर्षति धर्णसिः ।

क्रन्दन् योनिम् अभि प्रियम् ॥ 6 ॥ 9-38-6

मन्त्रार्थ :- **एषः** = यह **स्य** = वह, बन्धन **पीतये** = पान के लिए **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **हरिः** = हरि **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **धर्णसिः** = धारण करने वाला, धारणकर्ता **क्रन्दन्** = पुकारते हुए **योनिम्** = योनि को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्रियम्** = प्रिय को ॥ 6 ॥

पदार्थ :- **एषः** = यह (सर्वनाम)। **स्य** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **धर्णसिः** = धारण करने वाला, धारणकर्ता (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **क्रन्दन्** = पुकारते हुए (क्रन्द - रोना, पुकारना, दुःख होना)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रियम्** = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना) ॥ 6 ॥

(263) सूक्त 39

1005. आशुः अर्ष बृहन्मते, परि प्रियेण धाम्ना ।

यत्रा देवा इति ब्रवन् ॥ 1 ॥ 9-39-1

मन्त्रार्थ :- **आशुः** = तीव्र गति युक्त, व्यापक **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **बृहन्मते** = महान्, बड़ा, विराट, बृहत्

परि = सभी तरफ प्रियेण = प्रिय द्वारा धाम्ना = धाम द्वारा, धारण करने वाले द्वारा यत्रा = जहाँ देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने इति = ऐसा, यह, इसी प्रकार ब्रवन् = कहते हुए, बोलते हुए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- आशुः = तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। बृहन्मते = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। प्रियेण = प्रिय द्वारा (प्री = प्रेम करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। धाम्ना = धाम द्वारा, धारण करने वाले द्वारा (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। यत्रा = जहाँ (सर्वनाम)। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इति = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। ब्रवन् = कहते हुए, बोलते हुए (ब्रू - कहना, बोलना) ॥ 1 ॥

1006. परिष्कृण्वन् अनिष्कृतम्, जनाय यातयन् इषः ।

वृष्टिम् दिवः परि स्रव ॥ 2 ॥ 9-39-2

मन्त्रार्थ :- परिष्कृण्वन् = परिष्कृत करते हुए, परिष्कार करते हुए अनिष्कृतम् = अनिष्कृत को जनाय = जन के लिए यातयन् = प्राप्त करते हुए, जाते हुए, प्रयत्न करते हुए इष = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय परि = सभी तरफ स्रव = स्रवित करें, स्रवित करो ॥

पदार्थ :- परिष्कृण्वन् = परिष्कृत करते हुए, परिष्कार करते हुए (परिः - सब ओर, कृ - करना)। अनिष्कृतम् = अनिष्कृत को (अ - नहीं, निः - विना, बाहर, निश्चित (अव्यय), कृ - करना)। जनाय = जन के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। यातयन् = प्राप्त करते हुए, जाते हुए, प्रयत्न करते हुए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना)। इष = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्रव = स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना) ॥ 2 ॥

1007. सुतः एति पवित्रे आ, त्विषिम् दधानः ओजसा ।

विचक्षाणो विरोचयन् ॥ 3 ॥ 9-39-3

मन्त्रार्थ :- सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण त्विषिम् = प्रकाशमान को दधानः = धारण करने वाले ओजसा = ओज द्वारा विचक्षाणो = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले विरोचयन् = विशेष प्रकाशित होते हुए, विशेष रुचते हुए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। त्विषिम् = प्रकाशमान को (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। दधानः = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। ओजसा = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। विचक्षाणो = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि - विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। विरोचयन् = विशेष प्रकाशित होते हुए, विशेष रुचते हुए (वि - विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), रुच् - रुचना, प्रीति होना,

प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना) ॥ 3 ॥

1008. अयम् सः यो दिवः परि रघुयामा पवित्रे आ ।

सिन्धोः ऊर्मा व्यक्षरत् ॥ 4 ॥ 9-39-4

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह सः = वह, उसने यो = जो दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय परि = सभी तरफ रघुयामा = शासन करने वाला पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सिन्धोः = समुद्र ऊर्मा = ऊर्म व्यक्षरत् = क्षरित हुआ ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। यो = जो (सर्वनाम)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। रघुयामा = शासन करने वाला (रघ - स्वाद लेना, रुचि लेना, शासन करना, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - स्वाधीन रखना, काबू में रखना, पोषण करना, खाने को देना, नाश करना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सिन्धोः = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। ऊर्मा = ऊर्म (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। व्यक्षरत् = क्षरित हुआ (वि - विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), अ - नहीं, उपसर्ग, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना) ॥ 4 ॥

1009. आविवासन् परावतो, अथो अर्वावतः सुतः ।

इन्द्राय सिच्यते मधु ॥ 5 ॥ 9-39-5

मन्त्रार्थ :- आविवासन् = सम्यक् वसते हुए परावतो = परावत, परा के समान, पराया अथो = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर अर्वावतः = अर्वावत सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए सिच्यते = सिञ्चन करता है मधु = मीठा, मधु ॥ 5 ॥

पदार्थ :- आविवासन् = सम्यक् वसते हुए (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, वस् = रहना, निवास करना)। परावतो = परावत, परा के समान, पराया (अव्यय, सर्वनाम)। अथो = अब, इसके बाद, इसके अनन्तर (अव्यय)। अर्वावतः = अर्वावत (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सिच्यते = सिञ्चन करता है (सिञ्च - सिञ्चन करना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 5 ॥

1010. समीचीनाः अनूषत, हरिम् हिन्वन्ति अद्रिभिः ।

योना वृतस्य सीदत । 6 ॥ 9-39-6

मन्त्रार्थ :- समीचीनाः = पूजक, विद्वान् अनूषत = अनुताप किया हरिम् = हरि को हिन्वन्ति = संतुष्ट करते हैं अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा योना = योनि में, मिलाने अलग करने में, सम्बन्ध में वृतस्य = प्रकाश, वाणी के सीदत = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों ॥ 6 ॥

पदार्थ :- समीचीनाः = पूजक, विद्वान् (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, इज् - पूजना, जाना, जानना)। अनूषत = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। हरिम् = हरि को (ह = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। हिन्वन्ति = संतुष्ट करते हैं (हिन्व - तृप्त होना,

शान्त होना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा (वृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **योना** = योनि में, मिलाने अलग करने में, सम्बन्ध में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **वृतस्य** = प्रकाश, वाणी के (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **सीदत** = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना) ॥ 6 ॥

(264) सूक्त 40

1011. पुनानो अक्रमीत् अभि, विश्वा मृधो विचर्षणिः ।

शुम्भन्ति विप्रम् धीतिभिः ॥ 1 ॥ 9-40-1

मन्त्रार्थ :- पुनानो = पवित्रकर्ता अक्रमीत् = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **मृधो** = हिंसक, आद्र **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले **शुम्भन्ति** = शोभित होते हैं, प्रकाशित होते हैं **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को **धीतिभिः** = धारणा द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **विचर्षणिः** = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **शुम्भन्ति** = शोभित होते हैं, प्रकाशित होते हैं (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। **विप्रम्** = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **धीतिभिः** = धारणा द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 1 ॥

1012. आ योनिम् अरुणो रुहत्, गमत् इन्द्रो वृषा सुतम् ।

ध्रुवे सदसि सीदति ॥ 2 ॥ 9-40-2

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **योनिम्** = योनि को **अरुणो** = हिंसक, गतिशील, व्यापक **रुहत्** = चढ़ते हुए, बढ़ते हुए, बढ़ा, चढ़ा **गमत्** = गतिमान, जाने वाले **इन्द्रो** = इन्दु का **वृषा** = पराक्रमी **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **ध्रुवे** = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील में **सदसि** = सभा में, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य में **सीदति** = बैठो, बैठता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **अरुणो** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **रुहत्** = चढ़ते हुए, बढ़ते हुए, बढ़ा, चढ़ा (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **गमत्** = गतिमान, जाने वाले (गम् = जाना, जानना, पाना)। **इन्द्रो** = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **ध्रुवे** = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील में (ध्रुव = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **सदसि** = सभा में, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **सीदति** = बैठो, बैठता है (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना) ॥ 2 ॥

1013. नू नो रयिम् महाम् इन्दो, अस्मभ्यम् सोम विश्वतः ।

आ पवस्व सहस्रिणम् ॥ 3 ॥ 9-40-3

मन्त्रार्थ :- नू = निश्चय ही, शीघ्र ही नो = हमको, हमारे लिए, हमारा रयिम् = विद्या, ज्ञान को महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को इन्दो = इन्दु का अस्मभ्यम् = हमारे लिए सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता विश्वतः = सबसे, विश्व से आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पवस्व = पवित्र करो सहस्रिणम् = सहस्री को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- नू = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। महाम् = बड़े, पूज्य, महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सहस्रिणम् = सहस्री को (संख्या) ॥ 3 ॥

(265) सूक्त 41

1014. प्र ये गावो न भूर्णयः, त्वेषा अयासो अक्रमुः ।

घ्नन्तः कृष्णाम् अप त्वचम् ॥ 5 ॥ 9-41-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ये जो गावो = शब्द, वाणी, वचन न = नहीं, समान, उपमार्थक भूर्णयः = धारण-पोषण करने वाले त्वेषा = प्रकाशवान् अयासो = प्राप्त करता हूँ अक्रमुः = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी घ्नन्तः = नष्ट करते हुए कृष्णाम् = कृष्ण को अप = दूर, नीचे, अपकार त्वचम् = त्वचा, चर्म, खाल को ॥ 5 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ये = जो (सर्वनाम)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। भूर्णयः = धारण-पोषण करने वाले (भुरण - पालन करना, धारण करना)। त्वेषा = प्रकाशवान् (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना)। अयासो = प्राप्त करता हूँ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना)। अक्रमुः = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। घ्नन्तः = नष्ट करते हुए (हन् - मारना)। कृष्णाम् = कृष्ण को (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। त्वचम् = त्वचा, चर्म, खाल को (त्वच - आच्छादित करना, लपेटना, ढांकना) ॥ 5 ॥

1015. सुवितस्य मनामहे, अति सेतुम् दुराव्यम् ।

साह्वांसो दस्युम् अव्रतम् ॥ 2 ॥ 9-41-2

मन्त्रार्थ :- सुवितस्य = सुवित का मनामहे = मनन करते हैं अति = बहुत, अत्यधिक सेतुम् = सेतु को दुराव्यम् = दोषों को साह्वांसो = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध करें दस्युम् = दस्यु को, रक्षणीय को अव्रतम् = अव्रती को ॥

पदार्थ :- सुवितस्य = सुवित का (सु - उत्तम, अच्छा, वि - विशेष, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना)। मनामहे = मनन करते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। सेतुम् = सेतु को (सि - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। दुराव्यम् = दोषों को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। साह्वांसो = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध करें (सह = शक्तिमान् करना, सहना,

सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **दस्युम्** = दस्यु को, रक्षणीय को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। **अव्रतम्** = अव्रती को (अ = नहीं, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना) ॥ 2 ॥

1016. शृण्वे वृष्टेः इव स्वनः, पवमानस्य शुष्मिणः।

चरन्ति विद्युतो दिवि ॥ 3 ॥

9-41-3

मन्त्रार्थ :- शृण्वे = सुनें वृष्टेः = वृष्टि के इव = समान, की भाँति, के समान स्वनः = वाणी, अलंकृत पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का शुष्मिणः = शुष्मी चरन्ति = विचरण करते हैं, चलते हैं विद्युतो = विशेष प्रकाशमान दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 3 ॥

पदार्थ :- शृण्वे = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना)। वृष्टेः = वृष्टि के (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। स्वनः = वाणी, अलंकृत (स्वन - शब्द करना, आवाज करना, स्वन - संवारना, सजाना, अलंकृत करना, सुशोभित करना)। पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। शुष्मिणः = शुष्मी (शुष् - सुखाना)। चरन्ति = विचरण करते हैं, चलते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। विद्युतो = विशेष प्रकाशमान (वि - विशेष, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 3 ॥

1017. आ पवस्व महीम् इषम्, गोमत् इन्दो हिरण्यवत्।

अश्वावत् वाजवत् सुता ॥ 4 ॥

9-41-4

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पवस्व = पवित्र करो महीम् = मही को, महिमावान् को, महान् को इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त इन्दो = इन्दु का हिरण्यवत् = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा अश्वावत् = अश्व, तीव्र गति, व्यापक के समान वाजवत् = वीर के समान सुता = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। महीम् = मही को, महिमावान् को, महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। हिरण्यवत् = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। अश्वावत् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। वाजवत् = गतिमान, बलवान् (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सुता = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 4 ॥

1018. सः पवस्व विश्वचर्षणे, आ मही रोदसी पृण ।

उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ॥ 5 ॥ 9-41-5

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने। पवस्व = पवित्र करो विश्वचर्षणे = सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील, में, के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मही = मही, महिमावान्, महान् रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले पृण = पूर्ण करो उषाः = प्रभात, हिंसा सूर्यो = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् न = नहीं, समान, उपमार्थक रश्मिभिः = किरणों से ॥ 5 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। विश्वचर्षणे = सबको आनन्द देने वाले, विश्व चेतनशील, में, के लिए (विश्व - सभी, चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मही = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। पृण = पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। उषाः = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। सूर्यो = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। रश्मिभिः = किरणों से (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना) ॥ 5 ॥

1019. परि णः शर्मयन्त्या, धारया सोम विश्वतः ।

सरा रसेव विष्टपम् ॥ 6 ॥ 9-41-6

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ णः = हमको, हमारे लिए, हमारा शर्मयन्त्या = सुख, सम्मान, समृद्धि वाले, द्वारा धारया = धार द्वारा सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, अन्तकर्ता विश्वतः = सबसे, विश्व से सरा = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह रसेव = रस के समान विष्टपम् = विस्तृत ॥ 6 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। णः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। शर्मयन्त्या = सुख, सम्मान, समृद्धि वाले, द्वारा (शर्म = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। सरा = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। रसेव = रस के समान (रस् = शब्द करना, स्वाद लेना, प्यार करना)। विष्टपम् = विस्तृत (विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना) ॥ 6 ॥

(266) सूक्त 42

1020. एषः प्रत्नेन मन्मना, देवो देवेभ्यः परि ।

धारया पवते सुतः ॥ 2 ॥ 9-42-2

मन्त्रार्थ :- एषः = यह प्रत्नेन = प्रसिद्ध, प्रकृष्टता, विस्तार द्वारा मन्मना = विचारशील द्वारा देवो = देव देवेभ्यः = देवों के लिए परि = सभी तरफ धारया = धार द्वारा पवते = पर्वत में, पर्वत पर सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- एषः = यह (सर्वनाम)। प्रत्नेन = पुरातन द्वारा (प्र+त्न+इत्, प्र - प्रकृष्ट, अधिक (विशेषण))। मन्मना = विचारशील द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना,

मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **देवो** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवेभ्यः** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **पवते** = पर्वत में, पर्वत पर (पर्व - पूर्ण करना, पूरा करना, भरना, विभाग करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)॥ 2 ॥

1021. दुहानः प्रत्नमित् पयः, पवित्रे परि षिच्यते।

क्रन्दम् देवान् अजीजनत् ॥ 4 ॥ 9-42-4

मन्त्रार्थ :- दुहानः = दुहने वाले प्रत्नमित् = पुरातन ही पयः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र परि = सभी तरफ षिच्यते = सिञ्चन करता है क्रन्दम् = क्रन्दन को, क्रन्दनयुक्त को देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को अजीजनत् = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला ॥ 4 ॥

पदार्थ :- दुहानः = दुहने वाले (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। प्रत्नमित् = पुरातन ही (प्र+त्न+इत्, प्र - प्रकृष्ट, अधिक (विशेषण))। पयः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण (पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। षिच्यते = सिञ्चन करता है (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। क्रन्दम् = क्रन्दन को, क्रन्दनयुक्त को (क्रन्द - रोना, पुकारना, दुःख होना)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अजीजनत् = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना) ॥ 4 ॥

(267) सूक्त 44

1022. प्र नः इन्दो महे तने ऊर्मि न बिभ्रत् अर्षसि।

अभि देवान् अयास्यः ॥ 1 ॥ 9-44-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्दो = हे इन्दु का महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् तने = विस्तार के लिए ऊर्मि = ऊर्मि न = नहीं, समान, उपमार्थक बिभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को अयास्यः = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्दो = हे इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। तने = विस्तार के लिए (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। ऊर्मि = ऊर्मि (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। बिभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अयास्यः = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना) ॥ 1 ॥

1023. अया सोमः सुकृत्यया, महः चित्, अभ्यवर्धत ।

मन्दानः उत् वृषायते ॥ 1 ॥

9-47-1

मन्त्रार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा सोमः = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम सुकृत्यया = उत्तम कृत्यों द्वारा महः = महान् चित् = भी, ही। अभ्यवर्धत = सभी ओर, सर्वथा बढ़ता हुआ, चमकता हुआ मन्दानः = आनन्दित होता हुआ उत् = ही वृषायते = पराक्रमी है ॥ 1 ॥

पदार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। सोमः = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सुकृत्यया = उत्तम कृत्यों द्वारा (सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग) कृ = करना)। महः = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। चित् = भी, ही। अभ्यवर्धतः = सभी ओर, सर्वथा बढ़ता हुआ, चमकता हुआ (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, आ - समन्तात्, पूर्णतः, वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। मन्दान = आनन्दित होता हुआ (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। उत् = ही (अव्यय)। वृषायते = पराक्रमी है (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) ॥

1024. तम् त्वा नृम्णानि बिभ्रतम्, सधस्थेषु महो दिवः ।

चारुम् सुकृत्यया ईमहे ॥ 1 ॥

9-48-1

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा नृम्णानि = नर बिभ्रतम् = भरण, धारण करने वाले को सधस्थेषु = सहस्थानों, सहगामियों, साथ में महो = बड़े, महिमावान्, महान् दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय चारुम् = चारु को सुकृत्यया = उत्तम कृत्यों द्वारा ईमहे = आते हैं, जानते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। नृम्णानि = नर (नृ - ले जाना)। बिभ्रतम् = भरण, धारण करने वाले को (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। सधस्थेषु = सहस्थानों, सहगामियों, साथ में (सध = साथ, सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। महो = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। चारुम् = चारु को (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। सुकृत्यया = उत्तम कृत्यों द्वारा (सु = अच्छा, अच्छा (उपसर्ग) कृ = करना)। ईमहे = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 1 ॥

1025. संवृक्तधृष्णुम् उक्थ्यम्, महामहिब्रतम् मदम् ।

शतम् पुरो रुरुक्षणिम् ॥ 2 ॥

9-48-2

मन्त्रार्थ :- संवृक्त-धृष्णुम् = हिंसकों के सम्यक् विजेता उक्थ्यम् = उक्ति को, कथन को महामहिब्रतम् = महान् व्रती को, महाव्रती मदम् = मद को, हर्ष को, तृप्ति को शतम् = सौ पुरो = पहले, अग्रणी रुरुक्षणिम् = रुक्ष को, कठोर वाणी वाले को, नष्ट करने वाले को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- संवृक्त-धृष्णुम् = हिंसकों के सम्यक् विजेता (वृक्त- लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना, सम् - सम्यक्, भलीभाँति, धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बढ़ा

समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **उक्थ्यम्** = उक्ति को, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **महामहिब्रतम्** = महान् ब्रती को, महाब्रती (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, मंह-महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **पुरो** = पहले, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **रुरुक्षणिम्** = रुक्ष को, कठोर वाणी वाले को, नष्ट करने वाले को (रुक्ष - कठिन होना, रुक्ष होना, कठोर वचन बोलना, नीरस होना, शुष्क होना, सूखना, रुज - मारना, दुःख देना)।॥ 2 ॥

1026. अतः त्वा रयिम् अभि अयत्, राजानम् सुक्रतो दिवः ।

सुपर्णो अव्यथी भरत् ॥ 3 ॥ 9-48-3

मन्त्रार्थ :- अतः = इसलिए त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **अयत्** = गति, ज्ञान, प्राप्ति, उद्धार, प्रेरणा करते हुए **राजानम्** = राजा **सुक्रतो** = उत्तम कर्म वाले **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **सुपर्णो** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला **अव्यथी** = निर्भय, दुःख-हीन **भरत्** = भरण करने वाले, भरण करते हुए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अतः = इसलिए (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **अयत्** = गति, ज्ञान, प्राप्ति, उद्धार, प्रेरणा करते हुए (अ - नहीं, यन् - उद्धार करना, प्रेरणा करना, अय् = जाना, जानना, पाना)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **सुक्रतो** = उत्तम कर्म वाले (सु = सुन्दर, अच्छा, उपसर्ग, कृ = करना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सुपर्णो** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला (सु - सुन्दर, अच्छा, पर्ण - हरा करना, हरा होना)। **अव्यथी** = निर्भय, दुःख-हीन (अ = नहीं, व्यथ् = डरना, दुःखी होना)। **भरत्** = भरण करने वाले, भरण करते हुए (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 3 ॥

1027. विश्वस्मै इत् स्वर्दृशे, साधारणम् रजस्तुरम् ।

गोपाम् ऋतस्य वि भरत् ॥ 4 ॥ 9-48-4

मन्त्रार्थ :- विश्वस्मै = विश्व, सभी, सब के लिए **इत्** = ही **स्वर्दृशे** = स्वर्दृश में **साधारणम्** = साधारण को **रजस्तुरम्** = रजातुर को, विलीनता के लिए आतुर को **गोपाम्** = रक्षा करने वालों के, रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक **ऋतस्य** = ऋत का **वि** = विशेष, विना, विलोम **भरत्** = भरण करने वाले, भरण करते हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- विश्वस्मै = विश्व, सभी, सब के लिए (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **स्वर्दृशे** = स्वर्दृश में (स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, दृश्-पश्य -देखना)। **साधारणम्** = साधारण को (स - सहित, आ - समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), धृ - धारण करना, रखना, गिर पड़ना, नष्ट होना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **रजस्तुरम्** = रजातुर को, विलीनता के लिए आतुर को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना, तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **गोपाम्** = रक्षा करने वालों के, रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **भरत्** = भरण करने वाले, भरण करते हुए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना) ॥ 4 ॥

1028. अधा हिन्वानः इन्द्रियम्, ज्यायो महित्वम् आनशे ।

अभिष्टिकृत् विचर्षणिः ॥ 5 ॥

9-48-5

मन्त्रार्थ :- अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर हिन्वानः = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित ज्यायो = वृद्ध, जयी महित्वम् = महित्व को आनशे = प्राप्त कराता है अभिष्टिकृत् = सर्वथा इष्ट करने वाला विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। हिन्वानः = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। इन्द्रियम् = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ज्यायो = वृद्ध, जयी (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। महित्वम् = महित्व को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। आनशे = प्राप्त कराता है (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नश - खो जाना, नष्ट होना, दिखाई नहीं देना, अन्- चेतन होना, प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। अभिष्टिकृत् = सर्वथा इष्ट करने वाला (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, इष् = इच्छा करना, चाहना)। विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना) ॥ 4 ॥

(270) सूक्त 49

1029. पवस्व वृष्टिम् आ सु नो, अपाम् ऊर्मिम् दिवः परि ।

अयक्ष्मा बृहतीः इषः ॥ 1 ॥ 9-49-1

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सु = उत्तम, श्रेष्ठ नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अपाम् = अपा को, पालकों का ऊर्मिम् = ऊर्मियों को दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय परि = सभी तरफ अयक्ष्मा = गतिशील, विद्वान् अश्रेष्ठ, अपूज्य, पूजा न करने वाला बृहतीः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् इषः = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सु = उत्तम, श्रेष्ठ (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। ऊर्मिम् = ऊर्मियों को (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। अयक्ष्मा = गतिशील, विद्वान् अश्रेष्ठ, अपूज्य, पूजा न करने वाला (अ - नहीं, यक्ष् - श्रेष्ठ होना, पूज्य होना, पूजा करना, अय् = जाना, जानना, पाना, क्षम् - क्षमा करना, समर्थ होना, सहन करना, रोकना)। बृहतीः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। इषः = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 1 ॥

1030. तया पवस्व धारया, यया गावः इह आगमन् ।

जन्यासः उप नो गृहम् ॥ 2 ॥

9-49-2

मन्त्रार्थ :- तया = उसके द्वारा पवस्व = पवित्र करो धारया = धार द्वारा यया = जिससे गावः = शब्द, वाणी, वचन इह = इसमें, यहां, यह आगमन् = आये हुए जन्यासः = जन्य, उत्पन्न करने योग्य उप = समीप नो = हमको, हमारे लिए, हमारा गृहम् = गृह, घर को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- तथा = उसके द्वारा (सर्वनाम)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। यया = जिससे (सर्वनाम)। गावः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। आगमन् = आये हुए (गम् - जाना, आ-गम् = आना)। जन्यासः = जन्य, उत्पन्न करने योग्य (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। उप = समीप (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। गृहम् = गृह, घर को (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना) ॥ 2 ॥

1031. घृतम् पवस्व धारया, यज्ञेषु देववीतमः ।

अस्मभ्यम् वृष्टिम् आ पव ॥ 3 ॥ 9-49-3

मन्त्रार्थ :- घृतम् = प्रकाशमान को पवस्व = पवित्र करो धारया = धार द्वारा यज्ञेषु = यजनों में देववीतमः = अत्यन्त देव-व्याप्ति, दिव्य ज्ञान अस्मभ्यम् = हमारे लिए वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम पव = पवित्र करो, पालन करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- घृतम् = प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। यज्ञेषु = यजनों में (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। देववीतमः = अत्यन्त देव-व्याप्ति, दिव्य ज्ञान (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। पव = पवित्र करो, पालन करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना) ॥ 3 ॥

1032. सः नः ऊर्जे वि अव्ययम्, पवित्रम् धाव धारया ।

देवासः शृणवन् हि कम् ॥ 4 ॥ 9-49-4

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ऊर्जे = ऊर्जा के लिए वि = विशेष, विना, विलोम अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को पवित्रम् = पवित्र को धाव = प्रगति करो, दौड़ो धारया = धार द्वारा देवासः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण शृणवन् = सुने हि = ही, निश्चय कम् = किसको ॥ 4 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। ऊर्जे = ऊर्जा के लिए (ऊर्ज = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। धाव = प्रगति करो, दौड़ो (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। देवासः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। शृणवन् = सुने (श्रु-शृण् = सुनना, जाना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। कम् = किसको

1033. पवमानो असिष्यदत्, रक्षांसि अपजङ्घनत् ।**प्रत्नवत् रोचयन् रुचः ॥ 5 ॥ 9-49-5**

मन्त्रार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला असिष्यदत् = सिञ्चन किया रक्षांसि = रक्षक अपजङ्घनत् = हनन किया, हिंसा की, मार दिया, गये प्रत्नवत् = प्रसिद्धि, प्रकृष्टता से युक्त रोचयन् = प्रकाशित करते हुए रुचः = रुच ॥ 5 ॥

पदार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। असिष्यदत् = सिञ्चन किया (स्यन्द - टपकना, झरना, चूना, सींचना, छींटा देना, जाना)। रक्षांसि = रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। अपजङ्घनत् = हनन किया, हिंसा की, मार दिया, गये (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), जङ्घ - गति करना, जाना, जानना, पाना, हन्-घ्न - हिंसा करना)। प्रत्नवत् = प्रसिद्धि, प्रकृष्टता से युक्त (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। रोचयन् = प्रकाशित करते हुए (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। रुचः = रुच (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना) ॥ 5 ॥

(271) सूक्त 50**1034. उत् ते शुष्मासः ईरते, सिन्धोः ऊर्मैः इव स्वनः ।****वाणस्य चोदया पविम् ॥ 1 ॥ 9-50-1**

मन्त्रार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शुष्मासः = शुष्म, सुखाने वाले ईरते = कम्पित करता है सिन्धोः = समुद्र ऊर्मैः = ऊर्मि का इव = समान, की भाँति, के समान स्वनः = वाणी, अलंकृत वाणस्य = वाणी का चोदया = प्रेरित करो, प्रेरणा दो पविम् = पवित्र, पालन, रक्षा करने वाले को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। शुष्मासः = शुष्म, सुखाने वाले (शुष् - सुखाना)। ईरते = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। सिन्धोः = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। ऊर्मैः = ऊर्मि का (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। स्वनः = वाणी, अलंकृत (स्वन - शब्द करना, आवाज करना, स्वन - संवारना, सजाना, अलंकृत करना, सुशोभित करना)। वाणस्य = वाणी का (वण् - बोलना, भीड़ होना)। चोदया = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। पविम् = पवित्र, पालन, रक्षा करने वाले को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना) ॥ 1 ॥

1035. प्रसवे ते उत् इरते, तिस्रो वाचो मखस्युवः ।**यद् अव्ये एषि सानवि ॥ 2 ॥ 9-50-2**

मन्त्रार्थ :- प्रसवे = उत्पन्नकर्ता में, उत्पन्न करे ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए उत् = भी, ही, इरते = ईर्ष्या के लिए तिस्रो = तीन वाचो = वाणी मखस्युवः = प्रगतिशील युवा यद् = जो अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में एषि = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो सानवि = हे सेवाभावी, दानी ॥ 2 ॥

पदार्थ :- प्रसवे = उत्पन्नकर्ता में, उत्पन्न करे (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। उत् = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (अव्यय)। इरते = ईर्ष्या के लिए (इर् - ईर्ष्या करना, मत्सर करना)। तिस्रो = तीन (संख्या)। वाचो = वाणी (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। मखस्युवः = प्रगतिशील युवा (मख - जाना, स्थानान्तर करना, युव् - बल होना, तरुण होना, युवा होना, यु - मिलाना, अलग करना, बन्धन करना)। यद् = जो (सर्वनाम)। अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। एषि = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो,

आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। सानवि = हे सेवाभावी, दानी (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 2 ॥

1036. अव्या वारैः परि प्रियम्, हरिम् हिन्वन्ति अद्रिभिः ।

पवमानम् मधुश्चुतम् ॥ 3 ॥ 9-50-3

मन्त्रार्थ :- अव्या = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा वारैः = वरण, इच्छाओं द्वारा परि = सभी तरफ प्रियम् = प्रिय को हरिम् = हरि को हिन्वन्ति = संतुष्ट करते हैं अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा पवमानम् = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले को मधुश्चुतम् = मधुश्चुत को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अव्या = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। वारैः = वरण, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। हिन्वन्ति = संतुष्ट करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। अद्रिभिः = अद्रियों द्वारा (द्रि - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। पवमानम् = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मधुश्चुतम् = मधुश्चुत को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना) ॥ 3 ॥

1037. आ पवस्व मदिन्तम्, पवित्रम् धारया कवे ।

अर्कस्य योनिम् आसदम् ॥ 4 ॥ 9-50-4

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम पवस्व = पवित्र करो मदिन्तम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले पवित्रम् = पवित्र को धारया = धार द्वारा कवे = कवि अर्कस्य = अर्क का, स्तोता का, प्रशंसक का योनिम् = योनि को आसदम् = सम्यक् बैठने को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मदिन्तम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। कवे = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। अर्कस्य = अर्क का, स्तोता का, प्रशंसक का (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आसदम् = सम्यक् बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 4 ॥

1038. स पवस्व मदिन्तम्, गोभिः अज्जानो अक्तुभिः ।

इन्द्रो इन्द्राय पीतये ॥ 5 ॥ 9-50-5

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने पवस्व = पवित्र करो मदिन्तम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ अज्जानो = स्वच्छता, प्रकाश करने वाले अक्तुभिः = अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा इन्द्रो = इन्द्र का इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए पीतये = पान के लिए ॥ 5 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मदिन्तम् = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। अज्जानो = स्वच्छता, प्रकाश करने वाले (अज्ज - स्वच्छ

करना, प्रकाशित होना, जाना)। **अक्तुभिः** = अक्तुओं द्वारा, कुटिलता द्वारा, गति द्वारा (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक् - जाना, जानना पाना, टेढ़ा जाना, कुटिल गति करना, वक्रगति करना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। **पीतये** = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 5 ॥

(272) सूक्त 51

1039. अध्वर्यो अद्रिभिः सुतम्, सोमम् पवित्रे आ सृज ।

पुनीहि इन्द्राय पातवे ॥ 1 ॥

9-51-1

मन्त्रार्थ :- अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **पवित्रे** = पवित्र **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सृज** = सृजन करो **पुनीहि** = पवित्र करो **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **पातवे** = पालन करने वाले के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अध्वर्यो = अध्वर्य, अहिंसनीय (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा (द्र - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **पवित्रे** = पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सृज** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **पुनीहि** = पवित्र करो (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। **पातवे** = पालन करने वाले के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना) ॥ 1 ॥

1040. दिवः पीयूषम् उत्तमम्, सोमम् इन्द्राय वज्रिणे ।

सुनोता मधुमत्तमम् ॥ 2 ॥

9-51-2

मन्त्रार्थ :- दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पीयूषम्** = पीयूष को **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए **सुनोता** = आसवन करो, उत्तम स्तुति वाला **मधुमत्तमम्** = अत्यन्त मीठा, अत्यन्त मधुयुक्त को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पीयूषम्** = पीयूष को (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रिणे** = वज्र, गतिमान के लिए (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **सुनोता** = आसवन करो, उत्तम स्तुति वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सु - उत्तम, अच्छा, नु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **मधुमत्तमम्** = अत्यन्त मीठा, अत्यन्त मधुयुक्त को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 2 ॥

1041. तव त्ये इन्दो अन्धसो, देवाः मधोः वि अश्नते ।

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा त्ये = वे इन्दो = इन्दु का अन्धसो = प्राणवान्, अन्धकार से देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने मधोः = मधु का वि = विशेष, विना, विलोम अश्नते = भोग करता है, प्राप्त करता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का मरुतः = मरणशील, मरुतों का ॥ 3 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। त्ये = वे (सर्वनाम)। इन्दो = इन्दु का (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। अन्धसो = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। मधोः = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। अश्नते = भोग करता है, प्राप्त करता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मरुतः = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना) ॥ 3 ॥

(273) सूक्त 52

1042. परि द्युक्षः सनद् रयिः, भरत् वाजम् नो अन्धसा ।

सुवानो अर्ष पवित्रे आ ॥ 1 ॥ 9-52-1

मन्त्रार्थ - परि = सभी तरफ द्युक्षम् = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ सनद् = सेवा, दान, पूजा कर रयिः = विद्या, ज्ञान भरत् = भरण करने वाले, भरण करते हुए वाजम् = विद्या को, गति को नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अन्धसा = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा सुवानो = उत्पन्न करने वाला, शब्द करने वाला अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन पवित्रे = पवित्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ॥ 1 ॥

पदार्थ - परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। द्युक्षम् = प्रकाश में समर्थ, सक्षम अग्रगामी, अग्रगामी होने में समर्थ (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, क्षम् = क्षमा करना, सहन करना, समर्थ होना, रोकना)। सनद् = सेवा, दान, पूजा कर (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। रयिः = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। भरत् = भरण करने वाले, भरण करते हुए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अन्धसा = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। सुवानो = उत्पन्न करने वाला, शब्द करने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। पवित्रे = पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) ॥ 1 ॥

(274) सूक्त 53

1043. उत् ते शुष्मासो अस्थू, रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः ।

नुदस्व याः परिस्पृधः ॥ 1 ॥ 9-53-1

मन्त्रार्थ :- उत् = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए शुष्मासो =

शुष्म, सुखाने वाले **अस्थू** = फेंकने वाले, अस्थिर, अस्थि, अस्तित्व का आधार **रक्षो** = रक्षा करने वाले, रक्षक **भिन्दन्तो** = भेदन करने वाले **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला **नुदस्व** = भेजें **याः** = जो **परिस्पृधः** = स्पर्धा करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ :- उत् = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **शुष्मासो** = शुष्म, सुखाने वाले (शुष् - सुखाना)। **अस्थू** = फेंकने वाले, अस्थिर, अस्थि, अस्तित्व का आधार (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था - स्थित होना, ठहरना)। **रक्षो** = रक्षा करने वाले, रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **भिन्दन्तो** = भेदन करने वाले (भिद्-भिन्द् - भेदना, भेदन करना, भाग करना)। **अद्रिवः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (द्र - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **नुदस्व** = भेजें (नुद् = भेजना, प्रेरणा करना, जाना)। **याः** = जो (सर्वनाम)। **परिस्पृधः** = स्पर्धा करने वाले (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना) ॥ 1 ॥

1044. अया निजघ्निः ओजसा, रथसंगे धने हिते ।

स्तवै अबिभ्युषा हृदा ॥ 2 ॥ 9-53-2

मन्त्रार्थ :- अया = इस **निजघ्निः** = हननकर्ता **ओजसा** = ओज द्वारा **रथसंगे** = रथ-गमन **धने** = धन **हिते** = हित, गति, वृद्धि में **स्तवै** = स्तुति **अबिभ्युषा** = निर्भय **हृदा** = हृदय ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अया = इस (सर्वनाम)। **निजघ्निः** = हननकर्ता (नि - निश्चित, निरन्तर, जघ्न् - मार डालना, प्राप्त करना, जाना, किसी प्रकार समाप्त करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **रथसंगे** = रथ-गमन (रथ - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना, सम् - सम्यक्, गम् - जाना, सम्-गम्, सङ्गम् - मिलना, साथ चलना)। **धने** = धन (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **हिते** = हित, गति, वृद्धि में (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **स्तवै** = स्तुति (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **अबिभ्युषा** = निर्भय (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भी - डरना)। **हृदा** = हृदय (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना) ॥ 2 ॥

1045. अस्य व्रतानि न आधृषे, पवमानस्य दूढ्या ।

रुज यः त्वा पृतन्यति ॥ 3 ॥ 9-53-3

मन्त्रार्थ :- अस्य = इसका **व्रतानि** = व्रतों को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **आधृषे** = अभिमानी के लिए **पवमानस्य** = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का **दूढ्या** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी द्वारा **रुज** = हिंसा करने वाले **यः** = जो **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **पृतन्यति** = व्यापक होते हैं, बल-पूर्वक करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अस्य = इसका (सर्वनाम)। **व्रतानि** = व्रतों को (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **आधृषे** = अभिमानी के लिए (अन् + आ + धृष् = जीतना, अधीर होना, घबराना, धृषा = गर्व करना, स्वयम् को बड़ा समझना)। **पवमानस्य** = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **दूढ्या** = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी द्वारा (दू - जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **रुज** = हिंसा करने वाले (रुज् - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **पृतन्यति** = व्यापक होते हैं, बल-पूर्वक करते हैं (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना) ॥ 3 ॥

1046. तम् हिन्वन्ति मदच्युतम्, हरिम् नदीषु वाजिनम् ।

इन्दुम् इन्द्राय मत्सरम् ॥ 4 ॥ 9-53-4

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं मदच्युतम् = आनन्द-सिंचित को हरिम् = हरि को नदीषु = नदियों में वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को इन्दुम् = इन्दु को इन्द्राय = इन्द्र के लिए मत्सरम् = आनन्दगामी, आनन्दकारी को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। मदच्युतम् = आनन्द-सिंचित को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। नदीषु = नदियों में (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। इन्दुम् = इन्दु को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। मत्सरम् = आनन्दगामी, आनन्दकारी को (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना) ॥ 4 ॥

(275) सूक्त 54

1047. अस्य प्रत्नाम् अनु द्युतम्, शुक्रम् दुदुहरे अहरयः ।

पयः सहस्रसाम् ऋषिम् ॥ 1 ॥ 9-54-1

मन्त्रार्थ :- अहरयः व्यापकों ने अस्य इसके शुक्रम् पवित्र प्रत्नाम् प्रसिद्ध द्युतम् प्रकाश के सहस्रसाम् हजारों पयः प्रवाह ऋषिम् ऋषि का दुदुहरे दोहन किया।

भावार्थ :- परमात्मा का प्रसिद्ध पवित्र प्रकाश हजारों प्रवाहों के रूप में सर्वत्र व्याप्त है। वही मूलतः ऋषि है। व्यापक दृष्टिकोण वाले लोग उसका दोहन कर पाते हैं। वह संकीर्ण स्वार्थी लोगों को उपलब्ध नहीं हो पाता है। ऋषि शब्द का अर्थ है गति। जो परमात्मा की परम चेतना में सहज स्वाभाविक गति वाले उपासक हैं, वे ही ऋषि कहे जाते हैं। इसी ऋषि भाव का दोहन करना है, प्राप्त करना है, अपनाना है ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अस्य = इसका। प्रत्नाम् = प्रसिद्ध (प्रथ् = प्रसिद्ध होना)। अनु। द्युतम् = प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना)। शुक्रम् = शुद्ध, पवित्र (शुच्, शुध् = शुद्ध होना, पवित्र होना)। दुदुहरे = दोहन किया (दुह् = दुहना)। अहरयः = व्यापकों ने (अह् = व्यापक होना)। पयः = प्रवाह (पय् = जाना, जानना, पाना)। सहस्रसाम् = हजारों का (सहस्र = हजार)। ऋषिम् = ऋषि को (ऋष - जाना, पाना, जानना) ॥ 1 ॥

1048. अयम् सूर्य-इव उपदृक्, अयम् सरांसि धावति ।

सप्त प्रवतः आ दिवम् ॥ 2 ॥ 9-54-2

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह सूर्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाला इव = समान, की भाँति, के समान उपदृक् = उपदृष्टि अयम् = यह सरांसि = अनेक सर धावति = दौड़ता है सप्त = सात प्रवतः = अधिक होता है, चलता है, गमन करता है आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण दिवम् = दिव को, तेजस्वी को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। सूर्य = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। उपदृक् = उपदृष्टि (उप - समीप, दृश्-पश्य - देखना)। अयम् = यह (सर्वनाम)। सरांसि = अनेक सर (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। धावति = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। सप्त = सात (संख्या)। प्रवतः = अधिक होता है, चलता है, गमन करता है (प्रु - अधिक होना, जाना, हिलना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। दिवम् = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना,

जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 2 ॥

1049. अयम् विश्वानि तिष्ठति, पुनानो भुवना उपरि ।

सोमो देवो न सूर्यः ॥ 3 ॥ 9-54-3

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह विश्वानि = सभी तिष्ठति = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है पुनानो = पवित्रकर्ता भुवना = हो रहा, वर्तमान उपरि = ऊपर सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम देवो = देव न = नहीं, समान, उपमार्थक सूर्यः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। तिष्ठति = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ = ठहरना, खड़ा होना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। भुवना = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। उपरि = ऊपर (सर्वनाम, अव्यय)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। देवो = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। सूर्यः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 3 ॥

(276) सूक्त 55

1050. यवम् यवम् नो अन्धसा, पुष्टम् पुष्टम् परि स्रव ।

सोम विश्वा च सौभगा ॥ 1 ॥ 9-55-1

मन्त्रार्थ :- यवम् = यव को यवम् = यव को नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अन्धसा = अन्धस् द्वारा, अन्न, प्राण-धारण द्वारा पुष्टम् = पुष्ट, पोषित को पुष्टम् = पुष्ट, पोषित को परि = सभी तरफ स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विश्वा = विश्व, सभी, सब च = और। सौभगा = सुभग ॥ 1 ॥

पदार्थ :- यवम् = यव को (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। यवम् = यव को (यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अन्धसा = अन्धस् द्वारा, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। पुष्टम् = पुष्ट, पोषित को (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। पुष्टम् = पुष्ट, पोषित को (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। च = और। सौभगा = सुभग (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 1 ॥

1051. इन्दो यथा तव स्तवो, यथा ते जातम् अन्धसः ।

नि बर्हिषि प्रिये सदः ॥ 2 ॥ 9-55-2

मन्त्रार्थ :- इन्दो = इन्दु का यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार तव = तुम्हारा स्तवो = स्तुति यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से नि = निश्चित, निरन्तर बर्हिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में

प्रिये = प्रिय सदः = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इन्दो = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। स्तवो = स्तुति (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। बहिषि = श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में, वृद्धि में, बढ़ने में, अभिवृद्धिकारक कर्म में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। प्रिये = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। सदः = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 2 ॥

1052. उत नो गोवित् अश्ववित्, पवस्व सोम अन्धसा ।

मक्षूतमेभिः अहभिः ॥ 3 ॥ 9-55-3

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर नो = हमको, हमारे लिए, हमारा गोवित् = गोविद्, गो को जानने वाले अश्ववित् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को जानने वाले पवस्व = पवित्र करो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम अन्धसा = अन्धस् द्वारा, अन्न, प्राण-धारण द्वारा मक्षूतमेभिः = अत्यन्त डसने वालों द्वारा अहभिः = व्यापकों द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। गोवित् = गोविद्, गो को जानने वाले (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विद् - जानना)। अश्ववित् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को जानने वाले (अश् = व्यापक होना, चलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, विद् - जानना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। अन्धसा = अन्धस् द्वारा, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। मक्षूतमेभिः = अत्यन्त डसने वालों द्वारा (मक्ष - डसना)। अहभिः = व्यापकों द्वारा (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना) ॥ 3 ॥

1053. यो जिनाति न जीयते, हन्ति शत्रुम् अभीत्य ।

सः पवस्व सहस्रजित् ॥ 4 ॥ 9-55-4

मन्त्रार्थ :- यो = जो जिनाति = जीतता है न = नहीं, समान, उपमार्थक जीयते = जीता जाता है हन्ति = मारता है शत्रुम् = शत्रु को अभीत्य = निडर होकर सः = वह, उसने पवस्व = पवित्र करो सहस्रजित् = सहस्रजित, सहस्रों को जीतने वाला ॥ 4 ॥

पदार्थ :- यो = जो (सर्वनाम)। जिनाति = जीतता है (जि - अलग करना, जय करना, मिलाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। जीयते = जीता जाता है (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। हन्ति = मारता है (हन् - मारना)। शत्रुम् = शत्रु को (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। अभीत्य = निडर होकर (अ - नहीं, भी = भय होना, डरना, घबराना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सहस्रजित् = सहस्रजित, सहस्रों को जीतने वाला (सहस्र = हजार, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना) ॥ 4 ॥

(277) सूक्त 57

1054. प्र ते धाराः असश्चतो, दिवो न यन्ति वृष्टयः ।

अच्छा वाजम् सहस्रिणम् ॥ 1 ॥ 9-57-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो असश्चतो = स्थिर, अज्ञानी, अप्राप्त दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय न = नहीं, समान, उपमार्थक यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं वृष्टयः = सिञ्चन युक्त, पराक्रमी युक्त अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ वाजम् = विद्या को, गति को सहस्रिणम् = सहस्री को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। असश्चतो = स्थिर, अज्ञानी, अप्राप्त (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सश्च् = पाना, जानना, जाना)। दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। वृष्टयः = सिञ्चन युक्त, पराक्रमी युक्त (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सहस्रिणम् = सहस्री को (संख्या) ॥ 1 ॥

1055. स मर्मृजानः आयुभिः, इभो राजा इव सुव्रतः ।

श्येनो न वसुम् षीदति ॥ 3 ॥ 9-57-3

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने मर्मृजानः = शुद्ध किया जाता हुआ, पवित्र किया जाता हुआ आयुभिः = आयुओं द्वारा इभो = प्रगतिशील विद्वान् राजा = राजा इव = समान, की भाँति, के समान सुव्रतः = सुव्रत, उत्तम व्रत वाले श्येनो = श्येन न = नहीं, समान, उपमार्थक वसुम् = वसुओं को षीदति = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। मर्मृजानः = शुद्ध किया जाता हुआ, पवित्र किया जाता हुआ (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। आयुभिः = आयुओं द्वारा (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। इभो = प्रगतिशील विद्वान् (इ - जाना, जानना, पाना)। राजा = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। सुव्रतः = सुव्रत, उत्तम व्रत वाले (सु = अच्छा (उपसर्ग), वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। श्येनो = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। वसुम् = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। षीदति = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना) ॥ 3 ॥

1056. स नो विश्वा दिवो, वसु उतः पृथिव्याः अधि ।

पुनानः इन्दो आ भर ॥ 4 ॥ 9-57-4

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा विश्वा = विश्व, सभी, सब दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय वसु = वसु उतः = ही, भी, ओर पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार पुनानः = पवित्रकर्ता इन्दो = इन्दु का आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो ॥ 4 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। वसु = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। उतः = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना) ॥ 4 ॥

(278) सूक्त 58

1057. तरत् सः मन्दी धावति, धारा सुतस्य अन्धसः ।

तरत् सः मन्दी धावति ॥ 1 ॥ 9-58-1

मन्त्रार्थ :- तरत् = तैरता है, तरता है सः = वह, उसने मन्दी = आनन्ददायक, तुष्टिदायक धावति = दौड़ता है धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से तरत् = तैरता है, तरता है सः = वह, उसने मन्दी = आनन्ददायक, तुष्टिदायक धावति = दौड़ता है ॥ 1 ॥

पदार्थ :- तरत् = तैरता है, तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। मन्दी = आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। धावति = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। अन्धसः = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। तरत् = तैरता है, तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। सः = वह, उसने (सर्वनाम)। मन्दी = आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। धावति = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना) ॥ 1 ॥

1058. उस्त्रा वेद वसूनाम्, मर्तस्य देवी अवसः ।

तरत् सः मन्दी धावति ॥ 2 ॥ 9-58-2

मन्त्रार्थ :- उस्त्रा = प्रकाशस्वरूप, उष्ण, उष्ण होने वाला, उष्ण करने वाला वेद = ज्ञान, जानो, जानता है वसूनाम् = वसुओं का मर्तस्य = मरणशील का देवी = हे देवी अवसः = रक्षा करने वाले तरत् = तैरता है, तरता है सः = वह, उसने मन्दी = आनन्ददायक, तुष्टिदायक धावति = दौड़ता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उस्त्रा = प्रकाशस्वरूप, उष्ण, उष्ण होने वाला, उष्ण करने वाला (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना, रोग होना)। वेद = ज्ञान, जानो, जानता है (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। वसूनाम् = वसुओं का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-

हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **मर्तस्य** = मरणशील का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **देवी** = हे देवी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अवसः** = रक्षा करने वाले (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **तरत्** = तैरता है, तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **मन्दी** = आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना) ॥ 2 ॥

1059. ध्वस्त्रयोः पुरुषन्त्योः, आ सहस्राणि दद्महे।

तरत् सः मन्दी धावति ॥ 3 ॥ 9-58-3

मन्त्रार्थ :- ध्वस्त्रयोः = दो गतिमानों का, में **पुरुषन्त्योः** = दो पुरुषार्थियों का, में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सहस्राणि** = हजार **दद्महे** = देता हूँ, आदान-प्रदान करता हूँ **तरत्** = तैरता है, तरता है **सः** = वह, उसने **मन्दी** = आनन्ददायक, तुष्टिदायक **धावति** = दौड़ता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- ध्वस्त्रयोः = दो गतिमानों का, में (ध्वंस - चूर्ण होना या करना, जाना, नीचे गिरना, नष्ट होना)। **पुरुषन्त्योः** = दो पुरुषार्थियों का, में (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सहस्राणि** = हजार (संख्या)। **दद्महे** = देता हूँ, आदान-प्रदान करता हूँ (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना, मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **तरत्** = तैरता है, तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **मन्दी** = आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना) ॥ 3 ॥

1060. आ ययोः त्रिंशत् तना, सहस्राणि च दद्महे।

तरत् सः मन्दी धावति ॥ 4 ॥ 9-58-4

मन्त्रार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ययोः** = पृथक् किया **त्रिंशत्** = तीस को **तना** = विस्तार करो **सहस्राणि** = हजार **च** = और। **दद्महे** = देता हूँ, आदान-प्रदान करता हूँ **तरत्** = तैरता है, तरता है **सः** = वह, उसने **मन्दी** = आनन्ददायक, तुष्टिदायक **धावति** = दौड़ता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ययोः** = पृथक् किया (यु = मिलाना, अलग करना)। **त्रिंशत्** = तीस को (संख्या, सर्वनाम)। **तना** = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **सहस्राणि** = हजार (संख्या)। **च** = और। **दद्महे** = देता हूँ, आदान-प्रदान करता हूँ (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना, मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **तरत्** = तैरता है, तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **मन्दी** = आनन्ददायक, तुष्टिदायक (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना) ॥ 4 ॥

अनुवाक:- 69

1061. अया वीती परि स्रव, यः ते इन्दो मदेषु आ ।

अवाहन् नवतीः नव ॥ 1 ॥ 9-61-1

मन्त्रार्थ - अया = इस वीती = गति, व्याप्ति, प्रकाश परि = सभी तरफ स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए इन्दो = हे इन्दु का मदेषु = मदों में, आनन्दों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम अवाहन् = वहन किया, अवाहित करते हुए, हनन करता है नवतीर्नव = निन्यानवे ॥ 9 ॥

पदार्थ - अया = इस (सर्वनाम)। वीती = गति, व्याप्ति, प्रकाश (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इन्दो = हे इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। मदेषु = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। अवाहन् = वहन किया, अवाहित करते हुए, हनन करता है (अ+वह्, अव+आ+हन्, अ - नहीं, अव - नीचे, दूर, प्राप्त, अव - रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, आ - समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), वह - वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना, हन् - मारना)। नवतीः = नब्बे (संख्या)। नव = नौ (संख्या) ॥ 9 ॥

1062. पुरः सद्यः इत्थाधिये, दिवोदासाय शम्बरम् ।

अध त्यम् तुर्वशम् यदुम् ॥ 2 ॥ 9-61-2

मन्त्रार्थ :- पुरः = पहले, अग्रगामी, अग्रणी सद्यः = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य इत्थाधिये = ऐसी धारणा शक्ति, बुद्धि में दिवोदासाय = दिवोदास के लिए, तेजस्वी की सेवा के लिए शम्बरम् = शम्बर को अध = अथ, अब, इसके अनन्तर त्यम् = उस को तुर्वशम् = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को यदुम् = यदु को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- पुरः = पहले, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। सद्यः = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य (सद् - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। इत्थाधिये = ऐसी धारणा शक्ति, बुद्धि में (इत्था - इत्था, इस प्रकार (अव्यय), धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। दिवोदासाय = दिवोदास के लिए, तेजस्वी की सेवा के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। शम्बरम् = शम्बर को (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना, बृ - ढकना, आच्छादित करना)। अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। त्यम् = उस को (सर्वनाम)। तुर्वशम् = शीघ्रकारी, शीघ्रगामी, हिंसक को (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना, वण् - शब्द करना, तुर्व - हिंसा करना, खुरचना)। यदुम् = यदु को (यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना) ॥ 2 ॥

1063. परि णो अश्वम् अश्ववित्, गोमत् इन्दो हिरण्यवत् ।

क्षरा सहस्रिणीः इषः ॥ 3 ॥ 9-61-3

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ णो = हमको, हमारे लिए, हमारा अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को अश्ववित् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को जानने वाले गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त इन्दो = इन्दु का हिरण्यवत् = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा क्षरा = क्षरण करो सहस्रिणीः = सहस्रियों इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि ॥ 3 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। णो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अश्वम् = अश्व, तीव्र गति

युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अश्ववित्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को जानने वाले (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, विद् - जानना)। **गोमत्** = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **हिरण्यवत्** = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **क्षरा** = क्षरण करो (क्षर् - टपकना, झरना, गिरना)। **सहस्रिणीः** = सहस्रियों (संख्या)। **इषः** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 3 ॥

1064. ये ते पवित्रम् ऊर्मयो, अभिक्षरन्ति धारया ।

तेभिः नः सोम मृडय ॥ 5 ॥

9-61-5

मन्त्रार्थ :- ये = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पवित्रम् = पवित्र को ऊर्मयो = ऊर्मियाँ अभिक्षरन्ति = अभिक्षरण करते हैं धारया = धार द्वारा तेभिः = उनके द्वारा नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम मृडय = सुखी करो ॥ 5 ॥

पदार्थ :- ये = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। ऊर्मयो = ऊर्मियाँ (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। अभिक्षरन्ति = अभिक्षरण करते हैं (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, क्षर् - टपकना, झरना, गिरना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। तेभिः = उनके द्वारा (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। मृडय = सुखी करो (मृड - सुखी होना, सुख देना) ॥ 5 ॥

1065. सः नः पुनानः आ भर, रयिम् वीरवतीम् इषम् ।

ईशानः सोम विश्वतः ॥ 6 ॥

9-61-6

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पुनानः = पवित्रकर्ता आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो रयिम् = विद्या, ज्ञान को वीरवतीम् = वीरयुक्त को इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को ईशानः = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विश्वतः = सबसे, विश्व से ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ - धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। वीरवतीम् = वीरयुक्त को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। इषम् = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। ईशानः = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम) ॥

1066. एतम् उ त्वम् दश क्षिपो, मृजन्ति सिन्धुमातरम्।

सम् आदित्येभिः अख्यत ॥ 7 ॥ 9-61-7

मन्त्रार्थ :- एतम् = यह, इसको उ = निश्चय ही, भी त्वम् = उस को दश = दश क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं सिन्धुमातरम् = सिन्धुमाता को सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति आदित्येभिः = आदित्यों द्वारा, अदिति-अक्षय-अविनाशी द्वारा अख्यत = प्रसिद्ध हुआ, प्रख्यात हुआ, प्रकाशित हुआ ॥ 7 ॥

पदार्थ :- एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। त्वम् = उस को (सर्वनाम)। दश = दश (दश = दश, संख्या)। क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला (क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। सिन्धुमातरम् = सिन्धुमाता को (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। आदित्येभिः = आदित्यों द्वारा, अदिति-अक्षय-अविनाशी द्वारा (अ - नहीं, दी = क्षय होना, नष्ट होना, अद् = खाना)। अख्यत = प्रसिद्ध हुआ, प्रख्यात हुआ, प्रकाशित हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, ख्या - प्रसिद्ध करना, प्रख्यात करना) ॥ 7 ॥

1067. सम् इन्द्रेण उत वायुना, सुतः एति पवित्रे आ।

सम् सूर्यस्य रश्मिभिः ॥ 8 ॥ 9-61-8

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा उत = ही, भी, ओर वायुना = वायु द्वारा सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति सूर्यस्य = सूर्य का रश्मिभिः = किरणों से ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। इन्द्रेण = इन्द्र द्वारा (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। वायुना = वायु द्वारा (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। सूर्यस्य = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। रश्मिभिः = किरणों से (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना) ॥ 8 ॥

1068. स नो भगाय वायवे, पूष्णे पवस्व मधुमान्।

चारुः मित्रे वरुणे च ॥ 9 ॥ 9-61-9

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने नो = हमको, हमारे लिए, हमारा भगाय = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए वायवे = वायु के लिए पूष्णे = पोषण के लिए, पोषण करने वाले, पोषणकर्ता के लिए पवस्व = पवित्र करो मधुमान् = मधुरता युक्त चारुः = चारु मित्रे = मित्र के लिए वरुणे = वरुण के लिए च = और ॥ 9 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। भगाय = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। वायवे = वायु के लिए (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित

करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पूषे** = पोषण के लिए, पोषण करने वाले, पोषणकर्ता के लिए (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **चारुः** = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। **मित्रे** = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **वरुणे** = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **च** = और ॥ 9 ॥

1069. उच्चा ते जातम् अन्धसो, दिवि सत् भूमिः आ ददे।

उग्रम् शर्म महि श्रवः ॥ 10 ॥ 9-61-10

मन्त्रार्थ :- उच्चा = ऊँचे ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को अन्धसो = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में सत् = सत्य, नित्य भूमि = भूमि आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ददे = दिया, दान किया उग्रम् = उग्र को शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं श्रवः = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 10 ॥

भावार्थ :- हमारा जीवन परमात्मा की कृपा से महान् है। इस मन्त्र में कहा गया है कि तुम्हारा जन्म दिव्य तथा उच्च है। सत्य-स्वरूपा भूमि भी प्रदान की गयी है। महान् उग्र सुख भी प्राप्त है। ऐसे दिव्य जीवन को सार्थक बनाना हमारा कर्तव्य है ॥ 10 ॥

पदार्थ- उच्चा = ऊँचे (उच्च - ऊँचा, सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अन्धसो** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **दिवि** = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **सत्** = सत्य, नित्य (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **भूमि** = भूमि (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ददे** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **शर्म** = सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म् = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **श्रवः** = श्रवण करने वाले (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥ 10 ॥

1070. एना विश्वानि अर्यः आ, द्युम्नानि मानुषाणाम्।

सिषासन्तः वनामहे ॥ 11 ॥ 9-61-11

मन्त्रार्थ :- एना = प्रकाशित करने वाले विश्वानि = सभी अर्यः = अर्य आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण द्युम्नानि = प्रकाश, अग्रगामी मानुषाणाम् = मानुषों का, मनन करने वालों का सिषासन्तः = शुद्ध करने वाले वनामहे = शब्द करते हैं, स्मरण करते हैं ॥ 11 ॥

भावार्थ :- सभी मनुष्यों के प्रकाश स्वरूप अर्य को शुद्ध करते हुए शब्द करते हैं, स्मरण करते हैं। ऋ धातु का अर्थ है जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना। अर्य तथा आर्य शब्द में ये अर्थ समाहित हैं ॥ 11 ॥

पदार्थ- एना = प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना,

मिश्रण करना, विभाजन करना)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **अर्यः** = अर्य (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **आ - आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **द्युम्नानि - द्युम्नानि** = प्रकाश, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **मानुषाणाम् - मानुषाणाम्** = मानुषों का, मनन करने वालों का (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **सिषासन्तः** = शुद्ध करने वाले (सिष्-सस् = शुद्ध करना)। **वनामहे** = शब्द करते हैं (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना) ॥ 11 ॥

1071. सः नः इन्द्राय यज्यवे, वरुणाय मरुद्भ्यः ।

वरिवोवित् परि स्रव ॥ 12 ॥ 9-61-12

मन्त्रार्थ :- सः = वह नः = हमारे लिए **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **यज्यवे** = यजन, यज्ञ के लिए **वरुणाय** = वरुण के लिए **मरुद्भ्यः** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए **वरिवोवित्** = इच्छा को जानने वाला **परि** = सभी तरफ **स्रव** = अभिसिञ्चन करें, स्रवित हों ॥ 12 ॥

भावार्थ :- वह परमात्मा हमारे इन्द्र अर्थात् परम ऐश्वर्य के लिए, यजन के लिए, वरुण अर्थात् वरुणयोग्य के लिए, **मरुद्** अर्थात् मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए इच्छा को जानने वाला है। वह सभी ओर से हमारा अभिसिञ्चन करें ॥

पदार्थ - सः = वह, उसने। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **यज्यवे** = यजन, यज्ञ के लिए (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **वरुणाय** = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मरुद्भ्यः** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **वरिवोवित्** = इच्छा को जानने वाले (वर् - इच्छा करना, आशा करना, विद् - जानना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव** = अभिसिञ्चन करें, स्रवित हों (स्रु = जाना, जानना, पाना, सू - जाना, सरकना, बहना, टपकना) ॥ 12 ॥

1072. उपो षु जातम् अप्तुरम्, गोभिः भङ्गम् परिष्कृतम् ।

इन्दुम् देवाः अयासिषुः ॥ 13 ॥ 9-61-13

मन्त्रार्थ :- उपो = समीप **षु** = उत्तम, अच्छा **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को **अप्तुरम्** = पालन करने वाले को **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **भङ्गम्** = भङ्ग को, प्रकाश को, भञ्जन को **परिष्कृतम्** = परिष्कृत, परिष्कार को **इन्दुम्** = इन्दु को **देवाः** = देव **अयासिषुः** = प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं ॥ 13 ॥

पदार्थ :- उपो = समीप (उपसर्ग)। **षु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अप्तुरम्** = पालन करने वाले को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **भङ्गम्** = भङ्ग को, प्रकाश को, भञ्जन को (भञ्ज् = प्रकाशित होना, चमकना, बोलना, कहना, हिंसा करना, गति करना, खेलना, भञ्जन करना, नष्ट करना)। **परिष्कृतम्** = परिष्कृत, परिष्कार को (परिः - सब ओर, कृ - करना)। **इन्दुम्** = इन्दु को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **देवाः** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अयासिषुः** = प्रयत्न करते हैं, प्राप्त होते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना) ॥ 13 ॥

1073. तम् इत् वर्धन्तु नो गिरो, वत्सम् सम् शिश्वरीः इव ।

यः इन्द्रस्य हृदम् सनिः ॥ 14 ॥ 9-61-14

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे **इत्** = ही **वर्धन्तु** = बढ़ाओ, बढ़ो **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **गिरो** = वाणिज्य, बोध, सिञ्चन **वत्सम्** = बोलने वाले को **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **शिश्वरीः** = शिशु वाले **इव** = समान, की भाँति,

के समान यः = जो इन्द्रस्य = इन्द्र का हृदम् = हृदय को सनिः = सेवा, दान, सत्कार करने वाले ॥ 14 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। इत् = ही (अव्यय)। वर्धन्तु = बढ़ाओ, बढ़ो (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। गिरो = वाणियों, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। वत्सम् = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। शिश्वरीः = शिशु वाले (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। यः = जो (सर्वनाम)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। हृदम् = हृदय को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। सनिः = सेवा, दान, सत्कार करने वाले (सन् - सेवा करना, दान करना, सत्कार करना) ॥ 14 ॥

1074. अर्षा नः सोम शम् गवे, धुक्षस्व पिप्युषीम् इषम्।

वर्धा समुद्रम् उक्थ्य ॥ 15 ॥ 9-61-15

मन्त्रार्थ :- अर्षा = अन्तर्यामी, विद्यमान नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए धुक्षस्व = प्रदीप्त करो, जलाओ, जीवन दो पिप्युषीम् = वृद्धि को, बढ़ने को इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को वर्धा = बढ़ाये, वृद्धि करे समुद्रम् = समुद्र को उक्थ्य = कथनीय ॥ 15 ॥

पदार्थ :- अर्षा = अन्तर्यामी, विद्यमान (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचाना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। धुक्षस्व = प्रदीप्त करो, जलाओ, जीवन दो (धुक्ष् = प्रदीप्त करना, जलाना, जीव होना, श्रान्त होना या थक जाना)। पिप्युषीम् = वृद्धि को, बढ़ने को (प्याय-प्यायी-प्यै - बढ़ना, बढ़ा होना, फूलना, प्याय-प्यै - भूख लगना, प्यास लगना)। इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। वर्धा = बढ़ाये, वृद्धि करे (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। समुद्रम् = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। उक्थ्य = कथनीय (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना) ॥ 15 ॥

1075. पवमानो अजीजनत्, दिवः चित्रम् न तन्यतुम्।

ज्योतिः वैश्वानरम् बृहत् ॥ 16 ॥ 9-61-16

मन्त्रार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को न = नहीं, समान, उपमार्थक तन्यतुम् = विस्तार ज्योतिः = प्रकाश वैश्वानरम् = विश्वजन को, वैश्वानर को बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥ 16 ॥

पदार्थ :- पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। चित्रम् = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। तन्यतुम् = विस्तार (तन्-

तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **वैश्वानरम्** = विश्वजन को, वैश्वानर को (विश्व - सब, नृ - चलना, ले जाना, विनय होना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 16 ॥

1076. पवमानस्य ते रसः, मदो राजन् अदुच्छुनः ।

वि वारम् अव्यम् अर्षति ॥ 17 ॥ 9-61-17

मन्त्रार्थ :- पवमानस्य = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाले का **रसः** = रस तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। **मदो** = आनन्दकारी **राजन्** = प्रकाशित होने वाला **अदुच्छुनः** = अहिंसक **वि** = विशेष, विना, विलोम **वारम्** = वरण को **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है ॥ 17 ॥

पदार्थ :- पवमानस्य = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **रसः** = रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **मदो** = आनन्दकारी (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **राजन्** = प्रकाशित होने वाला (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **अदुच्छुनः** = अहिंसक (अ - नहीं, दु-दुन - दुःख भोगना, जलना, तप्त करना, जलाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना) ॥ 17 ॥

1077. पवमान रसो, तव दक्षो वि राजति द्युमान् ।

ज्योतिः विश्वम् स्वः दृशे ॥ 18 ॥ 9-61-18

मन्त्रार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाला **रसो** = रस तव = तुम्हारा **दक्षो** = दक्ष **वि** = विशेष, विना, विलोम **राजति** = प्रकाशित होता है **द्युमान्** = प्रकाशमान, तेजस्वमान **ज्योतिः** = प्रकाश **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् **दृशे** = देखने के लिए ॥ 18 ॥

पदार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **रसो** = रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **दक्षो** = दक्ष (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राजति** = प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **द्युमान्** = प्रकाशमान, तेजस्वमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **विश्वम्** = सबको, सब विश्व को (विश्व - सब कुछ)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **दृशे** = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना) ॥ 18 ॥

1078. यः ते मदो वरेण्यः, तेना पवस्व अन्धसा ।

देवावीः अघशंसहा ॥ 19 ॥ 9-61-19

मन्त्रार्थ - यः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मदो** = आनन्दकारी **वरेण्यः** = वरणीय, वरण करने वाला **तेना** = उससे, उसके द्वारा **पवस्व** = पवित्र करो **अन्धसा** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा **देवावीः** = देवों को प्राप्त करने वाले **अघशंसहा** = पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला ॥ 19 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मदो** = आनन्दकारी (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वरेण्यः** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना,

प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **तेना** = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अन्धसा** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **देवावी** = देवों को प्राप्त करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **अघशंसहा** = पापियों का संहारक, अघशंस का हनन करनेवाला (अघ् - पाप करना, अपराध करना, गिरना, शंस - स्तुति करना, प्रशंसा करना, हन् - मारना) ॥ 19 ॥

1079. जघ्निः वृत्रम् अमित्रियम्, सस्निः वाजम् दिवे-दिवे।

गोषाः अश्वसा असि ॥ 20 ॥ 9-61-20

मन्त्रार्थ :- **जघ्निः** = हननकर्ता **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को **अमित्रियम्** = अमित्र, अस्नेही को **सस्निः** = शुद्ध **वाजम्** = विद्या को, गति को **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन **गोषाः** = शब्द करने वाले हो, मननशील हो, उपदेशक हो **अश्वसा** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **असि** = हो ॥ 20 ॥

पदार्थ :- **जघ्निः** = हननकर्ता (जघ्न् - मार डालना, प्राप्त करना, जाना, किसी प्रकार समाप्त करना)। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **अमित्रियम्** = अमित्र, अस्नेही को (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना, मा - मापना, मान करना)। **सस्निः** = शुद्ध (सस् = शुद्ध करना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **दिवे-दिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **गोषाः** = शब्द करने वाले हो, मननशील हो, उपदेशक हो (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अश्वसा** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **असि** = हो (अस् - होना) ॥ 20 ॥

1080. सम्मिश्लो अरुषो भवः, सूपस्थाभिः न धेनुभिः।

सीदन् श्येनो न योनिम् आ ॥ 21 ॥ 9-61-21

मन्त्रार्थ :- **सम्मिश्लो** = सम्यक् वाणी **अरुषो** = हिंसक, गतिशील, व्यापक **भवः** = भुवः **सूपस्थाभिः** = उत्तम समीपस्थों द्वारा **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **धेनुभिः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले द्वारा **सीदन्** = प्रतिष्ठित को **श्येनो** = श्येन **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **योनिम्** = योनि को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ॥ 21 ॥

पदार्थ :- **सम्मिश्लो** = सम्यक् वाणी (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), मिश - शब्द करना, आवाज करना, क्रोध करना, गुस्सा करना)। **अरुषो** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **भवः** = भुवः (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **सूपस्थाभिः** = उत्तम समीपस्थों द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, उप - समीप, स्था - स्थित होना, ठहरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनुभिः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले द्वारा (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **सीदन्** = प्रतिष्ठित को (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **श्येनो** = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) ॥ 3 ॥

1081. सः पवस्व यः आविथ, इन्द्रम् वृत्राय हन्तवे।

मन्त्रार्थ - सः = वह, उसने पवस्व = पवित्र करो यः = जो आविथ = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को वृत्राय = वृत्र, हिंसा के लिए हन्तवे = मारने के लिए वत्रिवांसम् = नियोजित, आच्छादित करने वाले महीः = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं अपः = पालन करने वाला ॥ 22 ॥

पदार्थ - सः = वह, उसने (सर्वनाम)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। यः = जो (सर्वनाम)। आविथ = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वृत्राय = वृत्र, हिंसा के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। हन्तवे = मारने के लिए (हन् - मारना)। वत्रिवांसम् = नियोजित, आच्छादित करने वाले (वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना, व्री = ढूँढ़ के निकालना, पसन्द करना, बीनना, आच्छादन करना, ढकना)। महीः = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। अपः = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना) ॥ 22 ॥

1082. अपघ्नन् पवते मृधो, अप सोमो अराव्यः ।

गच्छन् इन्द्रस्य निष्कृतम् ॥ 25 ॥ 9-61-25

मन्त्रार्थ :- अपघ्नन् = अपहनन करते हुए, मारते हुए पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है मृधो = हिंसक, आद्र अप = दूर, नीचे, अपकार सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम अराव्यः = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले गच्छन् = जाते हुए इन्द्रस्य = इन्द्र का निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ ॥ 25 ॥

पदार्थ :- अपघ्नन् = अपहनन करते हुए, मारते हुए (अप = दूर, नीचे, अपकार, हन् - मारना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मृधो = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। अराव्यः = अदानी, अप्रगतिशील, शब्द न करने वाले (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रा - देना, रव - जाना, प्रकाश करना, रु - शब्द करना, ध्वनि करना)। गच्छन् = जाते हुए (गम्-गच्छ = जाना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना) ॥ 25 ॥

1083. महो नो रायः आ भर, पवमान जही मृधः ।

रास्व इन्दो वीरवत् यशः ॥ 26 ॥ 9-61-26

मन्त्रार्थ :- महो = बड़े, महिमावान्, महान् नो = हमको, हमारे लिए, हमारा रायः = गति, विद्या, वाणी आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला जही = हनन करो, नष्ट करो मृधः = हिंसक, आद्र रास्व = दान दो इन्दो = इन्दु का वीरवत् = वीर के समान यशः = यश, कीर्ति ॥ 26 ॥

पदार्थ :- महो = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। रायः = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। जही = हनन करो,

नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना)। **मृधः** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **रास्व** = दान दो (रा- देना, लेना, ग्रहण करना, रस्, रास् = शब्द करना, रस् = रस होना, स्वाद लेना, प्रीति करना, प्यार करना, शब्द करना, रस लेना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **वीरवत्** = वीर के समान (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **यशः** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) ॥ 26 ॥

1084. न त्वा शतम् चन हुतो, राधो दित्सन्तम् आमिनन् ।

यत् पुनानो मखस्यसे ॥ 27 ॥ 9-61-27

मन्त्रार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **शतम्** = सौ **चन** = ही। **हुतो** = हरण करने वाले **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि **दित्सन्तम्** = क्षयमान, क्षयकारी को **आ** - समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **मिनन्** = प्रक्षेपण करते हुए **यत्** = जिसे, जो **पुनानो** = पवित्रकर्ता **मखस्यसे** = प्रगति चाहता है ॥ 27 ॥

पदार्थ :- न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **चन** = ही। **हुतो** = हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। **राधो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **दित्सन्तम्** = क्षयमान, क्षयकारी को (दी = क्षय होना, ह्रास होना, नष्ट होना, झरना)। **आ** - समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), **मिनन्** = प्रक्षेपण करते हुए (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **मखस्यसे** = प्रगति चाहता है (मख - जाना, स्थानान्तर करना) ॥ 27 ॥

1085. पवस्व इन्दो वृषा सुतः, कृधी नो यशसो जने ।

विश्वा अप द्विषो जहि ॥ 28 ॥ 9-61-28

मन्त्रार्थ - पवस्व = पवित्र करो **इन्दो** = हे इन्दु का **वृषा** = पराक्रमी **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **कृधी** = करो **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **यशसो** = यश, कीर्ति **जने** = जन में, लोग में **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अप** = दूर, नीचे, अपकार **द्विषो** = द्वेष करने वाला **जहि** = हनन करो, नष्ट करो ॥ 28 ॥

पदार्थ - पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **इन्दो** = हे इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **कृधी** = करो (कृ = करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **यशसो** = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। **जने** = जन में, लोग में (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्विषो** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना) ॥ 28 ॥

1086. अस्य ते सख्ये वयम्, । तव इन्दो द्युम्ने उत्तमे,

सासह्याम पृतन्यतः ॥ 29 ॥ 9-61-29

मन्त्रार्थ :- अस्य = इसका **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **सख्ये** = मित्रभाव में **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **तव** = तुम्हारा **इन्दो** = इन्दु का **द्युम्ने** = प्रकाश **उत्तमे** = श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा में **सासह्याम** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट हों **पृतन्यतः** = व्यापक, बलात् निकालने वाले ॥ 29 ॥

पदार्थ :- अस्य = इसका (सर्वनाम)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सख्ये** = मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)।

द्युम्ने = प्रकाश (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। उत्तमे = श्रेष्ठ, उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा में (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना) सासह्याम = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट हों (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। पृतन्यतः = व्यापक, बलात् निकालने वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना) ॥ 29 ॥

1087. या ते भीमानि आयुधा, तिग्मानि सन्ति धूर्वणे ।

रक्षा समस्य नो निदः ॥ 30 ॥

9-61-30

मन्त्रार्थ :- या = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए भीमानि = भीम, भयंकर आयुधा = आयुध तिग्मानि = ज्ञानी, कूटचाल, तीक्ष्ण सन्ति = हैं धूर्वणे = धूर्व के लिए, हिंसक के लिए रक्षा = रक्षा करो समस्य = सब का, समान का नो = हमको, हमारे लिए, हमारा निदः = निन्दा ॥ 30 ॥

पदार्थ :- या = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। भीमानि = भीम, भयंकर (भी - डरना)। आयुधा = आयुध (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना)। तिग्मानि = ज्ञानी, कूटचाल, तीक्ष्ण (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल चलना, तिज्-तेज् = चमकना, चमकाना, पैना करना)। सन्ति = हैं (अस् - होना)। धूर्वणे = धूर्व के लिए, हिंसक के लिए (धूर् = हिंसा करना, गति करना)। रक्षा = रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। समस्य = सब का, समान का (सम - सब (सर्वनाम), सम - न घबराना, एक समान रहना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। निदः = निन्दा (निद - दोष लगाना, निन्दा करना, समीप जाना या पहुँचना) ॥ 30 ॥

(280) सूक्त 62

1088. एते असृग्रम् इन्दवः, तिरः पवित्रम् आशवः ।

विश्वानि अभि सौभगा ॥ 1 ॥

9-62-1

मन्त्रार्थ :- एते = यह असृग्रम् = सृजित किया, असृजनकर्ता को इन्दवः = इन्दुगण तिरः = पार कराने वाले पवित्रम् = पवित्र को आशवः = अशन करो, भोजन करो विश्वानि = सभी अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा सौभगा = सौभाग्य युक्त ॥ 1 ॥

पदार्थ :- एते = यह (सर्वनाम)। असृग्रम् = सृजित किया, असृजनकर्ता को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। इन्दवः = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। तिरः = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आशवः = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। सौभगा = सौभाग्य युक्त (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना, भग् - भज् - सेवा करना, सेवन करना, दान करना, अलग करना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 1 ॥

1089. विघ्नन्तो दुरिता पुरु, सुगा तोकाय वाजिनः ।

त्मना कृण्वन्तो अर्वते ॥ 2 ॥

9-62-2

मन्त्रार्थ :- विघ्नन्तो = विशेष हननकर्ता दुरिता = बुराई, दुःख पुरु = पहले, आगे सुगा = उत्तम प्रगतिशील, सुगामी तोकाय = तोक के लिए, तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास के लिए वाजिनः = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त त्मना = आत्मा द्वारा कृण्वन्तो = करते हुए अर्वते = अर्व से, अर्वत् के लिए ॥

पदार्थ :- विघ्नन्तो = विशेष हननकर्ता (घन्-हन् - मारना, हिंसा करना)। दुरिता = बुराई, दुःख (दुः = बुरा,

अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **पुरु** = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **सुगा** = उत्तम प्रगतिशील, सुगामी (सु = अच्छा, अच्छा (उपसर्ग), गम्, गा = जाना, जानना, पाना)। **तोकाय** = तोक के लिए, तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास के लिए (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल होना, दान करना, निवास करना, ग्रहण करना, चमकना)। **वाजिनः** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **त्मना** = आत्मा द्वारा (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में आ का लोप हो सकता है)। **कृण्वन्तो** = करते हुए (कृ = करना)। **अर्वते** = अर्व से, अर्वत् के लिए (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना) ॥ 2 ॥

1090. कृण्वन्तो वरिवो गवे, अभि अर्षन्ति सुष्टुतिम् ।

इडाम् अस्मभ्यम् संयतम् ॥ 3 ॥ 9-62-3

मन्त्रार्थ :- कृण्वन्तो = करते हुए वरिवो = वरणीय गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अर्षन्ति = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं सुष्टुतिम् = सुन्दर स्तुति को इडाम् = इडा को, स्तुत, स्तुति योग्य को अस्मभ्यम् = हमारे लिए संयतम् = संयत को, सम्यक् यत्न को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- कृण्वन्तो = करते हुए (कृ = करना)। वरिवो = वरणीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। गवे = वाणी के लिए, गौ के लिए (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अर्षन्ति = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। सुष्टुतिम् = सुन्दर स्तुति को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। इडाम् = इडा को, स्तुत, स्तुति योग्य को (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। संयतम् = संयत को, सम्यक् यत्न को (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना, यत् - दुःख देना, मारना, ठोकना, चपेटना, आज्ञा करना, एकत्र करना, मना करना, रोकना, यम - नाश करना, यम - स्वाधीन रखना, काबू में रखना, पोषण करना, खाने को देना, यन - उद्धार करना, उद्धरण करना) ॥ 3 ॥

1091. असावि अंशुः मदाय, अप्सु दक्षो गिरिष्ठाः ।

श्येनो न योनिम् आ असदत् ॥ 4 ॥ 9-62-4

मन्त्रार्थ :- असावि = ऐश्वर्यमय हुआ या किया, उत्पन्न किया अंशुः = अंश मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए अप्सु = पालन-रक्षण में दक्षो = दक्ष गिरिष्ठाः = पर्वतों पर स्थित, वाणियों में स्थित श्येनो = श्येन न = नहीं, समान, उपमार्थक योनिम् = योनि को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम असदत् = बैठता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- असावि = ऐश्वर्यमय हुआ या किया, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। अंशुः = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अप्सु = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। दक्षो = दक्ष (दक्ष् - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना,

चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **गिरिष्ठाः** = पर्वतों पर स्थित, वाणियों में स्थित (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, स्थ = स्थित होना)। **श्येनो** = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **असदत्** = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 4 ॥

1092. शुभ्रम् अन्धो देववातम्, अप्सु धूतो नृभिः सुतः ।

स्वदन्ति गावः पयोभिः ॥ 5 ॥ 9-62-5

मन्त्रार्थ :- शुभ्रम् = शुभ्र को, प्रकाशित को अन्धो = आँख मूँदे हुए देववातम् = अत्यन्त देव-गति, दिव्य गति अप्सु = पालन-रक्षण में धूतो = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला नृभिः = नरों द्वारा सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को स्वदन्ति = स्वाद लेते हैं गावः = शब्द, वाणी, वचन पयोभिः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण द्वारा ॥

पदार्थ :- शुभ्रम् = शुभ्र को, प्रकाशित को (शुभ्र - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। अन्धो = आँख मूँदे हुए (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूँदना)। देववातम् = अत्यन्त देव-गति, दिव्य गति (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वा - गति करना, बहना)। अप्सु = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। धूतो = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। स्वदन्ति = स्वाद लेते हैं (स्वद - स्वाद लेना, चखना, तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। गावः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। पयोभिः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण द्वारा (पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥ 5 ॥

1093. आत् ईम् अश्वम् न हेतारम्, अशूशुभन् अमृताय ।

मध्वा रसम् सधमादे ॥ 6 ॥ 9-62-6

मन्त्रार्थ :- आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ईम् = समान, इस प्रकार अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को न = नहीं, समान, उपमार्थक हेतारम् = हेति, गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणा को अशूशुभन् = सुशोभित किया अमृताय = अमृत के लिए मध्वो = मधु का रसम् = रस को सधमादे = साथ आनन्द करते हैं ॥ 6 ॥

पदार्थ :- आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (वैदिक उपसर्ग)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। हेतारम् = हेति, गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणा को (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। अशूशुभन् = सुशोभित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, शुभ्र - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। अमृताय = अमृत के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। मध्वो = मधु का (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। रसम् = रस को (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। सधमादे = साथ आनन्द करते हैं (सध = साथ (अव्यय), मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 6 ॥

1094. याः ते धाराः मधुश्च्युतो, असृग्रम् इन्दः ऊतये ।

ताभिः पवित्रम् आ असदः ॥ 7 ॥ 9-62-7

मन्त्रार्थ :- याः = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो मधुश्च्युतो =

मधुश्चुत असृग्रम् = सृजन किया इन्दः = इन्दु का ऊतये = रक्षा के लिए ताभिः = उनके द्वारा पवित्रम् = पवित्र को आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, असदः = प्रतिष्ठित ॥ 7 ॥

पदार्थ :- याः = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। मधुश्चुतो = मधुश्चुत (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना)। असृग्रम् = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। इन्दः = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। ऊतये = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। ताभिः = उनके द्वारा (सर्वनाम)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, असदः = प्रतिष्ठित (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥

1095. सो अर्ष इन्द्राय पीतये, तिरो रोमाणि अव्यया ।

सीदन् योना वनेषु आ ॥ 8 ॥ 9-62-8

मन्त्रार्थ :- सो = वह, उसने अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन इन्द्राय = परम ऐश्वर्यशाली के लिए पीतये = पान के लिए तिरो = पार कराने वाले रोमाणि = रोम, प्रगतिशील वाले अव्यया = व्यय न होने वाले, पालनीय द्वारा, रक्षणीय द्वारा, बन्धन द्वारा सीदन् = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए योना = योनि का, सम्बन्ध का वनेषु = वाणी में, वनों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ॥ 8 ॥

पदार्थ :- सो = वह, उसने (सर्वनाम)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। इन्द्राय = परम ऐश्वर्यशाली के लिए (इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। पीतये = पान के लिए (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। तिरो = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। रोमाणि = रोम, प्रगतिशील वाले (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। अव्यया = व्यय न होने वाले, पालनीय द्वारा, रक्षणीय द्वारा, बन्धन द्वारा (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना, अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। सीदन् = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। योना = योनि का, सम्बन्ध का (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। वनेषु = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) ॥ 2 ॥

1096. त्वम् इन्दो परि स्रव, स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः ।

वरिवोविद् घृतम् पयः ॥ 9 ॥ 9-62-9

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। इन्दो = इन्दु का परि = सभी तरफ स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो स्वादिष्ठो = स्वादिष्ठ अङ्गिरोभ्यः = अङ्गिरा, विद्वान्, गतिशील, पाने वाले के लिए वरिवोविद् = इच्छा को जानने वाले घृतम् = प्रकाशमान को पयः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण ॥ 9 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। इन्दो = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। स्वादिष्ठो = स्वादिष्ठ (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। अङ्गिरोभ्यः = अङ्गिरा, विद्वान्, गतिशील, पाने वाले के लिए (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। वरिवोविद् = इच्छा को जानने वाले (वर् - इच्छा करना, आशा करना, विद् - जानना)। घृतम् = प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। पयः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण

(पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना) ॥

1097. अयम् विचर्षणिः हितः, पवमानः स चेतति ।

हिन्वानः आप्यम् बृहत् ॥ 10 ॥ 9-62-10

मन्त्रार्थ - अयम् = यह विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले हितः = हित, गति, वृद्धि पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला स = वह, उसने चेतति = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है हिन्वानः = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला आप्यम् = आप, व्याप्त, व्यापक को बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् ॥ 10 ॥

पदार्थ - अयम् = यह (सर्वनाम)। विचर्षणिः = विशेष विचार करने वाले (चर्ष-चर - संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। हितः = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। स = वह, उसने (सर्वनाम)। चेतति = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। हिन्वानः = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। आप्यम् = आप, व्याप्त, व्यापक को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 10 ॥

1098. आविशन् कलशम् सुतो, विश्वा अर्षन् अभि श्रियः ।

शूरः न गोषु तिष्ठति । 19 ॥ 9-62-19

मन्त्रार्थ - आविशन् = प्रवेश करते हुए, प्रवेश करने वाले कलशम् = कलश को सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए विश्वा = विश्व, सभी, सब अर्षन् = अन्तर्यामी, विद्यमान, प्राप्त होता हुआ अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा श्रियः = श्री, शोभाओं को शूरः = वीर, पराक्रमी न = नहीं, समान, उपमार्थक गोषु = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में तिष्ठति = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है । 19 ॥

पदार्थ - आविशन् = प्रवेश करते हुए, प्रवेश करने वाले (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, वि - विशेष, विश् = प्रवेश करना, फैलना)। कलशम् = कलश को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अर्षन् = अन्तर्यामी, विद्यमान, प्राप्त होता हुआ (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। श्रियः = श्री, शोभाओं को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। शूरः = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। गोषु = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। तिष्ठति = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ = ठहरना, खड़ा होना) ॥ 19 ॥

1099. एते सोमाः असृक्षत, गृणानाः शवसे महे ।

मदिन्तमस्य धारया ॥ 22 ॥ 9-62-22

मन्त्रार्थ :- एते = यह सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया गृणानाः = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले शवसे = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् मदिन्तमस्य = प्रकृष्ट आनन्द, प्रकृष्ट हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश देने वाले का धारया = धार द्वारा ॥

पदार्थ :- एते = यह (सर्वनाम)। सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि

द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **गृणानाः** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **शवसे** = शवस् के लिए, समीप जाने के लिए (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **मदिन्तमस्य** = प्रकृष्ट आनन्द, प्रकृष्ट हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश देने वाले का (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 22 ॥

1100. अभि गव्यानि वीतये, नृम्णा पुनानो अर्षसि ।

सनद्वाजः परि स्रव ॥ 23 ॥ 9-62-23

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **गव्यानि** = गव्यों में **वीतये** = व्याप्त के लिए **नृम्णा** = नर, ले जाने वाले **पुनानो** = पवित्रकर्ता **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो **सनद्वाजः** = सेवा देने वाला, दान देने वाला **परि** = सभी तरफ **स्रव** = स्रवित करें, स्रवित करो ॥ 23 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गव्यानि** = गव्यों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **वीतये** = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **नृम्णा** = नर, ले जाने वाले (नृ - ले जाना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **सनद्वाजः** = सेवा देने वाला, दान देने वाला (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव** = स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना) ॥ 23 ॥

1101. उत नो गोमतीः इषो, विश्वा अर्ष परिष्टुभः ।

गृणानो जमदग्निना ॥ 24 ॥

9-62-24

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **गोमतीः** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली **इषो** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **परिष्टुभः** = परिस्तुति, सभी ओर स्तुति, सब ओर प्रशंसित **गृणानो** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले **जमदग्निना** = अग्नि-भोजी द्वारा ॥ 24 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **गोमतीः** = गोयुक्त, गो के मत वाली, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वाली (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **इषो** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **परिष्टुभः** = परिस्तुति, सभी ओर स्तुति, सब ओर प्रशंसित (परिः - परितः, सब ओर, स्तु- प्रशंसा करना, पूजा करना, स्तुति करना)। **गृणानो** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **जमदग्निना** = अग्नि-भोजी द्वारा (जम् = खाना, निगलना, अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना,

1102. पवस्व वाचो अग्रियः, सोम चित्राभिः ऊतिभिः ।

अभि विश्वानि काव्या ॥ 25 ॥

9-62-25

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो वाचो = वाणी अग्रियः = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम चित्राभिः = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप द्वारा ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा विश्वानि = सभी काव्या = काव्य ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। वाचो = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। अग्रियः = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। चित्राभिः = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप द्वारा (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। ऊतिभिः = ऊतियों, वाणियों अथवा रक्षाओं द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। काव्या = काव्य (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) ॥ 25 ॥

1103. त्वम् समुद्रियाः अपो, अग्रियो वाचः ईरयन् ।

पवस्व विश्वम्-एजय ॥ 26 ॥

9-62-26

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम समुद्रियाः = समुद्रीय अपो = पालन करने वाला अग्रियो = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य वाचः = वाणी ईरयन् = प्रेरणा करता हुआ, कम्पित करता हुआ पवस्व = पवित्र करो विश्वम्-एजय = सबको चलाने वाले, प्रकाशित करने वाले ॥ 26 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। समुद्रियाः = समुद्रीय (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। अपो = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। अग्रियो = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वाचः = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। ईरयन् = प्रेरणा करता हुआ, कम्पित करता हुआ (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। विश्वम्-एजय = सबको चलाने वाले, प्रकाशित करने वाले, (विश्व - सभी, (एज् - चलना, कम्पन करना, प्रकाशित होना, चमकना, झलकना) ॥ 26 ॥

1104. तुभ्य इमा भुवना कवे, महिम्ने सोम तस्थिरे ।

तुभ्यम् अर्षन्ति सिन्धवः ॥ 27 ॥

9-62-27

मन्त्रार्थ :- तुभ्य = तुम्हारे लिए इमा = यह, इसको भुवना = हो रहा, वर्तमान कवे = कवि महिम्ने = महिमावान्, महत्व से युक्त, महान् सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम तस्थिरे = स्थित हैं तुभ्यम् = तुम्हारे लिए अर्षन्ति = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं सिन्धवः = सिन्धु ॥ 27 ॥

पदार्थ :- तुभ्य = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। इमा = यह, इसको (सर्वनाम)। भुवना = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। कवे = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। महिम्ने = महिमावान्, महत्व से युक्त, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना,

बोलना, कहना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **तस्थिरे** = स्थित हैं (तस् - स्थापित होना, स्थापना करना, फेंकना, उड़ा देना, भेजना, खोदना, कुम्हलाना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना)। **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अर्षन्ति** = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **सिन्धवः** = सिन्धु (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बाँधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना) ॥ 27 ॥

(281) सूक्त 63

1105. आ पवस्व सहस्रिणम्, रयिम् सोम सुवीर्यम्।

अस्मे श्रवांसि धारय ॥ 1 ॥

9-63-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **पवस्व** = पवित्र करो **सहस्रिणम्** = सहस्री को **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए **श्रवांसि** = श्रवण करो **धारय** = धार द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सहस्रिणम्** = सहस्री को (संख्या)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **श्रवांसि** = श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **धारय** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 1 ॥

1106. अया पवस्व धारया, यया सूर्यम् अरोचयः।

हिन्वानो मानुषीः अपः ॥ 7 ॥

9-63-7

मन्त्रार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा **पवस्व** = पवित्र करो **धारया** = धार द्वारा **यया** = पृथक् किया **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को **अरोचयः** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता है **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला **मानुषीः** = मानुषी, मनन करने वाले **अपः** = पालन करने वाला ॥ 7 ॥

पदार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **यया** = पृथक् किया (यु = मिलाना, अलग करना)। **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अरोचयः** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित करता है (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, रुच् - रुचना, चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **मानुषीः** = मानुषी, मनन करने वाले (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। **अपः** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना,

1107. अयुक्त सूरः एतशम्, पवमानो मनौ अधि।

अन्तरिक्षेण यातवे ॥ 8 ॥ 9-63-8

मन्त्रार्थ :- अयुक्त = अयुक्त, जो युक्त न हो **सूरः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **एतशम्** = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा को **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **मनौ** = मन-युगल **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **अन्तरिक्षेण** = अन्तरिक्ष से **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए ॥ 8 ॥

पदार्थ :- अयुक्त = अयुक्त, जो युक्त न हो (अ = नहीं, युज् - योग करना, युक्त करना, जोड़ना)। **सूरः** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **एतशम्** = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा को (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मनौ** = मन-युगल (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **अन्तरिक्षेण** = अन्तरिक्ष से (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना) ॥ 8 ॥

1108. उत त्या हरितो दश, सूरौ अयुक्त यातवे।

इन्दुः इन्द्रः इति ब्रुवन् ॥ 9 ॥ 9-63-9

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर **त्या** = वे **हरितो** = हरित, हरि से **दश** = दश **सूरौ** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **अयुक्त** = अयुक्त, जो युक्त न हो **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए **इन्दुः** = इन्दु **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार **ब्रुवन्** = कहते हुए, बोलते हुए ॥ 9 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **त्या** = वे (सर्वनाम)। **हरितो** = हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **दश** = दश (दश = दश, दस, संख्या)। **सूरौ** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अयुक्त** = अयुक्त, जो युक्त न हो (अ = नहीं, युज् - योग करना, युक्त करना, जोड़ना)। **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। **ब्रुवन्** = कहते हुए, बोलते हुए (ब्रू - कहना, बोलना) ॥ 9 ॥

1109. पवस्व देव आयुषक्, इन्द्रम् गच्छतु ते मदः।

वायुम् आ रोह धर्मणा ॥ 22 ॥

9-63-22

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देव **आयुषक्** = आयुष **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **गच्छतु** = जाये ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति **वायुम्** = वायु को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **रोह** = चढ़ें, बढ़ें **धर्मणा** = धर्म द्वारा ॥ 22 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **देवः** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **आयुषक्** = आयुष (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गच्छतु** = जाये (गम्-गच्छ् = जाना, जानना, पाना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना,

तृप्त होना)। **वायुम्** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **रोह** = चढ़ें, बढ़ें (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। **धर्मणा** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना) ॥ 22 ॥

1110. पवमान नि तोशसे, रयिम् सोम श्रवाय्यम्।

प्रियः समुद्रम् आ विश ॥ 23 ॥ 9-63-23

मन्त्रार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला नि = निश्चित, निरन्तर तोशसे = तुष्ट करता है रयिम् = विद्या, ज्ञान को सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम श्रवाय्यम् = श्रवाय्य को, श्रव्य को प्रियः = प्रिय समुद्रम् = समुद्र को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम विश = प्रतिष्ठित हो ॥ 23 ॥

पदार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। तोशसे = तुष्ट करता है (तुष् - सन्तुष्ट करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। श्रवाय्यम् = श्रवाय्य को, श्रव्य को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। प्रियः = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। समुद्रम् = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। विश = प्रतिष्ठित हो (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना) ॥ 23 ॥

1111. अपघ्नन् पवसे, क्रतुवित् सोम मत्सरः।

नुदस्व अदेवयुम् जनम् ॥ 24 ॥

9-63-24

मन्त्रार्थ :- अपघ्नन् = अपहनन करते हुए, मारते हुए पवसे = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए मृधः = हिंसक, आद्र क्रतुवित् = कर्मवेत्ता, कर्म को जानने वाले सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम मत्सरः = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो नुदस्व = भेजें अदेवयुम् = अदेवयु, अविद्वान् को, अदेवयुक्त को जनम् = जन को ॥

पदार्थ :- अपघ्नन् = अपहनन करते हुए, मारते हुए (अप = दूर, नीचे, अपकार, हन् - मारना)। पवसे = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मृधः = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। क्रतुवित् = कर्मवेत्ता, कर्म को जानने वाले (कृ = करना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। मत्सरः = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। नुदस्व = भेजें (नुद् = भेजना, प्रेरणा करना, जाना)। अदेवयुम् = अदेवयु, अविद्वान् को, अदेवयुक्त को (अ - नहीं, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। जनम् = जन को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 24 ॥

1112. पवमानाः असृक्षत, सोमाः शुक्रासः इन्दवः ।

अभि विश्वानि काव्या ॥ 25 ॥

9-63-25

मन्त्रार्थ :- पवमानाः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम शुक्रासः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी इन्दवः = इन्दुगण अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा विश्वानि = विश्व, सभी, सब काव्या = काव्य ॥ 25 ॥

पदार्थ :- पवमानाः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। शुक्रासः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। इन्दवः = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। विश्वानि = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। काव्या = काव्य (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) ॥ 25 ॥

1113. पवमानासः आशवः, शुभाः असृग्रम् इन्दवः ।

घ्नन्तो विश्वा अप द्विषः ॥ 26 ॥

9-63-26

मन्त्रार्थ :- पवमानासः = अनेक पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले आशवः = आशुकारी, तीव्रगामी शुभाः = शुभ, प्रकाशित असृग्रम् = सृजित किया, सृजन किया, असृजनकर्ता को इन्दवः = इन्दुगण घ्नन्तो = नष्ट करते हुए विश्वा = विश्व, सभी, सब अप = दूर, नीचे, अपकार द्विषः = द्वेष करने वाला ॥ 26 ॥

पदार्थ :- पवमानासः = अनेक पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। आशवः = आशुकारी, तीव्रगामी (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश्व = तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। शुभाः = शुभ, प्रकाशित (शुभ् - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। असृग्रम् = सृजित किया, सृजन किया, असृजनकर्ता को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। इन्दवः = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। घ्नन्तो = नष्ट करते हुए (हन् - मारना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। द्विषः = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना) ॥ 26 ॥

1114. पवमाना दिवः परि, अन्तरिक्षात् असृक्षत ।

पृथिव्याः अधि सानवि ॥ 27 ॥

9-63-27

मन्त्रार्थ :- पवमाना = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय परि = सभी तरफ अन्तरिक्षात् = अन्तरिक्ष से असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार सानवि = हे सेवाभावी, दानी ॥ 27 ॥

पदार्थ :- पवमाना = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। अन्तरिक्षात् = अन्तरिक्ष से (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी

के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानवि** = हे सेवाभावी, दानी (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना) ॥ 27 ॥

(282) सूक्त 64

1115. वृषा सोम द्युमान् असि, वृषा देव वृषव्रतः ।

वृषा धर्माणि दधिषे ॥ 1 ॥

9-64-1

मन्त्रार्थ - **वृषा** = पराक्रमी **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम द्युमान्** = प्रकाशमान, तेजस्वमान **असि** = हो **वृषा** = पराक्रमी **देव** = हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप **वृषव्रतः** = पराक्रम व्रती, सिंचक व्रती **वृषा** = पराक्रमी **धर्माणि** = धर्म **दधिषे** = धारण करते हो ॥ 1 ॥

पदार्थ - **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम** (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्युमान्** = प्रकाशमान, तेजस्वमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **देव** = हे देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **वृषव्रतः** = पराक्रम व्रती, सिंचक व्रती (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, वृत् - रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ - नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **धर्माणि** = धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **दधिषे** = धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 1 ॥

1116. अश्वो न चक्रदो वृषा, सम् गाः इन्दो सम् अर्वतः ।

वि नो राये दुरो वृधि ॥ 3 ॥

9-64-3

मन्त्रार्थ :- **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **चक्रदो** = चक्र देनेवाला, शब्दकर्ता, चिन्तनकर्ता **वृषा** = पराक्रमी **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले **इन्दो** = इन्दु का **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अर्वतः** = अर्व से, अर्वत् का **वि** = विशेष, विना, विलोम **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **राये** = गति, विद्या, वाणी **दुरो** = दूर **वृधि** = वृद्धि, आच्छादन ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **चक्रदो** = चक्र देनेवाला, शब्दकर्ता, चिन्तनकर्ता (क्रद - दुःखित होना, विकल होना, घबरा जाना, चिन्तन करना क्रन्द - पुकारना, जोर से बुलाना, रोना, चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना,

गम् - जाना, जानना, पाना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अर्वतः** = अर्व से, अर्वत् का (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **राये** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय् = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **दुरो** = दूर (दु-दव - जाना)। **वृधि** = वृद्धि, आच्छादन (वृध - बढ़ना, अधिक होना, वृ - पसन्द करना, नियोजित करना, नियमित करना, आच्छादित करना, ढंकना) ॥ 3 ॥

1117. असृक्षत प्र वाजिनो, गव्या सोमासो अश्वया ।

शुक्रासो वीरया आशवः ॥ 4 ॥ 9-64-4

मन्त्रार्थ :- असृक्षत = संचरण किया, गये, जाना, पाया **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **गव्या** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **शुक्रासो** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **वीरया** = वीरता युक्त **आशवः** = अशन करो, भोजन करो ॥ 4 ॥

पदार्थ :- असृक्षत = संचरण किया, गये, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वाजिनो** = बलशाली, वेगवान, तीव्र गति वाले = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **गव्या** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **शुक्रासो** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **वीरया** = वीरता युक्त (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **आशवः** = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शव् - जाना, जानना, पाना, विकार होना) ॥ 4 ॥

1118. शुभमानाः ऋतायुभिः, मृज्यमानाः गभस्त्योः ।

पवन्ते वारे अव्यये ॥ 5 ॥ 9-64-5

मन्त्रार्थ :- शुभमानाः = प्रकाशमान् होते हुए **ऋतायुभिः** = ऋतायुओं, ऋत तथा आयु द्वारा **मृज्यमानाः** = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ **गभस्त्योः** = गहन **पवन्ते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **वारे** = वरण में, इच्छाओं में **अव्यये** = अव्यय में, समाप्त न होने वाले में ॥ 5 ॥

पदार्थ :- शुभमानाः = प्रकाशमान् होते हुए (शुभ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। **ऋतायुभिः** = ऋतायुओं, ऋत तथा आयु द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **मृज्यमानाः** = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **गभस्त्योः** = गहन (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **पवन्ते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **वारे** = वरण में, इच्छाओं में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना,

नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यये** = अव्यय में, समाप्त न होने वाले में (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना) ॥ 5 ॥

1119. ते विश्वा दाशुषे वसु, सोमा दिव्यानि पार्थिवा ।

पवन्ताम् आन्तरिक्ष्या ॥ 6 ॥ 9-64-6

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **दाशुषे** = दानी के लिए **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **सोमा** = ऐश्वर्यमय **दिव्यानि** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पार्थिवा** = पार्थिव, पृथ्वी का **पवन्ताम्** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **आन्तरिक्ष्या** = अन्तरिक्ष या आकाश सम्बन्धी ॥ 6 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सोमा** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **दिव्यानि** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पार्थिवा** = पार्थिव, पृथ्वी का (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना)। **पवन्ताम्** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **आन्तरिक्ष्या** = अन्तरिक्ष या आकाश सम्बन्धी (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना) ॥ 6 ॥

1120. पवमानस्य विश्ववित्, प्र ते सर्गाः असृक्षत ।

सूर्यस्य इव न रश्मयः ॥ 1 ॥ 9-64-7

मन्त्रार्थ :- पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का **विश्ववित्** = सबको जानने वाला **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **सर्गाः** = सृष्टि, सृजन **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया **सूर्यस्य** = सूर्य का **इव** = समान, की भाँति, के समान **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **रश्मयः** = रश्मियाँ ॥ 7 ॥

पदार्थ :- पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **विश्ववित्** = सबको जानने वाला (विश्व - सब, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सर्गाः** = सृष्टि, सृजन (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **सूर्यस्य** = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **रश्मयः** = रश्मियाँ (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना) ॥ 7 ॥

1121. केतुम् कृण्वन् दिवः परि, विश्वा रूपा अभि अर्षसि ।

समुद्रः सोम पिन्वसे ॥ 8 ॥ 9-64-8

मन्त्रार्थ :- केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को **कृण्वन्** = करने वाला, करते हुए **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **परि** = सभी तरफ **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **रूपा** = रूप **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो **समुद्रः** = समुद्र **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पिन्वसे** = सिञ्चन करते हो ॥ 8 ॥

पदार्थ :- केतुम् = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता को (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, किन्तु - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। कृण्वन् = करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। रूपा = रूप (रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। समुद्रः = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पिन्वसे = सिञ्चन करते हो (पि = गति करना, जाना, जानना, पाना, पिन्व = सेवा करना, सेचन करना, प्रोक्षण करना, पिण् - शब्द करना) ॥ 8 ॥

1122. हिन्वानो वाचम् इष्यसि, पवमान विधर्मणि ।

अक्रान् देवो न सूर्यः ॥ 9 ॥ 9-64-9

मन्त्रार्थ :- हिन्वानो = उत्पन्न किया, जाना वाचम् = वाणी को इष्यसि = इच्छा करते हो पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला विधर्मणि = विशेष धारण करने अक्रान् = आक्रान्त किया देवो = देव न = नहीं, समान, उपमार्थक सूर्यः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला ॥ 9 ॥

पदार्थ :- जज्ञानो = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। वाचम् = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। इष्यसि = इच्छा करते हो (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। विधर्मणि = विशेष धारण करने में (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। अक्रान् = आक्रान्त किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। देवो = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। सूर्यः = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 9 ॥

1123. इन्दुः पविष्ट चेतनः, प्रियः कवीनाम् मतिः ।

सृजत् अश्वम् रथीः इव ॥ 10 ॥ 9-64-10

मन्त्रार्थ - इन्दुः = इन्दु पविष्ट = पवित्र, पालन, करने वाले चेतनः = चेतन, चुना गया, एकत्र प्रियः = प्रिय कवीनाम् = ज्ञानियों का, कवियों का मतिः = मति, मननशक्ति सृजत् = सृजन करो अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को रथीः = रथी, रथवाला इव = समान, की भाँति, के समान ॥ 10 ॥

पदार्थ - इन्दुः = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। पविष्ट = पवित्र, पालन, करने वाले (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। चेतनः = चेतन, चुना गया, एकत्र (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। प्रियः = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। कवीनाम् = ज्ञानियों का, कवियों का (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। मतिः = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। सृजत् = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न

करना, रचना करना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **रथीः** = रथी, रथवाला (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 10 ॥

1124. इषे पवस्व धारया, मृज्यमानो मनीषिभिः ।

इन्दो रुचा अभि गाः इहि ॥ 13 ॥ 9-64-13

मन्त्रार्थ :- **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए **पवस्व** = पवित्र करो **धारया** = धार द्वारा **मृज्यमानो** = अलंकृत करता हुआ **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा **इन्दो** = इन्दु का **रुचा** = रुच को, रुच द्वारा **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले **इहि** = आओ, जानों ॥ 13 ॥

पदार्थ :- **इषे** = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मृज्यमानो** = अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **रुचा** = रुच को, रुच द्वारा (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **इहि** = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना) ॥ 13 ॥

1125. पुनानो वरिवः कृधि, ऊर्जम् जनाय गिर्वणः ।

हरे सृजानः आशिरम् ॥ 14 ॥

9-64-14

मन्त्रार्थ :- **पुनानो** = पवित्रकर्ता **वरिवः** = वरणीय **कृधि** = करो **ऊर्जम्** = ऊर्जा को **जनाय** = जन के लिए **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन **हरे** = हे हरि! हे! ले जाने वाले, हे! हरण करने वाले **सृजानः** = त्यागा हुआ, उत्पन्न हुआ **आशिरम्** = आशिर को, शीर्षस्थ को ॥ 14 ॥

पदार्थ :- **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वरिवः** = वरणीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **कृधि** = करो (कृ = करना)। **ऊर्जम्** = ऊर्जा को (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **जनाय** = जन के लिए (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **गिर्वणः** = वाणी, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, वन - शब्द करना)। **हरे** = हे हरि! हे! ले जाने वाले, हे! हरण करने वाले (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **सृजानः** = त्यागा हुआ, उत्पन्न हुआ (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना)। **आशिरम्** = आशिर को, शीर्षस्थ को (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना) ॥ 14 ॥

1126. पुनानो देववीतये, इन्द्रस्य याहि निष्कृतम् ।

द्युतानो वाजिभिः हितः ॥ 15 ॥

9-64-15

मन्त्रार्थ :- **पुनानो** = पवित्रकर्ता **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ **द्युतानो** = द्योतमान,

प्रकाशमान वाजिभिः = वाजियों द्वारा हितः = हित, गति, वृद्धि ॥ 15 ॥

पदार्थ :- पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। द्युतानो = द्योतमान, प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। वाजिभिः = वाजियों द्वारा (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। हितः = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना) ॥ 15 ॥

1127. इन्द्राय इन्द्रो मरुत्वते, पवस्व मधुमत्तमः ।

ऋतस्य योनिम् आसदम् ॥ 22 ॥ 9-64-22

मन्त्रार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए इन्द्रो = इन्दु का मरुत्वते = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए पवस्व = पवित्र करो मधुमत्तमः = अत्यन्त मधुयुक्त ऋतस्य ऋत का योनिम् = योनि को आसदम् = बैठने को ॥ 22 ॥

पदार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्रो = इन्दु का (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। मरुत्वते = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मधुमत्तमः = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आसदम् = बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 22 ॥

1128. तम् त्वा विप्रा वचोविदः, परि कृण्वन्ति वेधसः ।

सम् त्वा मृजन्ति आयवः ॥ 23 ॥ 9-64-23

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले वचोविदः = वचनों को जानने वाले परि - सब ओर, कृण्वन्ति = करते हैं वेधसः = विद्वान्, विधान करने वाले सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं आयवः = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना ॥ 23 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। विप्रा = विशेष पूर्ण करने वाले (वि - विशेष, प्रा - पूर्ण करना)। वचोविदः = वचनों को जानने वाले (वच् - बोलना, कहना, समझाना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। परि - सब ओर, कृण्वन्ति = करते हैं (कृ - करना)। वेधसः = विद्वान्, विधान करने वाले (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। आयवः = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना) ॥ 2 ॥

1129. रसम् ते मित्रो अर्यमा, पिबन्तु वरुणः कवे ।

पवमानस्य मरुतः ॥ 24 ॥ 9-64-24

मन्त्रार्थ :- रसम् = रस को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए मित्रो = मित्र अर्यमा = अर्यमा, ज्ञानी पिबन्तु = पियें, पान करें वरुणः = वरुण कवे = कवि पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का मरुतः = मरणशील, मरुतों का ॥ 24 ॥

पदार्थ :- रसम् = रस को (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। मित्रो = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। अर्यमा = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। पिबन्तु = पियें, पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। वरुणः = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। कवे = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मरुतः = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना) ॥ 3 ॥

1130. दविद्युतत्या रुचा, परिष्टोभन्त्या कृपा ।

सोमाः शुक्राः गवाशिरः ॥ 28 ॥ 9-64-28

मन्त्रार्थ :- दविद्युतत्या = प्रगतिशील प्रकाशमान द्वारा रुचा = रुच को, रुच द्वारा परिष्टोभन्त्या = परिस्तुति-कल्याण द्वारा, सभी ओर स्तुति-कल्याण द्वारा कृपा = कृपा, दया सोमाः = ऐश्वर्यमय शुक्राः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी, से, द्वारा गवाशिरः = गवाशिर ॥ 28 ॥

पदार्थ :- दविद्युतत्या = प्रगतिशील प्रकाशमान द्वारा (दवि- विशेष, वैदिक उपसर्ग दव-दु = जाना, द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। रुचा = रुच को, रुच द्वारा (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। परिष्टोभन्त्या = परिस्तुति-कल्याण द्वारा, सभी ओर स्तुति-कल्याण द्वारा (परिः - परितः, सब ओर, स्तु- प्रशंसा करना, पूजा करना, स्तुति करना, भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। कृपा = कृपा, दया (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। सोमाः = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। शुक्रा = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी, से, द्वारा (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। गवाशिरः = गवाशिर (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना) ॥ 28 ॥

1131. हिन्वानो हेतृभिः हित, आ वाजम् वाजी अक्रमीत् ।

सीदन्तो वनुषो यथा ॥ 29 ॥ 9-64-29

मन्त्रार्थ :- हिन्वानो = संतृप्तवान् हेतृभिः = हेतियों, गतियों, ज्ञानियों, प्राप्तियों, वृद्धियों, प्रेरणाओं द्वारा यतः = जिससे आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वाजम् = विद्या को, गति को वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त अक्रमीत् = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी सीदन्तो = बैठते हुए, संचरण करते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए वनुषो = शब्दकर्ता, विद्वान्, सेवक यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार ॥ 29 ॥

पदार्थ :- हिन्वानो = संतृप्तवान् (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, तृप्त करना, शान्त करना)। हेतृभिः = हेतियों, गतियों, ज्ञानियों, प्राप्तियों, वृद्धियों, प्रेरणाओं द्वारा (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। यतः = जिससे (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति

करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, सृजन करना)। **अक्रमीत्** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **सीदन्तो** = बैठते हुए, संचरण करते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **वनुषो** = शब्दकर्ता, विद्वान्, सेवक (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, वनु - याचना करना, मांगना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार ॥ 29 ॥

1132. ऋधक् सोम स्वस्तये, संजग्मानो दिवा कवि ।

पवस्य सूर्यो दृशे ॥ 30 ॥ 9-64-30

मन्त्रार्थ :- ऋधक् = समृद्धिशाली, वृद्धिगत, समृद्ध **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए **संजग्मानो** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति गतिशील, विद्वान् **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **कवि** = कवि **पवस्य** = पवित्र करो **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **दृशे** = देखने के लिए ॥ 30 ॥

पदार्थ :- ऋधक् = समृद्धिशाली, वृद्धिगत, समृद्ध (ऋध् - वृद्धि होना, वृद्धि करना, समृद्धि होना, ऐश्वर्य होना, आनन्दित करना, पूर्ण करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **संजग्मानो** = सम्यक् रूप से, भलीभाँति गतिशील, विद्वान् (सम् - सम्यक्, जग् - गति करना, घर्षण करना, ग्रहण करना, गम् - जाना, जानना)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **कवि** = कवि (कु, क्व = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **पवस्य** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **दृशे** = देखने के लिए (दृश्-पश्य - देखना) ॥ 30 ॥

(283) सूक्त 65

1133. हिन्वन्ति सूरम् उस्त्रयः, स्वसारो जामयः पतिम् ।

महाम् इन्दुम् महीयुवः ॥ 1 ॥ 9-65-1

मन्त्रार्थ :- हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं **सूरम्** = सूर को, ऐश्वर्यवान् को **उस्त्रयः** = उस्त्रय, प्रभातकर्ता, तपाने वाल **स्वसारो** = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह **जामयः** = पोषण करने वाली **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक **महाम्** = मही को, महिमावान् को, महान् को **इन्दुम्** = इन्दु को **महीयुवः** = पूजनीय युव, महीयुव, महिमावान् युव ॥ 1 ॥

पदार्थ :- हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **सूरम्** = सूर को, ऐश्वर्यवान् को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **उस्त्रयः** = उस्त्रय, प्रभातकर्ता, तपाने वाल (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। **स्वसारो** = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **जामयः** = पोषण करने वाली (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **महाम्** = मही को, महिमावान् को, महान् को (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **इन्दुम्** = इन्दु को (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **महीयुवः** = पूजनीय युव, महीयुव, महिमावान् युव (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप

करना, अलग करना) ॥ 1 ॥

1134. पवमान रुचा रुचा, देव देवेभ्यः परि।

विश्वा वसूनि आ विश ॥ 2 ॥ 9-65-2

मन्त्रार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला रुचा = रुच को, रुच द्वारा रुचा = रुच को, रुच द्वारा देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण देवेभ्यः = देवों के लिए परि = परे, सभी ओर, साथ विश्वा = विश्व, सभी, सब वसूनि = वसुओं को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विश = प्रतिष्ठित हो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। रुचा = रुच को, रुच द्वारा (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। रुचा = रुच को, रुच द्वारा (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवेभ्यः = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। परि = परे, सभी ओर, साथ (उपसर्ग)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। विश = प्रतिष्ठित हो (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना) ॥ 2 ॥

1135. आ पवमान सुष्टुतिम्, वृष्टिम् देवेभ्यो दुवः।

इषे पवस्व संयतम् ॥ 3 ॥ 9-65-3

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला सुष्टुतिम् = सुन्दर स्तुति को वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को देवेभ्यो = देवों के लिए दुवः = सेवा, पीड़ा, प्रगति इषे = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए पवस्व = पवित्र करो संयतम् = संयत्न को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सुष्टुतिम् = सुन्दर स्तुति को (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना)। वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। देवेभ्यो = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। दुवः = सेवा, पीड़ा, प्रगति (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, दुवस् - पीड़ित होना, पीड़ित करना, सेवा करना)। इषे = गति, ज्ञान, इच्छा के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। संयतम् = संयत्न को (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना) ॥ 3 ॥

1136. वृषा हि असि भानुना, द्युमन्तम् त्वा हवामहे।

पवमान स्वाध्यः। 4 ॥ 9-65-4

मन्त्रार्थ - वृषा = पराक्रमी हि = ही, निश्चय असि = हो भानुना = भानु द्वारा, प्रकाशमान द्वारा द्युमन्तम् = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं पवमान = हे पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला स्वाध्यः = उत्तम विचारशील, उत्तम ध्यान करने वाले

पदार्थ - वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)।

हि = ही, निश्चय (अव्यय)। असि = हो (अस् - होना)। भानुना = भानु द्वारा, प्रकाशमान द्वारा (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। द्युमन्तम् = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। हवामहे = आह्वान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। पवमान = हे पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। स्वाध्यः = उत्तम विचारशील, उत्तम ध्यान करने वाले (सु - उत्तम, अच्छा, आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, ध्यै - ध्यान करना, चिन्तन करना, मनन करना, विचार करना) ॥ 4 ॥

1137. यद् अदिभः परिषिच्यसे, मृज्यमानः गभस्त्योः ।

द्रुणा सधस्थम् अशनुषे ॥ 6 ॥ 9-65-6

मन्त्रार्थ :- यद् = जो अदिभः = खाद्य को धारण करने वाले परिषिच्यसे = परिसिञ्चन करता है, सभी ओर सिञ्चन करता है मृज्यमानः = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ गभस्त्योः = गहन द्रुणा = हिंसा, गति, कुटिलता में सधस्थम् = सहस्थान, सहगामी, साथ को अशनुषे = प्राप्त होता है, व्याप्त होता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- यद् = जो (सर्वनाम)। अदिभः = खाद्य को धारण करने वाले (अद् = खाना, आत्मसात् करना, अ - नहीं, दा - देना)। परिषिच्यसे = परिसिञ्चन करता है, सभी ओर सिञ्चन करता है (परि = सभी तरफ (उपसर्ग), सिञ्च् - सिञ्चन करना)। मृज्यमानः = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। गभस्त्योः = गहन (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। द्रुणा = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। सधस्थम् = सहस्थान, सहगामी, साथ को (सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। अशनुषे = प्राप्त होता है, व्याप्त होता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) ॥ 6 ॥

1138. आ पवस्व सुवीर्यम्, मन्दमानः स्वायुध ।

इह उ सु इन्दो आ गहि ॥ 5 ॥ 9-65-5

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पवस्व = पवित्र करो सुवीर्यम् = उत्तम वीर को मन्दमानः = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान स्वायुध = उत्तम आयुध युक्त इह = इसमें, यहां, यह उ = निश्चय ही, भी सु = उत्तम, अच्छा इन्दो = इन्दु का आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गहि = गति, ज्ञान, घना करें ॥ 5 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। मन्दमानः = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। स्वायुध = उत्तम आयुध युक्त (सु+आयुधः, सु - सुन्दर, अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। इह = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। सु = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। गहि = गति, ज्ञान, घना करें (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 5 ॥

1139. वृषा पवस्व धारया, मरुत्वते च मत्सरः ।

विश्वा दधानः ओजसा ॥ 10 ॥ 9-65-10

मन्त्रार्थ - वृषा = पराक्रमी पवस्व = पवित्र करो धारया = धार द्वारा मरुत्वते = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए च = और मत्सरः = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी विश्वा = विश्व, सभी, सब दधानः = धारण करता है ओजसा = ओज द्वारा ॥ 10 ॥

पदार्थ - वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मरुत्वते** = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **च** = और। **मत्सरः** = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **दधानः** = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) ॥ 10 ॥

1140. तम् त्वा धर्तारम् ओण्योः, पवमान स्वर्दृशम्।

हिन्वे वाजेषु वाजिनम् ॥ 11 ॥

9-65-11

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा धर्तारम् = धारणकर्ता को, धारण करने वाले को ओण्योः = नायक, ले जाने वाला पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला स्वर्दृशम् = स्वर्दृश को हिन्वे = संतृप्त में, तृप्ति में वाजेषु = वाजों में वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को ॥ 11 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। धर्तारम् = धारणकर्ता को, धारण करने वाले को (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। ओण्योः = नायक, ले जाने वाला (ओण् = दूर ले लाना, ले जाना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। स्वर्दृशम् = स्वर्दृश को (स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, दृश्-पश्य -देखना)। हिन्वे = संतृप्त में, तृप्ति में (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। वाजेषु = वाजों में (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) ॥ 11 ॥

1141. अया चित्तो विपा अनया, हरिः पवस्व धारया।

युजम् वाजेषु चोदय ॥ 12 ॥

9-65-12

मन्त्रार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा चित्तो = चित्त या चेतना, ज्ञान विपा = विशेष अर्चना करने वाले, विशेष रक्षक, पालक अनया = इस द्वारा हरिः = हरि पवस्व = पवित्र करो धारया = धार द्वारा युजम् = युज को वाजेषु = वाजों में चोदय = प्रेरित करो, प्रेरणा दो ॥ 12 ॥

पदार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। चित्तो = चित्त या चेतना, ज्ञान (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। विपा = विशेष अर्चना करने वाले, विशेष रक्षक, पालक (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। अनया = इस द्वारा (सर्वनाम, स्त्रीलिंग)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। युजम् = युज को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। वाजेषु = वाजों में (वाज्

= गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना) ॥ 12 ॥

1142. राजा मेधाभिः ईयते, पवमानो मनावधि।

अन्तरिक्षेण यातवे ॥ 16 ॥ 9-65-16

मन्त्रार्थ :- राजा = राजा **मेधाभिः** = मेधावियों द्वारा **ईयते** = व्याप्त होता है, गतिमान होता है **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **मनावधि** = मन-युगल **अन्तरिक्षेण** = अन्तरिक्ष से **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए ॥ 16 ॥

पदार्थ :- राजा = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **मेधाभिः** = मेधावियों द्वारा (मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **ईयते** = व्याप्त होता है, गतिमान होता है (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मनावधि** = मन-युगल (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अन्तरिक्षेण** = अन्तरिक्ष से (अन्तः - बीच में, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना)। **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना) ॥ 16 ॥

1143. आ नः इन्दो शातग्विनम्, गवाम् पोषम् स्वश्यम्।

वहा भगत्तिम् ऊतये ॥ 17 ॥ 9-65-17

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्दो** = इन्दु का **शातग्विनम्** = शत वाणी युक्त को **गवाम्** = गवा को, गौ को **पोषम्** = पोषण करने वाले **स्वश्यम्** = उत्तम व्यापक को **वहा** = वहन करो, ले जाओ **भगत्तिम्** = भगति को, भग, सेवा को **ऊतये** = रक्षा के लिए ॥ 17 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **शातग्विनम्** = शत वाणी युक्त को (शत = सौ, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **गवाम्** = गवा को, गौ को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना)। **पोषम्** = पोषण करने वाले (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **स्वश्यम्** = उत्तम व्यापक को (सु = उत्तम, अच्छा, अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **वहा** = वहन करो, ले जाओ (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **भगत्तिम्** = भगति को, भग, सेवा को (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥

1144. आ नः सोम सहो जुवो, रूपम् न वर्चसे भर।

सुष्वाणो देववीतये ॥ 18 ॥ 9-65-18

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, हे सोम **सहो** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **जुवो** = गति, कम्पन, मिश्रण, विभाग, जय करने वाले **रूपम्** = रूप को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **वर्चसे** = प्रकाश के लिए, तेज के लिए **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **सुष्वाणो** = उत्पन्नकर्ता **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए ॥ 18 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, हे सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी

पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सहो** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **जुवो** = गति, कम्पन, मिश्रण, विभाग, जय करने वाले (जु - गति करना, जाना, भागना, दौड़ना)। **रूपम्** = रूप को (रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वर्चसे** = प्रकाश के लिए, तेज के लिए (वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **सुष्वाणो** = उत्पन्नकर्ता (सुष-सूष-सुस - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना)। **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना) ॥ 18 ॥

1145. अर्षा सोम द्युमत्तमो, अभि द्रोणानि रोरुवत्।

सीदन् श्येनो न योनिम् आ ॥ 19 ॥

9-65-19

मन्त्रार्थ :- अर्षा = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **द्युमत्तमो** = अत्यन्त अग्रगामी **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता **रोरुवत्** = शब्द करते हुए **सीदन्** = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए **श्येनो** = श्येन **न** = समान, उपमार्थक **योनिम्** = योनि को, सम्बन्ध को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ॥ 19 ॥

पदार्थ :- अर्षा = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **द्युमत्तमो** = अत्यन्त अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता (द्रु - जाना, शीघ्रता से जाना, चलना, बहना, प्रवाहित होना, द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **रोरुवत्** = शब्द करते हुए (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **सीदन्** = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **श्येनो** = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योनिम्** = योनि को, सम्बन्ध को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) ॥ 19 ॥

1146. अप्सा इन्द्राय वायवे, वरुणाय मरुद्भ्यः।

सोमो अर्षति विष्णवे ॥ 20 ॥

9-65-20

मन्त्रार्थ :- अप्सा = पालन करने वाले **इन्द्राय** = परम ऐश्वर्यशाली के लिए, इन्द्र के लिए **वायवे** = वायु के लिए **वरुणाय** = वरुण के लिए **मरुद्भ्यः** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **विष्णवे** = व्यापक के लिए ॥ 20 ॥

पदार्थ :- अप्सा = पालन करने वाले (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **इन्द्राय** = परम ऐश्वर्यशाली के लिए, इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वायवे** = वायु के लिए (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वरुणाय** = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मरुद्भ्यः** = मरणशीलों के लिए, मरुतों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी

पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)॥ **विष्णवे** = व्यापक के लिए (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)॥ 20 ॥

1147. इषम् तोकाय नो दधत्, अस्मभ्यम् सोम विश्वतः ।

आ पवस्व सहस्रिणम् ॥ 21 ॥

9-65-21

मन्त्रार्थ :- इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को तोकाय = तोक के लिए, तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास के लिए नो = हमको, हमारे लिए, हमारा दधत् = धारण किया अस्मभ्यम् = हमारे लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विश्वतः = सबसे, विश्व से आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पवस्व = पवित्र करो सहस्रिणम् = सहस्री को ॥ 21 ॥

पदार्थ :- इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। तोकाय = तोक के लिए, तोक, गति, वृद्धि, हिंसा, बल, दान, निवास के लिए (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना, तुज् - बल होना, दान करना, निवास करना, ग्रहण करना, चमकना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सहस्रिणम् = सहस्री को (संख्या) ॥ 21 ॥

1148. ते नो वृष्टिम् दिवः परि, पवन्ताम् आ सुवीर्यम् ।

सुवाना देवासः इन्द्रवः ॥ 24 ॥

9-65-24

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, वर्षा को, पराक्रमी को दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय परि = सभी तरफ पवन्ताम् = पवित्र करें, पालन करें, रक्षा करें आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सुवीर्यम् = उत्तम वीर को सुवाना = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले देवासः = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण इन्द्रवः = इन्दुगण ॥ 24 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वृष्टिम् = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, वर्षा को, पराक्रमी को (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष् - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। पवन्ताम् = पवित्र करें, पालन करें, रक्षा करें (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। सुवाना = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। देवासः = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इन्द्रवः = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 24 ॥

1149. आ ते दक्षम् मयोभुवम्, वह्निम् अद्य आ वृणीमहे ।

पान्तम् आ पुरुस्पृहम् ॥ 28 ॥

9-65-28

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए दक्षम् = दक्ष को मयोभुवम् = विद्वान्, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले को वह्निम् = वहन करने वाले को अद्य = आज आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को ॥ 28 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। दक्षम् = दक्ष को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। मयोभुवम् = विद्वान्, गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले को (मय - जाना, जानना, पाना)। वह्निम् = वहन करने वाले को (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। अद्य = आज (अव्यय)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना) ॥ 28 ॥ साम 1137

1150. आ मन्द्रम् आ वरेण्यम् आ, विप्रम् आ मनीषिणम्।

पान्तम् आ पुरुस्पृहम् ॥ 29 ॥ 9-65-29

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मन्द्रम् = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण वरेण्यम् = वरण योग्य आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विप्रम् = विशेष पूर्ण करने वाले को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण मनीषिणम् = मनीषी को पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को ॥ 29 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मन्द्रम् = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। वरेण्यम् = वरण योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। विप्रम् = विशेष पूर्ण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। मनीषिणम् = मनीषी को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना) ॥ 29 ॥

1151. आ रयिम् आ सुचेतुनम्, आ सुक्रतो तनूषु आ।

पान्तम् आ पुरुस्पृहम् ॥ 30 ॥ 9-65-30

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण रयिम् = विद्या, ज्ञान को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सुचेतुनम् = उत्तम चेतनीय को, श्रेष्ठ चुने गये को, उत्तम विचारक को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण सुक्रतो = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता तनूषु = विस्तारों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पान्तम् = रक्षण करते हुए, पीते हुए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को ॥ 30 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सुचेतुनम् = उत्तम चेतनीय को, श्रेष्ठ

चुने गये को, उत्तम विचारक को (सु - उत्तम, अच्छा, चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सुक्रतो** = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना)। **तनूषु** = विस्तारों में (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **पान्तम्** = रक्षण करते हुए, पीते हुए (पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **पुरुस्पृहम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना) ॥ 30 ॥

(284) सूक्त 66

1152. पवमानस्य ते कवे, वाजिन् सर्गाः असृक्षत ।

अर्वन्तो न श्रवस्यवः ॥ 10 ॥

9-66-10

मन्त्रार्थ :- पवमानस्य = पवमान का, पवित्र करने वाले का, पालन-रक्षा करने वाले का **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **कवे** = कवि **वाजिन्** = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **सर्गाः** = सृष्टि, सृजन **असृक्षत** = संचरण किया, गये, जाना, पाया **अर्वन्तो** = अर्वन्त **न** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **श्रवस्यवः** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील ॥ 10 ॥

पदार्थ :- पवमानस्य = पवमान का, पवित्र करने वाले का, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **कवे** = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **वाजिन्** = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सर्गाः** = सृष्टि, सृजन (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **असृक्षत** = संचरण किया, गये, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। **अर्वन्तो** = अर्वन्त (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचना, हिंसा करना)। **न** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **श्रवस्यवः** = विद्वान्, श्रवणशील, प्रगतिशील (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना) ॥

1153. अच्छा कोशम् मधुश्चुतम्, असृग्रम् वारे अव्यये ।

अवावशन्त धीतयः ॥ 11 ॥

9-66-11

मन्त्रार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **कोशम्** = कोश को **मधुश्चुतम्** = मधुश्चुत को **असृग्रम्** = सृजित किया, असृजनकर्ता को **वारे** = वरण में, इच्छाओं में **अव्यये** = अव्यय में, समाप्त न होने वाले में **अवावशन्त** = रक्षण की कामना, प्रकाश की कामना **धीतयः** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **कोशम्** = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मधुश्चुतम्** = मधुश्चुत को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना)। **असृग्रम्** = सृजित किया, असृजनकर्ता को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज् - सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **वारे** = वरण में, इच्छाओं में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यये** = अव्यय में, समाप्त न होने वाले में (वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **अवावशन्त** = रक्षण की कामना, प्रकाश की कामना (अव+ आ+वशन्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना, वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **धीतयः** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना,

धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 11 ॥

1154. अच्छा समुद्रम् इन्दवो, अस्तम् गावो न धेनवः ।

आ अगमन् न ऋतस्य योनिम् आ ॥ 12 ॥

9-66-12

मन्त्रार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ समुद्रम् = समुद्र को इन्दवो = इन्दुगण अस्तम् = प्रकाशमान को गावो = शब्द, वाणी, वचन न = नहीं, समान, उपमार्थक धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण अगमन् = गये न = नहीं, समान, उपमार्थक ऋतस्य = ऋत का योनिम् = योनि को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ॥ 12 ॥

पदार्थ :- अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। समुद्रम् = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। इन्दवो = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। अस्तम् = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। अगमन् = गये (गम् = जाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग) ॥ 12 ॥

1155. अग्ने आयूषि पवस आ, सुव ऊर्जम् इषम् च नः ।

आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ 19 ॥

9-66-19

मन्त्रार्थ :- अग्ने हे अग्नि, आयूषि आयु (जीवन) को पवस पवित्र करो। नः हमारे लिए ऊर्जम् ऊर्जा च और इषम् गति आ सुव उत्पन्न करो। दुच्छुनाम् दुष्टों को आरे दूर ही बाधस्व बाधित करो ॥ 19 ॥

भावार्थ :- अग्नि परमात्मा की उपासना से जीवन पवित्र हो, उससे ऊर्जा तथा गतिशीलता, कार्यक्षमता प्राप्त हो तथा दुष्ट और दुष्टता दूर ही रहे, निकट न आने पायें, इसके लिए उपाय अवश्य करें।

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना, पहुंचना, पाना)। आयूषि = आयु (जीवन) को (अय् = गति करना)। पवसे = पवित्र करो (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। आ = समन्तात्, सम्पूर्ण, उपसर्ग। सुव = उत्पन्न करो (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। ऊर्जम् = ऊर्जा को (ऊर्ज् = बल होना, प्राणवान् होना)। इषम् = इच्छा, गति, प्राप्ति को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, जाना, पाना, निरन्तर देखना)। च = और। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा। आरे = दूर (अव्यय)। बाधस्व = बाधित करो (बाध - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। दुच्छुनाम् = दुष्टों को (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, जलना, जलाना) ॥ 19 ॥

1156. अग्निः ऋषिः पवमानः, पाञ्चजन्यः पुरोहितः ।

तम् ईमहे महागयम् ॥ 20 ॥ 9-66-20

मन्त्रार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान्। ऋषिः = ऋषि। पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला। पाञ्चजन्यः = प्रसिद्ध जनों के योग्य, व्यक्त करने वालों के योग्य। पुरोहितः = पुरोहित। तम् = उसको, उसे। ईमहे = आते हैं, जानते हैं। महागयम् = महान्, गय, गायन, वाणी, गति, ज्ञान को। 20

भावार्थ :- अग्नि स्वरूप परमात्मा तथा उसका उपासक ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् ही ऋषि, पवमानः अर्थात् पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला है। वह पाञ्चजन्यः अर्थात् प्रसिद्ध जनों के योग्य, व्यक्त करने वालों के योग्य है। वह पुरोहित अर्थात् अग्रणी हित, गति, वृद्धि करने वाला है। वह महागय अर्थात् महान्, गायन, वाणी, गति, ज्ञान वाला है।

हम उसकी ओर जाते हैं, उसे जानते हैं। 20

पदार्थ :- अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ऋषिः** = ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पाञ्चजन्यः** = प्रसिद्ध जनों के योग्य, व्यक्त करने वालों के योग्य (पञ्च् - व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, व्यवहार करना, प्रकाश करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **पुरोहितः** = पुरोहित (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, हि - चलना, जाना, जानना, पाना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ईमहे** = आते हैं, जानते हैं (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना)। **महागयम्** = महान्, गय, गायन, वाणी, गति, ज्ञान को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, गै - शब्द, ध्वनि करना, गायन करना)।

1157. अग्ने पवस्व स्वपा, अस्मे वर्चः सुवीर्यम्।

दधत् रयिम् मयि पोषम् ॥ 21 ॥ 9-66-21

मन्त्रार्थ :- अग्ने - हे अग्नि! पवस्व - पवित्र करो, स्वपा - सुपालक, सुरक्षक, अस्मे - हममें, वर्चः - प्रकाश, सुवीर्यम् - सुवीर्य को, अच्छी वीरता को, दधत् - दो, धारण कराओ, रयिम् - रयि को, विद्या को, मयि - मुझमें, पोषम् - पोषण को ॥ 21 ॥

भावार्थ :- अग्नि स्वरूप परमात्मा से पवित्रता की कामना की गयी है। स्वपा अर्थात् सुपालक, सुरक्षक प्रभु से प्रकाश एवम् उत्तम वीरता को, प्रदान करने की प्रार्थना की गयी है। देवों में, दिव्य शक्तियों में परमात्मा ही वर्चस्वी है, प्रकाशमान है, उसी प्रकार मनुष्यों में हम वर्चस्वी, प्रकाशमान बनें, यह प्रार्थना है।

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि! (अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना, पहुँचना, पाना)। पवस्व = पवित्र करो (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। स्वपा = सुपालक, सुरक्षक (सु - अच्छा, अप् - पालन करना, स्व = निज, अपना, पा = रक्षा करना)। अस्मे = हमारा। वर्चः = प्रकाश (वर्च् = प्रकाशित होना)। सुवीर्यम् - सुवीर्य को (वीर् - वीर होना, वीरता दिखाना)। दधत् = दो, धारण कराओ (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। रयिम् = रयि को, विद्या को (रय् = जाना, जानना)। मयि = मुझमें। पोषम् = पोषण को (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना) ॥ 21 ॥

1158. पवमानस्य जङ्घ्नतो, हरेः चन्द्राः असृक्षत।

जीराः अजिरशोचिषः ॥ 25 ॥

9-66-25

मन्त्रार्थ :- पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का जङ्घ्नतो = हिंसा करने वाले हरेः = हरि, ले जाने वाले, हरण करने वाले का, से चन्द्राः = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया जीराः = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व आयु देने वाले अजिरशोचिषः = कभी जीर्ण न होने वाली पवित्रता, प्रगतिशील-पवित्रता वाले ॥ 25 ॥

पदार्थ :- पवमानस्य = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। जङ्घ्नतो = हिंसा करने वाले (हन्-घ्न-जिघ्न् - हिंसा करना)। हरेः = हरि, ले जाने वाले, हरण करने वाले का, से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। चन्द्राः = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक (चन्द् - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। जीराः = जीर्ण, वृद्ध या परिपक्व आयु देने वाले (जृ - वृद्ध होना, जीर्ण होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। अजिरशोचिषः = कभी जीर्ण न होने वाली पवित्रता, प्रगतिशील-पवित्रता वाले (अ+जिर+शोचिषः, अ - नहीं, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना, अज् - जाना, स्थापना, दौड़ाना, फेंकना, शुच् = शुद्ध होना, पवित्र

1159. पवमान व्यश्नवत्, रश्मिभिः वाजसातमः ।

दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥ 27 ॥ 9-66-27

मन्त्रार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला वि = विशेष, विना, विलोम व्यश्नवत् = विशेष व्याप्त हो, पोषक हो रश्मिभिः = किरणों से वाजसातमः = अत्यन्त विद्यावान् वाले दधत् = धारण किया स्तोत्रे = स्तुति होने में सुवीर्यम् = उत्तम वीर को ॥ 27 ॥

पदार्थ :- पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। व्यश्नवत् = विशेष व्याप्त हो, पोषक हो (वि - विशेष, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। रश्मिभिः = किरणों से (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। वाजसातमः = अत्यन्त विद्यावान् वाले (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। स्तोत्रे = स्तुति होने में (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। सुवीर्यम् = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 27 ॥

(285) सूक्त 67

1160. त्वम् सोम असि धारयुः, मन्द्रः ओजिष्ठो अध्वरे ।

पवस्व मंहयद्रयिः ॥ 1 ॥ 9-67-1

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम असि = हो धारयुः = धारण की इच्छा वाला मन्द्रः = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले ओजिष्ठो = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् अध्वरे = अहिंसक में पवस्व = पवित्र करो मंहयद्रयिः = महान् आदर युक्त, पूज्य आदरणीय, सम्माननीय ॥ 1 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। असि = हो (अस् - होना)। धारयुः = धारण की इच्छा वाला (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। मन्द्रः = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। ओजिष्ठो = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्वृ-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मंहयद्रयिः = महान् आदर युक्त, पूज्य आदरणीय, सम्माननीय (मह् - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना) ॥ 1 ॥

1161. त्वम् सुतो नृमादनो, दधन्वान् मत्सरिन्तमः ।

इन्द्राय सूरिः अन्धसा ॥ 2 ॥ 9-67-2

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए नृमादमो = नर को आनन्द देने वाले को दधन्वान् = धारण किया मत्सरिन्तमः = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए सूरिः = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् अन्धसा = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना,

गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **नृमादमो** = नर को आनन्द देने वाले को (नृ - ले जाना, मदी-माद् - हर्ष होना)। **दधन्वान्** = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **मत्सरिन्तमः** = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सू - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सूरिः** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अन्धसा** = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना) ॥ 2 ॥

1162. त्वम् सुष्वाणो अद्रिभिः, अभ्यर्ष कनिक्रदत् ।

द्युमन्तम् शुष्मम् उत्तमम् ॥ 3 ॥ 9-67-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम **सुष्वाणो** = उत्पन्नकर्ता **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा **अभ्यर्ष** = अन्तर्दर्शन, अन्तर्गमन **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को **शुष्मम्** = शुष्म, सुखाने वाला **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **सुष्वाणो** = उत्पन्नकर्ता (सुष-सूष-सुस - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **अभ्यर्ष** = अन्तर्दर्शन, अन्तर्गमन (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ऋष - जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना)। **द्युमन्तम्** = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **शुष्मम्** = शुष्म, सुखाने वाला (शुष् - सुखाना)। **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना) ॥ 3 ॥

1163 पवस्व सोम मन्दयन्, इन्द्राय मधुमत्तमः ॥ 16 ॥ 9-67-16

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम मन्दयन्** = आनन्द, हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश करते हुए **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त ॥ 16 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम** (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मन्दयन्** = आनन्द, हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश करते हुए (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **मधुमत्तमः** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना) ॥ 16 ॥

1164. असृग्रन् देववीतये, वाजयन्तो रथाः इव ॥ 17 ॥ 9-67-17

मन्त्रार्थ :- असृग्रन् = सृजित करते हुए, सृजन करते हुए **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए **वाजयन्तो** = गतिमान, बलवान **रथाः** = रथ **इव** = समान, की भाँति, के समान ॥ 17 ॥

पदार्थ :- असृग्रन् = सृजित करते हुए, सृजन करते हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज् - सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। **वाजयन्तो** = गतिमान, बलवान (वाज् = गति करना, जाना,

जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **रथाः** = रथ (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 17 ॥

1165. ते सुतासो मदिन्तमाः, शुक्रा वायुम् असृक्षत ॥ 18 ॥

9-67-18

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **सुतासो** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **मदिन्तमाः** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले **शुक्रा** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **वायुम्** = वायु को **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया ॥ 18 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुतासो** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मदिन्तमाः** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शुक्रा** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **वायुम्** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **असृक्षत** = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना) ॥

1166. यः पावमानीः अध्येति, ऋषिभिः सम्भृतम् रसम् ।

सर्वम् स पूतम् अश्नाति, स्वदितम् मातरिश्वना ॥ 31 ॥

9-67-31

मन्त्रार्थ :- यः = जो **पावमानीः** = पवमान युक्त, पवित्रता युक्त, पवित्र करने वाले, पालक-रक्षक **अध्येति** = अध्ययन करता है **ऋषिभिः** = ऋषियों द्वारा **सम्भृतम्** = सम्यक् भरण किया **रसम्** = रस को **सर्वम्** = सब कुछ **स** = वह, उसने **पूतम्** = पवित्रता युक्त, रक्षित को **अश्नाति** = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त होता है **स्वदितम्** = स्वादिष्ट को **मातरिश्वना** = मातरिश्वा, उपासक द्वारा ॥ 31 ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। **पावमानीः** = पवमान युक्त, पवित्रता युक्त, पवित्र करने वाले, पालक-रक्षक (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, पा = पालन करना, रक्षा करना)। **अध्येति** = अध्ययन करता है (अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार, ए = जाना, जानना, पाना, अधि + ए = अध्ययन करना)। **ऋषिभिः** = ऋषियों द्वारा (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **सम्भृतम्** = सम्यक् भरण किया (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, भृ - भरना)। **रसम्** = रस को (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **सर्वम्** = सब कुछ (सर्वनाम)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **पूतम्** = पवित्रता युक्त, रक्षित को (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अश्नाति** = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त होता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **स्वदितम्** = स्वादिष्ट को (स्वद - स्वाद लेना, चखना, तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **मातरिश्वना** = मातरिश्वा, उपासक द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना, श्वस - श्वास लेना, जीते रहना, शिव - जाना, वृद्धि होना, श्वस - श्वास लेना) ॥ 31 ॥

1167. पावमानीः यो अध्येति, ऋषिभिः सम्भृतम् रसम् ।

तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरम्, सर्पिः मधु उदकम् ॥ 32 ॥

9-67-32

मन्त्रार्थ :- पावमानीः = पवमान युक्त, पवित्रता युक्त, पवित्र करने वाले, पालक-रक्षक **यो** = जो **अध्येति** = अध्ययन करता है **ऋषिभिः** = ऋषियों द्वारा **सम्भृतम्** = सम्यक् भरण किया **रसम्** = रस को **तस्मै** = उसके लिए **सरस्वती** = सरस्वती **दुहे** = दुह के लिए **क्षीरम्** = निवास, क्षति, क्षय का **सर्पिः** = सर्प, प्रवाह, प्रगति वाले **मधु** = मीठा, मधु **उदकम्** = उदक को ॥ 32 ॥

पदार्थ :- पावमानी: = पवमान युक्त, पवित्रता युक्त, पवित्र करने वाले, पालक-रक्षक (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, पा = पालन करना, रक्षा करना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **अध्येति** = अध्ययन करता है (अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार, ए = जाना, जानना, पाना, अधि + ए = अध्ययन करना)। **ऋषिभिः** = ऋषियों द्वारा (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **सम्भृतम्** = सम्यक् भरण किया (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, भृ - भरना)। **रसम्** = रस को (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **तस्मै** = उसके लिए (सर्वनाम)। **सरस्वती** = सरस्वती (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना, स - साथ, सहित, रस् - स्वाद लेना, प्रीति करना, शब्द करना)। **दुहे** = दुह के लिए (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **क्षीरम्** = निवास, क्षति, क्षय का (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना, क्षी - क्षीण होना, हिंसा करना)। **सर्पिः** = सर्प, प्रवाह, प्रगति वाले (सृप् - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **उदकम्** = उदक को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, अक् - जाना, टेढ़ा जाना, उच्च, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना) ॥ 32 ॥

अनुवाक:- 70

(286) सूक्त 68

1168. प्र देवम् अच्छा मधुमन्त इन्दवो, असिष्यदन्त गावः आ न धेनवः ।

बर्हिषदो वचनावन्तः ऊधभिः, परिस्रुतम् उस्त्रिया निर्णिजम् धिरे ॥ 1 ॥ 9-68-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **देवम्** = देव को **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **मधुमन्तः** = मधुरता युक्त **इन्दवो** = इन्दुगण **असिष्यदन्त** = सिञ्चन किया **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **बर्हिषदो** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् **वचनावन्तः** = वचन **ऊधभिः** = वाणी, शब्द, आद्र द्वारा **परिस्रुतम्** = सर्वत्रगामी को, विद्वान् को **उस्त्रिया** = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को **धिरे** = धारण करता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **देवम्** = देव को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अच्छा** = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **मधुमन्तः** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्दवो** = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **असिष्यदन्त** = सिञ्चन किया (स्यन्द - टपकना, झरना, चूना, सींचना, छींटा देना, जाना)। **गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **बर्हिषदो** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम- व्यवसाय करना, खेलना, बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, षद्-सद् - बैठना)। **वचनावन्तः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **ऊधभिः** = वाणी, शब्द, आद्र द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द = भिगोना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **परिस्रुतम्** = सर्वत्रगामी को, विद्वान् को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्त्रु = जाना, बहना, जानना, पाना)। **उस्त्रिया** = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निज्ज - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **धिरे** = धारण करता है (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 1 ॥

1169. उपो मतिः पृच्यते सिच्यते मधु, मन्द्राजनी चोदते अन्तः आसनि ।

पवमानः सन्तनिः प्रघ्नताम् इव, मधुमान् द्रप्सः परि वारम् अर्षति ॥ 2 ॥ 9-69-2

मन्त्रार्थ :- उपो = समीप, निकट मतिः = मति, मननशक्ति पृच्यते = स्पर्श करता है सिच्यते = सिञ्चन करता है मधु = मीठा, मधु मन्द्राजनी = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को चोदते = प्रेरणा देते हैं, प्रेरित करते हैं अन्तः = बीच में, भीतर आसनि = बैठने के साधन में, आसन में, स्थान में पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला सन्तनिः = विस्तार वाले प्रघ्नताम् = प्रकृष्ट नष्ट, मारने करने वाले इव = समान, की भाँति, के समान मधुमान् = मधुरता युक्त द्रप्सः = हर्ष, आनन्द, गर्व परि = सभी तरफ वारम् = वरण को अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उपो = समीप, निकट (उपसर्ग, सर्वनाम)। मतिः = मति, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। पृच्यते = स्पर्श करता है (पृच् = संयम करना, तपस्या करना, स्पर्श करना, संयोग करना, मिलना)। सिच्यते = सिञ्चन करता है (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। मन्द्राजनी = स्तुत्य, आनन्दित करने वाले, विनाश करने वाले को (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना, जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। चोदते = प्रेरणा देते हैं, प्रेरित करते हैं (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। अन्तः = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। आसनि = बैठने के साधन में, आसन में, स्थान में (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सन्तनिः = विस्तार वाले (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। प्रघ्नताम् = प्रकृष्ट नष्ट, मारने करने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, हन् - मारना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। मधुमान् = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। द्रप्सः = हर्ष, आनन्द, गर्व (द्रप् = हर्ष होना, गर्व होना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। वारम् = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। अर्षति = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना) ॥ 2 ॥

1170. उक्षा मिमाति प्रति यन्ति धेनवो, देवस्य देवीः उप यन्ति निष्कृतम् ।

अत्यक्रमीत् अर्जुनम् वारम् अव्ययम्, अत्कम् न निक्तम् परि सोमो अव्यत ॥ 4 ॥ 9-69-4

मन्त्रार्थ :- उक्षा = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला मिमाति = शब्द करता है, गति करता है, रक्षा करता है प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं धेनवो = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले देवस्य = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण का देवीः = दिव्यगुणयुक्त उप = समीप यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ अत्यक्रमीत् = अत्यधिक वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी अर्जुनम् = लाभ, प्राप्ति को वारम् = वरण को अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को अत्कम् = सतत गमन वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक निक्तम् = शुद्ध, स्वच्छ, पालन को परि = सभी तरफ सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- उक्षा = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। मिमेति = शब्द करता है, गति करता है, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मीम - जाना, शब्द करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या

- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **धेनवो** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **देवस्य** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवीः** = दिव्यगुणयुक्त (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। **अत्यक्रमीत्** = अत्यधिक वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अति - अधिक, बहुत, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **अर्जुनम् वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्ययम्** = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **अत्कम्** = सतत गमन वाले को (अत् - जाना, सदैव जाते रहना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **निक्तम्** = शुद्ध, स्वच्छ, पालन को (निक्-निज-निनिक् - शुद्ध करना, स्वच्छ करना, पालना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अव्यत** = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, व्याप्त होना, प्रकाश करना) ॥ 4 ॥

1171. सूर्यस्य इव रश्मयो द्रावयित्त्वो, मत्सरासः प्रसुपः साकम् ईरते ।

तन्तुम् ततम् परि सर्गासः आशवो, न इन्द्रात् ऋते पवते धाम किञ्चन ॥ 6 ॥ 9-69-6

मन्त्रार्थ :- सूर्यस्य = सूर्य का इव = समान, की भाँति, के समान रश्मयो = रश्मियाँ द्रावयित्त्वो = प्रगतिशील, प्राप्त करने वाले मत्सरासः = आनन्ददायक प्रसुपः = प्रकृष्ट ऐश्वर्यवान्, प्रमुख उत्पन्न हुए साकम् = साथ ईरते = कम्पित करता है तन्तुम् = तन्तु को ततम् = विस्तार युक्त परि = सभी तरफ सर्गासः = अनेक सृष्टि, सृजन आशवो = अशन करो, भोजन करो न = नहीं, समान, उपमार्थक इन्द्रात् = इन्द्र से, परम ऐश्वर्य से ऋते = ऋत में पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है धाम = धारण करने योग्य किञ्चन = कोई ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सूर्यस्य = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **रश्मयो** = रश्मियाँ (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। **द्रावयित्त्वो** = प्रगतिशील, प्राप्त करने वाले (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **मत्सरासः** = आनन्ददायक (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सू - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **प्रसुपः** = प्रकृष्ट ऐश्वर्यवान्, प्रमुख उत्पन्न हुए (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), सु - उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **साकम्** = साथ (अव्यय)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **तन्तुम्** = तन्तु को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **ततम्** = विस्तार युक्त (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **सर्गासः** = अनेक सृष्टि, सृजन (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **आशवो** = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शक् - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **इन्द्रात्** = इन्द्र से, परम ऐश्वर्य से (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **ऋते** = ऋत में (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धाम** = धारण करने योग्य (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा

करना, दान करना)। किञ्चन = कोई। (किम् + चन, सर्वनाम) ॥ 6 ॥

(288) सूक्त 70

1172. त्रिः अस्मै सप्त धेनवो दुदुहरे, सत्याम् अशिरम् पूर्वे व्योमनि ।

चत्वारि अन्या भुवनानि निर्णिजे, चारुणि चक्रे यद् ऋतैः अवर्धत ॥ 1 ॥ 9-70-1

मन्त्रार्थ - त्रिः = तीन अस्मै = हमारे लिए सप्त = सात धेनवो = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले दुदुहरे = दोहन किया सत्याम् = सत्य को आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को पूर्वे = पूर्व व्योमनि = व्योम में, विशेष रक्षक में चत्वारि = चार अन्या = अन्य, कोई और, इतर भुवनानि = भुवों का, वर्तमान का निर्णिजे = निरन्तर शुद्ध करने के लिए चारुणि = चारु में चक्रे = किया यत् = जिसे, जो ऋतैः = ऋतों द्वारा अवर्धत = बढ़ा ॥ 1 ॥

पदार्थ :- त्रिः = तीन (संख्या)। अस्मै = हमारे लिए (सर्वनाम)। सप्त = सात (संख्या)। धेनवो = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। दुदुहरे = दोहन किया (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, जलना, जलाना, दुह - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। सत्याम् = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। पूर्वे = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। व्योमनि = व्योम में, विशेष रक्षक में (वि - विशेष, उ - शब्द करना, रक्षा करना, सुखाना, ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ओ - बुलाना, आह्वान करना)। चत्वारि = चार (चतुः - चार, संख्या)। अन्या = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। भुवनानि = भुवों का, वर्तमान का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। निर्णिजे = निरन्तर शुद्ध करने के लिए (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निज्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। चारुणि = चारु में (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। चक्रे = किया (कृ - करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ऋतैः = ऋतों द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। अवर्धत = बढ़ा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृध् - बढ़ना, बढ़ाना) ॥ 1 ॥

1173. स भिक्षमाणो अमृतस्य चारुणः, उभे द्यावा काव्येना वि शश्रथे ।

तेजिष्ठा अपो मंहना परि व्यत, यदी देवस्य श्रवसा सदो विदुः ॥ 2 ॥ 9-70-2

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने भिक्षमाणो = भक्षण करता हुआ अमृतस्य = अमृत, अविनाशी का चारुणः = चलाने वाला, वीर, प्रयास करने वाला उभे = दोनों, पूर्णता द्यावा = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा काव्येना = काव्य द्वारा वि = विशेष, विना, विलोम शश्रथे = प्रयत्न किया, प्रगति करता है तेजिष्ठा = अत्यन्त प्रकाशवान् अपो = पालन करने वाला मंहना = महत्व, महान्, पूज्य द्वारा परि = सभी तरफ व्यत = व्याप्त करता है यदी = यदि देवस्य = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण का श्रवसा = श्रवः, श्रवण, वाणी से सदो = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य विदुः = विद्वान् ॥ 2 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। भिक्षमाणो = भक्षण करता हुआ (भक्ष - खाना, ग्रहण करना)। अमृतस्य = अमृत, अविनाशी का (मृ - मरना)। चारुणः = चलाने वाला, वीर, प्रयास करने वाला (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना, चार - संशय होना, निश्चय करना)। उभे = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। द्यावा = अग्रगामी, प्रकाशमय, द्यावा (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। काव्येना = काव्य द्वारा (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। शश्रथे = प्रयत्न किया, प्रगति करता है (श्रथ - प्रयत्न करना, जाना, श्रथ - मुक्त करना, छोड़ना, मारना, पीड़ा देना, बन्धन करना, बांधना, जकड़ना, श्रथ - निर्बल होना, शक्तिहीन होना)। तेजिष्ठा = अत्यन्त प्रकाशवान् (तिज्, तेज् = चमकना, चमकाना, पैना करना, प्रभाव होना, तीक्ष्ण करना)। अपो = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। मंहना = महत्व, महान्, पूज्य द्वारा (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)।

परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **व्यत** = व्याप्त करता है (वी - जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना)। **यदी** = यदि (अव्यय)। **देवस्य** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **श्रवसा** = श्रवः, श्रवण, वाणी से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **सदो** = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **विदुः** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 2 ॥

1174. ते अस्य सन्तु केतवो अमृत्यवो, अदाभ्यासो जनुषी उभे अनु।

येभिः नृम्णा च देव्या च पुनते, आत् इत् राजानम् मननाः अगृभ्णत ॥ 3 ॥ 9-70-3

मन्त्रार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **अस्य** = इसका **सन्तु** = हों **केतवो** = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता **अमृत्यवो** = अमृत योग्य, अमरणशील **अदाभ्यासो** = अनिन्दक, अदानी **जनुषी** = जनों, लोगों, जन्मों को **उभे** = दोनों, पूर्णता **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **येभिः** = जिनसे **नृम्णा** = नर, ले जाने वाले **च** = और **देव्या** = देवी द्वारा **च** = और **पुनते** = पवित्र करते हैं **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **इत्** = ही **राजानम्** = राजा **मननाः** = मननशील **अगृभ्णत** = गर्भ, सिंचन, प्राप्त करता है ॥ 3 ॥

पदार्थ :- ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **सन्तु** = हों (अस् - होना)। **केतवो** = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **अमृत्यवो** = अमृत योग्य, अमरणशील (अ - नहीं, मृ - मरना)। **अदाभ्यासो** = अनिन्दक, अदानी (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना, आज्ञा देना, दा - देना)। **जनुषी** = जनों, लोगों, जन्मों को (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **येभिः** = जिनसे (सर्वनाम)। **नृम्णा** = नर, ले जाने वाले (नृ - ले जाना)। **च** = और (अव्यय)। **देव्या** = देवी द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **च** = और (अव्यय)। **पुनते** = पवित्र करते हैं (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इत्** = ही (अव्यय)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **मननाः** = मननशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अगृभ्णत** = गर्भ, सिंचन, प्राप्त करता है (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, गृ = सींचना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना, गृह् - ग्रहण लेना, स्वीकार करना) ॥ 3 ॥

(289) सूक्त 75

1175. अभि प्रियाणि पवते चनोहितो, नामानि यहवो अधि येषु वर्धते।

आ सूर्यस्य बृहतो बृहन् अधि, रथम् विश्वञ्चम् अरुहद् विचक्षणः ॥ 1 ॥ 9-75-1

मन्त्रार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्रियाणि** = प्रिय **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **चनोहितो** = शब्दकर्ता, विद्वान्, विश्वास तथा स्मरण करने वालों का हित करने वाला **नामानि** = नाम **यहवो** = महान् **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **येषु** = जिनमें **वर्धते** = बढ़ता है **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **सूर्यस्य** = सूर्य का **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट्, **बृहत् बृहन्** = महान्, बड़ा, विराट्, **बृहत्** द्वारा **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **रथम्** = रथ को **विष्वञ्चम्** = विश्व को, सभी को **अरुहद्** = आरोहण किया, उत्पन्न हुआ, हिंसक को मारने वाला, गतिशील, व्यापक हुआ **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्रियाणि** = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन

करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **चनोहितो** = शब्दकर्ता, विद्वान्, विश्वास तथा स्मरण करने वालों का हित करने वाला (चन् - स्मरण करना, शब्द करना, विश्वास करना, मिलाना, अलग करना, हिंसा करना, हि - जाना, जानना, पाना, हित करना)। **नामानि** = नाम (नाम - नाम होना, नाम रखना, नम् = नमन करना, सम्मान करना, शब्द करना)। **यह्वो** = महान् (यहव्-मह = सम्मान करना, पूजा करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **येषु** = जिनमें। **वर्धते** = बढ़ता है (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **सूर्यस्य** = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **बृहतो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **बृहन्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् द्वारा (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **विष्वञ्चम्** = विश्व को, सभी को (विष्ण-विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **अरुहद्** = आरोहण किया, उत्पन्न हुआ, हिंसक को मारने वाला, गतिशील, व्यापक हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुह् - बीज से उत्पन्न होना, जन्म होना, हन् - मारना, नष्ट करना, हिंसा करना)। **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 1 ॥

1176. ऋतस्य जिह्वा पवते मधु प्रियम्, वक्ता पतिः धियो अस्याः अदाभ्यः।

दधाति पुत्रः पित्रोः अपीच्याम्, नाम तृतीयम् अधि रोचने दिवः ॥ 2 ॥ 9-75-2

मन्त्रार्थ :- ऋतस्य = ऋत का जिह्वा = जिह्वा पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है मधु = मीठा, मधु प्रियम् = प्रिय वक्ता = वक्ता पतिः = ऐश्वर्यवान् स्वामी धियो = धारणा शक्ति, बुद्धि अस्याः = इसका अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए दधाति = धारण करता है पुत्रः = पुत्र पित्रोः = पिता अपीच्याम् = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय का नाम = नाम वाले तृतीयम् = तृतीय को, तीसरे को अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार रोचने = प्रकाश के लिए दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय ॥ 2 ॥

पदार्थ :- ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। जिह्वा = जिह्वा (जिह्वा = जाना, जानना, पाना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। प्रियम् = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। वक्ता = वक्ता (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। पतिः = ऐश्वर्यवान् स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। धियो = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। अस्याः = इसका (सर्वनाम)। अदाभ्यः = अनिन्दकों के लिए, अदानियों के लिए (दभ - निन्दा करना, हिंसा करना, आज्ञा देना, दा - देना)। दधाति = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। पुत्रः = पुत्र (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। पित्रोः = पिता (पा = रक्षा करना, पालन करना, पि = जाना, जानना, पाना)। अपीच्याम् = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय का (अ - नहीं, अप - पालन करना, पि - जाना, स्थानान्तर करना, पी-पिब् = पीना, पान करना)। नाम = नाम वाले (अव्यय)। तृतीयम् = तृतीय को, तीसरे को (संख्या, सर्वनाम)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। रोचने = प्रकाश के लिए (रुच् - रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 2 ॥

1177. अव द्युतानः कलशान् अचिक्रदत्, नृभिः येमाणः कोश आ हिरण्यये।

अभी ऋतस्य दोहना अनूषताधि, त्रिपृष्ठ उषसो वि राजति ॥ 3 ॥ 9-75-3

मन्त्रार्थ :- अव = नीचे, दूर, प्राप्त। द्युतानः = द्योतमान = प्रकाशमान कलशान् = कलशों को अचिक्रदत् = किया नृभिः = नरों द्वारा येमाणः = जाते हुए कोश = कोश आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण हिरण्यये = हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा ऋतस्य = ऋत का दोहना = दोहन अनूषत = अनुताप किया अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार त्रिपृष्ठ = त्रिपृष्ठ उषसो = उषायें वि = विशेष, विना, विलोम राजति = प्रकाशमान ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अव = नीचे, दूर, प्राप्त। द्युतानः = द्योतमान = प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। कलशान् = कलशों को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। अचिक्रदत् = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। येमाणः = जाते हुए (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। कोश = कोश (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। हिरण्यये = हिरण्य, प्रकाशमान, गतिशील के लिए (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। दोहना = दोहन (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। अनूषत = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। त्रिपृष्ठ = त्रिपृष्ठ (त्रि = तीन (संख्या), पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। उषसो = उषायें (उषस् - प्रभात होना, पौ फटना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। राजति = प्रकाशमान (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) ॥ 3 ॥

(300) सूक्त 76

1178. धर्ता दिवः पवते कृत्यो रसो, दक्षो देवानाम् अनुमाद्यो नृभिः।

हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिः, वृथा पाजांसि कृणुषे नदीषु आ ॥ 1 ॥ 9-76-1

मन्त्रार्थ :- धर्ता = धारणकर्ता, धारण करने वाला दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है कृत्यो = कर्तव्य रसो = रस दक्षो = दक्ष देवानाम् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का अनुमाद्यो = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य नृभिः = नरों द्वारा हरिः = हरि सृजानो = त्यागा हुआ, उत्पन्न हुआ अत्यो = सतत गमनीय न = नहीं, समान, उपमार्थक सत्वभिः = सत्वों द्वारा, सत्वों द्वारा वृथा = व्यर्थ पाजांसि = रक्षा जनक वाले कृणुषे = करता है नदीषु = नदियों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ॥ 1 ॥

पदार्थ :- धर्ता = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। कृत्यो = कर्तव्य (कृ - करना, कृत - कतरना, काटना)। रसो = रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। दक्षो = दक्ष (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। देवानाम् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अनुमाद्यो = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना,

हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सृजानो** = त्यागा हुआ, उत्पन्न हुआ (सृज - त्याग करना, उत्पन्न करना, रचना करना)। **अत्यो** = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सत्त्वभिः** = सत्त्वों द्वारा, सत्त्वों द्वारा (सत् - होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **वृथा** = व्यर्थ (अव्यय)। **पाजांसि** = रक्षा जनक वाले (पा - रक्षा करना, पालन करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **कृणुषे** = करता है (कृ = करना)। **नदीषु** = नदियों में (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग) ॥ 1 ॥

1179. शूरो न धत्ते आयुधा गभस्त्योः, स्वाः सिषासन् रथिरो गविष्टिषु।

इन्द्रस्य शुष्मम् ईरयन् अपस्युभिः, इन्दुः हिन्वानो अज्यते मनीषिभिः ॥ 2 ॥ 9-76-2

मन्त्रार्थ :- **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **धत्ते** = धारण के लिए **आयुधा** = आयुध **गभस्त्योः** = गहन **स्वाः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः **सिषासन्** = विभाग करने की इच्छा करते हुए, सेवा करते हुए, शुद्ध करते हुए **रथिरो** = रथी, रथवान् **गविष्टिषु** = गविष्टियों में, अत्यन्त विद्वानों में **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **शुष्मम्** = शुष्म, सुखाने वाला **ईरयन्** = प्रेरणा करता हुआ, कम्पित करता हुआ **अपस्युभिः** = पाल्यों, पालनीयों, पालनकर्ताओं द्वारा **इन्दुः** = इन्दु **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला **अज्यते** = स्वच्छ करते हैं, प्रकाश करते हैं **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धत्ते** = धारण के लिए (धा = धारण, पोषण, रक्षण, दान करना)। **आयुधा** = आयुध (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना)। **गभस्त्योः** = गहन (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **स्वाः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **सिषासन्** = विभाग करने की इच्छा करते हुए, सेवा करते हुए, शुद्ध करते हुए (सस् - शुद्ध करना, सन - सेवा करना, चाकरी करना, विभक्त करना, अलग करना)। **रथिरो** = रथी, रथवान् (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **गविष्टिषु** = गविष्टियों में, अत्यन्त विद्वानों में (गु = शब्द करना, मनन करना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **शुष्मम्** = शुष्म, सुखाने वाला (शुष् - सुखाना)। **ईरयन्** = प्रेरणा करता हुआ, कम्पित करता हुआ (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **अपस्युभिः** = पाल्यों, पालनीयों, पालनकर्ताओं द्वारा (अप = पालन करना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **अज्यते** = स्वच्छ करते हैं, प्रकाश करते हैं (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 2 ॥

1180. इन्द्रस्य सोम पवमान ऊर्मिणा, तविष्यमाणो जठरेषु आ विश।

प्र नः पिन्व विद्युत् अभ्रेव रोदसी, धिया नो वाजान् उप माहि शश्वतः ॥ 3 ॥ 9-76-3

मन्त्रार्थ :- **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा **तविष्यमाणो** = तविष्यमान, गतिमान, वृद्धि वाले, हिंसा वाले, प्रकाशमान **जठरेषु** = जठरों में **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **विश** = प्रतिष्ठित हो **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **पिन्व** = चलो, जानो, शब्द करो, सेवा करो, गति, ज्ञान, प्राप्ति करो **विद्युत्** = विशेष प्रकाशमान **अभ्रेव** = मेघ के समान **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **वाजान्** = वाजो को **उप** = समीप **माहि** = मान करो **शश्वतः** = शश्वत ॥

पदार्थ :- **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना,

स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **तविष्यमाणो** = तविष्यमान, गतिमान, वृद्धि वाले, हिंसा वाले, प्रकाशमान (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना, तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **जठरेषु** = जठरों में (जट् - धारण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **विश** = प्रतिष्ठित हो (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **पिन्व** = चलो, जानो, शब्द करो, सेवा करो, गति, ज्ञान, प्राप्ति करो (पि = गति करना, जाना, जानना, पाना, पिन्व = सेवा करना, सेचन करना, प्रोक्षण करना, पिण् - शब्द करना)। **विद्युत्** = विशेष प्रकाशमान (वि - विशेष, विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **अभ्रेव** = मेघ के समान (अभ्रा+इव, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अभ्र - जाना, मेघ की गति, इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय))। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **धिया** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वाजान्** = वाजो को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **माहि** = मान करो (मा - नापना, तौलना, समाना)। **शश्वतः** = शश्वत (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना) ॥ 3 ॥

(301) सूक्त 77

1181. एष प्र कोशे मधुमान् अचिक्रदत्, इन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टरः।

अभि ऋतस्य सुदुघा घृश्चुतो, वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः ॥ 1 ॥ 9-77-1

मन्त्रार्थ - एष = यह प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक कोशे = कोश मधुमान् = मधुरता युक्त अचिक्रदत् = किया इन्द्रस्य = इन्द्र का वज्रो = वज्र, गतिमान वपुषो = वपुष वपुष्टरः = वपुष्टम अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा ऋतस्य = ऋत का सुदुघा = सुदुघा, दानी घृश्चुतो = प्रकाशयुक्त वाश्राः = प्रगतिशील, व्याप्त करते हुए, व्याप्त होते हुए, प्रकाश करते हुए अर्षन्ति = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं पयसेव = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले ॥ 1 ॥

पदार्थ - एष = यह (सर्वनाम)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। कोशे = कोश (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। मधुमान् = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अचिक्रदत् = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वज्रो = वज्र, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। वपुषो = वपुष (वप - बीज बोना, उत्पन्न करना, बुनना, अन्नादि काटना, बाल काटना)। वपुष्टरः = वपुष्टम (वप - बीज बोना, उत्पन्न करना, बुनना, अन्नादि काटना, बाल काटना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। सुदुघा = सुदुघा, दानी (सु - सुन्दर, अच्छा, दा, दद् = देना)। घृश्चुतो = प्रकाशयुक्त (घृ - गीला करना, तरडा देना, सींचना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, घृ - टपकना, क्षरित होना, चमकना, प्रकाशित होना)। वाश्राः = प्रगतिशील, व्याप्त करते हुए, व्याप्त होते हुए, प्रकाश करते हुए (वश् - प्रकाश करना, इच्छा करना, चाहना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना)। अर्षन्ति = अन्तर्गमन करते हैं, अन्तर्दर्शन

करते हैं, ऋषित्व प्राप्त करते हैं, प्राप्त होते हैं (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **पयसेव** = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। ॥ १ ॥

(302) सूक्त 79

1182. अचोदसो नो धन्वन्तु इन्दवः, प्र सुवानासो बृहद् देवेषु हरयः ।

वि च नशन् नः इषो अरातयो, अर्यो नशन्त सनिषन्त नो धियः ॥ १ ॥ 9-79-1

मन्त्रार्थ - **अचोदसो** = अप्रेरित करे, अप्रेरणा के बिना किसी प्रेरणा के **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **धन्वन्तु** = गति, शब्द करने वाले का **इन्दवः** = इन्दुगण **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सुवानासो** = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले **बृहद्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **देवेषु** = देवों में **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **वि** = विशेष, विना, विलोम **च** = और। **नशन्** = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इषो** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि **अरातयो** = अदानी **अर्यो** = अर्य को, प्रगतिशील को **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **नशन्त** = नष्ट हों लुप्त हों, अदृश्य हों **सनिषन्त** = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि ॥ १ ॥

पदार्थ - **अचोदसो** = अप्रेरित करे, अप्रेरणा के बिना किसी प्रेरणा के (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **धन्वन्तु** = गति, शब्द करने वाले का (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सुवानासो** = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। **बृहद्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **च** = और। **नशन्** = नष्ट होता है, लुप्त होता है, अदृश्य होता है (नश् - नष्ट होना, अदृश्य होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इषो** = इच्छा, प्रगति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **अरातयो** = अदानी (अ - नहीं, रा = देना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **अर्यो** = अर्य को, प्रगतिशील को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **नशन्त** = नष्ट हों लुप्त हों, अदृश्य हों (नश् - नष्ट होना, अदृश्य होना)। **सनिषन्त** = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ १ ॥

(303) सूक्त 82

1183. असावि सोमो अरुषो वृषा हरी, राज इव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।

पुनानो वारम् पर्येति अयव्यम्, श्येनो न योनिम् घृतवन्तम् आसदम् ॥ १ ॥ 9-82-1

मन्त्रार्थ :- **असावि** = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **अरुषो** = हिंसक, गतिशील,

व्यापक वृषा = पराक्रमी हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले राजा = राजा इव = समान, की भाँति, के समान दस्मो = रक्षा करने वाले अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले अचिक्रदत् = किया पुनानो = पवित्रकर्ता वारम् = वरण को पर्येति = सर्वत्रगमन करते हो अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को श्येनो = श्येन न = नहीं, समान, उपमार्थक योनिम् = योनि को घृतवन्तम् = घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त आसदम् = बैठता है ॥ 1 ॥

पदार्थ :- असावि = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। अरुषो = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। हरी = ले जाने वाले, हरण करने वाले (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। राजा = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। दस्मो = रक्षा करने वाले (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। अचिक्रदत् = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। वारम् = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। पर्येति = सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। अव्ययम् = अव्यय, आच्छादन, समाप्त को (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। श्येनो = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। घृतवन्तम् = घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। आसदम् = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 1 ॥

1184. कविः वेधस्या पर्येषि माहिनम्, अत्यो न मृष्टो अभि वाजम् अर्षसि ।

अप-सेधन् दुरिता सोम मृडय, घृतम् वसानः परि यासि निर्णिजम् ॥ 2 ॥ 9-82-2

मन्त्रार्थ :- कविः = ज्ञानी, कवि वेधस्या = विधान, वेधस्, विधान करने वाले द्वारा पर्येषि = सर्वत्रगमन करते हो माहिनम् = पूज्य, महान् को अत्यो = सतत गमनीय न = नहीं, समान, उपमार्थक मृष्टो = मृष्ट, सहनशील, क्षमाशील, विचारशील अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा वाजम् = विद्या को, गति को अर्षसि = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है अप-सेधन् = सिद्ध करते हुए दुरिता = बुराई, दुःख सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम मृडय = सुखी करो घृतम् = घृत को, प्रकाशमान को वसानः = वास करते हुए, धारण करता हुआ परि = सभी तरफ यासि = प्राप्त होते हो, जाते हो, जानते हो निर्णिजम् = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। वेधस्या = विधान, वेधस्, विधान करने वाले द्वारा (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। पर्येषि = सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर

से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। **माहिनम्** = पूज्य, महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना)। **अत्यो** = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मृष्टो** = मृष्ट, सहनशील, क्षमाशील, विचारशील (मृष - सहन करना, क्षमा करना, मृश - विचार करना, स्पर्श करना, देखना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अर्षसि** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अपसेधन्** = सिद्ध करते हुए (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग))। **सिध्** = जाना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना)। **दुरिता** = बुराई, दुःख (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मृडय** = सुखी करो (मृड - सुखी होना, सुख देना)। **घृतम्** = घृत को, प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **वसानः** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **यासि** = प्राप्त होते हो, जाते हो, जानते हो (यस् - प्रयास करना, या - जाना, जानना, पाना)। **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निज्ज - शुद्ध करना, निर्मल करना) ॥ 2 ॥

1185. पर्जन्यः पिता महिषस्य पर्णिनो, नाभा पृथिव्या गिरिषु क्षयम् दधे।

स्वसारः आपो अभि गाः उदासरन्, सम् ग्रावभिः वसते वीते अध्वरे ॥ 3 ॥ 9-82-3

मन्त्रार्थ :- **पर्जन्यः** = पोषण उत्पन्न करने वाले, **पर्जन्य पिता** = पिता, पालन करने वाला, **पिता महिषस्य** = महिष का, महिमावान् का, महान् का **पर्णिनो** = पर्ण वाले का, से **नाभा** = नाभि में **पृथिव्या** = पृथ्वी योग्य, पृथिवी द्वारा **गिरिषु** = वाणियों, बोध, सिञ्चनों में **क्षयम्** = निवास को **दधे** = धारण करते हैं **स्वसारः** = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले **उदासरन्** = उत्कृष्टता से प्रगति करते हुए, उत्तम प्रगतिशील **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **ग्रावभिः** = सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द, वाणियों द्वारा **वसते** = वसता है, वास करता है **वीते** = गति, व्याप्ति, प्रकाश में **अध्वरे** = अहिंसक में ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **पर्जन्यः** = पोषण उत्पन्न करने वाले, **पर्जन्य** (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा-पालन करना, रक्षा करना)। **महिषस्य** = महिष का, महिमावान् का, महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **पर्णिनो** = पर्ण वाले का, से (पर्ण - हरा करना, हरा होना)। **नाभा** = नाभि में (नभ - नष्ट होना, दुःख देना या मार डालना, हिंसा करना, मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना)। **पृथिव्या** = पृथ्वी योग्य, पृथिवी द्वारा (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **गिरिषु** = वाणियों, बोध, सिञ्चनों में (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **क्षयम्** = निवास को (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **स्वसारः** = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुँचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गाः** = गान, गाय,

गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)।
उदासरन् = उत्कृष्टता से प्रगति करते हुए, उत्तम प्रगतिशील (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **ग्रावभिः** = सिञ्चन, बोध, ज्ञान, शब्द, वाणियों द्वारा (गृ = सींचना, समझना, जानना, खाना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गीला करना, घर्षण करना)। **वसते** = वसता है, वास करता है (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वीते** = गति, व्याप्ति, प्रकाश में (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **अध्वरे** = अहिसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना) ॥ 2 ॥

(304) सूक्त 83

1186. पवित्रम् ते विततम् ब्रह्मणस्पते, प्रभुः गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।

अतप्ततनूः न तत् आमो अश्नुते, शृतासः इत् वहन्तः सम् तत् आशत ॥ 1 ॥ 9-83-1

मन्त्रार्थ :- पवित्रम् = पवित्र को ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए विततम् = विस्तृत ब्रह्मणस्पते = विराट, महान्, बृह्मणस्पति प्रभुः = अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला गात्राणि = स्तुति, गान, गायन करने वाले पर्येषि = सर्वत्रगमन करते हो विश्वतः = सबसे, विश्व से अतप्त-तनूः = अतप्त-तन वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक तत् = वह, उस को आमो = वाणी, सेवा अश्नुते = भोग करता है, प्राप्त करता है शृतासः = सुने हुए, वाणियाँ इत् = ही वहन्तः = वहन करते हुए सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति तत् = वह, उस को आशत = अशन करो, भोजन करो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। विततम् = विस्तृत (वि - विशेष, तन् - विस्तार करना, वर्णन करना, शब्द करना, आश्रय देना, वित्त - देना, दान करना, धर्म में व्यय करना)। ब्रह्मणस्पते = विराट, महान्, बृह्मणस्पति (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। प्रभुः = अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। गात्राणि = स्तुति, गान, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। पर्येषि = सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। अतप्त-तनूः = अतप्त-तन वाले (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना, तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। आमो = वाणी, सेवा (अम् - शब्द करना, सेवा करना, जाना, खाना, भूखा होना, रोगी होना)। अश्नुते = भोग करता है, प्राप्त करता है (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलाना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। शृतासः = सुने हुए, वाणियाँ (शृ = सुनना, श्रवण करना, जाना)। इत् = ही (अव्यय)। वहन्तः = वहन करते हुए (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। आशत = अशन करो, भोजन करो (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलाना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना) ॥ 12 ॥

1187. तपोः पवित्रम् विततम् दिवस्पदे, शोचन्तो अस्य तन्तवो व्यस्थिरन् ।

अवन्ति अस्य पवितारम् आशवो, दिवः पृष्ठम् अधि तिष्ठन्ति चेतसा ॥ 2 ॥ 9-83-2

मन्त्रार्थ :- तपोः = तप पवित्रम् = पवित्र को विततम् = विस्तृत दिवस्पदे = दिव्यपद में शोचन्तो = शोच वाले अस्य = इसका तन्तवो = तन्तु समूह, विस्तार व्यस्थिरन् = विशेष स्थित होते हुए अवन्ति = रक्षा करते हैं अस्य = इसका

पवितारम् = पवित्र करने वाले को **आशवो** = अशन करो, भोजन करो **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पृष्ठम्** = पृष्ठ को **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **तिष्ठन्ति** = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है **चेतसा** = चेतना द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- तपोः = तप (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **पवित्रम्** = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **विततम्** = विस्तृत (वि - विशेष, तन् - विस्तार करना, वर्णन करना, शब्द करना, आश्रय देना, वित्त - देना, दान करना, धर्म में व्यय करना)। **दिवस्पदे** = दिव्यपद में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना, पद - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **शोचन्तो** = शोच वाले (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **तन्तवो** = तन्तु समूह, विस्तार (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना, पालन करना)। **व्यस्थिरन्** = विशेष स्थित होते हुए (वि - विशेष, स्था - ठहरना, स्थिर होना)। **अवन्ति** = रक्षा करते हैं (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **पवितारम्** = पवित्र करने वाले को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **आशवो** = अशन करो, भोजन करो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, श्व - जाना, जानना, पाना, विकार होना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पृष्ठम्** = पृष्ठ को (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **तिष्ठन्ति** = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। **चेतसा** = चेतना द्वारा (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना) ॥ 2 ॥

1188. अरुरुचत् उषसः पृश्निः अग्रियः, उक्षा बिभर्ति भुवनानि वाजयुः।

मायाविनो ममिरे अस्य मायया, नृचक्षसः पितरो गर्भम् आ दधुः ॥ 3 ॥ 9-83-3

मन्त्रार्थ :- **अरुरुचत्** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का **पृश्निः** = प्रश्नकर्ता **अग्रियः** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य **उक्षा** = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला **बिभर्ति** = भरण, धारण करता है **भुवनानि** = भुवों का, वर्तमान का **वाजयुः** = वाजयुक्त **मायाविनो** = मायावी **ममिरे** = मान किया **अस्य** = इसका **मायया** = माया द्वारा **नृचक्षसः** = नरों के द्रष्टा **पितरो** = पितर, पालन करने वाले **गर्भम्** = गर्भ को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **दधुः** = धारण किया ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **अरुरुचत्** = प्रसन्न, उत्साहित, प्रकाशित हुआ (रुच् - चमकाना, प्रकाशित होना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, रुचना, प्रीति होना, उत्साह होना)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **पृश्निः** = प्रश्नकर्ता (पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना)। **अग्रियः** = अग्रणी, प्रमुख, मुख्य (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **उक्षा** = प्रोक्षण, स्वच्छ, दृढ़, सिञ्चन किया, करने वाला (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **बिभर्ति** = भरण, धारण करता है (भृ - भरना, भरण करना, धारण करना)। **भुवनानि** = भुवों का, वर्तमान का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वाजयुः** = वाजयुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मायाविनो** = मायावी

(मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना)। **ममिरे** = मान किया (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **मायया** = माया द्वारा (मय् - जाना, क्लिष्ट कार्य करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **नृचक्षसः** = नरों के द्रष्टा (नृ- ले जाना, चक्ष - देखना)। **पितरो** = पितर, पालन करने वाले (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **गर्भम्** = गर्भ को (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **दधुः** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 3 ॥

(305) सूक्त 85

1189. इन्द्राय सोम सुषुतः परि स्रव, अप अमीवा भवतु रक्षसा सह ।

मा ते रसस्य मत्सत द्रयाविनो, द्रविणस्वन्त इह सन्तु इन्दवः ॥ 1 ॥ 9-85-1

मन्त्रार्थ - **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **सुषुतः** = सुसृजन किया, उत्तम उत्पन्न किया **परि** = सभी तरफ **स्रव** = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो **अप** = दूर, नीचे, अपकार **अमीवा** = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक **भवतु** = हो, हो जाये **रक्षसा** = रक्षा करने वाला, रक्षस् **सह** = साथ, सहित **मा** = नहीं, मत **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **रसस्य** = रस का **मत्सत** = आनन्दित हो, हर्षित हो, तृप्त हो, विचारशील हो **द्रयाविनो** = दो वाले **द्रविणस्वन्तः** = द्रवित होने वाले, प्रवाही, ज्ञानी **इह** = इसमें, यहां, यह **सन्तु** = हों **इन्दवः** = इन्दुगण ॥ 1 ॥

पदार्थ - **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुषुतः** = सुसृजन किया, उत्तम उत्पन्न किया (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **स्रव** = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **अमीवा** = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना, मा - मापना, मान करना)। **भवतु** = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **रक्षसा** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **रसस्य** = रस का (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **मत्सत** = आनन्दित हो, हर्षित हो, तृप्त हो, विचारशील हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **द्रयाविनो** = दो वाले (द्वि = दो, संख्या)। **द्रविणस्वन्तः** = द्रवित होने वाले, प्रवाही, ज्ञानी (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **सन्तु** = हों (अस् - होना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 71

(306) सूक्त 86

1190. प्र ते आश्विनीः पवमान धीजुवो, दिव्याः असृग्रन् पयसा धरीमणि ।

प्र अन्तः ऋषयः स्थाविरीः सृक्षत, ये त्वा मृजन्ति ऋषिषाणः वेधसः ॥ 4 ॥ 9-86-4

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए आश्विनी: = आश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला धीजुवो = धारण योग्य विद्वान्, धारण करने वाले सेवाशील दिव्या: = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में असृग्रन् = सृजित किया पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा धरीमणि = धारण करने वाले में प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक अन्तः = बीच में, भीतर ऋषयः = ऋषिगण स्थाविरी: = स्थिर ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सृक्षत = संचरित किया, जाना, पाया ये = जो त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं ऋषिषाणः = ऋषियों की सेवा करने वाले वेधसः = विद्वान् ॥ 4 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। आश्विनी: = आश्विन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। धीजुवो = धारण योग्य विद्वान्, धारण करने वाले सेवाशील (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, जु - जाना, वेग से जाना, दौड़ना, जल्दी जाना, भागना, वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। दिव्या: = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। असृग्रन् = सृजित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज् - सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। धरीमणि = धारण करने वाले में (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, युक्त होना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। अन्तः = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। ऋषयः = ऋषिगण (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। स्थाविरी: = स्थिर (स्था - स्थित होना, ठहरना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सृक्षत = संचरित किया, जाना, पाया (सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। ये = जो (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। ऋषिषाणः = ऋषियों की सेवा करने वाले (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। वेधसः = विद्वान् (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना) ॥ 4 ॥

1191. विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वसः, प्रभोः ते सतः परि यन्ति केतवः।

व्यानशी पवसे सोम धर्मभिः, पतिः विश्वस्य भुवनस्य राजसि ॥ 5 ॥ 9-86-5

मन्त्रार्थ :- विश्वा = विश्व, सभी, सब धामानि = धामों को विश्वचक्षः = विश्वचक्ष, सबको देखने वाले ऋभ्वसः = प्रगतिशील, विद्वान् प्रभोः = प्रभु, अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सतः = सत्य परि = सभी तरफ यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं केतवः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता व्यानशी = विशेष प्राण वाला, व्यापक पवसे = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम धर्मभिः = धर्म द्वारा पतिः = ऐश्वर्यवान्, स्वामी विश्वस्य = विश्व का, सभी का भुवनस्य = भुवन का, होने वाले का, वर्तमान का राजसि = प्रकाशमान् ॥ 5 ॥

पदार्थ :- विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। धामानि = धामों को (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। विश्वचक्षः = विश्वचक्ष, सबको देखने वाले (विश्व = सब, चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। ऋभ्वसः = प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - अर् - जाना, फैलाना, ऋ - जाना, चलना, जानना, पाना)। प्रभोः = प्रभु, अधिक होने वाला, प्रकृष्ट होने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सतः = सत्य (सत् = होना, सतत

होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **केतवः** = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **व्यानशी** = विशेष प्राण वाला, व्यापक (वि - विशेष, अन् = प्राण होना, जीवन होना, वी - जाना, व्यापना, घेरना, आक्रमण करना, गर्भवती होना, इच्छा करना, फेंकना, भेजना, दौड़ाना, खाना, भक्षण करना)। **पवसे** = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **धर्मभिः** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **भुवनस्य** = भुवन का, होने वाले का, वर्तमान का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **राजसि** = प्रकाशमान् (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) ॥ 5 ॥

1192. उभयतः पवमानस्य रश्मयो, ध्रुवस्य सतः परि यन्ति केतवः।

यदी पवित्रे अधि मृज्यते हरिः, सत्ता नि योना कलशेषु सीदति ॥ 6 ॥ 9-86-6

मन्त्रार्थ :- उभयतः = दोनों ओर से **पवमानस्य** = पवमान का, पवित्र करने वाले का, पालन-रक्षा करने वाले का **रश्मयो** = रश्मियाँ **ध्रुवस्य** = ध्रुव का, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील का **सतः** = सत्य **परि** = सभी तरफ **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **केतवः** = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता **यदी** = यदि **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **मृज्यते** = शुद्ध करता है, पवित्र करता है **हरिः** = हरि **सत्ता** = सत्ता **नि** = निश्चित, निरन्तर **योना** = योनि में, मिलाने अलग करने में **कलशेषु** = कलशों में **सीदति** = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो ॥ 6 ॥

पदार्थ :- उभयतः = दोनों ओर से (सर्वनाम)। **पवमानस्य** = पवमान का, पवित्र करने वाले का, पालन-रक्षा करने वाले का (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **रश्मयो** = रश्मियाँ (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। **ध्रुवस्य** = ध्रुव का, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील का (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **सतः** = सत्य (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **केतवः** = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **यदी** = यदि (अव्यय)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **मृज्यते** = शुद्ध करता है, पवित्र करता है (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सत्ता** = सत्ता (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **योना** = योनि में, मिलाने अलग करने में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **कलशेषु** = कलशों में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **सीदति** = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुझाना, भग्न करना, नष्ट करना) ॥ 6 ॥

1193. ज्योतिः यज्ञस्य पवते मधु प्रियम्, पिता देवानाम् जनिता विभूवसुः ।

दधाति रत्नम् स्वधयोः अपीच्यम्, मदिन्तमो मत्सरः इन्द्रियो रसः ॥ 10 ॥ 9-86-10

मन्त्रार्थ :- ज्योतिः = प्रकाश यज्ञस्य = यजन का पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है मधु = मधु प्रियम् = प्रिय को पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता देवानाम् = देवों का जनिता = उत्पन्न करने वाला विभूवसुः = विभूवसु दधाति = धारण करता है रत्नम् = मूल्यवान्, रत्न को स्वधयोः = स्वधा में, स्वधा का अपीच्यम् = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय मदिन्तमो = अत्यन्त आनन्दित करने वाले मत्सरः = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो इन्द्रियो = इन्द्र से सम्बन्धित रसः = रस ॥ 10 ॥

पदार्थ :- ज्योतिः = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मधु = मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। जनिता = उत्पन्न करने वाला (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। विभूवसुः = विभूवसु (वि + भू = होना, पाना, चिन्तन करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। दधाति = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। रत्नम् = मूल्यवान्, रत्न को (रत्न - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। स्वधयोः = स्वधा में, स्वधा का (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना)। अपीच्यम् = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय (अ - नहीं, अप - पालन करना, पि - जाना, स्थानान्तर करना, पी-पिब् = पीना, पान करना)। मदिन्तमो = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। मत्सरः = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। इन्द्रियो = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। रसः = रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना) ॥ 10 ॥

1194. अभिक्रन्दन् कलशम् वाज्यर्षति, पतिः दिवः शतधारो विचक्षणः ।

हरिः मित्रस्य सदनेषु सीदति, मर्मृजानो अविभिः सिन्धुभिः वृषा ॥ 11 ॥ 9-86-11

मन्त्रार्थ :- अभिक्रन्दन् = पुकारता हुआ कलशम् = कलश को वाज्यर्षति = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त पतिः = ऐश्वर्यवान्, स्वामी दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय शतधारो = सैकड़ों धाराओं वाला विचक्षणः = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले हरिः = हरि मित्रस्य = मित्र का सदनेषु = सदनों में, स्थानों में सीदति = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है मर्मृजानो = शुद्ध किया जाता हुआ, पवित्र किया जाता हुआ अविभिः = रक्षकों द्वारा सिन्धुभिः = समुद्रों द्वारा वृषा = पराक्रमी ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अभिक्रन्दन् = पुकारता हुआ (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, क्रन्द - रोना, पुकारना, दुःख होना)। कलशम् = कलश को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। वाज्यर्षति = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। पतिः = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। शतधारो = सैकड़ों धाराओं वाला (शत = सौ, धाः - धारा होना, धार बाँधना)। विचक्षणः = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि =

विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **मित्रस्य** = मित्र का (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **सदनेषु** = सदनों में, स्थानों में (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **सीदति** = सीदता है, बैठता है, संचरण करता है, प्रतिष्ठित होता है (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **मर्मजानो** = शुद्ध किया जाता हुआ, पवित्र किया जाता हुआ (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **अविभिः** = रक्षकों द्वारा (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **सिन्धुभिः** = समुद्रों द्वारा (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) ॥ 11 ॥

1195. अग्रे सिन्धूनाम् पवमानो अर्षति, अग्रे वाचो अग्रियो गोषु गच्छति।

अग्रे वाजस्य भजते महाधनम्, स्वायुधः सोतृभिः पूयते वृषा ॥ 12 ॥ 9-86-12

मन्त्रार्थ :- अग्रे = अग्र, आगे, पहले **सिन्धूनाम्** = समुद्रों का **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले **वाचो** = वाणी **अग्रियो** = अग्रणीय **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में **गच्छति** = जाता है **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले **वाजस्य** = विद्या का, गति का **भजते** = सेवा, भजन, सेवन करता है **महाधनम्** = महान् धन को **स्वायुधः** = उत्तम आयुध युक्त **सोतृभिः** = उत्पन्न करने वाले द्वारा **पूयते** = पवित्रता युक्त, रक्षित के लिए **वृषा** = पराक्रमी ॥ 12 ॥

पदार्थ :- **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **सिन्धूनाम्** = समुद्रों का (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वाचो** = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **अग्रियो** = अग्रणीय (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **गच्छति** = जाता है (गम्-गच्छ् = जाना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वाजस्य** = विद्या का, गति का (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **भजते** = सेवा, भजन, सेवन करता है (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **महाधनम्** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **धनम्** = धन को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **स्वायुधः** = उत्तम आयुध युक्त (सु+आयुधः, सु - सुन्दर, अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। **सोतृभिः** = उत्पन्न करने वाले द्वारा (सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **पूयते** = पवित्रता युक्त, रक्षित के लिए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना,

सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना) ॥ 12 ॥

1196. प्रो अयासीत् इन्दु इन्द्रस्य निष्कृतम्, सखा सख्युः न प्र मिनाति संगिरम्।

मर्य इव युवतिभिः समर्षति, सोमः कलशे शतयाम्ना पथा ॥ 16 ॥ 9-86-16

मन्त्रार्थ :- प्रो = पूर्ण, तृप्त अयासीत् = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ इन्दुः = इन्दु इन्द्रस्य = इन्द्र का निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ सखा = मित्र सख्युः = सखाभाव, मित्रभाव न = नहीं, समान, उपमार्थक प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक मिनाति = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है सङ्गिरम् = सङ्गिर को, योग्य, सहगामी को मर्यः = मरणशील इव = समान, की भाँति, के समान युवतिभिः = युवतियों द्वारा, मिलाने वालों द्वारा समर्षति = सम्यक् रूप से अन्तर्गमन करता है, सम्यक् रूप से अन्तर्दर्शन करता है, सम्यक् रूप से ऋषित्व प्राप्त करता है सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम कलशे = कलश में शतयाम्ना = शतयाम द्वारा पथा = पथ ॥ 16 ॥

पदार्थ :- प्रो = पूर्ण, तृप्त (प्रा - पूर्ण करना, भरना। प्रा - तृप्त करना)। अयासीत् = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि - निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ - करना)। सखा = मित्र (सख् = मित्र होना)। सख्युः = सखाभाव, मित्रभाव (सख् = मित्र होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। मिनाति = प्रक्षेपण करता है, स्थापन करता है, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना)। सङ्गिरम् = सङ्गिर को, योग्य, सहगामी को (सम् - सम्यक्, गम् - जाना, सम्-गम्, सङ्गम् - मिलना, साथ चलना)। मर्यः = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। युवतिभिः = युवतियों द्वारा, मिलाने वालों द्वारा (यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। समर्षति = सम्यक् रूप से अन्तर्गमन करता है, सम्यक् रूप से अन्तर्दर्शन करता है, सम्यक् रूप से ऋषित्व प्राप्त करता है (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। कलशे = कलश में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। शतयाम्ना = शतयाम द्वारा (शत = सौ, या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। पथा = पथ (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना) ॥ 16 ॥

1197. प्र वो धियो मन्द्रयुवो विपन्युवः, पनस्युवः संवसनेषु अक्रमुः।

सोमम् मनीषा अभ्यनूषत स्तुभो, अभि धेनवः पयसा अशिश्रयुः ॥ 17 ॥ 9-86-17

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग धियो = धारणा शक्ति, बुद्धि मन्द्रयुवो = स्तुत्य युवा, स्तुत्य सम्बन्धी, आनन्दित करने वाले सम्बन्धी, विनाश करने वाले सम्बन्धी विपन्युवः = विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले पनस्युवः = प्रशंसा के लिए युवा, स्तुति योग्य युवा संवसनेषु = सम्यक् वास में, सम्यक् धारण में, संवसनीय अक्रमुः = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी सोमम् = सोम को, उत्पन्नकर्ता को, ऐश्वर्यवान् को मनीषा = विचारशील अभ्यनूषत = अनुताप किया स्तुभो = अवरोध, स्थिर, स्तुति अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले पयसा = विस्तार, गतिशील, प्रवाहमान अशिश्रयुः = अशिश्रय, व्याप्त किया, प्राप्त परिपक्व किया ॥ 17 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। धियो = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना,

धि = धारण करना, युक्त होना)। **मन्द्रयुवो** = स्तुत्य युवा, स्तुत्य सम्बन्धी, आनन्दित करने वाले सम्बन्धी, विनाश करने वाले सम्बन्धी (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना, यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। **विपन्युवः** = विशेष व्यवहार, स्तुति करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **पनस्युवः** = प्रशंसा के लिए युवा, स्तुति योग्य युवा (पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, यु- पृथक् पृथक् करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **संवसनेषु** = सम्यक् वास में, सम्यक् धारण में, संवसनीय (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अक्रमुः** = वृद्धि की, रक्षा की, बढ़ गयी (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **सोमम्** = सोम को, उत्पन्नकर्ता को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **मनीषा** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अभ्यनूषत** = अनुताप किया (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **स्तुभो** = अवरोध, स्थिर, स्तुति (स्तुभ - अवरोध करना, रोकना, मूर्ख होना, मन्दमति होना, स्तुभ - स्थित होना, ठहरना, स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **धेनवः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **पयसे** = विस्तार, गतिशील, प्रवाहमान में, के लिए (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **अशिश्युः** = अशिश्य, व्याप्त किया, प्राप्त परिपक्व किया (अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलाना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अ - नहीं, श्रा = परिपक्व करना, पकाना, रांधना, उबालना, स्वेदन करना, श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 17 ॥

1198. आ नः सोम संयतम् पिप्युषीम्, इषम् इन्दो पवस्व पवमानो अस्त्रिधम्।

या नो दोहते त्रिः अहन् नः असश्चुषी, क्षुमत् वाजवन् मधुमत् सुवीर्यम् ॥ 18 ॥ 9-86-18

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम संयतम् = संयत, प्रयत्न, सम्यक् यत्न को पिप्युषीम् = वृद्धि को, बढ़ने को इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को इन्दो = इन्दु का पवस्व = पवित्र करो पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला अस्त्रिधम् = अविचल को धारण करने वाला या = जो नो = हमको, हमारे लिए, हमारा दोहते = दोहन करता है त्रिः = तीन अहन् = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की नः = हमको, हमारे लिए, हमारा असश्चुषी = स्थिर, अज्ञानी, अप्राप्त क्षुमत् = विद्वान्, प्रगतिशील वाजवन् = वाजवान् मधुमत् = मधुयुक्त सुवीर्यम् = उत्तम वीर को ॥ 18 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। संयतम् = संयत, प्रयत्न, सम्यक् यत्न को (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना, यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना, यन - उद्धार करना)। पिप्युषीम् = वृद्धि को, बढ़ने को (प्याय-प्यायी-प्यै - बढ़ना, बड़ा होना, फूलना, प्याय-प्यै - भूख लगना, प्यास लगना)। इषम् = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। पवस्व = पवित्र

करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अस्त्रिधम्** = अविचल को धारण करने वाला (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृ - जाना, जाना, पाना, सरकना)। **या** = जो (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **दोहते** = दोहन करता है (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **त्रिः** = तीन (संख्या)। **अहन्** = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **असश्चुषी** = स्थिर, अज्ञानी, अप्राप्त (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सश्च् = पाना, जानना, जाना)। **क्षुमत्** = विद्वान्, प्रगतिशील (क्षु - जाना, जानना, पाना, शब्द करना)। **वाजवन्** = वाजवान् (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **मधुमत्** = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 18 ॥

1199. वृषा मतीनाम् पवते विचक्षणः, सोमो अहनः प्रतरीता उषसो दिवः ।

क्राणा सिन्धूनाम् कलशाम् अवीवशत्, इन्द्रस्य हार्दि अविशन् मनीषिभिः ॥ 19 ॥ 9-86-19

मन्त्रार्थ - वृषा = पराक्रमी **मतीनाम्** = मतियों का, ज्ञान का **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **अहनः** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का **प्रतरीता** = तारने वाले, तैरने वाले, तरने वाले **उषसो** = प्रभात, हिंसा को **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का **क्राणा** = करने वाले **सिन्धूनाम्** = सिन्धुओं का, समुद्रों का **कलशाम्** = कलशों को **अवीवशत्** = वश में किया **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **हार्दि** = हृदय में **अविशन्** = अविशस्त, रक्षक है **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा ॥ 19 ॥

पदार्थ - वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **मतीनाम्** = मतियों का, ज्ञान का (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अहनः** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **प्रतरीता** = तारने वाले, तैरने वाले, तरने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तृ - पार जाना, तैरना, जीतना)। **उषसो** = प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **क्राणा** = करने वाले (कृ - करना)। **सिन्धूनाम्** = सिन्धुओं का, समुद्रों का (सिध् - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **कलशाम्** = कलशों को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **अवीवशत्** = वश में किया (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वश् - इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **हार्दि** = हृदय में (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना) **अविशन्** = अविशस्त, रक्षक है (अ - नहीं, वि - विशेष,

अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 19 ॥

1200. मनीषिभिः पवते पूर्यः कविः, नृभिः यतः परि कोशान् अचिक्रदत् ।

त्रितस्य नाम जनयन् मधु क्षरत् इन्द्रस्य, वायोः सख्याय कर्तवे । 20 ॥ 9-86-20

मन्त्रार्थ :- **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **पूर्यः** = पूर्व **कविः** = ज्ञानी, कवि **नृभिः** = नरों द्वारा **यतः** = जिससे **परि** = सभी तरफ **कोशान्** = कोशों को **अचिक्रदत्** = किया **त्रितस्य** = त्रित या तीन का **नाम** = नाम वाले **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले **मधु** = मीठा, **मधु क्षरत्** = क्षरण करते हुए, टपकते हुए **इन्द्रस्य** = परम ऐश्वर्यशाली का **वायोः** = वायु को **सख्याय** = मित्र के लिए, सखा के लिए **कर्तवे** = करने के लिए ॥ 20 ॥

पदार्थ :- **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पूर्यः** = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **कविः** = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **यतः** = जिससे (सर्वनाम)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **कोशान्** = कोशों को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **अचिक्रदत्** = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। **त्रितस्य** = त्रित या तीन का (त्रि = तीन, संख्या, सर्वनाम)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **क्षरत्** = क्षरण करते हुए, टपकते हुए (क्षर् - टपकना, झरना, गिरना)। **इन्द्रस्य** = परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वायोः** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सख्याय** = मित्र के लिए, सखा के लिए (सख् = मित्र होना)। **कर्तवे** = करने के लिए (कृ - करना) ॥ 20 ॥

1201. अयम् पुनानः उषसो विरोचयत् अयम्, सिन्धुभ्यो अभवत् उ लोककृत् ।

अयम् त्रिः सप्त दुदुहानः आशिरम्, सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥ 21 ॥ 9-86-21

मन्त्रार्थ :- **अयम्** = यह **पुनानः** = पवित्रकर्ता **उषसो** = उषायें **विरोचयत्** = विशेष प्रकाशित होते हुए, विशेष रुचते हुए **अयम्** = यह **सिन्धुभ्यो** = समुद्रों के लिए **अभवत्** = हुआ **उ** = निश्चय ही, भी **लोककृत्** = लोककृत, लोगों द्वारा किया **अयम्** = यह **त्रिः** = तीन **सप्त** = सात **दुदुहानः** = दोहन करता हुआ **आशिरम्** = आशिर को, शीर्षस्थ को **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **हृदे** = हृदय के लिए, हृदय में **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **चारु** = चारु **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो ॥ 21 ॥

पदार्थ :- **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **उषसो** = उषायें (उषस् - प्रभात होना, पौ फटना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **विरोचयत्** = विशेष प्रकाशित होते हुए, विशेष रुचते हुए (वि - विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **सिन्धुभ्यो** = समुद्रों के लिए (सिध् - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **अभवत्** = हुआ (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **लोककृत्** = लोककृत, लोगों द्वारा किया (लोक = देखना, प्रकाशित होना, बोलना, कृ = करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)।

त्रिः = तीन (संख्या)। सप्त = सात (संख्या)। दुदुहानः = दोहन करता हुआ (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, जलना, जलाना, दुह - दोहना, रिक्त करना, लेना, खेंचना, हिंसा करना)। आशिरम् = आशिर को, शीर्षस्थ को (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। हृदे = हृदय के लिए, हृदय में (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। चारु = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। मत्सरः = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सू - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना) ॥ 21 ॥

1202. ईशानः इमा भुवनानि वीयसे, युजानः इन्दो हरितः सुपर्णः ।

ताः ते क्षरन्तु मधुमत् घृतम् पयः, तव व्रते सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥ 37 ॥ 9-86-37

मन्त्रार्थ :- ईशानः = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला इमा = यह, इसको भुवनानि = भुवन वीयसे = व्याप्त, जाने के लिए युजानः = युक्त करते हुए, युक्त करने वाले इन्दो = इन्दु का हरितः = हरित, हरि से सुपर्णः = सुन्दर पर्ण वाला ताः = वे, वह, वे दोनों ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए क्षरन्तु = क्षरण करें मधुमत् = मधुयुक्त घृतम् = प्रकाशमान को पयः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण तव = तुम्हारा व्रते = वरण करने के लिए, व्रत के लिए, व्रत में सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम तिष्ठन्तु = स्थित हों, ठहरें कृष्टयः = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन ॥ 37 ॥

पदार्थ :- ईशानः = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। इमा = यह, इसको (सर्वनाम)। भुवनानि = भुवन (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। वीयसे = व्याप्त, जाने के लिए (वी - जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना)। युजानः = युक्त करते हुए, युक्त करने वाले (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। इन्दो = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। हरितः = हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। सुपर्णः = सुन्दर पर्ण वाला (सु - सुन्दर, अच्छा, पर्ण - हरा करना, हरा होना)। ताः = वे, वह, वे दोनों (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। क्षरन्तु = क्षरण करें (क्षर् - टपकना, झरना, गिरना)। मधुमत् = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। घृतम् = प्रकाशमान को (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। पयः = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण (पय - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। व्रते = वरण करने के लिए, व्रत के लिए, व्रत में (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। तिष्ठन्तु = स्थित हों, ठहरें, (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। कृष्टयः = कृष्टय, कर्षण, रेखांकन (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, रेखा करना) ॥ 37 ॥

1203. त्वम् नृचक्षा असि सोम विश्वतः, पवमान वृषभ ता वि धावसि ।

स नः पवस्व वसुमत् हिरण्यवत्, वयम् स्याम भुवनेषु जीवसे ॥ 38 ॥ 9-86-38

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम नृचक्षाः = नरों को देखने वाले असि = हो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विश्वतः

= सबसे, विश्व से **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **वृषभ** = पराक्रमी **ता** = वे, वह, वे दोनों **वि** = विशेष, विना, विलोम **धावसि** = दौड़ता है **स** = वह, उसने **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **पवस्व** = पवित्र करो **वसुमत्** = वसुमान **हिरण्यवत्** = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **स्याम** = हों **भुवनेषु** = भुवनों में **जीवसे** = जीव के लिए, जीवन के लिए ॥ 38 ॥

पदार्थ :- **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नृचक्षाः** = नरों को देखने वाले (नृ- ले जाना, चक्ष - देखना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **वृषभ** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **ता** = वे, वह, वे दोनों (सर्वनाम)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **धावसि** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **वसुमत्** = वसुमान (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **हिरण्यवत्** = हिरण्य के समान, प्रकाशमान, गतिशील द्वारा (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **स्याम** = हों (अस् - होना)। **भुवनेषु** = भुवनों में (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **जीवसे** = जीव के लिए, जीवन के लिए (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना) ॥ 2 ॥

1204. गोवित् पवस्व वसुवित् हिरण्यवित्, रेतोधाः इन्दो भुवनेषु अर्पितः ।

त्वम् सुवीरो असि सोम विश्ववित् तम्, त्वा विप्राः उप गिरा इमे आसते ॥ 39 ॥ 9-86-39

मन्त्रार्थ :- **गोवित्** = गोविद्, गो को जानने वाले **पवस्व** = पवित्र करो **वसुवित्** = वसु को जानने वाला **हिरण्यवित्** = हिरण्य को जानने वाला **रेतोधाः** = ज्ञान को धारण करने वाला **इन्दो** = इन्दु का **भुवनेषु** = भुवनों में **अर्पितः** = अर्पित **त्वम्** = तुम **सुवीरो** = उत्तम वीर **असि** = हो **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **विश्ववित्** = सबको जानने वाला **तम्** = उसको, उसे **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **विप्राः** = विशेष पूर्ण करने वाले **उप** = समीप **गिरेम** = स्तुतियां, वाणियां **इमे** = यह, इस, ये **आसते** = बैठता है ॥ 39 ॥

पदार्थ :- **गोवित्** = गोविद्, गो को जानने वाले (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विद् - जानना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **वसुवित्** = वसु को जानने वाला (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **हिरण्यवित्** = हिरण्य को जानने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **रेतोधाः** = ज्ञान को धारण करने वाले (रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **भुवनेषु** = भुवनों में (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अर्पितः** = अर्पित (अर्प - अर्पण करना, देना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **सुवीरो** = उत्तम वीर (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना,

ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विश्ववित्** = सबको जानने वाला (विश्व - सब, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **विप्राः** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि - विशेष, प्रा - पूर्ण करना) ॥ **उप** = समीप (उपसर्ग)। **गिरेम** = स्तुतियां, वाणियां(गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **आसते** = बैठता है (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 39 ॥

1205. अज्जते व्यज्जते समज्जते, क्रतुम् रिहन्ति मधुना अभ्यज्जते।

सिन्धोः उच्छ्वासे पतयन्तम् उक्षणम्, हिरण्यपावाः पशुम् आसु गृभ्णते ॥ 43 ॥ 9-86-43

मन्त्रार्थ - अज्जते = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है **व्यज्जते** = विशेष स्वच्छ किया जाता है, विशेष प्रकाश किया जाता है **समज्जते** = सम्यक् स्वच्छ किया जाता है, सम्यक् प्रकाश किया जाता है **क्रतुम्** = कर्म को **रिहन्ति** = स्तुति, दान करते हैं **मधुना** = मधु द्वारा **अभ्यज्जते** = सर्वथा स्वच्छ किया जाता है, सर्वथा प्रकाश किया जाता है **सिन्धोः** = समुद्र **उच्छ्वासे** = उच्छ्वास में **पतयन्तम्** = पराक्रम करो, पतनशील, ऐश्वर्यमान हो **उक्षणम्** = प्रोक्षण, स्वच्छता, दृढ़ता, सिञ्चन को **हिरण्यपावाः** = हिरण्य से पवित्र होते हुए, स्तुति से पवित्र होते हुए **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को **आसु** = आसु, आसव किया हुआ, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला **गृभ्णते** = गृभ करता है, ग्रहण करता है ॥ 43 ॥

पदार्थ - अज्जते = स्वच्छ किया जाता है, प्रकाश किया जाता है (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **व्यज्जते** = विशेष स्वच्छ किया जाता है, विशेष प्रकाश किया जाता है (वि - विशेष, अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **समज्जते** = सम्यक् स्वच्छ किया जाता है, सम्यक् प्रकाश किया जाता है (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **रिहन्ति** = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। **मधुना** = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **अभ्यज्जते** = सर्वथा स्वच्छ किया जाता है, सर्वथा प्रकाश किया जाता है (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **सिन्धोः** = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना, फन्दे से पकड़ना)। **उच्छ्वासे** = उच्छ्वास में (उत्+श्वास, उत् - भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (अव्यय), श्वस - श्वास लेना, श्वासोच्छ्वास करना, जीना, जीते रहना)। **पतयन्तम्** = पराक्रम करो, पतनशील, ऐश्वर्यमान हो (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **उक्षणम्** = प्रोक्षण, स्वच्छता, दृढ़ता, सिञ्चन को (उक्ष् - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना)। **हिरण्यपावाः** = हिरण्य से पवित्र होते हुए, स्तुति से पवित्र होते हुए (हिरण्य - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **पशुम्** = पशु को, दृष्टा को, बन्धन को (पश्-दृश् = देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गाँठ बांधना, फाँस लगाना, जाना)। **आसु** = आसु, आसव किया हुआ, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **गृभ्णते** = गृभ करता है, ग्रहण करता है (गृह् - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना, निवास करना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृभ्-गर्भ - ग्रहण करना, लेना, अन्दर होना, अन्तःवास करना) ॥

1206. विपश्चिते पवमानाय गायत, मही न धारा अति अन्धो अर्षति।

अहिः न जूर्णाम् अति सर्पति त्वचम्, अत्यो न क्रीडन् असरत् वृषा हरिः ॥ 44 ॥ 9-86-44

मन्त्रार्थ :- विपश्चिते = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त के लिए **पवमानाय** = पवित्र करने वाले के लिए, पालन-रक्षा करने वाले के लिए **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले **मही** = मही, महिमावान्, महान् **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो **अति** = बहुत, अत्यधिक **अन्धो** = आँख मूँदे हुए **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है,

अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **अहिः** = व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **जूर्णाम्** = वेगवान् को **अति** = बहुत, अत्यधिक **सर्पति** = सरकता है **त्वचम्** = त्वचा, चर्म, खाल को **अत्यो** = सतत गमनीय **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **क्रीडन्** = क्रीडा करते हुए **असरत्** = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह होता हुआ **वृषा** = पराक्रमी **हरिः** = हरि ॥

पदार्थ :- विपश्चिते = मेधावी, विशेष दृष्टियुक्त के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम, पश् = देखना)। **पवमानाय** = पवित्र करने वाले के लिए, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **गायत** = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **मही** = मही, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **धारा** = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **अन्धो** = आँख मूँदे हुए (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूँदना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अहिः** = व्यापक (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **जूर्णाम्** = वेगवान् को (जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **सर्पति** = सरकता है (सृप् - जाना, सरकना, जानना, पाना, चलना)। **त्वचम्** = त्वचा, चर्म, खाल को (त्वच - आच्छादित करना, लपेटना, ढाँकना)। **अत्यो** = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **क्रीडन्** = क्रीडा करते हुए (क्रीड् - खेलना)। **असरत्** = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना) ॥ 44 ॥

1207. अग्रेगो राजा आप्यः तविष्यते, विमानो अहनाम् भुवनेषु अर्पितः ।

हरिः घृतस्नुः सुदृशीको अर्णवो, ज्योतीरथः पवते रायः ओक्वः ॥ 45 ॥ 9-86-45

मन्त्रार्थ :- अग्रेगो = आगे जाने वाले **राजा** = राजा **आप्यः** = आप, व्याप्त, व्यापक **तविष्यते** = तविष्यमान, गतिमान, प्रकाशमान किया जाता है **विमानो** = विशेष मान करने वाला **अहनाम्** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का **भुवनेषु** = भुवनों में **अर्पितः** = अर्पित **हरिः** = हरि **घृतस्नुः** = प्रकाशमान **सुदृशीको** = सुदृशीक, उत्तम देखने वाले **अर्णवो** = अर्णव में, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक में **ज्योतीरथः** = ज्योति-रथ, प्रकाश-रथ वाले **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **रायः** = गति, विद्या, वाणी **ओक्वः** = निवास योग्य ॥ 45 ॥

पदार्थ :- अग्रेगो = आगे जाने वाले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, गम् - जाना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **आप्यः** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **तविष्यते** = तविष्यमान, गतिमान, प्रकाशमान किया जाता है (त्विष - प्रकाशित होना, चमकना, तव् - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। **विमानो** = विशेष मान करने वाला (वि = विशेष, विना, विलोम, मान - मान करना, पूजा करना, ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा करना, शोध करना, सत्कार करना, मनाना, तोलना, तुलना करना, मापना)। **अहनाम्** = व्यापक का, व्याप्त होने के समय अर्थात् दिनों का (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **भुवनेषु** = भुवनों में (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अर्पितः** = अर्पित (अर्प - अर्पण करना, देना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **घृतस्नुः** = प्रकाशमान (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन

करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना, स्नु - भाप से टपकना, झरना, चूना)। **सुदृशीको** = सुदृशीक, उत्तम देखने वाले (सु - अच्छा, सुन्दर, दृश्-पश्य -देखना)। **अर्णवो** = अर्णव में, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक में (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **ज्योतीरथः** = ज्योति-रथ, प्रकाश-रथ वाले (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना, रथ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **रायः** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, लेना, ग्रहण करना, रय = जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **ओक्वः** = निवास योग्य (ओक - निवास करना) ॥ 45 ॥

(307) सूक्त 87

1208. प्र तु द्रव परि कोशम् नि षीद, नृभिः पुनानो अभि वाजम् अर्ष।

अश्वम् न त्वा वाजिनम् मर्जयन्तो, अच्छा बर्ही रशनाभिः नयन्ति ॥ 1 ॥ 9-87-1

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक तु = तो, परन्तु, अब द्रव = प्रवाहकामी, ज्ञान परि = सभी तरफ कोशम् = कोश को नि = निश्चित, निरन्तर षीद = बैठो, संचरण करो, प्रतिष्ठित हो नृभिः = नरों द्वारा पुनानो = पवित्रकर्ता अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा वाजम् = विद्या को, गति को अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को मर्जयन्तो = शुद्ध करते हुए अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ बर्ही = बढ़ा हुआ, विराट, महान् रशनाभिः = रश्मियों द्वारा, रश्मियों का केन्द्र नयन्ति = ले जाते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। तु = तो, परन्तु, अब (अव्यय)। द्रव = प्रवाहकामी, ज्ञान (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। कोशम् = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। नि = निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग)। षीद = बैठो, संचरण करो, प्रतिष्ठित हो (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। अश्वम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। मर्जयन्तो = शुद्ध करते हुए (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना। मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। बर्ही = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। रशनाभिः = रश्मियों द्वारा, रश्मियों का केन्द्र (रश् - विकिरण होना, किरण निकलना)। नयन्ति = ले जाते हैं (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना) ॥ 1 ॥

1209. स्वायुधः पवते देव इन्दुः, अशस्तिहा वृजना रक्षमाणः।

पिता देवानाम् जनिता सुदक्षो, विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्याः ॥ 2 ॥ 9-87-2

मन्त्रार्थ :- स्वायुधः = उत्तम आयुध युक्त पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप इन्दुः = इन्दु अशस्तिहा = अहिंसक को गति, ज्ञान देने वाले वृजना = वृजन, त्याग, वर्जना रक्षमाणः = रक्षा करते हुए पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता देवानाम् = देवों का जनिता = उत्पन्न करने वाला सुदक्षो = सुदक्ष, सुसमृद्ध विष्टम्भो = विस्तृत दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय धरुणः = धारणकर्ता, धारण करने वाला पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के ॥ 2 ॥

पदार्थ :- स्वायुधः = उत्तम आयुध युक्त (सु+आयुधः, सु - सुन्दर, अच्छा, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, युद्ध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इन्दुः = इन्दु (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। अशस्तिहा = अहिंसक को गति, ज्ञान देने वाले (अ - नहीं, अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, शस् - हिंसा करना, मारना, दुःख देना, काटना, हा - गति करना, त्याग करना, शंस्-शस् - स्तुति, प्रशंसा करना, हन् - हिंसा करना, मारना)। वृजना = वृजन, त्याग, वर्जना (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। रक्षमाणः = रक्षा करते हुए (रक्ष = रक्षा करना, बचाना)। पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। जनिता = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। सुदक्षो = सुदक्ष, सुसमृद्ध (सु - सुन्दर, अच्छा, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। विष्टम्भो = विस्तृत (विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। धरुणः = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। पृथिव्याः = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना) ॥ 2 ॥

1210. ऋषिः विप्रः पुर एता जनानाम्, ऋभुः धीर उशना काव्येन।

स चित् विवेद निहितम् यत् आसाम्, अपीच्यम् गुह्यम् नाम गोनाम् ॥ 3 ॥ 9-87-3

मन्त्रार्थ :- ऋषिः = ऋषि विप्रः = विशेष पूर्ण करने वाले पुर = पहले एता = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का ऋभुः = ऋभु, प्रगतिशील, विद्वान् धीर = धीर उशना = कामनाएँ, इच्छाएँ काव्येन = काव्य द्वारा स = वह, उसने चित् = भी, ही विवेद = विशेष वेद, विशेष ज्ञान, विशेष ज्ञाता, जाना निहितम् = निहित, स्थित यत् = जिसे, जो आसाम् = आसीन हुए, बैठे अपीच्यम् = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय गुह्यम् = गुह्य, गुहायोग्य नाम = नाम वाले गोनाम् = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के ॥ 3 ॥

पदार्थ :- ऋषिः = ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। विप्रः = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। पुर = पहले (अव्यय)। एता = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। जनानाम् = जनों का, उत्पन्न लोगों का (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। ऋभुः = ऋभु, प्रगतिशील, विद्वान् (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, भा - प्रकाश होना)। धीर = धीर (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, धृ - धारण करना, सहना, स्थिर रहना)। उशना = कामनाएँ, इच्छाएँ (उश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। काव्येन = काव्य द्वारा (कु, क्व = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। स = वह, उसने। चित् = भी, ही। विवेद = विशेष वेद, विशेष ज्ञान, विशेष ज्ञाता, जाना (वि - विशेष, विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। निहितम् = निहित, स्थित (नि - निरन्तर, निश्चित, हि - जाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। आसाम् = आसीन

हुए, बैठे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **अपीच्यम्** = पालन योग्य, पीने योग्य, जानने योग्य, गमनीय (अ - नहीं, अप - पालन करना, पि - जाना, स्थानान्तर करना, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **गुह्यम्** = गुह्य, गुहायोग्य (गुह - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। **नाम** = नाम वाले (नाम - नाम होना, नाम रखना, नम् = नमन करना, सम्मान करना, शब्द करना)। **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ 3 ॥

1211. एषः स्य ते मधुमान् इन्द्र सोमो, वृषा वृष्णे परि पवित्रे अक्षाः ।

सहस्रसाः शतसा भूरिदावा, शश्वत्तमम् बर्हि आ वाजी अस्थात् ॥ 4 ॥ 9-87-4

मन्त्रार्थ - **एषः** = यह **स्य** = वह, बन्धन **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **मधुमान्** = मधुरता युक्त **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **वृषा** = पराक्रमी **वृष्णे** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी के लिए **परि** = सभी तरफ **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक हुआ **सहस्रसाः** = हजारों का **शतसा** = सौ का **भूरिदावा** = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **अस्थात्** = स्थित हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ - **एषः** = यह (सर्वनाम)। **स्य** = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **इन्द्र** = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृष्णे** = वर्षा करने वाला, पराक्रमी के लिए (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक हुआ (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। **सहस्रसाः** = हजारों का (सहस्र = हजार, संख्या)। **शतसा** = सौ का (सर्वनाम)। **भूरिदावा** = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का (भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, दु-दव् - जाना, सुगन्ध लेना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **शश्वत्तमम्** = अत्यन्त शश्वत (शश्व् - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **बर्हिः** = बढ़ा हुआ, विराट, महान् (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना) ॥ 4 ॥

(308) सूक्त 88

1212. अयम् सोमः इन्द्र तुभ्यम् सुन्वे, तुभ्यम् पवते त्वम् अस्य पाहि ।

त्वम् ह यम् चकृषे त्वम् ववृषे, इन्दुम् मदाय युज्याय सोमम् ॥ 1 ॥ 9-88-1

मन्त्रार्थ :- **अयम्** = यह **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए **सुन्वे**

= आसवन किया जाये **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **त्वम्** = तुम **अस्य** = इसका **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो **त्वम्** = तुम **ह** = ही, निश्चय ही **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **चकृषे** = किया **त्वम्** = तुम **ववृषे** = वरण, आशा, अमानवी पराक्रम, वर्षण करते हैं **इन्दुम्** = इन्दु को **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **युज्याय** = युज्य के लिए, योग के लिए **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **सुन्वे** = आसवन किया जाये (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **तुभ्यम्** = तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **पाहि** = पालन करो, रक्षा करो (पा - पालन, रक्षण करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **ह** = ही, निश्चय ही (अव्यय)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **चकृषे** = किया (कृ = करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **ववृषे** = वरण, आशा, अमानवी पराक्रम, वर्षण करते हैं (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना, वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इन्दुम्** = इन्दु को (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **युज्याय** = युज्य के लिए, योग के लिए (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 1 ॥

1213. सः ईम् रथो न भुरिषाट् अयोजि, महः पुरुणि सातये वसूनि ।

आत् ईम् विश्वा नहुष्याणि जाता, स्वर्षाता वने ऊर्ध्वा नवन्त ॥ 2 ॥ 9-88-2

मन्त्रार्थ :- **सः** = वह, उसने **ईम्** = समान, इस प्रकार **रथो** = रथ **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **भुरिषाट्** = घर्षण, गति करने वाले **अयोजि** = योग करता है, संयुक्त करता है **महः** = महान् **पुरुणि** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी **सातये** = सतत गतिशीलता के साथ **वसूनि** = वसुओं को **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ईम्** = समान, इस प्रकार **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **नहुष्याणि** = अनेक बंधन **जाता** = उत्पन्न हुए **स्वर्षाता** = देने वाला, उत्तम ऋषि **वने** = वाणी में, वनों में **ऊर्ध्वा** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व **नवन्त** = स्तुति करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **सः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **रथो** = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भुरिषाट्** = घर्षण, गति करने वाले (भु - जाना, घर्षण करना)। **अयोजि** = योग करता है, संयुक्त करता है (अ - नहीं, अ - भूतकालिक उपसर्ग, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। **महः** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **पुरुणि** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **सातये** = सतत गतिशीलता के साथ (स - सहित, साथ, अत् = सतत् गति करना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **नहुष्याणि** = अनेक बंधन (नह - बांधना, अड़ाना)। **जाता** = उत्पन्न हुए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **स्वर्षाता** = देने वाला, उत्तम ऋषि (सु+अर्षाता, स्वः, सु -

उत्तम, श्रेष्ठ सन - सेवा करना, चाकरी करना, षण्-सनु - देना, दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना, सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्तु-स्वर् = शब्द करना)। वने = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। ऊर्ध्वा = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। नवन्त = स्तुति करते हैं (नु- नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना) ॥ 2 ॥

1214. शुष्मी शर्धो न मारुतम् पवस्व, अनभिशास्ता दिव्या यथा विट्।

आपो न मक्षू सुमतिः भवा नः, सहस्राप्साः पृतनाषाण् न यज्ञः ॥ 7 ॥ 9-88-7

मन्त्रार्थ :- शुष्मी = शुष्म युक्त, सुखाने वाला शर्धो = विजय, शर्द्ध, बल न = नहीं, समान, उपमार्थक मारुतम् = मारुत को, मरणशील को पवस्व = पवित्र करो अनभिशास्ता = अहिंसक दिव्या = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार विट् = शब्द, परिहास करने वाला, शाप देने वाला आपो = आप, व्याप्त, व्यापक न = नहीं, समान, उपमार्थक मक्षू = मक्षू सुमतिः = सुमति, सुबुद्धि भवा = हो, हो जाये नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सहस्राप्साः = सहस्र-पालक पृतनाषाण् = व्यापक, बल वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक यज्ञः = यजन ॥ 7 ॥

पदार्थ :- शुष्मी = शुष्म युक्त, सुखाने वाला (शुष् - सुखाना)। शर्धो = विजय, शर्द्ध, बल (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मारुतम् = मारुत को, मरणशील को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अनभिशास्ता = अहिंसक (अन् - नहीं, अभि = सभी ओर, शस् - हिंसा करना, अभि-शस् - विनती करना, गिड़गिड़ाना)। दिव्या = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। विट् = शब्द, परिहास करने वाला, शाप देने वाला (विट् = शब्द करना, परिहास करना, शाप देना)। आपो = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मक्षू = मक्षू (मक्ष - डसना, मच - गर्व करना, दुराचारी होना, बोलना, पीसना, कूटना)। सुमतिः = सुमति, सुबुद्धि (सु - सुन्दर, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, मन - मनन करना, जानना, समझना, स्वीकार करना, अभ्यास करना, स्थिर होना, गर्व होना)। भवा = हो, हो जाये (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सहस्राप्साः = सहस्र-पालक (सहस्र = हजार, संख्या, अप - जाना, जानना, पाना, पालन करना)। पृतनाषाण् = व्यापक, बल वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। यज्ञः = यजन (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) ॥ 7 ॥

(309) सूक्त 90

1215. प्र हिन्वानो जनिता रोदस्यो, रथो न वाजम् सनिषन् अयासीत्।

इन्द्रम् गच्छन् आयुधा संशिशानो, विश्वा वसु हस्तयोः आदधानः ॥ 1 ॥ 9-90-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक हिन्वानो = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला जनिता = उत्पन्न करने वाला रोदस्यो = रोदसी के रथो = रथ न = नहीं, समान, उपमार्थक वाजम् = विद्या को, गति को सनिषन् = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए अयासीत् = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ इन्द्रम् = परम ऐश्वर्यशाली को गच्छन् = जाते हुए आयुधा = आयुध संशिशानो = तीक्ष्ण करने वाले विश्वा = विश्व, सभी, सब वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले हस्तयोः = हाथों का आदधानः = धारण करते हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। हिन्वानो = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना,

शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **रोदस्यो** = रोदसी के (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **रथो** = रथ (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सनिषन्** = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए (स - सहित, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना, निष - प्राप्त करना, ले जाना)। **अयासीत्** = प्रयत्न करता हुआ, प्राप्त होता हुआ (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, या - जानना, जानना, पाना, यस् - प्रयास करना, यत्न करना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गच्छन्** = जाते हुए (गम्-गच्छ् = जाना)। **आयुधा** = आयुध (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना)। **संशिशानो** = तीक्ष्ण करने वाले (सम् - सम्यक्, भलीभांति, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **हस्तयोः** = हाथों का (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **आदधानः** = धारण करते हुए (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, दध - धारण करना, पालन करना) ॥ 4 ॥

1216. अभि त्रिपृष्ठम् वृषणम् वयोधाम्, अङ्गूषाणाम् अवावशन्त वाणीः ।

वना वसानो वरुणो न सिन्धून्, वि रत्नधा दयते वार्यणि ॥ 2 ॥ 9-90-2

मन्त्रार्थ - **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **त्रिपृष्ठम्** = त्रिपृष्ठ को **वृषणम्** = पराक्रमी को **वयोधाम्** = वय या रचना को धारण करने वाले को **अङ्गूषाणाम्** = अङ्गूष को, जानने योग्य को, अङ्गों को **अवावशन्त** = रक्षण की कामना, प्रकाश की कामना **वाणीः** = वाणी **वना** = वन **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ **वरुणो** = वरुण **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सिन्धून्** = समुद्र **वि** = विशेष, विना, विलोम **रत्नधा** = रत्न, रमणीय को धारण करने वाला **दयते** = देते हैं **वार्यणि** = वार्यों, वरणीयों को, वरण करने योग्य ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्रिपृष्ठम्** = त्रिपृष्ठ को (त्रि = तीन (संख्या), पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृष्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वयोधाम्** = वय या रचना को धारण करने वाले को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, धा - धारण करना)। **अङ्गूषाणाम्** = अङ्गूष को, जानने योग्य को, अङ्गों को (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **अवावशन्त** = रक्षण की कामना, प्रकाश की कामना (अव+आ+वशन्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, प्रकाश करना, वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **वाणीः** = वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। **वना** = वन (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **वरुणो** = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सिन्धून्** = समुद्र (सिध् - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **रत्नधा**

= रत्न, रमणीय को धारण करने वाला (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना)। **दयते** = देते हैं (दय - दान करना, पालन करना, गति करना, हिंसा करना)। **वार्याणि** = वार्यों, वरणीयों को, वरण करने योग्य (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना) ॥ 2 ॥

1217. शूरग्रामः सर्ववीरः सहावान्, जेता पवस्व सनिता धनानि।

तिग्मायुधः क्षिप्रधन्वा समत्सु, अषाढः साह्वान् पृतनासु शत्रून् ॥ 3 ॥ 9-90-3

मन्त्रार्थ :- शूरग्रामः = वीरग्राम, पराक्रमी का ग्राम **सर्ववीरः** = सर्ववीर **सहावान्** = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **जेता** = जीतने वाला **पवस्व** = पवित्र करो **सनिता** = सेवित **धनानि** = धन को **तिग्मायुधः** = तीक्ष्ण आयुध **क्षिप्रधन्वा** = प्रक्षेप-गति करने वाले **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में **अषाढः** = असहनीय, दीप्तिमान् **साह्वान्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त **पृतनासु** = व्यापक, बलों में **शत्रून्** = शत्रुओं को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- शूरग्रामः = वीरग्राम, पराक्रमी का ग्राम (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना, ग्राम - बुलाना, बुद्धिपूर्वक कहना, एकत्र होना)। **सर्ववीरः** = सर्ववीर (सर्व = सब (सर्वनाम), वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **सहावान्** = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **जेता** = जीतने वाला (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सनिता** = सेवित (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **धनानि** = धन को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **तिग्मायुधः** = तीक्ष्ण आयुध (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल चलना, तिज्-तेज् = चमकना, चमकाना, पैना करना, आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध् - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना)। **क्षिप्रधन्वा** = प्रक्षेप-गति करने वाले (क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना, धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **अषाढः** = असहनीय, दीप्तिमान् (अ - नहीं, सह- सहन करना, अस् - फेंकना, उड़ाना, अष् - ग्रहण करना, जाना, जानना, पाना, चमकना, प्रकाश करना)। **साह्वान्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **पृतनासु** = व्यापक, बलों में (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **शत्रून्** = शत्रुओं को (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना) ॥ 3 ॥

1218. उरुगव्यूतिः अभयानि कृण्वन्, समीचीने आ पवस्वा पुरन्धी।

अपः सिषासन् उषसः स्वर्गाः, सम् चिक्रदो महो अस्मभ्यम् वाजान् ॥ 4 ॥ 9-90-4

मन्त्रार्थ :- उरुगव्यूतिः = अत्यधिक विद्वान्, बहुत प्रगतिशील **अभयानि** = अभय, भय-हीन, भय-मुक्त **कृण्वन्** = करने वाला, करते हुए **समीचीने** = पूजक, विद्वान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **पवस्वा** = पवित्र करो **पुरन्धी** = अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाला **अपः** = पालन करने वाला **सिषासन्** = विभाग करने की इच्छा करते हुए, सेवा करते हुए, शुद्ध करते हुए **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का **स्वर्गाः** = स्वर्ग **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **चिक्रदो** = पल्लवित करने वाला **महो** = बड़े, महिमावान्, महान् **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **वाजान्** = वाजो को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- उरुगव्यूतिः = अत्यधिक विद्वान्, बहुत प्रगतिशील (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अभयानि** = अभय, भय-हीन, भय-मुक्त (अ - नहीं, भी = भय होना, डरना, घबराना)। **कृण्वन्** = करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। **समीचीने** = पूजक, विद्वान् (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, इज् - पूजना, जाना, जानना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)।

पवस्वा = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पुरन्धी** = अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाला (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, धि-धा = धारण करना)। **अपः** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **सिषासन्** = विभाग करने की इच्छा करते हुए, सेवा करते हुए, शुद्ध करते हुए (सस् - शुद्ध करना, सन - सेवा करना, चाकरी करना, विभक्त करना, अलग करना)। **उषसः** = उषा का, प्रभात का, हिंसा का (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **स्वर्गाः** = स्वर्ग (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वर-स्वर् = शब्द करना, गम् - जाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **चिक्रदो** = पल्लवित करने वाला (चिकृ - जाना, पल्लवित होना, दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **महो** = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **वाजान्** = वाजो को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) ॥ 4 ॥

(310) सूक्त 91

1219. असर्जि वक्वा रथ्ये यथा आजौ, धिया मनोता प्रथमो मनीषी ।

दश स्वसारो अधि सानौ अव्ये, अजन्ति वह्निम् सदनानि अच्छ ॥ 1 ॥ 9-91-1

मन्त्रार्थ - असर्जि = सृजन किया वक्वा = वक्वा, वचनों द्वारा, वक्ताओं द्वारा रथ्ये = रथ्य में यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार आजौ = प्रगति में धिया = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा मनोता = मन प्रथमो = प्रथम मनीषी = विचारशील दश = दश स्वसारो = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार सानौ = दानी, सेवक अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में अजन्ति = उत्पन्न करते हैं वह्निम् = वाणी में, वनों में सदनानि = सदन, स्थान अच्छ = अच्छा, निर्मल करो ॥ 1 ॥

पदार्थ - असर्जि = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज् - सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **वक्वा** = वक्वा, वचनों द्वारा, वक्ताओं द्वारा (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **रथ्ये** = रथ्य में (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **आजौ** = प्रगति में (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **मनोता** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **प्रथमो** = प्रथम (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **मनीषी** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **दश** = दश (दश = दश, दस, संख्या)। **स्वसारो** = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुँचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानौ** = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अजन्ति** = उत्पन्न करते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना) ॥ **वह्निम्** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **सदनानि** = सदन, स्थान (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 1 ॥

1220. साकम् उक्षो मर्जयन्त स्वसारो, दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः ।

हरिः पर्यद्रवत् जाः सूर्यस्य द्रोणम्, ननक्षे अत्यो न वाजी ॥ 1 ॥

9-93-1

मन्त्रार्थ :- साकम् = साथ उक्षो = प्रोक्षण, सिञ्चन, दृढ़ करने वाले मर्जयन्त = शुद्ध करते हैं स्वसारो = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह दश = दश धीरस्य = धीर का धीतयो = ज्ञानीजन, धारण करने वाले धनुत्रीः = धनवान्, गतिकारक हरिः = हरि पर्यद्रवत् = सर्वत्र प्रवाहगामी, विद्वान् जाः = उत्पन्न होने वाले, विद्वान्, गति वाले सूर्यस्य = सूर्य का द्रोणम् = हिंसक, गति, कुटिलता को ननक्षे = गति, ज्ञान, प्राप्त किया अत्यो = सतत गमनीय न = नहीं, समान, उपमार्थक वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त ॥ 1 ॥

पदार्थ :- साकम् = साथ (अव्यय) । उक्षो = प्रोक्षण, सिञ्चन, दृढ़ करने वाले (उक्ष - प्रोक्षण करना, सिञ्चन करना, स्वच्छ करना, दृढ़ करना, दृढ़ होना) । मर्जयन्त = शुद्ध करते हैं (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना) । स्वसारो = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुंचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) । दश = दश (दश = दश, संख्या) । धीरस्य = धीर का (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, धृ - धारण करना, सहना, स्थिर रहना) । धीतयो = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) । धनुत्रीः = धनवान्, गतिकारक (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) । हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना) । पर्यद्रवत् = सर्वत्र प्रवाहगामी, विद्वान् (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, अ - नहीं, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना) । जाः = उत्पन्न होने वाले, विद्वान्, गति वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना) । सूर्यस्य = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) । द्रोणम् = हिंसक, गति, कुटिलता को (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना) । ननक्षे = गति, ज्ञान, प्राप्त किया (नक्ष - जाना, आना, पहुंचना, जानना, पाना) । अत्यो = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना) । न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) । वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना) ॥ 1 ॥

1221. सम् मातृभिः न शिशुः वावशानो, वृषा दधन्वे पुरुवारो अदिभः ।

मर्यो न योषाम् अभि निष्कृतम्, यन् सम् गच्छते कलशे उस्त्रियाभिः ॥ 2 ॥

9-93-2

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति मातृभिः = माताओं द्वारा न = नहीं, समान, उपमार्थक शिशुः = शिशु वावशानो = इच्छाएँ वृषा = पराक्रमी दधन्वे = धारण करता है पुरुवारो = पुरुवार, पुरु-वरणीय, अग्र-वरणीय अदिभः = खाद्य को धारण करने वाले मर्यो = मरणशील न = नहीं, समान, उपमार्थक योषाम् = योष (शत्रुओं को) मारने वाले को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा निष्कृतम् = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ यन् = उद्धार करता हुआ सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति गच्छते = जाता है कलशे = कलश में उस्त्रियाभिः = उस्त्रियों, प्रभातकर्ताओं, तपाने वालों द्वारा ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) । मातृभिः = माताओं द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) । न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) । शिशुः = शिशु (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना) । वावशानो = इच्छाएँ (वश् = इच्छा करना, चाहना) । वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी

पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **दधन्वे** = धारण करता है (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **पुरुवारो** = पुरुवार, पुरु-वरणीय, अग्र-वरणीय (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अदिभः** = खाद्य को धारण करने वाले (अद् = खाना, आत्मसात् करना, अ - नहीं, दा - देना)। **मर्यो** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **योषाम्** = योष (शत्रुओं को) मारने वाले को (युष = हिंसा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। **यन्** = उद्धार करता हुआ (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना, यन् - उद्धार करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **गच्छते** = जाता है (गम्, गच्छ = जाना)। **कलशे** = कलश में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **उस्त्रियाभिः** = उस्त्रियों, प्रभातकर्ताओं, तपाने वालों द्वारा (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना) ॥ 2 ॥

1222. उत प्र पिप्ये ऊधः अघ्न्याया, इन्दुः धाराभिः सचते सुमेधाः।

मूर्धानम् गावः पयसा चमूषु अभि, श्रीणन्ति वसुभिः न निक्तैः ॥ 3 ॥ 9-93-3

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक पिप्ये = बढ़ता है ऊधः = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले अघ्न्याया = अहिंसक, अहिंसनीय, अहिंसा द्वारा इन्दुः = इन्दु धाराभिः = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा सचते = अभिसिञ्चन करता है सुमेधाः = अच्छे मेधा वाले मूर्धानम् = उच्च को गावः = शब्द, वाणी, वचन पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा चमूषु = भोजन में अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा श्रीणन्ति = सेवा करते हैं वसुभिः = वसुओं द्वारा न = नहीं, समान, उपमार्थक निक्तैः = शुद्धता, स्वच्छता द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। पिप्ये = बढ़ता है (प्याय-प्यायी-प्यै - बढ़ना, बड़ा होना, फूलना, प्याय-प्यै - भूख लगना, प्यास लगना)। ऊधः = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द = भिगोना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। अघ्न्याया = अहिंसक, अहिंसनीय, अहिंसा द्वारा (घ्न, हन् = हिंसा करना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। धाराभिः = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। सचते = अभिसिञ्चन करता है (सच् - सींचना, सेवा करना, सन्तुष्ट करना, पूर्णतः समझना, सम्बन्धी होना)। सुमेधाः = अच्छे मेधा वाले (सु - अच्छा, सुन्दर, मेधा = शीघ्र समझना)। मूर्धानम् = उच्च को (मुर् - घेरना, लपेटना, मूर्द्ध - उच्च होना)। गावः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। चमूषु = भोजन में (चम् - खाना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। श्रीणन्ति = सेवा करते हैं (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। वसुभिः = वसुओं द्वारा (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। निक्तैः = शुद्धता, स्वच्छता द्वारा (निक्-निज-निनिक् - शुद्ध करना, स्वच्छ करना, पालना) ॥ 3 ॥

(312) सूक्त 94

1223. अधि यत् अस्मिन् वाजिनीव शुभः, स्पर्धन्ते धियः सूरे न विशः।

अपो वृणानः पवते कवीयन्, व्रजम् न पशुवर्धनाय मन्म ॥ 1 ॥ 9-94-1

मन्त्रार्थ - अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार यत् = जिसे, जो अस्मिन् = इस,

इसमें **वाजिनि** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **इव** = समान, की भाँति, के समान **शुभः** = शुभ **स्पर्धन्ते** = स्पर्धा करते हैं **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि **सूरे** = सूर्य **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **विशः** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी **अपो** = पालन करने वाला **वृणानः** = वरण करता है **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **कवीयन्** = कवि **व्रजम्** = पूर्ण सिद्ध **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **पशुवर्धनाय** = पशु, बन्धन, दृष्टा, देखने को बढ़ाने के लिए **मन्म** = विचार ॥ 1 ॥

पदार्थ - अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अस्मिन्** = इस, इसमें (सर्वनाम)। **वाजिनि** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **शुभः** = शुभ (शुभ - दीप्ति-प्रकाश होना, शोभा पाना, मङ्गल होना, बोलना)। **स्पर्धन्ते** = स्पर्धा करते हैं (स्पर्ध - स्पर्धा करना, जीतने की इच्छा करना, स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **सूरे** = सूर्य (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विशः** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वृणानः** = वरण करता है (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कवीयन्** = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **व्रजम्** = पूर्ण सिद्ध (व्रज = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पशुवर्धनाय** = पशु, बन्धन, दृष्टा, देखने को बढ़ाने के लिए (पश् - देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गांठ बांधना, फांस लगाना, जाना, वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **मन्म** = विचार (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 7 ॥

(313) सूक्त 95

1224. कनिक्रन्ति हरिः आ सृज्यमानः, सीदन् वनस्य जठरे पुनानः।

नृभिः यतः कृणुते निर्णिजम् गाः, अतो मतिम् जनयत स्वधाभिः ॥ 1 ॥ 9-95-1

मन्त्रार्थ - कनिक्रन्ति = प्रकाश करते हुए **हरिः** = हरि **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **सृज्यमानः** = सृजन करो **सीदन्** = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए **वनस्य** = वन का **जठरे** = धारण में **पुनानः** = पवित्रकर्ता **नृभिः** = नरों द्वारा **यतः** = जिससे **कृणुते** = करता है **निर्णिजम्** = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को **अतो** = इससे **मतिम्** = मति को **जनयत** = उत्पन्न करता है **स्वधाभिः** = स्वयम् धारण करने द्वारा, स्वधा द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - कनिक्रन्ति = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सृज्यमानः** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **सीदन्** = बैठते हुए, संचरण होते हुए, प्रतिष्ठित होते हुए (सीद - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **वनस्य** = वन का (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **जठरे** = धारण में (जठ् - धारण करना)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **यतः** = जिससे (सर्वनाम)। **कृणुते** = करता है। (कृ = करना)।

निर्णिजम् = निरन्तर शुद्ध-कर्ता को (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निज्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले को (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अतो** = इससे (अव्यय)। **मतिम्** = मति को (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **जनयत** = उत्पन्न करता है (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **स्वधाभिः** = स्वयम् धारण करने द्वारा, स्वधा द्वारा (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना) ॥ 1 ॥

1225. अपाम् इव इत् ऊर्मयः तर्तुराणाः, प्र मनीषा ईरते सोमम् अच्छ ।

नमस्यन्तीः उप च यन्ति सम्, च आ च विशन्ति उशतीः उशन्तम् ॥ 3 ॥ 9-95-3

मन्त्रार्थ - **अपाम्** = अपा को, पालकों का **इव** = समान, की भाँति, के समान **इत्** = ही **ऊर्मयः** = ऊर्मियाँ **तर्तुराणाः** = शीघ्रता से पार करने वाले **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **मनीषा** = विचारशील **ईरते** = कम्पित करता है **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो **नमस्यन्तीः** = नमन करते हैं **उप** = समीप **च** = और **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **च** = और **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **च** = और **विशन्ति** = प्रवेश करते हैं **उशतीः** = उशती, इच्छा, कामना करती हुई **उशन्तम्** = कामनायुक्त, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला ॥ 3 ॥

पदार्थ - **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **इत्** = ही (अव्यय)। **ऊर्मयः** = ऊर्मियाँ (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **तर्तुराणाः** = शीघ्रता से पार करने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना, तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **मनीषा** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **ईरते** = कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **नमस्यन्तीः** = नमन करते हैं (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **च** = और। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचाना, जानना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **च** = और। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **च** = और। **विशन्ति** = प्रवेश करते हैं (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **उशतीः** = उशती, इच्छा, कामना करती हुई (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। **उशन्तम्** = कामनायुक्त, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना) ॥ 3 ॥

(314) सूक्त 96

1226. प्र सेनानीः शूरो अग्ने स्थानाम्, गव्यन् एति हर्षते अस्य सेना ।

भद्रान् कृण्वन् इन्द्रहवान् सखिभ्य, आ सोमो वस्त्रा रभसानि दत्ते ॥ 1 ॥ 9-96-1

मन्त्रार्थ - **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सेनानीः** = सेनानी **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी **अग्ने** = हे अग्नि **स्थानाम्** = रथों का **गव्यन्** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय **एति** = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है **हर्षते** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **अस्य** = इसका **सेना** = सेना **भद्रान्** = भद्र, कल्याणकारी **कृण्वन्** = करने वाला, करते हुए **इन्द्रहवान्** = इन्द्र के लिए दान करने वाले, इन्द्र का आहवान करने वाले को **सखिभ्यः** = मित्रों के लिए **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **वस्त्रा** = वस्त्र **रभसानि** = आनन्दित हो, उपक्रम करो **दत्ते** = दिया हुआ ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सेनानीः** = सेनानी (सि-सिन् = बांधना, गूथना, फन्दे से पकड़ना)। **शूरो** = शूर, वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **स्थानाम्** = रथों का (स्थ = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **गव्यन्** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **एति** = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **हर्षते** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **सेना** = सेना (सि-सिन् = बांधना, गूथना, फन्दे से पकड़ना)। **भद्रान्** = भद्र, कल्याणकारी (भदि-भन्द - सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **कृण्वन्** = करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। **इन्द्रहवान्** = इन्द्र के लिए दान करने वाले, इन्द्र का आह्वान करने वाले को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **सखिभ्यः** = मित्रों के लिए (सख् = मित्र होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वस्त्रा** = वस्त्र (वस्त - प्रेरणा करना, प्रातः होना, प्रभात होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **रभसानि** = आनन्दित हो, उपक्रम करो। (रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना)। **दत्ते** = दिया हुआ (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना) ॥ 1 ॥

1227. सोमः पवते जनिता मतीनाम्, जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः।

जनिता अग्नेः जनिता सूर्यस्य, जनिता इन्द्रस्य जनिता विष्णोः ॥ 5 ॥ 9-96-5

मन्त्रार्थ :- **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **मतीनाम्** = मतियों के **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **पृथिव्याः** = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **अग्नेः** = हे अग्नि **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **सूर्यस्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले का **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **जनिता** = उत्पन्न करने वाला **उत** = ही, भी, ओर **विष्णोः** = विष्णु का, सर्वव्यापी का ॥ 5 ॥

पदार्थ :- **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मतीनाम्** = मतियों के (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पृथिव्याः** = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अग्नेः** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सूर्यस्य** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना,

उत्पन्न करना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जनिता** = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **विष्णोः** = विष्णु का, सर्वव्यापी का (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना) ॥ 5 ॥

1228. ब्रह्मा देवानाम् पदवीः कवीनाम्, ऋषिः विप्राणाम् महिषो मृगाणाम्।

श्येनो गृधाणाम् स्वधितिः वनानाम्, सोमः पवित्रम् अत्येति रेभन् ॥ 6 ॥ 9-96-6

मन्त्रार्थ :- ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **देवानाम्** = देवों का **पदवीः** = पदवी, भूषण **कवीनाम्** = ज्ञानियों का, कवियों का **ऋषिः** = ऋषि **विप्राणाम्** = विशेष पूर्ण करने वाले का **महिषो** = पूजित, सम्मानित **मृगाणाम्** = मृगों का, अन्वेषियों का **श्येनो** = श्येन **गृधाणाम्** = लोभियों का, इच्छा-लोभ करने वालों का **स्वधितिः** = स्वयम् धारणकर्ता **वनानाम्** = वनों का **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पवित्रम्** = पवित्र को **अत्येति** = सतत गमनीय **रेभन्** = शब्द करते हुए ॥ 6 ॥

पदार्थ :- ब्रह्मा = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पदवीः** = पदवी, भूषण (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **कवीनाम्** = ज्ञानियों का, कवियों का (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **ऋषिः** = ऋषि (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **विप्राणाम्** = विशेष पूर्ण करने वाले का (वि - विशेष, प्रा - पूर्ण करना)। **महिषो** = पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **मृगाणाम्** = मृगों का, अन्वेषियों का (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। **श्येनो** = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। **गृधाणाम्** = लोभियों का, इच्छा-लोभ करने वालों का (गृध-गर्ध - चाहना, आशा करना, लोभ करना)। **स्वधितिः** = स्वयम् धारणकर्ता (स्व = निज, अपना, धा = धारण करना, पहनना, पोषण करना, रक्षण करना, धि - पास रखना या होना, युक्त होना)। **वनानाम्** = वनों का (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पवित्रम्** = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अत्येति** = सतत गमनीय (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **रेभन्** = शब्द करते हुए (रेभ - शब्द करना) ॥ 6 ॥

1229. प्रावीविपत् वाचः ऊर्मिम् न सिन्धुः, गिर सोमः पवमानो मनीषाः।

अन्तः पश्यन् वृजनेम् आवराण्या, तिष्ठति वृषभो गोषु जानन् ॥ 7 ॥ 9-96-7

मन्त्रार्थ :- प्रावीविपत् = प्रेरित किया **वाचः** = वाणी **ऊर्मिम्** = ऊर्मियों को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **सिन्धुः** = समुद्र **गिर** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **सोमः** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तर्कर्ता सोम **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **मनीषाः** = विचारशील **अन्तः** = बीच में, भीतर **पश्यन्** = देखते हुए, देखने वाले **वृजनेम्** = वृजनों, त्याग, वर्जनाओं को **आवराण्या** = समन्तात् वरण करने योग्य **तिष्ठति** = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है **वृषभो** = पराक्रमी **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में **जानन्** = जानते हुए ॥ 7 ॥

पदार्थ :- प्रावीविपत् = प्रेरित किया (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, विप - प्रेरित करना)। **वाचः** = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **ऊर्मिम्** = ऊर्मियों को (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **सिन्धुः** = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूंथना,

फन्दे से पकड़ना, सिञ्ज - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **गिर** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **सोमः** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता सोम (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मनीषाः** = विचारशील (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **पश्यन्** = देखते हुए, देखने वाले (पश्-दृश् = देखना)। **वृजनेम्** = वृजनों, त्याग, वर्जनाओं को (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **आवराण्या** = समन्तात् वरण करने योग्य (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **तिष्ठति** = स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ् = ठहरना, खड़ा होना)। **वृषभो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **जानन्** = जानते हुए (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 7 ॥

1230. पवस्व सोम मधुमान् ऋतावापो, वसानो अधि सानो अव्ये ।

अव द्रोणानि घृतवन्ति सीद, मदिन्तमो मत्सरः इन्द्रपानः ॥ 13 ॥

9-96-13

मन्त्रार्थ - पवस्व = पवित्र करो **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मधुमान्** = मधुरता युक्त **ऋतावापो** = ऋत का रक्षक **अपो** = पालन करने वाला **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **सानो** = दानी, सेवक **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में **घृतवन्ति** = घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त **सीद** = बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों **मदिन्तमो** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो **इन्द्रपानः** = इन्द्रपान का ॥ 13 ॥

पदार्थ - पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **ऋतावापो** = ऋत का रक्षक (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, अव - रक्षा करना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानो** = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **द्रोणानि** = हिंसा, गति, कुटिलता में (द्रुण् = हिंसा, गति, कुटिलता होना)। **घृतवन्ति** = घृतयुक्त, प्रकाशयुक्त (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना)। **सीद** = बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **मदिन्तमो** = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मत्सरः** = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **इन्द्रपानः** = इन्द्रपान का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, पा- पालन करना, पोषण करना, पी- पीना, पाशन करना) ॥ 10 ॥

1231. शिशुम् जज्ञानम् हर्यतम् मृजन्ति, शुम्भन्ति वह्निम् मरुतो गणेन।

कविः गीर्भिः काव्येन आ कविः, सन् सोमः पवित्रम् अत्येति रेभन् ॥ 17 ॥ 9-96-17

मन्त्रार्थ :- शिशुम् = शिशु को जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना हर्यतम् = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य को मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं शुम्भन्ति = शोभित होते हैं, प्रकाशित होते हैं वह्निम् = वहन करने वाले को मरुतो = मरणशील, मरुतों का गणेन = गणक, गण, समूह द्वारा कविः = ज्ञानी, कवि गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा काव्येन = काव्य द्वारा आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम कविः = ज्ञानी, कवि सन् = होते हुए सोमः = सोम पवित्रम् = पवित्र को अत्येति = अति गति करता है, अतिक्रम कर जाता है रेभन् = शब्द करते हुए ॥ 17 ॥

पदार्थ :- शिशुम् = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। हर्यतम् = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य को (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। शुम्भन्ति = शोभित होते हैं, प्रकाशित होते हैं (शुम्भ - चमकना, प्रकाशित होना, सुन्दर होना, खूबसूरत होना)। वह्निम् = वहन करने वाले को (वह = वहन करना, ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। मरुतो = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। गणेन = गणक, गण, समूह द्वारा (गण - गिनना, शब्द करना, नापना, मानना, समझाना, समूह बनाना)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। काव्येन = काव्य द्वारा (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। सन् = होते हुए (असन्, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। सोमः = सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अत्येति = अति गति करता है, अतिक्रम कर जाता है (अति-ऐति, इ = जाना, जानना)। रेभन् = शब्द करते हुए (रेभ - शब्द करना) ॥ 17 ॥

1232. ऋषिमना यः ऋषिकृत् स्वर्षाः, सहस्रनीथः पदवीः कवीनाम्।

तृतीयम् धाम महिषः सिषासन्, सोमो विराजम् अनु राजति ष्टुप् ॥ 18 ॥ 9-96-18

मन्त्रार्थ :- ऋषिमना = ऋषि-मन यः = जो ऋषिकृत् = ऋषि-कृत स्वर्षाः = देने वाला, उत्तम ऋषि सहस्रनीथः = सहस्रों को ले जाने वाला, हजारों को ले जाने वाला पदवीः = पदवी, भूषण कवीनाम् = ज्ञानियों, कवियों का तृतीयम् = तृतीय को, तीसरे को धाम = धारण करने वाले महिषः = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित सिषासन् = विभाग करने की इच्छा करते हुए, सेवा करते हुए, शुद्ध करते हुए सोमो = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विराजम् = विराज को, प्रकाशित को अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल राजति = प्रकाशित होता है ष्टुप् = स्तुत्य ॥ 18 ॥

पदार्थ :- ऋषिमना = ऋषि-मन (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। यः = जो (सर्वनाम)। ऋषिकृत् = ऋषि-कृत (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, कृ = करना)। स्वर्षाः = देने वाला, उत्तम ऋषि (सु+अर्षः,

स्वः, सन - सेवा करना, चाकरी करना, षण्-सनु - देना, दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, ऋष = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **सहस्रनीथः** = सहस्रों को ले जाने वाला, हजारों को ले जाने वाला (सहस्र = हजार, संख्या, नी - ले जाना)। **पदवीः** = पदवी, भूषण (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **कवीनाम्** = ज्ञानियों, कवियों का (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **तृतीयम्** = तृतीय को, तीसरे को (संख्या, सर्वनाम)। **धाम** = धारण करने वाले (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **महिषः** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सिषासन्** = विभाग करने की इच्छा करते हुए, सेवा करते हुए, शुद्ध करते हुए (सस् - शुद्ध करना, सन - सेवा करना, चाकरी करना, विभक्त करना, अलग करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विराजम्** = विराज को, प्रकाशित को (वि = विशेष, विना, विलोम, राज् = प्रकाशित होना, शोभित होना, चमकना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **राजति** = प्रकाशित होता है (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **ष्टुप्** = स्तुत्य (स्तु = स्तुति, पूजा, सेवा करना) ॥ 18 ॥

1233. चमूषत् श्येनः शकुनो विभृत्वा, गोविन्दुः द्रप्सः आयुधानि विभ्रत् ।

अपाम् उर्मिम् सचमानः समुद्रम्, तुरीयम् धाम महिषो विवक्ति ॥ 19 ॥ 9-96-19

मन्त्रार्थ :- चमूषत् = भोजन, प्राप्ति श्येनः = श्येन शकुनो = सक्षम, समर्थ विभृत्वा = विशेष भरण करने वाला गोविन्दुः = गो-प्राप्त कराने वाला, वाणी को प्राप्त करने वाला द्रप्सः = हर्ष, आनन्द, गर्व आयुधानि = आयु विभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ अपाम् = अपा को, पालकों का उर्मिम् = उर्मियों को सचमानः = अभिसिञ्चित होता हुआ समुद्रम् = समुद्र को तुरीयम् = तुरीय, शीघ्रकारी, शीघ्रगामी को धाम = धारण करने वाले महिषो = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित विवक्ति = विशेष बोलता है, कहता है ॥ 19 ॥

पदार्थ :- चमूषत् = भोजन, प्राप्ति (चम् - खाना, पाना)। श्येनः = श्येन (श्यै - चलना, जाना, तैरना)। शकुनो = सक्षम, समर्थ (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। विभृत्वा = विशेष भरण करने वाला (वि - विशेष, भृ - भरण करने वाला)। गोविन्दुः = गो-प्राप्त कराने वाला, वाणी को प्राप्त करने वाला (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विन्द - लाभ होना, प्राप्त करना, सम्पादित करना)। द्रप्सः = हर्ष, आनन्द, गर्व (द्रृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। आयुधानि = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। विभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। उर्मिम् = उर्मियों को (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। सचमानः = अभिसिञ्चित होता हुआ (सच् = सिञ्चन करना, सेवा करना)। समुद्रम् = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। तुरीयम् = तुरीय, शीघ्रकारी, शीघ्रगामी को (तुर्-तुरण् = शीघ्रता करना)। धाम = धारण करने वाले (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। महिषो = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। विवक्ति = विशेष बोलता है, कहता है (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना) ॥ 3 ॥

अनुवाक:- 72

(315) सूक्त 97

1234. अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो, देवो देवेभिः समपृक्त रसम् ॥

सुतः पवित्रम् पर्येति रेभन्, मिता इव सद्म पशुमन्ति होता ॥ 1 ॥

9-97-1

मन्त्रार्थ :- अस्य = इसका प्रेषा = प्रेषित, भेजा हुआ हेमना = हिम, गतिवान्, गति-वृद्धि, शीतल पूयमानो = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण देवेभिः = देवों द्वारा समपृक्त = भलीभाँति मिलाता है रसम् = रस को सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए पवित्रम् = पवित्र को पर्येति = सर्वत्रगमन करते हो रेभन् = शब्द करते हुए मिता = मित, मीत, मित्र इव = समान, की भाँति, के समान सद्म = सदन, स्थान पशुमन्ति = पशु, दृष्टि, बन्धन वाले होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले ॥ १ ॥

पदार्थ :- अस्य = इसका (सर्वनाम)। प्रेषा = प्रेषित, भेजा हुआ (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इष्-ईष् - जाना, जानना, पाना, देना, प्रेष - जाना, जानना, पाना, आना, भेजना)। हेमना = हिम, गतिवान्, गति-वृद्धि, शीतल (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना, हिम - शीत होना)। पूयमानो = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवेभिः = देवों द्वारा (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। समपृक्त = भलीभाँति मिलाता है (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, पृक् - मिलना)। रसम् = रस को (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। पर्येति = सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। रेभन् = शब्द करते हुए (रेभ - शब्द करना)। मिता = मित, मीत, मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञा, नरम होना, मृदुल होना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। सद्म = सदन, स्थान (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। पशुमन्ति = पशु, दृष्टि, बन्धन वाले (पश्-दृश् = देखना, पश - बांधना, बेड़ी डालना, गाँठ बांधना, फाँस लगाना, जाना)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 1 ॥

1235. सम् उ प्रियो मृज्यते सानो अव्ये, यशस्तरो यशसाम् क्षैतो अस्मे ।

अभि स्वर धन्वा पूयमानो, यूयम् पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ 3 ॥

9-97-3

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति उ = निश्चय ही, भी प्रियो = प्रिय मृज्यते = शुद्ध करता है, पवित्र करता है सानो = दानी, सेवक अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में यशस्तरो = अति यश, कीर्ति वाले यशसाम् = यश, कीर्ति का क्षैतो = प्रगतिशील, निवासी अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा स्वर = शब्द करने वाले, उपदेशक धन्वा = गति, शब्द करने वाले पूयमानो = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ यूयम् = तुम दोनों पात = पालन करो स्वस्तिभिः = स्वस्तियों द्वारा सदा = सदा, सर्व काल में। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। प्रियो = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। मृज्यते = शुद्ध करता है, पवित्र करता है (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। सानो = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अय् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। यशस्तरो = अति यश, कीर्ति वाले (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। यशसाम् = यश, कीर्ति का (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। क्षैतो = प्रगतिशील, निवासी (क्षि - निवास करना, जाना, जानना, पाना, क्षेम् = कल्याण होना)। अस्मे = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर,

सर्वथा (उपसर्ग)। **स्वर** = शब्द करने वाले, उपदेशक (स्वृ = शब्द करना)। **धन्वा** = गति, शब्द करने वाले (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **पूयमानो** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **यूयम्** = तुम दोनों (सर्वनाम)। **पात** = पालन करो (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **स्वस्तिभिः** = स्वस्तियों द्वारा (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **सदा** = सदा, सर्व काल में। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

1236. प्र गायता अभ्यर्चाम देवान्, सोमम् हिनोत महते धनाय ।

स्वादुः पवाते अति वारम्, अव्यम् आ सीदाति कलशम् देवयुः नः ॥ 4 ॥ 9-97-4

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गायता** = गायन करते हुए, गाने वाले, स्तुति करने वाले **अभ्यर्चाम** = सभी ओर, सर्वथा स्तुति करो, प्रशंसा करो **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को **हिनोत** = गतिशील करो, बढ़ाओ, वृद्धि करो **महते** = महत् के लिए, महान्, पूज्य के लिए **धनाय** = धन के लिए **स्वादुः** = स्वाद युक्त **पवाते** = पवित्र करो **अति** = बहुत, अत्यधिक **वारम्** = वरण को **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **सीदाति** = बैठो, बैठता है **कलशम्** = कलश को **देवयुः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 4 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गायता** = गायन करते हुए, गाने वाले, स्तुति करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अभ्यर्चाम** = सभी ओर, सर्वथा स्तुति करो, प्रशंसा करो (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोमम्** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **हिनोत** = गतिशील करो, बढ़ाओ, वृद्धि करो (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **महते** = महत् के लिए, महान्, पूज्य के लिए (मह - पूजा करना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **धनाय** = धन के लिए (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **स्वादुः** = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **पवाते** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सीदाति** = बैठो, बैठता है (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **कलशम्** = कलश को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **देवयुः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 4 ॥

1237. प्र काव्यम् उशनेव ब्रुवाणो, देवो देवानाम् जनिमा विवक्ति ।

महिब्रतः शुचिबन्धुः पावकः, पदा वराहो अभ्येति रेभन् ॥ 7 ॥ 9-97-7

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **काव्यम्** = काव्य को **उशनेव** = कामनाएँ, इच्छाएँ के समान **ब्रुवाणो** = कहता हुआ, बोलता हुआ **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का **जनिमा** = उत्पन्न **विवक्ति** = विशेष बोलता है, कहता है **महिब्रतः** = महिब्रत, महान् ब्रत वाले **शुचिबन्धुः** = पवित्र बन्धु, पवित्र बन्धन करने वाला **पावकः** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **पदा** = पद, पद द्वारा **वराहो** = वराह, व्यापक इच्छा **अभ्येति** =

जाता है, प्राप्त होता है रेभन् = शब्द करते हुए ॥ 7 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **काव्यम्** = काव्य को (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **उशनेव** = कामनाएँ, इच्छाएँ के समान (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना, इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय))। **ब्रुवाणो** = कहता हुआ, बोलता हुआ (ब्रू - कहना, बोलना)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवानाम्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जनिमा** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विवक्ति** = विशेष बोलता है, कहता है (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वच् - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **महिव्रतः** = महिव्रत, महान व्रत वाले (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **शुचिबन्धुः** = पवित्र बन्धु, पवित्र बन्धन करने वाला (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना, बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना)। **पावकः** = पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **पदा** = पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। **वराहो** = वराह, व्यापक इच्छा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **अभ्येति** = जाता है, प्राप्त होता है (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **रेभन्** = शब्द करते हुए (रेभ - शब्द करना) ॥ 7 ॥

1238. प्र हंसासः तृपलम् मन्युम् अच्छ, अमात् अस्तम् वृषगणाः अयासुः ।

अङ्गूष्यम् पवमानम् सखायो, दुर्मर्षम् साकम् प्र वदन्ति वाणम् ॥ 8 ॥ 9-97-8

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **हंसासः** = हंसने वाले, प्रसन्न रहने वाले, प्रसन्न करने वाले **तृपलम्** = तृप्ति **मन्युम्** = मन्यु को, गर्व को **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो **अमात्** = माना **अस्तम्** = प्रकाशमान को **वृषगणाः** = पराक्रमी गण **अयासुः** = प्राप्त होते हैं **अङ्गूष्यम्** = अङ्गोष्ठी को, जानने योग्य को, अङ्गों को **पवमानम्** = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले को **सखायो** = मित्र **दुर्मर्षम्** = दुर्मर्ष को, दुस्सहनीय को **वाणम्** = वाणी को **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **वदन्ति** = बोलते हैं **साकम्** = साथ ॥ 8 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **हंसासः** = हंसने वाले, प्रसन्न रहने वाले, प्रसन्न करने वाले (हंस = हंसना, हंसाना, प्रसन्न करना, प्रसन्न रहना, प्रसन्न होना)। **तृपलम्** = तृप्ति को (तृप् = तृप्त होना, तृप्त करना) **मन्युम्** = मन्यु को, गर्व को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **अमात्** = माना (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अम् = गति, शब्द, सेवा करना, मा - मापना, मान करना)। **अस्तम्** = प्रकाशमान को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **वृषगणाः** = पराक्रमी गण (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, गण् - गिनना, शब्द करना, नापना, मानना, समझाना, समूह बनाना)। **अयासुः** = प्राप्त होते हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। **अङ्गूष्यम्** = अङ्गोष्ठी को, जानने योग्य को, अङ्गों को (अङ्ग = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **पवमानम्** = पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सखायो** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **दुर्मर्षम्** = दुर्मर्ष को, दुस्सहनीय को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, मृष - सहन करना, क्षमा करना)। **साकम्** = साथ (अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **वदन्ति** = बोलते हैं (वद - कहना, स्पष्ट कहना, बोलना, समझाना)। **वाणम्** = वाणी को (वण् - बोलना, भीड़ होना) ॥ 8 ॥

1239. सः रंहत उरुगायस्य जूतिम्, वृथा क्रीडन्तम् मिमते न गावः ।

परीणसम् कृणुते तिग्मशृङ्गो दिवा, हरिः ददृशे नक्तम् ऋजः ॥ 9 ॥ 9-97-9

मन्त्रार्थ :- सः = वह, उसने रंहत = प्रगतिशील, प्रकाशमान उरुगायस्य = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति का जूतिम् = वेगवान् चंचल को वृथा = व्यर्थ क्रीडन्तम् = क्रीडा करते हुए को मिमते = गति, शब्द, मान, रक्षा करता है न = नहीं, समान, उपमार्थक गावः = शब्द, वाणी, वचन परीणसम् = सब ओर से व्याप्त कृणुते = करता है तिग्मशृङ्गो = कुटिलता से नाश करने वाला, कुटिलता का नाश करने वाला दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय हरिः = हरि ददृशे = देखा नक्तम् = रात्रि ऋजः = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् ॥ 9 ॥

पदार्थ :- सः = वह, उसने रंहत = प्रगतिशील, प्रकाशमान (रंह = चलना, वेग से जाना, रंह = चमकना, प्रकाशित होना, बोलना, सम्भाषण करना)। उरुगायस्य = बहुत गतिशील, निरन्तर गति, व्यापक स्तुति का (उरु - बहुत, अधिक (सर्वनाम), उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना, गा = चलना, जाना, गान करना)। जूतिम् = वेगवान् चंचल को (जू - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। वृथा = व्यर्थ (अव्यय)। क्रीडन्तम् = क्रीडा करते हुए को (क्रीड् - खेलना)। मिमते = गति, शब्द, मान, रक्षा करता है (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मीम - जाना, शब्द करना, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। गावः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। परीणसम् = सब ओर से व्याप्त (परि - सब ओर, ई - जाना, व्याप्त होना, प्रेरणा करना)। कृणुते = करता है (कृ = करना)। तिग्मशृङ्गो = कुटिलता से नाश करने वाला, कुटिलता का नाश करने वाला (तिग् = जाना, जानना, पाना, कूटचाल चलना, श्रु-शृण् = सुनना, जाना, शृ = मार डालना या दुःख देना, पीड़ा करना)। दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। ददृशे = देखा (दृश् - देखना)। नक्तम् = रात्रि (अव्यय)। ऋजः = स्थिर, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान् (ऋज - जाना, खड़ा रहना, स्थिर होना, बलिष्ठ होना, सामर्थ्यवान् होना, जीना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना) ॥ 9 ॥

1240. इन्दुः वाजी पवते गोन्योघा, इन्द्रे सोमः सहः इन्वन् मदाय ।

हन्ति रक्षो बाधते परि अरातिम्, वरिवः कृण्वन् वृजनस्य राजा ॥ 10 ॥ 9-97-10

मन्त्रार्थ :- इन्दुः = इन्दु का वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है गोन्योघा = विद्वानों का समूह इन्द्रे = परम ऐश्वर्यशाली में सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम सहः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट इन्वन् = व्याप्त करते हुए, तृप्त करते हुए मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए हन्ति = मारता है रक्षो = रक्षा करो बाधते = बाधित करता है, दुःख देता है परि = सभी तरफ अरातिम् = अदानी वरिवः = वरणीय कृण्वन् = करने वाला, करते हुए वृजनस्य = वर्जित करने वाले का, वृजन का राजा = राजा ॥ 10 ॥

पदार्थ :- इन्दुः = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। गोन्योघा = विद्वानों का समूह (गोन्+योघा, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गम् = जाना, जानना, पाना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। इन्द्रे = परम ऐश्वर्यशाली में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न

होना)। **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **इन्वन्** = व्याप्त करते हुए, तृप्त करते हुए (इन्व् - व्याप्त होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **हन्ति** = मारता है (हन् - मारना)। **रक्षो** = रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, बचाना)। **बाधते** = बाधित करता है, दुःख देता है (बाध - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **अरातिम्** = अदानी (अ - नहीं, रा = देना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। **वरिवः** = वरणीय (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **कृण्वन्** = करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। **वृजनस्य** = वर्जित करने वाले का, वृजन का (वृज् = छोड़ना, त्यागना, वर्जित करना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) ॥ 10 ॥

1241. अध धारया मध्वा पृचानः, तिरो रोम पवते अद्रिदुग्धः।

इन्दुः इन्द्रस्य सख्यम् जुषाणो, देवो देवस्य मत्सरो मदाय ॥ 11 ॥ 9-97-11

मन्त्रार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर **धारया** = धार द्वारा **मध्वा** = मधु द्वारा **पृचानः** = संयमी, तपस्वी, स्पर्श करता हुआ **तिरो** = तिरछा, तिर्यक् **रोम** = रोम, प्रगतिशील **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **अद्रिदुग्धः** = अद्रिदुग्ध, अहिंसक दोहन, ग्रहणीय दुग्ध वाला **इन्दुः** = इन्दु का **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता **जुषाणो** = विचारशील, सेवाभावी **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **देवस्य** = देव का **मत्सरो** = आनन्दगामी, आनन्दकारी **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए ॥ 11 ॥

पदार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मध्वा** = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **पृचानः** = संयमी, तपस्वी, स्पर्श करता हुआ (पृच् = संयम करना, तपस्या करना, स्पर्श करना, संयोग करना, मिलना)। **तिरो** = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। **रोम** = रोम, प्रगतिशील (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अद्रिदुग्धः** = अद्रिदुग्ध, अहिंसक दोहन, ग्रहणीय दुग्ध वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, दुह् - दोहन करना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **इन्दुः** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **सख्यम्** = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **जुषाणो** = विचारशील, सेवाभावी (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **देवस्य** = देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मत्सरो** = आनन्दगामी, आनन्दकारी (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 11 ॥

1242. अभि प्रियाणि पवते पुनानो, देवो देवान् स्वेन रसेन पृञ्चन्।

इन्दुः धर्माणि ऋतुथा सवानो, दश क्षिपो अव्यत सानौ अव्ये ॥ 12 ॥ 9-97-12

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्रियाणि** = प्रिय **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **पुनानो** = पवित्रकर्ता **देवो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **स्वेन** = अपने लिए, अपने साथ **रसेन** = रस द्वारा **पृञ्चन्** = संयम, तपस्या, स्पर्श करता हुआ **इन्दुः** = इन्दु का **धर्माणि** = धर्म **ऋतुथा** = ऋतु के अनुसार **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ **दश** = दश **क्षिपो** = प्रक्षेपण करने वाला **अव्यत** = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है **सानौ** = दानी, सेवक **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय,

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्रियाणि = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। देवो = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। स्वेन = अपने लिए, अपने साथ (सर्वनाम)। रसेन = रस द्वारा (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। पृञ्चन् = संयम, तपस्या, स्पर्श करता हुआ (पृच् = संयम करना, तपस्या करना, स्पर्श करना, संयोग करना, मिलना)। इन्दुः = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। धर्माणि = धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। ऋतुथा = ऋतु के अनुसार (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। वसानो = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। दश = दश (दश = दश, संख्या)। क्षिपो = प्रक्षेपण करने वाला (क्षिप् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, प्रेरणा करना, भेजना, नियमन करना, चलना, कम्पन करना, हिंसा करना)। अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, व्याप्त होना, प्रकाश करना)। सानो = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना) ॥ 12 ॥

1243. वृषा शोणो अभि कनिक्रदत्, गाः नदयन् एति पृथिवीम् उत द्याम् ।

इन्द्रस्य इव वग्नः आ शृण्वे आजौ, प्रचेतयन् अर्षसि वाचम् इमाम् ॥ 13 ॥ 9-97-13

मन्त्रार्थ :- वृषा = पराक्रमी शोणो = प्रगतिशील अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा कनिक्रदत् = प्रकाश करते हुए गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले नदयन् = शब्द करते हुए, प्रकाश करते हुए एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है पृथिवीम् = पृथिवी को उत = ही, भी, ओर द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का इव = समान, की भाँति, के समान वग्नः = वाणीयुक्त, विद्वान् आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण शृण्वे = सुनें आजौ = प्रगति में प्रचेतयन् = प्रेरित करते हुए अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो वाचम् = वाणी को इमाम् = इसको, इस ॥ 13 ॥

पदार्थ :- वृषा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। शोणो = प्रगतिशील (शोण = लाल होना, रंगना, जाना, शुन् = जाना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। कनिक्रदत् = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना)। गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। नदयन् = शब्द करते हुए, प्रकाश करते हुए (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। पृथिवीम् = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। वग्नः = वाणीयुक्त, विद्वान् (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण

(उपसर्ग)। शृण्वे = सुनें (श्रु-शृण् = सुनना)। आजौ = प्रगति में (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग), अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना, जु - जाना, जल्दी जाना, भागना)। प्रचेतयन् = प्रेरित करते हुए (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चुद् = प्रेरणा देना)। अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। वाचम् = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। इमाम् = इसको, इस (सर्वनाम) ॥ 13 ॥

1244. रसाय्यः पयसा पिन्वमानः, ईरयन् एषि मधुमन्तम् अंशुम्।

पवमानः सन्तनिम् एषि कृण्वन्, इन्द्राय सोम परिषिच्यमानः ॥ 14 ॥ 9-97-14

मन्त्रार्थ :- रसाय्यः = रस लेने योग्य पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा पिन्वमानः = गति, ज्ञान, प्राप्ति, शब्द, सेवा करने वाले ईरयन् = प्रेरणा करता हुआ, कम्पित करता हुआ एषि = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो मधुमन्तम् = मधुरता युक्त को अंशुम् = अंश को पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला सन्तनिम् = विस्तार को एषि = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो कृण्वन् = करने वाला, करते हुए इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम परिषिच्यमानः = परिसिञ्चन करने वाला, सभी ओर सिञ्चन करने वाला ॥ 14 ॥

पदार्थ :- रसाय्यः = रस लेने योग्य (रस् = चखना, प्यार करना, शब्द करना)। पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। पिन्वमानः = गति, ज्ञान, प्राप्ति, शब्द, सेवा करने वाले (पि = गति करना, जाना, जानना, पाना, पिन्व = सेवा करना, सेचन करना, प्रोक्षण करना, पिण् - शब्द करना)। ईरयन् = प्रेरणा करता हुआ, कम्पित करता हुआ (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। एषि = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। मधुमन्तम् = मधुरता युक्त को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अंशुम् = अंश को (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। पवमानः = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सन्तनिम् = विस्तार को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। एषि = प्रयत्न करते हो, समीप जाते हो, आते हो, चाहते हो (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, एष - प्रयत्न करना, समीप जाना या आना, चाहना)। कृण्वन् = करने वाला, करते हुए (कृ = करना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। परिषिच्यमानः = परिसिञ्चन करने वाला, सभी ओर सिञ्चन करने वाला (परि - सभी तरफ (उपसर्ग), सिञ्च् - सिञ्चन करना) ॥ 14 ॥

1245. एवा पवस्व मदिरो मदाय, उदग्राभस्य नमयन् वधस्नै ॥

परि वर्णम् भरमाणो रुशन्तम्, गव्युः नो अर्ष परि सोम सिक्तः ॥ 15 ॥ 9-97-15

मन्त्रार्थ :- एवा = ही पवस्व = पवित्र करो मदिरो = आनन्दित मदाय = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए उद-ग्राभस्य = उदक-ग्राही का, जलग्राही का नमयन् = नमन करते हुए वधस्नै = गतिशीलता से झरने वाले को परि = सभी तरफ वर्णम् = वर्ण को भरमाणो = भरण करने वाले रुशन्तम् = अत्यन्त प्रकाशवान् गव्युः = गव्य नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अर्ष अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन परि = सभी तरफ सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम सिक्तः = अस्पष्ट शब्द ॥ 15 ॥

पदार्थ :- एवा = ही (अव्यय)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मदिरो = आनन्दित (मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। मदाय = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। उद-ग्राभस्य = उदक-ग्राही का, जलग्राही का (उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च

होना, उदार होना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, गृ = सींचना, समझना, जानना, निगलना, शब्द करना, बोलना, समझाना, बताना, गृह - लेना, स्वीकार करना)। **नमयन्** = नमन करते हुए (नम - नमस्कार करना, वन्दना करना, सम्मान देना, नमना)। **वधरन्** = गतिशीलता से झरने वाले को (वध्-हन् - मारना, प्राप्त करना, जाना, किसी प्रकार समाप्त करना, स्नु - भाप से टपकना, झरना, चूना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **वर्णम्** = वर्ण को (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **भरमाणो** = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **रुशन्तम्** = अत्यन्त प्रकाशवान (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना)। **गव्युः** = गव्य (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सिक्तः** = अस्पष्ट शब्द (सिक्-सिङ्क्-सिज-सिज्ज - अस्पष्ट शब्द करना) ॥ 15 ॥

1246. तक्षत् यदी मनसो वेनतो वाग्, ज्येष्ठस्य धर्मणि क्षोरनीके।

आत् ईम् आयन् वरम् आ वावशाना, जुष्टम् पतिम् कलशे गाव इन्दुम् ॥ 22 ॥ 9-97-22

मन्त्रार्थ - तक्षत् = तक्षण करता है **यदी** = यदि **मनसो** = मन का **वेनतो** = विद्वान्, कान्तिमान् **वाग्** = वाक्, वाणी **ज्येष्ठस्य** = ज्येष्ठ, बड़ा **धर्मणि** = धर्म **क्षोरनीके** = गति, ध्वनि, प्राप्त करने वाली **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ईम्** = समान, इस प्रकार **आयन्** = प्राप्त किया **वरम्** = वर को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **वावशाना** = इच्छाएँ **जुष्टम्** = सुविचारित सेवा को **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक **कलशे** = कलश में **गाव** = शब्द, वाणी, वचन **इन्दुम्** = इन्दु को, ऐश्वर्यवान् को ॥ 22 ॥

पदार्थ - तक्षत् = तक्षण करता है (तक्ष - आच्छादित करना, छीलना, बोलना, हिंसा करना)। **यदी** = यदि (अव्यय)। **मनसो** = मन का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **वेनतो** = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। **वाग्** = वाक्, वाणी (वच्, वद - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **ज्येष्ठस्य** = ज्येष्ठ, बड़ा (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, बर्द्धित होना, जि - जीतना, जेष् - जाना, चलना, जानना, पाना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। **धर्मणि** = धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **क्षोरनीके** = गति, ध्वनि, प्राप्त करने वाली (क्षु - शब्द करना, जाना, जानना, पाना)। **अनीके** = स्पन्दनशील, चेतना, प्राण में (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना)। **आत्** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (वैदिक उपसर्ग)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **आयन्** = प्राप्त किया (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय्-ई - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **वरम्** = वर को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **वावशाना** = इच्छाएँ (वश् = इच्छा करना, चाहना)। **जुष्टम्** = सुविचारित सेवा को (जुष् = विचार करना, सेवा करना, सेवन करना, विवेक होना, विवेचना करना, प्रीति करना, चाहना, दुलारना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **कलशे** = कलश में (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **गाव** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **इन्दुम्** = इन्दु को, ऐश्वर्यवान् को (इन्द - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 22 ॥

1247. प्र ते धारा मधुमतीः असृग्रन्, वारम् यत् पूतो अत्येषि अव्यम्।

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो
मधुमतीः = मधुयुक्त असृग्रन् = सृजित किया वारम् = वरण को यत् = जिसे, जो पूतो = पवित्रता युक्त, रक्षित अत्येषि
 = अति गति करता है, अतिक्रम कर जाता है अव्यम् = व्यय हो, समाप्त हो पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा
 करने वाला पवसे = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए धाम = धारण करने योग्य गोनाम्
 = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के जज्ञानः = उत्पन्न किया, जाना सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाला
 को अपिन्वो = पिया, पान किया अर्कैः = अर्क द्वारा ॥ 31 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **मधुमतीः** = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **असृग्रन्** = सृजित किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **पूतो** = पवित्रता युक्त, रक्षित (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अत्येषि** = अति गति करता है, अतिक्रम कर जाता है (अति-ऐति, इ = जाना, जानना)। **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **पवसे** = पवित्र करो, पवित्र करने वाले, पालन-रक्षा करने वाले के लिए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **धाम** = धारण करने योग्य (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **जज्ञानः** = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। **सूर्यम्** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अपिन्वो** = पिया, पान किया (अ - नहीं, पी-पिब् = पीना, पान करना)। **अर्कैः** = अर्क द्वारा (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना) ॥ 31 ॥

1248. तिस्रो वाचः ईरयति प्र वह्निः, ऋतस्य धीतिम् ब्रह्मणो मनीषाम्।

गावो यन्ति गोपतिम् पृच्छमानाः, सोमम् यन्ति मतयो वावशानाः ॥ 34 ॥ 9-97-34

मन्त्रार्थ :- तिस्रो = तीन वाचः = वाणी ईरयति = प्रेरणा करता है, कम्पित करता है प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक वह्निः = वहन करने वाला ऋतस्य = ऋत का धीतिम् = धारणा शक्ति को ब्रह्मणो = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् मनीषाम् = मनीषा को गावो = शब्द, वाणी, वचन यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं गोपतिम् = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को पृच्छमानाः = पृच्छमान, प्रश्न पूछने वाला सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को यन्ति = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं मतयो = मतियाँ, मननशक्ति वावशानाः = इच्छाएँ ॥ 34 ॥

पदार्थ :- तिस्रो = तीन (संख्या)। वाचः = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। ईरयति = प्रेरणा करता है, कम्पित करता है (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। वह्निः = वहन करने वाला (वह् = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। धीतिम् = धारणा शक्ति को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। ब्रह्मणो = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। मनीषाम् = मनीषा को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना,

गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **पृच्छमानाः** = पृच्छमान, प्रश्न पूछने वाला (पृश्-पृच्छ - पूछना, प्रश्न करना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **मतयो** = मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **वावशानाः** = इच्छाएँ (वश् = इच्छा करना, चाहना) ॥ 34 ॥

1249. सोमम् गावो धेनवो वावशानाः, सोमम् विप्रा मतिभिः पृच्छमानाः ।

सोमः सुतः पूयते अज्यमानः, सोमे अर्काः त्रिष्टुभः सम् नवन्ते ॥ 35 ॥ 9-97-35

मन्त्रार्थ :- **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **धेनवो** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **वावशानाः** = इच्छाएँ **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **विप्रा** = विप्र **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा **पृच्छमानाः** = पृच्छमान, प्रश्न पूछने वाला **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **पूयते** = स्तुति करते हैं, प्रशंसा करते हैं **अज्यमानः** = गतिमान् हो, वेग से जाये **सोमे** = सोम में, सौम्यता में, श्रद्धा व उपकार की भावना में **अर्काः** = अर्क **त्रिष्टुभः** = त्रिष्टुभ **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **नवन्ते** = स्तुति करते हैं ॥ 35 ॥

पदार्थ :- **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **गावो** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **धेनवो** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **वावशानाः** = इच्छाएँ (वश् = इच्छा करना, चाहना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **विप्रा** = विप्र (वि = विशेष, प्रा -पूर्ण करना, भरना)। **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **पृच्छमानाः** = पृच्छमान, प्रश्न पूछने वाला (पृश्-पृच्छ - पूछना, प्रश्न करना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **पूयते** = स्तुति करते हैं, प्रशंसा करते हैं (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अज्यमानः** = गतिमान् हो, वेग से जाये (अज - जाना, हाँकना, दौड़ाना, फेंकना)। **सोमे** = सोम में, सौम्यता में, श्रद्धा व उपकार की भावना में (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **अर्काः** = अर्क (अर्क - प्रशंसा करना, स्तुति करना, ग्रहण करना)। **त्रिष्टुभः** = त्रिष्टुभ (त्रि - तीन, संख्या, सर्वनाम, स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, स्था - स्थित होना, ठहरना, बैठना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **नवन्ते** = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना,

1250. एवा नः सोम परिषिच्यमानः, आ पवस्व पूयमानः स्वस्ति ।

इन्द्रम् आ विश बृहता रवेण, वर्धया वाचम् जनया पुरन्धिम् ॥ 36 ॥ 9-97-36

मन्त्रार्थ :- एवा = ही नः = हमको, हमारे लिए, हमारा सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम परिषिच्यमानः = परिसिञ्चन करने वाला, सभी ओर सिञ्चन करने वाला आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण पवस्व = पवित्र करो पूयमानः = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ स्वस्ति = कल्याण इन्द्रम् = इन्द्र को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण विश = प्रतिष्ठित हो बृहता = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् रवेण = रव को, ध्वनि को वर्धया = बढ़ाओ वाचम् = वाणी को जनया = उत्पन्न करो पुरन्धिम् = अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले को ॥ 36 ॥

पदार्थ :- एवा = ही (अव्यय)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। परिषिच्यमानः = परिसिञ्चन करने वाला, सभी ओर सिञ्चन करने वाला (परि - सभी तरफ (उपसर्ग), सिञ्च् - सिञ्चन करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। पूयमानः = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। स्वस्ति = कल्याण (अव्यय)। इन्द्रम् = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। विश = प्रतिष्ठित हो (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना)। बृहता = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। रवेण = रव को, ध्वनि को (रव् - जाना, जानना, पाना, प्रकाश करना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। वर्धया = बढ़ाओ (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। वाचम् = वाणी को (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। जनया = उत्पन्न करो (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। पुरन्धिम् = अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, धि-धा = धारण करना) ॥ 36 ॥

1251. आ जागृविः विप्रः ऋता मतीनाम्, सोमः पुनानो असदत् चमूषु ।

सपन्ति यम् मिथुनासो निकामाः, अध्वर्यवो रथिरासः सुहस्ताः ॥ 37 ॥ 9-97-37

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम जागृविः = जागा हुआ, जाग्रत विप्रः = विशेष पूर्ण करने वाले ऋता = ऋत मतीनाम् = मतियों के सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पुनानो = पवित्रकर्ता असदत् = बैठे, स्थित हुए, गये चमूषु = भोजन में सपन्ति = संयुक्त करते हैं, पूर्ण करते हैं यम् = जिसे, जिसको, जहाँ मिथुनासो = अनेक मिथु, एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी निकामाः = निरन्तर कामना वाले अध्वर्यवो = अध्वर्यु गण, अहिंसक लोग रथिरासः = अनेक रथी, रथवान् सुहस्ताः = सुहस्त ॥ 37 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। जागृविः = जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। विप्रः = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। ऋता = ऋत (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। मतीनाम् = मतियों के (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। सोमः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। असदत् = बैठे, स्थित हुए, गये (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सद = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। चमूषु = भोजन में (चम् - खाना)। सपन्ति = संयुक्त करते हैं, पूर्ण करते हैं (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना,

संलग्न होना, मिलाप होना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **मिथुनासो** = अनेक मिथु, एकत्र, संयुक्त, प्रबुद्ध, ज्ञानी (मिथु - समझना, जानना, पीड़ा करना, दुःख देना, एकत्र करना, जोड़ना, जुड़ाना, संयुक्त करना)। **निकामाः** = निरन्तर कामना वाले (नि - निश्चित, निरन्तर, कम् - चाहना, इच्छा करना)। **अध्वर्यवो** = अध्वर्यु गण, अहिंसक लोग (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **रथिरासः** = अनेक रथी, रथवान् (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **सुहस्ताः** = सुहस्त (सु - सुन्दर, अच्छा, हस्त - आदान करना, लेना, दान करना, ग्रहण करना) ॥ 37 ॥

1252. स पुनानः उप सूरै धाता, आ उभे अप्रा रोदसी वि षः आवः।

प्रिया चित् यस्य प्रियसासः ऊती, स तू धनम् कारिणे न प्र यंसत् ॥ 38 ॥ 9-97-38

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **पुनानः** = पवित्रकर्ता **उप** = समीप **सूरै** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **धाता** = धारण करने वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **उभे** = दोनों, पूर्णता **अप्रा** = पालन करता है, पूर्ण किया, भरण किया, व्याप्त हुआ **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **वि** = विशेष, विना, विलोम **षः** = वह, उसने **आवः** = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो **प्रिया** = प्रिय **चित्** = भी, ही। **यस्य** = जिसका **प्रियसासः** = अनेक प्रिय **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला **स** = वह, उसने **तू** = धनम् = धन को **कारिणे** = करने वाले को, कर्त्ता को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **यंसत्** = यंस, नियमन करते हैं ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **सूरै** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **धाताः** = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ - पूर्ण करना, भरना)। **अप्रा** = पालन करता है, पूर्ण किया, भरण किया, व्याप्त हुआ (अप् - पालन करना, प्रा - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **षः** = वह, उसने (सर्वनाम)। **आवः** = रक्षक, रक्षा करो, पालन करो (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **चित्** = भी, ही। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **प्रियसासः** = अनेक प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना)। **ऊती** = शब्द करने वाला, रक्षा करने वाला (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **तू** - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना। **धनम्** = धन को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **कारिणे** = करने वाले को, कर्त्ता को (कृ - करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **यंसत्** = यंस, नियमन करते हैं (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना) ॥ 38 ॥

1253. स वर्धिता वर्धनः पूयमानः, सोमो मीढ्वान् अभि नो ज्योतिषा आवीत्।

येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः, स्वर्विदो अभि गाः अद्रिम् इष्णन् ॥ 39 ॥ 9-97-39

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **वर्धिता** = बढ़ाने वाला **वर्धनः** = बढ़ने वाले **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मीढ्वान्** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **ज्योतिषा** = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से **आवीत्** = सम्यक् रक्षण किया, व्याप्त हुआ **येना** = जिससे, जिसके द्वारा **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **पूर्वे** = पूर्व, पूर्ण करने के लिए **पितरः** = गतिशील, ज्ञानी, पालन करने वाले **पदज्ञाः** = पदज्ञ, पद को जानने वाला **स्वर्विदो** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले **अद्रिम्** = अद्रि,

अविदारणीय, अहिंसनीय, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाले को **इष्णन्** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, करते हुए ॥ 39 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **वर्धिता** = बढ़ाने वाला (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **वर्धनः** = बढ़ने वाले (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मीद्वान्** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाला (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मी = समझना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मिह - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ज्योतिषा** = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **आवीत्** = सम्यक् रक्षण किया, व्याप्त हुआ (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी - जाना, व्याप्त होना, इच्छा करना)। **येना** = जिससे, जिसके द्वारा। **पूर्वे** = पूर्व, पूर्ण करने के लिए (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **पितरः** = गतिशील, ज्ञानी, पालन करने वाले (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **पदज्ञाः** = पदज्ञ, पद को जानने वाला (पद- जाना, चलना, ज्ञा - जानना)। **स्वर्विदो** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (स्वर् - शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अद्रिम्** = अद्रि, अविदारणीय, अहिंसनीय, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाले को (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **इष्णन्** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, करते हुए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना) ॥ 39 ॥

1254. अक्रान् समुद्रः प्रथमे विधर्मन्, जनयन् प्रजा भुवनस्य राजा ।

वृषा पवित्रे अधि सानो अय्ये, बृहत् सोमो वावृधे सुवान इन्दु ॥ 40 ॥ 9-97-40

मन्त्रार्थ :- अक्रान् = आक्रान्त किया **समुद्रः** = समुद्र **प्रथमे** = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले **प्रजा** = सन्तति, प्रजा **भुवनस्य** = भुवन का, होने वाले का, वर्तमान का **गोपाः** = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक **वृषा** = पराक्रमी **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **सानो** = दानी, सेवक **अय्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **वावृधे** = वृद्धि किया **सुवान** = स्वान **इन्दुः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला ॥ 40 ॥

पदार्थ :- अक्रान् = आक्रान्त किया (अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अ = नहीं, उपसर्ग, क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना)। **समुद्रः** = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **प्रथमे** = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **प्रजा** = सन्तति, प्रजा (प्र - प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न करना)। **भुवनस्य** = भुवन का, होने वाले का, वर्तमान का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **गोपाः** = रक्षक, गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के पालक-रक्षक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पवित्रे** = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना,

रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सानो** = दानी, सेवक (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **अव्ये** = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वावृधे** = वृद्धि किया (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **सुवान** = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। **इन्दुः** = अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) ॥ 40 ॥

1255. महत् तत् सोमो महिषः चकारः, अपाम् यत् गर्भो अवृणीत देवान्।

अदधात् इन्द्रे पवमानः ओजो, अजनयत् सूर्ये ज्योतिः इन्दुः ॥ 41 ॥ 9-97-41

मन्त्रार्थ :- महत् = महान् तत् = वह, उस को **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **महिषः** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **चकारः** = किया (कृ = करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गर्भो** = गर्भ (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **अवृणीत** = वरण किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृ = वरण करना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अदधात्** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना)। **इन्द्रे** = परम ऐश्वर्यशाली में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ओजो** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **अजनयत्** = उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना)। **सूर्ये** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले में (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 41 ॥

पदार्थ :- महत् = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **महिषः** = महिष, महिमावान्, महान्, पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **चकारः** = किया (कृ = करना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **गर्भो** = गर्भ (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **अवृणीत** = वरण किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृ = वरण करना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अदधात्** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना)। **इन्द्रे** = परम ऐश्वर्यशाली में (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ओजो** = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीना, बढ़ना)। **अजनयत्**

= उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न करना)। **सूर्ये** = सूर्य, उत्पन्न करने वाले में (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना) ॥

1256. मत्सि वायुम् इष्टये राधसे च, मत्सि मित्रावरुणा पूयमानः ।

मत्सि शर्धो मारुतम् मत्सि देवान्, मत्सि द्यावापृथिवी देव सोम ॥ 42 ॥ 9-97-42

मन्त्रार्थ :- **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो **वायुम्** = वायु को **इष्टये** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि के लिए **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो **च** = और। **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो **शर्धो** = विजय, शर्द्ध, बल **मारुतम्** = मरणशील सम्बन्धी, मारुतों को **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो **द्यावापृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी **देव** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम ॥ 42 ॥

पदार्थ :- **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वायुम्** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **इष्टये** = विद्या, इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **राधसे** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करते हो (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **च** = और। **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **शर्धो** = विजय, शर्द्ध, बल (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **मारुतम्** = मरणशील सम्बन्धी, मारुतों को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मत्सि** = तृप्त होते हो, हर्षित होते हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **द्यावापृथिवी** = अग्रगामी विस्तार, प्रकाश, द्यावा और पृथिवी (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना, पृथु = विस्तार होना, फेंकना, उड़ाना, भेजना, प्रेरणा करना)। **देव** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 42 ॥

1257. अभि वायुम् वीति अर्षा गृणानो, अभि मित्रावरुणा पूयमानः ॥

अभी नरम् धीजवनम् रथेष्ठाम्, अभि इन्द्रम् वृषणम् वज्रबाहुम् ॥ 49 ॥ 9-97-49

मन्त्रार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **वायुम्** = वायु को **वीति** = गति, व्याप्ति, प्रकाश **अर्षा**

= अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **गृणानो** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ **अभी** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **नरम्** = नर को **धीजवनम्** = धारण योग्य विद्वान्, धारण करने वाले सेवाशील को **रथेष्ठाम्** = महारथी को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **वृषणम्** = पराक्रमी को **वज्रबाहुम्** = वज्रबाहु को ॥ 49 ॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वायुम्** = वायु को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वीति** = गति, व्याप्ति, प्रकाश (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **अर्षा** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **गृणानो** = वाणी, बोध, अभिसिंचन करने वाले (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अभी** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नरम्** = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **धीजवनम्** = धारण योग्य विद्वान्, धारण करने वाले सेवाशील को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना, जु - जाना, वेग से जाना, दौड़ना, जल्दी जाना, भागना, वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। **रथेष्ठाम्** = महारथी को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वज्रबाहुम्** = वज्रबाहु को (वज् - गति करना, जाना, बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना) ॥ 49 ॥

1258. अभि वस्त्रा सुवसनानि अर्ष, अभि धेनूः सुदुघाः पूयमानः ।

अभि चन्द्रा भर्त्तवे नो हिरण्या, अभि अश्वान् रथिनो देव सोम ॥ 50 ॥ 9-97-50

मन्त्रार्थ :- **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को **वस्त्रा** = वस्त्र **सुवसनानि** = श्रेष्ठ वास करने वाले **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को **धेनूः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले **सुदुघाः** = सुदुघा, दानी **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को **चन्द्रा** = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक **भर्त्तवे** = भरण, पोषण, भरण-पोषण के लिए **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **हिरण्या** = हिरण्य, प्रकाशमान **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को **अश्वान्** = शीघ्रगामी, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को **रथिनो** = रथी **देव** = विद्वान्, तेजस्वी, देव **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम ॥ 50 ॥

पदार्थ :- **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वस्त्रा** = वस्त्र (वस्त - प्रेरणा करना, प्रातः होना, प्रभात होना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सुवसनानि** = श्रेष्ठ वास करने वाले (सू- भेजना, उड़ाना, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सु - अच्छा, सुन्दर, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अर्ष** =

अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **धेनूः** = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। **सुदुघाः** = सुदुघा, दानी (सु - सुन्दर, अच्छा, दा, दद = देना)। **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **चन्द्रा** = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक (चन्द्र - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना)। **भर्तवे** = भरण, पोषण, भरण-पोषण के लिए (भृ = भरण, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **हिरण्या** = हिरण्य, प्रकाशमान (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। **अभि** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अश्वान्** = शीघ्रगामी, अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **रथिनो** = रथी (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **देव** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना) ॥ 50 ॥

1259. अभी नो अर्ष दिव्या वसूनि, अभि विश्वा पार्थिवा पूयमानः ।

अभि येन द्रविणम् अश्नवाम, अभि आर्षेयम् जमदग्निवत् नः ॥ 51 ॥ 9-97-51

मन्त्रार्थ :- **अभी** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **दिव्या** = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **वसूनि** = वसुओं को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **पार्थिवा** = पार्थिव, पृथ्वी का **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **येन** = जिससे, जिसके द्वारा **द्रविणम्** = द्रविण को, द्रवित होने वाले को, प्रवाही को, ज्ञानी को, द्रवणशील, प्रवाहमान को **अश्नवाम** = व्याप्त, भोजन हो सके **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **आर्षेयम्** = ऋषिकृत को **जमदग्निवत्** = अग्नि-भोज युक्त **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 51 ॥

पदार्थ :- **अभी** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **दिव्या** = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **वसूनि** = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **पार्थिवा** = पार्थिव, पृथ्वी का (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना)। **पूयमानः** = पवित्रता युक्त, रक्षित करता हुआ (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **येन** = जिससे, जिसके द्वारा (सर्वनाम)। **द्रविणम्** = द्रविण को, द्रवित होने वाले को, प्रवाही को, ज्ञानी को, द्रवणशील, प्रवाहमान को (द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **अश्नवाम** = व्याप्त, भोजन हो सके (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **आर्षेयम्** = ऋषिकृत को (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **जमदग्निवत्** = अग्नि-भोज युक्त (जम् = खाना, निगलना, अग् = ऊर्ध्व गति करना, अग्रणी होना, तेजस्वी होना, चमकना, जानना, पहुँचना, पाना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा

1260. अया पवा पवस्व एना वसूनि, माँश्चत्वे इन्दो सरसि प्र धन्व ।**ब्रध्नः चित् यस्य वातो न जूतः, पुरुमेधाः चित् तकवे नरम् दात् ॥ 52 ॥ 9-97-52**

मन्त्रार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा पवा = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला पवस्व = पवित्र करो एना = प्रकाशित करने वाले वसूनि = वसुओं को माँश्चत्वः = ज्ञान की याचना करने वाला, मान का क्षरण करने वाला, मान का प्रोक्षण करने वाला इन्दो = इन्दु का सरसि = सरस में प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक धन्व = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो ब्रध्नः = बृद्धि चित् = भी, ही। यस्य = जिसका वातो = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक जूतिम् = वेगवान् चंचल पुरुमेधाः = अग्रणी मेधा वाले, अत्यन्त मेधावी चित् = भी, ही। तकवे = सहन करने के लिए नरम् = नर को दात् = देने वाला ॥ 52 ॥

पदार्थ :- अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। पवा = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। एना = प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। माँश्चत्वः = ज्ञान की याचना करने वाला, मान का क्षरण करने वाला, मान का प्रोक्षण करने वाला (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना, चत - मांगना, याचना करना, जाना, श्चुत - टपकना, झरना, सींचना, प्रोक्षण करना, छींटा देना)। इन्दो = इन्दु का (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। सरसि = सरस में (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। धन्व = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। ब्रध्नः = बृद्धि (बृध् - बढ़ना, वृद्धि होना, वृद्धि करना)। चित् = भी, ही। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। वातो = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। जूतः = वेगवान् चंचल (जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना)। पुरुमेधाः = अग्रणी मेधा वाले, अत्यन्त मेधावी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, मेधा - शीघ्र समझना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। चित् = भी, ही। तकवे = सहन करने के लिए (तक - सहन करना, उपहास करना, ठट्ठा करना)। नरम् = नर को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। दात् = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना) ॥ 52 ॥

1261. उत नः एना पवया पवस्व, अधि श्रुते श्रवाय्यस्य तीर्थे ।**षष्टिम् सहस्रा नैगुतो वसूनि, वृक्षम् न पक्वम् धूनवत् रणाय ॥ 53 ॥ 9-97-53**

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर नः = हमको, हमारे लिए, हमारा एना = प्रकाशित करने वाले पवया = पवित्र द्वारा, पालन-रक्षण द्वारा पवस्व = पवित्र करो अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार श्रुते = श्रुति में श्रवाय्यस्य = श्रवाय्य का, श्रव्य का तीर्थे = तीर्थ, पार करने वाले में षष्टिम् = शक्ति, गणना, षष्टि को सहस्रा = हजार नैगुतो = शब्द, मनन करने, अस्पष्ट बोलने वाला वसूनि = वसुओं को वृक्षम् = वृक्ष को न = नहीं, समान, उपमार्थक पक्वम् = पक्व, पका हुआ, प्रकाश को धूनवत् = कम्पन रणाय = रण, शब्द के लिए ॥ 53 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। एना = प्रकाशित करने वाले (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। पवया = पवित्र द्वारा, पालन-रक्षण द्वारा (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः,

अधिकार (उपसर्ग)। श्रुते = श्रुति में (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। श्रवाय्यस्य = श्रवाय्य का, श्रव्य का (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। तीर्थे = तीर्थ, पार करने वाले में (तृ - तैरना, पार जाना, तीर् - पूर्ण करना, समाप्त करना, पार लगाना)। षष्टिम् = शक्ति, गणना, षष्टि को (षष - शक्ति होना, सामर्थ्य होना, गणना करना, संख्या, सर्वनाम)। सहस्रा = हजार (संख्या)। नैगुतो = शब्द, मनन करने, अस्पष्ट बोलने वाला (निः = बिना, बाहर, निश्चित (अव्यय), गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। वृक्षम् = वृक्ष को (वृक्ष - वरण करना, आच्छादन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पक्वम् = पक्व, पका हुआ, प्रकाश को (पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रकाश करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। धूनवत् = कम्पन (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। रणाय = रण, शब्द के लिए (रण - शब्द करना)।

1262. मही इमे अस्य वृषनाम, शूषे मांश्चत्वे वा पृशने वा वधत्रे,

अस्वापयन् निगुतः स्नेहयत् च, अप अमित्रान् अपाचितो अचेतः ॥ 54 ॥ 9-97-54

मन्त्रार्थ :- मही = महान् इमे = यह, इस, ये अस्य = इसका वृषनाम = शक्तिशाली, पराक्रमी वाले शूषे = उत्पन्न करने वाले मांश्चत्वे = ज्ञान की याचना करने वाला, मान का क्षरण करने वाला, मान का प्रोक्षण करने वाला वा = अथवा पृशने = प्रश्नकर्ता वा = अथवा वधत्रे = वध से बचाने वाला अस्वापयन् = सुलाया निगुतः = शब्द, मनन करने, अस्पष्ट बोलने वाला स्नेहयत् = स्नेह किया च = और। अप = दूर, नीचे, अपकार अमित्रान् = अमित्रों को अपाचितो = दूर, अप्रकाशित, अपरिपक्व, अजीर्ण अचेतः = अचेतन ॥ 54 ॥

पदार्थ :- मही = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। वृषनाम = शक्तिशाली, पराक्रमी वाले (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। शूषे = उत्पन्न करने वाले (शूष - जनना, उत्पन्न करना, प्रसूत होना, शुष - शुष्क होना, सूखना)। मांश्चत्वे = ज्ञान की याचना करने वाला, मान का क्षरण करने वाला, मान का प्रोक्षण करने वाला (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना, चत - मांगना, याचना करना, जाना, श्रुत - टपकना, झरना, सींचना, प्रोक्षण करना, छींटा देना)। वा = अथवा (अव्यय)। पृशने = प्रश्नकर्ता (पृश् = प्रश्न करना, पूँछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सींचना, सहन करना)। वा = अथवा (अव्यय)। वधत्रे = वध से बचाने वाला (वध्-हन् = मारना, त्रा - त्रै - संरक्षण करना, पोषण करना, बचाना)। अस्वापयन् = सुलाया (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, स्वप - सोना, निद्रा लेना)। निगुतः = शब्द, मनन करने, अस्पष्ट बोलने वाला (निः = बिना, बाहर, निश्चित (अव्यय), गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। स्नेहयत् = स्नेह किया (स्निह - प्रीति करना, स्नेह करना, मित्रता करना, स्निग्ध होना)। च = और। अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। अमित्रान् = अमित्रों को (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। अपाचितो = दूर, अप्रकाशित, अपरिपक्व, अजीर्ण (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), चि - ढूँढ़ना, बटोरना, एकत्र करना, पच - व्यक्त करना, प्रकाश करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना, पच - पकाना)। अचेतः = अचेतन (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, चित् - चेतन होना) ॥ 54 ॥

1263. त्वया वयम् पवमानेन सोम, भरे कृतम् वि चिनुयाम शश्वत् ।

तत् नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम्, अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥ 58 ॥ 9-97-58

मन्त्रार्थ - त्वया = तुम्हारे द्वारा, तुमसे वयम् = हम, हम सब, हम लोग पवमानेन = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम भरे = भरण करते हैं कृतम् = कृतित्व, किया हुआ वि = विशेष, विना, विलोम चिनुयाम = चुनते हो शश्वत् = शश्वत तत् = वह, उस को नो = हमको, हमारे लिए, हमारा मित्रो = मित्र

वरुणो = वरणीय, वरण करने वाला **मामहन्ताम्** = पूजनीय को, महान् को **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी **सिन्धुः** = समुद्र **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार **उत** = ही, भी, ओर **द्यौः** = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी ॥ 58 ॥

पदार्थ - **त्वया** = तुम्हारे द्वारा, तुमसे (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **पवमानेन** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **भरे** = भरण करते हैं (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **कृतम्** = कृतित्व, किया हुआ (कृ = करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **चिनुयाम** = चुनते हो (चि - चयन करना, ढूँढ़ना, बटोरना, एकत्र करना)। **शश्वत्** = शश्वत (शश्व - नित्य होना, सदैव रहना, शश्वत होना, शाश्वत होना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **वरुणो** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **मामहन्ताम्** = पूजनीय को, महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **अदितिः** = अपनाने योग्य, अक्षय, अविनाशी (अ - नहीं, अद् = खाना, दी = नष्ट होना)। **सिन्धुः** = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिज् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्यौः** = प्रकाशवान्, विद्वान्, द्यौ, प्रकाशयुक्त, अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना, प्रकाश होना, जानना) ॥ 58 ॥

(316) सूक्त 98

1264. अभी नो वाज-सातमम्, रयिम् अर्ष पुरुस्पृहम्।

इन्दो सहस्र-भर्णसम्, तुविद्युन्मन् विभासहम् ॥ 1 ॥

9-98-1

मन्त्रार्थ :- अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा नो = हमको, हमारे लिए, हमारा **वाजसातमम्** = अत्यन्त विद्यावान् को **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन **पुरुस्पृहम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को **इन्दो** = इन्दु का **सहस्र-भर्णसणम्** = सहस्र पूर्णकताओं को, अनेक भरण-पोषण-दानी को **तुविद्युन्मन्** = अत्यन्त प्रकाशमान को **विभासहम्** = विशेष प्रकाश में समर्थ को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वाजसातमम्** = अत्यन्त विद्यावान् को (वाज् - गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **अर्ष** = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् - जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **पुरुस्पृहम्** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **सहस्र-भर्णसणम्** = सहस्र पूर्णकताओं को, अनेक भरण-पोषण-दानी को (सहस्र - हजार, संख्या, भृ - पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **तुविद्युन्मन्** = अत्यन्त प्रकाशमान को (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, मार डालना, पूर्ण करना,

द्युत् - प्रकाशित होना, द्यु - अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। **विभासहम्** = विशेष प्रकाश में समर्थ को (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना, सह - शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना) ॥ 1 ॥

1265. परि स्य सुवानो अक्षरत्, इन्दुः अव्ये मदच्युतः ।

धारा यः ऊर्ध्वो अध्वरे, भ्राजा न याति गव्ययुः ॥ 3 ॥

9-98-3

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ स्य = वह, बन्धन सुवानो = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले अक्षरत् = क्षरित हुआ इन्दुः = इन्दु अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में मदच्युतः = आनन्द-सिंचित धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो यः = जो ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व अध्वरे = अहिंसक में भ्राजा = प्रकाश न = नहीं, समान, उपमार्थक याति = जाता है गव्ययुः = गव्य, शब्द की कामना वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्य = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। सुवानो = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। अक्षरत् = क्षरित हुआ (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। इन्दुः = इन्दु (इन्दु - परम ऐश्वर्य होना)। अव्ये = पालनीय, रक्षणीय, बन्धन में (अव्य - बाँधना, पालन करना, अक् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। मदच्युतः = आनन्द-सिंचित (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। यः = जो (सर्वनाम्)। ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम्)। अध्वरे = अहिंसक में (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। भ्राजा = प्रकाश (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। याति = जाता है (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। गव्ययुः = गव्य, शब्द की कामना वाले (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना) ॥ 3 ॥

1266. वयम् ते अस्य वृत्रहन्, वसोः वसो पुरुस्पृहः ।

नि नेदिष्ठतमाः इषः, स्याम सुम्ने ते अधिगो ॥ 5 ॥

9-98-5

मन्त्रार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अस्य = इसका वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले वसोः = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का वसो = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का पुरुस्पृहः = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले नि = निश्चित, निरन्तर नेदिष्ठतमाः = अत्यन्त निन्दक, अत्यन्त निकट इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि स्याम = हों सुम्ने = उत्तम चिन्तन, ऐश्वर्य, सृजन के लिए ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए अधिगो = धारण किया ॥ 5 ॥

पदार्थ :- वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम्)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम्)। अस्य = इसका (सर्वनाम्)। वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। वसोः = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। वसो = वसु का, वासस्थान तथा वास करने वाले लोगों का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। पुरुस्पृहः = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना, स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। नेदिष्ठतमाः = अत्यन्त निन्दक, अत्यन्त निकट (निद = निन्दा करना, समीप जाना)। इषः = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। स्याम = हों (अस्

- होना)। **सुम्ने** = उत्तम चिन्तन, ऐश्वर्य, सृजन के लिए (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **अधिगो** = धारण किया (अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना) ॥ 5 ॥

1267. द्विः यम् पञ्च स्वयशसम्, स्वसारो अद्रिसंहतम्।

प्रियम् इन्द्रस्य काम्यम्, प्रस्नापयन्ति ऊर्मयः ॥ 6 ॥ 9-98-6

मन्त्रार्थ :- द्विः = दो यम् = जिसे, जिसको, जहाँ पञ्च = पाँच स्वयशसम् = स्वयश, अपनी कीर्ति को स्वसारो = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह अद्रिसंहतम् = अद्रि-संहत को, नाशक का हनन करने वाले को प्रियम् = प्रिय को इन्द्रस्य = इन्द्र का काम्यम् = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को प्रस्नापयन्ते = शुद्ध करते हैं ऊर्मयः = ऊर्मियाँ ॥ 6 ॥

पदार्थ :- द्विः = दो (संख्या)। यम् = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। पञ्च = पाँच (पञ्च - पाँच, संख्या)। स्वयशसम् = स्वयश, अपनी कीर्ति को (स्व = अपना, निज (सर्वनाम), यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। स्वसारो = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुँचाना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना)। अद्रिसंहतम् = अद्रि-संहत को, नाशक का हनन करने वाले को (अ - नहीं, दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना, हन् - मारना)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। काम्यम् = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को (कम - चाहना, इच्छा करना)। प्रस्नापयन्ति = शुद्ध करते हैं (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्ना - स्नान करना, नहाना, शुद्ध होना)। ऊर्मयः = ऊर्मियाँ (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना) ॥ 6 ॥

1268. परि त्यम् हर्यतम् हरि, बभ्रुम् पुनन्ति वारेण।

यो देवान् विश्वान् इत् परि, मदेन सह गच्छति ॥ 7 ॥ 9-98-7

मन्त्रार्थ - परि = सभी तरफ त्यम् = उस को हर्यतम् = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य को हरिम् = हरि को बभ्रुम् = बभ्रु को, भरण-पोषण करने वाले को पुनन्ति = पवित्र करते हैं वारेण = वरणीय, वरण करने वाले द्वारा यो = जो देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को विश्वान् = सभी को इत् = ही परि = सभी तरफ मदेन = मद द्वारा, आनन्द द्वारा सह = साथ, सहित गच्छति = जाता है ॥ 7 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। त्यम् = उस को (सर्वनाम)। हर्यतम् = हर्य, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य को (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। बभ्रुम् = बभ्रु को, भरण-पोषण करने वाले को (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। पुनन्ति = पवित्र करते हैं (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। वारेण = वरणीय, वरण करने वाले द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। यो = जो (सर्वनाम)। देवान् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। विश्वान् = सभी को (विश् = भीतर जाना, सभी तरह फैलना)। इत् = ही (अव्यय)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। मदेन = मद द्वारा, आनन्द द्वारा (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। सह = साथ, सहित (सर्वनाम)। गच्छति = जाता है (गम्-गच्छ् = जाना) ॥ 7 ॥

1269. इन्द्राय सोम पातवे, वृत्रघ्ने परि षिच्यसे।

नरे च दक्षिणावते, वीराय सदानासदे ॥ 10 ॥

9-98-10

मन्त्रार्थ :- इन्द्राय = इन्द्र के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पातवे = पालन करने वाले के लिए वृत्रघ्ने

= वृत्र-हनन करने वाले, वृत्रों का नाश करने वाले **परि** = सभी तरफ **षिच्यसे** = सिञ्चन करता है **नरे** = नर में **च** = और। **दक्षिणावते** = दक्षिणावत **वीराय** = वीर के लिए **सदनासदे** = सदन, स्थान में बैठने वाले ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पातवे** = पालन करने वाले के लिए (पा = रक्षा करना, पालन करना)। **वृत्रघ्ने** = वृत्र-हनन करने वाले, वृत्रों का नाश करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - मारना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **षिच्यसे** = सिञ्चन करता है (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **नरे** = नर में (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **च** = और। **दक्षिणावते** = दक्षिणावत (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **वीराय** = वीर के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **सदनासदे** = सदन, स्थान में बैठने वाले (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 10 ॥

1270. तम् सखायः पुरोरुचम्, यूयम् वयम् च सूरयः ।

अश्याम वाजगन्ध्यम्, सनेम वाजः पत्यम् ॥ 12 ॥ 9-98-12

मन्त्रार्थ :- **तम्** = उसको, उसे **सखायः** = मित्र **पुरोरुचम्** = अधिक रुचि को, बहुत प्रकाश को **यूयम्** = तुम दोनों **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग **च** = और **सूरयः** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् **अश्याम** = अशन करते हैं, व्याप्त, व्यापक, प्राप्त करते हैं **वाजगन्ध्यम्** = वाज-गन्धी को, विद्या-भासित, गति-शोभी को **सनेम** = सेवा, दान, पूजा करें **वाजः** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **पत्यम्** = ऐश्वर्यवान् को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **सखायः** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **पुरोरुचम्** = अधिक रुचि को, बहुत प्रकाश को (पुरुः = बहुत (सर्वनाम), रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **यूयम्** = तुम दोनों (सर्वनाम)। **वयम्** = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। **च** = और (अव्यय)। **सूरयः** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अश्याम** = अशन करते हैं, व्याप्त, व्यापक, प्राप्त करते हैं (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **वाजगन्ध्यम्** = वाज-गन्धी को, विद्या-भासित, गति-शोभी को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, गन्ध् = गन्ध होना, शोभित होना, मांगना, जाना)। **सनेम** = सेवा, दान, पूजा करें (सन - सेवा करना, चाकरी करना, सन - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **वाजः** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पत्यम्** = ऐश्वर्यवान् को (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना) ॥ 12 ॥

(317) सूक्त 99

1271. आ हर्यताय धृष्णवे, धनुः तन्वन्ति पौंस्यम् ।

शुक्राम् वि यन्ति असुराय, निर्णिजे विपाम् अग्रे महीयुवः ॥ 1 ॥ 9-99-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **हर्यताय** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले के लिए, हरण करने वाले के लिए **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए **धनुः** = धनवान्, गतिकारक **तन्वन्ति** = विस्तार

करते हैं **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को **शुक्राम्** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी **वि** = विशेष, विना, विलोम **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं **असुराय** = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश देने वाले के लिए **निर्णिजे** = निरन्तर शुद्ध करने के लिए **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले **महीयुवः** = पूजनीय युव, महीयुव, महिमावान् युव ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हर्यताय** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले के लिए, हरण करने वाले के लिए (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **धृष्णवे** = विजय, गर्व के लिए (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **धनुः** = धनवान्, गतिकारक (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **तन्वन्ति** = विस्तार करते हैं (तन्-तनु = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **पौंस्यम्** = बढ़ाने वाले को (पुंस - बढ़ना, बढ़ाना। पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **शुक्राम्** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **यन्ति** = प्राप्त होते हैं, नियमन-नियन्त्रण करते हैं (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचाना, जानना)। **असुराय** = असुर, ऐश्वर्यहीन, उत्पन्न-सृजन नहीं करने वाला, प्रकाश देने वाले के लिए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **निर्णिजे** = निरन्तर शुद्ध करने के लिए (नि - निश्चित, निरन्तर (उपसर्ग), निज्-निज्ज् - शुद्ध करना, निर्मल करना)। **विपाम्** = विशेष अर्चना करने वाले को, विशेष रक्षक, पालक को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पन - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **महीयुवः** = पूजनीय युव, महीयुव, महिमावान् युव (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना) ॥ 1 ॥

1272. अध क्षपा परिष्कृतो, वाजान् अभि प्र गाहते ।

यदी विवस्वतो धियो, हरिम् हिन्वन्ति यातवे ॥ 2 ॥

9-99-2

मन्त्रार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर **क्षपा** = प्रेरक, सहनशील, संयमी **परिष्कृतो** = परिष्कृत, परिष्कार किया हुआ **वाजान्** = वाजो को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गाहते** = विलोड़न करता है **यदी** = यदि **विवस्वतो** = विशेष वास वाले **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि **हरिम्** = हरि को **हिन्वन्ति** = संतृप्त करते हैं **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **क्षपा** = प्रेरक, सहनशील, संयमी (क्षप = प्रेरणा करना, भेजना, सहन करना, हूकना, संयमी होना)। **परिष्कृतो** = परिष्कृत, परिष्कार किया हुआ (परिः - सब ओर, कृ - करना)। **वाजान्** = वाजो को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गाहते** = विलोड़न करता है (गाह - नष्ट करना, मर्म भेद करना, फेरना, हिलाना, गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **यदी** = यदि (अव्यय)। **विवस्वतो** = विशेष वास वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, वास - वासित करना, सुगन्धित करना, धूपित करना, धूप देना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना,

कतरना, लेना)। **धियो** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **हरिम्** = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **हिन्वन्ति** = संतुष्ट करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **यातवे** = प्राप्ति के लिए, प्रगति के लिए, यत्न के लिए (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचाना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना) ॥ 2 ॥

1273. तम् अस्य मर्जयामसि, मदो यः इन्द्रपातमः ।

यम् गावः आसभिः दधुः, पुरा नूनम् च सूरयः ॥ 3 ॥

9-99-3

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे **अस्य** = इसका **मर्जयामसि** = शुद्ध करते हो **मदो** = मद, हर्ष, तृप्ति **यः** = जो **इन्द्रपातमः** = परम ऐश्वर्यशाली पालक **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **गावः** = शब्द, वाणी, वचन **आसभिः** = बैठने का साधनों, स्थानों द्वारा, विद्यमानों द्वारा **दधुः** = धारण किया **पुरा** = पहले **नूनम्** = निश्चय ही **च** = और **सूरयः** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् ॥ 3 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **मर्जयामसि** = शुद्ध करते हो (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **मदो** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **इन्द्रपातमः** = परम ऐश्वर्यशाली पालक (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, पा = रक्षा करना, पालन करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **गावः** = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **आसभिः** = बैठने का साधनों, स्थानों द्वारा, विद्यमानों द्वारा (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **दधुः** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **पुरा** = पहले (अव्यय)। **नूनम्** = निश्चय ही (अव्यय)। **च** = और (अव्यय)। **सूरयः** = उत्पन्न कर्ता, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 3 ॥

1274. तम् गाथया पुराण्या, पुनानम् अभि अनूषत ।

उत उ कृपन्त धीतयो, देवानाम् नाम विभ्रतीः ॥ 4 ॥

9-99-4

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे **गाथया** = गाथा द्वारा **पुराण्या** = पुराण, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी द्वारा **पुनानम्** = पवित्रकर्ता को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **अनूषत** = स्तुति की **उत** = ही, भी, ओर **उ** = निश्चय ही, भी **कृपन्त** = कृपा, दया करती हैं **धीतयो** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले **देवानाम्** = देवों का **नाम** = नाम वाले **विभ्रतीः** = भरण, धारण करती हुई ॥ 4 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। **गाथया** = गाथा द्वारा (गाथ - प्रतिष्ठा होना, ग्रन्थ बनाना, कथा सुनना, गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **पुराण्या** = पुराण, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी द्वारा (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **पुनानम्** = पवित्रकर्ता को (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **अनूषत** = स्तुति की (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **कृपन्त** = कृपा, दया करती हैं (कृप - कृपा करना, दया करना, कल्पना करना, विचार करना)। **धीतयो** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **विभ्रतीः** = भरण, धारण करती हुई (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना) ॥ 4 ॥

(318) सूक्त 100

1275. अभी नवन्ते अद्रुहः, प्रियम् इन्द्रस्य काम्यम्।

वत्सम् न पूर्वं आयुनि, जातम् रिहन्ति मातरः ॥ 1 ॥

9-100-1

मन्त्रार्थ - अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा नवन्ते = स्तुति करते हैं अद्रुहः = अद्रोही, द्रोह न करने वाला प्रियम् = प्रिय इन्द्रस्य = इन्द्र का काम्यम् = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को वत्सम् = बोलने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक पूर्वं = पूर्व, पहले आयुनि = आयु से, जीवन द्वारा, जीवन से जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को रिहन्ति = स्तुति, दान करते हैं मातरः = माता ॥ 1 ॥

पदार्थ - अभी = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। नवन्ते = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। अद्रुहः = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना)। प्रियम् = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। इन्द्रस्य = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। काम्यम् = कमनीय, कामना, इच्छा योग्य को (कम - चाहना, इच्छा करना)। वत्सम् = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पूर्वं = पूर्व, पहले (सर्वनाम)। आयुनि = आयु से, जीवन द्वारा, जीवन से (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। रिहन्ति = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। मातरः = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) ॥ 1 ॥

1276. पवस्व वाजसातमः, पवित्रे धारया सुतः।

इन्द्राय सोम विष्णवे, देवेभ्यो मधुमत्तमः ॥ 6 ॥

9-100-6

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो वाजसातमः = विद्यावान् के लिए पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र धारया = धार द्वारा सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए इन्द्राय = परम ऐश्वर्यशाली के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम विष्णवे = व्यापक के लिए देवेभ्यो = देवों के लिए मधुमत्तमः = अधिक मधुयुक्त ॥ 6 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। वाजसातमः = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। सुतः = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। इन्द्राय = परम ऐश्वर्यशाली के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। विष्णवे = व्यापक के लिए (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना)। देवेभ्यो = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। मधुमत्तमः = अधिक मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 6 ॥

1277. त्वाम् रिहन्ति मातरो, हरिम् पवित्रे अद्रुहः।

मन्त्रार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी रिहन्ति = स्तुति, दान करते हैं मातरो = माता हरिम् = हरि को पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अद्रुहः = अद्रोही, द्रोह न करने वाला वत्सम् = बोलने वाले को जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को न = नहीं, समान, उपमार्थक धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला विधर्मणि = विधर्म में, विशेष धारण में ॥ 7 ॥

पदार्थ :- त्वाम् = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। रिहन्ति = स्तुति, दान करते हैं (रिह - कहना, प्रशंसा करना, दान करना, युद्ध करना, निन्दा करना, हिंसा करना)। मातरो = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अद्रुहः = अद्रोही, द्रोह न करने वाला (द्रुह - द्रोह करना)। वत्सम् = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। जातम् = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। धेनवः = धेनु, प्रिय, पालन करने वाले (धिन - प्रेम करना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, धी - बुद्धि होना, धे - पालना, पीना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। विधर्मणि = विधर्म में, विशेष धारण में (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना) ॥ 7 ॥

1278. त्वम् द्याम् च महिब्रत, पृथिवीम् च अति जग्निषे ।

प्रति द्रापिम् अमुञ्चथाः, पवमान महित्वना ॥ 9 ॥

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय च = और। महिब्रत = हे महान् ब्रत वाले पृथिवीम् = पृथिवी को च = और। अति = भी, निकट जग्निषे = पोषण करता है, विनोद करता है प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में द्रापिम् = हर्ष, आनन्द, गर्व को अमुञ्चथाः = मोचित किया पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला महित्वना = महित्व द्वारा ॥ 9 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। द्याम् = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। च = और। महिब्रत = हे महान् ब्रत वाले (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना, वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। पृथिवीम् = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भोजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। च = और। अति = भी, निकट (अव्यय)। जग्निषे = पोषण करता है, विनोद करता है (जग् - परिहास करना, विनोद करना, मैथुन करना, भृ - भरण करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। द्रापिम् = हर्ष, आनन्द, गर्व को (द्रृप् = हर्ष होना, गर्व होना, द्रा - भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना)। अमुञ्चथाः = मोचित किया (अ - नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, मुञ्च् - घर्षण करना, मोचन करना, त्यागना, ऐश्वर्य होना, प्रसन्न होना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। महित्वना = महित्व द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 9 ॥

(319) सूक्त 101

1279. पुरोजिती वो अन्धसः, सुताय मादयित्वे ।

अप श्वानम् श्नथिष्टन, सखायो दीर्घजिह्वम् ॥ 1 ॥

मन्त्रार्थ :- पुरोजिती = पुरोजित, अग्र विजेता वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको,

तुम लोग **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से **सुताय** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए के लिए **मादयित्वे** = आनन्द प्राप्त के लिए, हर्ष, तृप्ति प्रदान के लिए **अप-श्वानम्** = निम्नगामी, अधोगामी को **शनथिष्टन** = नष्ट करो **सखायो** = मित्र **दीर्घजिह्वम्** = दीर्घजिह्वा को, प्रगतिशील, विद्वान् को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **पुरोजिती** = पुरोजित, अग्र विजेता (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **अन्धसः** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **सुताय** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए के लिए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मादयित्वे** = आनन्द प्राप्त के लिए, हर्ष, तृप्ति प्रदान के लिए (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, तृप्त करना, समाधान करना)। **अप-श्वानम्** = निम्नगामी, अधोगामी को (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), शव-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **शनथिष्टन** = नष्ट करो (शनथ - हिंसा करना, मारना)। **सखायो** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **दीर्घजिह्वम्** = दीर्घजिह्वा को, प्रगतिशील, विद्वान् को (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना, जिह = जाना, जानना, पाना) ॥ 1 ॥

1280. यो धारया पावकया, परि प्रस्यन्दते सुतः ।

इन्दुः अश्वो न कृत्यः ॥ 2 ॥ 9-101-2

मन्त्रार्थ :- **यो** = जो **धारया** = धार द्वारा **पावकया** = पावक द्वारा, पवित्रकर्ता द्वारा, पवित्र करने वाले द्वारा **परि** = सभी तरफ **प्रस्यन्दते** = सींचता है **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **इन्दुः** = इन्दु **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **कृत्यः** = कर्तव्य ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **यो** = जो (सर्वनाम)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **पावकया** = पावक द्वारा, पवित्रकर्ता द्वारा, पवित्र करने वाले द्वारा (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रस्यन्दते** = सींचता है (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, स्यन्द = टपकना, झरना, चूना, सींचना, छींटा देना, जाना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इन्दुः** = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **अश्वो** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **कृत्यः** = कर्तव्य (कृ - करना) ॥ 2 ॥

1281. तम् दुरोषम् अभी नरः, सोमम् विश्वाच्या धिया ।

यज्ञम् हिन्वन्ति अद्रिभिः ॥ 3 ॥ 9-101-3

मन्त्रार्थ :- **तम्** = उसको, उसे **दुरोषम्** = दुर्दाह को, अत्यधिक हिंसा को **अभी** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **नरः** = नर **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को **विश्वाच्या** = विश्वाची द्वारा, सबका आदर करने वाले द्वारा **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा **यज्ञम्** = यजन को **हिन्वन्ति** = संतृप्त करते हैं **अद्रिभिः** = अद्रियों के लिए, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **दुरोषम्** = दुर्दाह को, अत्यधिक हिंसा को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, उष - हिंसा करना, जलना, रोग होना)। **अभी** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **नरः** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **सोमम्** = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **विश्वाच्या** = सम्पूर्ण याचनाओं को (विश्व = सब, अच - जाना, चलना, आदर करना, मांगना)। **धिया** = धारणा द्वारा, बुद्धि द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **यज्ञम्** = यजन को (यज = देवपूजा,

संगतिकरण, दान करना)। **हिन्वन्ति**= संतुष्ट करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों के लिए, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)॥ 3 ॥

1282. सुतासो मधुमत्तमाः, सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।

पवित्र वन्तो अक्षरन्, देवान् गच्छन्तु वो मदाः ॥ 4 ॥ 9-101-4

मन्त्रार्थ - **सुतासो** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **मधुमत्तमाः** = अत्यन्त मधुयुक्त **सोमा** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **मन्दिनः** = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान हों **पवित्रवन्तोः** = पवित्रवान् **अक्षरन्** = क्षरित हुए **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को **गच्छन्तु** = जाओ, जाये **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग **मदाः** = मद, हर्ष, तृप्ति ॥ 4 ॥

पदार्थ - **सुतासो** = सन्तान, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **मधुमत्तमाः** = अत्यन्त मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **सोमा** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मन्दिनः** = आनन्दस्वरूप, प्रकाशमान हों (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **पवित्रवन्तोः** = पवित्रवान् (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अक्षरन्** = क्षरित हुए (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, क्षर - संचलन होना, टपकना, झरना, बहना, क्षरण होना, अनुपयुक्त होना)। **देवान्** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **गच्छन्तु** = जाओ, जाये (गम्, गच्छ् = जाना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मदाः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 4 ॥

1283. इन्दुः इन्द्राय पवते, इति देवासो अब्रुवन् ।

वाचः पतिः मखस्यते, विश्वस्य ईशान ओजसः ॥ 5 ॥ 9-101-5

मन्त्रार्थ :- **इन्दुः** = इन्दु **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार **देवासो** = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण **अब्रुवन्** = बोले **वाचः** = वाणी **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी **मखस्यते** = प्रगति करते हैं **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का **ईशान** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला **ओजसः** = ओज द्वारा ॥ 5 ॥

पदार्थ :- **इन्दुः** = इन्दु (इन्द्र - परम ऐश्वर्य होना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्द्र-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **इति** = ऐसा, यह, इसी प्रकार (अव्यय)। **देवासो** = विद्वान्, दिव्यगुणी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अब्रुवन्** = बोले (अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वद् - बोलना)। **वाचः** = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **मखस्यते** = प्रगति करते हैं (मख - जाना, स्थानान्तर करना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **ईशान** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **ओजसः** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना) ॥ 5 ॥

1284. सहस्रधारः पवते, समुद्रो वाचम् ईङ्खयः ।

सोमः पतीः रयीणाम्, सखा इन्द्रस्य दिवे दिवे ॥ 6 ॥ 9-101-6

मन्त्रार्थ :- सहस्रधारः = हजारों धाराओं वाला **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **समुद्रो** = समुद्र **वाचम्** = वाणी को **ईड्खयः** = प्रगतिशील, प्रेरक **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पतीः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी **रयीणाम्** = विद्या गतिशीलता के लिए **सखा** = मित्र **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का **दिवे** = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में **दिवे** = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सहस्रधारः = हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः - धारा होना, धार बाँधना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **समुद्रो** = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **वाचम्** = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन = होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **दिवे** = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) ॥ 6 ॥

1285. अयम् पूषा रयिः भगः, सोमः पुनानो अर्षति ।

पतिः विश्वस्य भूमनो, व्यख्यत् रोदसी उभे ॥ 7 ॥

9-101-7

मन्त्रार्थ - अयम् = यह **पूषा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता **रयिः** = विद्या, ज्ञान **भगः** = भग, सेवा, सेवित, सेवनीय **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **पुनानो** = पवित्रकर्ता **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का **भूमनो** = उत्पत्ति **व्यख्यत्** = व्याख्यान किया **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **उभे** = दोनों, पूर्णता ॥ 7 ॥

पदार्थ - अयम् = यह (सर्वनाम)। **पूषा** = पोषण करने वाला, पोषणकर्ता (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **रयिः** = विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **भगः** = भग, सेवा, सेवित, सेवनीय (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान्, स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **विश्वस्य** = विश्व का, सभी का (सर्वनाम)। **भूमनो** = उत्पत्ति (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **व्यख्यत्** = व्याख्यान किया (वि - विशेष, अख्यन्, ख्या = कहना, व्याख्यान करना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना) ॥ 7 ॥

1286. सम् उ प्रियाः अनूषत, गावो मदाय घृष्यः ।

सोमासः कृण्वते पथः, पवमानासः इन्दवः ॥ 8 ॥

9-101-8

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति **उ** = निश्चय ही, भी **प्रियाः** = प्रिय **अनूषत** = अनुताप किया **गावो** = शब्द, वाणी, वचन **मदाय** = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए **घृष्यः** = संघर्षशील, प्रकाश करने वाले **सोमासः** = अनेक ऐश्वर्यमय **कृण्वते** = करते हैं **पथः** = पथ **पवमानासः** = अनेक पवमान, पवित्र करते हुए, पालन-रक्षा करते हुए **इन्दवः**

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। प्रियाः = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। अनूषत = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष - ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। गावो = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। मदाय = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। घृष्यः = संघर्षशील, प्रकाश करने वाले (घृष - पीसना, कूटना, घिसना, घृ - गीला करना, तरडा देना, सींचना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, घृ - टपकना, क्षरित होना, चमकना, प्रकाशित होना)। सोमासः = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। कृण्वते = करते हैं (कृ = करना)। पथः = पथ (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। पवमानासः = अनेक पवमान, पवित्र करते हुए, पालन-रक्षा करते हुए (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। इन्दवः = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना) ॥ ८ ॥

1287. य ओजिष्ठः तम आ भर, पवमान श्रवाय्यम्।

यः पञ्च चर्षणीः अभि, रयिम् येन वनामहे ॥ ९ ॥

9-101-9

मन्त्रार्थ :- यः = जो ओजिष्ठः = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् तम = अन्धकार, इच्छा, दुःख आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला श्रवाय्यम् = श्रवाय्य को, श्रव्य को यः = जो पञ्च = पाँच चर्षणीः = आनन्द, चेतना, विचार अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा रयिम् = विद्या, ज्ञान को येन = जिससे, जिसके द्वारा वनामहे = शब्द करते हैं ॥ ९ ॥

पदार्थ :- यः = जो (सर्वनाम)। ओजिष्ठः = ओजस्थ, अतिशय ओजयुक्त, ओजवान् (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। तम = अन्धकार, इच्छा, दुःख (तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। श्रवाय्यम् = श्रवाय्य को, श्रव्य को (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। यः = जो (सर्वनाम)। पञ्च = पाँच (पञ्च - पाँच, संख्या)। चर्षणीः = आनन्द, चेतना, विचार (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रयि-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा वनामहे = शब्द करते हैं (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना) ॥ ३ ॥

1288. सोमाः पवन्त इन्दवो, अस्मभ्यम् गातुवित्तमाः।

मित्राः सुवाना अरेपसः, स्वाध्यः स्वर्विदः ॥ १० ॥ 9-101-10

मन्त्रार्थ :- सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पवन्ते = पवित्र करते हैं, पालन करते हैं, रक्षा करते हैं इन्दवो = इन्दुगण अस्मभ्यम् = हमारे लिए गातुवित्तमाः = स्तुति जानने वाले, गान, गायन को जानने वाले मित्राः = मित्र सुवाना = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले अरेपसः = अहिंसक, गमनीय, रेणु-हीन, हिंसा, गति, व्यापकता स्वाध्यः = उत्तम विचारशील, उत्तम ध्यान करने वाले स्वः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् विदः = विद्वान् ॥ १० ॥

पदार्थ :- सोमाः = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। पवन्ते

= पवित्र करते हैं, पालन करते हैं, रक्षा करते हैं (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **इन्दवो** = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **गातुवित्तमाः** = स्तुति जानने वाले, गान, गायन को जानने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना, विद् = जानना)। **मित्राः** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **सुवाना** = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। **अरेपसः** = अहिंसक, गमनीय, रेणु-हीन, हिंसा, गति, व्यापकता (ऋ - अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, ऋ = जाना, पाना, मिलाना, अ - नहीं, रिण - शब्द करना, चूर्ण होना, अल्प होना, रेप - जाना, शब्द करना, रि-हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **स्वाध्यः** = उत्तम विचारशील, उत्तम ध्यान करने वाले (सु - उत्तम, अच्छा, आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, ध्यै - ध्यान करना, चिन्तन करना, मनन करना, विचार करना)। **स्वः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत् (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **विदः** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 10 ॥

1289. सुष्वाणासो वि अद्रिभिः, चिताना गौः अधि त्वचि।

इषम् अस्मभ्यम् अभितः, समस्वरन् वसुविदः ॥ 11 ॥

9-101-11

मन्त्रार्थ :- सुष्वाणासो = उत्पन्नकर्ता **वि** = विशेष, विना, विलोम **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा **चिताना** = चेतन, चुना गया, एकत्र करने वाले **गौः** = शाब्दिक, मननशील, उपदेशक **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **त्वचि** = त्वचा में **इषम्** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **अभितः** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए **वसुविदः** = वसुविद ॥ 11 ॥

पदार्थ :- सुष्वाणासो = उत्पन्नकर्ता (सुष-सूष-सुस - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा (द्रु - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **चिताना** = चेतन, चुना गया, एकत्र करने वाले (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **गौः** = शाब्दिक, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **त्वचि** = त्वचा में (त्वच - आच्छादित करना, लपेटना, ढांकना)। **इषम्** = इच्छा, प्रगति, प्राप्ति, ज्ञान, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **अभितः** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (सर्वनाम)। **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, स्तु-स्वर् = शब्द करना, गम् - जाना)। **वसुविदः** = वसुविद (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना) ॥ 11 ॥

1290. एते पूतासो विपश्चितः, सोमासो दधि आशिरः।

सूर्यासो न दर्शतासो, जिगत्नवो ध्रुवा घृते ॥ 12 ॥

9-101-12

मन्त्रार्थ :- एते = यह **पूतासो** = पवित्रता युक्त, रक्षित **विपश्चितः** = विशेष दृष्टियुक्त **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय **दधि** = धारण करें **आशिरः** = आशिर, शीर्षस्थ **सूर्यासो** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **दर्शतासो** = दर्शन देने वाले, दर्शित, दर्शनीय, दिखाने वाले **जिगत्नवो** = गमनशील **ध्रुवा** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् **घृते** = प्रकाशमान में ॥ 12 ॥

पदार्थ :- एते = यह (सर्वनाम)। **पूतासो** = पवित्रता युक्त, रक्षित (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **विपश्चितः** = विशेष दृष्टियुक्त (वि - विशेष, पश् - देखना)। **सोमासो** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना,

सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **दधि** = धारण करें (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **आशिरः** = आशिर, शीर्षस्थ (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शिर् - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना, शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना)। **सूर्यासो** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **दर्शतासो** = दर्शन देने वाले, दर्शत, दर्शनीय, दिखाने वाले (दृश् - देखना)। **जिगत्नवो** = गमनशील (गम् = जाना, जानना, पाना)। **ध्रुवा** = ध्रुव, अचल, स्थिर, अविचल गतिशील, अविचल विद्वान् (ध्रुव = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **घृते** = प्रकाशमान में (घृ - गीला करना, बूंद बूंद गिरना, टपकना, क्षरित होना, सिञ्चन करना, सींचना, टपकना, क्षरण होना, झरना, चमकना, प्रकाश करना, घर्षण होना, नाश होना, शब्द होना) ॥ 12 ॥

1291. प्र सुन्वानस्य अन्धसो, मर्तो न वृत तत् वचः ।

अप श्वानम् अराधसम्, हता मखम् न भृगवः ॥ 13 ॥

9-101-13

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सुन्वानस्य** = सुन्वान के लिए, स्नानवान् के लिए, सवनयुक्त के लिए **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से **मर्तो** = मरणशील **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **वृत** = वरण किया **तत्** = वह, उस को **वचः** = वचन **अप** = दूर, नीचे, अपकार **श्वानम्** = श्वान को, प्रगतिशील को **अराधसम्** = अराधक को, अहिंसक को **हता** = मारा गया **मखम्** = मख को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **भृगवः** = पोषण करने वाले ॥ 13 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सुन्वानस्य** = सुन्वान के लिए, स्नानवान् के लिए, सवनयुक्त के लिए (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **अन्धसो** = प्राणवान्, अन्धकार से (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। **मर्तो** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वृत** = वरण किया (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **श्वानम्** = श्वान को, प्रगतिशील को (श्व-श्वा - जाना, भागना, दौड़ना)। **अराधसम्** = अराधक को, अहिंसक को (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **हता** = मारा गया (हन् - मारना)। **मखम्** = मख को (मख - जाना, स्थानान्तर करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भृगवः** = पोषण करने वाले (भृ - भरण-पोषण, धारण करना, भृज् - भूँजना, तलना, सेंकना, भृग् = चमकना, तेज होना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना) ॥ 13 ॥

1292. आ जामिः अत्के अव्यत, भुजे न पुत्रः ओण्योः ।

सरत् जारो न योषणाम्, वरो न योनिम् आसदम् ॥ 14 ॥ 9-101-14

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **जामिः** = भोजन **अत्के** = सतत गमन वाला **अव्यत** = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है **भुजे** = भक्षण करो, भोग करो **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **पुत्रः** = पुत्र **ओण्योः** = नायक, ले जाने वाला **सरत्** = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह होता है **जारो** = जार, वृद्ध, विजेता **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **योषणाम्** = योषण, सम्बन्ध का **वरो** = वर **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **योनिम्** = योनि को **आसदम्** = सम्यक् बैठने को ॥ 14 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **जामिः** = भोजन (जम् = खाना, निगलना, जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अत्के** = सतत गमन वाला (अत् - जाना, सदैव जाते रहना)। **अव्यत** = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, व्याप्त होना, प्रकाश करना)। **भुजे** = भक्षण करो, भोग करो (भुज - संरक्षण करना, पालन करना, खाना, भक्षण

करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पुत्रः = पुत्र (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। ओण्योः = नायक, ले जाने वाला (ओण् = दूर ले लाना, ले जाना)। सरत् = सर, ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह होता है (सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। जारो = जार, वृद्ध, विजेता (जृ - वृद्ध होना, जि - जय होना, वृद्ध होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। योषणाम् = योषण, सम्बन्ध का (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना, युष = हिंसा करना)। वरो = वर (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आसदम् = सम्यक् बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 14 ॥

1293. स वीरो दक्षसाधनो, वि यः तस्तम्भ रोदसी।

हरिः पवित्रे अव्यत, वेधा न योनिम् आसदम् ॥ 15 ॥ 9-101-15

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने वीरो = वीर दक्षसाधनो = दक्षता के साधन वि = विशेष, विना, विलोम यः = जो तस्तम्भ = स्तम्भित, स्थापित किया रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले हरिः = हरि पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है वेधा = विद्वान्, विधान करने वाले न = नहीं, समान, उपमार्थक योनिम् = योनि को आसदम् = सम्यक् बैठने को ॥ 15 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। वीरो = वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। दक्षसाधनो = दक्षता के साधन (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। यः = जो (सर्वनाम)। तस्तम्भ = स्तम्भित, स्थापित किया (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, स्तम्भ-स्तम्भ-स्तम्भ - स्थापित करना, स्थित करना)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, व्याप्त होना, प्रकाश करना)। वेधा = विद्वान्, विधान करने वाले (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। योनिम् = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। आसदम् = सम्यक् बैठने को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 15 ॥

(320) सूक्त 102

1294. क्राणा शिशुः महीनाम्, हिन्वन् ऋतस्य दीधितिम्।

विश्व परि प्रिया भुवत् अध द्विता ॥ 1 ॥ 9-102-1

मन्त्रार्थ :- क्राणा = करने वाले (कृ - करना)। शिशुः = शिशु महीनाम् = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का हिन्वन् = संतुष्ट करता हुआ ऋतस्य = ऋत का दीधितिम् = दीधित को विश्वा = विश्व, सभी, सब परि = सभी तरफ प्रिया = प्रिय भुवत् = होता हैं अध = अथ, अब, इसके अनन्तर द्विता = द्वित ॥ 1 ॥

पदार्थ :- क्राणा = करने वाले (कृ - करना)। शिशुः = शिशु (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। महीनाम् = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। हिन्वन् = संतुष्ट करता हुआ (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना,

सञ्चालित करना)। **दीधितिम्** = दीधित को (दीध - चमकना, प्रकाशित होना, खेलना, क्रीडा करना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रिया** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **भुवत्** = होता हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **अध** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **द्विता** = द्वित (द्वि = दो, संख्या) ॥

1295. उप त्रितस्य पाष्योः, अभक्त यत् गुहा पदम्।

यज्ञस्य सप्त धामभिः अध प्रियम् ॥ 2 ॥ 9-102-2

मन्त्रार्थ :- उप = समीप त्रितस्य = त्रित, तीन का पाष्योः = बन्धन योग्य, धारण योग्य अभक्त = प्राप्त किया यत् = जिसे, जो गुहा = गुह्य, गुहा पदम् = पद यज्ञस्य = यजन का सप्त = सात धामभिः = धामों द्वारा अध = अथ, अब, इसके अनन्तर प्रियम् = प्रिय को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उप = समीप (उपसर्ग)। त्रितस्य = त्रित, तीन का (संख्या, सर्वनाम)। पाष्योः = बन्धन योग्य, धारण योग्य (पाष - बांधना, फांस लगाना, पाष - धारण करना, सहना)। अभक्त = प्राप्त किया (अ - नहीं, अ - भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। गुहा = गुह्य, गुहा (गुह - आच्छादन करना, छिपाना, ढकना, गति करना, जाना, जानना, हिंसा करना)। पदम् = पद (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। यज्ञस्य = यजन का (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। सप्त = सात (संख्या)। धामभिः = धामों द्वारा (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना) ॥

1296. त्रीणि त्रितस्य धारया, पृष्ठेषु ईरय रयिम्।

मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतः ॥ 3 ॥ 9-102-3

मन्त्रार्थ :- त्रीणि = तीन त्रितस्य = त्रित, तीन का धारया = धार द्वारा पृष्ठेषु = पृष्ठों में ईरय = प्रेरणा करे रयिम् = विद्या, ज्ञान को मिमीते = गति करते हैं, शब्द करते हैं, रक्षा करते हैं अस्य = इसका योजना = योजना वि = विशेष, विना, विलोम सुक्रतः = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्रीणि = तीन (त्रि = तीन, संख्या, सर्वनाम)। त्रितस्य = त्रित, तीन का (संख्या, सर्वनाम)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। पृष्ठेषु = पृष्ठों में (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, स्था-तिष्ठ - स्थित होना, ठहरना, बैठना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। ईरय = कम्पित करो (ईर् = कम्पन करना, जाना, जानना, पाना, फेकना, प्रेरणा करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। मिमीते = गति करते हैं, शब्द करते हैं, रक्षा करते हैं (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मीम - जाना, शब्द करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। योजना = योजना (युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। सुक्रतः = अच्छा करने वाला, सत्कर्म कर्ता (कृ - करना) ॥ 3 ॥

1297. जज्ञानम् सप्त मातरो, मेधाम् आशासत श्रिये।

अयम् ध्रुवो रयीणाम् चिकेत यत् ॥ 4 ॥ 9-102-4

मन्त्रार्थ - जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना सप्त = सात मातरो = माता वेधाम् = विद्वान्, विधान करने वाले को आशासत = आशायें श्रिये = श्रिया अयम् = यह ध्रुवो = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील रयीणाम् = विद्या गतिशीलता के लिए चिकेत = विद्वान् यत् = जिसे, जो ॥ 4 ॥

पदार्थ - जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। सप्त

= सात (संख्या)। **मातरौ** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **वेधाम्** = विद्वान्, विधान करने वाले को (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **आशासत** = आशायें (आ- समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, शास् = आशीर्वाद देना, बोध करना, शासन करना, भला चाहना, आशा करना)। **श्रिये** = श्रिया (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **ध्रुवो** = अचल, स्थिर, अविचल गतिशील (ध्रुव् = अचल होना, स्थिर होना, जाना, गति करना, जानना, पाना)। **रयीणाम्** = विद्या गतिशीलता के लिए (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **चिकेत** = विद्वान् (चिकित् - जानना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)॥ 4 ॥

(321) सूक्त 103

1298. प्र पुनानाय वेधसे, सोमाय वचः उद्यतम् ।

भृतिम् न भरा मतिभिः जुजोषते ॥ 1 ॥ 9-103-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **पुनानाय** = पवित्रकर्ता के लिए **वेधसे** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए **सोमाय** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम के लिए **वचः** = वचन **उद्यतम्** = उद्यत, उद्योगी, उद्यमी को **भृतिम्** = भृत को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **भरा** = पोषण करो, भरण करो **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा **जुजोषते** = विचार, सेवा, स्नेह करता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **पुनानाय** = पवित्रकर्ता के लिए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वेधसे** = विधान करते हो, वेधस् के लिए, विधान करने वाले के लिए (विद् = जानना, समझना, विद्यमान होना)। **सोमाय** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम के लिए (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **वचः** = वचन (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **उद्यतम्** = उद्यत, उद्योगी, उद्यमी को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, यत् - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना, यातना देना, दुःख देना, मारना, ठोकना, चपेटना, आज्ञा करना, एकत्र करना, मना करना, रोकना)। **भृतिम्** = भृत को (भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भरा** = पोषण करो, भरण करो (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **जुजोषते** = विचार, सेवा, स्नेह करता है (जुष - विचार करना, सेवा करना, चाहना, दुलारना) ॥ 1 ॥

1299. परि कोशम् मधुश्चुतम्, व्यये वारे अर्षति ।

अभि वाणीः ऋषीणाम् सप्त अनूषत ॥ 3 ॥ 9-103-3

मन्त्रार्थ - परि = सभी तरफ **कोशम्** = कोश को **मधुश्चुतम्** = मधुश्चुत को **व्यये** = व्यय के लिए **वारे** = वरण में, इच्छाओं में **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **वाणीः** = वाणी **ऋषीणाम्** = ऋषियों का **सप्त** = सात **अनूषत** = स्तुति की, स्तुति करते हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ - परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **कोशम्** = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। **मधुश्चुतम्** = मधुश्चुत को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना)। **व्यये** = व्यय के लिए (वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **वारे** = वरण में, इच्छाओं में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **वाणीः** = वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। **ऋषीणाम्** = ऋषियों का (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **सप्त** = सात (संख्या)। **अनूषत** =

स्तुति की, स्तुति करते हैं (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना) ॥ 3 ॥

अनुवाक:- 73

(322) सूक्त 104

1300. सखायः आ नि षीदत, पुनानाय प्रगायत ।

शिशुम् न यज्ञैः परि भूषत श्रिये ॥ 1 ॥ 9-104-1

मन्त्रार्थ :- सखायः = मित्र आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण नि = निश्चित, निरन्तर षीदत = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों पुनानाय = पवित्रकर्ता के लिए प्रगायत = प्रकृष्ट गाते हैं, गायन करते हैं शिशुम् = शिशु को न = नहीं, समान, उपमार्थक यज्ञैः = यज्ञों द्वारा परि = सभी तरफ भूषत = भूषित हो, भूषित करो श्रिये = श्रिया ॥ 1 ॥

पदार्थ :- सखायः = मित्र (सख = मित्र होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। नि = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। षीदत = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। पुनानाय = पवित्रकर्ता के लिए (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। प्रगायत = प्रकृष्ट गाते हैं, गायन करते हैं (प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। शिशुम् = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। यज्ञैः = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। भूषत = भूषित हो, भूषित करो (भूष् - भूषित होना, सजाना)। श्रिये = श्रिया (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 1 ॥

1301. सम् ईम् वत्सम् न मातृभिः, सृजता गयसाधनम् ।

देवाव्यम् मदम् अभि द्विशवसम् ॥ 2 ॥ 9-104-2

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति ईम् = समान, इस प्रकार वत्सम् = बोलने वाले को न = नहीं, समान, उपमार्थक मातृभिः = माताओं द्वारा सृजता = सृजन करो गयसाधनम् = गय-साधन को, वाणी की पूर्णता को, शब्दों की सिद्धि को, गायन की पूर्णता को देवाव्यम् = देवों के रक्षक को मदम् = मद, हर्ष, तृप्ति को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा द्विशवसम् = द्वि शवस को, द्विगुणित गति को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। ईम् = समान, इस प्रकार (वैदिक उपसर्ग)। वत्सम् = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। मातृभिः = माताओं द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। सृजता = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। गयसाधनम् = गय-साधन को, वाणी की पूर्णता को, शब्दों की सिद्धि को, गायन की पूर्णता को (गै - शब्द, ध्वनि करना, गायन करना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। देवाव्यम् = देवों के रक्षक को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। मदम् = मद, हर्ष, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। द्विशवसम् = द्वि शवस को, द्विगुणित गति को (द्वि = दो, संख्या, शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना) ॥

1302. पुनाता दक्षसाधनम्, यथा शर्धाय वीतये ।

यथा मित्राय वरुणाय शन्तमः ॥ 3 ॥ 9-104-3

मन्त्रार्थ :- पुनाता = पवित्र करो दक्षसाधनम् = दक्ष-साधन को, दक्षता की पूर्णता को, प्रगति की पूर्णता को यथा

= जिससे, जैसे, जिस प्रकार शर्धाय = विजय, शर्द्ध, बल के लिए वीतये = व्याप्त के लिए यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार मित्राय = मित्र के लिए वरुणाय = वरुण के लिए शन्तमम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- पुनाता = पवित्र करो (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। दक्षसाधनम् = दक्ष-साधन को, दक्षता की पूर्णता को, प्रगति की पूर्णता को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। शर्धाय = विजय, शर्द्ध, बल के लिए (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। वीतये = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। मित्राय = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। वरुणाय = वरुण के लिए (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। शन्तमः = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी को (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना) ॥ 3 ॥

1303. अस्मभ्यम् त्वा वसुविदम्, अभि वाणीः अनूषत।

गोभिः वर्णम् अभि वासयामसि ॥ 4 ॥ 9-104-4

मन्त्रार्थ - अस्मभ्यम् = हमारे लिए त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वसुविदम् = वसुविद् अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा वाणीः = वाणी अनूषत = स्तुति की गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ वर्णम् = वर्ण को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा वासयामसि = वास करते हैं, आच्छादन करते हैं, धारण करते हैं ॥ 4 ॥

पदार्थ - अस्मभ्यम् = हमारे लिए (सर्वनाम)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वसुविदम् = वसुविद् (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। वाणीः = वाणी (वण् - बोलना, भीड़ होना)। अनूषत = स्तुति की (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। वर्णम् = वर्ण को (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। वासयामसि = वास करते हैं, आच्छादन करते हैं, धारण करते हैं (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 4 ॥

(323) सूक्त 105

1304. तम् वः सखायो मदाय, पुनानम् अभि गायत।

शिशुम् न यज्ञैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥ 1 ॥ 9-105-1

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे वः = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग सखायो = मित्र मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए पुनानम् = पवित्रकर्ता को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा गायत = गाते हैं, गायन करने वाले शिशुम् = शिशु को न = नहीं, समान, उपमार्थक यज्ञैः = यज्ञों द्वारा स्वदयन्त = स्वाद युक्त करो गूर्तिभिः = गूर्तियों द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। वः = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। सखायो = मित्र (सख् = मित्र होना)। मदाय = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। पुनानम् = पवित्रकर्ता को (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। गायत = गाते हैं, गायन करने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना,

जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **शिशुम्** = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **यज्ञैः** = यज्ञों द्वारा (यज - देवपूजा करना, देना, संगति करना)। **स्वदयन्त** = स्वाद युक्त करो (स्वद - स्वाद लेना, चखना, तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **गूर्तिभिः** = गूर्तियों द्वारा (गूर - मार डलना, दुःख देना, जीर्ण होना, पुराना होना, जाना, गमन करना, गूर - प्रयत्न करना, उद्योग करना) ॥ 1 ॥

1305. सम् वत्सः इव मातृभिः, इन्दुः हिन्वानो अज्यते।

देवावीः मदो मतिभिः परिष्कृतः ॥ 2 ॥ 9-105-2

मन्त्रार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति **वत्सः** = बोलने वाले को **इव** = समान, की भाँति, के समान **मातृभिः** = माताओं द्वारा **इन्दुः** = इन्दु का **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला **अज्यते** = स्वच्छ करते हैं, प्रकाश करते हैं **देवावीः** = देवों को प्राप्त करने वाले **मदो** = मद, हर्ष, तृप्ति **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा **परिष्कृतः** = परिष्कृत, परिष्कार किया हुआ ॥ 2 ॥

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **वत्सः** = बोलने वाले को (वद् - वच् - बोलना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **मातृभिः** = माताओं द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **इन्दुः** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **हिन्वानो** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **अज्यते** = स्वच्छ करते हैं, प्रकाश करते हैं (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **देवावीः** = देवों को प्राप्त करने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **मदो** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मतिभिः** = मति द्वारा, मनन द्वारा (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **परिष्कृतः** = परिष्कृत, परिष्कार किया हुआ (परि - सब ओर, कृ - करना) ॥ 2 ॥

1306. अयम् दक्षाय साधनो, अयम् शर्धाय वीतये।

अयम् देवेभ्यो मधुमत्तमः सुतः ॥ 3 ॥

9-105-3

मन्त्रार्थ :- अयम् = यह **दक्षाय** = दक्ष के लिए **साधनो** = साधन **अयम्** = यह **शर्धाय** = विजय, शर्द्ध, बल के लिए **वीतये** = व्याप्त के लिए **अयम्** = यह **देवेभ्यो** = देवों के लिए **मधुमत्तमः** = अधिक मधुयुक्त **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अयम् = यह (सर्वनाम)। **दक्षाय** = दक्ष के लिए (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **साधनो** = साधन (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **शर्धाय** = विजय, शर्द्ध, बल के लिए (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **वीतये** = व्याप्त के लिए (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना)। **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **देवेभ्यो** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मधुमत्तमः** = अधिक मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 3 ॥

1307. गोमत् नः इन्द्रो अश्ववत्, सुतः सुदक्ष धन्व।

शुचिम् च वर्णम् अधि गोषु दीधरम् ॥ 4 ॥ 9-105-4

मन्त्रार्थ :- गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **इन्द्रो** = इन्दु का **अश्ववत्** = अश्व, तीव्र गति, व्यापक के समान **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सुदक्ष** = हे सुदक्ष, हे दक्षवान्, हे सुसमृद्ध **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो **शुचिम्** = पवित्र को **च** = और **वर्णम्** = वर्ण को **अधि** =

अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में **दीधरम्** = धारण करते हैं, प्रकाशित करते हैं । 4 ॥

पदार्थ :- गोमत् = गो युक्त, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों से युक्त (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **अश्ववत्** = अश्व, तीव्र गति, व्यापक के समान (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सुदक्ष** = हे सुदक्ष, हे दक्षवान्, हे सुसमृद्ध (सु - उत्तम, अच्छा, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **शुचिम्** = पवित्र को (शुच्-शुक्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **च** = और (अव्यय)। **वर्णम्** = वर्ण को (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **गोषु** = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **दीधरम्** = धारण करते हैं, प्रकाशित करते हैं (दीध - चमकना, प्रकाशित होना, खेलना, क्रीडा करना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। 4 ॥

1308. स नो हरीणाम् पते, इन्दो देव प्सरस्तमः ।

सखा इव सख्ये नर्यो रुचे भव ॥ 2 ॥ 9-105-5

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **हरीणाम्** = ले जाने वाले, हरण करने वाले का **पते** = पति **इन्दो** = इन्दु का **देव** = विद्वान्, तेजस्वी, देव **प्सरस्तमः** = अत्यन्त भोक्ता, अत्यन्त संरक्षक **सखा** = मित्र **इव** = समान, की भाँति, के समान **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में **नर्यो** = नर्य **रुचे** = रुचि के लिए, प्रकाश के लिए, रुचि में, प्रकाश में **भव** = हो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **हरीणाम्** = ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **पते** = पति (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **देव** = विद्वान्, तेजस्वी, देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **प्सरस्तमः** = अत्यन्त भोक्ता, अत्यन्त संरक्षक (प्सा - भक्षण करना, संरक्षण करना, पष - जाना, बांधना, फाँस लगाना, पष - धारण करना, घर्षण करना)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **नर्यो** = नर्य (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **रुचे** = रुचि के लिए, प्रकाश के लिए, रुचि में, प्रकाश में (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। **भव** = हो (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना) ॥ 2 ॥

1309. सनेमि त्वम् अस्मद् आ, अदेवम् कञ्चित् अत्रिणम् ।

साह्वान् इन्दो परि बाधो अप द्वयुम् ॥ 6 ॥ 9-105-6

मन्त्रार्थ :- सनेमि = सेवा करते हैं, दान करते हैं, पूजा करते हैं **त्वम्** = तुम **अस्मद्** = मैं, हम **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **अदेवम्** = अदेव, अविद्वान् को **कञ्चित्** = किसी को, क्या **अत्रिणम्** = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को **साह्वान्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त **इन्दो** = इन्दु का **परि** = सभी तरफ **बाधो** = बाधित **अप** = दूर, नीचे, अपकार **द्वयुम्** = दो, द्वय को ॥ 6 ॥

पदार्थ :- सनेमि = सेवा करते हैं, दान करते हैं, पूजा करते हैं (सन = सेवा करना, चाकरी करना, सन = दान

करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **अस्मद्** = मैं, हम (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **अदेवम्** = अदेव, अविद्वान् को (अ - नहीं, दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **कञ्चित्** = किसी को, क्या (सर्वनाम)। **अत्रिणम्** = अतिशय गमनशील को, जानने वाले को (अत् = सतत गति होना, इ = जाना, जानना, पाना)। **साह्वान्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, प्रतिरोध युक्त (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **बाधो** = बाधित (बाध् - रोकना, अटकाव करना, बाधा देना, दुःख देना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **द्वयुम्** = दो, द्वय को (संख्या) ॥ 6 ॥

(325) सूक्त 106

1310. इन्द्रम् अच्छ सुता इमे, वृषणम् यन्तु हरयः ।

श्रुष्टे जातासः इन्द्रवः स्वर्विदः ॥ 1 ॥

9-106-1

मन्त्रार्थ :- **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **सुता** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **इमे** = यह, इस, ये **वृषणम्** = पराक्रमी को **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **श्रुष्टे** = श्रुष्टि का, श्रुष्टि से **जातासः** = उत्पन्न हुए, जन्मे **इन्द्रवः** = इन्दुगण **स्वर्विदः** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् ॥ 1 ॥

पदार्थ :- **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **अच्छ** = अच्छा, निर्मल करो (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **सुता** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचाना, जानना)। **हरयः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **श्रुष्टे** = श्रुष्टि का, श्रुष्टि से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **जातासः** = उत्पन्न हुए, जन्मे (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **इन्द्रवः** = इन्दुगण (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। **स्वर्विदः** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्तु - स्तुति करना, दोष लगाना, निन्दा करना) ॥ 1 ॥

1311. अयम् भराय सानसिः, इन्द्राय पवते सुतः ।

सोमो जैत्रस्य चेतति यथा विदे ॥ 2 ॥

9-106-2

मन्त्रार्थ :- **अयम्** = यह **भराय** = पोषण के लिए, भरण के लिए **सानसिः** = सेवाभावी, दानी, सेवनीय **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सोमो** = ऐश्वर्यमय **जैत्रस्य** = जैत्र का, जीत, विजय करने वाले का **चेतति** = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **विदे** = विद्वान् ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **अयम्** = यह (सर्वनाम)। **भराय** = पोषण के लिए, भरण के लिए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **सानसिः** = सेवाभावी, दानी, सेवनीय (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इन्दि - इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी

पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **जैत्रस्य** = जैत्र का, जीत, विजय करने वाले का (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **चेतति** = चेतता है, चुनता है, एकत्र करता है (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **विदे** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, दा - देना) ॥ 2 ॥

1312. अस्य इन्द्रो मदेषु आ, ग्राभम् गृभीत सानसिम्।

वज्रम् च वृषणम् भरत् सम् अप्सुजित् ॥ 3 ॥ 9-106-3

मन्त्रार्थ :- अस्य = इसका इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान मदेषु = मदों में, आनन्दों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ग्राभम् = ग्राही को, ग्रहण करने वाले को गृभीत = गृहण करता है सानसिम् = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को वज्रम् = वज्र को, गतिमान को च = और। वृषणम् = पराक्रमी को भरत् = भरण करने वाले, भरण करते हुए सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति अप्सुजित् = अप्सु को जीतने वाला, अप्सु के लिए विजेता ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अस्य = इसका (सर्वनाम)। इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। मदेषु = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ग्राभम् = ग्राही को, ग्रहण करने वाले को (गृभ् - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना)। गृभीत = गृहण करता है (गृभ् - ग्रहण करना, लेना, स्वीकार करना)। सानसिम् = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। वज्रम् = वज्र को, गतिमान को (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। च = और। वृषणम् = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। भरत् = भरण करने वाले, भरण करते हुए (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। अप्सुजित् = अप्सु को जीतने वाला, अप्सु के लिए विजेता (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना, रक्षण करना, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना) ॥ 3 ॥

1313. प्र धन्वा सोम जागृवि, इन्द्राय इन्द्रो परि स्रव ।

द्युमन्तम् शुष्मम् आभर स्वर्विदम् ॥ 4 ॥ 9-106-4

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक धन्वा = गति, शब्द करने वाले सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम जागृविः = जागा हुआ, जाग्रत इन्द्राय = इन्द्र के लिए इन्द्रो = हे परम ऐश्वर्यशाली परि = सभी तरफ स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो द्युमन्तम् = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को शुष्मम् = शुष्म, सुखाने वाले को आभर = भरण करो स्वर्विदम् = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् ॥ 4 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। धन्वा = गति, शब्द करने वाले (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। जागृविः = जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। इन्द्रो = हे परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो, स्रवित करें, स्रवित करो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। द्युमन्तम् = द्युमान् को, आगे जाने वाले को, अग्रगामी को, तेजस्वी को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। शुष्मम् = शुष्म, सुखाने वाले को (शुष् - सुखाना)। आभर = भरण करो (आ - सम्यक्,

समन्तात्, पूर्णतः, भृ - भरण करना)। **स्वर्विदम्** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्तु-स्तु = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना) ॥ 4 ॥

1314. पवस्व देववीतय, इन्दो धाराभिः ओजसा ।

आ कलशम् मधुमान् सोम नः सदः ॥ 7 ॥

9-106-7

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए **इन्दो** = इन्दु का धाराभिः = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा **ओजसा** = ओज द्वारा **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **कलशम्** = कलश को **मधुमान्** = मधुरता युक्त **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **सदः** = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य ॥ 7 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **देववीतये** = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। **इन्दो** = इन्दु का (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **धाराभिः** = धारण, पोषण, रक्षण द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **कलशम्** = कलश को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **मधुमान्** = मधुरता युक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सदः** = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना) ॥ 7 ॥

1315. तव द्रप्साः उदप्रुतः, इन्द्रम् मदाय वावृधुः ।

त्वाम् देवासो अमृताय कम् पपुः ॥ 8 ॥

9-106-8

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा **द्रप्साः** = हर्ष, आनन्द, गर्व **उदप्रुतः** = आद्रक को गति देने वाला, उदक द्वारा गतिशील **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **वावृधुः** = वृद्धि करते हुए **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी **देवासो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण **अमृताय** = अमृत के लिए **कम्** = किसको **पपुः** = पालन करते हैं, रक्षण करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। **द्रप्साः** = हर्ष, आनन्द, गर्व (दृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। **उदप्रुतः** = आद्रक को गति देने वाला, उदक द्वारा गतिशील (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, प्रु - अधिक होना, गति करना, हिलना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द = परम ऐश्वर्य होना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **वावृधुः** = वृद्धि करते हुए (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **त्वाम्** = तुमको, तुम्हारी (सर्वनाम)। **देवासो** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अमृताय** = अमृत के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। **कम्** = किसको (सर्वनाम)। **पपुः** = पालन करते हैं, रक्षण करते हैं (पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥ 8 ॥

1316. आ नः सुतासः इन्दवः, पुनाना धावता रयिम् ।

वृष्टिद्यावो रीत्यापः स्वर्विदः ॥ 9 ॥

9-106-9

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **सुतासः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **इन्दवः** = इन्दुगण **पुनाना** = पवित्रकर्ता **धावता** = जायें **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **वृष्टिद्यावो** = पराक्रमी-प्रकाशशील, पराक्रमी-अग्रगामी **रीत्यापः** = प्रवाह करने वाले, बरसाने वाले **स्वर्विदः** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् ॥ 9 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सुतासः**

= ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **इन्दवः** = इन्दुगण (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। **पुनाना** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **धावता** = जायें (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **वृष्टिद्यावो** = पराक्रमी-प्रकाशशील, पराक्रमी-अग्रगामी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना, द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **रीत्यापः** = प्रवाह करने वाले, बरसाने वाले (री - जाना, बहना, झरना, चूना, टपकना, गिरना, नीचे आना, सुनना)। **स्वर्विदः** = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (स्वर् - शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना) ॥ 9 ॥

1317. सोमः पुनानः ऊर्मिणा, अव्यम् वारम् वि धावति ।

अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥ 10 ॥

9-106-10

मन्त्रार्थ :- **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम** (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो **वारम्** = वरण को **वि** = विशेष, विना, विलोम **धावति** = दौड़ता है **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले **वाचः** = वाणी **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए ॥ 10 ॥

पदार्थ :- **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम** (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पुनानः** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **वारम्** = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **धावति** = दौड़ता है (धाव - जाना, भागना, स्वच्छ करना, निर्मल करना, धोना, स्वच्छ होना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **वाचः** = वाणी (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **कनिक्रदत्** = प्रकाश करते हुए (कन् - व्याप्त होना, प्रकाश करना, प्रीति करना, जाना, जानना, पाना, कृ - करना) ॥ 10 ॥

1318. धीभिः हिन्वन्ति वाजिनम्, वने क्रीडन्तम् अत्यविम् ।

अभि त्रिपृष्ठम् मतयः समस्वरन् ॥ 11 ॥

9-106-11

मन्त्रार्थ :- **धीभिः** = बुद्धिर्यो द्वारा, धारणा द्वारा **हिन्वन्ति** = संतृप्त करते हैं **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को **वने** = वाणी में, वनों में **क्रीडन्तम्** = क्रीडा करते हुए को **अत्यविम्** = अत्यन्त रक्षक को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **त्रिपृष्ठम्** = त्रिपृष्ठ को **मतयः** = मतियाँ, मननशक्ति **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए ॥ 11 ॥

पदार्थ :- **धीभिः** = बुद्धिर्यो द्वारा, धारणा द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि , प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **हिन्वन्ति** = संतृप्त करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **वने** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट

होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **क्रीडन्तम्** = क्रीडा करते हुए को (क्रीड - खेलना)। **अत्यविम्** = अत्यन्त रक्षक को (अति - बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय), अवि = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **त्रिपृष्ठम्** = त्रिपृष्ठ को (त्रि = तीन (संख्या), पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना, पृश् = प्रश्न करना, पूछना, पृश्, पृष् = जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना, सींचना, सहन करना)। **मतयः** = मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, स्वर-स्वर = शब्द करना, गम् - जाना) ॥ 11 ॥

1319. असर्जि कलशान् अभि, मीढ्वान् सप्तिः न वाजयुः।

पुनानो वाचम् जनयन् असिष्यदत् ॥ 12 ॥ 9-106-12

मन्त्रार्थ :- असर्जि = सृजन किया कलशान् = कलशों को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा मीढ्वान् = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले सप्तिः = पूर्ण ज्ञान युक्त न = नहीं, समान, उपमार्थक वाजयुः = वाजयुक्त पुनानो = पवित्रकर्ता वाचम् = वाणी को जनयन् = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले असिष्यदत् = सिञ्चन किया ॥

पदार्थ :- असर्जि = सृजन किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृज्- सृजन करना, रचना करना, बनाना, विविध रूप से उत्पादन करना)। **कलशान्** = कलशों को (कल - गणना, करना, गिनना, गति करना, शब्द करना, स्वाद लेना, धारण-घर्षण-मन्थन करना, भेदना, छेदन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **मीढ्वान्** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले (मिह् - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **सप्तिः** = पूर्ण ज्ञान युक्त (सप = पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वाजयुः** = वाजयुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पुनानो** = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **वाचम्** = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जानना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **जनयन्** = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **असिष्यदत्** = सिञ्चन किया (स्यन्द - टपकना, झरना, चूना, सींचना, छींटा देना, जाना) ॥ 12 ॥

1320. पवते हर्यतो हरिः, अति ह्वरांसि रंह्या।

अभ्यर्ष स्तोतृभ्यो वीरवत् यशः ॥ 13 ॥ 9-106-13

मन्त्रार्थ :- पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है हर्यतो = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य हरिः = हरि अति = बहुत, अत्यधिक ह्वरांसि = अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल रंह्या = प्रगतिशील, प्रकाशमान द्वारा अभ्यर्षन् = अन्तर्दर्शन करता हुआ स्तोतृभ्यो = स्तुति के लिए वीरवत् = वीर के समान यशः = यश, कीर्ति ॥ 13 ॥

पदार्थ :- पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **हर्यतो** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **हरिः** = हरि (ह्व = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **ह्वरांसि** = अनेक ह्वर, वक्र, कुटिल (ह्वे = पुकारना, ह्वृ = वक्र होना, कुटिल होना, वरण करना, आच्छादन करना, निवास करना)। **रंह्या** = प्रगतिशील, प्रकाशमान द्वारा (रंह = चलना, वेग से जाना, रंह = चमकना, प्रकाशित होना, बोलना, सम्भाषण करना)। **अभ्यर्षन्** = अन्तर्दर्शन करता हुआ (अभि - अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ऋष् - जाना, जानना, पहुँचाना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **स्तोतृभ्यो** = स्तुति के लिए (स्तु - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **वीरवत्** = वीर के समान (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)।

यशः = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना) ॥ 13 ॥

1321. अया पवस्व देवयुः मधोः धाराः असृक्षत

रेभन् पवित्रम् पर्येषि विश्वतः ॥ 14 ॥

9-106-14

मन्त्रार्थ :- अया = गतिशील, विद्वान् पवस्व = पवित्र करो देवयुः = देव-यु, देव-मिलन मधोः = मधु धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया रेभन् = शब्द करता हुआ पवित्रम् = पवित्र को पर्येषि = सर्वत्रगमन करते हो विश्वतः = सबसे, विश्व से ॥ 14 ॥

पदार्थ :- अया = गतिशील, विद्वान् (अय् = जाना, जानना, पाना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। देवयुः = देव-यु, देव-मिलन (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। मधोः = मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। धाराः = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष् - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना) रेभन् = शब्द करता हुआ (रभ - आनन्द होना, आरम्भ करना, रा - देना, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। पर्येषि = सर्वत्रगमन करते हो (परि - सब ओर से, ई-अय् - गति, ज्ञान, प्राप्ति होना, शब्द करना, ध्वनि करना)। विश्वतः = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। ॥ 14 ॥

(326) सूक्त 107

1322. परि इतो षिञ्चता सुतम्, सोमो यः उत्तमम् हविः।

दधन्वान् यो नर्यो अप्सु अन्तः, आ सुषाव सोमम् अद्रिभिः ॥ 1 ॥

9-107-1

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ। इतो = यहां से। षिञ्चता = सिञ्चन करो। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को। सोमो = ऐश्वर्यमय। यः = जो। उत्तमम् = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा। हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य। दधन्वान् = धारण किया। यो = जो। नर्यो = नर्य। अप्सु = अपः का, पालन करने वाले। अन्तः = बीच में, भीतर। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण। सुषाव = सृजित करना, आसवन करना। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को। अद्रिभिः = अद्रियों के लिए, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। इतो = यहां से। षिञ्चता = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। सोमो = ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। यः = जो (सर्वनाम)। उत्तमम् = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। दधन्वान् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। यो = जो (सर्वनाम)। नर्यो = नर्य (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। अप्सु = अपः का, पालन करने वाले (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। अन्तः = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। सुषाव = सृजित करना, आसवन करना (सु - अच्छा, सुन्दर, स - सहित, साथ, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क

निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों के लिए, अहिसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) ॥

1323. नूनम् पुनानो अविभिः परि, स्रव अदब्धः सुरभिन्तरः ।

सुते चित् त्वा अप्सु मदामो अन्धसा, श्रीणन्तो गोभिः उत्तरम् ॥ 2 ॥ 9-107-2

मन्त्रार्थ :- नूनम् = निश्चय ही पुनानो = पवित्रकर्ता अविभिः = रक्षकों द्वारा परि = सभी तरफ स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो अदब्धः = अहिंसनीय सुरभिन्तरः = अति सुरों, अति सुरभि युक्त सुते = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए में चित् = भी, ही। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा अप्सु = पालन-रक्षण में मदामो = मद, हर्ष, तृप्त करते हैं अन्धसा = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा श्रीणन्तो = सेवा करते हुए गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ उत्तरम् = उत्तर को, तैरने-पार जाने को ॥ 2 ॥

पदार्थ :- नूनम् = निश्चय ही (अव्यय)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अविभिः = रक्षकों द्वारा (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। स्रव = प्रवाह करो, स्रवित हो (स्रु = जाना, जानना, पाना)। अदब्धः = अहिंसनीय (दम् - निन्दा करना, आज्ञा करना)। सुरभिन्तरः = अति सुरों, अति सुरभि युक्त (सुर+भिः, सु+रम्, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, रभ - कार्य आरम्भ करना, आनन्दित होना, प्रसन्न होना, सुर = अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। सुते = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए में (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। चित् = भी, ही। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। अप्सु = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। मदामो = मद, हर्ष, तृप्त करते हैं (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। अन्धसा = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। श्रीणन्तो = सेवा करते हुए (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। गोभिः = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। उत्तरम् = उत्तर को, तैरने-पार जाने को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तृ, तृ = तैरना, पार जाना) ॥ 2 ॥

1324. परि सुवानः चक्षसे देवामादनः, क्रतुः इन्दुः विचक्षणः ॥ 3 ॥ 9-107-3

मन्त्रार्थ :- परि = सभी तरफ सुवानः = स्वान, शब्द करने वाला चक्षसे = देखने के लिए, देखते हो देवामादनः = दिव्य-आनन्द वाले, देवों को आनन्द देने वाले क्रतुः = क्रतु, करने वाला इन्दुः = इन्दु विचक्षणः = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। सुवानः = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। चक्षसे = देखने के लिए, देखते हो (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। देवामादनः = दिव्य-आनन्द वाले, देवों को आनन्द देने वाले (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, मदी-माद् - हर्ष होना)। क्रतुः = क्रतु, करने वाला (कृ = करना)। इन्दुः = इन्दु (इन्द् - परम ऐश्वर्य होना)। विचक्षणः = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी वाले (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 3 ॥

1325. पुनानः सोम धारया, अपो वसानो अर्षसि ।

आ रत्नधा योनिम् ऋतस्य, सीदसि उत्सो देव हिरण्ययः ॥ 4 ॥ 9-107-4

मन्त्रार्थ :- पुनानः = पवित्रकर्ता सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम धारया = धार द्वारा अपो = पालन करने वाला वसानो = वास करते हुए, धारण करता हुआ अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण रत्नधा = रत्न, रमणीय को धारण करने वाला योनिम् = योनि को ऋतस्य = ऋत का सीदसि = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो उत्सो = उत्स देव = हे देव हिरण्ययः = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला ॥ 4 ॥

पदार्थ :- पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अपो** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **रत्नधा** = रत्न, रमणीय को धारण करने वाला (रम् - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना)। **योनिम्** = योनि को (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **सीदसि** = संचरण करते हो, प्रतिष्ठित करते हो (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **उत्सो** = उत्स (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, सु = उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **देव** = हे देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हिरण्यः** = प्रकाशमान, गतिशील, स्तुति करने वाला (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना)। 4।

1326. दुहानः ऊधः दिव्यम् मधु, प्रियम् प्रत्नम् सधस्थम् आसदत्।

आपृच्छ्यम् धरुणम् वाजी, अर्षति नृभिः धूतो विचक्षणः ॥ 5 ॥

9-107-5

मन्त्रार्थ :- दुहानः = दुहने वाले **ऊधः** = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले **दिव्यम्** = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को **मधु** = मीठा, मधु **प्रियम्** = प्रिय **प्रत्नम्** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति **सधस्थम्** = सहस्थान, सहगामी, साथ **आसदत्** = आसद को, बैठने सम्बन्धी को **आपृच्छ्यम्** = प्रश्न करने योग्य, पूछने योग्य **धरुणम्** = धारण करने वाले को **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **अर्षति** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो **नृभिः** = नरों द्वारा **धूतो** = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी ॥ 5 ॥

पदार्थ :- दुहानः = दुहने वाले (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **ऊधः** = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना)। **दिव्यम्** = दिव्य को, तेजस्वी, ज्योतिर्मय को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद-आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **प्रियम्** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **प्रत्नम्** = प्रसिद्ध करने वाले, प्रकृष्टता से, पूर्व की भांति (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **सधस्थम्** = सहस्थान, सहगामी, साथ (सध = साथ (अव्यय), सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **आसदत्** = आसद को, बैठने सम्बन्धी को (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **आपृच्छ्यम्** = प्रश्न करने योग्य, पूछने योग्य (पृश्-पृच्छ् - पूछना, प्रश्न करना)। **धरुणम्** = धारण करने वाले को (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **धूतो** = धूत (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना,

क्षोभित करना)। **विचक्षणः** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 5 ॥

1327. पुनानः सोम जागृविः, अव्यो वारे परि प्रियः ।

त्वम् विप्रो अभवो अङ्गिरस्तम, मध्वा यज्ञम् मिमिक्ष नः ॥ 6 ॥ 9-107-6

मन्त्रार्थ - पुनानः = पवित्रकर्ता **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम जागृविः** = जागा हुआ, जाग्रत **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा **वारे** = वरण, इच्छाओं द्वारा **परि** = सभी तरफ **प्रियः** = प्रिय **त्वम्** = तुम **विप्रो** = विशेष पूर्ण करने वाले **अभवो** = हुआ **अङ्गिरस्तम** = हे अत्यन्त विद्वान्, गतिशील, पाने वाला **मध्वा** = मधु द्वारा **यज्ञम्** = यजन को **मिमिक्ष** = सिंचन करें **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 6 ॥

पदार्थ - पुनानः = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम** (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **जागृविः** = जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। **अव्यो** = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **वारैः** = वरण, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **प्रियः** = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **विप्रो** = विशेष पूर्ण करने वाले (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। **अभवो** = हुआ (भू - होना, रहना, उत्पन्न होना)। **अङ्गिरस्तम** = हे अत्यन्त विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ्ग = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **मध्वा** = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। **यज्ञम्** = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **मिमिक्ष** = सिंचन करें (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, मिह - गीला करना, सींचना, प्रोक्षण करना)। **णः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 6 ॥

1328. सोमः उ षुवाणः सोतृभिः, अधि ष्णुभिः अवीनाम् ।

अश्वया इव हरिता याति धारया, मन्द्रया याति धारया ॥ 8 ॥ 9-107-8

मन्त्रार्थ :- **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम उ** = निश्चय ही, भी **षुवाणः** = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले **सोतृभिः** = उत्पन्न करने वाले द्वारा **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **ष्णुभिः** = झरने वाले **अवीनाम्** = व्याप्तों का, रक्षकों का **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक द्वारा **इव** = समान, की भाँति, के समान **हरिता** = हरित, हरि से **याति** = जाता है **धारया** = धार द्वारा **मन्द्रया** = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा **याति** = जाता है **धारया** = धार द्वारा ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, **सोम** (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **षुवाणः** = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। **सोतृभिः** = उत्पन्न करने वाले द्वारा (सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **ष्णुभिः** = झरने वाले (स्नु - भाप से टपकना, झरना, चूना)। **अवीनाम्** = व्याप्तों का, रक्षकों का (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी- जाना, व्यापना)। **अश्वया** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक द्वारा (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **हरिता** = हरित, हरि से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण

करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **याति** = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **मन्द्रया** = स्तुत्य द्वारा, आनन्दित करने वाले द्वारा, विनाश करने वाले द्वारा (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **याति** = जाता है (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **धारया** = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 8 ॥

1329. अनूपे गोमान् गोभिः अक्षाः, सोमो दुग्धाभिः अक्षाः ।

समुद्रम् न संवरणानि अगमन्, मन्दी मदाय तोशते ॥ 9 ॥

9-107-9

मन्त्रार्थ :- अनूपे = अनूप में, प्राणवान् में, चेतना-रक्षक में **गोमान्** = गोमान, विद्वान् **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **दुग्धाभिः** = दुग्धों द्वारा **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक **समुद्रम्** = समुद्र को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **संवरणानि** = सम्यक् वरण **अगमन्** = गये **मन्दी** = प्रकृष्ट आनन्द, प्रकृष्ट हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए **तोशते** = तुष्ट करता है ॥ 9 ॥

पदार्थ :- **अनूपे** = अनूप में, प्राणवान् में, चेतना-रक्षक में (अन् = प्राण होना, चेतन होना, श्वास लेना, स्पन्दन करना, हलचल करना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। **गोमान्** = गोमान, विद्वान् (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **दुग्धाभिः** = दुग्धों द्वारा (दुह - दोहन करना)। **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। **समुद्रम्** = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **संवरणानि** = सम्यक् वरण (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अगमन्** = गये (गम् = जाना)। **मन्दी** = प्रकृष्ट आनन्द, प्रकृष्ट हर्ष-स्तुति, तुष्टि, प्रकाश (मन्द् - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **मदाय** = मद, हर्ष, तृप्ति के लिए (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **तोशते** = तुष्ट करता है (तुष् - सन्तुष्ट करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना) ॥ 9 ॥

1330. आ सोम सुवानो अद्रिभिः, तिरो वाराणि अव्यया ।

जनो न पुरि चम्बो विशत्, हरिः सदो वनेषु दधिषे ॥ 10 ॥

9-107-10

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **स्वानो** = स्वान, शब्द करने वाला **अद्रिभिः** = अद्रियों के लिए, अहिसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए **तिरो** = पार कराने वाले **वाराणि** = वरण, वरणीय, वरण करने वाले **अव्यया** = व्यय न होने वाले, पालनीय द्वारा, रक्षणीय द्वारा, बन्धन द्वारा **जनो** = जन **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **पुरि** = पहले हुआ, पूर्व हुआ, पुरा-भूत, अग्रगामी, अग्रणी **चम्बो** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला **विशत्** = प्रविष्ट हो **हरिः** = हरि **सदो** = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य **वनेषु** = वाणी में, वनों में **दधिषे** = धारण करते हो ॥ 10 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना,

स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **स्वानो** = स्वान, शब्द करने वाला (स्वन - शब्द करना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों के लिए, अहिसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वालों के लिए (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **तिरो** = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **वाराणि** = वरण, वरणीय, वरण करने वाले (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अव्यया** = व्यय न होने वाले, पालनीय द्वारा, रक्षणीय द्वारा, बन्धन द्वारा (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना, अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **जनो** = जन (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **पुरि** = पहले हुआ, पूर्व हुआ, पुरा-भूत, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **चम्बो** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला (चम्ब - मर्दन करना, भय दिखाना, चम - खाना, पाना)। **विशत्** = प्रविष्ट हो (विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना, चारों ओर फैलना)। **हरिः** = हरि (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **सदो** = स्थित, विद्वान्, प्रतिष्ठित, गतिशील, गन्तव्य (सद् = बैठना, स्थित होना, जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **वनेषु** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **दधिषे** = धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 3 ॥

1331. स मामृजे तिरो अण्वानि मेष्यो, मीद्वे सप्तिः न वाजयुः ।

अनुमाद्यः पवमानो मनीषिभिः, सोमो विप्रेभिः ऋक्वभिः ॥ 11 ॥ 9-107-11

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **मामृजे** = शुद्ध किया जाता है, पवित्र किया जाता है **तिरो** = पार कराने वाले **अण्वानि** = प्राणवान्, सूक्ष्म, शब्दकर्ता **मेष्यो** = मेष्य, सिञ्चन करने वाला, प्रोक्षण करने वाला **मीद्वे** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले के लिए **सप्तिः** = पूर्ण ज्ञान युक्त **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **वाजयुः** = वाजयुक्त **अनुमाद्यः** = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **विप्रेभिः** = विशेष पूर्ण करने वालों द्वारा **ऋक्वभिः** = ऋचाओं द्वारा ॥ 11 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **मामृजे** = शुद्ध किया जाता है, पवित्र किया जाता है (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **तिरो** = पार कराने वाले (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **अण्वानि** = प्राणवान्, सूक्ष्म, शब्दकर्ता (अन्-अण् - प्राण होना, सूक्ष्म होना, शब्द करना)। **मेष्यो** = मेष्य, सिञ्चन करने वाला, प्रोक्षण करने वाला (मिष- सींचना, प्रोक्षण करना)। **मीद्वे** = विद्वान्, सिञ्चन-प्रोक्षण करने वाले (मिह् - सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, गीला करना)। **सप्तिः** = पूर्ण ज्ञान युक्त (सप = पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **वाजयुः** = वाजयुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अनुमाद्यः** = आनन्दप्रद, आनन्द योग्य (अनु = पश्चात्, पीछे, मद् - आनन्द होना, आनन्द करना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मनीषिभिः** = मनीषियों द्वारा, विचारशीलों द्वारा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क

निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। विप्रेभिः = विशेष पूर्ण करने वालों द्वारा (वि = विशेष, विना, विलोम, प्रा - पूर्ण करना)। ऋक्विभिः = ऋचाओं द्वारा (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना) ॥ 11 ॥

1332. प्र सोम देववीतये, सिन्धुः न पिप्ये अर्णसा।

अंशोः पयसा मदिरो न जागृविः, अच्छा कोशम् मधुश्चुतम् ॥ 12 ॥ 9-107-12

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए सिन्धुः = समुद्र न = नहीं, समान, उपमार्थक पिप्ये = बढ़ता है अर्णसा = अर्ण, प्रगतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक द्वारा अंशोः = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा मदिरो = आनन्दित न = नहीं, समान, उपमार्थक जागृविः = जागा हुआ, जाग्रत अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ कोशम् = कोश को मधुश्चुतम् = मधुश्चुत को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। देववीतये = देव-व्याप्ति के लिए, दिव्य ज्ञान के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, प्रीति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना, वी = व्याप्त होना, गति करना, चलना, जाना, जाना, जानना, पाना)। सिन्धुः = समुद्र (सिध - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। पिप्ये = बढ़ता है (प्याय-प्यायी-प्यै - बढ़ना, बढ़ा होना, फूलना, प्याय-प्यै - भूख लगना, प्यास लगना)। अर्णसा = अर्ण, प्रगतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक द्वारा (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। अंशोः = अंश (अंश् - विभाग करना, बाँटना, साथ होना)। पयसा = पयस् द्वारा, विस्तार द्वारा, गतिशील, प्रवाहमान द्वारा (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना, पयस् = विस्तार करना, फैलाना)। मदिरो = आनन्दित (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। जागृविः = जागा हुआ, जाग्रत (जागृ - जगना, नींद न लेना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। कोशम् = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। मधुश्चुतम् = मधुश्चुत को (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, श्चुत् - टपकना, झरना, सींचना) ॥ 12 ॥

1333. आ हर्यतो अर्जुने अत्के, अव्यत प्रियः सूनुः न मर्ज्यः।

तम् ईम् हिन्वन्ति अपसो यथा, रथम् नदीषु आ गभस्त्योः ॥ 13 ॥ 9-107-13

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण हर्यतो = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य अर्जुने = लाभ, प्राप्ति अत्के = सतत गमन वाला अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है प्रियः = प्रिय सूनुः = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य न = नहीं, समान, उपमार्थक मर्ज्यः = शुद्धतायुक्त, पवित्रतायुक्त तम् = उसको, उसे ईम् = समान, इस प्रकार हिन्वन्ति = संतृप्त करते हैं अपसो = पालनकर्ता यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार रथम् = रथ को नदीषु = नदियों में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण गभस्त्योः = गहन ॥ 13 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। हर्यतो = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। अर्जुने = लाभ, प्राप्ति (अर्ज - लाभ करना, प्राप्त करना, पाना)। अत्के = सतत गमन वाला (अत् - जाना, सदैव जाते रहना)। अव्यत = पालन करता है, व्याप्त होता है, रक्षा करता है (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, व्याप्त होना, प्रकाश करना)। प्रियः = प्रिय

(प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। **सूनुः** = सृष्टि, सन्तान, उत्पन्न, ऐश्वर्य (सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मर्ज्यः** = शुद्धतायुक्त, पवित्रतायुक्त (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **हिन्वन्ति** = संतुष्ट करते हैं (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, तृप्त करना, शान्त करना)। **अपसो** = पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **नदीषु** = नदियों में (नद् - शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **गभस्त्योः** = गहन (गह् - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 13 ॥

1334. अभि सोमासः आयवः, पवन्ते मद्यम् मदम्।

समुद्रस्य अधि विष्टपि, मनीषिणो मत्सरासो मदच्युतः ॥ 14 ॥ 9-107-14

मन्त्रार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सोमासः** = अनेक ऐश्वर्यमय **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना **पवन्ते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **मद्यम्** = आनन्दित करने योग्य को **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को **समुद्रस्य** = समुद्र का **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **विष्टपि** = विस्तृत, विष्टप में **मनीषिणो** = मनीषियों का **मत्सरासो** = आनन्ददायक **मदच्युतः** = आनन्द-सिंचित ॥ 14 ॥

पदार्थ :- **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सोमासः** = अनेक ऐश्वर्यमय (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना। (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना)। **पवन्ते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मद्यम्** = आनन्दित करने योग्य को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मदम्** = मद को, हर्ष को, तृप्ति को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **समुद्रस्य** = समुद्र का (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **विष्टपि** = विस्तृत, विष्टप में (विश् - प्रवेश, सूचना, प्रेरणा करना, विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, पा - पालन करना)। **मनीषिणो** = मनीषियों का (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **मत्सरासो** = आनन्ददायक (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सू - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। **मदच्युतः** = आनन्द-सिंचित (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना) ॥ 14 ॥

1335. तरत् समुद्रम् पवमानः, ऊर्मिणा राजा देवः ऋतम् बृहत्।

अर्षा मित्रस्य वरुणस्य धर्मणा, प्र हिन्वानः ऋतम् बृहत् ॥ 15 ॥ 9-107-15

मन्त्रार्थ :- **तरत्** = तैरता है, तरता है **समुद्रम्** = समुद्र को **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा **राजा** = राजा **देवः** = देव **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, **अर्षा** = अन्तर्यामी, विद्यमान **मित्रस्य** = मित्र का **वरुणस्य** = वरुण का **धर्मणा** = धर्म द्वारा **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **हिन्वानः** = संतुष्ट करता हुआ, प्रेरणा देने वाला **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट, **बृहत्** ॥ 15 ॥

पदार्थ :- **तरत्** = तैरता है, तरता है (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार

जाना)। **समुद्रम्** = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **पवमानः** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **ऊर्मिणा** = प्रगति द्वारा, ऊर्मियों द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **देवः** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **अर्षा** = अन्तर्यामी, विद्यमान (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **मित्रस्य** = मित्र का (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञा, नरम होना, मृदुल होना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **धर्मणा** = धर्म द्वारा (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **हिन्वानः** = संतृप्त करता हुआ, प्रेरणा देने वाला (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना, हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **ऋतम्** = सार्वभौम नियम, सत्य, ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 15 ॥

1336. नृभिः येमाणो हर्यतो विचक्षणो ।

राजा देवः समुद्रियः ॥ 16 ॥ 9-107-16

मन्त्रार्थ :- नृभिः = नरों द्वारा **येमाणो** = जाते हुए **हर्यतो** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य **विचक्षणो** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी **राजा** = राजा **देवः** = देव **समुद्रियः** = समुद्रीय ॥ 3 ॥

पदार्थ :- नृभिः = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **येमाणो** = जाते हुए (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **हर्यतो** = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचना)। **विचक्षणो** = विशेष दृष्टि, विशेष वाणी (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **देवः** = देव (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **समुद्रियः** = समुद्रीय (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना) ॥ 16 ॥

1337. इन्द्राय पवते मदः, सोमो मरुत्वते सुतः ।

सहस्रधारो अति अव्यम्, अर्षति तम् ईम् मृजन्ति आयवः ॥ 17 ॥ 9-107-17

मन्त्रार्थ - **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मरुत्वते** = मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **सहस्रधारो** = हजारों धाराओं वाला **अति** = बहुत, अत्यधिक **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है **तम्** = उसको, उसे **ईम्** = समान, इस प्रकार **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना ॥ 17 ॥

पदार्थ - **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **पवते** = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **मदः** = मद, हर्ष, तृप्ति (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मरुत्वते**

= मरुत्वत् के लिए, मरणशील युक्त के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सहस्रधारो** = हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः - धारा होना, धार बाँधना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **अव्यम्** = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **अर्षति** = अन्तर्गमन करता है, अन्तर्दर्शन करता है, ऋषित्व प्राप्त करता है (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **ईम्** = समान, इस प्रकार (अव्यय)। **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **आयवः** = उपसंहार करना, मिश्रित करना, पृथक् पृथक् करना, शासन करना (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, आय - शब्द करना, शासन करना, यव - समाप्त करना, उपसंहार करना, यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, पृथक् पृथक् करना, आय - शब्द करना, शासन करना) ॥ 17 ॥

1338. तव अहम् सोम रारण, सख्य इन्द्रो दिवेदिवे ।

पुरुणि बभ्रो नि चरन्ति माम् अव, परिधीन् रति तान् इहि ॥ 19 ॥ 9-107-19

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा अहम् = मैं सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता रारण = दान, रण, शब्द, प्रगति किया सख्ये = सखाभाव में, मित्रभाव में इन्द्रो = परम ऐश्वर्यशाली दिवेदिवे = प्रतिदिन (अव्यय)। **पुरुणि** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी **बभ्रो** = भरण-पोषण करने वाले **नि** = निश्चित, निरन्तर **चरन्ति** = विचरण करते हैं, चलते हैं **माम्** = मुझको **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त **परिधीम्** = परिधियों को, सब ओर से धारण करने वालों को, परितः धारण को **रति** = रति **ताम्** = उसका **इहि** = आओ, जानों ॥ 19 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **सोम** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **रारण** = दान, रण, शब्द, प्रगति किया (रण - शब्द करना, जाना, रा - देना, दान करना, मिल जाना)। **सख्ये** = सखाभाव में, मित्रभाव में (सख् = मित्र होना)। **इन्द्रो** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **दिवेदिवे** = प्रतिदिन (अव्यय)। **पुरुणि** = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरण, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **बभ्रो** = भरण-पोषण करने वाले (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। **नि** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय)। **चरन्ति** = विचरण करते हैं, चलते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **माम्** = मुझको (सर्वनाम)। **अव** = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। **परिधीम्** = परिधियों को, सब ओर से धारण करने वालों को, परितः धारण को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, धा = धारण करना)। **रति** = रति (रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना)। **ताम्** = उसको (सर्वनाम)। **इहि** = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना) ॥ 19 ॥

1339. उत अहम् नक्तम् उत सोम, ते दिवा दुहानो बभ्रः ऊधनि ।

घृणा तपन्तम् अति सूर्यम्, परः शकुना इव पप्तिम् ॥ 20 ॥ 9-107-20

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर अहम् = मैं नक्तम् = नक्त, नष्ट, विनाशक को उत = ही, भी, ओर सोम = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए दिवा = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय दुहानो = दुहने वाले बभ्रः = भरण-पोषण करने वाले ऊधनि = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले घृणा = शब्द, प्रकाश तपन्तम् = तपते हुए, तप करते हुए को अति = बहुत, अत्यधिक सूर्यम् = सूर्य को परः = अन्य, पार, परे शकुना = सक्षम, समर्थ इव = समान, की भाँति, के समान पप्तिम् = प्राप्त करता हूँ ॥ 20 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **अहम्** = मैं (सर्वनाम)। **नक्तम्** = नक्त, नष्ट, विनाशक को (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **सोम** = सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न

होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दिवा** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **दुहानो** = दुहने वाले (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **बभ्रः** = भरण-पोषण करने वाले (भृ = भरण-पोषण, धारण करना)। **ऊधनि** = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द = भिगोना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। **घृणा** = शब्द, प्रकाश (घृण - शब्द करना, प्रकाश करना)। **तपन्तम्** = तपते हुए, तप करते हुए को (तप - ऐश्वर्य होना, तपना, दाह होना, तप करना, तप्त होना, तप्त करना, जलना, जलाना, तृषा होना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **परः** = अन्य, पार, परे (अव्यय)। **शकुना** = सक्षम, समर्थ (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **पप्तिम** = प्राप्त करता हूँ (पा - पालन करना, रक्षा करना, पत - नीचे गिरना, जाना या उतरना, चढ़ना, उड़ना, श्रीमान् होना, शक्तिमान् होना, अमानवी पराक्रम करना) ॥ 20 ॥

1340. मृज्यमानः सुहस्त्या, समुद्रे वाचम् इन्वसि।

रयिम् पिशङ्गम् बहुलम्, पुरुस्पृहम् पवमान अभि अर्षसि ॥ 21 ॥ 9-107-21

मन्त्रार्थ :- मृज्यमानः = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ सुहस्त्या = सुहस्ति द्वारा समुद्रे = समुद्र में वाचम् = वाणी को इन्वसि = व्याप्त करता है, तृप्त करता है रयिम् = विद्या, ज्ञान को पिशङ्गम् = प्रकाशगामी, विखण्डन करने वाला, टुकड़े करने वाला बहुलम् = बहुत पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो ॥ 21 ॥

पदार्थ :- मृज्यमानः = मृज्यमान, अलंकृत करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। सुहस्त्या = सुहस्ति द्वारा (सु - सुन्दर, अच्छा, हस्त - आदान करना, लेना दान करना, ग्रहण करना)। समुद्रे = समुद्र में (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। वाचम् = वाणी को (वच - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। इन्वसि = व्याप्त करता है, तृप्त करता है (इन्व - व्याप्त होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। पिशङ्गम् = प्रकाशगामी, विखण्डन करने वाला, टुकड़े करने वाला (पिश - जाना, प्रकाश होना, चीरना, टुकड़े करना)। बहुलम् = बहुत (सर्वनाम)। पुरुस्पृहम् = परिपूर्ण, अग्रगामी, अग्रणी इच्छा करने वाले को (स्पृह - इच्छा करना, लिप्सा करना, पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अर्षसि = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना) ॥ 21 ॥

1341. मृजानो वारे पवमानो, अव्यये वृषो अचिक्रदत् वने।

देवानाम् सोम पवमान, निष्कृतम् गोभिः अज्जानो अर्षसि ॥ 22 ॥ 9-107-22

मन्त्रार्थ :- मृजानो = शुद्ध करता हुआ, पवित्र करता हुआ वारे = वरण में, इच्छाओं में पवमानो = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला अव्यये = अव्यय में, समाप्त न होने वाले में वृषो = पराक्रमी अचिक्रदत् = किया वने = वाणी में, वनों में देवानाम् = देवों का सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने

वाला **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **अज्जानो** = स्वच्छता, प्रकाश करने वाले **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो ॥ 22 ॥

पदार्थ :- **मृजानो** = शुद्ध करता हुआ, पवित्र करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **वारे** = वरण में, इच्छाओं में (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **पवमानो** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **अव्यये** = अव्यय में, समाप्त न होने वाले में (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना)। **वृषो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **अचिक्रदत्** = किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृ - करना)। **वने** = वाणी में, वनों में (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **निष्कृतम्** = निष्कृति, निश्चित रूप से किया हुआ (नि-निश्चित, नितराम्, निरन्तर, कृ- करना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **अज्जानो** = स्वच्छता, प्रकाश करने वाले (अज्ज - स्वच्छ करना, प्रकाशित होना, जाना)। **अर्षसि** = अन्तर्गमन करते हो, अन्तर्दर्शन करते हो (ऋष् = जाना, जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना) ॥ 22 ॥

1342. पवस्व वाजसातये, अभि विश्वानि काव्या

त्वम् समुद्रः प्रथमे विधारयो, देवेभ्यः सोम मत्सरः ॥ 23 ॥

9-107-23

मन्त्रार्थ - पवस्व = पवित्र करो **वाजसातये** = अत्यन्त विद्यावान् के लिए **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **काव्या** = काव्य **त्वम्** = तुम **समुद्रः** = समुद्र **प्रथमे** = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में **विधारयो** = विधर्म, विशेष धारण **देवेभ्यः** = देवों के लिए **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मत्सरः** = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त आनन्दकारी ॥ 23 ॥

पदार्थ - पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **वाजसातये** = अत्यन्त विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **काव्या** = काव्य (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **समुद्रः** = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। **प्रथमे** = प्रथम में, प्रसिद्ध में, विस्तार करने वाले में (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **विधारयो** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **देवेभ्यः** = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मत्सरः** = अत्यन्त आनन्दगामी, अत्यन्त

आनन्दकारी (मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना) ॥ 23 ॥

1343. पवमाना असृक्षत, पवित्रम् अति धारया ।

मरुत्वन्तो मत्सरा इन्द्रिया हया, मेधाम् अभि प्रयांसि च ॥ 25 ॥ 9-107-25

मन्त्रार्थ - पवमाना = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया पवित्रम् = पवित्र को अति = बहुत, अत्यधिक धारया = धार द्वारा मरुत्वन्तो = मरुत्वान्, मरुतों से युक्त, मरणशील से युक्त मत्सरा = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो इन्द्रिया = इन्द्र से सम्बन्धित हया = गतिशील, सेवाभावी मेधाम् = मेधा को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा प्रयांसि = प्रयाणों को च = और ॥ 25 ॥

पदार्थ - पवमाना = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। असृक्षत = संचरित किया, गया, जाना, पाया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृक्ष - जाना, चलना, जानना, प्राप्त करना, पाना)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अति = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। मरुत्वन्तो = मरुत्वान्, मरुतों से युक्त, मरणशील से युक्त (मृ = मरना, देहत्याग करना)। मत्सरा = आनन्दगामी हो, आनन्दकारी हो (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना, मद् - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। इन्द्रिया = इन्द्र से सम्बन्धित (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। हया = गतिशील, सेवाभावी (हय - चलना, कूदना, नृत्य करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, सेवा करना) मेधाम् = मेधा को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्रयांसि = प्रयाणों को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, या = जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। च = और ॥ 25 ॥

(327) सूक्त 108

1344. पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय, सोम क्रतुवित्तमो मदः ।

महि द्युक्षतमो मदः ॥ 1 ॥ 9-108-1

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो मधुमत्तमः = अत्यन्त मधुयुक्त इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम क्रतुवित्तमो = कर्मवेत्ता, कर्म को अत्यन्त जानने वाले मदः = मद, हर्ष, तृप्ति महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं द्युक्षतमो = अत्यन्त प्रकाशवान् मदः = मद, हर्ष, तृप्ति ॥ 1 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मधुमत्तमः = मधुयुक्त (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। क्रतुवित्तमो = कर्मवेत्ता, कर्म को अत्यन्त जानने वाले (कृ = करना, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। मदः = मद, हर्ष, तृप्ति (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्त्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। द्युक्षतमो = अत्यन्त प्रकाशवान् (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना)। मदः = मद, हर्ष, तृप्ति (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 1 ॥

1345. यस्य ते पीत्वा वृषभो, वृषायते अस्य पीता स्वर्विदः ।

स सुप्रकेतो अभ्यक्रमीत्, इषो अच्छा वाजम् न एतशः ॥ 2 ॥

9-108-2

मन्त्रार्थ :- यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए पीत्वा = पीकर वृषभो = पराक्रमी वृषायते = पराक्रम करता है अस्य = इसका पीता = पीकर स्वर्विदः = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् स = वह, उसने। सुप्रकेतो = सर्वोत्तम सलाह देने वाला, महाज्ञानी, उत्तम निवास अभ्यक्रमीत् = अभिक्रमण किया इषो = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ वाजम् = विद्या को, गति को न = नहीं, समान, उपमार्थक एतशः = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यस्य = जिसका (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। पीत्वा = पीकर (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। वृषभो = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। वृषायते = पराक्रम करता है (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। पीता = पीकर (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। स्वर्विदः = शब्द को जानने वाले, शब्दज्ञानी, विद्वान् (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्तु-स्तु = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। स = वह, उसने। सुप्रकेतो = सर्वोत्तम सलाह देने वाला, महाज्ञानी, उत्तम निवास (सु = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग), प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। अभ्यक्रमीत् = अभिक्रमण किया (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, क्रम् = चलना, निर्भयता से चलना, रक्षा करना, बढ़ना)। इषो = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ - अच्छा होना, निर्मल करना)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। एतशः = ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा से (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना) ॥ 2 ॥

1346. त्वम् हि अङ्ग देव्या, पवमान जनिमानि द्युमत्तमः ।

अमृतत्वाय घोषयः ॥ 3 ॥ 9-108-3

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम हि = ही, निश्चय अङ्ग = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला देव्या = दिव्य पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला जनिमानि = उत्पन्नों को द्युमत्तमः = अत्यन्त अग्रगामी अमृतत्वाय = अमृतत्व के लिए, अमरता के लिए घोषयन् = घोष करते हुए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। अङ्ग = अङ्ग, विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ्ग = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। देव्या = दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। जनिमानि = उत्पन्नों को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। द्युमत्तमः = अत्यन्त अग्रगामी (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। अमृतत्वाय = अमृतत्व के लिए, अमरता के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। घोषयः = घोष करते हुए (घुष् - घोषणा करना, शब्द करना, प्रशंसा करना) ॥ 3 ॥

1347. येना नवग्वा दध्यङ् अपोर्णुते, येन विप्रास आपिरे ।

देवानाम् सुम्ने अमृतस्य, चारुणो येन श्रवांसि आनशुः ॥ 4 ॥

9-108-4

मन्त्रार्थ :- येना = जिस। नवग्वा = नव-वाणी, नव-गति दध्यङ् = धारण करने वाले अपोर्णुते = अपाच्छादन करता है येन = जिससे, जिसके द्वारा विप्रास = विप्रगण आपिरे = प्राप्त, व्याप्त हुए देवानाम् = देवों का सुम्ने = सत्

चिन्तन में अमृतस्य = अमृत, अविनाशी का चारुणो = चलाने वाला, वीर, प्रयास करने वाला येन = जिससे, जिसके द्वारा। श्रवांसि = श्रवण करो आनशुः = प्राणवान् होता है, स्तुति करता है, नष्ट होता है ॥ 4 ॥

पदार्थ :- येना = जिस। नवग्वा = नव-वाणी, नव-गति (नव = नौ (संख्या), गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, गम्-गच्छ - जाना, इष्टार्थ सिद्ध होना)। दध्यङ् = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। अपोर्णुते = अपाच्छादन करता है (अप+ऊर्णुते, = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), ऊर्ण = बुनना, आच्छादन करना, ढकना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा। विप्रास = विप्रगण (वि = विशेष, प्रा - पूर्ण करना, पूर्ण होना, तृप्त करना)। आपिरे = प्राप्त, व्याप्त हुए (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। देवानाम् = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सुम्ने = सत् चिन्तन में (सु - अच्छा, सुन्दर, सु = उत्पन्न करना, म्ना = अभ्यास करना, विचार करना, मनन करना)। अमृतस्य = अमृत, अविनाशी का (मृ - मरना)। चारुणो = चलाने वाला, वीर, प्रयास करने वाला (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना, चार - संशय होना, निश्चय करना)। येन = जिससे, जिसके द्वारा। श्रवांसि = श्रवण करो (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। आनशुः = प्राणवान् होता है, स्तुति करता है, नष्ट होता है (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अन्- चेतन होना, प्राण होना, जीवन होना, समर्थ होना, जाना, नश - खो जाना, नष्ट होना, दिखाई नहीं देना, नु - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नु-नव - शब्द करना, निश्चय करना, नु-नुव - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। ॥

1348. एष स्य धारया सुतो अव्यो, वारेभिः पवते मदित्तमः ।

क्रीडन् ऊर्मिः अपाम् इव ॥ 5 ॥ 9-108-5

मन्त्रार्थ - एष = यह स्य = वह, बन्धन धारया = धार द्वारा सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए अव्यो = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा वारेभिः = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है मदित्तमः = अत्यन्त आनन्दित करने वाले क्रीडन् = क्रीडा करते हुए ऊर्मिः = ऊर्मि अपाम् = अपा को, पालकों का इव = समान, की भाँति, के समान ॥ 5 ॥

पदार्थ - एष = यह (सर्वनाम)। स्य = वह, बन्धन (स्य - वैदिक सर्वनाम्, सि = बाँधना)। धारया = धार द्वारा (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। सुतो = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। अव्यो = पालनीय, रक्षणीय, बाँधा (अव्य - बाँधना, पालन करना, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। वारेभिः = वरणों द्वारा, इच्छाओं द्वारा (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। पवते = पवित्र करता है, पालन करता है, रक्षा करता है (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। मदित्तमः = अत्यन्त आनन्दित करने वाले (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। क्रीडन् = क्रीडा करते हुए (क्रीड् - खेलना)। ऊर्मिः = ऊर्मि (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, उर् = जाना, चलना)। अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) ॥ 5 ॥

1349. यः उस्त्रियाः अप्या अन्तः, अश्मनो निर्गा अकृन्तत् ओजसा ।

अभि व्रजम् तन्निषे गव्यम्, अश्व्यम् वर्मीव धृष्णवा रुज ॥ 6 ॥ 9-108-6

मन्त्रार्थ - यः = जो उस्त्रियाः = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को अप्या = पालन करने वाला अन्तः = बीच में, भीतर अश्मनो = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त का निः = निश्चित, निरन्तर गाः = गान, गाय, गायक, गाने वाले अकृन्तत् = कतर दिया ओजसा = ओज द्वारा अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा व्रजम् = प्रगतिशील, पूर्ण सिद्ध को तन्निषे = तत्त्व के लिए, विस्तार के लिए गव्यम् = गव्य, कहने योग्य, कथनीय अश्व्यम् = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को वर्मीव = वर्म, आच्छादन धृष्णवा = विजय, गर्व द्वारा रुज = हिंसा करने वाले ओ३म् = परमात्मा वर्मीव = वर्म, आच्छादन धृष्णवा = विजय, गर्व द्वारा रुज = हिंसा करने वाले ॥ 6 ॥

पदार्थ - यः = जो (सर्वनाम)। **उस्त्रियाः** = उस्त्रिय, प्रभातकर्ता को, तपाने वाले को (उषस् - प्रभात होना, उष - जलना, हिंसा करना, रोग होना)। **अप्या** = पालन करने वाला (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **अन्तः** = बीच में, भीतर (उपसर्ग, सर्वनाम)। **अश्मनो** = व्याप्त, व्यापक, प्राप्त का (अश् = भोजन करना, व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना)। **निः** = निश्चित, निरन्तर (अव्यय), ऋ - जाना, जानना, पाना)। **गाः** = गान, गाय, गायक, गाने वाले (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। **अकृन्तत्** = कतर दिया (अ = नहीं, उपसर्ग, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, कृत - कतरना, काटना, घेर लेना, वेषटित करना, कृ = करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **ब्रजम्** = प्रगतिशील, पूर्ण सिद्ध को (ब्रज = जाना, पूर्ण करना, सिद्ध करना)। **तन्निषे** = तत्व के लिए, विस्तार के लिए (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना)। **गव्यम्** = गव्य, कहने योग्य, कथनीय (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **वर्मीव** = वर्म, आच्छादन (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, पसन्द करना, नियोजित करना, नियमित करना, आच्छादित करना, ढंकना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **धृष्णावा** = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **रुज** = हिंसा करने वाले (रुज - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना)। ॥ 6 ॥

1350. आ सोता परि षिञ्चत अश्वम्, न स्तोमम अमुरम् रजस्तुरम्।

वनप्रक्षम् उदप्रुतम् ॥ 7 ॥ 9-108-7

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **सोता** = अभिसुत करो, उत्पन्न होने वाला **परि** = सभी तरफ **षिञ्चत** = सिञ्चन करो **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **स्तोमम्** = स्तोम **अमुरम्** = पालक को **रजस्तुरम्** = रजातुर को, विलीनता के लिए आतुर को **वनप्रक्षम्** = वन-प्रक्ष को, वन-निवासी को **उदप्रुतम्** = आद्रक को गति देने वाले, उदक द्वारा गतिशील को ॥ 7 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **सोता** = अभिसुत करो, उत्पन्न होने वाला (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **षिञ्चत** = सिञ्चन करो (सिञ्च् - सिञ्चन करना)। **अश्वम्** = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **स्तोमम्** = स्तोम (स्तोम - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। **अमुरम्** = पालक को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **रजस्तुरम्** = रजातुर को, विलीनता के लिए आतुर को (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना, तुर - शीघ्र चलना, तीव्र गति से चलना, शीघ्रता करना)। **वनप्रक्षम्** = वन-प्रक्ष को, वन-निवासी को (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना, प्र - प्रकृष्ट, अधिक, क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **उदप्रुतम्** = आद्रक को गति देने वाले, उदक द्वारा गतिशील को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, प्रु - अधिक होना, गति करना, हिलना) ॥ 7 ॥

1351. सहस्रधारम् वृषभम्, पयोवृधम् प्रियम् देवाय जन्मने।

ऋतेन यः ऋतजातो विवावृधे, राजा देव ऋतम् बृहत् ॥ 8 ॥

9-108-8

मन्त्रार्थ :- सहस्रधारम् = हजारों धाराओं वाला वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को पयोवृधम् = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण की वृद्धि को प्रियम् = प्रिय को देवाय = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों के लिए जन्मने = जन्म के लिए ऋतेन = ऋत द्वारा यः = जो ऋतजातो = ऋत से उत्पन्न विवावृधे = विशेष वृद्धि करता है राजा = राजा देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने ऋतम् = ऋत को बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् ॥

पदार्थ :- सहस्रधारम् = हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः- धारा होना, धार बाँधना)। वृषभम् = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित)। पयोवृधम् = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण की वृद्धि को (पय - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना, वृध - बढ़ना, अधिक होना)। प्रियम् = प्रिय को (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। देवाय = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। जन्मने = जन्म के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। ऋतेन = ऋत द्वारा (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। यः = जो (सर्वनाम)। ऋतजातो = ऋत से उत्पन्न (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। विवावृधे = विशेष वृद्धि करता है (वि = विशेष, विना, विलोम, वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। राजा = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। ऋतम् = ऋत को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ 8 ॥

1352. अभि द्युम्नम् बृहत् यशः, इषस्पते दिदीहि देव देवयु।

वि कोशम् मध्यमम् युव ॥ 9 ॥

9-108-9

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा द्युम्नम् = प्रकाशमान को बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् यशः = यश, कीर्ति इषस्पते = इच्छापति, प्रगति, इच्छा के स्वामी दिदीहि = बढ़ाओ, रूप बनाओ देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण देवयु = देवयु को, देवयुक्त को वि = विशेष, विना, विलोम कोशम् = कोश को मध्यमम् = मध्यम को युव = युव ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। द्युम्नम् = प्रकाशमान को (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। यशः = यश, कीर्ति (यश् - प्रख्यात होना, कीर्ति होना, व्याप्त होना, फैलना)। इषस्पते = इच्छापति, प्रगति, इच्छा के स्वामी (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। दिदीहि = बढ़ाओ, रूप बनाओ (दिह् = रूप बनाना, बढ़ना, वृद्धि करना)। देव = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। देवयु = देवयु को, देवयुक्त को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, यु - मिलाना, अलग करना, बाँधना, गूँथना, निन्दा करना, दोष लगाना, अपमान करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। कोशम् = कोश को (कुश् = आलिंगन करना, लपेटना, कोश होना, समाधान करना, सहना)। मध्यमम् = मध्यम को (सर्वनाम)। युव = युव (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना) ॥ 9 ॥

1353. आ वच्यस्व सुदक्ष चम्बोः, सुतो विशाम् वह्निः न विशपतिः।

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वच्यस्व** = बोलो, अध्ययन करो, जानो **सुदक्ष** = हे सुदक्ष, हे दक्षवान् **चम्बोः** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए **विशाम्** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को **वहिनः** = वहन करने वाला **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **विशपतिः** = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी **वृष्टिम्** = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, वर्षा को, पराक्रमी को **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पवस्व** = पवित्र करो **रीतिम्** = रीति को, प्रवाह को **अपाम्** = पालन करने वाले को **जिन्वा** = प्रसन्न करता हुआ, सन्तुष्ट करता हुआ **गविष्टये** = गविष्ट के लिए, अत्यन्त विद्वान् के लिए **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि ॥ 10 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वच्यस्व** = बोलो, अध्ययन करो, जानो (वच् - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। **सुदक्ष** = हे सुदक्ष, हे दक्षवान् (सु - उत्तम, अच्छा, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **चम्बोः** = भय दिखाने वाला, मर्दन करने वाला, प्राप्त करने वाला (चम्ब - मर्दन करना, भय दिखाना, चम - खाना, पाना)। **सुतो** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **विशाम्** = विश, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश् = प्रवेश करना, भीतर जाना)। **वहिनः** = वहन करने वाला (वह = वहन करना ले जाना, बहना, झरना, ढोना, ढो ले जाना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **विशपतिः** = विश के स्वामी, रक्षक, सूचना, प्रेरणा, अन्तर्गमन करने वालों के रक्षक, स्वामी (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, पत् = ऐश्वर्य होना, रक्षक-स्वामी होना)। **वृष्टिम्** = वृष्टि को, उच्च पराक्रम को, वर्षा को, पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **रीतिम्** = रीति को, प्रवाह को (री - जाना, बहना, झरना, चूना, टपकना, गिरना, नीचे आना, सुनना)। **अपाम्** = पालन करने वाले को (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। **जिन्वा** = प्रसन्न करता हुआ, सन्तुष्ट करता हुआ (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **गविष्टये** = गविष्ट के लिए, अत्यन्त विद्वान् के लिए (गु = शब्द करना, मनन करना)। **धियः** = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना) ॥ 10 ॥

1354. एतम् उ त्वम् मदच्युतम्, सहस्रधारम् वृषभम् दिवो दुहुः ।

विश्वा वसूनि बिभ्रतम् ॥ 11 ॥

9-108-11

मन्त्रार्थ - एतम् = यह, इसको उ = निश्चय ही, भी **त्वम्** = उस को **मदच्युतम्** = आनन्द-सिंचित को **सहस्रधारम्** = हजारों धाराओं वाला **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **दुहम्** = दुहने वाले को **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **वसूनि** = वसुओं को **बिभ्रतम्** = भरण, धारण करने वाले को ॥ 11 ॥

पदार्थ - एतम् = यह, इसको (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **त्वम्** = उस को (सर्वनाम)। **मदच्युतम्** = आनन्द-सिंचित को (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना, च्युत - सींचना, भिगोना, बहना)। **सहस्रधारम्** = हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः - धारा होना, धार बाँधना)। **वृषभम्** = वृषभ को, पराक्रमी, वर्षा करने वाले को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **दिवो** = दिव, स्तुतिकर्ता, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **दुहुः** = दुहने वाले को (दुह - दूध निकालना, दोहना, रिक्त करना, लेना, खींचना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **वसूनि** = वसुओं

को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **बिभ्रतम्** = भरण, धारण करने वाले को (भृ - भरना, भरण करना, धारण करना) ॥ 11 ॥

1355. स सुन्वे यो वसूनाम् यो, रायाम् आनेता यः इडानाम्।

सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥ 13 ॥

9-108-13

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **सुन्वे** = आसवन किया जाये **यो** = जो **वसूनाम्** = वसुओं का **यो** = जो **रायाम्** = गति, विद्या, वाणी को **आनेता** = लाने वाला **यः** = जो **इडानाम्** = स्तुतियों का **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **यः** = जो **सुक्षितीनाम्** = सुन्दर निवास वाले को ॥ 13 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **सुन्वे** = आसवन किया जाये (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **वसूनाम्** = वसुओं का (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **रायाम्** = गति, विद्या, वाणी को (रा-देना, दान करना, रय् = गति करना, जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **आनेता** = लाने वाला (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, नी = ले जाना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **इडानाम्** = स्तुतियों का (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। **सोमो** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **सुक्षितीनाम्** = सुन्दर निवास वाले को (सु = उत्तम, अच्छा, उपसर्ग, क्षि = निवास करना, रहना) ॥ 13 ॥

1356. यस्य नः इन्द्रः पिबात् यस्य, मरुतो यस्य वार्यमणा भगः

आ येन मित्रावरुणा करामहे, आ इन्द्रम् अवसे महे ॥ 14 ॥

9-108-14

मन्त्रार्थ :- यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली **पिबात्** = पीता है **यस्य** = जिसका **मरुतो** = मरणशील, मरुतों का **यस्य** = जिसका **वारि** = वरणीय, वरण करने वाला **अर्यमणा** = अर्यमण **भगः** = सेवनीय, सेवायोग्य **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **येन** = जिससे, जिसके द्वारा। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय **करामहे** = करते हैं **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो **महे** = महान्, पूज्य, महिमावान् ॥ 14 ॥

पदार्थ :- यस्य = जिसका ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) **पिबात्** = पीता है (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **यस्य** = जिसका **मरुतो** = मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यस्य** = जिसका **वारि** = वरणीय, वरण करने वाला (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अर्यमणा** = अर्यमण (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **भगः** = सेवनीय, सेवायोग्य (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **येन** = जिससे, जिसके द्वारा। **मित्रावरुणा** = मित्र और वरुण, स्नेही तथा वरणीय (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना, वृ = वरण करना, अपनाना, पसन्द करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **करामहे** = करते हैं (कृ - करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व

होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना) ॥ 14 ॥

(328) सूक्त 109

1357. परि प्र धन्व आ इन्द्राय सोम, स्वादुः मित्राय पूष्णे भगाय ॥ 1 ॥ 9-109-1

मन्त्रार्थ - परि = सभी तरफ प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक धन्व = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो इन्द्राय = इन्द्र के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम स्वादुः = स्वाद युक्त मित्राय = मित्र के लिए पूष्णे = पोषण के लिए, पोषण करने वाले, पोषणकर्ता के लिए भगाय = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। धन्व = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। इन्द्राय = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। स्वादुः = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। मित्राय = मित्र के लिए (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। पूष्णे = पोषण के लिए, पोषण करने वाले, पोषणकर्ता के लिए (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। भगाय = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए (भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना) ॥ 1 ॥

1358. इन्द्रः ते सोम सुतस्य पेयाः, क्रत्वे दक्षाय विश्वे च देवाः ॥ 2 ॥

9-109-2

मन्त्रार्थ :- इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का पेयाः = पान करें क्रत्वे = कृत्य के लिए दक्षाय = दक्ष के लिए विश्वे = सभी च = और। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने ॥ 2 ॥

पदार्थ :- इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। सोम = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। सुतस्य = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए का (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। पेयाः = पान करें (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। क्रत्वे = कृत्य के लिए (कृ - करना)। दक्षाय = दक्ष के लिए (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। च = और। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ 2 ॥

1359. एव अमृताय महे क्षयाय, स शुक्रो अर्ष दिव्यः पीयूषः ॥ 3 ॥

9-109-3

मन्त्रार्थ :- एव = ही अमृताय = अमृत के लिए महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् क्षयाय = निवास के लिए स = वह, उसने शुक्रो = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन दिव्यः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय पीयूषः = पीयूष ॥ 3 ॥

पदार्थ :- एव = ही (अव्यय)। अमृताय = अमृत के लिए (अ - नहीं, मृ - मरना)। महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। क्षयाय = निवास के लिए (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना, निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। स = वह, उसने (सर्वनाम)। शुक्रो = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। अर्ष = अन्तर्गमन, अन्तर्दर्शन (ऋष् = जाना,

जानना, पहुँचना, पाना, सूक्ष्मता से भीतर देखना, अन्तर्गमन करना)। **दिव्यः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पीयूषः** = पीयूष (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना) ॥ 3 ॥

1360. पवस्व सोम महान् समुद्रः, पिता देवानाम् विश्व अभि धाम ॥ 4 ॥ 9-109-4

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम महान् = बड़े, पूज्य, महान् समुद्रः = समुद्र पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता देवानाम् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का विश्वा = विश्व, सभी, सब अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा धाम = धारण करने वाले ॥ 4 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्त्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। समुद्रः = समुद्र (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना)। पिता = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। देवानाम् = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। धाम = धारण करने वाले (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना) ॥ 4 ॥

1361. शुक्रः पवस्व देवेभ्यः सोम, दिवे पृथिव्यै शम् च प्रजायै ॥ 5 ॥ 9-109-5

मन्त्रार्थ :- शुक्रः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी पवस्व = पवित्र करो देवेभ्यः = देवों के लिए सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम दिवे = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में पृथिव्यै = पृथ्वी के लिए शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी च = और। प्रजायै = प्रजा के लिए ॥ 5 ॥

पदार्थ :- शुक्रः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। देवेभ्यः = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। दिवे = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। पृथिव्यै = पृथ्वी के लिए (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। शम् = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। च = और। प्रजायै = प्रजा के लिए (प्र - प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न करना) ॥ 5 ॥

1362. दिवो धर्ता असि शुक्रः पीयूषः, सत्ये विधर्मन् वाजी पवस्व ॥ 6 ॥ 9-109-6

मन्त्रार्थ :- दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय धर्ता = धारणकर्ता, धारण करने वाला असि = हो शुक्रः = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी पीयूषः = पीयूष सत्ये = सत्य में विधर्मन् = विधर्म, विशेष धारण वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त पवस्व = पवित्र करो ॥ 6 ॥

पदार्थ :- दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द

करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **धर्ता** = धारणकर्ता, धारण करने वाला (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **शुक्रः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **पीयूषः** = पीयूष (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **सत्ये** = सत्य में (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **पवस्व** = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना) ॥ 6 ॥

1363. पवस्व सोम द्युम्नि सुधारो, महान् अवीनाम् अनु पूर्व्यः ॥ 7 ॥

9-109-7

मन्त्रार्थ - पवस्व = पवित्र करो सोम = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता द्युम्नि = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक सुधारो = भलीभाँति धारण करने वाले महान् = बड़े, पूज्य, महान् अवीनाम् = व्याप्तों का, रक्षकों का अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल पूर्व्यः = पूर्व ॥ 7 ॥

पदार्थ - पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सोम = हे सृजन-ऐश्वर्य-अन्तकर्ता (सु = उत्पन्न सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। द्युम्नि = अभिगमन करने वाला, आक्रामक, प्रकाशक (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। सुधारो = भलीभाँति धारण करने वाले (सु - उत्तम, अच्छा, धा - धारण करना, रक्षण करना, देना) महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। अवीनाम् = व्याप्तों का, रक्षकों का (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, वी- जाना, व्यापना)। अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। पूर्व्यः = पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना) ॥ 7 ॥

1364. पवस्व सोम क्रत्वे दक्षाय, अश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥ 10 ॥

9-109-10

मन्त्रार्थ :- पवस्व = पवित्र करो सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम क्रत्वे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् दक्षाय = दक्ष के लिए अश्वो = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक न = नहीं, समान, उपमार्थक निक्तो = शुद्ध, स्वच्छ, पालन वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त धनाय = धन के लिए ॥ 10 ॥

पदार्थ :- पवस्व = पवित्र करो (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। क्रत्वे = कृतु के लिए, करने वाले के लिए (कृ = करना)। दक्षाय = दक्ष के लिए (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। अश्वो = अश्व, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। निक्तो = शुद्ध, स्वच्छ, पालन (निक्-निज-निनिक् - शुद्ध करना, स्वच्छ करना, पालना)। वाजी = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। धनाय = धन के लिए (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 10 ॥

1365. शिशुम् जज्ञानम् हरिम् मृजन्ति, पवित्रे सोमम् देवेभ्यः इन्दुम् ॥ 12 ॥ 9-109-12

मन्त्रार्थ :- शिशुम् = शिशु को जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना हरिम् = हरि को मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र सोमम् = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को देवेभ्यः = देवों के लिए इन्दुम् = इन्दु को ॥ 12 ॥

पदार्थ :- शिशुम् = शिशु को (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। जज्ञानम् = उत्पन्न किया, जाना (जन- उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, ज्ञा - जानना)। हरिम् = हरि को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। मृजन्ति = शुद्ध करते हैं, पवित्र करते हैं (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। पवित्रे = पवित्र में, दो पवित्र (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। सोमम् = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। देवेभ्यः = देवों के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। इन्दुम् = इन्दु को (इन्द - परम ऐश्वर्य होना) ॥ 3 ॥

1366. इन्दुः पविष्ट चारुः मदाय, अपाम् उपस्थे कविः भगाय ॥ 13 ॥ 9-109-13

मन्त्रार्थ - इन्दुः = इन्दु पविष्ट = पवित्र, पालन, रक्षा का प्रकाश करने वाला चारुः = चारु मदाय = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए अपाम् = अपा को, पालकों का उपस्थे = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित कविः = ज्ञानी, कवि भगाय = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए ॥ 13 ॥

पदार्थ - इन्दुः = इन्दु (इन्द - परम ऐश्वर्य होना)। पविष्ट = पवित्र, पालन, रक्षा का प्रकाश करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। चारुः = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। मदाय = हर्ष के लिए, तृप्ति के लिए (मद - हर्षित होना, तृप्त करना, समाधान करना)। अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। उपस्थे = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित (उप = समीप, स्थ = स्थित)। कविः = ज्ञानी, कवि (कु - शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। भगाय = भग, सेवा, दान, ऐश्वर्य के लिए (भग्- भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना) ॥ 13 ॥

1367. प्र सुवानो अक्षाः सहस्रधारः, तिरः पवित्रम् वि वारम् अव्यम् ॥ 16 ॥ 9-109-16

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक सुवानो = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त अक्षाः = अक्ष, समूह, व्यापक सहस्रधारः = हजारों धाराओं वाला तिरः = तिरछा, तिर्यक् पवित्रम् = पवित्र को वि = विशेष, विना, विलोम वारम् = वरण को अव्यम् = व्यय हो, समाप्त हो ॥ 16 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। सुवानो = उत्पन्न करने वाले, ऐश्वर्य वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, स्वन - शब्द करना)। अक्षाः = अक्ष, समूह, व्यापक (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। सहस्रधारः = हजारों धाराओं वाला (सहस्र = हजार, संख्या, धाः- धारा होना, धार बाँधना)। तिरः = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। पवित्रम् = पवित्र को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। वारम् = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। अव्यम् = व्यय हो, समाप्त हो (अ = नहीं, वि - विशेष, इ-अय् - जाना, जानना, पाना, व्यय - आच्छादन करना, उपयोग होना, खर्च होना, नाश होना) ॥ 16 ॥

1368. स वाजी अक्षाः सहस्ररेता, अदिभः मृजानो गोभिः श्रीणानः ॥ 17 ॥ 9-109-17

मन्त्रार्थ :- स = वह, उसने **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक **सहस्ररेता** = सहस्ररेत, अत्यन्त प्रगतिशील, अत्यन्त विद्वान् **अदिभः** = खाद्य को धारण करने वाले **मृजानो** = शुद्ध करता हुआ, पवित्र करता हुआ **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ **श्रीणानः** = सेवा करते हुए ॥ 17 ॥

पदार्थ :- स = वह, उसने (सर्वनाम)। **वाजी** = बलों से युक्त, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अक्षाः** = अक्ष, समूह, व्यापक (अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना)। **सहस्ररेता** = सहस्ररेत, अत्यन्त प्रगतिशील, अत्यन्त विद्वान् (सहस्र = हजार, रि - जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, री - गति करना, झरना-टपकना, लेना, शब्द करना, सुनना)। **अदिभः** = खाद्य को धारण करने वाले (अद् = खाना, आत्मसात् करना, अ - नहीं, दा - देना)। **मृजानो** = शुद्ध करता हुआ, पवित्र करता हुआ (मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना, मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना)। **गोभिः** = गो द्वारा, गो के साथ (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना)। **श्रीणानः** = सेवा करते हुए (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) ॥ 17 ॥

1369. प्र सोम याहि इन्द्रस्य कुक्षा, नृभिः येमानो अद्रिभिः सुतः ॥ 18 ॥ 9-109-18

मन्त्रार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें **इन्द्रस्य** = इन्द्र का **कुक्षा** = पूर्ण करने वाले, भरने वाले **नृभिः** = नरों द्वारा **येमानो** = जाते हुए **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए ॥ 18 ॥

पदार्थ :- प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **सोम** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **याहि** = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **इन्द्रस्य** = इन्द्र का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **कुक्षा** = पूर्ण करने वाले, भरने वाले (कुक्ष् = पूर्ण करना, भरना)। **नृभिः** = नरों द्वारा (नृ - ले जाना)। **येमानो** = जाते हुए (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अद्रिभिः** = अद्रियों द्वारा (द्रि - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **सुतः** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) ॥ 18 ॥

(329) सूक्त 110

1370. परि ऊ पु प्र धन्व वाजसातये, परि वृत्राणि सक्षणिः ।

द्विषः तरध्या ऋणया नः ईयसे ॥ 1 ॥ 9-110-1

मन्त्रार्थ - परि = सभी तरफ **उ** = निश्चय ही, भी **पु** = उत्तम, श्रेष्ठ **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए **परि** = सभी तरफ **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को **सक्षणिः** = प्रकाश युक्त, शब्द युक्त **द्विषः** = द्वेष करने वाला **तरध्या** = तारने के लिए, तरने के लिए **ऋणया** = ऋण से, गति से **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **ईयसे** = जाते हो ॥ 1 ॥

पदार्थ :- परि = सभी तरफ (उपसर्ग)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **पु** = उत्तम, श्रेष्ठ (उपसर्ग)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **धन्व** = चलो, जाओ, शब्द करो, जानो (धन्व - जाना, जानना, पाना, धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना)। **वाजसातये** = विद्यावान् के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भोजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **परि** = सभी

तरफ (उपसर्ग)। **वृत्राणि** = वृत्रों को, आच्छादनों को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिसा करना)। **सक्षणिः** = प्रकाश युक्त, शब्द युक्त (स = सहित, साथ (उपसर्ग), क्षण - शब्द करना, दीप्त करना)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना)। **तरध्या** = तारने के लिए, तरने के लिए (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **ऋणया** = ऋण से, गति से (ऋणु - चलना, जाना, गमन करना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ईयसे** = जाते हो (ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना) ॥ 1 ॥

1371. अनु हि त्वा सुतम् सोम, मदामसि महे समर्यराज्ये ।

वाजान् अभि पवमान प्र गाहसे ॥ 2 ॥

9-110-2

मन्त्रार्थ :- अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **हि** = ही, निश्चय **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम **मदामसि** = मद, हर्ष, तृप्ति, आनन्दित करते हो **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् **समर्यराज्ये** = समतापूर्ण-राज्य में, सम-राज्य में **वाजान्** = वाजो को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **गाहसे** = विलोड़न करता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **सुतम्** = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु = उत्तम, अच्छा, सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। **सोम** = हे ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। **मदामसि** = मद, हर्ष, तृप्ति, आनन्दित करते हो (मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **समर्यराज्ये** = समतापूर्ण-राज्य में, सम-राज्य में (सम = न घबराना, एक समान रहना, राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **वाजान्** = वाजो को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **गाहसे** = विलोड़न करता है (गाह - नष्ट करना, मर्म भेद करना, फेरना, हिलाना, गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 2 ॥

1372. अजीजनो हि पवमान, सूर्यम् विधारे शक्मना पयः ।

गोजीरया रंहमाणः पुरन्ध्या ॥ 3 ॥ 9-110-3

मन्त्रार्थ :- अजीजनो = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला **हि** = ही, निश्चय **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **सूर्यम्** = सूर्य को **विधारे** = विशेषतया धारण करने वाला **शक्मना** = शक्तिवान्, क्षमयुक्त, सामर्थ्ययुक्त **पयः** = गतिशील, प्रवाहमान **गोजीरया** = शब्द करने वाला, उपदेशक, कष्ट **रंहमाणः** = प्रगतिशील, प्रकाशमान **पुरन्ध्या** = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा ॥ 3 ॥

पदार्थ :- अजीजनो = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **विधारे** = विशेषतया

धारण करने वाला (वि - विशेष, धा - धारण करना)। शक्मना = शक्तिवान्, क्षमयुक्त, सामर्थ्ययुक्त (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। पयः = गतिशील, प्रवाहमान (पय् = जाना, जानना, पाना, बहना)। गोजीरया = शब्द करने वाला, उपदेशक, कष्ट (गुज् - शब्द करना, अस्पष्ट बोलना, चुराना, गोज् - कष्ट होना)। रंहमाणः = प्रगतिशील, प्रकाशमान (रंह = चलना, वेग से जाना। रंह = चमकना, प्रकाशित होना, बोलना, सम्भाषण करना)। पुरन्ध्या = पुरन्धि द्वारा, अग्रगामी, अग्रणी को धारण करने वाले द्वारा (पुर = आगे जाना, धि-धा = धारण करना) ॥ 3 ॥

1373. अजीजनो अमृत मृत्येषु आ, ऋतस्य धर्मन् अमृतस्य चारुणः।

सदा असरो वाजम् अच्छा सनिष्यदत् ॥ 4 ॥ 9-110-4

मन्त्रार्थ :- अजीजनो = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला अमृत = अमृत, मृत्यु से परे मृत्येषु = मृत्यों के लिए, मरणशीलों के लिए आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम ऋतस्य = ऋत का धर्मन् = धर्म अमृतस्य = अमृत, अविनाशी का चारुणः = चलाने वाला, वीर, प्रयास करने वाला सदा = सदा, सर्व काल में असरो = ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह किया वाजम् = विद्या को, गति को अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ सनिष्यदत् = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अजीजनो = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। अमृत = अमृत, मृत्यु से परे (अ - नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। मर्त्याय = मृत्यों के लिए, मरणशीलों के लिए (मृ = मरना, देहत्याग करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। धर्मन् = धर्म (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। अमृतस्य = अमृत, अविनाशी का (मृ - मरना)। चारुणः = चलाने वाला, वीर, प्रयास करने वाला (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना, चार - संशय होना, निश्चय करना)। सदा = सदा, सर्व काल में। असरो = ज्ञान, गति, प्राप्ति, प्रवाह किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, सृ - जाना, सरकना, जानना, पाना, बहना, चलना)। वाजम् = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। सनिष्यदत् = सेवा करने, स्तुति करने की इच्छा करते हुए (स - सहित, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना, निष - प्राप्त करना, ले जाना) ॥ 4 ॥

1374. अभि अभि हि श्रवसा ततर्दिथ, उत्सम् न कञ्चित् जनपानम् अक्षितम्।

शर्याभिः न भरमाणो गभस्त्योः ॥ 5 ॥ 9-110-5

मन्त्रार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा हि = ही, निश्चय श्रवसा = श्रवः, श्रवण, वाणी से ततर्दिथ = विस्तार करता हुआ, हिंसा करता हुआ उत्सम् = उत्स को न = नहीं, समान, उपमार्थक कञ्चित् = किसी को, क्या जनपानम् = जन-रक्षक, जन-पान को अक्षितम् = अक्षित को, व्याप्त को, अविनाशी को शर्याभिः = शर्यों द्वारा न = नहीं, समान, उपमार्थक भरमाणो = भरण करने वाले गभस्त्योः = गहन ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। श्रवसा = श्रवः, श्रवण, वाणी से (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। ततर्दिथ = विस्तार करता हुआ, हिंसा करता हुआ (तन् = विस्तार, फैलाना, शब्द करना, तर्द - मार डालना, दुःख देना)। उत्सम् = उत्स को (सु = उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। कञ्चित् = किसी को, क्या (सर्वनाम)। जनपानम् = जन-रक्षक, जन-पान को (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना, पा - रक्षा करना, पा-पिब - पीना, प्राशन करना, सूखना, संरक्षण करना, अप - पालन करना)।

अक्षितम् = अक्षित को, व्याप्त को, अविनाशी को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अक्ष - खेलना, देखना, एकत्र होना, व्याप्त होना, इच्छितार्थ होना, पैठना, क्षि - क्षय होना, नष्ट होना)। **शर्याभिः** = शर्यों द्वारा (शृ - सुनना, जाना, जानना, पाना, शृ - मार डालना, दुःख देना, पीड़ा करना, फटना, हिंसा करना, मारना, श्रि - सेवा करना, आश्रय करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भरमाणो** = भरण करने वाले (भृ = पूर्ण करना, भरना, धारण-पोषण करना)। **गभस्त्योः** = गहन (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना) ॥ 5 ॥

1375. आत् ईम् के चित् पश्यमानासः आप्यम्, वसु रुचो दिव्याः अभि अनूषत ।

वारम् न दिवो सविता व्यूर्णुते ॥ 6 ॥

9-110-6

मन्त्रार्थ :- आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण ईम् = समान, इस प्रकार के = कौन, कोई चित् = भी, ही पश्यमानासः = अनेक दिखने वाले, अनेक देखने वाले आप्यम् = आप, व्याप्त, व्यापक को वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले रुचो = रुचि दिव्याः = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अनूषत = स्तुति की वारम् = वरण को न = नहीं, समान, उपमार्थक दिवो = दिव, तेजस्वी सविता = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला व्यूर्णुते = विशेष आवरण-आच्छादन करता है ॥ 6 ॥

पदार्थ :- आत् = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। के = कौन, कोई (सर्वनाम)। चित् = भी, ही। पश्यमानासः = अनेक दिखने वाले, अनेक देखने वाले (पश्-दृश् = देखना)। आप्यम् = आप, व्याप्त, व्यापक को (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। वसु = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। रुचो = रुचि (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। दिव्याः = दिव में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अनूषत = स्तुति की (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना, नू - प्रशंसा करना, स्तुति करना)। वारम् = वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। दिवो = दिव, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। सविता = सृष्टिकर्ता, उत्पन्न करने वाला, ऐश्वर्यवान् तथा ऐश्वर्य देने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। व्यूर्णुते = विशेष आवरण-आच्छादन करता है (वि = विशेष, ऊर्ण = बुनना, आच्छादन करना, ढकना) ॥ 6 ॥

1376. त्वे सोम प्रथमा वृक्तबर्हिषो, महे वाजाय श्रवसे धियम् दधुः ।

स त्वम् नो वीर वीर्याय चोदय ॥ 7 ॥

9-110-7

मन्त्रार्थ :- त्वे = तुममें सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम प्रथमा = प्रथम वृक्तबर्हिषो = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ महे = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् वाजाय = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए श्रवसे = श्रवः, श्रवण, वाणी के लिए धियम् = धारणा शक्ति, बुद्धि को दधुः = धारण किया स = वह, उसने त्वम् = तुम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा वीर = पराक्रमी, वीर वीर्याय = पराक्रम, वीरता के लिए चोदय = प्रेरित करो, प्रेरणा दो ॥

पदार्थ :- त्वे = तुममें (सर्वनाम)। सोम = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, सो-स्य, सय - विध्वंस करना, नष्ट करना, नष्ट होना, भग्न होना)। प्रथमा = प्रथम (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। वृक्तबर्हिषो = वृक्तों में श्रेष्ठ, स्वीकृतों में श्रेष्ठ (वृक् - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृच- हिंसा करना, बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-

व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **महे** = पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **वाजाय** = वाज के लिए, विद्या-गति के लिए (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **श्रवसे** = श्रवः, श्रवण, वाणी के लिए (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **दधुः** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **वीर** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **वीर्याय** = पराक्रम, वीरता के लिए (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना) ॥ 7 ॥

1377. दिवः पीयूषम् पूर्यम् यत् उक्थ्यम्, महो गाहात् दिवः आ निरधुक्षत ।

इन्द्रम् अभि जायमानम् समस्वरन् ॥ 8 ॥

9-110-8

मन्त्रार्थ :- दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **पीयूषम्** = पीयूष को **पूर्यम्** = पहले, पूर्व **यत्** = जिसे, जो **उक्थ्यम्** = उक्ति को, कथन को **महो** = बड़े, महिमावान्, महान् **गाहात्** = गाह से, गहनता से **दिवः** = दिव, तेजस्वी **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **निरधुक्षत** = प्रदीप्त किया **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **जायमानम्** = उत्पन्न हुआ को **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए ॥ 8 ॥

पदार्थ :- दिवः = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **पीयूषम्** = पीयूष को (पी-पिब् - पीना, पान करना, प्राशन करना, संरक्षण करना)। **पूर्यम्** = पहले, पूर्व (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **उक्थ्यम्** = उक्ति को, कथन को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **महो** = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **गाहात्** = गाह से, गहनता से (गाह - नष्ट करना, मर्म भेद करना, फेरना, हिलाना, गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **दिवः** = दिव, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **निरधुक्षत** = प्रदीप्त किया (निः - विना, बाहर, निश्चित, अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, धुक्ष - प्रदीप्त करना, जलाना, जीना, श्रान्त होना या थक जाना)। **इन्द्रम्** = परम ऐश्वर्यशाली को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **जायमानम्** = उत्पन्न हुआ को (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **समस्वरन्** = सम्यक् स्वर किया, सम्यक् स्वर करते हुए (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, स्वृ-स्वर् = शब्द करना, गम् - जाना) ॥ 8 ॥

1378. अध यत् इमे पवमान रोदसी, इमा च विश्वा भुवना अभि मज्मना ।

यूथे न निष्ठा वृषभा वि तिष्ठसे ॥ 9 ॥

9-110-9

मन्त्रार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर **यत्** = जिसे, जो **इमे** = यह, इस, ये **पवमान** = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **इमा** = यह, इसको **च** = और **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **भुवना** = हो रहा, वर्तमान **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **मज्मना** = शब्दकर्ता **यूथे** = यूथ में **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **निष्ठा** = निष्ठा, निरन्तर स्थित **वृषभा** = पराक्रमी **वि** = विशेष, विना, विलोम **तिष्ठसे** = प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है ॥ 9 ॥

पदार्थ :- अध = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। इमे = यह, इस, ये (सर्वनाम)। पवमान = पवित्र करने वाला, पालन-रक्षा करने वाला (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना)। रोदसी = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। इमा = यह, इसको (सर्वनाम)। च = और (अव्यय)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। भुवना = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। मज्जना = शब्दकर्ता (मज् - शब्द करना, ध्वनि करना, कामातुर शब्द करना)। यूथे = यूथ में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। निष्ठा = निष्ठा, निरन्तर स्थित (नि - निश्चित, निरन्तर, स्था - ठहरना, स्थिर होना)। वृषभा = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। तिष्ठसे = प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (तिष्ठ = ठहरना, खड़ा होना) ॥ 9 ॥

(330) सूक्त 111

**1379. अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि, तरति स्वयुग्वभिः सूरौ न स्वयुग्वभिः ।
धारा सुतस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः ।**

विश्वा यत् रूपा परियासि ऋक्वभिः, सप्ताः येभिः ऋक्वभिः ॥ 1 ॥ 9-111-1

मन्त्रार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा रुचा = रुचि हरिण्या = हरिण्य, हरण करने वाले पुनानो = पवित्रकर्ता विश्वा = विश्व, सभी, सब द्वेषांसि = द्वेष करते हैं तरति = तैरते हैं, तरते हैं स्वयुग्वभिः = स्वयुक्ति द्वारा सूरौ = सूर्य, उत्पन्न करने वाला न = नहीं, समान, उपमार्थक स्वयुग्वभिः = स्वयुक्ति द्वारा धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो सुतस्य = सुत का रोचते = प्रकाश पुनानो = पवित्रकर्ता अरुषो = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक हरिः = हरि विश्वा = विश्व, सभी, सब यत् = जिसे, जो रूपा = रूप परियासि = सभी तरफ जाते हो, जानते हो, प्राप्त होता है ऋक्वभिः = ऋचाओं द्वारा सप्ताः = सात येभिः = जिनसे ऋक्वभिः = ऋचाओं द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - अया = गति, प्रेरणा द्वारा (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अय् = जाना, जानना, पाना)। रुचा = रुचि (रुच् - रुचना, प्रीति होना, प्रसन्न होना, उत्साह होना, प्रकाशित होना)। हरिण्या = हरिण्य, हरण करने वाले (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। द्वेषांसि = द्वेष करते हैं (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना, मत्सर करना)। तरति = तैरते हैं, तरते हैं (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। स्वयुग्वभिः = स्वयुक्ति द्वारा (स्व = अपना, निज (सर्वनाम), यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। सूरौ = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। स्वयुग्वभिः = स्वयुक्ति द्वारा (स्व = अपना, निज (सर्वनाम), यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना)। धारा = धारण करो, पोषण करो, रक्षण करो (धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। सुतस्य = सुत का (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। रोचते = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। पुनानो = पवित्रकर्ता (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। अरुषो = अहिंसक अथवा रोष-रहित, हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। हरिः = हरि (हृ = प्रसन्न करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना,

चुराना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **रूपा** = रूप (रूप - बनाना, आकार बनाना, रचना करना, मन में रूपाकृति लाना)। **परियासि** = सभी तरफ जाते हो, जानते हो, प्राप्त होता है (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, यस् - प्रयास करना, या - जाना, जानना, पाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **ऋक्वभिः** = ऋचाओं द्वारा (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना)। **सप्ताः** = सात (संख्या)। **येभिः** = जिनसे (सर्वनाम)। **ऋक्वभिः** = ऋचाओं द्वारा (ऋच - प्रशंसा करना, स्तुति करना, आच्छादित करना, ढकना, चमकना) ॥ 1 ॥

1380. त्वम् त्यत् पणीनाम्, विदो वसु सम् मातृभिः,

मर्जयसि स्वे आ दमे, ऋतस्य धीतिभिः दमे।

परावतो न साम तत्, यत्र आ रणन्ति धीतयः,

त्रिधातुभिः अरुषीभिः वयो दधे, रोचमानो वयो दधे ॥ 2 ॥

9-111-2

मन्त्रार्थ :- **त्वम्** = तुम **त्यत्** = वह, उसने **पणीनाम्** = पणियों का, स्तुतिकर्ता, उद्योगी, व्यवहारी का **विदो** = विद्वान् **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **मातृभिः** = माताओं द्वारा **मर्जयसि** = शुद्ध करते हो **स्वे** = अपने लिए, अपने साथ **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **दमे** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं **ऋतस्य** = ऋत का **धीतिभिः** = धारणा द्वारा **दमे** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं **परावतो** = परावत, परा के समान, पराया **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **साम** = साम **तत्** = वह, उस को **यत्र** = जहाँ **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **रणन्ति** = रण, शब्द करते हैं **धीतयः** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले **त्रिधातुभिः** = त्रिधातुओं द्वारा **अरुषीभिः** = प्रगतिशीलों, व्यापकों, अहिंसकों, रोष-रहितों द्वारा **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश **दधे** = धारण करते हैं **रोचमानो** = प्रकाशमान हुआ **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश **दधे** = धारण करते हैं ॥ 2 ॥

पदार्थ :- **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **त्यत्** = वह, उसने (सर्वनाम)। **पणीनाम्** = पणियों का, स्तुतिकर्ता, उद्योगी, व्यवहारी का (पण् = व्यवहार करना, उद्योग करना, व्यापार करना, स्तुति करना)। **विदो** = विद्वान् (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। **वसु** = वसु, स्नेहपूर्वक निवास करने तथा वास देने वाले (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **मातृभिः** = माताओं द्वारा (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **मर्जयसि** = शुद्ध करते हो (मृज - धोना, स्वच्छ करना, संवारना, मृज - स्वच्छ करना, धोना, पवित्र होना, संवारना, अलंकृत करना)। **स्वे** = अपने लिए, अपने साथ (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **दमे** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं (दम् - शान्त करना, दमन करना, दया करना, शमन करना, सन्धि करना, जीतना)। **ऋतस्य** = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **धीतिभिः** = धारणा द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **दमे** = दयालु, शान्त, दमन, दया, सन्धि, शमन, जय करते हैं (दम् - शान्त करना, दमन करना, दया करना, शमन करना, सन्धि करना, जीतना)। **परावतो** = परावत, परा के समान, पराया (अव्यय, सर्वनाम)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **साम** = साम (साम - शान्त करना, समाधान करना, सान्त्वना देना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **यत्र** = जहाँ (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **रणन्ति** = रण, शब्द करते हैं (रण - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। **धीतयः** = ज्ञानीजन, धारण करने वाले (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **त्रिधातुभिः** = त्रिधातुओं द्वारा (त्रि - संख्या, सर्वनाम, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अरुषीभिः** = प्रगतिशीलों, व्यापकों, अहिंसकों, रोष-रहितों द्वारा (अ - नहीं, ऋ - अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रुष् - हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना)। **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना,

जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)।
दधे = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **रोचमानो** = प्रकाशमान हुआ (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना, प्रसन्न होना)। **वयो** = वय, रचना, विद्या का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **दधे** = धारण करते हैं (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥2॥

इति नवम मण्डल

दशम मण्डल

अनुवाक:- 74

(331) सूक्त 3

1381. इनो राजन् अरतिः समिद्धो, रौद्रो दक्षाय सुषुमान् अदर्शि ।

चिकित् वि भाति भासा बृहता, असिक्नीम् एति रुशतीम् अपाजन् ॥ 1 ॥ 10-3-1

मन्त्रार्थ :- इनो = प्रगतिशील, प्रकाशशील राजन् = प्रकाशित होने वाला अरतिः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले समिद्धो = सम्यक् प्रकाशवान् रौद्रो = रौद्र दक्षाय = दक्ष के लिए सुषुमान् = उत्तम पराक्रमी, अद्भुत सामर्थ्यवान्, श्रेष्ठ उत्पन्न करने वाला अदर्शि = देखा चिकित् = विद्वान् वि = विशेष, विना, विलोम भाति = प्रकाशित होता है भासा = प्रकाशमान बृहता = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् असिक्नीम् = प्रकाश, प्रक्षेपण, प्रगति को एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है रुशतीम् = प्रकाशमान को अपाजन् = विस्तार करते हुए ॥

पदार्थ :- इनो = प्रगतिशील, प्रकाशशील (इ - जाना, जानना, पाना, इन् - प्रकाश करना) । राजन् = प्रकाशित होने वाला (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) । अरतिः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना) । समिद्धो, = सम्यक् प्रकाशवान् (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना) । रौद्रो = रौद्र (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना) । दक्षाय = दक्ष के लिए (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना) । सुषुमान् = उत्तम पराक्रमी, अद्भुत सामर्थ्यवान्, श्रेष्ठ उत्पन्न करने वाला (सु - अच्छा, सुन्दर, सु - उत्पन्न करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना) । अदर्शि = देखा (दृश्-पश्य -देखना) । चिकित् = विद्वान् (चिकित् - जानना) । वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग) । भाति = प्रकाशित होता है (भा - चमकना, प्रकाशित होना) । भासा = प्रकाशमान (भास् - प्रकाशित होना, चमकना) । बृहता = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) । असिक्नीम् = प्रकाश, प्रक्षेपण, प्रगति को (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेंकना, उड़ाना, बिखेरना, अस् - प्रक्षेपण करना, फेंकना, बिखेरना, उड़ाना, सिक्-सिङ्क्-सिज-सिज्ज - अस्पष्ट शब्द करना) । एति = जाता है, प्राप्त होता है, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना) । रुशतीम् = प्रकाशमान को (रुश् - हिंसा करना, रुंश - चमकना, प्रकाशित होना, बोलना) । अपाजन् = विस्तार करते हुए (अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग), अज - जाना, गति करना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना) ॥ 1 ॥

1382. कृष्णाम् यत् एनीम् अभि वर्षसा भूत्, जनयन् योषाम् बृहतः पितुः जाम् ।

ऊर्ध्वम् भानुम् सूर्यस्य स्तभायन्, दिवो वसुभिः अरतिः वि भाति ॥ 2 ॥ 10-3-2

मन्त्रार्थ :- कृष्णाम् = कृष्ण को यत् = जिसे, जो एनीम् = प्रकाश को अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा वर्षसा = विविध रूपों से, द्वारा भूत् = हो जनयन् = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले योषाम् = योष (शत्रुओं को) मारने वाले को बृहतः = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् पितुः = पितु, गति, ज्ञान, पिता जाम् = पोषण करने वाले ऊर्ध्वम् = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व भानुम् = प्रकाशमान को सूर्यस्य = सूर्य का स्तभायन् = स्तम्भित करते हुए दिवो = दिव, तेजस्वी वसुभिः = वसुओं द्वारा अरतिः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले वि = विशेष, विना, विलोम भाति = प्रकाशित होता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- कृष्णाम् = कृष्ण को (कृष् = विलेखन, कर्षण करना, खींचना, आकर्षण होना, रेखा करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। एनीम् = प्रकाश को (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इन-एन - प्रकाशित करना, मिश्रण करना, विभाजन करना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। वर्षसा = विविध रूपों से, द्वारा (वर्ष - विविध रूप धारण करना)। भूत् = हो (भू = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। जनयन् = उत्पन्न करते हुए, उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। योषाम् = योष (शत्रुओं को) मारने वाले को (युष = हिंसा करना)। बृहतः = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। पितुः = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। जाम् = पोषण करने वाले (जम् = खाना, निगलना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। ऊर्ध्वम् = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। भानुम् = प्रकाशमान को (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। सूर्यस्य = सूर्य का (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। स्तभायन् = स्तम्भित करते हुए (स्तम्भ - अवरोध करना, दृढ़ होना, खम्भे के समान, स्तब्ध होना)। दिवो = दिव, तेजस्वी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। वसुभिः = वसुओं द्वारा (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। अरतिः = गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले (ऋ-अर् = जाना, जानना, पाना, महत्व दिखाना, शब्द करना, ध्वनि करना, हिंसा करना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। भाति = प्रकाशित होता है (भा - चमकना, प्रकाशित होना) ॥ 2 ॥

1383. भद्रो भद्रया सचमानः आगात्, स्वसारम् जारो अभ्येति पश्चात्।

सुप्रकेतैः द्युभिः अग्निः वितिष्ठन्, उशदिभः वर्णैः अभि रामम् अस्थात् ॥ 3 ॥ 10-3-3

मन्त्रार्थ :- भद्रो = कल्याण करने वाला, कल्याणकारी भद्रया = भद्र, कल्याणकारी द्वारा सचमानः = अभिसिञ्चित होता हुआ आगात् = आये स्वसारम् = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह को जारो = जार, वृद्ध, विजेता अभ्येति = जाता है, प्राप्त होता है पश्चात् = पीछे या पश्चिम दिशा से। सुप्रकेतैः = सर्वोत्तम सलाह देने वाला, महाज्ञानी, उत्तम निवास द्युभिः = प्रकाश द्वारा, प्रकाशमय, अग्रगामियों द्वारा अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् वितिष्ठन् = प्रतिष्ठित, स्थित, ठहरा, खड़ा उशदिभः = उशदों द्वारा, इच्छा करने वालों द्वारा, कामना करने वालों द्वारा वर्णैः = वर्णों द्वारा अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा रामम् = राम, रमण को अस्थात् = स्थित हैं ॥ 3 ॥

पदार्थ :- भद्रो = कल्याण करने वाला, कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। भद्रया = भद्र, कल्याणकारी द्वारा (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। सचमानः = अभिसिञ्चित होता हुआ (सच् = सिञ्चन करना, सेवा करना)। आगात् = आये (आ - सम्यक्, गम् - जाना, आ-गम् - आना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। स्वसारम् = स्वगति, उत्तम गति, उत्तम गृह को (सु = उत्तम, अच्छा, स्व - अपना, सृ = जाना, जानना, पाना, पहुँचना, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। जारो = जार, वृद्ध, विजेता (जृ - वृद्ध होना, ज्जि - जय होना, वृद्ध होना)। अभ्येति = जाता है, प्राप्त होता है (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। पश्चात् = पीछे या पश्चिम दिशा से। सुप्रकेतैः = सर्वोत्तम सलाह देने वाला, महाज्ञानी, उत्तम निवास (सु = सुन्दर, अच्छा (उपसर्ग), प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग), केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। द्युभिः = प्रकाश द्वारा, प्रकाशमय, अग्रगामियों द्वारा (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। अग्निः = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। वितिष्ठन् = प्रतिष्ठित, स्थित, ठहरा, खड़ा (वि - विशेष, तिष्ठ = ठहरना, खड़ा होना)। उशदिभः =

उशदों द्वारा, इच्छा करने वालों द्वारा, कामना करने वालों द्वारा (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। **वर्णेः** = वर्णों द्वारा (वृ - वरण करना, स्वीकार करना, वर्ण - वर्णन करना, चमकना, आज्ञा करना, प्रेरणा करना, भेजना, रंगना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **रामम्** = राम, रमण को (रम् - रमना, रमण करना, रमणीय होना)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था - स्थित होना, ठहरना) ॥ 3 ॥

(332) सूक्त 8

1384. प्र केतुना बृहता याति अग्निः, आ रोदसी वृषभो रोरवीति ।

दिवः चित् अन्तात् उपमाम् उदानट्, अपाम् उपस्थे महिषो ववर्ध ॥ 1 ॥ 10-8-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **केतुना** = केतु द्वारा, ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता द्वारा **बृहता** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **याति** = जाता है **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **वृषभो** = पराक्रमी **रोरवीति** = रोरवीत, विद्वान्, प्रगतिशील **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय **चित्** = भी, ही **अन्तात्** = अन्तः, भीतर, अन्त करने वाले **उपमाम्** = उपमा को **उदानट्** = उदान **अपाम्** = अपा को, पालकों का **उपस्थे** = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित **महिषो** = महिष, महिमावान्, महान् **ववर्ध** = बढ़ना ॥ 9 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **केतुना** = केतु द्वारा, ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता द्वारा (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। **बृहता** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **याति** = जाता है (या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। **अग्निः** = अग्नि, ऊर्ध्वगामी, अग्रणी, विद्वान् (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **वृषभो** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **रोरवीति** = रोरवीत, विद्वान्, प्रगतिशील (रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना, र्व - जाना, जानना, पाना, प्रकाश करना)। **दिवः** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **चित्** = भी, ही। **अन्तात्** = अन्तः, भीतर, अन्त करने वाले (अन्तः = बीच में, अन्त - अन्त होना, समाप्त होना, बाँधना, पाना, हिंसा करना)। **उपमाम्** = उपमा को (उप - सपीप, मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **उदानट्** = उदान (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, उद् = उत्कृष्ट होना, उच्च होना, उदार होना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना, अन् = प्राण होना, जीवन होना)। **अपाम्** = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। **उपस्थे** = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित (उप = समीप, स्थ = स्थित)। **महिषो** = महिष, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **ववर्ध** = बढ़ना (वृध - बढ़ना, अधिक होना) ॥ 9 ॥

(333) सूक्त 9

1385. आपो हि ष्टा मयोभुवः, ता नः ऊर्जे दधातन ।

महे रणाय चक्षसे ॥ 1 ॥ 10-9-1

मन्त्रार्थ :- आपो आपः मयोभुवः मयोभुव ष्टा स्थित है, ता वह महे महत् रणाय रण (शब्द) के लिए चक्षसे देखने

के लिए नः हमारे लिए ऊर्जे ऊर्जा दधातन धारण करे ॥ 1 ॥

भावार्थ :- अप धातु का अर्थ पालन करना होने से आप शब्द का अर्थ पालन करने वाली माता तथा व्यापक आध्यात्मिक अर्थ में परमात्मा भी है। आप धातु का अर्थ व्याप्त होना होने से भी आपः का अर्थ परमात्मा ग्रहण किया जाता है। मय धातु का सामान्य अर्थ गति है। गति अर्थ वाली धातु का तीन प्रकार लक्ष्यार्थ सर्वत्र ग्राह्य है ज्ञान, गमन, प्राप्ति। मयोभुवः का अर्थ गतिशीलता के साथ ही ज्ञान पाना भी है। रण धातु का अर्थ शब्द करना है। शब्द को देखने के संदेश को वेदवाणी का दृष्टा होने की भावना के रूप में समझना चाहिए।

पदार्थ - आपो = व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **हि =** ही, निश्चय (अव्यय)। **छा =** स्थित हो (स्था - स्थित होना, ठहरना)। **मयोभुवः =** विद्वान् = गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले (मय् - जाना, जानना, पाना)। **ता =** वे (सर्वनाम)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **ऊर्जे =** ऊर्जा के लिए (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **दधातन =** धारण करो (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **महे =** पूजा करने के लिए, हे महान्, पूज्य, महिमावान्, महान् (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **रणाय =** रण, शब्द के लिए (रण - शब्द करना, आवाज करना, जाना)। **चक्षसे =** देखने के लिए, देखते हो (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना) ॥ 1 ॥

1386. यो वः शिवतमो रसः, तस्य भाजयत इह नः।

उशतीः इव मातरः ॥ 2 ॥ 10-9-2

मन्त्रार्थ :- यो जो वः तुम्हारा शिवतमो अत्यन्त कल्याणकारी रसः रस (है), तस्य उसका इह यहाँ नः हमको उशतीः उशती मातरः माता के इव समान भाजयत सेवन कराये ॥ 2 ॥

भावार्थ :- परमात्मा तथा प्रकृति की उपासना से हमारे लिए कल्याणकारी पोषण प्राप्त होता है।

विशेष :- उशती पद माता का विशेषण है। उश-वश धातु का अर्थ चाहना है। माता पुत्र को चाहती है, स्नेह करती है, पोषण करती है। उशती का यही भावार्थ लेना चाहिए।

पदार्थ :- यो = जो। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **शिवतमो =** अत्यन्त कल्याणकारी। (शिव् = कल्याण करना)। **रसः =** रस (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **तस्य =** उसका (सर्वनाम)। **भाजयत =** सेवन कराये, भाग दें (भज् = सेवा करना, भजन करना, भाग करना, अलग करना)। **इह =** इसमें, यहाँ, यह (सर्वनाम)। **नः =** हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **उशतीः =** उशती, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला (वश्-उश् - इच्छा करना, चाहना)। **इव =** समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **मातरः =** माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना) ॥ 2 ॥

1387. तस्मा अरम् गमाम वो, यस्य क्षयाय जिन्वथ।

आपो जनयथा च नः ॥ 3 ॥ 10-9-3

मन्त्रार्थ :- तस्मा इससे वो तुम्हारे लिए अरम् पर्याप्त गमाम जायें, यस्य जिसके क्षयाय निवास के लिए जिन्वथ प्रीति करो। च और आपो आपः नः हमारे लिए जनयथा उत्पन्न करे ॥ 3 ॥

भावार्थ :- आपः अर्थात् परमात्मा, माता, जल के रूप में तीनों अर्थों में सन्देश स्पष्ट है कि आधा-अधूरा नहीं पर्याप्त प्रयास होना चाहिए। परमात्मा की उपासना हो, परिवार हो अथवा प्रकृति हो, पूरे मन से पर्याप्त ध्यान-उपासना-सेवा करना आवश्यक है, तभी प्रयास फलदायी होते हैं।

पदार्थ :- तस्मा = इससे (सर्वनाम)। **अरम् =** पर्याप्त (अव्यय)। **गमाम =** जायें (गम् = जाना)। **वो =** तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **यस्य =** जिसका (सर्वनाम)। **क्षयाय =** निवास के लिए (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **जिन्वथ =** प्रीति करो (जिन्व् = सन्तुष्ट करना, प्रसन्न करना, आनन्द होना, मुक्त करना, प्रकाशित होना, बोलना)। **आपो =** आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना,

अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **जनयथा** = उत्पन्न करे (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **च** = और। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम) ॥ 3 ॥

1388. शम् नो देवीः अभिष्टये, आपो नो भवन्तु पीतये।

शम् योः अभि स्रवन्तु नः ॥ 4 ॥

10-9-4

मन्त्रार्थ :- देवीः देवी आपो आप नो हमारे **अभिष्टये** अभीष्ट के लिए **पीतये** पीने के लिए **शम्** कल्याणकारी **भवन्तु** हों। **नः** हमारे लिए **शम्** कल्याण **योः** मिलाने वाला **अभि** = सभी ओर। **स्रवन्तु** अभिसिञ्चन करें ॥ 4 ॥

भावार्थ :- इसमें भी हमारे लिए प्रकृति के कल्याणकारी होने की भावना है।

पदार्थ :- **शम्** = कल्याणकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा। **देवीः** = दिव्यगुणयुक्त (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना)। **अभिष्टये** = अभीष्ट के लिए (इष् - इच्छा करना, चाहना, जाना)। **आपो** - व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना)। **भवन्तु** = हों, हो जायें (भू - होना)। **पीतये** = पान के लिए (पी - पीना, प्राशन करना)। **योः** = मिलने वाला (यु - मिलना, मिलाना, अलग करना)। **अभि** = सभी ओर। **स्रवन्तु** = अभिसिञ्चन करें (सृ - जाना, सरकना, बहना, टपकना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा ॥ 4 ॥

(334) सूक्त 10

1389. आ चित् सखायम् सख्या ववृत्याम्, तिरः पुरु चित् अर्णवाम् जगन्वान्।

पितुः नपातम् आ दधीत वेधा, अस्मिन् क्षमि प्रतराम् दीध्यानः ॥ 1 ॥ 10-10-1

मन्त्रार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **चित्** = भी, ही। **सखायम्** = मित्र को **सख्या** = सखाभाव, मित्रता **ववृत्याम्** = दूर किया, विवृत किया **तिरः** = तिरछा, तिर्यक् **पुरु** = पहले, आगे **चित्** = भी, ही। **अर्णवाम्** = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक **जगन्वान्** = संसार, गतिशील का **पितुः** = पितु, गति, ज्ञान, पिता **नपातम्** = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **दधीत** = धारण करे, धारण किया **वेधा** = विद्वान्, विधान करने वाले **अस्मिन्** = इस, इसमें **क्षये** = निवास में, क्षय में **प्रतराम्** = तारने वाले को **दीध्यानः** = प्रकाशवान् हुये ॥ 1 ॥

पदार्थ - **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **चित्** = भी, ही। **सखायम्** = मित्र को (सख् = मित्र होना)। **सख्या** = सखाभाव, मित्रता (सख् = मित्र होना)। **ववृत्याम्** = दूर किया, विवृत किया (वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, त्याग करना, हटाना, आच्छादित करना)। **तिरः** = तिरछा, तिर्यक् (अव्यय)। **पुरु** = पहले, आगे (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **चित्** = भी, ही। **अर्णवाम्** = अर्णव, गतिशील, विद्वान्, गति, ज्ञान युक्त, रतिहीन, प्राप्त होने वाले, अहिंसक (अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना, दुर्गति होना)। **जगन्वान्** = संसार, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **पितुः** = पितु, गति, ज्ञान, पिता (पा - रक्षा करना, पालन करना, पि = गति करना, जाना, जानना, पाना)। **नपातम्** = विद्वान्, प्रकाशमान, ऐश्वर्यहीन, अपतित को (नप - पहुंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना, न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, पत् - ऐश्वर्य होना, गिरना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **दधीत** = धारण करे, धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **वेधा** = विद्वान्, विधान करने वाले **अस्मिन्** = इस, इसमें **क्षये** = निवास में, क्षय में (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना, रहना, बसना, क्षय होना)। **प्रतराम्** = तारने वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, तृ - पार जाना, तैरना, जीतना)। **दीध्यानः** = प्रकाशवान् हुये (द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 75

(335) सूक्त 20

1390. भद्रम् नो अपि वातय मनो । 1 ॥ 10-20-1

मन्त्रार्थ - भद्रम् = कल्याणकारी नो = हमको, हमारे लिए, हमारा अपि = भी, निकट वातय = वायु के समान तीव्र गति वाले, वात को मनो = मन ॥ 1 ॥

पदार्थ - भद्रम् = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। अपि = भी, निकट (अव्यय)। वातय = वायु के समान तीव्र गति वाले, वात को (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। मनो = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना) ॥ 1 ॥

(336) सूक्त 21

1391. आ अग्निम् न स्ववृक्तिभिः, होतारम् त्वा वृणीमहे ।

यज्ञाय स्तीर्ण-बर्हिषे वि वो मदे शीरम् पावकशोचिषम् विवक्षसे ॥ 1 ॥ 10-21-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को न = नहीं, समान, उपमार्थक स्ववृक्तिभिः = स्ववृत्त द्वारा होतारम् = हवन करने वाले को त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं यज्ञाय = यजनों में स्तीर्ण-बर्हिषे = आच्छादन करने वाले, पूर्ण करने वालों में प्रधान, बड़े को वि = विशेष, विना, विलोम वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग मदे = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में शीरम् = शीर को पावकशोचिषम् = पावक पवित्रता वाले विवक्षसे = विशेष वक्ष करता है ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। स्ववृक्तिभिः = स्ववृत्त द्वारा (सु - अच्छा, स्व = निज, अपना, अप् - पालन करना, वृत् - लेना, स्वीकार करना, छीन लेना, चीरना, फाड़ना, वृत् - हिंसा करना)। होतारम् = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। वृणीमहे = वरण, स्वीकार करते हैं (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। यज्ञाय = यजनों में (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। स्तीर्ण-बर्हिषे = आच्छादन करने वाले, पूर्ण करने वालों में प्रधान, बड़े को (स्तृ = आच्छादित करना, ढकना, फैलाना, ठकना, पूर्ण करना। बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना, बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। वो = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। मदे = मद के लिए, आनन्द के लिए, मद में, आनन्द में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। शीरम् = शीर को (शि - तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिर - शीर्ष होना, मुख्य होना, उच्च होना)। पावकशोचिषम् = पावक पवित्रता वाले (पू - पवित्र करना, पवित्र होना, शुच = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। विवक्षसे = विशेष वक्ष करता है (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

(337) सूक्त 23

1392. यजामहे इन्द्रम् वज्रदक्षिणम्, हरीणाम् रथ्यम् विव्रतानाम् ।

प्र श्मश्रु दोधुवत् ऊर्ध्वधा भूत्, वि सेनाभिः भयमानो वि राधसा ॥ 1 ॥ 10-23-1

मन्त्रार्थ - यजामहे = यजन करते हैं **इन्द्रम्** = इन्द्र को **वज्रदक्षिणम्** वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को **हरीणाम्** = ले जाने वाले, हरण करने वाले का **रथ्यम्** = रथ्य को **विव्रतानाम्** = विशेष वृत् के लिए **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **श्मश्रु** = श्मश्रु **दोधुवत्** = कम्पित हुआ **ऊर्ध्वधा** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व **भूत्** = हो **वि** = विशेष, विना, विलोम **सेनाभिः** = सेना द्वारा **भयमानो** = भयभीत हुआ **वि** = विशेष, विना, विलोम **राधसा** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - यजामहे = यजन करते हैं (यज् = पूजा करना, देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वज्रदक्षिणम्** = वज्र में दक्ष को, गति में दक्ष को (वज् - गति करना, जाना, दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **हरीणाम्** = ले जाने वाले, हरण करने वाले का (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना, नष्ट करना)। **रथ्यम्** = रथ्य को (रथ - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **विव्रतानाम्** = विशेष वृत् के लिए (वि = विशेष, विना, विलोम, वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **श्मश्रु** = श्मश्रु (शम = शमन करना, शान्त करना, प्रसिद्ध करना, स्पष्टता से दिखाना। शम = विचार करना। शम = शमन करना, सहन करना। शम = सान्त्वना करना, शमन करना, शान्त होना, ठण्डा होना, मन स्वाधीन रखना, स्वस्थ होना, क्षुब्ध नहीं होना)। **दोधुवत्** = कम्पित हुआ (धू - कम्पन करना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित)। **ऊर्ध्वधा** = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। **भूद्** = हो (भू = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **सेनाभिः** = सेना द्वारा (सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **भयमानो** = भयभीत हुआ (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राधसा** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि द्वारा (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना) ॥ 1 ॥

अनुवाक:- 77

(338) सूक्त 43

1393. अच्छा मे इन्द्रम् मतयः स्वर्विदः, सधीचीः विश्वा उशतीः अनूषत ।

परिष्वजन्ते जनयो यथा पतिम्, मर्यम् न शुन्ध्युम् मघवानम् ऊतये ॥ 1 ॥ 10-43-1

मन्त्रार्थ - अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ **मे** = मेरा, मेरे लिए **इन्द्रम्** = इन्द्र को **मतयः** = मतियाँ, मननशक्ति **स्वर्वुवः** = शब्द, स्तुति करने वाली **सधीचीः** = सधीची, सहस्थान, सहगामी, साथ **विश्वा** = विश्व, सभी, सब **उशतीः** = उशती, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला **अनूषत** = अनुताप किया **परिष्वजन्ते** = चारो ओर से घेरते हुए, लपेटते हुए **जनयो** = उत्पन्न करो **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक **मर्यम्** = मरणशील **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **शुन्ध्युम्** = शुन्ध्यु शुद्धता, पवित्रता को **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को **ऊतये** = रक्षा के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - अच्छा = अच्छा, श्रेष्ठ, सुन्दर, स्वच्छ (अच्छ् - अच्छा होना, निर्मल करना)। **मे** = मेरा, मेरे लिए (सर्वनाम)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **मतयः** = मतियाँ, मननशक्ति (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **स्वर्वुवः** = शब्द, स्तुति करने वाली (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना, स्वं-स्वर् = शब्द करना, दोष लगाना, निन्दा करना)। **सधीचीः** = सधीची, सहस्थान, सहगामी, साथ (सद् = जाना, जानना, पाना, पहुँचना)। **विश्वा** = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। **उशतीः** = उशती, इच्छा करने वाला, कामना करने वाला (वश्- उश् - इच्छा करना, चाहना)। **अनूषत** = अनुताप किया (अनु = पश्चात्, पीछे, उष-ऊष - ताप देना, जलाना, हिंसा करना, रोग होना)। **परिष्वजन्ते** = चारो ओर से घेरते हुए, लपेटते हुए (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, स्वज - घेरना, लपेटना, आलिङ्गन करना, गले लगाना)। **जनयो** = उत्पन्न करो (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **यथा** =

जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **पतिम्** = पति को, अधिपति, रक्षक, पालक (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **मर्यम्** = मरणशील (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **शुन्यम्** = शुन्य, शुद्धता, पवित्रता को (शुच्-शुक्-शुध-शुन्ध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **मघवानम्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् को (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **ऊतये** = रक्षा के लिए (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना) ॥ 1 ॥

(339) सूक्त 46

1394. प्र होता जातो महान् नभोवित्, नृषद्मा सीदत् अपाम् उपस्थे।

दधिः यो धायि स ते वयांसि, यन्ता वसूनि विधते तनूषाः ॥ 1 ॥

10-46-1

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले जातो = उत्पन्न हुआ महान् = बड़े, पूज्य, महान् नभोवित् = नभ नृषद्मा = नृषद् में सीदत् = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों अपाम् = अपा को, पालकों का उपस्थे = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित दधिः = धारण किया यो = जो धायि = धारण किया गया है स = वह, उसने। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वयांसि = वय या रचना युक्त को यन्ता = यन्ता, संयमन करने वाले वसूनि = वसुओं को विधते = विधान के लिए तनूषाः = विस्तार, वृद्धि के रक्षक, पालनकर्ता ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। होता = आह्वान, ग्रहण, दान करने वाले (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। जातो = उत्पन्न हुआ (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। महान् = बड़े, पूज्य, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। नभोवित् = नभ (नभ् = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। नृषद्मा = नृषद् में (नृ - ले जाना, सद्-सीद-सदल - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना, बैठना, चढ़ाई करना, सूखना)। सीदत् = सीद, बैठें, संचरण करें, प्रतिष्ठित हों (सीद- जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, खिन्न होना, सूखना, शुष्क होना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। अपाम् = अपा को, पालकों का (अप - पालन करना)। उपस्थे = उपस्थ में, सनिकट, समीप स्थित (उप = समीप, स्थ = स्थित) ॥ दधिः = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। यो = जो। धायि = धारण किया गया है (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। स = वह, उसने। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। वयांसि = वय या रचना युक्त को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। यन्ता = यन्ता, संयमन करने वाले (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन -उद्धार करना)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। विधते = विधान के लिए (वि - विशेष, धा - धारण करना)। तनूषाः = विस्तार, वृद्धि के रक्षक, पालनकर्ता (तन् = विस्तार करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना, पा = पालन करना, रक्षा करना) ॥ 1 ॥

1395. प्र भूः जयन्तम् महाम् विपोधाम्, मूरा अमूरम् पुराम् दर्माणम्।

नयन्तो गर्भम् वनाम् धियम् धुः, हरिश्मश्रुम् न अर्वाणम् धनर्चम् ॥ 5 ॥ 10-46-5

मन्त्रार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक भूः = भू, होना, भुवन, अस्तित्व, हो गया, हुआ जयन्तम् = जीतने वाले महाम् = महान् को विपोधाम् = रक्षकों को धारण करने वाले को मूरैः = मूर के लिए अमूरम् = सेवाभावी विद्वान् पुराम् = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को दर्माणम् = दर्माण को, आदर करने को। नयन्तम् = ले जानें को गीर्भिः = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा वना = वन धियम् = धारणा शक्ति, बुद्धि को धुः = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला हरिश्मश्रुम् = हरिश्मश्रु को न = नहीं, समान, उपमार्थक अर्वाणम् = अर्वाण, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक का धनर्चम् = धनर्च को ॥ 5 ॥

पदार्थ - प्र = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **भूः** = भू, होना, भुवन, अस्तित्व, हो गया, हुआ (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **जयन्तम्** = जीतने वाले (जि - सब से बढ़ कर होना, जीतना)। **महाम्** = महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **विपोधाम्** = रक्षकों को धारण करने वाले को (वि = विशेष, विना, विलोम, पा - पालन करना, पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। **मूरा** = मूर के लिए (मूर् - घेरना, लपेटना)। **अमूरम्** = सेवाभावी विद्वान् (अम् = जाना, जानना, शब्द करना, सेवा करना, रोग होना, उर् = विस्तार करना, जाना, चलना, निरन्तर चलना)। **पुराम्** = पुरा को, पुरावृत्त, अग्रगामी, अग्रणी को (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। **दर्माणम्** = दर्माण को, आदर करने को (दृ - आदर करना, हिंसा करना)। **नयन्तम्** = ले जानें को (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **वना** = वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **धियम्** = धारणा शक्ति, बुद्धि को (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **धूः** = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला (धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। **हरिश्मश्रुम्** = हरिश्मश्रु को (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, शी-शय् - शयन करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **अर्वाणम्** = अर्वाण, प्रगतिशील, विद्वान्, हिंसक को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, अर्व - गति करना, जाना, चलना, जानना, पाना, पहुँचाना, हिंसा करना)। **धनर्चम्** = धनर्च को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 5 ॥

(340) सूक्त 47

1396. जगृम्भा ते दक्षिणम् इन्द्र हस्तम्, वसूयवो वसुपते वसूनाम्।

विद्मा हि त्वा गोपतिम् शूर गोनाम्, अस्मभ्यम् चित्रम् वृषणम् रयिम् दाः ॥ 1 ॥ 10-47-1

मन्त्रार्थ - जगृम्भा = गृहण किया ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **दक्षिणम्** = दक्षिण को **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **हस्तम्** = हाथ को **वसूयवो** = वसुयुक्त **वसुपते** = वसुपत के लिए **वसूनाम्** = वसु द्वारा **विद्मा** = विद्म, जानने वाले **हि** = ही, निश्चय **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को **शूर** = हे वीर, पराक्रमी **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को **वृषणम्** = पराक्रमी को **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को **दाः** = दानी, दो ॥ 1 ॥

पदार्थ - जगृम्भा = गृहण किया (गृह - ग्रहण करना, लेना, गृ = सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गृम्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दक्षिणम्** = दक्षिण को (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **हस्तम्** = हाथ को (हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **वसूयवो** = वसुयुक्त (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। **वसुपते** = वसुपत के लिए (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना,

वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना, पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **वसूनाम्** = वसु द्वारा (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **विद्मा** = विद्म, जानने वाले (विद् - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना)। **हि** = ही, निश्चय (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **गोपतिम्** = गोपति को, सुरक्षा, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गुप् = रक्षा करना, चमकना, बोलना, पत् - श्री मान् होना, अमानवी पराक्रम करना)। **शूर** = हे वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **गोनाम्** = गो के, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **अस्मभ्यम्** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **चित्रम्** = चित्र को, अद्भुत चेतना को, आश्चर्यरूप को (चित्र - चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् - चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **वृषणम्** = पराक्रमी को (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना)। **दाः** = दानी, दो (दा, दद् = देना) ॥ 1 ॥

(341) सूक्त 55

1397. विधुम् दद्राणम् समने बहूनाम्, युवानम् सन्तम् पलितो जगार।

देवस्य पश्य काव्यम् महित्वा, अद्य आ ममार सः ह्यः समान ॥ 5 ॥ 10-55-5

मन्त्रार्थ - **विधुम्** = विशेष धारण करने वाले **दद्राणम्** = भाग जाने, निन्दा करने वाले को **समने** = समान मन वाले **बहूनाम्** = बहुत **युवानम्** = युवा को **सन्तम्** = सन्त को, सेवाभावी को, दानी को **पलितो** = फलित-पुष्पित, शुद्ध **जगार** = स्तुति, प्रशंसा करते हैं **देवस्य** = देव का **पश्य** = देखो **काव्यम्** = काव्य **महित्वा** = महित्व द्वारा, महत् होकर **अद्य** = आज **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ममार** = मर गया **सः** = वह, उसने **ह्यः** = कल **समान** = समान ॥ 5 ॥

पदार्थ - **विधुम्** = विशेष धारण करने वाले (वि - विशेष, धा - धारण करना)। **दद्राणम्** = भाग जाने, निन्दा करने वाले को (द्रा = भाग जाना, लज्जित होना, निन्दा करना, दोष लगाना, उड़ जाना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **समने** = समान मन वाले (स - सहित, साथ, सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। **बहूनाम्** = बहुत (बहु - बहुत, सर्वनाम)। **युवानम्** = युवा को (युव - बल होना, तरुण होना, युवा होना, यु - मिलाना, अलग करना, बन्धन करना)। **सन्तम्** = सन्त को, सेवाभावी को, दानी को (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **पलितो** = फलित-पुष्पित, शुद्ध (पल् - जाना, फलित- पुष्पित होना, फल देना, काटना, गिराना, उढ़ाना, शुद्ध करना)। **जगार** = स्तुति, प्रशंसा करते हैं (जिगा-गा - प्रशंसा करना, सराहना, गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना)। **देवस्य** = देव का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **पश्य** = देखो (पश्-दृश् = देखना)। **काव्यम्** = काव्य (कु, क्व = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना)। **महित्वा** = महित्व द्वारा, महत् होकर (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्त्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **अद्य** = आज (अव्यय)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ममार** = मर गया (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सः** = वह, उसने। **ह्यः** = कल (बीता हुआ दिन, अव्यय)। **समान** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना) ॥ 5 ॥

1398. शाक्मना शाको अरुणः सुपर्णः, आ यो महः शूरः सनात् अनीडः।

यत् चिकेत सत्यम् इत् तत् न मोघम्, वसु स्पार्हम् उत जेता उत दाता ॥ 6 ॥ 10-55-6

मन्त्रार्थ :- **शाक्मना** = शक्ति द्वारा **शाको** = शक्तिवान् **अरुणः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक **सुपर्णः** = उत्तम पर्ण वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम **यो** = जो **महः** = महान् **शूरः** = वीर, पराक्रमी **सनात्** = सेवा से, सदा

अनीडः = अनिवासी **यत्** = जिसे, जो **चिकेत** = विद्वान्, जानता हूँ **सत्यम्** = सत्य को **इत्** = ही **तत्** = वह, उस को **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **मोघम्** = मोघ को, बन्धन को, विस्मरण को **वसु** = वसु **स्पार्हम्** = स्पार्ह, सेवक को **उत** = ही, भी, ओर **जेता** = जीतने वाला **उत** = ही, भी, ओर **दाता** = देने वाला ॥ 6 ॥

पदार्थ :- शाक्मना = शक्ति द्वारा (शक्-शक्व - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सकना)। **शाको** = शक्तिवान् (शक्-शक्व - शक्तिमान् होना, समर्थ होना, सकना)। **अरुणः** = हिंसक, गतिशील, व्यापक (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **सुपर्णः** = उत्तम पर्ण वाले (सु - उत्तम, श्रेष्ठ, पर्ण - हरा करना, हरा होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **यो** = जो (सर्वनाम)। **महः** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **शूरः** = वीर, पराक्रमी (शूर - पराक्रमी होना, शूरवीर होना, वीरता दिखाना)। **सनात्** = सेवा से, सदा (सना = सदा (अव्यय), सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **अनीडः** = अनिवासी (निड - निवास करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **चिकेत** = विद्वान्, जानता हूँ (चिकित् - जानना)। **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **इत्** = ही (अव्यय)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **मोघम्** = मोघ को, बन्धन को, विस्मरण को (मु - बाँधना, मुह - पागल होना, बुद्धिभ्रष्ट होना)। **वसु** = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **स्पार्हम्** = स्पार्ह, सेवक को (स्पृ - प्रीति करना, सेवा करना, चलना, पालना, जाना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **जेता** = जीतने वाला (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **दाता** = देने वाला (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना) ॥ 6 ॥

1399. एभिः ददे वृष्या पौस्यानि, येभिः औक्षत् वृत्रहत्याय वज्री ।

ये कर्मणः क्रियमाणस्य महनः, ऋते कर्मम् उत् अजायन्त देवाः ॥ 7 ॥ 10-55-7

मन्त्रार्थ :- एभिः = इनके द्वारा **ददे** = दिया, दान किया **वृष्या** = वर्षा करने वाले, पराक्रमी द्वारा **पौस्यानि** = बढ़ाने वाले को **येभिः** = जिनसे **औक्षत्** = सिञ्चन करता है **वृत्रहत्याय** = वृत्रहत्या के लिए **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान **ये** = जो **कर्मणः** = कर्म का **क्रियमाणस्य** = क्रियमाण का **महनः** = पूज्य, महिमावान्, महान् **ऋते** = ऋत में **कर्मम्** = कर्म को **उत्** = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **अजायन्त** = जन्में, उत्पन्न हुए, उत्पन्न किया **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने ॥ 7 ॥

पदार्थ :- एभिः = इनके द्वारा (सर्वनाम)। **ददे** = दिया, दान किया (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **वृष्या** = वर्षा करने वाले, पराक्रमी द्वारा (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **पौस्यानि** = बढ़ाने वाले को (पुंस् - बढ़ना, बढ़ाना, पूष - बढ़ना, अधिक होना, पोषण करना)। **येभिः** = जिनसे (सर्वनाम)। **औक्षत्** = सिञ्चन करता है (उक्ष् - सिंचन करना, स्वच्छ करना)। **वृत्रहत्याय** = वृत्रहत्या के लिए (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **वज्री** = वज्री, वज्र युक्त, गतिमान (वज् - गति करना, जाना, हस्त - देना, लेना, ग्रहण करना)। **ये** = जो (सर्वनाम)। **कर्मणः** = कर्म का (कृ - करना)। **क्रियमाणस्य** = क्रियमाण का (कृ - करना)। **महनः** = पूज्य, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **ऋते** = ऋत में (ऋते = विना (अव्यय), ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **कर्मम्** = कर्म को (कृ = करना)। **उत्** = भी, ही, वैसे ही, उसी प्रकार, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (अव्यय)। **अजायन्त** = जन्में, उत्पन्न हुए, उत्पन्न किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जन् = उत्पन्न होना या करना)। **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥

(342) सूक्त 56

1400. इदम् त एकम् पर ऊ त एकम्, तृतीयेन ज्योतिषा सम् विशस्व ।

संवेशने तन्वे चारुः एधि, प्रियो देवानाम् परमे जनित्रे ॥ 1 ॥

10-56-1

मन्त्रार्थ - इदम् = यह, इसको त = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए एकम् = एक पर = अन्य ऊ = निश्चय ही, भी। त = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए एकम् = एक तृतीयेन = तृतीय में, तीसरे में ज्योतिषा = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) वशस्व = विश का, प्रवेश का संवेशने = सम्यक् विस्तार तन्वे = तन्व में, विस्तार के लिए चारुः = चारु एधि = जाता है प्रियो = प्रिय देवानाम् = देवों का परमे = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में जनित्रे = उत्पादक के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। त = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। एकम् = एक (एक = एक, एक - विचार करना)। पर = अन्य (सर्वनाम)। ऊ = निश्चय ही, भी। त = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। एकम् = एक (एक = एक, एक - विचार करना)। तृतीयेन = तृतीय में, तीसरे में (संख्या, सर्वनाम)। ज्योतिषा = ज्योति द्वारा, प्रकाश द्वारा, ज्योति से (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। विशस्व = विश का, प्रवेश का (विश् - घुसना भीतर जाना, चारो ओर फैलाना)। संवेशने = सम्यक् विस्तार (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, विश् - घुसना भीतर जाना, चारो ओर फैलाना)। तन्वे = तन्व में, विस्तार के लिए (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। चारुः = चारु (चर - जाना, खाना, आचरण करना, संशय होना)। एधि = जाता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, एध - बढ़ना)। प्रियो = प्रिय (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना)। देवानाम् = देवों का (दिक् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। परमे = परम, अत्यन्त, उच्चतम, प्रमुखतम में (सर्वनाम)। जनित्रे = उत्पादक के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः - 79

(343) सूक्त 73

1401. चक्रम् यत् अस्य अप्सु आ निषत्तम्, उत उ तत् अस्मै मधु इत् चच्छद्यात् ।

पृथिव्याम् अतिषितम् यत् ऊधः, पयो गोषु अदधा ओषधीषु ॥ 9 ॥

10-73-9

मन्त्रार्थ - चक्रम् = चक्र को यत् = जिसे, जो अस्य = इसका अप्सु = पालन-रक्षण में आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम निषत्तम् = प्राप्त हुआ उत = ही, भी, ओर उ = निश्चय ही, भी तत् = वह, उस को अस्मै = हमारे लिए मधु = मीठा, मधु इत् = ही चच्छद्यात् = आच्छादित किया पृथिव्याम् = पृथ्वी पर अतिषितम् = अत्यधिक बंधा हुआ यत् = जिसे, जो ऊधः = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले पयो = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण गोषु = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में अदधा = धारण किया ओषधीषु = ओषधियों में ॥ 9 ॥

पदार्थ - चक्रम् = चक्र को (चक्रु = चक्रण करना, गोलाकार घूमना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अस्य = इसका (सर्वनाम)। अप्सु = पालन-रक्षण में (अप = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। निषत्तम् = प्राप्त हुआ (निष - प्राप्त करना, ले जाना, नि- निश्चय ही, निरन्तर, सद्-षट् - बैठना, स्थित होना, जाना)। उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। उ = निश्चय ही, भी। तत् = वह, उस को (सर्वनाम)। अस्मै = हमारे लिए (सर्वनाम)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। इत् = ही (अव्यय)। चच्छद्यात् = आच्छादित किया (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना)। पृथिव्याम् = पृथ्वी पर (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भोजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। अतिषितम् = अत्यधिक बंधा हुआ (अति - बहुत, सि - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ऊधः = वाणी, शब्द, आद्र करने वाले (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द = भिगोना, उन्द - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना)। पयो = ज्ञान, रक्षण, गतिशील, प्रवाहमान, प्रवाहपूर्ण

(पय् - गति करना, रक्षण करना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति करना, पि - जाना, जानना, पाना, पा- पालन करना, रक्षा करना)। गोषु = गो में, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों में (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। अदधा = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना)। ओषधीषु = ओषधियों में (उषध्-ओषध् = चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना) ॥ 9 ॥

1402. वयः सुपर्णाः उप सेदुः इन्द्रम्, प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः।

अप ध्वान्तम् ऊर्णुहि पूर्धि चक्षुः, मुमुग्धि अस्मान् निधयेव बद्धान् ॥ 11 ॥ 10-73-11

मन्त्रार्थ - वयः = वय, रचना **सुपर्णाः** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला **उप** = समीप **सेदुः** = गये, प्राप्त हुए, **इन्द्रम्** = इन्द्र को **प्रियमेधा** = प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना **ऋषयो** = ऋषिगण **नाधमानाः** = याचना करते हुए **अप** = दूर, नीचे, अपकार **ध्वान्तम्** = ध्वान्त, ध्वनित, ध्वनि-युक्त **ऊर्णुहि** = आवरण-आच्छादन युक्त **पूर्धि** = पूर्ण करो **चक्षुः** = दृष्टि, वाणी **मुमुग्धि** = मुक्त करो, प्रसन्न करो **अस्मान्** = हमें, हमको **निधया** = निधि, धारणा शक्ति, बुद्धि **इव** = समान, की भाँति, के समान **बद्धान्** = बाँधतें हुए ॥ 11 ॥

पदार्थ - वयः = वय, रचना (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सुपर्णाः** = सुन्दर पर्ण वाला, अच्छी तरह हरा करने वाला (सु - सुन्दर, अच्छा, पर्ण - हरा करना, हरा होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **सेदुः** = गये, प्राप्त हुए, (सिद् = हिंसा करना, अवसाद होना, जाना, जानना, पाना। सिध् = जाना, जानना, पाना, सिद्ध होना, जीत होना, पूर्ण होना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **प्रियमेधा** = प्रियमेध, स्नेह, प्यार से समझना, जानना (प्री = स्नेह करना, प्यार करना, तृप्त करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, मेध् - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना)। **ऋषयो** = ऋषिगण (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना)। **नाधमानाः** = याचना करते हुए (नाध - याचना करना, रोगी होना, श्रीमान् होना, आशीर्वाद देना, स्वस्ति-वाचन करना)। **अप** = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। **ध्वान्तम्** = ध्वान्त, ध्वनित, ध्वनि-युक्त (ध्वन - शब्द करना, ध्वनि करना)। **ऊर्णुहि** = आवरण-आच्छादन युक्त (ऊर्ण = बुनना, आच्छादन करना, ढकना)। **पूर्धि** = पूर्ण करो (पृ - पूर - पूर्ण करना, भरना, तृप्त करना, आनन्द करना, सन्तोष होना, आनन्द होना, पूर्ण होना)। **चक्षुः** = दृष्टि, वाणी (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **मुमुग्धि** = मुक्त करो, प्रसन्न करो (मुच् - घर्षण करना, ऐश्वर्य होना, पूजा करना, बोलना, कहना, मुक्त करना, त्याग करना, प्रसन्न होना, मुह् - मोहना, मोहित होना, मुग्ध होना)। **अस्मान्** = हमें, हमको (सर्वनाम)। **निधया** = निधि, धारणा शक्ति, बुद्धि (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, धि = धारण करना, युक्त होना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **बद्धान्** = बाँधतें हुए (बध्-बन्ध् = बाँधना, बद्ध करना, हिंसा करना, मारना, वध करना, घृणा करना) ॥ 11 ॥

(344) सूक्त 81

1403. विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः, स्वयं यजस्व पृथिवीम् उत द्याम्।

मुह्यन्तु अन्ये अभितो जनास, इह अस्माकम् मघवा सूरिः अस्तु ॥ 6 ॥ 10-81-6

मन्त्रार्थ - विश्वकर्मन् = विश्वकर्मा, सभी कर्म, सभी कर्म करने वाले द्वारा **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा **वावृधानः** = वृद्धि करने वाले **स्वयम्** = अपने को, स्वयम् को **यजस्व** = यजन करो **पृथिवीम्** = पृथिवी को **उत** = ही, भी, ओर **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय **मुह्यन्तु** = मोहित हों, मोहित करें **अन्ये** = अन्य, कोई और, इतर **अभितः** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सपत्ना** = प्रकाश-ऐश्वर्यवान्, प्रकाश-रक्षक **इह** = इसमें, यहां, यह **अस्माकम्** = हमारा **मघवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् **सूरिः** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 6 ॥

पदार्थ - विश्वकर्मन् = विश्वकर्मा, सभी कर्म, सभी कर्म करने वाले द्वारा (विश्व - सभी, कृ - करना)। **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान

करना)। **वावृधान** = वृद्धि करने वाले (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। **स्वयम्** = अपने को, स्वयम् को (सर्वनाम)। **यजस्व** = यजन करो (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, संगति करना, दान करना)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना)। **मुह्यन्तु** = मोहित हों, मोहित करें (मुह् - मोहना, मोहित होना, मुग्ध होना)। **अन्ये** = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। **अभितः** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (सर्वनाम)। **सपत्ना** = प्रकाश-ऐश्वर्यवान्, प्रकाश-रक्षक (स - सहित, साथ, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, पत् = जाना, नीचे जाना, पतन होना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना, सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **मधवा** = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मध् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। **सूरिः** = उत्पन्न करने, गति करने वाले, ऐश्वर्यवान् (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 6 ॥

अनुवाकः- 80

(345) सूक्त 87

1404. सनात् अग्ने मृणासि यातुधानान्, न त्वा रक्षांसि पृतनासु जिग्युः ।

अनु दह सहमूरान् कयादो, मा ते हेत्या मुक्षत दैव्यायाः ॥ 19 ॥ **10-87-19**

मन्त्रार्थ - सनात् = सेवा से अग्ने = हे अग्नि मृणासि = सुख करो, मार दो यातुधानान् = यातुधानों को न = नहीं, समान, उपमार्थक त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा रक्षांसि = रक्षक पृतनासु = व्यापक, बलों में जिग्युः = स्तुति करते हो अनु = पश्चात्, पीछे, अनुकूल दह = जलाओ सहमूरान् = मूर सहित कयादो = कयाद मा = नहीं, मत ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए हेत्या = हेति के लिए, गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणा के लिए मुक्षत = एकत्र करें, छुड़ायें दैव्यायाः = दिव्य के लिए ॥ 19 ॥

पदार्थ - सनात् = सेवा से (सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, सेवा करना, चाकरी करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **मृणासि** = सुख करो, मार दो (मृड - सुखी होना, सुख देना, मृण् - हिंसा करना, मारना, छिद्र करना)। **यातुधानान्** = यातुधानों को (या - जाना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना, धा = धारण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **रक्षांसि** = रक्षक (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **पृतनासु** = व्यापक, बलों में (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **जिग्युः** = स्तुति करते हो (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **दह** = जलाओ (दह् - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना)। **सहमूरान्** = मूर सहित (सह = साथ, सहित, सर्वनाम, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, मुर् - घेरना, लपेटना)। **कयादो** = कयाद (कि - जानना समझना)। **अद्** - खाना, नष्ट करना। **दा** - = देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **मा** = नहीं, मत (अव्यय)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **हेत्या** = हेति के लिए, गति, ज्ञान, प्राप्ति, वृद्धि, प्रेरणा के लिए (हि - गति, वृद्धि, प्रेरणा करना, जाना, जानना, पाना)। **मुक्षत** = एकत्र करें, छुड़ायें (मुक्ष = राशि करना, सञ्चित करना, एकत्र करना, छूटना)। **दैव्यायाः** = दिव्य के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ 19 ॥

1405. प्रति अग्ने हरसा हरः, शृणीहि विश्वतः परि ।

यातुधानस्य रक्षसो, बलम् वि रुज वीर्यम् ॥ 25 ॥ **10-87-25**

मन्त्रार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **अग्ने** = हे अग्नि **हरसा** = हर द्वारा **हरः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला **शृणीहि** = सुनों **विश्वतः** = सबसे, विश्व से **परि** = सभी तरफ **यातुधानस्य** = यातुधान के लिए **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् **बलम्** = बल को **वि** = विशेष, विविध, विना, विलोम **रुज** = हिंसा करने वाले **वीर्यम्** = पराक्रम, वीरता को ॥ 25 ॥

पदार्थ - प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **हरसा** = हर द्वारा (ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **हरः** = हर, हरने वाला, ले जाने वाला, पहुँचाने वाला (ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **शृणीहि** = सुनों (शृ = सुनना, श्रवण करना, जाना। पच् = पकाना, व्यक्त करना, प्रसिद्ध करना, जीर्ण होना)। **विश्वतः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **यातुधानस्य** = यातुधान के लिए (या - जाना, यत् - यत्न करना, प्रयास करना, उद्योग करना, दुःख देना, छाया-आच्छादन करना, रोकना, धा = धारण करना)। **रक्षसो** = रक्षा करने वाला, रक्षस् (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना)। **बलम्** = बल को (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **वि** = विशेष, विविध, विना, विलोम (उपसर्ग)। **रुज** = हिंसा करने वाले (रुज् - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना) ॥ **वीर्यम्** = पराक्रम, वीरता को (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 25 ॥

(346) सूक्त 89

1406. इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा, अपः प्रेरयम् सगरस्य बुध्नात् ।

यो अक्षेण इव चक्रिया शचीभिः, विष्वक् तस्तम्भ पृथिवीम् उत द्याम् ॥ 4 ॥ 10-89-4

मन्त्रार्थ - इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन **अनिशितसर्गा** = अविचारित को छोड़ने वाला **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक **प्रेरयम्** = प्राप्त, पूर्ण करें **सगरस्य** = सगर द्वारा **बुध्नात्** = बोधमय, बोधयुक्त का **यो** = जो **अक्षेण** = अक्ष का, खेल, क्रीणा, दृष्टि का **इव** = समान, की भाँति, के समान **चक्रिया** = किया **शचीभिः** = उत्तम वाणी द्वारा **विष्वक्** = विश्व, व्याप्त **तस्तम्भ** = स्तम्भित, स्थापित किया **पृथिवीम्** = पृथिवी को **उत** = ही, भी, ओर **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय को ॥ 4 ॥

पदार्थ - इन्द्राय = इन्द्र के लिए, परम ऐश्वर्य के लिए (इदि-इन्द् = परम ऐश्वर्य होना)। **गिरो** = वाणियाँ, बोध, सिञ्चन (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। **अनिशितसर्गा** = अविचारित को छोड़ने वाला (अ - नहीं, निश् = विचार करना, मनन करना, सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **प्रेरयम्** = प्राप्त, पूर्ण करें (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इ - जाना, जानना, पाना, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। **सगरस्य** = सगर द्वारा (सग - संवरण करना, आच्छादन करना, ओढ़ना, स - सहित, साथ, गृ - गीला करना, समझना, जानना)। **बुध्नात्** = बोधमय, बोधयुक्त का (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना) ॥ **यो** = जो। **अक्षेण** = अक्ष का, खेल, क्रीणा, दृष्टि का (अक्ष - खेलना, देखना, व्याप्त होना, एकत्र होना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **चक्रिया** = किया (चक्र = चक्रण करना, गोलाकार घूमना, कृ - करना)। **शचीभिः** = उत्तम वाणी द्वारा (शच - स्पष्ट बोलना)। **विष्वक्** = विश्व, व्याप्त (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **तस्तम्भ** = स्तम्भित, स्थापित किया (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, स्तम्भ-स्तम्भि-स्तम्भ - स्थापित करना, स्थित करना)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भोजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय को (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, द्यै = तिरस्कार करना) ॥ 4 ॥

(347) सूक्त 90

1407. सहस्रशीर्षाः पुरुषः, सहस्राक्षः सहस्रपात् ।

स भूमिम् विश्वतो वृत्वा, अति अतिष्ठत् दशाङ्गुलम् ॥ 1 ॥ 10-90-1

मन्त्रार्थ - सहस्रशीर्षाः हजारों शिरों वाला **पुरुषः** पुरुष (सर्वत्र परिपूर्ण व्यापक परमात्मा), **सहस्राक्षः** हजारों नेत्र वाला, **सहस्रपात्** हजारों पाद अर्थात् पैरों वाला (है)। **स** वह **भूमिम्** भूमि को **विश्वतोः** = सबसे, विश्व से **वृत्वा** आवरण **दशाङ्गुलम्** दश अंगुल **अति** अधिक **अतिष्ठत्** अधिक होकर स्थित है ॥ 1 ॥

भावार्थ - परमात्मा अनादि-अनन्त है। प्रतीकात्मक रूप से कहा जाता है कि उसके अनन्त शिर, अनन्त हाथ, अनन्त नेत्र, अनन्त पैर आदि हैं। वह सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त होने के साथ ही उससे भी अधिक है। परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि से भी अधिक विराट है।

पदार्थ - सहस्रशीर्षा = हजारों शिरों वाला (सहस्र - हजार, शीर्ष - शीर्ष होना, उच्च होना, मुख्य होना)। **पुरुषः** = पुरुष (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **सहस्राक्षः** = हजारों नेत्र वाला (अक्ष - देखना, खेलना)। **सहस्रपात्** = हजारों पाद अर्थात् पैरों वाला (पद् - चलना, पत् - चलना, ऐश्वर्य होना)। **स** = वह। **भूमिम्** = भूमि को (भू - होना)। **विश्वतोः** = सबसे, विश्व से (सर्वनाम)। **वृत्वा** = आवरण, ढका हुआ, वर्ताव, वाणी, वर्तमान (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **दशाङ्गुलम्** = दश अंगुल (दश - दस, अङ्ग - चलना, अंकुरित होना, अंग होना, अवयव होना)। **अति** - अधिक। **अतिष्ठत्** = स्थित है (तिष्ठ - ठहरना, स्थित होना) ॥ 1 ॥

1408. पुरुष एव इदम् सर्वम्, यत् भूतम् यत् भाव्यम्।

उत अमृतत्वस्य ईशानो, यत् अन्नेन अतिरोहति। ॥ 2 ॥ 10-90-2

मन्त्रार्थ - इदम् यह **सर्वम्** सब (समस्त जगत्), **यत्** जो **भूतम्** उत्पन्न हुआ **यत्** जो **च** और **भाव्यम्** उत्पन्न होने वाला (है), **उत** = ही, भी, ओर **अमृतत्वस्य** = अमृतत्व का **ईशानो** = अधिकार करने वाला, शासन करने होना, बढ़ना, चढ़ना **यत्** = जिसे, जो **अन्नेन** = अन्न द्वारा **अतिरोहति** = अत्यन्त बढ़ता है ॥ 2 ॥

भावार्थ - जो कुछ है, जो भविष्य में हो सकता है, वह सबकुछ पुरुष अर्थात् परिपूर्ण परमात्मा ही है, उसके अतिरिक्त अन्य कुछ है ही नहीं। वही अमृतत्व अर्थात् अमरता का शासक है, उसके अतिरिक्त सबकुछ मरणशील है, नाशवान् है। विभिन्न रूपों में वहीं वृद्धि कर रहा है, शेष सभी तो नाशवान् हैं, क्षरणशील हैं।

पदार्थ - इदम् यह **सर्वम्** सब, **यत्** जो **भूतम्** उत्पन्न हुआ (भू - होना, उत्पन्न होना) **यत्** जो **च** और **भाव्यम्** उत्पन्न होने वाला (भू - होना, उत्पन्न होना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **अमृतत्वस्य** = अमृतत्व का (अ - नहीं, मृ - मरना)। **ईशानो** = अधिकार करने वाला, शासन करने वाला (ईश = ऐश्वर्य-अधिकार होना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अन्नेन** = अन्न द्वारा (अन्न - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना)। **अतिरोहति** = अत्यन्त बढ़ता है (अति - अधिक, रुह - जन्म होना, बढ़ना, चढ़ना) ॥ 2 ॥

1409. एतावान् अस्य महिमा, ततो ज्यायान् च पूरुषः।

पादो अस्य सर्वा भूतानि, त्रिपात् अस्य अमृतम् दिवि 3 ॥

10-90-3

मन्त्रार्थ - एतावान् उतनी, उतना **अस्य** इसका (परमात्मा का) **महिमा** महिमा है, **ततो** = उससे, उसके अनन्तर **ज्यायान्** अति प्रशंसित और बड़ा **च** और **पूरुषः** परिपूर्ण परमात्मा (है), **पादो** पाद को (अंश) **अस्य** इसका **सर्वा** सब **भूतानि** सृष्टि एक, **त्रिपाद्** तीन पाद (तीन अंश) **अस्य** इसका **अमृतम्** अमृत **दिवि** दिव (द्योतनात्मक स्वरूप) में (है) ॥ 3 ॥

भावार्थ - सम्पूर्ण सृष्टि परमात्मा का ही महत्व प्रकट कर रही है। सम्पूर्ण सृष्टि तो मात्र एक पाद या अंश है, तीन अंश तो सृष्टि से परे उससे भी अधिक केवल परमात्मा ही है। परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त तो है ही, उससे भी कई गुना अधिक विराट रूप परमात्मा का है।

पदार्थ - एतावान् उतनी, उतना (सर्वनाम) **अस्य** इसका **महिमा** महिमा (मह - महत्व होना, पूज्य होना) है, **ततो** = उससे, उसके अनन्तर (सर्वनाम)। **ज्यायान्** अति प्रशंसित और बड़ा (ज्या - ज्येष्ठ होना, बड़ा होना, वृद्ध होना) **च** और **पूरुषः** परिपूर्ण परमात्मा (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)

पुरुष पुरुष अर्थात् परिपूर्ण परमात्मा (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), **एव** ही, **उत** ही **पादो** पाद (पद् - चलना, भूषित होना) **अस्य** इसका सर्वा सब **भूतानि** सृष्टि, **त्रिपाद्** तीन पाद (त्रि - तीन, पद् - चलना, भूषित होना) **अस्य** इसका **अमृतम्** अमृत (अ - नहीं, मृ - मरना) **दिवि** दिव में (दिव् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना) ॥ 3 ॥

1410. त्रिपात् उर्ध्व उदैत् पुरुषः, पादो अस्य इह अभवत् पुनः ।

तथा विष्वङ् वि अक्रामत्, अशनानशने अभि ॥ 4 ॥ 10-90-4

मन्त्रार्थ- अस्य इसका (परमात्मा का) **त्रिपात्** तीन पाद (अंश) **ऊर्ध्व** ऊपर या उच्च अवस्था **उत्** ही **ऐत्** प्राप्त है। **पुरुषः** पुरुष (परमात्मा), **पादो** पाद (एक भाग) **इह** यह (सृष्टि) **अभवत्** हुआ **पुनः** फिर। **तथा** = उसी प्रकार **विष्वङ्** विश्व अथवा व्याप्त **वि-अक्रामत्** विशेष रूप से प्राप्त हुआ, **अशनानशने** खाने वाले और न खाने वाले **अभि** प्रति ॥ 4 ॥

भावार्थ - परमात्मा का तीन पाद या अंश तो उच्च अवस्था अर्थात् शुद्ध स्वरूप में अवस्थित रहता है, केवल एक पाद या अंश ही सृष्टि के रूप में व्यक्त होता है। इस एक पाद में खाने वाले तथा न खाने वाले सभी रूप सम्मिलित हैं। साशन तथा अनशन अर्थात् खाने वाले और न खाने वाले, इसका एक भावार्थ तो यह है कि भोजन कर जीवन यापन करने वाले अर्थात् जीव तथा विना भोजन के रहने वाले अर्थात् निर्जीव पदार्थ। सामाजिक दृष्टि से इसका भावार्थ खाने वाले, नष्ट करने वाले, अन्य लोगों अधिकार या भाग छीनने वाले दुर्जन तथा सहजता से सरल जीवन जीने वाले सज्जन। इस प्रकार से अन्य तर्कसंगत भावार्थ भी लिये जा सकते हैं।

पदार्थ - **अस्य** = इसका। **त्रिपात्** = तीन पाद (त्रि - तीन, पद् - चलना, भूषित होना)। **ऊर्ध्व** = ऊपर, उच्च अवस्था **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **ऐत्** = प्राप्त है (इ - जाना, जानना, पाना)। **पुरुषः** = पुरुष (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना)। **पादो** = पाद (पद् - चलना, भूषित होना) **इह** = यह, **अभवत्** = हुआ, **पुनः** = फिर। **तथा** = उसी प्रकार (अव्यय)। **विष्वङ्** = विश्व अथवा व्याप्त (विष्-विषि - व्याप्त होना) **वि-अक्रामत्** = विशेष रूप से प्राप्त हुआ (क्रम् - चलना, निर्भयता से जाना, रक्षा करना)। **अशनानशने** = खाने वाले और न खाने वाले (अशन-अन्-अशन, अश् - खाना, अन् - नहीं) **अभि** = प्रति ॥ 4 ॥

1411. तस्मात् विराट् अजायत, विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अति अरिच्यत्, पश्चात् भूमिम् अथो पुरः ॥ 5 ॥ 10-90-5

मन्त्रार्थ- तस्मात् उससे, **अधि** अधिष्ठाता **पूरुषः** पुरुष (परमात्मा) से **विराट्** विराट (ब्रह्माण्ड रूप परमात्मा) **विराजो** विराज अर्थात् विशेष तेज या ज्योति अथवा ऊर्जा **अजायत्** उत्पन्न हुआ। **स** उसने पश्चात् पीछे **भूमिम्** भूमि को **अति-अरिच्यत्** अतिशय रचा **अथो** इसके अनन्तर **पुरः** पुरों अर्थात् **शरीरों** या वन, ग्राम, नगर आदि **जातो** उत्पन्न हुआ ॥ 5 ॥

भावार्थ - इस मन्त्र से पूर्व यह स्पष्ट किया जा चुका है कि परमात्मा का एक अंश ही सम्पूर्ण सृष्टि के रूप में व्यक्त हुआ है। इस मन्त्र में सृष्टि के सृजन का क्रम या प्रक्रिया बतायी जा रही है। सर्वव्यापी परम चेतन स्वरूप परमात्मा से सबसे पहले विराट् तेज उत्पन्न हुआ। उसके पश्चात् उस विराट् तेज से भूमि तथा पुर उत्पन्न हुए। पुर शब्द का अर्थ अभिगमन होता है। सामान्यतः इस शब्द का प्रयोग अभिगमन के आधारभूत माध्यम या लक्ष्य जीव शरीर, ग्राम नगर आदि के अर्थ में होता है।

पदार्थ- **तस्मात्** = उससे (सर्वनाम)। **अधि** अधिष्ठाता **पूरुषः** पुरुष (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), **विराट्** विराट (ब्रह्माण्ड रूप परमात्मा) **विराजो** विराज से (वि - विशेष, राज् - चमकना, शोभित होना, तेज होना) **अजायत्** उत्पन्न हुआ (जन् - उत्पन्न होना)। **स** उसने **पश्चात्** पीछे **भूमिम्** भूमि को (भू - होना) **अति-अरिच्यत्** अतिशय रचा (रिच् - एकत्र करना, जोड़ना, फैलाना, अलग करना) **अथो** इसके अनन्तर **पुरः** पुर (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), **जातो** उत्पन्न हुआ (जन् - उत्पन्न होना) ॥ 5 ॥

1412. यत् पुरुषेण हविषा, देवा यज्ञम् अतन्वत ।

मन्त्रार्थ- यत् जिस हविषा हविष् अर्थात् दान तथा ग्रहण करने योग्य पुरुषेण पुरुष (परमात्मा) के साथ देवा देव (विद्वान् लोग) यज्ञम् यज्ञ को अतन्वत् विस्तृत करते हैं, वसन्तो वसन्त अस्य इसका आज्यम् आज्य (प्रक्षेपण, स्थापन, गमन में समर्थ (पदार्थ या ऊर्जा), ग्रीष्मः ग्रीष्मकाल इध्मः प्रकाशक, शरत् शरत् हविः हवि (देय, दानयोग्य) आसीत् था ॥ 06 ॥

भावार्थ - इस मन्त्र में यज्ञ का सत्य स्वरूप बताया गया है। यजन हविष् पुरुष अर्थात् हविगुणयुक्त परमात्मा के साथ किया जाता है। हवि शब्द हु धातु से बना है जिसका अर्थ होता है आदान-प्रदान करना तथा दान करना। परमात्मा के साथ हमारा निकट सम्बन्ध है। हम स्वयम् को परमात्मा के प्रति समर्पित कर देते हैं तो हमें दिव्य संरक्षण तथा अनुदान प्राप्त होते हैं। अन्य लोगों को भी हम अपना यह अनुभव प्रदान करते रहें, यह है दान करना। परमात्मा को हविष् विशेषण के साथ स्मरण करने का यही भाव है। यज्ञ तथा यजन शब्द यज् धातु से बनते हैं जिसका अर्थ होता है देवपूजा, संगतिकरण, दान करना। अतः यज्ञ या यजन करने के लिए परमात्मा के हविष् गुण या स्वरूप का स्मरण करना स्वाभाविक तथा उचित है। अब यजन में सहायक सामग्री के रूप में वसन्त को उस यज्ञ का आज्य अर्थात् प्रक्षेपण, स्थापन, गमन में समर्थ पदार्थ या ऊर्जा के रूप में माना गया है। वसन्त ऋतु ही ऐसे कार्यों के लिए उपयुक्त होती है। ग्रीष्म ऋतु में प्रकाश सर्वाधिक होता है, यही उससे प्रेरणा ले सकते हैं। शरद् ऋतु हवि है अर्थात् दान तथा आदान-प्रदान की प्रेरणास्वरूप है। सकारात्मक चिन्तन-विचार हों तो सभी ऋतुओं - अवसरों से सकारात्मक प्रेरणा ले सकते हैं तथा यजन जैसे श्रेष्ठ कार्य कर सकते हैं, अन्य प्रत्येक स्थिति में कठिनाइयाँ हमें कार्य करने से रोक सकती हैं। 6।

पदार्थ- यत् जिस हविषा हविष् (हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) पुरुषेण पुरुष के साथ (पुर - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), देवा देव (दिव् -) यज्ञम् यज्ञ को (यज् -) अतन्वत् विस्तृत करते हैं (तन् - विस्तार करना), वसन्तो वसन्त (वस् - निवास करना) अस्य इसका आज्यम् आज्य, प्रक्षेपण, स्थापन, गमन में समर्थ (अज् - स्थापन, गमन, प्रक्षेपण करना), ग्रीष्मः ग्रीष्मकाल (ग्रीष् - तपना, ऊष्म होना) इध्मः प्रकाशक (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना), शरत् शरत् (शृ - सुनना, जाना) हविः हवि (हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) आसीत् था (अस् - होना) ॥ 06 ॥

1413. तम् यज्ञम् बर्हिषि प्र औक्षन्, पुरुषम् जातम् अग्रतः।

तेन देवा अयजन्त, साध्या ऋषयः च ये ॥ 07 ॥

10-90-7

मन्त्रार्थ - तम् उस अग्रतः अग्रणी (सबसे आगे या पूर्व) जातम् उत्पन्न (प्रसिद्ध) यज्ञम् यज्ञ को (सम्यक् पूजने योग्य) पुरुषम् पुरुष को (पूर्ण परमात्मा को) बर्हिषि श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में (श्रेष्ठ प्रयासों में) प्र औक्षन् सींचते (अर्थात् धारण करते) हैं। तेन उससे ये जो देवा देवगण (विद्वान्), साध्या साध्यगण च और ऋषयः ऋषिगण अयजन्त यजन (पूजन-दान) करते हैं ॥ 7 ॥

भावार्थ - वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। सबसे पहले ज्ञान वेद से ही मिला। यह तथ्य पूर्व मन्त्र में बताया जा चुका है। उससे ही देवगण अर्थात् दिव्यगुणों तथा विद्या से युक्त श्रेष्ठजन, साध्यजन तथा ऋषि यजन अर्थात् पूजन, दान तथा संगठन के सामाजिक कार्य करते हैं। बर्हिषि का अर्थ श्रेष्ठता-प्रधानता में तथा प्रयास में होता है। अतः इसका पदार्थ श्रेष्ठ प्रयासों में मानता उपयुक्त है। अनेक विद्वानों ने इसका भावार्थ मानस ज्ञान यज्ञ में किया है। ऐसा भावार्थ लेना उचित ही कहा जा सकता है।

पदार्थ - तम् उस अग्रतः अग्रणी (अग् - जाना, आगे जाना) जातम् उत्पन्न (जन् - उत्पन्न होना) यज्ञम् यज्ञ को (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) पुरुषम् पुरुष को (पुर - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना), बर्हिषि श्रेष्ठता-प्रधानता में, प्रयास में (बर्ह - श्रेष्ठ होना, प्रधान होना, प्रयास करना, उद्यम-व्यवसाय करना, खेलना) प्र औक्षन् सींचते हैं (प्र - प्रकृष्ट, उक्ष् - सिंचन करना, स्वच्छ करना)।

तेन उससे ये जो देवा देवगण (दिक् - तेजस्वी होना, चमकना, स्तुति करना, प्रीति करना), साध्या साध्यगण (साध् - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, साधना करना, यशस्वी होना) च और ऋषयः ऋषिगण (ऋष् - जानना, जाना, पाना, अन्तर्दृष्टि होना, अन्तर्गमन करना, सूक्ष्मता से भीतर देखना) अयजन्त यजन करते हैं (यज् - देव-पूजन, संगतिकरण, दान करना) ॥ 7 ॥

1414. तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः, सम्भृतम् पृषद् आज्यम्।

पशून् तान् चक्रे वायव्यान्, आरण्या ग्राम्याः च ये ॥ 8 ॥

10-90-8

मन्त्रार्थ- (परमात्मा ने) तस्मात् उस सर्वहुत सब को दान अथवा आह्वान करने वाले यज्ञात् यजन से पृषद् पृषद् आज्यम् आज्य को (पदार्थ या ऊर्जा) सम्भृतम् सम्यक् भरण किया अर्थात् भलीभाँति भर दिया। तान् उन पशून् पशुओं को वायव्यान् वायव्य, आरण्याः वन के च और ये जो ग्राम्याः ग्रामों वाले चक्रे (उत्पन्न) किया ॥ 6 ॥

भावार्थ - परमात्मा ने जो सृष्टि रचना रूपी यजन प्रारम्भ किया, उस यजन से जीवन-यापन के लिए अनुकूल साधन उत्पन्न हुए। उसके पश्चात् वन तथा ग्रामों में रहने वाले पशु उत्पन्न हुए। मनुष्य सहित सभी पशु अर्थात् देखने में समर्थ प्राणी या जीवों की उत्पत्ति से पूर्व उपयोगी भूमि, जल, वनस्पति आदि उत्पन्न हो गये, तभी विकसित जीवन का अस्तित्व सम्भव हो सका।

पदार्थ- तस्मात् उससे सर्वहुत सब को दान अथवा आह्वान करने वाले (सर्व - सब, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) यज्ञात् यजन से (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) पृषद् पृषद् (पृष् - जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना) आज्यम् आज्य को (पृष् - जाना, सरल होना, अभिसिञ्चन करना) सम्भृतम् सम्यक् भरण किया (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, भृ - भरना)। तान् उनको पशून् पशुओं को (पश् - देखना) वायव्यान् वायव्य (वा - गति करना, बहना, पवन-सा चलना), आरण्याः वन के (अरण्य, अ - नहीं, रण् - शब्द करना, चलना, युद्ध करना) च और ये जो ग्राम्याः ग्रामों वाले (ग्राम - बुलाना, बुद्धिपूर्वक कहना, एकत्र होना) चक्रे (उत्पन्न) किया (कृ - करना) ॥ 6 ॥

1415. तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः, ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात्, यजुः तस्मात् अजायत ॥ 09 ॥

10-90-9

मन्त्रार्थ - तस्मात् उससे सर्वहुतः सब को दान अथवा आह्वान करने वाले यज्ञात् यजन से ऋचः ऋचायें (ऋग्वेद के मन्त्र) सामानि साम (सामवेद के मन्त्र) जज्ञिरे उत्पन्न हुए। तस्मात् उससे छन्दांसि छन्द (सभी छन्द अथवा विशेष रूप से अथर्ववेद के मन्त्र) जज्ञिरे उत्पन्न हुए, यजुः यजुः या यजुष् (यजुर्वेद के मन्त्र) तस्मात् उससे अजायत उत्पन्न हुए ॥ 9 ॥

भावार्थ - सम्यक् दृष्टि-सम्पन्न जीव, विशेष रूप से मनुष्य के अस्तित्व में आने पर उसको समुचित ज्ञान तथा मार्गदर्शन की आवश्यकता थी। इसके लिए परमात्मा ने वेदों को उत्पन्न किया। वेदों का सृजन कैसे हुआ तथा मनुष्य को कैसे प्राप्त हुए, यह गम्भीर चिन्तन तथा शोध का विषय है। माना जा सकता है कि जीवों में चेतनशक्ति तो परमात्मा की चेतना ही है, अतः आदि मानवीय सृष्टि के सरल पवित्र मनुष्य उस परम चेतन सत्ता परमात्मा की चेतना से एकात्म स्थापित कर उस वेद ज्ञान को प्राप्त कर सके होंगे। 9 ॥

पदार्थ- तस्मात् उस सर्वहुत सब को दान अथवा आह्वान करने वाले (सर्व - सब, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) यज्ञात् यजन से (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) ऋचः ऋचायें (ऋच् - स्तुति करना, चमकना, आच्छादित करना) सामानि साम (साम - सान्त्वना देना, शान्त करना, समाधान करना) जज्ञिरे उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना)। तस्मात् उससे छन्दांसि छन्द (छन्द - बल-प्राण होना, आच्छादन करना) जज्ञिरे उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना)। यजुः यजुः या यजुष् (यज् - देवपूजा, संगतिकरण, दान करना) तस्मात् उससे अजायत उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना) ॥ 9 ॥

1416. तस्मात् अश्वा अजायन्त, ये के च उभयादतः।

मन्त्रार्थ- च और तस्मात् उससे ये जो के कोई उभयादतः दोनों ओर खाने वाले अश्वा अश्व (घोड़े) अजायन्त उत्पन्न हुए, तस्मात् उससे, ह ही गावो गौ जज़िरे उत्पन्न हुए। ततस्मात् उससे अजावयः बकरी भेड़ जाता उत्पन्न हुए ॥ 10 ॥

भावार्थ - जिस तरह परमात्मा ने वेद का ज्ञान सभी के कल्याण के लिए दिया, उसी प्रकार अश्व, गौ, भेड़-बकरी आदि भी प्रकृति के संरक्षण तथा संतुलन के लिए उपयोगी सृष्टि हैं।

पदार्थ- च और तस्मात् उससे ये जो के कोई उभयादतः दोनों ओर (ऊपर-नीचे दांतों से) खाने वाले (उभय - दोनो, अद् - खाना, खिलाना, नष्ट करना) अश्वा अश्व (अश् - व्याप्त होना, पाना, पहुँचना, संग्रह करना, ढेर करना) अजायन्त उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना)। तस्मात् उससे, ह ही गावो गौ ((गु - बोलना, मनन करना) जज़िरे उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना)। ततस्मात् उससे अजावयः बकरी भेड़ (अज- अवयः, अज् - स्थापन, गमन, प्रक्षेपण करना, अक् - रक्षा करना) जाता उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना) ॥ 10 ॥

1417. यत् पुरुषम् वि अदधुः, कतिधा वि अकल्पयन्।

मुखम् किम् अस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥ 11 ॥

10-90-11

मन्त्रार्थ - यत् जिस पुरुषम् पुरुष को (परमात्मा को) वि अदधुः विशेष रूप से धारण करते हैं, कतिधा कितने प्रकार से वि अकल्पयन् विशेषकर कल्पना करते हैं। अस्य इसका मुखम् मुख किम् क्या आसीत् था, कौ क्या बाहू हाथ, का क्या ऊरू जङ्घाएं, पादा पैर उच्येते कहे जाते हैं ॥ 11 ॥

भावार्थ - परम सत्य यही है कि परमात्मा का कोई आकार या शरीर है ही नहीं। फिर भी सरलता से समझने के लिए तथा समाज की व्यवस्था में परमात्मा के प्रति श्रद्धा भावना का लाभ उठाने के लिए उसके शरीर की कल्पना रूपक के माध्यम से की गयी है। इस मन्त्र में प्रश्न किया गया है कि उसके मुख, हाथ, पैर आदि की कल्पना किस रूप में की गयी है। आगे के मन्त्रों में इस प्रश्न का उत्तर दिया गया है।

पदार्थ - यत् जिसे पुरुषम् पुरुष को (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना) वि अदधुः विशेष रूप से धारण करते हैं (वि - विशेष, धा - धारण करना), कतिधा कितने प्रकार से वि अकल्पयन् विशेषकर कल्पना करते हैं (कल्प् - कल्पना करना)। अस्य इसका मुखम् मुख (मुख - मुख्य होना, जाना, खाना) किम् क्या आसीत् था (अस् होना), कौ क्या बाहू हाथ (बाह् - प्रयास करना, बह् - गति करना, हिंसा करना), का क्या ऊरू जङ्घाएं (ऊ - शब्द करना, ध्वनि करना, विश्वास करना), पादा पैर (पद् - चलना, भूषित होना) उच्येते कहे जाते हैं (उच्-वद् - कहना, बोलना) ॥ 11 ॥

1418. ब्राह्मणो अस्य मुखम् आसीत्, बाहू राजन्यः कृतः।

ऊरू तत् अस्य यत् वैश्यः, पद्भ्याम् शूद्रो अजायत ॥ 12 ॥

10-90-12

मन्त्रार्थ- ब्राह्मणो ब्राह्मण (ब्रह्म अर्थात् वेद तथा ईश्वर का ज्ञाता या उपासक) अस्य इसका मुखम् मुख आसीत् था, बाहू हाथ राजन्यः राजकर्मि कृतः किये। अस्य इसकी ऊरू जङ्घाएं तत् वह यत् जो वैश्यः वैश्य (हैं), पद्भ्याम् पैरों के लिए शूद्रो शूद्र अजायत उत्पन्न अर्थात् कल्पित हुआ ॥ 12 ॥

भावार्थ - ब्रह्म का अर्थ है बड़ा। सबसे बड़ा होने से परमात्मा ब्रह्म है। वेद को शब्द ब्रह्म कहा जाता है। इनको जानने वाला उपासना करने वाला ब्राह्मण है। उस ज्ञान को प्रवचन-शिक्षण के माध्यम से अन्य लोगों को देने के कारण वह मुख की भूमिका में कल्पित है। राजन्य अर्थात् राज्यकर्मि ही तो शासन के हाथ हैं। सभी प्राशासनिक कार्य वे ही करते हैं। विश् धातु का अर्थ प्रवेश करना, भीतर जाना है। जो लोग समाज में घुले-मिले हैं, समाज के कार्यों में सहभागी हैं, वे वैश्य हैं। सामान्यतः लोकभाषा में विश शब्द सामान्य जनों के लिए आता है जिस अर्थ में इस समय देशवासी या नागरिक शब्द प्रचलित है। यह जन-सामान्य ही विद्वान्, शासकीय कर्मचारी आदि सभी के निर्वाह का दायित्व निभाता है। शूद्र शब्द का अर्थ है शुद्ध-पवित्र करने वाला। वह पैर अर्थात् गतिशीलता का प्रतीक माना गया है। प्राकृतिक वस्तुओं को शोधन-परिष्कार

कर समाज के लिए उपयोगी बना देने वाले शिल्पी इसी प्रकार के लोग हैं। वाहन आदि का निर्माण यदि शिल्पी-यन्त्रविद न करें तो गतिशीलता सीमित हो जायेगी तथा जन-जीवन पंगु हो जायेगा। 12॥

पदार्थ- ब्राह्मणो ब्राह्मण (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना) अस्य इसका मुखम् मुख (मुख - मुख्य होना, जाना, खाना) आसीत् था (अस् - होना), बाहू हाथ (बाह - प्रयास करना, बह - गति करना, हिंसा करना), राजन्यः राजकर्मि (राज - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना) कृतः किये (कृ - करना)। अस्य इसकी ऊरू जङ्घाएं (ऊ - शब्द करना, ध्वनि करना, विश्वास करना) तत् वह यत् जो वैश्यः वैश्य अर्थात् सूचना, प्रेरणा, प्रवेश करने वाला (विश्-सूचना देना, प्रेरणा देना, प्रवेश करना)। पद्भ्याम् पैरों के लिए (पद् - चलना, भूषित होना) शूद्रो शूद्र (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना)। अजायत उत्पन्न हुआ (जन् - उत्पन्न होना)॥ 12॥

1419. चन्द्रमा मनसो जातः, चक्षोः सूर्यो अजायत।

मुखात् इन्द्रः वायुः च प्राणः च, मुखात् अग्निः अजायत॥ 13॥

10-90-13

मन्त्रार्थ- चन्द्रमा चन्द्रमा मनसो मन से जातः उत्पन्न हुआ, चक्षोः चक्षु अर्थात् नेत्रों से सूर्यो सूर्य अजायत उत्पन्न हुआ। श्रोत्रात् श्रोत अर्थात् कानों से वायुः वायु च और प्राणः प्राण च और, मुखात् मुख से अग्निः अग्नि अजायत उत्पन्न हुआ॥ 13॥

भावार्थ - ध्यान देने योग्य है कि पहले मूल प्रश्न यह किया गया है कि विराट पुरुष परमात्मा के शरीर की कल्पना करने पर रूपक के रूप में समाज और प्रकृति की कल्पना किस रूप में की गयी है॥ इस मन्त्र में बताया गया है कि चन्द्रमा को इस रूपक में मन से उत्पन्न माना गया है। चन्द्रमा का प्रकाश शीतल होता है। मन को प्रकाश तो चाहिए, परन्तु वह शीतल होना चाहिए। नेत्र को सूर्य के रूपक में कल्पित किया गया है। सूर्य से ही हमारे नेत्रों को देखने की शक्ति प्राप्त होती है। प्रकाश के अन्य साधन भी तो परोक्ष रूप में सूर्य की ऊर्जा से ही कार्य करते हैं। वायु के कम्पन तथा तरंगों से ही सुनना सम्भव हो पाता है तथा मुख से ग्रहण किया गया भोजन भी जठराग्नि से ही पचता है। मुख की वाणी को भी अग्नि के समान अग्रणी, ऊर्ध्वगामी तथा तेजस्वी होना चाहिए, यह भावना भी इस कल्पना में है। 13॥

पदार्थ- चन्द्रमा चन्द्रमा (चन्द् -) मनसो मन से (मन् - मनन करना) जातः उत्पन्न हुआ (जन् -), चक्षोः चक्षु अर्थात् नेत्रों से (चक्ष -) सूर्यो सूर्य (सू -) अजायत उत्पन्न हुआ (जन् -)। श्रोत्रात् श्रोत अर्थात् कानों से (श्रु -) वायुः वायु (वा -) च और प्राणः प्राण (प्र - प्रकृष्ट, अन् - चेतन होना, प्राण होना) च और, मुखात् मुख से (मुख -) अग्निः अग्नि (अग् -) अजायत उत्पन्न हुआ (जन् -)॥ 13॥

1420. नाभ्या आसीत् अन्तरिक्षम्, शीर्ष्णो द्यौः सम् अवर्तत।

पद्भ्याम् भूमिः दिशः श्रोत्रात्, तथा लोकान् अकल्पयन्॥ 14॥

10-90-14

मन्त्रार्थ- नाभ्या नाभि के रूप में अन्तरिक्षम् अन्तरिक्ष या आकाश (अन्तः - बीच में, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना) आसीत् था (अस् - होना), शीर्ष्णो शिर (अन्तः - बीच में, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना) आसीत् था (अस् - होना), द्यौः प्रकाशयुक्त (लोक) सम् अवर्तत सम्यक् रूप से हुआ। पद्भ्याम् पैरों के लिए भूमिः भूमि, दिशः दिशा श्रोत्रात् श्रवण से, तथा उसी प्रकार लोकान् लोकों को अकल्पयन् कल्पना की॥ 14॥

भावार्थ - नाभि मध्य स्थान है, उसी स्थान से शरीर को पोषण भी मिलता है। उसे आकाश कहा गया है। आकाश में ही सभी लोक अवस्थित हैं। भूमि भी पैर के रूप में है। जैसे पैर के आश्रय से ही शरीर स्थित होता है तथा गति करता है, उसी प्रकार से भूमि के आधार पर ही जीव तथा प्रकृति स्थित हैं। प्रकृति में भूमि तथा समाज में शूद्र का स्थान पैरों के समान महत्वपूर्ण है। समाज तथा प्रकृति के संरक्षण के लिए आवश्यक है कि भूमि की रक्षा की जाये, इसी प्रकार से शूद्र अर्थात् तकनीकी ज्ञान वाले शूद्रों का भी संरक्षण-सम्मान किया जाये॥

पदार्थ- नाभ्या नाभि के रूप में (नभ् - मध्य होना, केन्द्र होना, हिंसा करना) अन्तरिक्षम् अन्तरिक्ष या आकाश

(अन्तः - बीच में, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष - स्वाद लेना, देखना) आसीत् था (अस् - होना), शीष्णा शिर (शीर्ष - शीर्ष होना, उच्च होना, मुख्य होना) द्यौः प्रकाशयुक्त (द्यु - आगे जाना, समीप जाना) सम् अवर्तत सम्यक् रूप से हुआ (वृत् - वर्तना, वर्तमान होना, होना)। पद्भ्याम् पैरों के लिए (पद् - चलना) भूमिः भूमि (भू - होना), दिशः दिशा (दिश् - दिखाना, समझाना, देना) श्रोत्रात् श्रवण से (श्रु - सुनना), तथा उसी प्रकार लोकान् लोकों को (लोक - देखना, बोलना) अकल्पयन् कल्पना की (कल्प - कल्पना करना) ॥ 14 ॥

1421. सप्त अस्य आसन् परिधयः, त्रिः सप्त समिधः कृताः।

देवा यत् यज्ञम् तन्वाना, अबध्नन् पुरुषम् पशुम् ॥ 15 ॥

10-90-15

मन्त्रार्थ - सप्त सात अस्य इसकी परिधयः परिधियाँ आसन् थीं, त्रिः सप्त तीन और सात (सभी सात परिधियों में प्रत्येक में तीन, इस प्रकार तीन गुणित सात अर्थात् इक्कीस) समिधः समिधा अर्थात् प्रकाश रूप कृताः किये। देवा देव (विद्वान् लोग) यत् जो यज्ञम् यज्ञ को तन्वाना विस्तृत करते हुए, पुरुषम् पुरुष को पशुम् पशु को (जानने योग्य) अबध्नन् बांधते हैं ॥ 15 ॥

भावार्थ - इस मन्त्र में यजन का रूपक के माध्यम से सुन्दर काव्यमय वर्णन किया गया है। उसकी सात परिधियाँ हैं, प्रत्येक परिधि में तीन-तीन ज्योतियाँ हैं। इस यज्ञ को करते हुए देवों अर्थात् दिव्यगुण सम्पन्न विद्वान् लोगों ने पुरुष अर्थात् परमात्मा को बांध लिया, ऐसा कहा गया है। बाँधे गये उस परमात्मा का विशेषण पशु कहा गया है। मन्त्र में काव्यसौन्दर्य दर्शनीय है। पशु शब्द का अर्थ देखने वाला तथा जिसमें दृष्टि हो, ऐसा होता है। परमात्मा सबकुछ देखने वाला है तथा उपासकों की दृष्टि तो सदा उसमें रहती ही है। श्लेष अलंकार से देखें तो बाँधना क्रिया के साथ पशु शब्द का प्रयोग कर संकेत देने का प्रायास किया गया है कि ऊपर मन्त्रों में यज्ञ का जो सत्य स्वरूप बताया गया है, उस प्रकार यज्ञ करने वाले उपासक तो परमात्मा को मानो पशुओं की तरह बाँध लेते हैं, अर्थात् अपने वश में कर लेते हैं। इस प्रकरण में विद्वानों ने विशेष रूप से यज्ञ का भावार्थ मानसज्ञान यज्ञ ही किया है।

पदार्थ - सप्त सात अस्य इसकी परिधयः परिधियाँ (परि - सब ओर, धि - धारण करना) आसन् थीं (अस् - होना), त्रिः सप्त तीन और सात (त्रि - तीन, सप्त - सात) समिधः समिधा (सम् - सम्यक्, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना), कृताः किये (कृ - करना)। देवा देव (दिव् -) यत् जो यज्ञम् यज्ञ को (यज् -) तन्वाना विस्तृत करते हुए (तन् -), पुरुषम् पुरुष को (पुर् - अग्रसर होना, मुख्य होना, पृ - पूर्ण करना, भरना, पालन करना, रक्षा करना, तृप्त करना) पशुम् पशु को (पश् - देखना, जानना) अबध्नन् बांधते हैं (बध् - बाँधना, निश्चय करना) ॥ 15 ॥

1422. यज्ञेन यज्ञम् अयजन्त देवाः, तानि धर्माणि प्रथमानि आसन्।

ते ह नाकम् महिमानः सचन्त, यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ 16 ॥

10-90-16

मन्त्रार्थ - देवाः देवगण यज्ञेन यज्ञ द्वारा यज्ञम् यज्ञ का अयजन्त यजन करते हैं, तानि वे प्रथमानि प्रथम अर्थात् पहले या मुख्य धर्माणि धर्म आसन् थे। ते वे ह ही नाकम् नाक अर्थात् अक रहित (अकुटिल, अविचल) महिमानः महत्त्व से युक्त सचन्त प्राप्त होते हैं, यत्र जहाँ पूर्वे पूर्व में साध्याः साध्य देवाः देवगण (प्रकाशमान विद्वान्) सन्ति हैं ॥ 16 ॥

भावार्थ - देवगण यज्ञ द्वारा यज्ञ का यजन कर रहे हैं। यज्ञ ही साधन है, यज्ञ ही साध्य है, यज्ञ ही कर्म है। सब कुछ यज्ञ ही है। जीवन, विचार, चिन्तन पूर्णतः यज्ञमय है। यही यजन है। यज्ञ कोईकर्मकाण्ड नहीं है कि कुछ विशेष क्रियायें कर लीं और यजन हो गया। यजन की मूल भावना देवपूजा, संगतिकरण तथा दान को जीवन में पूर्णतः आत्मसात् कर लेना यज्ञ है। ऐसे लोग ही अपनी महिमा से नाक अर्थात् अविचल तथा अकुटिल होकर अपने जीवन तथा समाज का अभिसिंचन इन भावों से करते हैं ॥ 16 ॥

पदार्थ - देवाः देवगण (दिव् -) यज्ञेन यज्ञ द्वारा (यज् -) यज्ञम् यज्ञ का (यज्) अयजन्त यजन करते हैं (यज्), तानि वे प्रथमानि प्रथम (प्रथ् - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना) धर्माणि धर्म (धृ -) आसन् थे (अस्)। ते वे ह ही नाकम् नाक अर्थात् अक रहित (न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क - नाश होना, नक्ष-नक्क-नख् - जाना, नज् - लज्जा होना) महिमानः महत्त्व से युक्त (मह्) सचन्त प्राप्त होते हैं (सच् - सेवा करना, सन्तुष्ट करना, सींचना,

पूर्मतया समझना, सम्बन्धनी होना), यत्र जहाँ पूर्व पूर्व में साध्याः साध्य (साध् -) देवाः देवगण (दिव्) सन्ति हैं (अस् - होना) ॥ 16 ॥

अनुवाकः- 81

(348) सूक्त 91

1423. तव श्रियो वर्षस्य इव विद्युतः, चित्रा चिकित्त्रे उषसाम् न केतवः ।

यत् ओषधीः अभि सृष्टो वनानि च, परि स्वयम् चिनुषे अन्नम् आस्ये ॥ 5 ॥ 10-91-5

मन्त्रार्थ :- तव = तुम्हारा श्रियो = श्री, शोभाओं को वर्षस्य = वर्ष का इव = समान, की भाँति, के समान विद्युतो = विशेष प्रकाशमान चित्रा = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूपे चिकित्त्रे = जानता है उषसाम् = प्रभात, हिंसा को न = नहीं, समान, उपमार्थक केतवः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता यत् = जिसे, जो ओषधीः = ओषधी अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा सृष्टो = सृजित वनानि = अनेक वन च = और । परि = सभी तरफ स्वयम् = अपने आप चिनुषे = चुनते हो अन्नम् = अन्न को आस्ये = आस्य में ॥ 5 ॥

पदार्थ :- तव = तुम्हारा (सर्वनाम) । श्रियो = श्री, शोभाओं को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना) । वर्षस्य = वर्ष का (वर्ष = बरसना, सींचना, अति पराक्रम करना, हिंसा करना, क्लेश देना, उत्पीड़न करना) । इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय) । विद्युतः = विशेष प्रकाशमान (वि - विशेष, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना, जीवन होना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना) । चित्रा = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना) । चिकित्त्रे = जानता है (चिकित् - जानना) । उषसाम् = प्रभात, हिंसा को (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना) । न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय) । केतवः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना) । यत् = जिसे, जो (सर्वनाम) । ओषधीः = ओषधी (उषध् - चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना) । अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग) । सृष्टो = सृजित (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना) । वनानि = अनेक वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना) । च = और । परि = सभी तरफ (उपसर्ग) । स्वयम् = अपने आप (अव्यय) । चिनुषे = चुनते हो (चि - चयन करना, ढूँढ़ना, बटोरना, एकत्र करना) । अन्नम् = अन्न को (अन्न - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना) । आस्ये = आस्य में (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, बिखेरना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 5 ॥

1424. तम् ओषधीः दधिरे गर्भम् ऋत्विग्यम्, तम् आपो अग्निम् जनयन्त मातरः ।

तम् इत् समानम् वनिनः च वीरुधो, अन्तर्वतीः च सुवते च विश्वहा ॥ 6 ॥ 10-91-6

मन्त्रार्थ :- तम् = उसको, उसे ओषधीः = ओषधी दधिरे = धारण किया गर्भम् = गर्भ को ऋत्विग्यम् = ऋतुओं को तम् = उसको, उसे आपो = आप, व्याप्त, व्यापक अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को जनयन्त = उत्पन्न किया मातरः = माता तम् = उसको, उसे इत् = ही समानम् = समान वनिनः = वन च = और वीरुधो = वीरुध, वीरों को धारण करने वाला अन्तर्वतीः = प्राणवान्, भीतर धारण करने वाली, प्राप्तवती, विदुषी च = और सुवते = उत्पन्न करते हैं, ऐश्वर्य करते हैं च = और विश्वहा = सभी का हनन करने वाले ॥ 6 ॥

पदार्थ :- तम् = उसको, उसे (सर्वनाम) । ओषधीः = ओषधी (उषध् - चिकित्सा करना, रोग मुक्त करना) । दधिरे = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) । गर्भम् = गर्भ को (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ

= सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्भ - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। **ऋत्विग्यम्**, = ऋतुओं को (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **आपो** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **जनयन्त** = उत्पन्न किया (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **मातरः** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **इत्** = ही (अव्यय)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **वनिनः** = वन (वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **च** = और (अव्यय)। **वीरुधो** = वीरुध, वीरों को धारण करने वाला (वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग), रुध = बढ़ना, गर्व करना, रुध = चाहना, रोकना, कृपालु होना, दया करना, अनुमोदन देना, सलाह करना, शोक करना, रोना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अन्तर्वतीः** = प्राणवान्, भीतर धारण करने वाली, प्राप्तवती, विदुषी (अन्तः = बीच में, भीतर, अन् - प्राण होना, चेतन होना, जीवन होना, अन्त - बाँधना, हिंसा करना, चलना)। **च** = और (अव्यय)। **सुवते** = उत्पन्न करते हैं, ऐश्वर्य करते हैं (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सू - भोजना, उड़ाना)। **च** = और (अव्यय)। **विश्वहा** = सभी का हनन करने वाले (विश्व = सब, सर्वनाम, हन् - मारना) ॥

1425. वातोपधूतः इषितो वशान् अनु, तृषु यत् अन्ना वेविषत् वितिष्ठसे ।

आ ते यतन्ते रथ्यो यथा पृथक्, शर्धासि अग्नेः अजराणि धक्षतः ॥ 7 ॥ 10-91-7

मन्त्रार्थ :- वातोपधूतः = वायु के समान = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला **इषितो** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि युक्त **वशान्** = इच्छाओं को **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **तृषु** = क्षिप्र, शीघ्र **यत्** = जिसे, जो **अन्ना** = अन्न **वेविषत्** = व्याप्त हुआ **वितिष्ठसे** = प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **यतन्ते** = यत्न करते हैं **रथ्यो** = रथ्य **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार **पृथक्** = अलग **शर्धासि** = अनेक विजय, शर्द्ध, बल **अग्नेः** = अग्नि का **अजराणि** = जरा-हीन का **धक्षतः** = नष्ट करने वाले ॥ 7 ॥

पदार्थ :- वातोपधूतः = वायु के समान = कम्पन करने वाला, कंपाने वाला, हिलाने वाला (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना, उप - समीप (उपसर्ग), धू - कम्पन करना, नोचना, कम्पित करना, काँपना, कम्पाना, कम्पित होना, हिलाना, क्षोभित करना)। **इषितो** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि युक्त (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **वशान्** = इच्छाओं को (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **तृषु** = क्षिप्र, शीघ्र (अव्यय)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अन्ना** = अन्न (अन - जीवन होना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, अद् = खाना)। **वेविषत्** = व्याप्त हुआ (वि - विशेष, विष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **वितिष्ठसे** = प्रतिष्ठित है, स्थित है, ठहरा है, खड़ा है (वि - विशेष, तिष्ठ = ठहरना, खड़ा होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **यतन्ते** = यत्न करते हैं (यत - यत्न करना, उद्योग करना, निश्चय करना, ठहराना)। **रथ्यो** = रथ्य (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। **पृथक्** = अलग (अव्यय)। **शर्धासि** = अनेक विजय, शर्द्ध, बल (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **अग्नेः** = अग्नि का (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अजराणि** = जरा-हीन का (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। **धक्षतः** = नष्ट करने वाले (धक् - दह - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना, दग्ध करना) ॥ 7 ॥

1426. मेधाकारम् विदथस्य प्रसाधनम्, अग्निम् होतारम् परिभूतरम् मतिम्।

तम् इत् अर्भे हविष्या समानम् इत्, तम् महे वृणते न अन्यम् त्वत् ॥ 8 ॥ 10-91-8

मन्त्रार्थ :- मेधाकारम् = मेधाकार को विदथस्य = विद्वान् का प्रसाधनम् = प्रसाधन को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को होतारम् = हवन करने वाले को परिभूतरम् = परिभूत को मतिम् = मति को तम् = उसको, उसे अर्भस्य = अर्भ, गति, विद्या का हविषः = हविष का, दान व आदान-प्रदान का समानम् = समान इत् = ही तम् = उसको, उसे महे = बड़े, महिमावान्, महान् वृणते = वरण करता है न = नहीं, समान, उपमार्थक अन्यम् = अन्य, कोई और, इतर त्वत् = तुमसे ॥ 8 ॥

पदार्थ :- मेधाकारम् = मेधाकार को (मेधा - शीघ्र समझना, मेध - समझना, जानना, सङ्गति करना, मेल करना, हिंसा करना, कृ - करना)। विदथस्य = विद्वान् का (विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना)। प्रसाधनम् = प्रसाधन को (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। होतारम् = हवन करने वाले को (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-हवे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना)। परिभूतरम् = परिभूत को (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, = भूत को, हो गये को (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। मतिम् = मति को (मन - जानना, समझना, मान्य करना, स्वीकार करना, विचार करना, मानना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। अर्भस्य = अर्भ, गति, विद्या का (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। हविषः = हविष का, दान व आदान-प्रदान का (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। समानम् = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। इत् = ही (अव्यय)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। महे = बड़े, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। वृणते = वरण करता है (वृ = वरण करना, वृण - परित्याग करना, आनन्द करना, उत्साह करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। अन्यम् = अन्य, कोई और, इतर (सर्वनाम)। त्वत् = तुमसे (सर्वनाम) ॥ 8 ॥

अनुवाक:- 82

(349) सूक्त 103

1427. आशुः शिशानो वृषभो न भीमो, घनाघनः क्षोभणः चर्षणीनाम्।

सङ्क्रन्दनो अनिमिष एकवीरः, शतम् सेना अजयत् साकम् इन्द्रः ॥ 1 ॥ 10-103-1

मन्त्रार्थ - आशुः = तीव्र गति युक्त, व्यापक शिशानो = शिशान वृषभो = सम्यक् रूप से, भली भाँति न = नहीं, समान, उपमार्थक भीमो = भयंकर घनाघनः = अतिशय घना, उच्च ध्वनि, अतिशय हुँकार क्षोभणः = क्षोभ करने वाला, कम्पन करने वाला चर्षणीनाम् = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति क्रन्दनो = क्रन्दन करते हैं, क्रन्दनयुक्त अनिमिष = अनिमेष, प्राणवान्, चेतनाभिसिंचक एकवीरः = एक वीर, एक ही वीर, विशिष्ट वीर शतम् = सौ सेना = सेना अजयत् = जय किया साकम् = साथ इन्द्रः = परम ऐश्वर्य दाता ॥ 1 ॥

पदार्थ - आशुः = तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचाना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचाना, अश् = भोजन करना)। शिशानो = शिशान (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। वृषभो = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। भीमो = भयंकर (भी - डरना)। घनाघनः = अतिशय घना, उच्च

ध्वनि, अतिशय हुँकार (घु - शब्द करना, ध्वनि करना, हुँकार करना)। **क्षोभणः** = क्षोभ करने वाला, कम्पन करने वाला (क्षुब्ध - क्षोभ होना, कम्पन करना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **क्रन्दनो** = क्रन्दन करते हैं, क्रन्दनयुक्त (क्रन्द - रोना, पुकारना, दुःख होना)। **अनिमिष** = अनिमेष, प्राणवान्, चेतनाभिसिंचक (अ = नहीं, मिष - सींचना, प्रोक्षण करना, विवाद करना, नि-मिष - आँख बन्द करना)। **एकवीरः** = एक वीर, एक ही वीर, विशिष्ट वीर (एक = एक संख्या, एक - विचार करना)। **शतम्** = सौ (सर्वनाम)। **सेना** = सेना (सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **अजयत्** = जय किया (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जि-जय - जीतना, जय होना)। **साकम्** = साथ (अव्यय)। **इन्द्रः** = परम ऐश्वर्य दाता (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना) ॥ 1 ॥

1428. सङ्क्रन्दनेन अनिमिषेण जिष्णुना, युत्कारेण दुः च्यवनेन धृष्णुना ।

तत् इन्द्रेण जयत तत् सहध्वम्, युधो नर इषुहस्तेन वृष्णा ॥ 2 ॥ 10-103-2

मन्त्रार्थ - **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **क्रन्दनेन** = क्रन्दन करते हैं **अनि-मिषेण** = अनिमिष, पलक झपकाये विना **जिष्णुना** = जिष्णु द्वारा, जीतने वाले, जयाभिलाषी, जय की इच्छा वाले द्वारा **युत्कारेण** = नियोजित करने वाले **दुः** = बुरा, अनुचित **च्यवनेन** = हँसने वाले से, तैरने वाले से, पार कराने वाले से, विद्वान् द्वारा **धृष्णुना** = विजय, गर्व द्वारा **तत्** = वह, उस को **इन्द्रेण** = इन्द्र द्वारा **जयत** = जीतें **तत्** = वह, उस को **सहध्वम्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, हो **युधो** = युद्ध करने वाला **नर** = नर **इषुहस्तेन** = विद्या, ज्ञान, इच्छा को हाथ में रखने वाले **वृष्णा** = पराक्रमी ॥ 2 ॥

पदार्थ - **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **क्रन्दनेन** = क्रन्दन करते हैं (क्रन्द - रोना, पुकारना, दुःख होना)। **अनि-मिषेण** = अनिमिष, पलक झपकाये विना, (अ = नहीं, मिष - सींचना, प्रोक्षण करना, विवाद करना, नि-मिष - आँख बन्द करना)। **जिष्णुना** = जिष्णु द्वारा, जीतने वाले, जयाभिलाषी, जय की इच्छा वाले द्वारा (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **युत्कारेण** = नियोजित करने वाले, (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, कृ - करना)। **दुः** = बुरा, अनुचित (उपसर्ग, अव्यय)। **च्यवनेन** = हँसने वाले से, तैरने वाले से, पार कराने वाले से, विद्वान् द्वारा (च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। **धृष्णुना** = विजय, गर्व द्वारा (धृष् = जीतना, गर्व करना, धृष्टता करना, अभिमान करना, स्वयम् को बड़ा समझना, चतुरता दिखाना, वञ्चना करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **इन्द्रेण** = इन्द्र द्वारा (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जयत** = जीतें (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **तत्** = वह, उस को (सर्वनाम)। **सहध्वम्** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, हो (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **युधो** = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। **नर** = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **इषुहस्तेन** = विद्या, ज्ञान, इच्छा को हाथ में रखने वाले (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **वृष्णा** = पराक्रमी (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना) ॥ 2 ॥

1429. स इषुहस्तैः स निषङ्गिभिः वशी, सम् सृष्टा स युध इन्द्रो गणेन ।

सम् सृष्ट जित् सोमपा बाहु-शर्धी, उग्र-धन्वा प्रति हिताभिः अस्ता ॥ 3 ॥ 10-103-3

मन्त्रार्थ - **स** = वह, उसने **इषु-हस्तैः** = विद्या, ज्ञान, इच्छा को हाथ में रखने वाले **स** = वह, उसने **निषङ्गिभिः** = निषङ्गि **वशी** = वश में **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **सृष्टा** = सृष्ट **स** = वह, उसने **युध** = युद्ध करने वाला **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **गणेन** = गणक, गण, समूह द्वारा **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **सृष्ट** = सृष्ट **जित्** = जीतने वाला **सोमपा** = सोम का पालक, सोमपान करना **बाहु-शर्धी** = बाहु-शर्धी **उग्र-धन्वा** = उग्र-गामी **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में **हिताभिः** = हित, गति, वृद्धि **अस्ता** = प्रकाशमान ॥ 3 ॥

पदार्थ - **स** = वह, उसने। **इषु-हस्तैः** = विद्या, ज्ञान, इच्छा को हाथ में रखने वाले (इष् - इच्छा करना, चाहना,

बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **स** = वह, उसने। **निषङ्गिभिः** = निषङ्गि (निष - प्राप्त करना, ले जाना)। **वशी** = वश में (वश् = इच्छा करना, चाहना, चमकना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **सृष्टा** = सृष्ट (सृ = जाना, सरकना)। **स** = वह, उसने। **युध** = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। **इन्द्रो** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **गणेन** = गणक, गण, समूह द्वारा (गण - गिनना, शब्द करना, नापना, मानना, समझाना, समूह बनाना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **सृष्ट** = सृष्ट (सृ = जाना, सरकना)। **जित्** = जीतने वाला (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **सोमपा** = सोम का पालक, सोमपान करना (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, पा - रक्षा करना, पालन करना)। **बाहु-शर्धी** = बाहु-शर्धी (बाह - प्रयास करना, बह - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना, शृङ्घ - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **उग्र-धन्वा** = उग्र-गामी (उग् - उग्र - उग्र होना, तेजस् होना, धन् - उत्पन्न करना, फलना, धन्व - जाना)। **प्रति** = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। **हिताभिः** = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भोजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **अस्ता** = प्रकाशमान (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 3 ॥

1430. बृहस्पते परि दीया रथेन, रक्षोहा अमित्रान् अपबाधमानः ।

प्रभञ्जन् सेनाः प्रमृणो युधा जयन्, अस्माकम् एधि अविता रथानाम् ॥ 4 ॥ 10-103-4

मन्त्रार्थ - बृहस्पते = विराट, महान्, बृहस्पति **परि** = सभी तरफ **दीया** = दीया **रथेन** = रथ से **रक्षोहा** = राक्षस का हनन करने वाला **अमित्रान्** = अमित्रों को, अस्नेही जनों को **अपबाधमानः** = अपबाधित करने वाला, अपबाधित करता हुआ **प्रभञ्जन्** = प्रभञ्जन करने वाला **सेनाः** = सेना के लिए **प्रमृणो** = प्रमृण **युधा** = युद्ध करने वाला **जयन्** = जय करते हुए **अस्माकम्** = हमारा **एधि** = जाता है **अविता** = रक्षक **रथानाम्** = रथवाला ॥ 4 ॥

पदार्थ - बृहस्पते = विराट, महान्, बृहस्पति (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **परि** = सभी तरफ (उपसर्ग)। **दीया** = दीया (दी = क्षय होना, हरास होना)। **रथेन** = रथ से (रथ् = जाना, ले जाना)। **रक्षोहा** = राक्षस का हनन करने वाला (रक्ष - रक्षण करना, पालन करना, हन - मार डालना, प्राप्त करना, जाना, किसी प्रकार समाप्त करना)। **अमित्रान्** = अमित्रों को, अस्नेही जनों को (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। **अपबाधमानः** = अपबाधित करने वाला, अपबाधित करता हुआ (अप = दूर, नीचे, अपकार, बाध - बाधा होना, रोकना, दुःख देना, दुःख होना)। **प्रभञ्जन्** = प्रभञ्जन करने वाला (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भञ्ज् = प्रकाशित होना, चमकना, बोलना, कहना, हिंसा करना, गति करना, खेलना, नष्ट करना)। **सेनाः** = सेना के लिए (सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **प्रमृणो** = प्रमृण (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, मृण् - हिंसा करना, मारना, छिद्र करना)। **युधा** = युद्ध करने वाला (युध - युद्ध करना, लड़ाई करना)। **जयन्** = जय करते हुए (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **एधि** = जाता है (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, इ - जाना, एध - बढ़ना)। **अविता** = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। **रथानाम्** = रथवाला (रथ - जाना, ले जाना) ॥ 4 ॥

1431. बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः, सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः ।

अभिवीरो अभिसत्वा सहोजा, जैत्रम् इन्द्र रथम् आ तिष्ठ गोवित् ॥ 5 ॥ 10-103-5

मन्त्रार्थ - बलविज्ञायः = बलविज्ञाय **स्थविरः** = स्थविर **प्रवीरः** = प्रवीर **सहस्वान्** = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **वाजी** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त **सहमान** = सहमान **उग्रः** = उग्र **अभिवीरो** = सभी ओर, सर्वथा **वीर अभिसत्वा** = सर्वथा सत्यवान् **सहोजा** = सहनशीलता, सहनशक्ति से उत्पन्न **जैत्रम्** = जैत्र को, जीत, विजय करने वाले को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **रथम्** = रथ को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **तिष्ठ** = उठो, ठहरो, खड़े हो **गोवित्**

= गोविद्, गो को जानने वाले ॥ 5 ॥

पदार्थ - बलविज्ञायः = बलविज्ञाय (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना, वि - विशेष, ज्ञा - जानना)। **स्थविरः** = स्थविर (स्था - स्थित होना, ठहरना)। **प्रवीरः** = प्रवीर (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **सहस्वान्** = सहनशील, सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **वाजी** = विद्या, गति, वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **सहमान** = सहमान (सह = साथ, सहित, सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, मा = नापना, तौलना, समाना, मान = ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा करना, शोध करना, सत्कार करना, मनाना)। **उग्रः** = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **अभिवीरो** = सभी ओर, सर्वथा वीर (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, वीर = वीर होना, वीरता दिखाना, पराक्रम करना)। **अभिसत्त्वा** = सर्वथा सत्यवान् (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, सत् = होना, अस्तित्व होना, सत्य होना)। **सहोजा** = सहनशीलता, सहनशक्ति से उत्पन्न (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **जैत्रम्** = जैत्र को, जीत, विजय करने वाले को (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **तिष्ठ** = उठो, ठहरो, खड़े हो (तिष्ठ = ठहरना, खड़ा होना)। **गोविद्** = गोविद्, गो को जानने वाले (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विद् - जानना) ॥ 5 ॥

1432. गोत्रभिदम् गोविदम् वज्रबाहुम्, जयन्तम् अजम् प्रमृणन्तम् ओजसा ।

इमम् सजाता अनु वीरयध्वम्, इन्द्रम् सखायो अनु सम् रभध्वम् ॥ 6 ॥ 10-103-6

मन्त्रार्थ - गोत्रभिदम् = गोत्र-भेदी को, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को भेदने वाले को, गोत्र तोड़ने वाले को, गोत्र का विभाजन करने वाले को **गोविदम्** = गोविद्, गो को जानने वाले **वज्रबाहुम्** = वज्रबाहु को **जयन्तम्** = जीतने वाले **अजम्** = गतिमान्, वेग से जाने वाला **प्रमृणन्तम्** = प्रमृणन्त को **ओजसा** = ओज द्वारा **इमम्** = इसको **सजाता** = सम्बन्धी **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **वीरयध्वम्** = पराक्रमी, वीर **इन्द्रम्** = इन्द्र को **सखायो** = मित्र **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **रभध्वम्** = आनन्दित हो, उपक्रम करो ॥ 6 ॥

पदार्थ - गोत्रभिदम् = गोत्र-भेदी को, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक को भेदने वाले को, गोत्र तोड़ने वाले को, गोत्र का विभाजन करने वाले को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, भिद् - भेदना, भाग करना, चीरना, तोड़ना)। **गोविदम्** = गोविद्, गो को जानने वाले (गु - अस्पष्ट बोलना, शब्द करना, मनन करना, विद् - जानना)। **वज्रबाहुम्** = वज्रबाहु को (वज् - गति करना, जाना, बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। **जयन्तम्** = जीतने वाले (जि - सब से बढ़ कर होना, जीतना)। **अजम्** = गतिमान्, वेग से जाने वाला (अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **प्रमृणन्तम्** = प्रमृणन्त को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, मृण् - हिंसा करना, मारना, छिद्र करना)। **ओजसा** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **इमम्** = इसको (सर्वनाम)। **सजाता** = सम्बन्धी (स - साथ, सहित, सज्, संज = सम्बन्धी होना, आलिंगन करना, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **वीरयध्वम्** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **सखायो** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **रभध्वम्** = आनन्दित हो, उपक्रम करो (रभ - कार्य आरम्भ करना, आनन्दित होना, प्रसन्न होना) ॥ 6 ॥

1433. अभि गोत्राणि सहसा गाहमानो, अदयो वीरः शतमन्युः इन्द्रः ।

दुः च्यवनः पृतनाषाड् अयुध्यो, अस्माकम् सेना अवतु प्र युत्सु ॥ 7 ॥ 10-103-7

मन्त्रार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **गोत्राणि** = गोत्र, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक **सहसा** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, बलवान् **गाहमानो** = गहन **अदयो** = अदय **वीरः** = पराक्रमी, वीर । **शतमन्युः** = शतमन्यु **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **दुः** = बुरा, अनुचित **च्यवनः** = हँसने वाला, तैरने वाला, पार कराने वाला, विद्वान् **पृतनाषाट्** = व्यापक, बल वाले **अयुध्यो** = युद्ध के अयोग्य **अस्माकम्** = हमारा **सेना** = सेना **अवतु** = रक्षा करो **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **युत्सु** = प्रकाशों में, नियोजित करें, जोड़ें ॥ 7 ॥

पदार्थ - अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **गोत्राणि** = गोत्र, शब्द करने वाले, मननशील, उपदेशक (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। **सहसा** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट, बलवान् (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **गाहमानो** = गहन (गह - गहन होना, घना होना, डराना, हिंसा करना, जाना, जानना, पाना)। **अदयो** = अदय (अद् = खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना)। **वीरः** = पराक्रमी, वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। **शतमन्युः** = शतमन्यु (शत = सौ, मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **इन्द्रः** = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **दुः** = बुरा, अनुचित (उपसर्ग, अव्यय)। **च्यवनः** = हँसने वाला, तैरने वाला, पार कराने वाला, विद्वान् (च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। **पृतनाषाट्** = व्यापक, बल वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **अयुध्यो** = युद्ध के अयोग्य (अ = नहीं, युध् - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **सेना** = सेना (सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **अवतु** = रक्षा करो (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अक् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **युत्सु** = प्रकाशों में, नियोजित करें, जोड़ें (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना) ॥ 7 ॥

1434. इन्द्र आसाम् नेता बृहस्पतिः, दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ।

देव-सेनानाम् अभि-भञ्जतीनाम्, जयन्तीनाम् मरुतो यन्तु अग्रम् ॥ 8 ॥ 10-103-8

मन्त्रार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली। **आसाम्** = आसीन हुए, बैठे। **नेता** = ले जाने वाला। **बृहस्पतिः** = विराट्, महान्, बृहस्पति। **दक्षिणा** = समृद्धि। **यज्ञः** = यजन। **पुर** = पहले। **एतु** = प्राप्त हो, जाये, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करे। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम। **देव-सेनानाम्** = देव-सेना का, देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप सेना का। **अभि-भञ्जतीनाम्** = सभी ओर, प्रभञ्जन करने वालों का। **जयन्तीनाम्** = जय करने वाले लोगों का। **मरुतो** = मरणशील, मरुतों का। **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें। **अग्रम्** = अग्र, आगे ॥ 8 ॥

पदार्थ - इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **आसाम्** = आसीन हुए, बैठे (अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **नेता** = ले जाने वाला (नी = ले जाना)। **बृहस्पतिः** = विराट्, महान्, बृहस्पति (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **दक्षिणा** = समृद्धि (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **यज्ञः** = यजन (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना)। **पुर** = पहले (अव्यय)। **एतु** = प्राप्त हो, जाये, ज्ञान, गति, इच्छा, प्रेरणा करे (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, भलीभाँति, ई = जाना, जानना, पाना, व्यापना, इच्छा करना, प्रेरणा करना)। **सोमः** = ऐश्वर्यवान् सृष्टिकर्ता, सोम (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **देव-सेनानाम्** = देव-सेना का, देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप सेना

का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **अभि-भञ्जतीनाम्** = सभी ओर, प्रभञ्जन करने वालों का (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, भञ्ज् = प्रकाशित होना, चमकना, बोलना, कहना, हिंसा करना, गति करना, खेलना, भञ्जन करना, नष्ट करना)। **जयन्तीनाम्** = जय करने वाले लोगों का (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **मरुतो** = मरणशील, मरुतों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **यन्तु** = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। **अग्रम्** = अग्र, आगे (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना) ॥ 8 ॥

1435. इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञः, आदित्यानाम् मरुताम् शर्ध उग्रम्।

महामनसाम् भुवन च्यवानाम्, घोषो देवानाम् जयताम् उत् अस्थात् ॥ 9 ॥ 10-103-9

मन्त्रार्थ - **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का। **वृष्णो** = बलवान्, पराक्रमी। **वरुणस्य** = वरुण का। **राज्ञः** = प्रकाशित होने वाला। **आदित्यानाम्** = आदित्यों का, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न का। **मरुताम्** = मरुतों का, मरणशीलों का। **शर्धः** = विजय, शर्द्ध, बल। **उग्रम्** = उग्र को। **महामनसाम्** = महान् मन वाले। **भुवन** = हो रहा, वर्तमान। **च्यवानाम्** = हँसने वालों का, तैरने वालों का, पार कराने वालों का, विद्वानों का। **घोषो** = घोष। **देवानाम्** = देवों का। **जयताम्** = जीतें। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। **अस्थात्** = स्थित हैं ॥ 9 ॥

पदार्थ - **इन्द्रस्य** = इन्द्र का, परम ऐश्वर्यशाली का (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना, अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना, पीना)। **वृष्णो** = बलवान्, पराक्रमी (वृष् - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **राज्ञः** = प्रकाशित होने वाला (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **आदित्यानाम्** = आदित्यों का, अदिति से उत्पन्न, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न का (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **मरुताम्** = मरुतों का, मरणशीलों का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **शर्धः** = विजय, शर्द्ध, बल (शृध् - सहन करना, जीतना, शक्ति होना, सामर्थ्य होना)। **उग्रम्** = उग्र को (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। **महामनसाम्** = महान् मन वाले (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **भुवन** = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **च्यवानाम्** = हँसने वालों का, तैरने वालों का, पार कराने वालों का, विद्वानों का (च्यु - हँसना, सहना, सहन करना, तैरना, गिरना, भटकना, जाना, जानना, पाना)। **घोषो** = घोष (घुष् - घोषणा करना, शब्द करना, प्रशंसा करना)। **देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जयताम्** = जीतें (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, टहरना) ॥ 9 ॥

1436. उत् हर्षय मघवन् आयुधानि, उत् सत्त्वनाम् मामकानाम् मनांसि।

उत् वृत्रहन् वाजिनाम् वाजिनानि, उत् स्थानाम् जयताम् यन्तु घोषाः ॥ 10 ॥ 10-103-10

मन्त्रार्थ - **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। **हर्षय** = प्रसन्न करो, प्रसन्न हो। **मघवन्** = धनवान्, ऐश्वर्यवान्। **आयुधानि** = आयु। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। **सत्त्वनाम्** = सत्य का। **मामकानाम्** = मेरे। **मनांसि** = मन। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले। **वाजिनाम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को। **वाजिनानि** = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च। **स्थानाम्** = रथ का। **जयताम्** = जीतें।

यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें। घोषाः = घोष ॥ 10 ॥

पदार्थ - उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। हर्षय = प्रसन्न करो, प्रसन्न हो (हृष् - प्रसन्न होना, सन्तुष्ट होना, हर्षित होना)। मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। आयुधानि = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। सत्वनाम् = सत्य का (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। मामकानाम् = मेरे (सर्वनाम)। मनांसि = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। वृत्रहन् = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। वाजिनाम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। वाजिनानि = वाजयुक्त, विद्यायुक्त, गतियुक्त (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। रथानाम् = रथ का (रथ = जाना, ले जाना)। जयताम् = जीतें (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। यन्तु = पोषण करो, उद्धार करें, रोकें, प्राप्त करें, नियमन-नियन्त्रण करें (यम् = रोकना, स्वाधीन रखना, आवरण करना, पोषण करना, नियमन करना, यन - उद्धार करना, या - जाना, प्राप्त होना, पहुँचना, जानना)। घोषाः = घोष (घुष् - घोषणा करना, शब्द करना, प्रशंसा करना) ॥ 10 ॥

1437. अस्माकम् इन्द्रः सम् ऋतेषु ध्वजेषु, अस्माकम् या इषवः ता जयन्तु।

अस्माकम् वीरा उत्तरे भवन्तु, अस्मान् उ देवा अवता हवेषु ॥ 11 ॥ 10-103-11

मन्त्रार्थ - अस्माकम् = हमारा। इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति। ऋतेषु = ऋत। ध्वजेषु = ध्वजों में, गतिशीलों में। अस्माकम् = हमारा। या = जो। इषवः = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को। ता = वे, वह, वे दोनो। जयन्तु = जीतने वाले। अस्माकम् = हमारा। वीरा = वीर। उत्तरे = उत्तर से, उत्तर दिशा से। भवन्तु = हों, हो जायें। अस्मान् = हमें, हमको। उ = निश्चय ही, भी। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने। अवता = रक्षित, रक्षा करने वाले। हवेषु = दान में, आदान-प्रदान में, तृप्ति में ॥ 11 ॥

पदार्थ - अस्माकम् = हमारा (सर्वनाम)। इन्द्रः = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। ऋतेषु = ऋत (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। ध्वजेषु = ध्वजों में, गतिशीलों में (ध्वज् = जाना, गति करना, जानना, पाना)। अस्माकम् = हमारा (सर्वनाम)। या = जो (सर्वनाम)। इषवः = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। ता = वे, वह, वे दोनो (सर्वनाम)। जयन्तु = जीतने वाले (जि - सब से बढ़ कर होना, जीतना)। अस्माकम् = हमारा (सर्वनाम)। वीरा = वीर (वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना)। उत्तरे = उत्तर से, उत्तर दिशा से (सर्वनाम)। भवन्तु = हों, हो जायें (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अस्मान् = हमें, हमको (सर्वनाम)। उ = निश्चय ही, भी। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। अवता = रक्षित, रक्षा करने वाले (अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। हवेषु = दान में, आदान-प्रदान में, तृप्ति में (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना) ॥ 11 ॥

1438. अमीषाम् चित्तम् प्रति लोभयन्ती, गृहाण अङ्गानि अप्ते परा इहि।

अभि प्रेहि निः दह हत्सु शोकैः, अन्धेन अमित्राः तमसा सचन्ताम् ॥ 12 ॥ 10-103-12

मन्त्रार्थ - अमीषाम् = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक इच्छा को। चित्तम् = चित्त या चेतना, ज्ञान। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में। लोभयन्ती = लोभ करते हुए। गृहाण = गृहस्थ, गृह, घर। अङ्गानि = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला। अप्वे = पालन करने वालों में। परा = परम, परे, पीछे, विपरीत। इहि = आओ, जानों। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा। प्रेहि = अधिक प्रगतिशील निः = बिना, बाहर, निश्चित। दह = जलाओ। हत्सु = हृदयों में शोकैः = शोक या चिन्ता से। अन्धेन = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा। अमित्राः = अमित्र, अस्नेही। तमसा = इच्छा से, दुःख से, अन्धकार से। सचन्ताम् = अभिसिञ्चन करें ॥ 12 ॥

पदार्थ - अमीषाम् = शब्द, गति, सेवा युक्त, अतुल्य, अहिंसक इच्छा को (अम् = गति, शब्द, सेवा करना, रोग होना, अ - नहीं, मा = मापना, नापना, तौलना, मि - फेकना, स्थापना करना, रक्षा करना, मी - हिंसा करना, मारना)। चित्तम् = चित्त या चेतना, ज्ञान (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में, प्रत्येक में (अव्यय)। लोभयन्ती = लोभ करते हुए (लुभ - आशा करना, चाहना, लोभ करना, मतिभ्रंश होना, भ्रान्त होना, दीन होना)। गृहाण = गृहस्थ, गृह, घर (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना)। अङ्गानि = विद्वान्, गतिशील, पाने वाला (अङ्ग = अंग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। अप्वे = पालन करने वालों में (अप् = जाना, जानना, पाना, पालन करना)। परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय)। इहि = आओ, जानों (इ = जाना, जानना, पाना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। प्रेहि = अधिक प्रगतिशील (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इ = जाना, जानना, पाना)। निः = बिना, बाहर, निश्चित (उपसर्ग)। दह = जलाओ (दह - जलाना, नष्ट करना, दुःख देना)। हत्सु = हृदयों में (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। शोकैः = शोक या चिन्ता से (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, दुःख मानना, शोक करना)। अन्धेन = अन्धकार, अन्धस्, अन्न, प्राण-धारण द्वारा (अन् - प्राणवान् होना, जीवन होना, श्वास लेना, अन्ध - अन्धा होना, अन्धकार होना, दिखाई न देना, आँखें मूंदना)। अमित्राः = अमित्र, अस्नेही (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। तमसा = इच्छा से, दुःख से, अन्धकार से (तम - इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना, अन्धकार होना)। सचन्ताम् = अभिसिञ्चन करें (सच् = सिञ्चन करना, सेवा करना) ॥ 12 ॥

1439. प्रेता जयता नर, इन्द्रो वः शर्म यच्छतु।

उग्रा वः सन्तु बाहवो, अनाधृष्या यथा असथ ॥ 13 ॥

10-103-13

मन्त्रार्थ - प्रेता = प्राप्त करे, पूर्ण करे। जयता = जीतें। नर = नर। इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि। यच्छतु = दो, प्रदान करो। उग्रा = उग्र। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। सन्तु = हों। बाहवो = प्रयास करने वाले। अनाधृष्या = अनाधृष्य, निरभिमानी, अजेय। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। असथ = हुए, प्रकाशक, हैं ॥ 13 ॥

पदार्थ - प्रेता = प्राप्त करे, पूर्ण करे (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इ - जाना, जानना, पाना, प्रा - पूर्ण करना, भरना)। जयता = जीतें (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सबसे बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। नर = नर (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। इन्द्रो = इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। शर्म = सुख, सम्मान, समृद्धि (शर्म = सुख होना, श्रीमान् होना, सम्मानित होना)। यच्छतु = दो, प्रदान करो (यच्छ = देना)। उग्रा = उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना)। वः = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। सन्तु = हों (अस् - होना)। बाहवो = प्रयास करने वाले (बाह् - प्रयास करना, बह् - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। अनाधृष्या = अनाधृष्य, निरभिमानी, अजेय (अन् - नहीं, आ - समन्तात्, पूर्णतः, धृष् = जीतना, अधीर होना, घबराना,

धृषा = गर्व करना, स्वयम् को बड़ा समझना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। असथ = हुए, प्रकाशक, हैं (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 13 ॥

(350) सूक्त 105

1440. कदा वसो स्तोत्रम् हर्यत, आ अव श्मशा रुधद्वाः ।

दीर्घम् सुतम् वाताप्याय ॥ 1 ॥ 10-105-1

मन्त्रार्थ - कदा = कब वसो = वसु स्तोत्रम् = स्तोत्र को, स्तुति होने को हर्यत = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण अव = नीचे, दूर, प्राप्त श्मशा = शमन विचार द्वारा अरुधत् = बढ़ा, चाहा, रुका हुआ वाः = गतिशील दीर्घम् = दीर्घ को, विशाल को सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को वाताप्याय = सुखी करने के लिए ॥ 1 ॥

पदार्थ - कदा = कब (सर्वनाम)। वसो = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। स्तोत्रम् = स्तोत्र को, स्तुति होने को (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। हर्यत = हर्यत, प्रकाश करने वाले, गतिशील, इच्छुक, चाहने वाले, हरण करने योग्य (हर्य - चलना, जाना, इच्छा करना, चाहना, प्रकाशित होना, सूखना, ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। अव = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। श्मशा = शमन विचार द्वारा (शम = शमन करना, शान्त करना, प्रसिद्ध करना, स्पष्टता से दिखाना, विचार करना, सहन करना, ठण्डा होना, मन स्वाधीन रखना, स्वस्थ होना, क्षुब्ध नहीं होना)। अरुधत् = बढ़ा, चाहा, रुका हुआ (रुध - बढ़ना, गर्व करना, चाहना, रोकना, कृपालु होना, दया करना, अनुमोदन देना, सलाह करना, शोक करना, रोना)। वाः = गतिशील (वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। दीर्घम् = दीर्घ को, विशाल को (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। सुतम् = ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न हुए को (सु - उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना)। वाताप्याय = सुखी करने के लिए (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 83

(351) सूक्त 115

1441. चित्र इत् शिशोः तरुणस्य वक्षयो, न यो मातरौ अन्वेति धातवे ।

अनूधा यत् अजीजनत् अधा च नु, ववक्ष सद्यो महि दूत्यम् अचरन् ॥ 1 ॥ 10-115-1

मन्त्रार्थ - चित्र = चित्र इत् = ही शिशोः = शिशो तरुणस्य = तरुण का, पार कराने वाले का वक्षयो = वक्ष न = नहीं, समान, उपमार्थक यो = जो मातरौ = माता अन्वेति = अनुगमन करती है धातवे = धारण करने के लिए अनूधा = अनूध यत् = जिसे, जो अजीजनत् = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला अधा = अथ, अब, इसके अनन्तर च = और। नु = ही, भी ववक्षत् = ववक्ष सद्यो = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य महि = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं दूत्यम् = गतिशीलता, विद्वता, परिश्रम अचरन् = आचरण, अचर ॥ 1 ॥

पदार्थ - चित्र = चित्र (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। इत् = ही (अव्यय)। शिशोः = शिशो (शि = तेज करना, तीक्ष्ण करना, कल्याण करना, शिष् - शेष रखना, बचाना, प्रयोजन करना)। तरुणस्य = तरुण का, पार कराने वाले का (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। वक्षयो = वक्ष (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। यो = जो। मातरौ = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। अन्वेति = अनुगमन करती है (अनु = पश्चात्,

पीछे, या - जाना, जानना, पाना)। **धातवे** = धारण करने के लिए (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **अनूधा** = अनूध (अनु = पश्चात्, पीछे, धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **अजीजनत्** = जन्म लिया, उत्पन्न हुआ, गतिमान्, वेग से जाने वाला (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **अधा** = अथ, अब, इसके अनन्तर (अव्यय)। **च** = और। **नु** = ही, भी (निपात, अव्यय)। **ववक्षत्** = ववक्ष (वक्ष = क्रोध करना, बटोरना, ढेर करना। वक्ष = पालन करना, रक्षा करना)। **सद्यो** = शीघ्र, तत्काल, तत्क्षण, ताजा, अभी का, गम्य (सद् - जाना, चलना, शक्तिहीन होना, म्लान होना, सूखना, मुर्झाना, भग्न करना, नष्ट करना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **दूत्यम्** = गतिशीलता, विद्वता, परिश्रम (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। **अचरन्** = आचरण, अचर (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, चर् = जाना, खाना, आचरण करना) ॥ 1 ॥

(352) सूक्त 120

1442. तत् इत् आस भुवनेषु ज्येष्ठम्, यतो जज्ञे उग्रः त्वेष-नृम्णः ।

सद्यो जज्ञानो निरिणाति शत्रून्, अनु यम् विश्वे मदन्ति ऊमाः ॥ 1 ॥ 10-120-1

मन्त्रार्थ - तत् वह इत् ही भुवनेषु भुवनों में ज्येष्ठम् बड़ा आस है, यतो जिससे उग्रः उग्र त्वेष-नृम्णः तेजोमय ज्ञान वाले जज्ञे उत्पन्न हुए। सद्यो तत्काल जज्ञानो उत्पन्न शत्रून् शत्रुओं को निरिणाति शब्द करता है, चूर्ण करता है। यम् जिसको विश्वे सभी ऊमाः विश्वास, वाणी सम्पन्न अनु अनुसार मदन्ति आनन्दित करते हैं ॥ 1 ॥

भावार्थ - सभी भुवनों में, जो कुछ हुआ है, सबमें ज्येष्ठ अर्थात् सबसे बड़ा तो परमात्मा ही है। सब कुछ उससे ही उत्पन्न है तो तेजोमय विद्या वाले भी उससे ही उत्पन्न हैं। उनका विशेष उल्लेख यहाँ विशेष महत्व की दृष्टि से है। तत्काल उत्पन्न शत्रु को वाणी देने से आशय विचारपूर्वक समझाना है, चूर्ण करना, नष्ट करना अन्तिम उपाय है।

विशेष - त्विष् धातु का अर्थ प्रकाश होना है। नृ धातु का अर्थ गति करना, चलना, ले जाना है। नृ धातु गति अर्थ वाली होने से इसका अर्थ ज्ञान, गमन, प्राप्ति होता है। अतः नृम्णः का अर्थ ज्ञान, विद्या भी है। इस प्रकार त्वेष-नृम्णः का अर्थ प्रकाशित विद्या वाला अथवा तेजोमय ज्ञानयुक्त अथवा ज्ञान के तेज से सम्पन्न है। रिण धातु का अर्थ शब्द करना तथा चूर्ण करना या होना है। निरिणाति का अर्थ शब्द करता है अथवा चूर्ण करता है, ऐसा होगा।

पदार्थ - तत् = वह। इत् = ही। **भुवनेषु** = भुवनों में (भू - होना)। **ज्येष्ठम्** = बड़ा (ज्या - वृद्ध होना, बर्धित होना, बढ़ा होना)। **आस** = है (अस् - होना)। **यतो** = जिससे। **उग्रः** = उग्र। **त्वेष-नृम्णः** = तेजोमय ज्ञान वाले (त्विष् - प्रकाश होना, नृ - गति करना, चलना, ले जाना, ज्ञान, गमन, प्राप्ति होना)। **जज्ञे** = उत्पन्न हुए (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **सद्यो** = तत्काल। **जज्ञानो** = उत्पन्न (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, ज्ञा - जानना)। **शत्रून्** = शत्रुओं को निरिणाति शब्द करता है, चूर्ण करता है (रिण - शब्द करना, चूर्ण करना या होना, निः - निश्चित, इ - जाना, इण् - शब्द करना, बोलना)। **यम्** = जिसको। **विश्वे** = सभी। **ऊमाः** = विश्वास, वाणी सम्पन्न (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना)। **अनु** = अनुसार, पीछे। **मदन्ति** = आनन्दित करते हैं (मद् - आनन्द होना, आनन्द करना) ॥ 1 ॥

1443. वावृधानः शवसा भूर्योजा, शत्रुः दासाय भियसम् दधाति ।

अव्यनत् च व्यनत् च सरिन् सम्, ते नवन्त प्रभृता मदेषु ॥ 2 ॥ 10-120-2

मन्त्रार्थ :- वावृधानः = वृद्धि करने वाले शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा भूर्योजा = मिलाने वाले प्रगतिशील, अत्यन्त बलशाली शत्रुः = शत्रु दासाय = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी के लिए भियसम् = भय को, भय के समान दधाति = धारण करता है अव्यनत् = प्राण रहित, असमर्थ, अविद्वान् च = और व्यनत् = प्राणवान्, समर्थ, विद्वान् च = और सरिन् = शुद्ध सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए नवन्त = स्तुति करते हैं प्रभृता = परिपूर्ण मदेषु = मदों में, आनन्दों में ॥ 2 ॥

पदार्थ :- वावृधानः = वृद्धि करने वाले (वृध् = वृद्धि करना, बढ़ना)। शवसा = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा,

गति, ज्ञान द्वारा (शव - जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **भूर्योजा** = मिलाने वाले प्रगतिशील, अत्यन्त बलशाली (भूरि+ओजा, भूः+युजा, भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, योग करना, जोड़ना, मिलना, मिलाना, चित्त स्थिर रखना, बांधना एकत्र करना)। **शत्रुः** = शत्रु (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **दासाय** = दास, दानी, सेवाधर्मी, सेवाभावी के लिए (दास् - काटना, दान करना, सेवा करना)। **भियसम्** = भय को, भय के समान (भी - भय होना, डर होना, डराना)। **दधाति** = धारण करता है (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **अव्यनत्** = प्राण रहित, असमर्थ, अविद्वान् (वि - विशेष, अन्तु, अन् = जीना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, जानना, पाना)। **च** = और (अव्यय)। **व्यनत्** = प्राणवान्, समर्थ, विद्वान् (वि - विशेष, अन्तु, अन् = जीना, प्राणवान् होना, समर्थ होना, जाना, जानना, पाना)। **च** = और (अव्यय)। **सस्नि** = शुद्ध (सस् = शुद्ध करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **नवन्त** = स्तुति करते हैं (नु-नव् - प्रशंसा करना, स्तुति करना, नूतन होना, नया होना)। **प्रभृता** = परिपूर्ण (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, भृ - भरण करना)। **मदेषु** = मदों में, आनन्दों में (मद - आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना) ॥ 2 ॥

1444. त्वे क्रतुम् अपि वृज्जन्ति विश्वे, द्विः यत् एते त्रिः भवन्ति ऊमाः।

स्वादोः स्वादीयः स्वादुना सृजा सम्, अदः सु मधु मधुना अभि योधीः ॥ 3 ॥ 10-120-3

मन्त्रार्थ :- त्वे = तुममें **क्रतुम्** = कर्म को **अपि** = भी, निकट **वृज्जन्ति** = त्यागते हैं **विश्वे** = सभी में **द्विः** = दो **यत्** = जिसे, जो **एते** = यह **त्रिः** = तीन **भवन्ति** = होते हैं **ऊमाः** = विश्वास, वाणी सम्पन्न **स्वादोः** = स्वाद युक्त **स्वादीयः** = स्वादीय, स्वाद युक्त **स्वादुना** = स्वाद द्वारा **सृजा** = सृजन करो **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अदः** = खाने वाला **सु** = उत्तम, श्रेष्ठ **मधु** = मीठा, मधु **मधुना** = मधु द्वारा **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **योधीः** = मिलाता है, युद्ध करो ॥ 3 ॥

पदार्थ :- त्वे = तुममें (सर्वनाम)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना)। **अपि** = भी, निकट (अव्यय)। **वृज्जन्ति** = त्यागते हैं (वृज - छोड़ना, वर्जित करना)। **विश्वे** = सभी में (सर्वनाम)। **द्विः** = दो (संख्या)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **एते** = यह (सर्वनाम)। **त्रिः** = तीन (संख्या)। **भवन्ति** = होते हैं (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **ऊमाः** = विश्वास, वाणी सम्पन्न (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना)। **स्वादोः** = स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **स्वादीयः** = स्वादीय, स्वाद युक्त (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **स्वादुना** = स्वाद द्वारा (स्वद्-स्वाद् - स्वाद लेना, प्रसन्न होना)। **सृजा** = सृजन करो (सृज् - छोड़ना, त्याग करना, विविध रूप से उत्पन्न करना, रचना करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अदः** = खाने वाला (अद् - खाना)। **सु** = उत्तम, श्रेष्ठ (उपसर्ग)। **मधु** = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **मधुना** = मधु द्वारा (मध् = मधुर होना, मीठा होना, मध्य होना, मद- आनन्द होना, हर्षित होना, तृप्त होना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **योधीः** = मिलाता है, युद्ध करो (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, युध - युद्ध करना, लड़ाई करना) ॥ 3 ॥

(353) सूक्त 121

1445. हिरण्यगर्भः सम् अवर्तत अग्रे, भूतस्य जातः पतिः एकः आसीत्।

स दाधार पृथिवीम् द्याम् उत इमाम्, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 01 ॥ 10-121-1

मन्त्रार्थ - **हिरण्यगर्भः** = प्रकाशगर्भ, प्रकाश, शब्द को गर्भ में रखने वाला **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **अवर्तत** = वर्तमान हुए **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले **भूतस्य** = भूत का, उत्पन्न हुए का **जातः** = उत्पन्न **पतिः** = ऐश्वर्यवान् स्वामी **एकः** = एक **आसीत्** = था **स** = वह, उसने। **दाधार** = धारण किया, स्थापित किया **पृथिवीम्** = पृथिवी को **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय **उत** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **इमाम्** = इसको, इस **कस्मै** = किसलिए, किसके

लिए **देवाय** = देव के लिए **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 1 ॥

भावार्थ - सम्पूर्ण सृष्टि का मूल परमात्मा ही है तथा वही धारण एवम् पालनकरने वाला भी है। अतः हम उस परमात्मा के लिए आदान-प्रदान, आह्वान, प्रार्थना, उपासना करते हैं, किसी अन्य के लिए नहीं।

पदार्थ - हिरण्यगर्भः = प्रकाशगर्भ, प्रकाश, शब्द को गर्भ में रखने वाला (हिरण - प्रकाश करना, शब्द करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अवर्तत** = वर्तमान हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृत् = वर्तना, वर्तमान होना)। **अग्रे** = अग्र, आगे, पहले (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **भूतस्य** = भूत का, उत्पन्न हुए का (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **जातः** = उत्पन्न (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **पतिः** = ऐश्वर्यवान् स्वामी (पत् = जाना, नीचे जाना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। **एकः** = एक (संख्या)। **आसीत्** = था (अस् - होना)। **स** = वह, उसने। **दाधार** = धारण किया, स्थापित किया (धृ - धारण करना)। **पृथिवीम्** = पृथिवी को (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **द्याम्** = द्यु को, सबसे बढ़कर, विशिष्ट, प्रकाशमय (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, दै = तिरस्कार करना)। **उत** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **इमाम्** = इसको, इस (सर्वनाम)। **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम)। **देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 1 ॥

1446. य आत्मदा बलदा यस्य विश्व, उपासते प्रशिषम् यस्य देवाः।

यस्य छाया अमृतम् यस्य मृत्युः, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 02 ॥ 10-121-2

मन्त्रार्थ - **य** = जो **आत्मदा** = आत्मदाता **बलदा** = बल देने वाला **यस्य** = जिसका **विश्व** = सभी। **उपासते** = उपासना करते हैं **प्रशिषम्** = प्रशिष को, प्रयोजन को, अनुशासन को **यस्य** = जिसका **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **यस्य** = जिसका **छाया** = छाया **अमृतम्** = न मरने वाला, अमर **यस्य** = जिसका **मृत्युः** = मृत्यु **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए **देवाय** = देव के लिए **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 2 ॥

भावार्थ - परमात्मा सृष्टि का मूल तथा उत्पन्न करने वाला होने के साथ ही उसे स्वत्व प्रदान करने वाला (आत्मदा) एवम् शक्ति प्रदान करने वाला भी है। वही ऋत के रूप में व्यवस्था बनाने वाला है जिसके अनुसार सृष्टि का सञ्चालन हो रहा है। सृष्टि तथा प्रलय का कारण भी वही है। विद्वान् भी इस तथ्य को समझकर उसकी व्यवस्था ऋत का पालन कर लाभ उठाते हैं। वैज्ञानिक ऋत के अनुसार नये आविष्कार कर जीवन को सुविधाजनक बनाते हैं।

पदार्थ - **य** = जो (सर्वनाम)। **आत्मदा** = आत्मदाता (आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना)। **बलदा** = बल देने वाला (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना, दा - देना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **विश्व** = सभी। **उपासते** = उपासना करते हैं (उप - समीप, निकट, अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **प्रशिषम्** = प्रशिष को, प्रयोजन को, अनुशासन को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, शिष् - प्रयोजन करना, शेष रखना, अनुशासन करना, आशीर्वाद देना, हिंसा करना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **देवाः** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **छाया** = छाया (छद् - आच्छादित करना, ढकना, हटाना, छिपाना, बचाना, बलवान् होना या करना, छा-छो - छाया करना, कतरना, काटना)। **अमृतम्** = न मरने वाला,

अमर (अ - नहीं, मृ = मरना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **मृत्युः** = मृत्यु (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम)। **देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 2 ॥

1447. यः प्राणतो निमिषतो महित्वा, एक इत् राजा जगतो बभूव ।

य ईशे अस्य द्विपदः, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 03 ॥ 10-121-3

मन्त्रार्थ - **यः** = जो **प्राणतो** = प्राण से **निमिषतो** = निमिष से, सिञ्चन, प्रोक्षण से **महित्वा** = महित्व द्वारा, महत् होकर **एक** = एक **इत्** = ही **राजा** = राजा **जगतो** = जगत् का, संसार का, गतिशील का **बभूव** = हो गये **य** = जो **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है **अस्य** = इसका **द्विपदः** = द्विपद वाला **चतुष्पदः** = चार पैर वाले **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए **देवाय** = देव के लिए **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 3 ॥

भावार्थ - सम्पूर्ण सृष्टि का एकमात्र स्वामी परमात्मा ही है तथा वह स्वयम् अपनी महिमा से ही सृष्टि का नियन्त्रा बना हुआ है। उसे किसी अन्य की आवश्यकता नहीं है। अतः एकमात्र वह परमात्म ही उपास्य है, अन्य कोई नहीं।

पदार्थ - **यः** = जो (सर्वनाम)। **प्राणतो** = प्राण से (प्र - अधिक, प्रकृष्ट, अन- जीवन होना, चेतन होना, प्रा- पूर्ण करना, तृप्त करना)। **निमिषतो** = निमिष से, सिञ्चन, प्रोक्षण से (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, मिष् = सिञ्चन करना, प्रोक्षण करना, घर्षण करना, स्पर्धा करना, विवाद करना, कलह करना, नि-मिष् - पलक झपकाना, आँख बन्द करना)। **महित्वा** = महित्व द्वारा, महत् होकर (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्त्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **एक** = एक (संख्या)। **इत्** = ही (अव्यय)। **राजा** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **जगतो** = जगत् का, संसार का, गतिशील का (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **बभूव** = हो गये (भू = होना, प्राप्त होना)। **य** = जो (सर्वनाम)। **ईशे** = अधिकार किया, शासन किया, शासन करता है (ईश - अधिकार होना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **द्विपदः** = द्विपद वाला (द्वि = दो, संख्या, पद - स्थानान्तर करना, चलना, जाना)। **चतुष्पदः** = चार पैर वाले (चतुः - चार, संख्या, पद - चलना, स्थानान्तर करना)। **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम)। **देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 3 ॥

1448. यस्य इमे हिमवन्तो महित्वा, यस्य समुद्रम् रसया सह आहुः ।

यस्य इमाः प्रदिशो यस्य बाहू, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 04 ॥ 10-121-4

मन्त्रार्थ - **यस्य** = जिसका **इमे** = यह, इस, ये **हिमवन्तो** = हिमवान्, गतिवान्, गति-वृद्धि युक्त, शीतल **महित्वा** = महित्व द्वारा, महत् होकर **यस्य** = जिसका **समुद्रम्** = समुद्र को **रसया** = रस द्वारा **सह** = साथ, सहित **आहुः** = कहाँ, कहते हैं, आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त **यस्य** = जिसका **इमाः** = ये **प्रदिशो** = प्रदिशा **यस्य** = जिसका **बाहू** = भुजा, हाथ, प्रयास करने वाले युगल **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए **देवाय** = देव के लिए **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 4 ॥

भावार्थ - सम्पूर्ण सृष्टि परमात्मा की विभूतियों तथा अनुदानों से आनन्दित होकर उसी के गुणगान में निमग्न है। यहाँ इसका सुन्दर काव्यात्मक वर्णन किया गया है।

पदार्थ - **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **इमे** = यह, इस, ये (सर्वनाम)। **हिमवन्तो** = हिमवान्, गतिवान्, गति-वृद्धि युक्त, शीतल (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना, हिम - शीत होना)। **महित्वा** = महित्व

द्वारा, महत् होकर (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **समुद्रम्** = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभांति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **रसया** = रस द्वारा (रस - स्वाद लेना, चखना, प्रीति करना, प्यार करना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **आहुः** = कहा, कहते हैं, आदान-प्रदान किया हुआ, आहुत, आह्वान किये, बुलाये हुए, व्याप्त (आ - समन्तात्, सम्यक् रूप से, अह - फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे = शब्द करना, आह्वान करना, बुलाना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **इमाः** = ये (सर्वनाम)। **प्रदिशो** = प्रदिशा (प्र - प्रकृष्ट, दिश् - दिखाना, दिखाना, समझाना, कहना, देना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **बाहू** = भुजा, हाथ, प्रयास करने वाले युगल (बाह - प्रयास करना, बह - बहना, गति करना, बाहर होना, परे हो जाना, हिंसा करना)। **कस्मै** = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम)। **देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 4 ॥

1449. येन द्यौः उग्रा पृथिवी च दृढा, येन स्वः स्तम्भितम् येन नाकः ।

यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 05 ॥

10-121-5

मन्त्रार्थ- येन जिससे, जिसके द्वारा द्यौः प्रकाशयुक्त (सूर्यादि) उग्रा उग्र (तीव्र तेज वाले) च और पृथिवी पृथ्वी दृढा दृढ हैं, येन जिससे स्वः ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले, येन जिसने नाकः नाकम् नाक अर्थात् अक रहित (अकुटिल, अविचल), स्तम्भितम् स्थित हैं। यो जो अन्तरिक्षे अन्तरिक्ष में रजसो रजस् का (लोक समूह का) विमानः विशेष मान करने वाला है, कस्मै किस देवाय देव के लिये हविषा हविष से विधेम विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 5 ॥

भावार्थ - परमात्मा ने ही द्यौः, पृथ्वी, स्वः, नाक आदि की रचना तथा संचालन करने वाला है। सभी लोक-लोकान्तर उसके द्वारा ही व्यवस्थित हैं। अन्तरिक्ष में फैले हुए रजकणों को वह सूर्य तथा ग्रह, चन्द्रमा आदि के रूप में रचनाकर विशेष मानयुक्त करता है। मान का अर्थ आदर-सम्मान के साथ ही विशेष रूप से मापनयोग्य अर्थात् विशाल आकार प्रदान करना भी है।

पदार्थ- येन जिससे, जिसके द्वारा द्यौः प्रकाशयुक्त (द्यु - आगे जाना, समीप जाना, द्युत् - चमकना, प्रकाशित होना) उग्रा उग्र (उग् - उग्र - उग्र होना, तेज होना) च और पृथिवी पृथ्वी (पृथ् -) दृढा दृढ हैं (दृढ-दृढ - धारण करना, सहन करना, दृढ होना), येन जिससे स्वः ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाले (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न होना), येन जिससे नाकः नाक अर्थात् अक रहित (अकुटिल, अविचल) (न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क - नाश होना, नक्ष-नक्क-नख् - जाना, नज् - लज्जा होना), स्तम्भितम् स्थित हैं (स्तम्-स्तम्भि-स्तम्भ - स्थापित करना, स्थित करना)। यो जो अन्तरिक्षे अन्तरिक्ष में (अन्तः - बीच में, अन्त् - बाँधना, हिंसा करना, चलना, इक्ष् - स्वाद लेना, देखना) रजसो रजस् का (रज् -) विमानः विशेष मान करने वाला (वि - विशेष, मा - मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना), कस्मै किसके लिए देवाय देव के लिये (दिव् -) हविषा हविष से (हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) विधेम विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 5 ॥

1450. यम् क्रन्दसी अवसा तस्तभाने, अभि ऐक्षेताम् मनसा रेजमाने ।

यत्र अधि सूर उदितो विभाति, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 06 ॥

10-121-6

मन्त्रार्थ- यम् जिस क्रन्दसी क्रन्दनयुक्त अवसा रक्षण से तस्तभाने स्तम्भित अथवा प्रकाशित करने वाले, अभि ऐक्षेताम् अभिमुख देखने वाले का मनसा मन से (मनन या ज्ञान से) रेजमाने प्रकाशमान, गतिमान। यत्र जहाँ अधि सूर

महासूर्य उदितो उदय हुआ विभाति विशेष प्रकाशित होता है, कस्मै किस देवाय देव के लिये हविषा हविष से विधेम विधान करें, विशेष रूप से धारण करें। ॥ 6 ॥

भावार्थ - रेजमाने पद का भावार्थ विद्वानों ने विविध प्रकार से किया है। रेज धातु का अर्थ प्रकाश करना तथा रि धातु का अर्थ गति करना होता है। अतः इसके दो अर्थ प्रकाशमान तथा गतिमान लेना उचित है। अधिसूर का भाव है सूर्य का भी कारण रूप महासूर्य, जो सूर्यों का भी जन्मदाता है।

पदार्थ- यम् जिसको क्रन्दसी क्रन्दनयुक्त (क्रन्द् - रोना, पुकारना, दुःख होना) अवसा रक्षण से (अव् - रक्षा करना) तस्तभाने स्तभित अथवा प्रकाशित करने वाले (तस् - रक्षा करना, स्थापना करना, स्तम्-स्तम्भि-स्तम्भ - स्थापित करना, स्थित करना)। अभि अभिमुख ऐक्षेताम् देखने वाले का (ईक्ष् - देखना) मनसा मन से (मन् - मनन करना, जानना) रेजमाने प्रकाशमान (रेज् - चमकना, प्रकाशित होना)। यत्र जहाँ अधि (अधिक) सूर सूर्य (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न होना) उदितो उदय हुआ (उत्-अय, उत् - ऊपर, उत्कृष्ट, इ - जाना, जानना, पाना) विभाति विशेष प्रकाशित होता है (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना), कस्मै किसके लिए देवाय देव के लिये (दिव् -) हविषा हविष से (हु - दान करना, आदान-प्रदान करना, ह्वे - आह्वान करना) विधेम विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 6 ॥

1451. आपः ह यत् बृहतीः विश्वम् आयन्, गर्भम् दधानाः जनयन्तीः अग्निम्।

ततो देवानाम् सम् अवर्तत असुः एकः, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 07 ॥ 10-121-7

मन्त्रार्थ :- आपः = आप, व्याप्त, व्यापक। ह = ही, निश्चय। यत् = जिसे, जो। बृहतीः = महान्, बड़ा, विराट, बृहत्। विश्वम् = सबको, विश्व को। आयन् = आते हुए, आने वाले, शब्दकर्ता। गर्भम् = गर्भ को। दधानाः = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। जनयन्तीः = उत्पन्न करने वाले। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को। ततो = उससे। देवानाम् = देवों का। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति। अवर्तत = वर्तमान हुए। असुः = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न करने वाला। एकः = एक। कस्मै = किसलिए, किसके लिए। देवाय = देव के लिए। हविषा = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा। विधेम = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 7 ॥

भावार्थ :- जो विराट गतिशील विश्व को अपने गर्भ में धारण किये हुए है, अग्नि अर्थात् गतिस्वरूप ऊर्जा शक्ति को उत्पन्न करने वाला है, अतः समस्त प्रकृति तथा प्राणियों के एकमात्र प्राण अर्थात् अस्तित्व का आधार है, उस परमात्मा के लिए हम आदान -प्रदान तथा आह्वान करते हैं। विराट सृष्टि का आश्रय परमात्मा ही है। वह ऊर्जा तथा पदार्थ को उत्पन्न करने वाला तथा जीवों के प्राण तथा चेतना का कारण है। ऋत के अनुसार जब परमात्मा की प्राणशक्ति या चेतन आवेषण को धारण करने में सक्षम शरीर की रचना हो जाती है तो जीवन उत्पन्न हो जाता है। जीव का मन -मस्तिष्क परमात्मा से ही चेतन शक्ति प्राप्त करता है तथा उस चेतना का उपयोग कर शरीर की सहायता से कार्य करता है। अतः सभी कर्मों के लिए जीव का मन-मस्तिष्क ही उत्तरदायी होता है। जीव में निहित परमात्मा की चेतन शक्ति ही आत्मा है, अतः वह किसी कर्म के लिए उत्तरदायी नहीं है। जीव में कर्म लिप्त नहीं होता है तथा आत्मा उसके फल का भोक्ता भी नहीं है। न कर्म लिप्यते नरे (नर में कर्म लिप्त नहीं होता है)। यजुर्वेद (40-2) ॥ 7 ॥

पदार्थ- आपः = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। ह = ही, निश्चय (अव्यय)। यत् - यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। बृहतीः = महान्, बड़ा, विराट, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। विश्वम् - विश्वम् = सबको, सब विश्व को। आयन् = आते हुए, आने वाले, शब्दकर्ता (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय्-ई - जाना, आय - शब्द करना, शासन करना)। गर्भम् - गर्भम् = गर्भ को (गृह् - ग्रहण करना, लेना, गृ - सींचना, गीला करना, घर्षण करना, जानना, समझना, खाना, निगलना, शब्द करना, गल्म् - जाना, जानना, पाना, ज्ञान होना, चतुर होना, साहस होना, धैर्य रखना, गृभ्-गर्भ् - अन्दर होना, अन्तःवास करना)। दधानाः = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। जनयन्तीः = उत्पन्न करने वाले (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)।

अग्निम् - अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ततः - ततः** = उससे (सर्वनाम)। **देवानाम् - देवानाम्** = देवों का (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **अवर्तत - अवर्तत** = वर्तमान हुए (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, वृत् = वर्तना, वर्तमान होना)। **असुः** = ऐश्वर्यमय, उत्पन्न करने वाला (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **एकः** = एक (संख्या)। **कस्मै - कस्मै** = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम)। **देवाय - देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविषा - हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **विधेम - विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥

1452. यः चित् आपः महिना पर्यपश्यत् दक्षम् दधानाः जनयन्तीः यज्ञम्। यः देवेषु

अधि देवः एकः आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 08 ॥

10-121-8

मन्त्रार्थ :- यः = जो । चित् = भी, ही । आपः = आप, व्याप्त, व्यापक । महिना = महि द्वारा, महानता द्वारा । पर्यपश्यत् = देखो । दक्षम् = दक्ष का । दधानाः = धारण करने वाले । जनयन्तीः = उत्पन्न करने वाले । यज्ञम् = यजन को । यः = जो । देवेषु = देवों में । अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार । देव = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप । एकः = एक । आसीत् = था । कस्मै = किसलिए, किसके लिए । देवाय = देव के लिए । हविषा = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा । विधेम = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 8 ॥

भावार्थ :- जो व्यापक चेतन महिमा से सभी तरफ देखता है, दक्षता को धारण किये हुए, यज्ञ को उत्पन्न करने वाला है जो देवों में एकमात्र सर्वप्रमुख देव है, उस परमात्मा के लिए हम आदान- प्रदान तथा आह्वान करते हैं। परमात्मा सर्वव्यापी है तो उसकी सर्वत्र दृष्टि भी है। वह सृष्टि यज्ञ को उत्पन्न करने वाला है। तथा सभी देवों में एकमात्र अधिदेव महादेव है। अतः उसी की उपासना करनी चाहिये ॥ 8 ॥

पदार्थ- यः = जो (सर्वनाम)। **चित्** = भी, ही। **आपः** = आप, व्याप्त, व्यापक (आप् - प्राप्त होना, अवलम्ब होना, व्याप्त होना, जाना, जानना, पाना, अप - पालन करना)। **महिना** = महि द्वारा, महानता द्वारा (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **पर्यपश्यत्** = देखो (परि = सभी तरफ, उपसर्ग, = देखो (पश्-दृश् = देखना)।)। **दक्षम्** = दक्ष का (दक्ष - बढ़ना, समृद्ध होना, शीघ्र कार्य करना, चतुर होना, दक्ष होना, चलना, जाना, जानना, पाना, हिंसा करना, मार डालना)। **दधानाः** = धारण करने वाले (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **जनयन्तीः** = उत्पन्न करने वाले (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **यज्ञम् - यज्ञम्** = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। **यः** = जो (सर्वनाम)। **देवेषु - देवेषु** = देवों में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अधि - अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **देव - देव** = देव, विद्वान्, तेजस्वी, दिव्यस्वरूप (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **एकः** = एक (संख्या)। **आसीत्** = था (अस् - होना)। **कस्मै - कस्मै** = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम)। **देवाय - देवाय** = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **हविषा - हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **विधेम - विधेम** = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥ 8 ॥

1453. मा नो हिंसीत् जनिता यः पृथिव्या, यो वा दिवम् सत्यधर्मा जजान।

यः च अपः चन्द्राः बृहती जजान, कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ 09 ॥ 10-121-9

मन्त्रार्थ- मा = नहीं, मुझको । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो । हिंसीत् = हिंसा करे । जनिता = उत्पन्न करने वाला । यः = जो । पृथिव्या = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के । यो = जो । वा = अथवा । दिवम् = दिव को, तेजस्वी को । सत्यधर्मा = सत्य धर्म । जजान = उत्पन्न किया । यः = जो । च = और । अपः = पालक, रक्षक । चन्द्राः = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक । बृहती = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् । जजान = उत्पन्न किया । कस्मै = किसलिए, किसके लिए । देवाय = देव के लिए । हविषा = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा । विधेम = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें ॥ 9 ॥

भावार्थ - परमात्मा सबको उत्पन्न करने वाला है, मारने वाला नहीं है । वह सृष्टिकर्ता है, विनाशकारी नहीं । हम भी हिंसा न करें, किसी को क्षाति न पहुँचायें, तभी तो परमात्म की उपासना सार्थक हो सकती है ।

पदार्थ - मा = नहीं, मुझको (सर्वनाम) । नो = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम) । हिंसीत् = हिंसा करे (हिंस् = हिंसा करना, मारना, सताना) । जनिता = उत्पन्न करने वाला (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) । यः = जो । पृथिव्या = पृथ्वी योग्य, पृथिवी के (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना) । यो = जो । वा = अथवा (अव्यय) । दिवम् = दिव को, तेजस्वी को (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना) । सत्यधर्मा = सत्य धर्म (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना) ॥ जजान = उत्पन्न किया (उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन- उत्पन्न करना) । यः = जो । च = और । अपः = पालक, रक्षक (अप् - पालन करना) । चन्द्राः = चन्द्रमा, आनन्द, प्रकाश दायक (चन्द् - चमकना, आनन्द होना, प्रकाश होना, सन्तोष होना) । बृहती = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना) ॥ जजान = उत्पन्न किया (उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन- उत्पन्न करना) । कस्मै = किसलिए, किसके लिए (सर्वनाम) । देवाय = देव के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) । हविषा = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना) । विधेम = विधान करें, विशेष रूप से धारण करें (वि - विशेष, धा - धारण करना) ॥

1454. प्रजापते न त्वत् एतानि अन्यो, विश्वा रूपाणि परि ता बभूव ।

यत्कामाः ते जुहुमः तत् नो, अस्तु वयम् स्याम, पतयो रयीणाम् । 10 ॥ 10-121-10

मन्त्रार्थ :- प्रजापते - हे प्रजापति, न - नहीं, त्वत् - तुमसे, एतानि - ये, अन्यो - अन्य, विश्वा - सभी, रूपाणि - रूप, परि - परितः, ता - वे, बभूव - हुआ । यत् - जो, कामाः - कामनाएं, ते - वे, जुहुमः - देते हैं, समर्पित करते हैं, तत् - वह, नो - हमारा, अस्तु - हो, वयम् - हम, स्याम - हों, पतयो - पति, ऐश्वर्यवान्, रयीणाम् - गतियों के ॥ 10 ॥

भावार्थ :- प्रजा का अर्थ है विशेष रूप से उत्पन्न हुआ और प्रजापति उस उत्पन्न हुए का स्वामी है । जो कुछ भी सृष्टि में उत्पन्न हुआ है, उस प्रजापति परमात्मा से परे, उससे पृथक् अन्य कुछ भी नहीं है, सब कुछ परमात्मा ही है, उसी का रूप है । अतः हम जो भी कामना करते हैं, वे सभी हमारी कामनायें पूर्ण हो जाती हैं । हम रयि अर्थात् दिव्य वाणी वेद के स्वामी, अधिकारी तथा रक्षक हो, यही प्रार्थना है । जुहुमः का अर्थ है हम दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं । हम परमात्मा के साथ आदान प्रदान करते हैं तो उसके हो जाते हैं । हमें स्वतः सब कुछ प्राप्त हो जाता है । क्योंकि सब कुछ परमात्मा ही है, उससे पृथक् कुछ है ही नहीं ।

पदार्थ :- प्रजापते - हे प्रजापति । न = नहीं । त्वत् = तुमसे । एतानि - ये । अन्यो - अन्य । विश्वा = सभी । रूपाणि = रचना, आकार, रूप । परि = सभी तरफ । ता = वे । बभूव - हुआ । यत् - जो, कामाः - कामनाएं (कम् - कामना करना, इच्छा करना, चाहना) । ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए तुम्हारी । जुहुमः - देते हैं, समर्पित करते हैं । तत् = वह । नः = हमको, हमारे लिए, हमारा । अस्तु = हो । वयम् = हम सब । स्याम = हों । पतयः {पत् = ऐश्वर्य (ऐश्वर्य) होना} । रयीणाम् =

(354) सूक्त 123

1455. नाके सुपर्णम् उप यत् पतन्तम्, हृदा वेनन्तो अभि अचक्षत त्वा ।

हिरण्यपक्षम् वरुणस्य दूतम्, यमस्य योनौ शकुनम् भुरण्युम् ॥ 6 ॥ 10-123-6

मन्त्रार्थ - नाके = अकुटिलता में, नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल में सुपर्णम् = सुपर्ण को उप = समीप यत् = जिसे, जो पतन्तम् = ऐश्वर्य, पराक्रम, गिरने को हृदा = हृदय वेनन्तो = विद्वान्, कान्तिमान् अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा अचक्षत = स्पष्ट कहा, देखा त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा हिरण्यपक्षम् = हिरण्यपक्ष, प्रकाशमान पक्ष को वरुणस्य = वरुण का दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी यमस्य = यम का योनौ = योनि में, मिलाने अलग करने में शकुनम् = सक्षम, समर्थ को भुरण्युम् = धारण - पोषण करने वाले को ॥ 6 ॥

पदार्थ - नाके = अकुटिलता में, नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल में (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क -नाश होना)। सुपर्णम् = सुपर्ण को (सु - सुन्दर, अच्छा, पृ - पूर्ण करना, भरना)। उप = समीप (उपसर्ग)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। पतन्तम् = ऐश्वर्य, पराक्रम, गिरने को (पत् = जाना, उड़ना, गिरना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। हृदा = हृदय (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना)। वेनन्तो = विद्वान्, कान्तिमान् (वेन - मिलाना, अलग करना, रक्षा करना, जाना, समझना, जानना, स्मरण करना, सारासार विचार करना, तारतम्य देखना, वाद्य यन्त्र बजाना, बाजा हाथ में लेना)। अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। अचक्षत = स्पष्ट कहा, देखा (चक्ष् - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। हिरण्यपक्षम् = हिरण्यपक्ष, प्रकाशमान पक्ष को (हिरण - प्रकाश होना, दीप्त होना, शब्द करना, ध्वनि होना, हि = गति करना, रण् = शब्द करना, जाना, पण् = स्तुति करना, व्यवहार करना, पक्ष - पक्ष होना, पक्ष लेना, किसी एक पक्ष को ग्रहण करना, विभाग करना, ग्रहण करना, स्वीकार करना)। वरुणस्य = वरुण का (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। दूतम् = गतिशील, विद्वान्, परिश्रमी, दुःखदायी (दू = जाना, जानना, पाना, सुगन्ध लेना, श्रम करना, जलना, तप्त होना, दुःख होना, दुःख देना)। यमस्य = यम का (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। योनौ = योनि में, मिलाने अलग करने में (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना)। शकुनम् = सक्षम, समर्थ को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। भुरण्युम् = धारण - पोषण करने वाले को (भुरण - पालन करना, धारण करना) ॥ 6 ॥

1456. ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थात्, प्रत्यङ् चित्रा विभ्रत् अस्य आयुधानि ।

वसानो अत्कम् सुरभिम् दृशे कम्, स्वाः ण नाम जनत प्रियाणि ॥ 7 ॥ 10-123-7

मन्त्रार्थ :- ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व गन्धर्वो = गतिशीलता, विद्वता को धारण करने वाला अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार नाके = अकुटिलता में, नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल में अस्थात् = स्थित हैं प्रत्यङ् = प्रत्येक चित्रा = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप विभ्रत् = भरण, धारण करता हुआ अस्य = इसका आयुधानि = आयुध वसानो = वास करते हुए, धारण करता हुआ अत्कम् = सतत गमन वाले को सुरभिम् = सुर को, सुरभि को दृशे = देखने के लिए कम् = किसको स्वाः = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः ण = नहीं, समान, उपमार्थक नाम = नाम वाले जनत = उत्पन्न करता है, प्रकट करता है प्रियाणि = प्रिय ॥ 7 ॥

पदार्थ :- ऊर्ध्वो = उच्च, ऊपर, ऊर्ध्व (सर्वनाम)। गन्धर्वो = गतिशीलता, विद्वता को धारण करने वाला (गम् + धृ, गम् = जाना, जानना, पाना, धृ = धारण करना, गन्ध् = गन्ध होना, शोभित होना, मांगना, जाना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। नाके = अकुटिलता में, नाक, अक रहित, अकुटिल, अविचल

में (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना, न - नहीं, अक् - जाना, कुटिल गति करना, नश्-नक्क -नाश होना)। **अस्थात्** = स्थित हैं (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, स्था- स्थित होना, ठहरना)। **प्रत्यङ्** = प्रत्येक (अव्यय)। **चित्रा** = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **विभ्रत्** = भरण, धारण करता हुआ (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। **अस्य** = इसका (सर्वनाम)। **आयुधानि** = आयुध (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, युध - युद्ध करना, प्रहार करना, काटना, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **वसानो** = वास करते हुए, धारण करता हुआ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **अत्कम्** = सतत गमन वाले को (अत् - जाना, सदैव जाते रहना)। **सुरभिम्** = सुर को, सुरभि को (सुर+भिः, सु+रभ्, सु - उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, रभ - कार्य आरम्भ करना, आनन्दित होना, प्रसन्न होना, सुर = अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना)। **दृशे** = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। **कम्** = किसको (सर्वनाम)। **स्वाः** = उत्पन्न, ऐश्वर्य, सृष्टि या जगत्, स्वः (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। **ण** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **नाम** = नाम वाले (अव्यय)। **जनत** = उत्पन्न करता है, प्रकट करता है (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **प्रियाणि** = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना) ॥ 7 ॥

1457. द्रप्सः समुद्रम् अभि यत् जिगाति, पश्यन् गृध्रस्य चक्षसा विधर्मन् ।

भानुः शुक्रेण शोचिषा चकानः, तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ॥ 8 ॥ 10-123-8

मन्त्रार्थ :- **द्रप्सः** = हर्ष, आनन्द, गर्व **समुद्रम्** = समुद्र को **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **यत्** = जिसे, जो **जिगाति** = जानता है, प्राप्त करता है, स्तुति करता है **पश्यन्** = देखते हुए, देखने वाले **गृध्रस्य** = इच्छा-लोभ का, आशान्वित का **चक्षसा** = दृष्टि, वाणी **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण **भानुः** = प्रकाशमान **शुक्रेण** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से **शोचिषा** = शोचमान द्वारा **चकानः** = तृप्त करते हुए, तृप्त होते हुए **तृतीये** = तृतीय में, तीसरे में **चक्रे** = किया **रजसि** = रजस् में **प्रियाणि** = प्रिय ॥ 8 ॥

पदार्थ :- **द्रप्सः** = हर्ष, आनन्द, गर्व (दृप् = हर्ष होना, गर्व होना)। **समुद्रम्** = समुद्र को (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, सम् - न घबराना, एक समान रहना, उत् - उच्च, ऊपर, उत्कृष्ट, रा - दान करना, देना, उन्द - आर्द्र होना, गीला होना, द्रु - पिघलना, बहना, चलना, जाना, जानना, पाना, अनुसरण करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **जिगाति** = जानता है, प्राप्त करता है, स्तुति करता है (गा-जिगा - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। **पश्यन्** = देखते हुए, देखने वाले (पश्-दृश् = देखना)। **गृध्रस्य** = इच्छा-लोभ का, आशान्वित का (गृध्र-गर्ध - चाहना, आशा करना, लोभ करना)। **चक्षसा** = दृष्टि, वाणी (चक्ष - स्पष्ट बोलना, कहना, देखना)। **विधर्मन्** = विधर्म, विशेष धारण (वि - विशेष, धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **भानुः** = प्रकाशमान (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **शुक्रेण** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी से (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना)। **शोचिषा** = शोचमान द्वारा (शुच् = शुद्ध होना, पवित्र होना, शुद्ध - पवित्र करना, दुःख मानना, शोक करना)। **चकानः** = तृप्त करते हुए, तृप्त होते हुए (चक् = तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, चकमा देना, धोखा करना)। **तृतीये** = तृतीय में, तीसरे में (संख्या, सर्वनाम)। **चक्रे** = किया (कृ - करना)। **रजसि** = रजस् में (रज - रज होना, धूल होना, सूक्ष्म होना, रंग देना, रंगना, लीन होना)। **प्रियाणि** = प्रिय (प्री - प्रीति करना, तृप्त करना, प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, कामना करना) ॥ 8 ॥

(355) सूक्त 126

1458. न तम् अंहो न दुरितम्, देवासो अष्ट मर्त्यम् ।

सजोषसो यम् अर्यमा मित्रो, नयन्ति वरुणो अति द्विषः ॥ 1 ॥ 10-126-1

मन्त्रार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक **तम्** = उसको, उसे **अंहो** = व्यापक, दिनोदिन **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **दुरितम्** = दुरित को, दुःख को **देवासो** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगण **अष्ट** = व्याप्त हो सकता है, प्राप्त हो सकता है **मर्त्यम्** = मरणशील को **सजोषसो** = विचारवान्, सेवाभावी **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी **मित्रो** = मित्र **नयन्ति** = ले जाता है **वरुणो** = वरुण **अति** = बहुत, अत्यधिक **द्विषः** = द्वेष करने वाला ॥ 1 ॥

पदार्थ - न = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **अंहो** = व्यापक, दिनोदिन (अह = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **दुरितम्** = दुरित को, दुःख को (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **देवासो** = हे विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगण (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **अष्ट** = व्याप्त हो सकता है, प्राप्त हो सकता है (अश् = भोजन करना, अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **मर्त्यम्** = मरणशील को (मृ = मरना, देहत्याग करना)। **सजोषसो** = विचारवान्, सेवाभावी (स - साथ, सहित, जुष् = प्रसन्न करना, सन्तुष्ट करना, चाहना, दुलार करना, प्रीति करना, विचार करना, विवेक-विवेचना करना, हिंसा करना, सेवा करना)। **यम्** = जिसे, जिसको, जहाँ (सर्वनाम)। **अर्यमा** = अर्यमा, ज्ञानी (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। **मित्रो** = मित्र (मिद् - स्निग्ध होना, पिघलना, प्रीति करना, अभ्यञ्जन करना, आज्ञना, नरम होना, मृदुल होना)। **नयन्ति** = ले जाता है (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **वरुणो** = वरुण (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **अति** = बहुत, अत्यधिक (उपसर्ग, अव्यय)। **द्विषः** = द्वेष करने वाला (द्विष् = द्वेष करना, विरोध करना, शत्रुता करना) ॥ 1 ॥

अनुवाकः- 84

(356) सूक्त 133

1459. प्रो सु अस्मै पुरो रथम्, इन्द्राय शूषम् अर्चत ।

अभीके चित् उ लोककृत्, सङ्गे समत्सु वृत्रहा ।

अस्माकम् बोधि चोदिता नभन्ताम्, अन्यकेषाम् ज्याकाः अधि धन्वसु ॥ 1 ॥ 10-133-1

मन्त्रार्थ :- प्रो = पूर्ण, तृप्त **सु** = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर **अस्मै** = हमारे लिए **पुरो** = पहले **रथम्** = रथ को **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए **शूषम्** = उत्पन्न करने वाले को **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो **अभीके** = निकट **चित्** = भी, ही **उ** = निश्चय ही, भी **लोककृत्** = लोककृत, लोगों द्वारा किया **सङ्गे** = साथ में चलना, सम्यक् गति **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले **अस्माकम्** = हमारा **बोधि** = जानता है **चोदिता** = प्रेरित करने वाला, प्रेरणा-दाता **नभन्ताम्** = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों **अन्यकेषाम्** = अन्य के, इतर के **ज्याकाः** = विजेता, वर्द्धित **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **धन्वसु** = धन्व ॥ 1 ॥

पदार्थ :- प्रो = पूर्ण, तृप्त (प्रा - पूर्ण करना, भरना, प्रा - तृप्त करना)। **सु** = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। **अस्मै** = हमारे लिए (सर्वनाम)। **पुरो** = पहले (पुरो = पहले, अव्यय)। **रथम्** = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **इन्द्राय** = इन्द्र के लिए (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **शूषम्** = उत्पन्न करने वाले को (शूष - जनना, उत्पन्न करना, प्रसूत होना)। **अर्चत** = पूजा करो, सम्मान करो, सेवा करो (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **अभीके** = निकट (अव्यय)। **चित्** = भी, ही (अव्यय)। **उ** = निश्चय ही, भी (निपात, अव्यय)। **लोककृत्** = लोककृत, लोगों द्वारा किया (लोक = देखना, प्रकाशित होना, बोलना, कृ = करना)। **सङ्गे** = साथ में चलना, सम्यक् गति (सम् - सम्यक्, गम् - जाना, सम्-गम्, सङ्गम् - मिलना,

साथ चलना)। **समत्सु** = सम्यक् सतत गतिशील, समानताओं में (सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग), सम = समान होना, सम विभाग करना, न घबराना, परिणाम होना, अत् - निरन्तर चलना, सतत गमन करना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **अस्माकम्** = हमारा (सर्वनाम)। **बोधि** = जानता है (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। **चोदिता** = प्रेरित करने वाला, प्रेरणा-दाता (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना)। **नभन्ताम्** = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों (नभ् = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। **अन्यकेषाम्** = अन्य के, इतर के (अन्य = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम), केषाम् = किन सब के (सर्वनाम))। **ज्याकाः** = विजेता, वर्द्धित (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, वर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **धन्वसु** = धन्व (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना) ॥

1460. त्वम् सिन्धून् अवासृजो, अधराचो अहन् अहिम्।

अशत्रुः इन्द्र जज्ञिषे, विश्वम् पुष्यसि वार्यम्।

तम् त्वा परि ष्वजामहे नभन्ताम्, अन्यकेषाम् ज्याकाः अधि धन्वसु ॥ 2 ॥ 10-133-2

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम सिन्धून् = समुद्र अवासृजो = अवसर्जन करो अधराचो = अधरगामी, अधोगामी अहन् = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की अहिम् = व्यापक अशत्रुः = शत्रुहीन इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली जज्ञिषे = उत्पन्न होता है विश्वम् = विश्व, सभी, सब को पुष्यसि = पुष्ट करते हो वार्यम् = वार्य, वरणीयों को, वरण को तम् = उसको, उसे त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा परि = परे, सभी ओर, साथ ष्वजामहे = आलिङ्गन करता हूँ, घेरता हूँ नभन्ताम् = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों अन्यकेषाम् = अन्य के, इतर के ज्याकाः = विजेता, वर्द्धित अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार धन्वसु = धन्वों में, प्रगतिशीलों में ॥ 2 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **सिन्धून्** = समुद्र (सिध् - सिद्ध होना, पूर्ण होना, जाना, जानना, पाना, अध्ययन करना, दीक्षा देना, शुभ कार्य करना, सिञ् - बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। **अवासृजो** = अवसर्जन करो (अव+असृजः, अ - भूतकालिक उपसर्ग, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, सृज् - रचना करना, बनाना, उत्पादन करना, त्याग करना)। **अधराचो** = अधरगामी, अधोगामी (अधर् - न्यून करना, जीतना, निम्न गति करना, अच - जाना, चलना, आदर करना, मांगना)। **अहन्** = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **अहिम्** = व्यापक (अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना)। **अशत्रुः** = शत्रुहीन (अ = नहीं, शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जज्ञिषे** = उत्पन्न होता है (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **विश्वम्** = विश्व, सभी, सब को (सर्वनाम)। **पुष्यसि** = पुष्ट करते हो (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। **वार्यम्** = वार्य, वरणीयों को, वरण को (वर - इच्छा करना, चाहना, आशा करना, वृ - वरण करना, प्रिय होना, प्रिय मानना, प्रिय करना, नियोजित करना, आच्छादित करना)। **तम्** = उसको, उसे (सर्वनाम)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **परि** = परे, सभी ओर, साथ (उपसर्ग)। **ष्वजामहे** = आलिङ्गन करता हूँ, घेरता हूँ (स्वज - घेरना, लपेटना, आलिङ्गन करना, गले लगाना)। **नभन्ताम्** = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों (नभ् = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। **अन्यकेषाम्** = अन्य के, इतर के (अन्य = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम), केषाम् = किन सब के (सर्वनाम))। **ज्याकाः** = विजेता, वर्द्धित (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, वर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **धन्वसु** = धन्वों में, प्रगतिशीलों में (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना) ॥

1461. वि षु विश्वा अरातयो, अर्यो नशन्त नो धियः।

अस्ता असि शत्रवे वधम्, यो नः इन्द्र जिघांसति।

या ते रातिः ददिः वसु नभन्ताम्, अन्यकेषाम् ज्याकाः अधि धन्वसु ॥ 3 ॥ 10-133-3

मन्त्रार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम पु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर विश्वा = विश्व, सभी, सब अरातयो = अदानी अर्यो = अर्य को, प्रगतिशील को नशन्त = नष्ट हों लुप्त हों, अदृश्य हों नो = हमको, हमारे लिए, हमारा धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि अस्ता = प्रकाशमान असि = हो शत्रवे = शत्रु के लिए वधम् = वध को यो = जो नः = हमको, हमारे लिए, हमारा इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली जिघांसति = हिंसा करता है या = जो ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए रातिः = अनुदान ददिः = दान करने वाले हो वसु = वसु नभन्ताम् = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों अन्यकेषाम् = अन्य के, इतर के ज्याकाः = विजेता, वर्द्धित अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार धन्वसु = धन्वों में, प्रगतिशीलों में ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। पु = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। विश्वा = विश्व, सभी, सब (सर्वनाम)। अरातयो = अदानी (अ - नहीं, रा = देना, रम् - रमना, रमण करना, रम जाना, रत होना, क्रीडा करना, प्रिय होना, मूल्यवान होना)। अर्यो = अर्य को, प्रगतिशील को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। नशन्त = नष्ट हों लुप्त हों, अदृश्य हों (नश् - नष्ट होना, अदृश्य होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। अस्ता = प्रकाशमान (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। असि = हो (अस् - होना)। शत्रवे = शत्रु के लिए (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। वधम् = वध को (वध्-हन् = मारना)। यो = जो (सर्वनाम)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। जिघांसति = हिंसा करता है (हन्-घ्न-जिघ्न् - हिंसा करना)। या = जो (सर्वनाम)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। रातिः = अनुदान (रा - देना, मिल जाना)। ददिः = दान करने वाले हो (दा, दद्, दत् = दान करना, देना, त्याग करना, सौंपना, लौटाना, रखना)। वसु = वसु (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। नभन्ताम् = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों (नभ् = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। अन्यकेषाम् = अन्य के, इतर के (अन्य = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम), केषाम् = किन सब के (सर्वनाम))। ज्याकाः = विजेता, वर्द्धित (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, वर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। धन्वसु = धन्वों में, प्रगतिशीलों में (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना) ॥ 3 ॥

1462. वयम् इन्द्र त्वायवो, सखित्वम् आ रभामहे ।

ऋतस्य नः पथा नयाति विश्वानि दुरिता

नभन्ताम् अन्य केषाम् ज्याका अधि धन्वसु ॥ 6 ॥ 10-133-6

मन्त्रार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली त्वायवो = तुम्हे प्राप्त करते हैं सखित्वम् = मित्र भाव को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम रभामहे = आनन्दित हो, उपक्रम करो ऋतस्य = ऋत का नः = हमको, हमारे लिए, हमारा पथा = पथ नयाति = ले जाता है विश्वानि = सभी दुरिता = बुराई, दुःख नभन्ताम् = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों अन्य = कोई और, इतर, अन्य केषाम् = केश ज्याका = विजेता, वर्द्धित अधि = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार धन्वसु = धन्वों में, प्रगतिशीलों में । 8 ॥

पदार्थ - वयम् = हम, हम सब, हम लोग (सर्वनाम)। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। त्वायवो = तुम्हे प्राप्त करते हैं (त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा, अय - चलना, जाना, ध्वनि करना। तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, आर डालना, पूर्ण करना। यु = मिलाना, अलग करना, यव = समाप्त करना, उपसंहार करना)। सखित्वम् = मित्र भाव को (सख् = मित्र होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। रभामहे = आनन्दित हो, उपक्रम करो। (रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना)। ऋतस्य = ऋत का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना)। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। पथा = पथ (पथ, पन्थ - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित

करना, घूमना, फेंकना, त्यागना)। **नयाति** = ले जाता है (नी - नय - जाना, हिलना, पहुँचना, संरक्षण करना)। **विश्वानि** = सभी (सर्वनाम)। **दुरिता** = बुराई, दुःख (दुः = बुरा, अनुचित, कठिन, दु-दुर् = जाना, दूर जाना, दुःख होना, दुःख भोगना, तप्त करना, जलना, जलाना)। **नभन्ताम्** = मध्य में स्थित हों, नष्ट हों (नभ् = मध्य में स्थित होना, केन्द्र होना, नष्ट होना, हिंसा करना)। **अन्य** = कोई और, इतर, अन्य (सर्वनाम)। **केषाम्** = केश (किश्-केश्-किस - गति करना, बाल उगना, व्याप्त होना)। **ज्याका** = विजेता, वर्द्धित (ज्या - वृद्ध होना, बड़ा होना, वर्द्धित होना, जि - जय होना, जीतना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **धन्वसु** = धन्वों में, प्रगतिशीलों में (धन्व - जाना, स्थानान्तर करना) ॥ 6 ॥

(357) सूक्त 134

1463. उभे यत् इन्द्र रोदसी, आ पप्राथ उषा इव।

महान्तम् त्वा महीनाम्, सम्राजम् चर्षणीनाम्।

देवी जनित्री अजीजनत्, भद्रा जनित्री अजीजनत् ॥ 1 ॥ 10-134-1

मन्त्रार्थ - उभे = दोनों, पूर्णता **यत्** = जिसे, जो **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **पप्राथ** = व्याप्त किया **उषा** = प्रभात, हिंसा **इव** = समान, की भाँति, के समान **महान्तम्** = महान् को **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **महीनाम्** = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का **सम्राजम्** = सम्यक् प्रकाशमान **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का **देवी** = हे देवी **जनित्री** = उत्पादक **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ **भद्रा** = कल्याणकारी **जनित्री** = उत्पादक **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ ॥ 1 ॥

पदार्थ :- उभे = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **पप्राथ** = व्याप्त किया (पृथ - फेंकना, उड़ाना, प्रेरणा करना, भेजना, व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रथ - प्रसिद्ध होना, फैलना, फैलाना)। **उषा** = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। **इव** = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। **महान्तम्** = महान् को (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **महीनाम्** = पूजनीयों का, महिमावान्, महान् का (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सम्राजम्** = सम्यक् प्रकाशमान (सम् - सम्यक्, भलीभाँति, राज - चमकना, शोभित होना)। **चर्षणीनाम्** = आनन्द, चेतना, विचार युक्तों का (चृष्-चर्ष - आनन्द होना, चेतन होना, विचार करना)। **देवी** = हे देवी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **जनित्री** = उत्पादक (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। **भद्रा** = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **जनित्री** = उत्पादक (जन-उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना) ॥ 1 ॥

1464. अव स्म दुर्हणायतो, मर्तस्य तनुहि स्थिरम्।

अधस्पदम् तम् ईम् कृधि, यो अस्मान् आ दिदेशति।

देवी जनित्री अजीजनत्, भद्रा जनित्री अजीजनत् ॥ 2 ॥ 10-134-2

मन्त्रार्थ :- अव = नीचे, दूर, प्राप्त **स्म** = है **दुर्हणायतो** = दुःख का हरण करने वाले **मर्तस्य** = मरणशील का **तनुहि** = विस्तार करो **स्थिरम्** = स्थिर को **अधस्पदम्** = अधस्पद को, निम्न पद को **तम्** = उसको, उसे **ईम्** = समान, इस

प्रकार कृधि = करो यो = जो अस्मान् = हमें, हमको आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम दिदेशति = दिशा देता हूँ देवी = हे देवी जनित्री = उत्पादक अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ भद्रा = कल्याणकारी जनित्री = उत्पादक अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ ॥ 2 ॥

पदार्थ :- अव = नीचे, दूर, प्राप्त (अव्यय)। स्म = है (अस् - होना)। दुर्हणायतो = दुःख का हरण करने वाले (दु = जाना, दुःख होना, तप्त करना, ह = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। मर्त्तस्य = मरणशील का (मृ = मरना, देहत्याग करना)। तनुहि = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। स्थिरम् = स्थिर को (स्था - ठहरना, स्थिर होना)। अधस्पदम् = अधस्पद को, निम्न पद को (अधः = नीचे, अव्यय। अधः - अधर् - न्यून करना, जीतना, निम्न गति करना, अ - नहीं, धृ - धारण करना)। तम् = उसको, उसे (सर्वनाम)। ईम् = समान, इस प्रकार (अव्यय)। कृधि = करो (कृ = करना)। यो = जो (सर्वनाम)। अस्मान् = हमें, हमको (सर्वनाम)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। दिदेशति = दिशा देता हूँ (दिश - दिखाना, समझाना, आज्ञा करना, कहना, बोलना, देना, पारितोषिक देना, अतिरचना करना)। देवी = हे देवी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। जनित्री = उत्पादक (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। भद्रा = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। जनित्री = उत्पादक (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना) ॥

1465. दीर्घम् हि अङ्कुशम्, यथा शक्तिम् विभर्षि मन्तुमः ।

पूर्वेण मघवन् पदा, अजो वयाम् यथा यमो ।

देवी जनित्री अजीजनत्, भद्रा जनित्री अजीजनत् ॥ 6 ॥ 10-134-6

मन्त्रार्थ :- दीर्घम् = दीर्घ को, विशाल को हि = ही, निश्चय अङ्कुशम् = अङ्कुश को यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार शक्तिम् = शक्ति, सक्षमता, सामर्थ्य को विभर्षि = भरण, धारण किया मन्तुमः = हे विद्वान् पूर्वेण = पूर्व, पूर्ण द्वारा मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् पदा = पद, पद द्वारा अजो = अज, अजन्मा वयाम् = वय या रचना युक्त को यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार यमो = यम देवी = हे देवी जनित्री = उत्पादक अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ भद्रा = कल्याणकारी जनित्री = उत्पादक अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ ॥ 6 ॥

पदार्थ :- दीर्घम् = दीर्घ को, विशाल को (दृह - बढ़ना, वृद्धिगत होना)। हि = ही, निश्चय (अव्यय)। अङ्कुशम् = अङ्कुश को (अङ्क = गिनना, जाना, चिह्न लगाना, परिचय करना, गोद में लेना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। शक्तिम् = शक्ति, सक्षमता, सामर्थ्य को (शक् - सक्षम होना, कर सकना, सहना, सहन करना)। विभर्षि = भरण, धारण किया (भृ- भरना, भरण करना, धारण करना)। मन्तुमः = हे विद्वान् (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। पूर्वेण = पूर्व, पूर्ण द्वारा (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। मघवन् = धनवान्, ऐश्वर्यवान् (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना)। पदा = पद, पद द्वारा (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। अजो = अज, अजन्मा (अ - नहीं, जन् = उत्पन्न करना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना)। वयाम् = वय या रचना युक्त को (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार (अव्यय)। यमो = यम (यम - आवरण करना, अपने अधीन रखना, पोषण करना, नियमन करना, प्रतिबन्ध करना, रोकना, अवरोध करना, नाश करना, अन्त करना)। देवी = हे देवी (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। जनित्री = उत्पादक (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। अजीजनत् = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना,

दौड़ाना, फेंकना)। **भद्रा** = कल्याणकारी (भदि-भन्द = सुख होना, शुभ कर्म करना, कल्याण होना)। **जनित्री** = उत्पादक (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अजीजनत्** = गतिमान्, उत्पन्न करता हुआ (जन - जन्म होना, जन्म देना, उत्पन्न होना, अज - जाना, हांकना, दौड़ाना, फेंकना) ॥ 6 ॥

1466. नकि देवा मिनीमसि, नकिः आ योपयामसि ।

मन्त्रश्रुत्यम् चरामसि ।

पक्षेभिः अपिकक्षेभिः अत्र अभि सम् रभामहे ॥ 7 ॥

10-134-7

मन्त्रार्थ - नकि = नष्ट, विनाशक देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने **मिनीमसि** = गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त करते हो **नकि** = नष्ट, विनाशक **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **योपयामसि** = घबरा जाते हो **मन्त्रश्रुत्यम्** = मन्त्र, विचार सुनने वाले को **चरामसि** = विचरण करते हो **पक्षेभिः** = पक्षों द्वारा **अपिकक्षेभिः** = निकट कक्ष द्वारा **अत्र** = यहाँ **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **रभामहे** = आनन्दित हो, उपक्रम करो ॥

पदार्थ - नकि = नष्ट, विनाशक (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **देवा** = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **मिनीमसि** = प्रक्षेपण करें, स्थापन करे, रक्षा करे (मि - प्रक्षेपण करना, स्थापन करना, रक्षा करना, फेंकना, फैलाना)। **नकि** = नष्ट, विनाशक (नक् - नक्क् = नष्ट होना, नष्ट करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **योपयामसि** = घबरा जाते हो (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, बांधना, बन्धन करना, गूँथना, बन्धन होना, संयोग-वियोग करना, युप - चित्त वैक्लव्य होना, घबरा जाना)। **मन्त्रश्रुत्यम्** = मन्त्र, विचार सुनने वाले को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, मन्त्र = मन्त्रणा करना, विचार करना, गुप्त भाषण करना, श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **चरामसि** = विचरण करते हैं (चर - जाना, खाना, आचरण करना)। **पक्षेभिः** = पक्षों द्वारा (पक्ष - पक्ष होना, पक्ष लेना, किसी एक पक्ष को ग्रहण करना, विभाग करना, ग्रहण करना, स्वीकार करना)। **अपिकक्षेभिः** = निकट कक्ष द्वारा (अपि = निकट, कक्ष - धारण करना, घर्षण करना)। **अत्र** = यहाँ (अव्यय)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **रभामहे** = आनन्दित हो, उपक्रम करो। (रभ - आनन्दित होना, प्रसन्न होना)। ॥ 7 ॥

(358) सूक्त 140

1467. अग्ने तव श्रवो वयो महि, भ्राजन्ते अर्चयो विभावसो ।

बृहद्भानो शवसा वाजम् उक्थ्याम्, दधासि दाशुषे कवे ॥ 1 ॥

10-140-1

मन्त्रार्थ - अग्ने = हे अग्नि तव = तुम्हारा **श्रवो** = श्रुति **वयो** = वय या रचना द्वारा **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं **भ्राजन्ते** = प्रकाशित होते हैं **अर्चयो** = अर्चना करने वाले **विभावसो** = विशेष प्रकाशित होता है **बृहद्भानो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् प्रकाश **शवसा** = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा **वाजम्** = विद्या को, गति को **उक्थ्याम्** = कथनीय को **दधासि** = धारण करते हो **दाशुषे** = दानी के लिए **कवे** = कवि ॥ 1 ॥

पदार्थ - अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **तव** = तुम्हारा (सर्वनाम)। **श्रवो** = श्रुति (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना)। **वयो** = वय या रचना द्वारा (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **भ्राजन्ते** = प्रकाशित होते हैं (भ्राज् = चमकना, प्रकाशित होना)। **अर्चयो** = अर्चना करने वाले (अर्च - पूजा करना, मान करना, सेवा करना)। **विभावसो** = विशेष प्रकाशित होता है (वि - विशेष, भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **बृहद्भानो** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् प्रकाश (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, भा - प्रकाश करना, चमकना)। **शवसा** = समीप जाने के लिए, शवस् द्वारा, गति, ज्ञान द्वारा (शव

- जाना, समीप जाना, आना, चलना-फिरना, बदले में देना, विकार होना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **उक्थ्याम्** = कथनीय को (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **दधासि** = धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **दाशुषे** = दानी के लिए (दश् - देना)। **कवे** = कवि (कु, कव् = शब्द करना, कविता करना, वर्णन करना, चित्र खींचना) ॥ 1 ॥

1468. पावकवर्चाः शुक्रवर्चा, अनूनवर्चा उत् इयर्षि भानुना ।

पुत्रो मातरा विचरन् उप अवसि, पृणक्षि रोदसी उभे ॥ 2 ॥ 10-140-2

मन्त्रार्थ - पावकवर्चाः = पवित्रकारक, पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला **शुक्रवर्चाः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी, प्रकाश **अनून-वर्चाः** = अनूनवर्चस् वाला **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च **इयर्षि** = जाते हो **भानुना** = भानु द्वारा, प्रकाशमान द्वारा **पुत्रो** = पुत्र **मातरा** = माता **विचरन्** = विचरण करते हुए **उप** = समीप **अवसि** = रक्षा करते हो **पृणक्षि** = पूर्ण करो **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रूलाने वाले **उभे** = दोनों, पूर्णता ॥ 2 ॥

पदार्थ - पावकवर्चाः = पवित्रकारक, पावक, पवित्रकर्ता, पवित्र करने वाला (पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना, वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **शुक्रवर्चाः** = शुक्र, विद्वान्, शुद्ध, पवित्र, पावन, पवित्रकर्ता, शीघ्रकारी, प्रकाश (शुक्-शुच्-शुध - शुद्धि करना, शुद्ध होना, पवित्र होना, जाना, वर्च - प्रकाशित होना, चमकना)। **अनून-वर्चाः** = अनूनवर्चस् वाला (अनु = पश्चात्, पीछे, वर्च - चमकना, प्रकाश करना)। **उत्** = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च (उपसर्ग)। **इयर्षि** = जाते हो (इ = जाना, जानना पाना)। **भानुना** = भानु द्वारा, प्रकाशमान द्वारा (भा - चमकना, प्रकाशित होना)। **पुत्रो** = पुत्र (पु - रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **मातरा** = माता (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना, शब्द करना, मान करना, तोलना, तुलना करना, मापना, समानता दर्शाना)। **विचरन्** = विचरण करते हुए (वि = विशेष, विना, विलोम, चर् = चलना, जाना, विचरण करना, संशय होना, विचार करना, संशय रहित होना)। **उप** = समीप (उपसर्ग)। **अवसि** = रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना, सन् - दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना, वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। **पृणक्षि** = पूर्ण करो (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रूलाने वाले (रुद् - रोना, रूलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना) ॥ 2 ॥

1469. ऊर्जो नपात् जातवेदः सुशस्तिभिः, मन्दस्व धीतिभिः हितः ।

त्वे इषः सम् दधुः भूरिवर्षसः, चित्रोतयो वामजाताः ॥ 3 ॥

10-140-3

मन्त्रार्थ - ऊर्जो = ऊर्जा **नपात्** = प्राप्त किया **जातवेदः** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले **सुशस्तिभिः** = प्रशंसायुक्त **मन्दस्व** = आनन्दित होते हो, विनाश करते हो **धीतिभिः** = धारणा द्वारा **हितः** = हित, गति, वृद्धि **त्वे** = तुममें **इषः** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति **दधुः** = धारण किया **भूरिवर्षसः** = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का **चित्रोतयो** = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप **वामजाताः** = वाम से उत्पन्न को, सुगन्ध, विद्या, गति-ज्ञान, प्राप्ति से उत्पन्न को ॥ 3 ॥

पदार्थ - ऊर्जो = ऊर्जा (ऊर्ज् = प्राण होना, चेतन होना, बल होना, ऊर्जा होना, शक्तिमान होना, पराक्रमी होना, चलना, जाना)। **नपात्** = प्राप्त किया (न - नहीं, पा - पालन करना, रक्षा करना, नप - पहंचना, जानना, पाना, शब्द करना, झंकार करना, चमकना)। **जातवेदः** = जन्म से विद्वान्, वेद को जानने वाले, वेद को उत्पन्न करने वाले (जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जा-ज्ञा - जानना, विद् - जानना)। **सुशस्तिभिः** = प्रशंसायुक्त (सु - अच्छा, सुन्दर, शंस = स्तुति,

प्रशंसा करने वाला)। **मन्दस्व** = आनन्दित होते हो, विनाश करते हो (मन्द - आनन्द करना, स्तुति करना, तुष्ट करना, प्रकाशित होना, चमकना, प्रकाश करना, उन्मत्त होना, विनाश करना)। **धीतिभिः** = धारणा द्वारा (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। **हितः** = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। **त्वे** = तुममें (सर्वनाम)। **इषः** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **सम्** = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। **दधुः** = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **भूरिवर्षसः** = भूरि का, गति का, उत्पत्ति का (भूरि = बहु, बहुत, अव्यय-सर्वनाम, वृ = वरण करना, वृष-वर्ष = रूप बनाना)। **चित्रोतयो** = चेतन करने वाले, चित्र स्वरूप अर्थात् चित्र की भाँति प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट, आश्चर्यस्वरूप (चित्र = चित्र बनाना, आश्चर्य करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, स्मरण करना)। **वामजाताः** = वाम से उत्पन्न को, सुगन्ध, विद्या, गति-ज्ञान, प्राप्ति से उत्पन्न को (वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, वम् - वमन होना, जन् - उत्पन्न होना, जन्म लेना, उत्पन्न करना) ॥ 3 ॥

1470. इरज्यन् अग्ने प्रथयस्व जन्तुभिः, अस्मे रायो अमर्त्य ।

स दर्शतस्य वपुषो वि राजसि, पृणक्षि सानसिम् क्रतुम् ॥ 4 ॥

10-140-4

मन्त्रार्थ - **इरज्यन्** = ईर्ष्या करते हुए **अग्ने** = हे अग्नि **प्रथयस्व** = विस्तार करो **जन्तुभिः** = जन्तुओं द्वारा **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए **राय** = गति, विद्या, वाणी **अमर्त्य** = अमर्त्य **स** = वह, उसने **दर्शतस्य** = दर्शत का, दर्शनीय का, देखने वाले का, दिखाने वाले का **वपुषो** = वपुष के लिए **वि** = विशेष, विना, विलोम **राजसि** = प्रकाशमान् **पृणक्षि** = पृणक्षि **सानसिम्** = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को **क्रतुम्** = कर्म को ॥ 4 ॥

पदार्थ - **इरज्यन्** = ईर्ष्या करते हुए (इरज् - ईर्ष्या करना, मत्सर करना)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **प्रथयस्व** = विस्तार करो (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **जन्तुभिः** = जन्तुओं द्वारा (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **अस्मे** = हमारा, हममें, हमारे लिए (सर्वनाम)। **राय** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, दान करना, रय् = गति करना, जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **अमर्त्य** = अमर्त्य (अ = नहीं, मृ = मरना, देहत्याग करना)। **स** = वह, उसने। **दर्शतस्य** = दर्शत का, दर्शनीय का, देखने वाले का, दिखाने वाले का (दृश् - देखना)। **वपुषो** = वपुष के लिए (वप - बीज बोना, उत्पन्न करना, बुनना, अन्नादि काटना, बाल काटना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **राजसि** = प्रकाशमान् (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **पृणक्षि** = पृणक्षि (पृ - पालन करना, पोषण करना, पूर्ण करना, भरना)। **सानसिम्** = सेवाभावी, दानी, सेवनीय को (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **क्रतुम्** = कर्म को (कृ = करना) ॥ 4 ॥

1471. इष्कर्तारम् अध्वरस्य प्रचेतसम्, क्षयन्तम् राधसो महः ।

रातिम् वामस्य सुभगाम् महीम्, इषम् दधासि सानसिम् रयिम् ॥ 5 ॥

10-140-5

मन्त्रार्थ - **इष्कर्तारम्** = विद्या, ज्ञान, इच्छा करने वाला **अध्वरस्य** = अहिंसक, अवर्णनीय का **प्रचेतसम्** = प्रकृष्ट विचार वाले को **क्षयन्तम्** = निवास करने वाले को **राधसो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का **महः** = महान् **रातिम्** = अनुदान को **वामस्य** = वाम का **सुभगाम्** = सुन्दर मख, गति, ज्ञान **महीम्** = पूजनीय को, मही को, महिमावान्, महान् **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को **दधासि** = धारण करते हो **सानसिम्** = सानसिम् **रयिम्** = विद्या, ज्ञान ॥ 5 ॥

पदार्थ - **इष्कर्तारम्** = विद्या, ज्ञान, इच्छा करने वाला (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **अध्वरस्य** = अहिंसक, अवर्णनीय का (अ - नहीं, ध्व-ध्वर् = हिंसा करना, टेढ़ा करना, झुकाना, मार डालना, वर्णन करना)। **प्रचेतसम्** = प्रकृष्ट विचार वाले को (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, चेत् = विचार करना, चिन्तन करना)। **क्षयन्तम्** = निवास करने वाले को (क्षि - जाना, चलना, जानना, पाना निवास करना,

रहना, बसना, क्षय होना)। **राधसो** = शुद्ध, निर्दोष निर्णय, वृद्धि करने वालों का, दान, वृद्धि का (रध - शुद्ध होना, निर्दोष होना, पूर्ण करना, समाप्त करना, परिपक्व होना, अपकार करना, हिंसा करना, राध - बढ़ना, निर्णय करना, सिद्ध होना)। **महः** = महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना)। **रातिम्** = अनुदान को (रा - देना, मिल जाना)। **वामस्य** = वाम का (वा = गति करना, पवन की भाँति बहना, जाना, जानना, पाना, गन्ध होना, प्रवाहित होना, प्रवाहित करना)। **सुभगाम्** = सुन्दर मख, गति, ज्ञान (सु - सुन्दर, अच्छा, भग्-भज् = सेवा करना, सेवन करना, सेवित होना, दान करना, पकाना, सिद्ध करना, अन्नादि तैयार करना, अलग करना, भजना, भजन करना, उपभोग करना, विषय वासना का अनुभव करना)। **महीम्** = पूजनीय को, मही को, महिमावान्, महान् (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **इषम्** = इच्छा, गति, ज्ञान, प्राप्ति, दृष्टि को (इष् - इच्छा करना, चाहना, बीनना, छानना, चबाना, चुनना, जाना, जानना, पाना, निरन्तर देखना, निरन्तर करना)। **दधासि** = धारण करते हो (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **सानसिम्** = सानसिम् (सन् - सेवा करना, योग्य होना, मिश्रण करना, अलग करना, दान करना, पूजा करना, सत्कर करना, सिम = सम्पूर्ण (सर्वनाम))। **रयिम्** = विद्या, ज्ञान (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना, री-रै - शब्द करना) ॥ 5 ॥

1472. ऋतावानम् महिषम् विश्वदर्शतम्, अग्निम् सुम्नाय दधिरे पुरो जनाः ।

श्रुत्कर्णम् सप्रथस्तमम् त्वा गिरा, दैव्यम् मानुषा युगा ॥ 6 ॥ 10-140-6

मन्त्रार्थ - ऋतावानम् = ऋत के रक्षकों का महिषम् = पूजित, सम्मानित विश्वदर्शतम् = देखा, दर्शनीय को, देखने वाले को अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को सुम्नाय = ऐश्वर्य के लिए दधिरे = धारण किया पुरो = पुरो जनाः = जन, लोग, उत्पन्न हुए, उत्पन्न करने वाले श्रुत्कर्णम् = सुनने वाले कर्ण सप्रथस्तमम् = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा गिरा = स्तुतियाँ, वाणियाँ दैव्यम् = दिव्य मानुषा = मानुष, मनन करने वाले युगा = युग, युक्त कीजिये ॥ 6 ॥

पदार्थ - ऋतावानम् = ऋत के रक्षकों का (ऋ - जाना, जानना, पाना, ऋत - चलना, सञ्चालित करना, अव - रक्षा करना)। महिषम् = पूजित, सम्मानित (मह - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। विश्वदर्शतम् = देखा, दर्शनीय को, देखने वाले को (विश्व = सब, दृश् - देखना)। अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। सुम्नाय = ऐश्वर्य के लिए (सु = उत्पन्न कराना, ऐश्वर्य होना)। दधिरे = धारण किया (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। पुरो = पुरो (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना)। जनाः = जन, लोग, उत्पन्न हुए, उत्पन्न करने वाले (जन - उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। श्रुत्कर्णम् = सुनने वाले कर्ण (श्रु - सुनना, श्रवण करना, जाना, कर्ण - सुनना, दूर ले जाना, बेधना, छेदना)। सप्रथस्तमम् = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना, प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। त्वा = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। गिरा = स्तुतियाँ, वाणियाँ (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना)। दैव्यम् = दिव्य (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। मानुषा = मानुष, मनन करने वाले (मन् - मनन करना, समझना, जानना, मान - पूजा करना, सम्मान करना, श्रेष्ठ होना, शोध करना)। युगा = युग, युक्त कीजिये (यु - मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना, युज - जुड़ना, मिलाप करना, मन एकाग्र करना, एकत्र करना, युगि - छोड़ देना, त्याग करना) ॥ 6 ॥

(359) सूक्त 141

1473. सोमम् राजानम् अवसे, अग्निम् गीर्भिः हवामहे ।

आदित्यम् विष्णुम् सूर्यम्, ब्रह्माणम् च बृहस्पतिम् ॥ 3 ॥ 10-141-3

मन्त्रार्थ - सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को राजानम् = राजा अवसे = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो अग्निम् =

अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं **आदित्यम्** = आदित्य को, अदिति से उत्पन्न को, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न को **विष्णुम्** = विष्णु को **सूर्यम्** = सूर्य को **ब्रह्माणम्** = ब्रह्ममय को **च** = और। **बृहस्पतिम्** = बृहस्पति को ॥ 3 ॥

पदार्थ - सोमम् = सोम को, ऐश्वर्यवान् को (सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना)। **राजानम्** = राजा (राज् - दीप्त होना, चमकना, प्रकाशित होना, शोभित होना, जीतना)। **अवसे** = रक्षा के लिए, रक्षा करते हो (अ - नहीं, अव = नीचे, दूर, प्राप्त, अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **अग्निम्** = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **गीर्भिः** = वाणियों, बोध, सिञ्चन द्वारा (गृ-गृण् = शब्द करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना, जानना, समझना, निगलना, बहिर्गमन करना, गृ - शब्द करना, गा-गै = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना)। **हवामहे** = आह्वान करते हैं, आदान- प्रदान करते हैं (हू = दान करना, देना, आदान- प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **आदित्यम्** = आदित्य को, अदिति से उत्पन्न को, अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न को (अ - नहीं, अद् - खाना, नष्ट करना, दी = क्षय होना, नष्ट होना)। **विष्णुम्** = विष्णु को (विष्ण- विष् - विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। **सूर्यम्** = सूर्य को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **ब्रह्माणम्** = ब्रह्ममय को (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **च** = और। **बृहस्पतिम्** = बृहस्पति को (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना, पत् - ऐश्वर्य होना, रक्षा करना, नीचे जाना, गिरना, पा - पालन करना, रक्षा करना) ॥ 3 ॥

1474. त्वम् नो अग्ने अग्निभिः, ब्रह्म यज्ञम् च वर्धय।

त्वम् नो देवतातये, रायो दानाय चोदय ॥ 6 ॥

10-141-6

मन्त्रार्थ :- त्वम् = तुम नो = हमको, हमारे लिए, हमारा **अग्ने** = हे अग्नि **अग्निभिः** = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **यज्ञम्** = यजन को **च** = और **वर्धय** = बढ़ाओ **त्वम्** = तुम **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **देवतातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए **रायो** = गति, विद्या, वाणी **दानाय** = दान के लिए **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो ॥ 6 ॥

पदार्थ :- त्वम् = तुम (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **अग्ने** = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **अग्निभिः** = अग्नियों, ऊर्ध्वगामियों, तेजस्वियों, विद्वानों द्वारा (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। **ब्रह्म** = ब्रह्म, महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह् - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **यज्ञम्** = यजन को (यज्ञ = देवपूजा, संगतिकरण, दान करना)। **च** = और (अव्यय)। **वर्धय** = बढ़ाओ (वृध् = बढ़ना, चमकना, बोलना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **देवतातये** = देवत्व के लिए, दिव्यता के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना)। **रायो** = गति, विद्या, वाणी (रा-देना, दान करना, लेना, ग्रहण करना, रय् = गति करना, जाना, जानना, पाना, रै = शब्द करना)। **दानाय** = दान के लिए (दा - देना, सौंपना, लौटाना, रखना)। **चोदय** = प्रेरित करो, प्रेरणा दो (चुद - प्रेरणा करना, पूछना, प्रश्न करना, प्रार्थना करना) ॥ 6 ॥

(360) सूक्त 147

1475. श्रत् ते दधामि प्रथमाय मन्यवे, अहन् यत् वृत्रम् नर्यम् विवेः अपः।

उभे यत्वा भवतो रोदसी अनु, रेजते शुष्मात् पृथिवी चित् अद्रिवः ॥ 1 ॥ **10-147-1**

मन्त्रार्थ - श्रत् = सत्य ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **दधामि** = धारण करता हूँ **प्रथमाय** = प्रथम के लिए, विस्तार

करने वाले के लिए **मन्यवे** = मन्यु के लिए, मानते हैं **अहन्** = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की **यत्** = जिसे, जो **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को **नर्यम्** = नर्य को **विवेः** = प्रगति करता है, बुनता है **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक **उभे** = दोनों, पूर्णता **यत्वा** = जिसे, जो, यद्यपि **भवतो** = हों। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल **रेजते** = प्रकाशित करने के लिए **शुष्मात्** = शुष्म, सुखाने वाला **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार **चित्** = भी, ही। **अद्रिवः** = हे अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला ॥ 1 ॥

पदार्थ - **श्रुत्** = सत्य (उपसर्ग)। **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। **दधामि** = धारण करता हूँ (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। **प्रथमाय** = प्रथम के लिए, विस्तार करने वाले के लिए (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। **मन्यवे** = मन्यु के लिए, मानते हैं (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **अहन्** = व्याप्त, व्यापक, हनन किया, मार दिया, हिंसा की (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अह् = फैलना, विस्तृत होना, व्यापना, अर्पण करना, समर्पण करना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **यत्** = जिसे, जो (सर्वनाम)। **वृत्रम्** = वृत्र, हिंसा को (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **नर्यम्** = नर्य को (नृ - नम्र होना, विनय होना, कोमल होना, मृदु होना, चलना, ले जाना)। **विवेः** = प्रगति करता है, बुनता है (वी = जाना, व्याप्त होना, कान्ति होना, प्रकाश होना, चमकना, वे - बुनना, बटना)। **अपः** = पालन करने वाला, पालक, रक्षक (अप = पालन करना, जाना, जानना, पाना)। **उभे** = दोनों, पूर्णता (उभय - दोनो, उभ् - पूर्ण करना, भरना)। **यत्वा** = जिसे, जो, यद्यपि (अव्यय)। **भवतो** = हों (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। **रोदसी** = प्रकाश देने वाले, वाणी, गति की सामर्थ्य से युक्त, करुणाशील, रोने वाले, रुलाने वाले (रुद् - रोना, रुलाना, करुण होना, रु - शब्द करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। **अनु** = पश्चात्, पीछे, अनुकूल (उपसर्ग)। **रेजते** = प्रकाशित करने के लिए (रेज् - चमकना, प्रकाशित होना)। **शुष्मात्** = शुष्म, सुखाने वाला (शुष् - सुखाना)। **पृथिवी** = पृथ्वी, विस्तृत भूमि, विस्तार (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **चित्** = भी, ही। **अद्रिवः** = हे अद्रि, अहिंसक, भोजन, खाने, ग्रहण करने वाला (दृ - हिंसा करना, आदर करना, सत्कार करना, अद् - खाना, ग्रहण करना, आत्मसात् करना, नष्ट करना) ॥ 1 ॥

(361) सूक्त 148

1476. सुष्वाणास इन्द्र स्तुमसि त्वा, ससवांस च तुविनृम्ण वाजम्।

आ नो भर सुवितम् यस्य चाकन्, त्मना तना सनुयाम त्वोताः ॥ 1 ॥ 10-148-1

मन्त्रार्थ - **सुष्वाणास** = उत्पन्नकर्ता **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान **स्तुमसि** = स्तुति करते हैं **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा **ससवांसः** = ऐश्वर्यवान्, सृष्टिकर्ता, शुद्ध **च** = और **तुविनृम्ण** = हे बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले **वाजम्** = विद्या को, गति को **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो **सुवितम्** = सुवित को **यस्य** = जिसका **चाकन्** = तृप्त किया **त्मना** = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा **तना** = विस्तार करो **सनुयाम** = सेवक **त्वोताः** = गति, वृद्धि, प्रगतिशील वाले को ॥ 1 ॥

पदार्थ - **सुष्वाणास** = उत्पन्नकर्ता (सुष-सूष-सुस - उत्पन्न करना, पैदा करना, जनना, गर्भ धारण करना)। **इन्द्र** = हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, परम ऐश्वर्यमान (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **स्तुमसि** = स्तुति करते हैं (स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना, पूजा करना, अर्चा करना, सेवा करना, भजन करना)। **त्वा** = तुमको, तुम्हें, तुम्हारा (सर्वनाम)। **ससवांसः** = ऐश्वर्यवान्, सृष्टिकर्ता, शुद्ध (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सस् = शुद्ध करना)। **च** = और। **तुविनृम्ण** = हे बहुत ले जाने वाले, बहुत धन वाले (तु - जाना, बढ़ना, दुःख देना, हिंसा करना, पूर्ण करना, नृ - ले जाना, विनम्र होना)। **वाजम्** = विद्या को, गति को (वाज् = गति करना, जाना,

जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **सुवितम्** = सुवित को (सु - उत्तम, अच्छा, वि - विशेष, विद - शरीर की सुध रखना, समझना, जानना, समझा के कहना, रहना, वास करना, वसना, स्थिर रहना, विद्यमान होना, विचार करना)। **यस्य** = जिसका (सर्वनाम)। **चाकन्** = तृप्त किया (चक् = तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, चकमा देना, धोखा करना)। **त्मना** = आत्मा द्वारा, गति, वृद्धि, हिंसा, इच्छा द्वारा (तु - गति-वृद्धि, हिंसा करना, तम् - इच्छा करना, आत् - होना, चिरन्तन होना, नित्य होना, चेतन होना, अत् - सतत गमन करना, निरन्तर चलना, सतत चलना, जानना, पाना, वैदिक भाषा में अ या आ का लोप हो सकता है)। **तना** = विस्तार करो (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। **सनुयाम** = सेवक (सनु - देना, दान करना, सेवा करना, पूजा करना, सत्कार करना)। **त्वोताः** = गति, वृद्धि, प्रगतिशील वाले को (तु - गति, वृद्धि, हिंसा करना)। ॥ 1 ॥

अनुवाक:- 85

(362) सूक्त 152

1477. वि रक्षो वि मृधो जहि, वि वृत्रस्य हनू रुज ।

वि मन्युम् इन्द्र वृत्रहन्, अमित्रस्य अभिदासतः ॥ 3 ॥

10-152-3

मन्त्रार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम **रक्षो** = रक्षा करो **वि** = विशेष, विना, विलोम **मृधो** = हिंसक, आद्र **जहि** = हनन करो, नष्ट करो **वि** = विशेष, विना, विलोम **वृत्रस्य** = प्रकाश, वाणी के **हनू** = हनन करने वाले **रुज** = हिंसा करो, रुग्ण करो **वि** = विशेष, विना, विलोम **मन्युम्** = मन्यु को, गर्व को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले **अमित्रस्य** = अमित्र, अस्नेही का **अभिदासतः** = सर्वथा दान करने वाले ॥ 3 ॥

पदार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **रक्षो** = रक्षा करो (रक्ष - रक्षण करना, बचाना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **वृत्रस्य** = प्रकाश, वाणी के (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना)। **हनू** = हनन करने वाले (हन् - मारना)। **रुज** = हिंसा करो, रुग्ण करो (रुज् - हिंसा करना, रोग होना, कष्ट होना, टूटना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मन्युम्** = मन्यु को, गर्व को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **वृत्रहन्** = हिंसा का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **अमित्रस्य** = अमित्र, अस्नेही का (अ = नहीं, मिद् = प्रीति करना, स्नेह करना)। **अभिदासतः** = सर्वथा दान करने वाले (अभि = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा, दास् - देना, दान करना) ॥ 3 ॥

1478. वि न इन्द्र मृधो जहि, नीचा यच्छ पृतन्यतः ।

यो अस्मान् अभिदासति, अधरम् गमया तमः ॥ 4 ॥

10-152-4

मन्त्रार्थ :- इन्द्र - हे इन्द्र, परम ऐश्वर्यशाली, नः - हमारा, मृधो - हिंसक को, वि - विशेष, जहि = नष्ट करो, नीचा - नीचा, यच्छ - दो, पृतन्यतः = व्यापक, बलात् निकालने वाले। यो - जो, अस्मान् - हमको, अभिदासति - काटता है, देता है, दास बनाता है, अधरम् - नीचे, गमया - ले जाओ, तमः - तमस् को ॥ 4 ॥

पदार्थ :- वि = विशेष, विना, विलोम। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा। इन्द्र = परम ऐश्वर्यशाली। मृधः = हिंसक

को (मृध् - मार डालना या दुःख देना, आर्द्र करना, गीला करना, गीला होना)। **जहि** = हनन करो, नष्ट करो (जह - हिंसा करना, चलना, फैलना, जहा - परित्याग करना, छोड़ना)॥ **नीचा** - नीचा, दास, सेवक (नीचा, नीच - दासत्व करना)। **यच्छ** = दो (यच्छ = देना)। **पृतन्यतः** = व्यापक, बलात् निकालने वाले (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना, प्रीति करना, प्रेम करना)। **यः** = जो। **अस्मान्** = हमको। **अभिदासति** - काटता है, देता है, दास बनाता है (अभि = सभी ओर, दास् - दान करना, देना, सौंपना, दासता करना, काटना)। **अधरम्** = नीचे को। गमय - ले जाओ (गम् = जाना)। **तमः** = तमस् को ॥ 4 ॥

(363) सूक्त 153

1479. ईङ्खयन्तीः अपस्युव, इन्द्रम् जातम् उपासते।

भेजानासः सुवीर्यम् ॥ 1 ॥ 10-153-1

मन्त्रार्थ - **ईङ्खयन्तीः** = जाती हुई **अपस्युव** = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता **इन्द्रम्** = इन्द्र को **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को **उपासते** = उपासना करते हैं **भेजानासः** = भय को जानने वाले, उत्पन्न करने वाले **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को ॥ 1 ॥

पदार्थ - **ईङ्खयन्तीः** = जाती हुई (ईङ्ख = जाना)। **अपस्युव** = पाल्य, पालनीय, पालनकर्ता (अप = पालन करना)। **इन्द्रम्** = इन्द्र को (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **जातम्** = उत्पन्न हुआ, जात को, उत्पन्न हुए को (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **उपासते** = उपासना करते हैं (उप - समीप, निकट, अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना)। **भेजानासः** = भय को जानने वाले, उत्पन्न करने वाले (भी - डरना, घबराना, झा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **सुवीर्यम्** = उत्तम वीर को (सु - अच्छा, सुन्दर, वीर - शूरवीर होना, पराक्रमी होना, पराक्रम करना) ॥ 1 ॥

1480. त्वम् इन्द्र बलात् अधि, सहसो जात ओजसः।

त्वम् वृषन् वृषा इत असि ॥ 2 ॥

10-153-2

मन्त्रार्थ - **त्वम्** = तुम **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **बलात्** = बल **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए **जात** = उत्पन्न हुआ **ओजसः** = ओज द्वारा **त्वम्** = तुम **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी **वृषा** = पराक्रमी **इत** = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया **असि** = हो ॥ 2 ॥

पदार्थ - **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **बलात्** = बल (बल् - बल होना, जाना, स्पष्ट करना, प्राण होना, चेतन होना, जीना, जीते रहना, रक्षा करना, धान्य सञ्चय करना, द्रव्य को रोकना)। **अधि** = अधिगत, अधिकृत, अधिक, उच्च, ऊपर, पूर्णतः, अधिकार (उपसर्ग)। **सहसो** = सहः के लिए, सक्षम के लिए, समर्थ के लिए, तृप्त के लिए, सन्तुष्ट के लिए (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। **जात** = उत्पन्न हुआ (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **ओजसः** = ओज द्वारा (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। **त्वम्** = तुम (सर्वनाम)। **वृषन्** = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **वृषा** = पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना, वृष - बरसना, सींचना, प्रोक्षण करना, मार डालना या पीड़ा करना, दुःख देना, पीड़ित करना)। **इत** = पाये, गति, ज्ञान, प्रकाश प्राप्त किया (इ - जाना, जानना, पाना, इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। **असि** = हो (अस् - होना) ॥ 2 ॥

(364) सूक्त 156

1481. अग्निम् हिन्वन्तु नो धियः, सप्तिम् आशुम् इव आजिषु।

मन्त्रार्थ :- अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को हिन्वन्तु = संतृप्त करें नो = हमको, हमारे लिए, हमारा धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि सप्तिम् = सात, पूर्ण, संलग्न आशुम् = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक इव = समान, की भाँति, के समान आजिषु = विजयों में तेन = उससे, उसके द्वारा जेष्म = सेवा करे, सिञ्चन करें, जीतें धनम्-धनम् = सभी धनों को ॥ 1 ॥

पदार्थ :- अग्निम् = अग्नि को, ऊर्ध्वगामी, तेजस्वी, विद्वान् को (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। हिन्वन्तु = संतृप्त करें (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। धियः = धारणा शक्ति, बुद्धि (धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना, धि = धारण करना, युक्त होना)। सप्तिम् = सात, पूर्ण, संलग्न (सप - पूर्ण होना, पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। आशुम् = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। इव = समान, की भाँति, के समान (अव्यय)। आजिषु = विजयों में (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, अज् - जाना, स्थापन करना, दौड़ाना, फेकना)। तेन = उससे, उसके द्वारा (सर्वनाम)। जेष्म = सेवा करे, सिञ्चन करें, जीतें (जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना, जिष् - सेवा करना, सिञ्चन करना, घर्षण करना)। धनम्-धनम् = सभी धनों को (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना) ॥ 1 ॥

1482. यया गा आकरामहे, सेनया अग्ने तव ऊत्या ।

ताम् नो हिन्व मघत्तये ॥ 2 ॥

10-156-2

मन्त्रार्थ :- यया = जिससे गा = गान, गायक, गाय आकरामहे = प्राप्त करते हैं सेनया = सेना द्वारा अग्ने = हे अग्नि तव = तुम्हारा ऊत्या = वाणी द्वारा ताम् = उसको नो = हमको, हमारे लिए, हमारा हिन्व = संतृप्त मघत्तये = धन, ऐश्वर्य के लिए ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यया = जिससे (सर्वनाम)। गा = गान, गायक, गाय (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गम् - जाना, जानना, पाना)। आकरामहे = प्राप्त करते हैं (आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग), कृ - करना)। सेनया = सेना द्वारा (सि-सिन् = बांधना, गूँथना, फन्दे से पकड़ना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। तव = तुम्हारा (सर्वनाम)। ऊत्या = वाणी द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना)। ताम् = उसको (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। हिन्व = संतृप्त (हिन्व - तृप्त होना, शान्त होना)। मघत्तये = धन, ऐश्वर्य के लिए (मघ् = धन होना, ऐश्वर्य होना) ॥ 2 ॥

1483. आ अग्ने स्थूरम् रयिम् भर, पृथुम् गोमन्तम् अश्विनम् ।

अङ्ग्धि खम् वर्तय आ पणिम् ॥ 3 ॥

10-156-3

मन्त्रार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम अग्ने = हे अग्नि स्थूरम् = स्थूर को, स्थूल को रयिम् = विद्या, ज्ञान को भर = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो पृथुम् = विस्तार, विस्तृत गोमन्तम् = गोयुक्त को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को अश्विनम् = अश्विन् को, तीव्र गति युक्त को, व्यापक को अङ्ग्धि = विद्वान्, गतिशील को धारण करने वाला खम् = सर्वव्यापी वर्तय = वर्ताव किया आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम पणिम् = उद्योगों, स्तुतियों को ॥ 3 ॥

पदार्थ :- आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। स्थूरम् = स्थूर को, स्थूल को (स्था - स्थित होना, ठहरना, स्थूल = मोटा होना, स्थूल होना, शरीर पुष्ट होना)। रयिम् = विद्या, ज्ञान को (रय्-रि, री - चलना, जाना, जानना, पाना,

री-रै - शब्द करना)। **भर** = पोषण करो, भरो, पूर्ण करो (भृ = धारण-पोषण करना, पूर्ण करना)। **पृथुम्** = विस्तार, विस्तृत (पृथ्, प्रथ् = विस्तार करना, पृथ् - व्याप्त होना, प्रकट होना, प्रेरणा करना, भेजना, उड़ाना, प्रक्षेपण करना)। **गोमन्तम्** = गोकुल को, गो के मत वाले, शब्द करने वालों, मननशीलों, उपदेशकों के मत वालों को (गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना, गोम - लीपना, पोतना)। **अश्विनम्** = अश्विन् को, तीव्र गति युक्त को, व्यापक को (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, भोजन करना)। **अङ्घ्रि** = विद्वान्, गतिशील को धारण करने वाला (अङ् = अङ्ग होना, अवयव होना, चलना, समीप जाना, जानना, पाना)। **खम्** = सर्वव्यापी (अव्यय)। **वर्तय** = वर्ताव किया (वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **पणिम्** = उद्योगों, स्तुतियों को (पण् = व्यवहार करना, उद्योग करना, व्यापार करना, स्तुति करना)॥ 3 ॥

1484 अग्ने नक्षत्रम् अजरम्, आ सूर्यम् रोहयो दिवि ।

दधत् ज्योतिः जनेभ्यः ॥ 4 ॥

10-156-4

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि नक्षत्रम् = नक्षत्र को अजरम् = जरा-हीन को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को रोहयो = बढ़ता हुआ, चढ़ता हुआ दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में दधत् = धारण किया ज्योतिः = प्रकाश जनेभ्यः = लोगों के लिए ॥ 4 ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। नक्षत्रम् = नक्षत्र को (नक्ष - जाना, आना, पहुँचना, जानना, पाना)। अजरम् = जरा-हीन को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, जृ - जीर्ण होना, वृद्ध होना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। सूर्यम् = सूर्य, उत्पन्न करने वाले को (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। रोहयो = बढ़ता हुआ, चढ़ता हुआ (रुह - बढ़ना, ऊपर जाना, चढ़ना, बीज से उत्पन्न होना, प्रकट होना, जन्म होना, जन्म लेना)। दिवि = दिव्यता में, दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय में (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। ज्योतिः = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। जनेभ्यः = लोगों के लिए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 4 ॥

1485. अग्ने केतुः विशाम् असि, प्रेष्ठः श्रेष्ठः उपस्थसत् ।

बोध आ स्तोत्रे वयो दधत् ॥ 5 ॥

10-156-5

मन्त्रार्थ :- अग्ने = हे अग्नि केतुः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता विशाम् = विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को असि = हो प्रेष्ठः = भेजने वाले श्रेष्ठः = श्रेष्ठ उपस्थसत् = समीप स्थित होते हुए, निकटस्थ होते हुए बोध = बोध आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम स्तोत्रे = स्तुति होने में वयो = वय, रचना, विद्या का उपदेश दधत् = धारण किया ॥ 5 ॥

पदार्थ :- अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। केतुः = ज्ञानी, निवास, परामर्श दाता (केत - बुलाना, आमन्त्रित करना, परामर्श देना, सम्मुख वार्ता करना, कित् - जानना, निवास करना, रोग निवारण करना)। विशाम् = विशा, प्रतिष्ठित, प्रवेशी को (विश - भीतर जाना, चारों ओर फैलना, विश - घुसना, भीतर जाना, धंसना)। असि = हो (अस् - होना)। प्रेष्ठः = भेजने वाले (प्र - प्रकृष्ट, अधिक, इष्- ईष् - जाना, जानना, पाना, देना, प्रेष् - जाना, जानना, पाना, आना, भेजना)। श्रेष्ठः = श्रेष्ठ (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। उपस्थसत् = समीप स्थित होते हुए, निकटस्थ होते हुए (उप - समीप, स्थ = स्थित)। बोध = बोध (बुध् - बोध होना, बोध करना, जानना, समझना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। स्तोत्रे = स्तुति होने में (स्तु- प्रशंसा करना, स्तुति करना)। वयो = वय, रचना, विद्या का उपदेश (वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वा - गति करना, बहना, वी - जाना, जानना, पाना,

व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। दधत् = धारण किया (धा-दध् - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना) ॥ 5 ॥

(365) सूक्त 157

1486. इमा नु कम् भुवना सीषधेम, इन्द्रः च विश्वे च देवाः ॥ 1 ॥

10-157-1

मन्त्रार्थ :- इमा = यह, इसको नु = निश्चय ही, शीघ्र ही कम् = किसको भुवना = हो रहा, वर्तमान सीषधेम = संसिद्ध करें इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली च = और विश्वे = सभी च = और देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने ॥ 1 ॥

पदार्थ :- इमा = यह, इसको (सर्वनाम)। नु = निश्चय ही, शीघ्र ही (अव्यय)। कम् = किसको (सर्वनाम)। भुवना = हो रहा, वर्तमान (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। सीषधेम = संसिद्ध करें (साध - पूर्ण करना, सिद्ध करना, जय पाना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। च = और। विश्वे = सभी (सर्वनाम)। च = और। देवाः = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना) ॥ 1 ॥

1487. यज्ञम् च नः तन्वम् च प्रजाम् च, आदित्यैः इन्द्रः सह चीकल्पाति ॥ 2 ॥ 10-157-2

मन्त्रार्थ :- यज्ञम् = यजन को च = और। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा तन्वम् = तन्व को, विस्तार को च = और। प्रजाम् = प्रजा को च = और। आदित्यैः = आदित्यगण द्वारा, अदिति-अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न द्वारा इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली सह = साथ, सहित चीकल्पाति = सामर्थ्यवान् करता है ॥ 2 ॥

पदार्थ :- यज्ञम् = यजन को (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना)। च = और। नः = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। तन्वम् = तन्व को, विस्तार को (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना)। च = और। प्रजाम् = प्रजा को (प्र - बहुत, प्रकृष्ट, जन् - उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। च = और। आदित्यैः = आदित्यगण द्वारा, अदिति-अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न द्वारा (अ - नहीं, दी = क्षय होना, नष्ट होना, अद् = खाना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सह = साथ, सहित (सर्वनाम)। चीकल्पाति = सामर्थ्यवान् करता है (चीक - सहन करना, सहना, उतावला होना, असहिष्णु होना, छूना, स्पर्श करना) ॥ 2 ॥

1488. आदित्यैः इन्द्रः सगणो, मरुद्भिः अस्माकम् भूतु अविता तनूनाम् ॥ 3 ॥ 10-157-3

मन्त्रार्थ :- आदित्यैः = आदित्यगण द्वारा, अदिति-अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न द्वारा इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली सगणो = गण सहित मरुद्भिः = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा अस्माकम् = हमारा भूतु = उत्पन्न हों अविता = रक्षक तनूनाम् = विस्तार करने वाले का ॥ 3 ॥

पदार्थ :- आदित्यैः = आदित्यगण द्वारा, अदिति-अक्षय-अविनाशी से उत्पन्न द्वारा (अ - नहीं, दी = क्षय होना, नष्ट होना, अद् = खाना)। इन्द्रः = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। सगणो = गण सहित (स - सहित, साथ, सग - संवरण करना, आच्छादन करना, ओढ़ना, गण् - गिनना, समूह बनाना)। मरुद्भिः = मरणशीलों द्वारा, मरुतों द्वारा (मृ = मरना, देहत्याग करना)। अस्माकम् = हमारा (सर्वनाम)। भूतु = उत्पन्न हों (भु = जाना, घर्षण करना, भू - होना, रहना, उत्पन्न होना, प्राप्त होना, कल्पना करना, चिन्तन करना, मिल जाना, एकत्र करना)। अविता = रक्षक (अव् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना)। तनूनाम् = विस्तार करने वाले का (तन् = विस्तार, श्रद्धा, उपकार, शब्द करना, वर्णन करना, फैलाना, बढ़ाना, भरोसा करना, आश्रय देना) ॥ 3 ॥

(366) सूक्त 170

1489. विभ्राड् बृहत् पिबतु सोम्यम् मधु, आयुः दधत् यज्ञपतौ अविह्रुतम् ।

वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः, पुपोष पुरुधा वि राजति ॥ 1 ॥ 10-170-1

मन्त्रार्थ - बृहत् बड़े विभ्राड् विशेष प्रकाशमान (परमात्मा, उपासक) यज्ञपतौ यज्ञ-पालन में अविहरुतम् अविहरुत (जो विहरुत न हो) सोम्यम् सौम्य मधु मधु पिवतु पान करें। आयुः आयु (जीवन) दधत् धारण करे, यो जो वातजूतो वातजूत आत्मना आत्मा द्वारा अभिरक्षति रक्षा करता है, पुरुधा = अधिक पालन, पोषण करने वाले प्रजाः प्रजा को पुपोष = पुष्टि, पोषण किया वि विशेष राजति प्रकाशित होता है ॥ 1 ॥

भावार्थ - बृहत् विभ्राड् अर्थात् बड़ा और विशेष रूप से प्रकाशित परमात्मा ही है। उसके उपासकों को भी इस स्वरूप को धारण करना होता है, अपने भावों-विचारों को बड़ा और प्रकाशमान बनाना होता है। जैसे परमात्मा आत्मा से प्रजा का पोषण विविध प्रकार से करता है, उसी प्रकार उपासक भी करते हैं, तो वे भी विशेष रूप से प्रकाशित होते हैं।

विशेष - अविहरुत का अर्थ है, जो विहरुत न हो। विहरुत शब्द में वि उपसर्ग है। हरुत में ह्र धातु सर्वाधित स्पष्ट है। इस प्रकार हरुत को ह्रत का वैदिक रूप माना जाना चाहिए। यदि यह ह्रत न होकर अन्य शब्द माना जाये तो भी इसका अर्थ ह्र (हरण करना) धातु के अनुसार ही होना चाहिए। वि उपसर्ग के साथ ह्र धातु का अर्थ क्रीडा करना, खेलना होता है। अतः अ उपसर्ग लगने से इसका अर्थ हुआ खेल न करना। यजन जैसे पवित्र कार्य के पालन रक्षण में मधु का पान करना तो स्वाभाविक है, माधुर्य तो यजन का स्वाभाविक परिणाम है। यह ध्यान रखना होगा कि वह मधु सौम्य हो, तथा यजन के पालन-रक्षण में खेल न हो, पूरी गम्भीरता तथा उत्तरदायित्वबोध के साथ यजन का पालन-संरक्षण करें।

पदार्थ - विभ्राड् = विशेष प्रकाशमान (भ्राज - चमकना, प्रकाशित होना)। बृहत् = बड़ा (बृह = बड़ा होना)। पिवतु = पान करें (पिब - पीना, प्राशन करना)। सोम्यम् = सौम्य (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना, सींचना)। मधु = मीठा, मधु (मध् = मधुर होना, मीठा होना)। आयुः = आयु (अय-आयुस् - जीवनम्)। दधत् = धारण करना (दध - धारण करना, पालन करना, देना, अर्पण करना)। यज्ञपतौ = यज्ञ-पालन में (यज - देवपूजा करना, अर्पण करना, देना, संगति करना, संयोग करना, पत् = जाना, ऐश्वर्य होना, पराक्रम होना)। अविहरुतम् = अविहरुत, जो विहरुत न हो (ह्र - पाप काटना, ले जाना, पहुँचाना, लेना, ग्रहण करना, नष्ट करना, नष्ट करना, चुराना)। वातजूतो = वातजूत (वात् = सुखी होना, सेवा करना, जाना, जुत - बोलना, शब्द करना, प्रकाशित होना, चमकना)। यो = जो। अभिरक्षति = सब ओर से रक्षा करता हुआ (रक्ष = रक्षण करना, पालन करना)। आत्मना = आत्मा से। प्रजाः = प्रजा (जन् = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना)। पुपोष = पुष्टि, पोषण किया (पुष् = पालन-पोषण करना, धारण करना, रक्षण करना, वृद्धि करना, विभाग करना)। पुरुधा = अधिक पालन, पोषण करने वाले (पुर - पूर्व होना, पहले होना, अग्रभाग में जाना, आगे जाना, मुख्य होना, अग्रसर होना, धा - धारण करना, पहनना, पोषण करना, धाः = पोषण करना, रक्षण करना, देना, दान करना, धार बाँधना, धारा होना)। वि = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। राजति = प्रकाशित होता है (राज् = प्रकाशित होना, शोभित होना, चमकना) ॥ 1 ॥

1490. विभ्राड् बृहत् सुभृतम् वाजसातमम्,

धर्मम् दिवो धरुणे सत्यम् अर्पितम्।

अमित्रहा वृत्रहा दस्युहन्तमम्,

ज्योतिः जज्ञे असुरहा सपत्नहा ॥ 2 ॥ 10-170-2

मन्त्रार्थ :- विभ्राड् = विशेष प्रकाशमान बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् सुभृतम् = सुभृत, अच्छी तरह धारण करने को वाजसातमम् = अत्यन्त विद्यावान् को धर्मम् = धर्म को दिवो = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय धरुणे = धारण करने योग्य सत्यम् = सत्य को अर्पितम् = अर्पित को अमित्रहा = अमित्र का हनन करने वाला वृत्रहा = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले दस्युहन्तमम् = दस्यु-हन्ता को, दस्यु को, मारने वाले को ज्योतिः = प्रकाश जज्ञे = उत्पन्न हुए असुरहा = असुर-हन्ता सपत्नहा = सपत्नघाती ॥ 2 ॥

पदार्थ :- विभ्राड् = विशेष प्रकाशमान (भ्राज - चमकना, प्रकाशित होना)। बृहत् = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। सुभृतम् = सुभृत, अच्छी तरह धारण करने को (सु = अच्छा, भृ - भरण-पोषण, धारण करना)। वाजसातमम् = अत्यन्त विद्यावान् को (वाज्

= गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना, साध् - निर्णय करना, पूर्ण करना, सिद्ध करना, जीतना, यशस्वी होना, साधना करना)। **धर्मम्** = धर्म को (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना, स्थिर रहना)। **दिवो** = दिव्य, तेजस्वी, ज्योतिर्मय (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, प्रसन्न करना, गर्व करना, प्रीति करना, जाना, लेना, खेलना, जीतने की इच्छा करना, व्यापार करना)। **धरुणे** = धारण करने योग्य (धृ = धारण करना, नष्ट करना, टुकड़े करना, गिर पड़ना)। **सत्यम्** = सत्य को (सत् = होना, सतत होना, निरन्तर होना, सत्य होना, अस्तित्व होना)। **अर्पितम्** = अर्पित को (अर्प - अर्पण करना, देना)। **अमित्रहा** = अमित्र का हनन करने वाला (अ - नहीं, मिद् - प्रीति करना, स्नेह करना, हा, हन् - मार डालना, हिंसा करना, मा - मापना, मान करना)। **वृत्रहा** = वृत्र (हिंसा) का हनन करने वाले (वृ - वरण करना, आच्छादन करना, स्वीकार करना, वृत् - वर्तना, वर्तमान होना वरण करना, सेवा करना, चमकना, बोलना, हिंसा करना, हन् - हिंसा करना)। **दस्युहन्तमम्** = दस्यु-हन्ता को, दस्यु को, मारने वाले को (दस् - रक्षण, पालन, स्थापन करना, देखना, नष्ट होना, नष्ट करना, डसना, हन् - मारना, हिंसा करना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **जज्ञे** = उत्पन्न हुए (जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। **असुरहा** = असुर-हन्ता (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना, सु = उत्पन्न होना, उत्पन्न करना, जनना, गर्भ धारण करना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, ऐश्वर्य होना, आसवन करना, सींचना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना, सू = प्रेरणा देना, हन - मार डालना, प्राप्त करना)। **सपत्नहा** = सपत्नघाती (सप् = पूर्ण ज्ञान होना, पत् = ऐश्वर्य होना, निम्नगति करना, गिरना, हन - मार डालना, प्राप्त करना) ॥ 2 ॥

1491. इदम् श्रेष्ठम् ज्योतिषाम् ज्योतिः उत्तमम्, विश्वजित् धनजित् उच्यते बृहत्।

विश्वभ्राड् भ्राजो महि सूर्यो दृशे, उरु पप्रथे सहः ओजो अच्युतम् ॥ 3 ॥ 10-170-3

मन्त्रार्थ :- इदम् = यह, इसको **श्रेष्ठम्** = श्रेष्ठ को **ज्योतिषाम्** = ज्योतियों का, ज्योतियों में **ज्योतिः** = प्रकाश **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा को **विश्वजित्** = विश्व को जीतने वाला **धनजित्** = धन जीतने वाले **उच्यते** = उच्चारण करते हैं, कहते हैं **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् **विश्वभ्राड्** = विश्व-प्रकाशक, सबको प्रकाशित करने वाला **भ्राजो** = प्रकाशमान् **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला **दृशे** = देखने के लिए **उरु** = बहुत, विराट् **पप्रथे** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया **सहः** = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट **ओजो** = ओज **अच्युतम्** **पदार्थ :-** इदम् = यह, इसको (सर्वनाम)। **श्रेष्ठम्** = श्रेष्ठ को (श्री = सेवा करना, व्याप्त होना, श्रेय होना, आश्रय होना, समृद्धि होना, शोभा होना, श्री-श्रीण = पकाना, रांधना)। **ज्योतिषाम्** = ज्योतियों का, ज्योतियों में (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **ज्योतिः** = प्रकाश (ज्युत - कान्तिमान् होना, चमकना, प्रकाशित होना)। **उत्तमम्** = उत्तम, श्रेष्ठ-इच्छा, शुभ-इच्छा को (उत् = ही, उत्कृष्ट, ऊपर, उच्च, तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। **विश्वजित्** = विश्व को जीतने वाला (विश्व = सब, जि - सर्वोत्कर्ष से रहना, सब से बढ़ के होना, जीतना, पराभव करना)। **धनजित्** = धन जीतने वाले (धन् - शब्द करना, गति करना, चलना, जाना, जानना, पाना, उत्पन्न करना, फलना, बौर लगना, जि - जीतना, पराभव करना)। **उच्यते** = उच्चारण करते हैं, कहते हैं (उक् - उच्-वद् - कहना, समझना, उच् - एकत्र होना, सम्बन्ध होना)। **बृहत्** = महान्, बड़ा, विराट्, बृहत् (बृह - वृद्धि होना, बढ़ना, बड़ा होना, उठाना, उद्योग करना, बोलना, शब्द करना, ध्वनि करना, रण करना)। **विश्वभ्राड्** = विश्व-प्रकाशक, सबको प्रकाशित करने वाला (विश्व = सब, भ्राज - चमकना, प्रकाशित होना)। **भ्राजो** = प्रकाशमान् (भ्राज - चमकना, प्रकाशित होना)। **महि** = महत् को, पूज्य, महान्, पूजते हैं (मह् - पूजा करना, पूज्य होना, महत्व होना, सम्मान करना, सत्कार करना, महि - चमकना, प्रकाशित होना, बढ़ना, बोलना, कहना)। **सूर्यो** = सूर्य, उत्पन्न करने वाला (सुर - ऐश्वर्य होना, अद्भुत सामर्थ्य या अमानवी पराक्रम होना, चमकना, सू - उत्पन्न करना, उत्पन्न होना, ऐश्वर्य होना)। **दृशे** = देखने के लिए (दृश्-पश्य -देखना)। **उरु** = बहुत, विराट् (सर्वनाम)। **पप्रथे** = प्रसिद्ध किया, विस्तार किया (प्रथ - प्रसिद्ध होना,

फैलना, फैलाना)। सहः = सक्षम, समर्थ, तृप्त, सन्तुष्ट (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना)। ओजो = ओज (ओज - शक्तिमान् होना, जीवित होना, बढ़ना)। अच्युतम् = अपतित को (अ = नहीं, अ = भूतकालिक क्रिया उपसर्ग, च्यु - गिरना, भटकना, जाना) ॥ 3 ॥

(367) सूक्त 172

1492. आ याहि वनसा सह गावः, सचन्त वर्तनिम् यत् ऊधभिः ॥ 1 ॥

10-172-1

मन्त्रार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें वनसा = वन सह = साथ, सहित गावः = शब्द, वाणी, वचन सचन्त = अभिसिञ्चन करते हैं वर्तनिम् = वर्तमान रहने वाला यत् = जिसे, जो ऊधभिः = वाणी, शब्द, आद्र द्वारा ॥ 1 ॥

पदार्थ - आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। याहि = जायें, प्राप्त हों, प्राप्त करें (या- जाना, प्राप्त होना, पहुँचना)। वनसा = वन (वन् - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपदाग्रस्त होना, मिश्रित होना, वर्षा होना, स्मरण करना, अंकुरित होना, याचना करना, उद्योग-व्यापार करना)। सह = साथ, सहित (सर्वनाम)। गावः = शब्द, वाणी, वचन (गा = स्तुति करना, गाना, गायन करना, जाना, गमन करना, जानना, गु - शब्द करना, मनन करना, अस्पष्ट बोलना)। सचन्त = अभिसिञ्चन करते हैं (सच् - सेवा करना, सन्तुष्ट करना, सींचना, पूर्णतया समझना, सम्बन्धी होना)। वर्तनिम् = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। ऊधभिः = वाणी, शब्द, आद्र द्वारा (ऊ - शब्द करना, विश्वास करना, ऊ-अव् - रक्षा करना, उदि - उन्द् = भिगोना, उन्द् - गीला करना, आद्र होना, कष्ट होना) ॥ 1 ॥

1493. उषाः अप स्वसुः तमः, सम् वर्तयति वर्तनिम् सुजातता ॥ 4 ॥

10-172-4

मन्त्रार्थ - उषाः = प्रभात, हिंसा अप = दूर, नीचे, अपकार स्वसुः = स्वत्व, सृजन, ऐश्वर्य तमः = अन्धकार, इच्छा, दुःख सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति वर्तयति = वर्ताव किया वर्तनिम् = वर्तमान रहने वाला सुजातता = सुजात को ॥

पदार्थ - उषाः = प्रभात, हिंसा (उषस् = प्रभात होना, उष - हिंसा करना, जलना, जलाना, ताप देना)। अप = दूर, नीचे, अपकार (उपसर्ग)। स्वसुः = स्वत्व, सृजन, ऐश्वर्य (सू- ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, पराक्रम होना)। तमः = अन्धकार, इच्छा, दुःख (तम् - अन्धकार होना, इच्छा करना, चाहना, मानसिक या शारीरिक व्यथा से दुःखित होना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। वर्तयति = वर्ताव किया (वृत् - वर्तन करना, वर्ताव करना, रहना, होना, वरण करना, स्वीकार करना, हिंसा करना, सेवा करना, चमकना, बोलना)। वर्तनिम् = वर्तमान रहने वाला (वृत् = रहना, होना, वरण करना, चमकना, बोलना, सेवा करना, वर्ताव करना, व्यवहार करना, हिंसा करना, वृ = नियोजित करना, आच्छादित करना, वरण करना)। सुजातता = सुजात को (सु = उत्तम, अच्छा, जागृ - जगना, नींद न लेना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) ॥ 4 ॥

(368) सूक्त 178

1495. त्यम् उ षु वाजिनम् देवजूतम्, सहावानम् तरुतारम् स्थानाम् ।

अरिष्टनेमिम् पृतनाजम् आशुम्, स्वस्तये तार्क्ष्यम् इह आ हुवेम ॥ 1 ॥

10-178-1

मन्त्रार्थ - त्यम् = उस को उ = निश्चय ही, भी षु = उत्तम, अच्छा वाजिनम् = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को देवजूतम् = देव से उत्पन्न के लिए सहावानम् = सहनशीलता, सहनशक्ति तरुतारम् = पार करने वाला, तारने वाला, तारक स्थानाम् = रथों का अरिष्टनेमिम् = अत्यन्त हिंसक, गतिशील, व्यापक को जानने, प्राप्त करने वाले पृतनाजम् = पृतनों का, व्यापकों, बल वालों का आशुम् = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक स्वस्तये = कल्याण के लिए, सुख के लिए तार्क्ष्यम् = गमनीय, गम्य, प्राप्य, पाने योग्य, विद्वान् इह = इसमें, यहां, यह आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम हुवेम = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ - त्यम् = उस को (सर्वनाम)। **उ** = निश्चय ही, भी। **पु** = उत्तम, अच्छा (उपसर्ग)। **वाजिनम्** = वाजयुक्त को, विद्यायुक्त को, गतियुक्त को (वाज् = गति करना, जाना, जानना, पाना, तैयार करना, बल होना, वा - गति करना, बहना, वय = जाना, जानना, पाना, उड़ना, वी - जाना, जानना, पाना, व्याप्त होना, इच्छा करना, आक्रमण करना, घेरना, भेजना, खाना, वे - बुनना, रचना करना, सृजन करना)। **देवजूतम्** = देव से उत्पन्न के लिए (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रीति करना, प्रसन्न होना, खेलना, जन - उत्पन्न होना)। **सहावानम्** = सहनशीलता, सहनशक्ति (सह = शक्तिमान् करना, सहना, सहन करना, सक्षम होना, प्रतिरोध करना, समर्थ होना, तृप्त होना, सन्तुष्ट होना, प्रसन्न होना, वन - शब्द करना, सेवा करना, सहायता करना, आपद्ग्रस्त होना, अलग करना, मिलाना, स्मरण करना, बीज से उत्पन्न होना, बीज का उगना, उत्पन्न होना, प्रकट होना, याचना करना, मांगना, दुःख देना, उद्योग-धन्धा करना)। **तरुतारम्** = पार करने वाला, तारने वाला, तारक (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना)। **रथानाम्** = रथों का (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। **अरिष्टनेमिम्** = अत्यन्त हिंसक, गतिशील, व्यापक को जानने, प्राप्त करने वाले (अ - नहीं, ऋ-अर् - गति करना, व्याप्त होना, महत्व दिखाना, हिंसा करना, रिष- हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, मारने का यत्न करना, नी - जाना, जानना, पाना, प्राप्त करना, पहुँचना)। **पृतनाजम्** = पृतनों का, व्यापकों, बल वालों का (पृत - व्याप्त होना, जीवन होना, बलपूर्वक निकालना, पृ = पूर्ण करना)। **आशुम्** = आशु, व्यापकता, भोजन, तीव्र गति युक्त, व्यापक (अश् = व्यापक होना, व्याप्त होना, फैलना, फैलाना, व्यापना, पहुँचना, प्राप्त करना, संग्रह करना, राशि करना, ढेर करना, तीव्रता से पहुँचना, अश् = भोजन करना)। **स्वस्तये** = कल्याण के लिए, सुख के लिए (सु - अच्छा, अस् - होना, स्वस्ति = कल्याण)। **तार्क्ष्यम्** = गमनीय, गम्य, प्राप्य, पाने योग्य, विद्वान् (तृक्ष् - चलना, जाना, जानना, पाना)। **इह** = इसमें, यहां, यह (सर्वनाम)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। **हुवेम** = आह्वान करते हैं, दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं, तृप्ति करते हैं (हु - दान करना, तृप्त करना, आदान-प्रदान करना, खाना, भक्षण करना, लेना, ग्रहण करना, हु-ह्वे = शब्द करना, बुलाना, आह्वान करना) ॥ 1 ॥

(369) सूक्त 180

1496. मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः, परावत आ जगन्था परस्याः ।

सूकम् संशाय पविम् इन्द्र तिग्मम्, वि शत्रून् ताढि वि मृधो नुदस्व ॥ 2 ॥ 10-180-2

मन्त्रार्थ - मृगो = मृग, अन्वेषी **न** = नहीं, समान, उपमार्थक **भीमः** = भयंकर **कुचरो** = कुचर **गिरिष्ठाः** = पर्वतों पर स्थित, वाणियों में स्थित **परावत** = रक्षा करो, पालन करो **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **जगन्था** = गतिशील **परस्याः** = पर का, अन्य का **सूकम्** = सूक को, प्रगतिशील को **संशाय** = संश के लिए, सम्यक् शयन के लिए **पविम्** = पवित्र, पालन, रक्षा करने वाले को **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली **तिग्मम्** = ज्ञानी, कूटचाल को **वि** = विशेष, विना, विलोम **शत्रून्** = शत्रुओं को **ताढि** = ताड़ना दो **वि** = विशेष, विना, विलोम **मृधो** = हिंसक, आद्र **नुदस्व** = भेजें ॥ 2 ॥

पदार्थ - मृगो = मृग, अन्वेषी (मृग् - अन्वेषण करना, खोजना, आखेट करना)। **न** = नहीं, समान, उपमार्थक (अव्यय)। **भीमः** = भयंकर (भी - डरना)। **कुचरो** = कुचर (कु - बुरा, चर - चलना, आचरण करना, कुच् - आकुञ्चन होना, लपेटना, स्वच्छ करना, लिखना, चुराना)। **गिरिष्ठाः** = पर्वतों पर स्थित, वाणियों में स्थित (गृ - सींचना, गीला करना, समझना, जानना, गृ - शब्द करना, स्थ = स्थित होना)। **परावत** = रक्षा करो, पालन करो (परावतः = पराया, लौटा हुआ, अव्यय, परा = परम, परे, पीछे, विपरीत (अव्यय) अच् = रक्षा करना, पालन करना, प्रिय होना, जानना, प्रभु होना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **जगन्था** = गतिशील (जग् = गति करना, लेना, घर्षण करना)। **परस्याः** = पर का, अन्य का (सर्वनाम)। **सूकम्** = सूक को, प्रगतिशील को (सु = अच्छा, उपसर्ग, सू - जाना, सरकना)। **संशाय** = संश के लिए, सम्यक् शयन के लिए (सम् - सम्यक्, भलीभांति, शी - सोना, शयन करना, शि - तीक्ष्ण करना, पैना करना, छील के पैना करना)। **पविम्** = पवित्र, पालन, रक्षा करने वाले को (पु - पालन करना, रक्षा करना, श्वास लेना, पू - पवित्र करना, स्वच्छ करना)। **इन्द्र** = परम ऐश्वर्यशाली (इन्द्र = परम ऐश्वर्य होना)। **तिग्मम्** = ज्ञानी, कूटचाल को (तिग् = जाना,

जानना, पाना, कूटचाल चलना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **शत्रून्** = शत्रुओं को (शी-शद्-शत् - जीर्ण होना, गिरना, गिराना)। **ताडि** = ताड़ना दो (तड - मारना, ताड़न करना। तड - चमकना, चमकाना, बोलना)। **वि** = विशेष, विना, विलोम (उपसर्ग)। **मृधो** = हिंसक, आद्र (मृध - दबाना, हिंसा करना, मार डालना, दुःख देना, आद्र करना, गीला करना, गीला होना)। **नुदस्व** = भेजे (नुद् = भेजना, प्रेरणा करना, जाना) ॥ 2 ॥

(370) सूक्त 181

1497. प्रथः च यस्य सप्रथः च नाम, आनुष्टुभस्य हविषो हविः यत्।

धातुः द्युतानात् सवितुः च विष्णो, रथन्तरम् आ जभारा वसिष्ठः ॥ 1 ॥ 10-181-1

मन्त्रार्थ - प्रथः = विस्तार करे च = और यस्य = जिसका सप्रथः = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत च = और। नाम = नाम वाले आनुष्टुभस्य = अनुष्टुप् का हविषो = हविष का, दान व आदान-प्रदान का हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य यत् = जिसे, जो धातुः = धारण करने वाला द्युतानात् = द्योतमान, प्रकाशमान सवितुः = सविता का, उत्पादक, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला च = और। विष्णो = विष्णु, हे सर्वव्यापी रथन्तरम् = रथ को आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम जभारा = परिहास किया, विनोद किया वसिष्ठः = वसिष्ठ ॥ 1 ॥

पदार्थ - प्रथः = विस्तार करे (प्रथ् = विस्तार होना, प्रसिद्ध होना)। च = और। यस्य = जिसका (सर्वनाम)। सप्रथः = सप्रथा, पूर्ण ज्ञान युक्त, विस्तृत (सप - पूर्ण ज्ञान होना, पूरा समझना, पूर्णतया जानना, संसक्त होना, संलग्न होना, मिलाप होना)। च = और। नाम = नाम वाले (अव्यय)। आनुष्टुभस्य = अनुष्टुप् का (अनु - पीछे, स्तु - स्तुति करना, प्रशंसा करना)। हविषो = हविष का, दान व आदान-प्रदान का (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। हविः = हवि, दान करने योग्य, लेने योग्य, तृप्त करने योग्य (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, ह्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। धातुः = धारण करने वाला (धा - धारण करना, पोषण करना, रक्षा करना, दान करना)। द्युतानात् = द्योतमान, प्रकाशमान (द्युत् = प्रकाशित होना, द्यु = अभिगमन करना, आक्रमण करना, आगे जाना, समीप जाना)। सवितुः = सविता का, उत्पादक, ऐश्वर्यवान्, उत्पन्न करने वाला (सु - ऐश्वर्य होना, उत्पन्न करना, स्नान करना, यन्त्रादि द्वारा अर्क निकालना, दबाना, हिलाना)। च = और। विष्णो = विष्णु, हे सर्वव्यापी (विष्ण-विष् -विविष् - अलग करना, अभिषेक करना, सींचना, व्याप्त होना, व्यापना, फैलना, प्रसृत होना)। रथन्तरम् = रथ को (रथ् = जाना, ले जाना, रम - रमना, प्रिय होना, मूल्यवान् होना, प्रसन्न करना, आवेष्टित करना, क्रीडा करना, खेलना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण, आगम (उपसर्ग)। जभारा = परिहास किया, विनोद किया (जभ् - परिहास करना, विनोद करना, मैथुन करना, भृ - भरण करना)। वसिष्ठः = वसिष्ठ (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना) ॥ 1 ॥

(371) सूक्त 185

1498. महि त्रीणाम् अवः अस्तु, द्युक्षम् मित्रस्य अर्यम्णः।

दुराधर्षम् वरुणस्य ॥ 1 ॥

10-185-1

मन्त्रार्थ : मित्रस्य मित्र, वरुणस्य वरुण, अर्यम्णेः अर्यमन् त्रीणाम् तीनों का दुराधर्षम् दुर्जेय द्युक्षम् अग्र महि पूज्य अवो संरक्षण अस्तु हो ॥ 1 ॥

भावार्थ : उपासक को परमात्मा की कृपा से मित्रों, सज्जनों, श्रेष्ठ लोगों का संरक्षण प्राप्त होता है जिससे उन्हें दुष्ट लोग हानि नहीं पहुँचा पाते हैं ॥ 1 ॥

पदार्थ : महि = पूज्य महान् (मह - सम्मान करना, पूजा करना)। त्रीणाम् = तीन का। अवः = रक्षक (अव् = रक्षा करना)। अस्तु = हो। द्युक्षम् = अग्रगामी (द्यु = आगे जाना, क्षि = क्षय होना, नष्ट होना, हिंसा करना, निवास करना, जाना, चलना, जानना, पाना)। मित्रस्य = मित्र का (मिद- स्नेह करना, प्रीति करना)। अर्यम्णः = अर्यमा का (ऋ = जाना, पाना,

मिलाना)। **दुराधर्षम्** = दुर्जेय (दुः + आधर्षम्, धृष् = जीतना)। **वरुणस्य** = वरुण का (वृ - पसन्द करना, नियोजित करना, वरण करना) ॥ 1 ॥

(372) सूक्त 186

1499. वात आ वातु भेषजम्, शम्भु मयोभु नो हृदे ।

प्र न आयूंषि तारिषत् ॥ 1 ॥ 10-186-1

मन्त्रार्थ - वातः = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण **वातु** = वात, वायु के समान तीव्र गति में **भेषजम्** = भेषज को, औषधि को **शम्भु** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी **मयोभु** = गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो **हृदे** = हृदय के लिए **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **आयूंषि** = आयु **तारिषत्** = चाहा, तार दिया, पार किया ॥ 1 ॥

पदार्थ - वातः = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **आ** = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। **वातु** = वात, वायु के समान तीव्र गति में (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **भेषजम्** = भेषज को, औषधि को (भिषज् - रोग मुक्त करना, चिकित्सा करना, नष्ट करना, भेष - डरना, जाना, जानना, पाना)। **शम्भु** = कल्याणकारी, शान्तिमय, शमनकारी (शम् = कल्याण होना, शान्त होना, स्वस्थ होना प्रसिद्ध करना, स्पष्ट करना, शमन करना, सान्त्वना देना, विचार करना, सहन करना)। **मयोभु** = गति से होने वाले, ज्ञान से होने वाले (मय - जाना, जानना, पाना)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा, हम दो (सर्वनाम)। **हृदे** = हृदय के लिए (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना)। **प्र** = प्रकृष्ट, प्रमुख, अधिक (उपसर्ग)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **आयूंषि** = आयु (आ - सम्यक्, समन्तात्, पूर्णतः, अय = जाना, जानना, पाना, गति करना, आय - शब्द करना, शासन करना, यु = मिलना, अलग करना)। **तारिषत्** = चाहा, तार दिया, पार किया (तृ - पार जाना, पर तीर को जाना, जल पर तैरना, जीतना, जल के पार जाना, तृष - प्यास लगना, इच्छा करना, उत्कण्ठित होना, चाहना) ॥ 1 ॥

1500. उत वात पिता असि नः, उत भ्राता उत नः सखा ।

स नो जीवातवे कृधि ॥ 2 ॥

10-186-2

मन्त्रार्थ :- उत = ही, भी, ओर **वात** = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता **असि** = हो **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **उत** = ही, भी, ओर **भ्राता** = भ्राता **उत** = ही, भी, ओर **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा **सखा** = मित्र **स** = वह, उसने **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा **जीवातवे** = जीवन-यापन के लिए **कृधि** = करो ॥ 2 ॥

पदार्थ :- उत = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **वात** = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। **पिता** = पिता, पालन करने वाला, पिता (पि - जाना, जानना, पाना, पा - पालन करना, रक्षा करना)। **असि** = हो (अस् - होना)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **भ्राता** = भ्राता (भृ = भरण करना)। **उत** = ही, भी, ओर (अव्यय, निपात)। **नः** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **सखा** = मित्र (सख् = मित्र होना)। **स** = वह, उसने (सर्वनाम)। **नो** = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। **जीवातवे** = जीवन-यापन के लिए (जीव् = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना)। **कृधि** = करो (कृ = करना) ॥ 2 ॥

1501. यत् अदो वात ते गृहे, अमृतम् निधिः हितः ।

ततो नो देहि जीवसे ॥ 3 ॥

10-186-3

मन्त्रार्थ :- यत् = जिसे, जो **अदो** = खाने वाला **वात** = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले **ते** = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए **गृहे** = गृह में, घर में **अमृतम्** = न मरने वाले, अमर, अमृत को **निधिः** = निधि, धारणा शक्ति, बुद्धि। **हितः**

= हित, गति, वृद्धि ततो = उससे नो = हमको, हमारे लिए, हमारा धेहि = दो, दीजिये जीवसे = जीव के लिए, जीवन के लिए ॥ 3 ॥

पदार्थ :- यत् = जिसे, जो (सर्वनाम)। अदो = खाने वाला (अद् - खाना)। वात = वात, वायु के समान तीव्र गति वाले (वात - सुखी होना, आनन्द करना, सेवा करना, जाना, वा - गति करना, बहना, पवन की भाँति चलना)। ते = तुम्हारा, वे, तुम्हारे लिए (सर्वनाम)। गृहे = गृह में, घर में (गृह - लेना, स्वीकार करना, निवास करना)। अमृतम् = न मरने वाले, अमर, अमृत को (अ - नहीं, मृ = मरना)। निधिः = निधि, धारणा शक्ति, बुद्धि (नि- निश्चित, नितराम्, निरन्तर, धि = धारण करना, युक्त होना, धी = धारण करना, आधारभूत होना, उपेक्षा करना, बुद्धि, प्रज्ञा होना)। हितः = हित, गति, वृद्धि (हि - जाना, जानना, पाना, प्रेरणा करना, भेजना, स्थूल होना, बढ़ना)। ततो = उससे (सर्वनाम)। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। देहि = दो, दीजिये। (दा = देना, दान करना, रखना)। जीवसे = जीव के लिए, जीवन के लिए (जीव = जीवन होना, प्राणवान् होना, प्राण धारण करना, जीवन धारण करना) ॥ 3 ॥

(373) सूक्त 189

1502. आ अयम् गौः पृश्निः अक्रमीत्, असदत् मातरम् पुरः ।

पितरम् च प्रयन् स्वः ॥ 1 ॥ 10-189-1

मन्त्रार्थ : अयम् यह गौः गतिशील, पृश्निः सहनशील, सींचने वाला, अक्रमीत् चला, (विचरण किया अथवा पराक्रम किया)। पुरः पहले मातरम् माता के पास असदन् गया। च और पितरम् पिता के पास प्रयन् जाते हुए स्वः ऐश्वर्य को अक्रमीत् गया (पाया) ॥ 1 ॥

भावार्थ : माता-पिता का सम्मान करते हुए शुभ गुणों को अपनाने वाला ऐश्वर्य को प्राप्त करता है ॥ 1 ॥

पदार्थ : आयम् = यह। गौः = गतिशील (गम्, गा = जाना)। पृश्निः = सहनशील, सींचने वाला (पृश्, पृष् = सींचना, सहन करना)। अक्रमीत् = वृद्धि की, रक्षा की (क्रम् = जाना, बढ़ना, रक्षा करना, जानना, पाना)। असदन् = गया (सद् = जाना)। मातरम् = माता को (मा - सम्मान करना, पूजना, ज्ञान की इच्छा करना)। पुरः = पहले (पुर् = आगे जाना)। पितरम् = पिता को (पा = पालन करना)। च = और। प्रयन् = जाते हुए (या = जाना)। स्वः = स्वः (सु = उत्पन्न करना, ऐश्वर्य होना) ॥ 1 ॥

1503. अन्तः चरति रोचना, अस्य प्राणात् अपानती ।

व्यख्यत् महिषो दिवम् ॥ 2 ॥ 10-189-2

मन्त्रार्थ : रोचना प्रकाश प्राणात् प्राण से अपानती अपान तक महिषो पूजित, सम्मानित दिवम् प्रकाशमान को वि व्यख्यन् कहता हुआ अन्तः भीतर चरति विचरण करता है ॥ 2 ॥

भावार्थ : प्राण अर्थात् चेतना शक्ति तथा ऊर्ध्वगामी श्वास-प्रश्वास से अपान अर्थात् अधोगामी वायु तक शरीर में व्याप्त पंच प्राणों के भीतर परमपिता परमात्मा का दिव्य प्रकाश ही विचरण करता है। वह दिव्य स्तुतियों का व्याख्यान भी करता है। अर्थात् पंच प्राण के संचरण के साथ परमात्मा की स्तुति करते रहें ॥ 2 ॥

पदार्थ : अन्तः = बीच में। चरति = विचरण करता है (चर - जाना, आचरण करना)। रोचना = प्रकाश (रुच् = रुचना, प्रकाशित होना)। अस्य = इसका। प्राणात् = प्राण से (अन- चेतन होना, जीवन होना)। अपानती = अपान तक (अप - पालन करना, अन - जीना, समर्थ होना, जाना)। व्यख्यन् = कहता हुआ (वि + अख्यन्, ख्या = कहना, व्याख्यान करना)। महिषो = पूजित, सम्मानित (महि = पूजा करना, सम्मान करना)। दिवम् = प्रकाशमान (दिव् = प्रकाशित होना, स्तुति करना) ॥ 2 ॥

1504. त्रिंशत् धाम वि राजति, वाक् पतङ्गाय धीयते ।

प्रति वस्तोः अह द्युभिः ॥ 3 ॥ 10-189-3

मन्त्रार्थ : त्रिंशत् तीस धाम धाम वि राजति प्रकाशित होता है। पतङ्गाय ऐश्वर्य के लिए वाक् वाणी धीयते धारण

करता है। प्रति प्रति (प्रत्येक या सभी) वस्तोः प्रातःकाल द्युभिः प्रकाश द्वारा अह व्यापक हो ॥ 3 ॥

भावार्थ : तीस धाम का आशय मानव जीवन या शरीर ही प्रतीत होता है। तीस संख्या से किन गुणों आदि का संकेत है, यह विचारणीय है। हमारी वाणी ही ऐश्वर्य तथा यश का कारण होती है। वाणी में स्नेह, मधुरता हो, स्तुति करें, वेदमन्त्रों का पाठ तथा स्वाध्याय करें तो प्रत्येक प्रभात प्रकाश से व्याप्त होगा। प्रातःकाल सूर्य का प्रकाश तो फैलता ही है, उसी तरह परमात्मा की कृपा, आनन्द, उल्लास का प्रकाश भी व्यापक हो, यही भावना है ॥ 3 ॥

पदार्थ : त्रिंशत् = तीस। धाम = धाम (धा = धारण करना, पोषण करना)। विराजति = प्रकाशित होता है (राज् = प्रकाशित होना, शोभित होना, चमकना)। वाक् = वाणी (वच्, वद - बोलना, कहना, समझाना, जनाना, पढ़ना, अध्ययन करना)। पतंगाय = विद्या, ऐश्वर्य के लिए (पत् = ऐश्वर्य होना)। धीयते = धारण करता है (धी = धारण करना)। प्रति = सम्बन्ध में, विषय में। वस्तोः = प्रातः (वस्त = प्रातः)। अह = व्यापक (अह् = व्याप्त होना)। द्युभिः = प्रकाश द्वारा (द्युः = प्रकाश होना) ॥ 3 ॥

(374) सूक्त 191

1505. सम् सम् इत् युवसे वृषन्, अग्ने विश्वानि अर्यः आ ।

इडस्पदे सम् इध्यसे, स नो वसूनि आ भर ॥ 01 ॥

10-191-1

मन्त्रार्थ- वृषन् = हे शक्तिशाली, पराक्रमी। अग्ने = हे अग्नि। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति। इत् = ही। विश्वानि = सभी। = अर्य को, प्रगतिशील को। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण। युवसे = युक्त करते हो। इडस्पदे = स्तुतियों के पद में। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति। इध्यसे = गति, ज्ञान, प्रकाश करते हो। स = वह। नो = हमारे लिए। वसूनि = वसुओं को। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण। भर = भरण करो, पूर्ण करो ॥ 30 ॥

भावार्थ - हे शक्तिशाली, पराक्रमी अग्निस्वरूप परमात्मा, सम्यक् रूप से सभी प्रगतिशीलताओं को सम्यक्, सम्पूर्ण रूप से युक्त करते हो। स्तुतियों के पद में भली भाँति गति, ज्ञान, प्रकाश करते हो। हमारे लिए वसुओं को समन्तात् भरण करो, पूर्ण करो। सम्पूर्ण सृष्टि गतिशील है। सम्पूर्ण गति-प्रगति को उत्पन्न करने वाला परमात्मा ही है। वह परमात्मा स्तुतियों के पदों में प्रकाशित है। वेद मन्त्रों को स्तुति भी कहते हैं। वह परमात्मा वेद मन्त्रों में प्रकाशित है अर्थात् वेद मन्त्रों से हम परमात्मा को जान सकते हैं तथा उसका प्रकाश प्राप्त कर सकते हैं। उससे प्रार्थना है कि हमें प्रगतिशीलता से संयुक्त करे। हमारे जीवन में प्रगति हो। हमें वसु अर्थात् वास-स्थान, वसन-वासन आदि संसाधन प्राप्त हों ॥ 30 ॥

पदार्थ - सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। इत् = ही (अव्यय)। युवसे = युक्त करते हो (यु - संयोग-वियोग करना, मिश्रित करना, मिलाप करना, अलग करना)। वृषन् = शक्तिशाली, पराक्रमी (वृष - गर्भवती होना, विशिष्ट होना, अमानवी पराक्रम करना, पराक्रमी होना, प्रजोत्पत्ति करने को समर्थ होना)। अग्ने = हे अग्नि (अग् - जाना, जानना, पाना, अग्रणी होना, आगे जाना, ऊर्ध्व गति करना, लेना, ग्रहण करना)। विश्वानि = सभी (सर्वनाम)। अर्यः = अर्य को, प्रगतिशील को (ऋ - जाना, सम्पादन करना, प्राप्त करना, मिलाना, पहुँचाना, अर्-ऋ - गति करना, जाना, जानना, पाना, शब्द करना, व्याप्त होना, मिलाना, महत्व दिखाना, हिंसा करना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। इडः = स्तुति का (इड - धारण करना, घर्षण करना, छेदन करना, ईड् = स्तुति करना)। पदे = पद में, चलने में, विद्या में (पद् - चलना, जाना, जानना, पाना, भूषित होना, भूषित करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग)। इध्यसे = गति, ज्ञान, प्रकाश करते हो (इध्-इधि-इन्ध् - प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना)। स = वह, उसने। नो = हमको, हमारे लिए, हमारा (सर्वनाम)। वसूनि = वसुओं को (वस् = वसना, रहना, धारण करना, स्थित होना, सीधा होना, निवास करना, दया-स्नेह, प्रीति-हिंसा-अपहरण करना, आच्छादन करना, वस्त्र धारण करना, कतरना, लेना)। आ = समन्तात्, सम्यक्, सम्पूर्ण (उपसर्ग)। भर = भरण करो, पूर्ण करो (भृ - भरण करना, पूर्ण करना) ॥ 30 ॥

1506. सम् गच्छध्वम् सम् वदध्वम्, सम् वो मनांसि जानताम् ।

देवा भागम् यथा पूर्वे, सम् जानाना उपासते ॥ 02 ॥

10-191-2

मन्त्रार्थ :- सम् = भली भाँति गच्छध्वम् = चलें सम् = भली भाँति वदध्वम् = बोलें वो = तुम्हारे मनांसि = मन सम् = भली भाँति जानताम् = जानें देवा = देवगण अर्थात् तेजस्वी विद्वान् यथा = जैसे पूर्वे = पूर्व, पहले सम् = भली भाँति जानाना = जानते हुए भागम् = सेवा योग्य, (परमात्मा, वेद) की उपासते = उपासना करते हैं।

भवार्थ :- जो कुछ भी करें, भलीभाँति करें, सम्यक् रूपेण, अच्छी तरह पूर्णता के साथ करें। कोई भी कार्य जैसे-तैसे आधा-अधूरा न करें। चलने और बोलने में भी शिष्टता-सभ्यता का पूरा ध्यान रखें। सबसे महत्वपूर्ण बात है कि हमारे मन भलीभाँति जानें। जानकारी तभी उपयोगी और लाभप्रद है जब वह सम्यक् हो, पूर्ण हो। अधूरा ज्ञान होना पर्याप्त नहीं है। इससे तो भ्रम हो सकता है। अतः जो देव पुरुष हैं, तेजस्वी विद्वान् हैं, वे पहले सम्यक् रूपेण जान लेते हैं, पूरा ज्ञान प्राप्त करते हैं, उसके बाद जो भी सेवा योग्य है, सेवनीय है, उसकी उपासना करते हैं उपासना (उप-निकट, आस्-बैठना) का अर्थ है निकट बैठना। सेवनीय परमात्मा, वेद या श्रेष्ठ पुरुषों के निकट तभी बैठ सकते हैं जब समुचित ज्ञान हो। ज्ञान के बिना उपासना सम्भव नहीं है, लाभ तो दूर की बात है।

पदार्थ :- सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) गच्छध्वम् = जायें (गम्-गच्छ = जाना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) वदध्वम् = बोलें (वद - कहना, समझाना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) वो = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। मनांसि = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। जानताम् = जानो, जानते हैं (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना)। देवा = विद्वान्, तेजस्वी, देवगण, देवगणों ने (दिव् = तेजस्वी होना, चमकना, प्रशंसा करना, स्तुति करना, आनन्द करना, प्रसन्न होना, खेलना)। भागम् = सेवा, दान, भोजन, भाग को (भज् = सेवा करना, दान करना, भोजन पकाना, भज - अंश या भाग होना)। यथा = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। पूर्वे = पूर्व, पूर्ण करने के लिए (पूर्व = पूर्व, पहले, सर्वनाम, पूर्व - पूर्ण करना, भरना, निवास करना, आश्चर्य करना, आमन्त्रण करना)। सम् = सम्यक् रूप से, भली भाँति (उपसर्ग) जानाना = जानते हुए (ज्ञा-जा - जानना, समझना, जन- उत्पन्न होना, प्रकट होना, उत्पन्न करना) उपासते = उपासना करते हैं (उप - समीप, निकट, अस् - होना, आस् - बैठना, उपस्थित होना, विद्यमान होना, जीवित रहना, होना) ॥ 02 ॥

1507. समानो मन्त्रः समितिः समानी, समानम् मनः सह चित्तम् एषाम्।

समानम् मन्त्रम् अभि मन्त्रये वः, समानेन वो हविषा जुहोमि ॥ 03 ॥ 10-191-3

मन्त्रार्थ :- एषाम् = इनके मन्त्रः = मन्त्र समानो = समान हों समितिः = समिति समानी = समान हो मनः = मन के सह = साथ चित्तम् = चित्त समानम् = समान हो समानम् = समान मन्त्रम् = मन्त्र से वः = तुमको अभि = सर्वथा मन्त्रये = मन्त्रित करता हूँ वो = तुमको समानेन = समान हविषा = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा जुहोमि = दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं ॥ 03 ॥

भवार्थ :- मन्त्र, समिति, मन और चित्त समान होने चाहिए, तभी समाज व्यवस्थित तथा उन्नत हो सकता है। यदि लोग अलग-अलग मन्त्र बना लेंगे, अपनी-अपनी समितियाँ बना लेंगे, मन और चित्त अलग-अलग हो जायेंगे तो समाज बिखर जायेगा। अतः पूरे समाज को समान मन्त्रों से अभिमन्त्रित करना चाहिए। समाज में आदान-प्रदान चलता रहना चाहिए तथा उसमें ध्यान रखना चाहिए कि समानता बनी रहे, भेदभाव न हो। जिन वस्तुओं तथा विचारों का आदान-प्रदान किया जाये, वे इस योग्य हों, समाज के लिए उपयोगी हों, लाभप्रद भी हों।

पदार्थ :- समानो = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। मन्त्रः = मन्त्र, मन्त्रणा (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, मन्त्र = मन्त्रणा करना, विचार करना, गुप्त भाषण करना)। समितिः = भलीभाँति ही, सम्यक् प्रकाशित (सम् = सम्यक्, भलीभाँति, इत् - इन्ध = प्रदीप्त होना, प्रकाशित होना, प्रकाश करना)। समानी = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। समानम् = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न

घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **मनः** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम)। **चित्तम्** = चित्त या चेतना, ज्ञान (चि - चुनना, एकत्र करना, चित् = चेतन होना, विचार करना, चिन्तन करना, सम्यक् ज्ञान होना, स्मरण करना, शंका करना, सन्देह करना)। **एषाम्** = इनका (सर्वनाम)। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **मन्त्रम्** = मन्त्र को (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, मन्त्र = मन्त्रणा करना, विचार करना, गुप्त भाषण करना)। **अभि** = अभिमुख, विशेष, प्रमुख, सभी ओर, सर्वथा (उपसर्ग)। **मन्त्रये** = मन्त्र के लिए (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना, मन्त्र = मन्त्रणा करना, विचार करना, गुप्त भाषण करना)। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **समानेन** = समान द्वारा (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **हविषा** = हविष से, दान व आदान-प्रदान द्वारा (हू = दान करना, देना, आदान-प्रदान करना, तृप्त करना, द्वे - शब्द करना, आह्वान करना)। **जुहोमि** = दान करते हैं, आदान-प्रदान करते हैं (हु-जुहु = दान करना, आदान-प्रदान करना, ग्रहण करना, तृप्त करना, जु - जाना, शीघ्र जाना, भागना) ॥ 03 ॥

1508. समानी व आकूतिः, समाना हृदयानि वः ।

समानम् अस्तु वो मनो, यथा वः सु सह असति ॥ 04 ॥

10-191-4

मन्त्रार्थ :- **वः** = तुम्हारी **आकूतिः** = वाणी तथा भाषा **समानी** = समान हो **वः** = तुम्हारे **हृदयानि** = हृदय **समानम्** = समान **अस्तु** = हो **वो** = तुम्हारे **मनो** = मन **समाना** = समान हो **यथा** = जिससे **वः** = तुम्हारा **सह** = साथ **सु** = अच्छी तरह **असति** = प्रकाशित, चमकता रहे ॥ 04 ॥

भवार्थ :- भाषा, वाणी, हृदय तथा मन ही उन्नति के साधन हैं। यदि हमारे हृदय, भाषा, मन तथा वाणी समान हों तो समाज में उन्नति की चमक बनी रहेगी, समाज प्रगति करता रहेगा।

पदार्थ :- **समानी** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **आकूतिः** = आ-कूति, वाणी को, शब्द (आ = समन्तात्, सम्पूर्ण, कू - शब्द करना)। **समाना** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **हृदयानि** = हृदय से (हृ = प्रसह्य करना, बलपूर्वक करना, हरण करना, ले जाना, पहुँचाना, चुराना)। **वः** = तुम लोग, तुम्हारा, तुमको, तुम सबका, तुम सबको, तुम सबके लिए। **समानम्** = समान (सम् - सम्यक् रूप से, भली भाँति, सम = न घबराना, एक समान रहना, अन् - प्राण होना, जीवन होना, श्वास लेना)। **अस्तु** = हो (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना)। **वो** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **मनो** = मन (मन् = जानना, समझना, मानना, विचार करना, स्वीकार करना, मान्य करना, बन्द करना, स्थिर करना, मन्द होना, गर्वीला होना, प्रतिकूल होना, रुकना)। **यथा** = जिससे, जैसे, जिस प्रकार। **वः** = तुम सबको, तुम सबके लिए, तुम सबका, तुम्हारा, तुमको, तुम लोग (सर्वनाम)। **सु** = उत्तम, सुष्ठु, अच्छा, सुन्दर (उपसर्ग)। **सह** = साथ, सहित (सर्वनाम) **असति** = प्रकाशित, चमकता है (अस - होना, रहना, जाना, लेना, प्रकाश करना, चमकाना, फेकना, उड़ाना, विखेरना) ॥ 04 ॥

इति दशम मण्डल

स्वामी शरण कृत साहित्य

मो. 9839105629, 8687849004

1. ऋग्वेद भाष्य :- ऋग्वेद भाष्य के इस सार-संक्षेप संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। जन सामान्य तथा शोधकर्ताओं-अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार)

रु. 2000.00

2. सामवेद भाष्य :- सामवेद भाष्य के इस सम्पूर्ण संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार)

रु. 2000.00

3. अथर्ववेद भाष्य :- अथर्ववेद भाष्य के इस सार-संक्षेप संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार)

रु. 2000.00

4. यजुर्वेद भाष्य :- यजुर्वेद भाष्य के इस सम्पूर्ण संस्करण में सन्धियों से मुक्त सरल पाठ के साथ ही मन्त्रार्थ, भावार्थ तथा पदार्थ भी प्रस्तुत किया गया है। मन्त्रों के सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का यह इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। अध्येताओं के लिए अत्यन्त उपयोगी संस्करण। (बृहद् आकार)

रु. 2000.00

5. वेदायन भाष्य :- चारों वेदों से चुने हुए प्रमुख वेद सूक्तों का मन्त्रार्थ, पदार्थ, भावार्थ तथा सरस गेय पद्यानुवाद भी दिया गया है। सन्धियों-संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। जन सामान्य तथा शोधकर्ताओं-अध्येताओं के लिए उपयोगी संस्करण।

रु. 500.00

6. वेदायन प्रवचन :- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेद सूक्तों का मन्त्रार्थ, पदार्थ, भावार्थ तथा सरस गेय पद्यानुवाद भी दिया गया है। इसके साथ ही इन मन्त्रों पर विस्तृत प्रवचन भी इस पुस्तक में संकलित हैं। सन्धियों-संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है। सभी के लिए उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

7. वेदायन (सरल पाठ, काव्यानुवाद, भावार्थ सहित):- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेदसूक्तों का सन्धियों से मुक्त सरल पाठ, काव्यानुवाद एवम् भावार्थ। **रु. 100.00**

8. वेदायन (सरल पाठ, काव्यानुवाद) :- चारो वेदों से चुने हुए प्रमुख वेदसूक्तों का सन्धियों से मुक्त सरल पाठ, काव्यानुवाद एवम् भावार्थ। वेदपाठ तथा उपासना के लिए। **रु. 100.00**

9. वेद सूक्तायन :- चारो वेदों से चुने हुए 15 प्रमुख वेदसूक्तों का सन्धियों से मुक्त सरल पाठ (छन्द पाठ), मन्त्रार्थ, विशेष भावार्थ-व्याख्या, व्याकरण-सम्मत पदार्थ (शब्दार्थ) सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। **रु. 100.00**

10. यजुर्वेद एकादशी :- यजुर्वेद के अन्तिम 11 अध्यायों का मन्त्रार्थ, पदार्थ, भावार्थ दिया गया है। सन्धियों-संयुक्ताक्षरों से मुक्त सरल सरल पाठ के साथ ही प्रत्येक शब्द का प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत किया गया है। वेद को वैदिक भाषा के अनुसार समझने का इतिहास में सर्वप्रथम प्रयास है। व्याकरण-सम्मत, पदार्थ (शब्दार्थ) एवम् भावार्थ-व्याख्या सहित सरल प्रामाणिक अनुवाद। मूल मन्त्र के किसी शब्द को छोड़ा नहीं गया है, कोई भी शब्द अपनी ओर से जोड़ा नहीं गया है। जन सामान्य तथा शोधकर्ताओं-अध्येताओं के लिए उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

11. चतुर्वेद सरल पाठ :- प्रथम बार प्रस्तुत सन्धियों से मुक्त चारों वेदों का सरल पाठ जन साधारण के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। (बृहद् आकार) **रु. 2500.00**

12. ऋग्वेद सरल पाठ :- ऋग्वेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। (बृहद् आकार) **रु. 900.00**

13. सामवेद सरल पाठ :- सामवेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। **रु. 500.00**

14. अथर्ववेद सरल पाठ :- अथर्ववेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। (बृहद् आकार) **रु. 700.00**

15. यजुर्वेद सरल पाठ :- यजुर्वेद का सम्पूर्ण सरल पाठ प्रथम बार प्रस्तुत किया जा रहा है। **रु. 700.00**

16. वैदिक धात्वादि कोश :- पाणिनि तथा काशकृत्स्न प्रोक्त धातुपाठों को समाहित कर सम्पूर्ण धातुकोश तैयार किया गया है। उपसर्ग, अव्यय, संख्या, सर्वनाम शब्द भी दिये गये हैं। इसकी सहायता से वेद सहित सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य का अर्थ किया जा सकता है। अत्यन्त उपयोगी संस्करण। **रु. 500.00**

17. वैदिक शब्दकोश :- वैदिक पदों (शब्दों) का धातुज, व्याकरण-सम्मत प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ। इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत वैदिक शब्दकोश। (बृहद् आकार) **रु. 900.00**

18. वैदिक शब्दकोश (लघु संस्करण) :- वैदिक पदों (शब्दों) का धातुज, व्याकरण-सम्मत प्रमाण सहित निष्पक्ष अर्थ। इतिहास में सर्व प्रथम प्रस्तुत वैदिक शब्दकोश। **रु. 200.00**

19. सरल संस्कृत व्याकरण :- व्याकरण के मूल तत्वों पर आधारित इस पद्धति से शब्द रूप, धातु रूप, पाणिनीय सूत्र रटे बिना एक मास में संस्कृत पढ़ना, लिखना, बोलना सीख सकते हैं। दशकों के अनुभव के बाद प्रस्तुत उपयोगी चमत्कारिक व्याकरण प्रणाली।
रु. 95.00

20. वैदिक इतिहास :- ब्रह्मा व मनु से आरम्भ कर बुद्ध तक का सम्पूर्ण क्रमबद्ध इतिहास एक पुस्तक में सर्वप्रथम प्रस्तुत किया गया है। सूर्यवंश की 128 पीढ़ियों का इतिहास प्रथम बार प्रस्तुत किया है। सूर्यवंश, चन्द्रवंश की शाखाओं सहित मनु से भोज तक सम्पूर्ण वंशावली भी दी गयी है।
रु. 200.00

21. ओम् साधना :- ओम् साधना, वैदिक संस्कृति, वैदिक आध्यात्मिक चिकित्सा, वैदिक योग साधना।
रु. 200.00

22. चिन्तन प्रवाह :- वैदिक संस्कृति तथा जीवन दर्शन सम्बन्धी चिन्तन।
रु. 500.00

23. वैदिक विज्ञान :- वैदिक संस्कृति, आध्यात्मिक चिकित्सा, वैदिक योग साधना।
रु. 50.00

24. युगबोध :- प्रबन्ध काव्य।
रु. 300.00

25. चेतना :- काव्य संकलन।
रु. 100.00

26. नवांकुर :- काव्य संकलन।
रु. 20.00

आगामी प्रकाशन योजना

1. वैदिक व्याकरण : पंचपाठी व्याकरण का समयानुकूल प्रस्तुतीकरण। अष्टाध्यायी सूत्रों का अनुवृत्ति सहित प्रस्तुतीकरण, जिससे प्रत्येक सूत्र स्वयम् ही सम्पूर्ण अर्थ स्पष्ट कर सके। व्यापक प्रभाव वाले सूत्रों को महत्व देते हुए, अपवादों को स्पष्ट करना तथा उनकी सीमाओं का स्पष्टीकरण करना। पंचपाठी की अन्य पुस्तकों का भी इसी भाँति सम्पादन तथा उणादि कोष आदि का अकारादि क्रम से प्रस्तुतीकरण।

2. वैदिक महापुराण : पुराण विद्या का व्यापक शोधपरक अध्ययन कर पंच-लक्षणों के आधार पर सम्पादन।

3. वैदिक जीवन : वैदिक संस्कृति तथा जीवन दर्शन के साथ ही वैदिक साहित्य का सम्पूर्ण परिचय।

❖ ❖ ❖

पालीवाल प्रकाशन

117/एच-1/02, पाण्डु नगर, जे.के. मन्दिर के सामने, कानपुर - 208005

वेबसाइट - vedayan.simplesite.com

मो. 9839034844, 9839105629